" आमानेर-यह लालसोठसे तीन कोस पूर्वकी ओर स्थित है, यह नगरी अत्यन्त प्राचीन है। यह पहिले एक चौहान राजाकी राजधानी थी।

मानगढ-यह थोलाईसे पांच कोस दूर है इसके दुर्गके ऊपर बना हुआ एक प्राचीन नगरका ध्वंश स्तूप है, यह कछवाहोंके अभ्युदयके पहले ढूढाडके आदिमें राजाने बनाया था।

अमरगढ-खुशालगढसे तीन कोस दूर है, यह नागवंशियोंके द्वारा बनाया गया था।

वरोट-माचेरीके अन्तर्गत वस्तीसे तीनकोस है, प्रवाद यह है कि पाण्डवोंके द्वारा बनाया गया है।

पाटन और गनीपुर-यह दोनों दिल्लीके प्राचीन तूंअर राजाओंके द्वारा बनाये गये थे।

खेरार व खण्डार-रनथम्भौरके निकट है।

ओटगिर--चम्बलके तीरवर्ती है।

आमेर वा आम्बकेश्वर--प्राचीन आमेर राजधानीमें यहां देवादिदेव महादेवके नामसे एक कुण्ड विशेष है, कुण्डके बीचमें एक शिवलिंग है। कुण्डका जल लिंगके आधे अंगतक ढका हुआ है। ऐसामत प्रचलित है कि, जिस दिन कुण्डके जलसे सब लिंग ढक जायगा उसी दिन जयपुर राज्यका पतन होगा। इस स्थानपर अनेक शिलालेख भी हैं *।

---

* सूचना-मूल पुस्तकमें आमेरके वर्णनके केवल ८ अध्याय हैं। प्रथम चार अध्यायोंमें वंशानुक्रमसे जयपुर राज्यका इतिहास वर्णन करके तीन अध्यायोंमें शेखावाटीके इतिहासका वर्णन है तत्पश्चात् पुनः एक अध्यायमें जयपुरके भूगोलका वर्णन एवं उपसंहार है,

परन्तु ध्यान रहै कि यह भाषा अनुवाद बंगला भाषासे हुआ है और बंगाली लेखकने केवल जयपुरके इतिहासको आठ अध्यायोंमें बढाया है और जयपुरके शेखावाटीके इतिहासको समाप्त करके पुनः जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट लिखा है। इस प्रकारसे कुल आठ अध्यायोंको बंगाली आलोचक महाशयने १४अध्यायोंमें खतम किया है, परन्तु शेखावाटीके इतिहासमें अध्यायोंकी गणना पुनः एकसे आरम्भ होती है। इससे पाठकोंको भ्रम होना संभव है। अतः केवल भ्रम निवारणके लिये यहांपर उल्लिखित बातोंका ध्यान रहना आवश्यक है।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

शेखावाटीका इतिहास.



" आमानेर–यह लालसोठसे तीन कोस पूर्वकी ओर स्थित है, यह नगरी अत्यन्त प्राचीन है। यह पहिले एक चौहान राजाकी राजधानी थी।

मानगढ–यह थोलाईसे पांच कोस दूर है इसके दुर्गके ऊपर बना हुआ एक प्राचीन नगरका ध्वंश स्तूप है, यह कछवाहोंके अभ्युदयके पहले ढूंढाडके आदिमें राजाने बनाया था।

अमरगढ–खुशालगढसे तीन कोस दूर है, यह नागवंशियोंके द्वारा बनाया गया था।

वरोट–माचेरीके अन्तर्गत वस्तीसे तीनकोस है, प्रवाद यह है कि पाण्डवोंके द्वारा बनाया गया है।

पाटन और गनीपुर–यह दोनों दिल्लीके प्राचीन तूंअर राजाओंके द्वारा बनाये गये थे।

खेरार व खण्डार–रनथम्भौरके निकट है।

ओटगिर--चम्बलके तीरवर्ती है।

आमेर वा आम्बकेश्वर--प्राचीन आमेर राजधानीमें यहां देवादिदेव महादेवके नामसे एक कुण्ड विशेष है, कुण्डके बीचमें एक शिवलिंग है। कुण्डका जल लिंगके आधे अंगतक ढका हुआ है। ऐसामत प्रचलित है कि, जिस दिन कुण्डके जलसे सब लिंग ढक जायगा उसी दिन जयपुर राज्यका पतन होगा। इस स्थानपर अनेक शिलालेख भी हैं *।

---

* सूचना–मूल पुस्तकमें आमेरके वर्णनके केवल ८ अध्याय हैं। प्रथम चार अध्यायोंमें वंशानुक्रमसे जयपुर राज्यका इतिहास वर्णन करके तीन अध्यायोंमें शेखावाटीके इतिहासका वर्णन है तत्पश्चात् पुनः एक अध्यायमें जयपुरके भूगोलका वर्णन एवं उपसंहार है,

परन्तु ध्यान रहै कि यह भाषा अनुवाद बंगला भाषासे हुआ है और बंगाली लेखकने केवल जयपुरके इतिहासको आठ अध्यायोंमें बढाया है और जैपूरके शेखावाटीके इतिहासको समाप्त करके पुनः जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट लिखा है। इस प्रकारसे कुल आठ अध्यायोंको बंगाली आलोचक महाशयने १४अध्यायोंमें खतम किया है, परन्तु शेखावाटीके इतिहासमें अध्यायोंकी गणना पुनः एकसे आरम्भ होती है। इससे पाठकोंको भ्रम होना संभव है। अतः केवल भ्रम निवारणके लिये यहांपर उल्लिखित बातोंका ध्यान रहना आवश्यक है।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

शेखावाटीका इतिहास.





शीकर (शेखावाटी.)

एच्. एच्. राव राजा माधोसिंह बहादुर.

शेखावाटीका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

शेखावत सम्प्रदायकी सृष्टिका आदि विवरण–आमेरराज्यके उदयकरणके तीसरे पुत्र बालूजीसे उक्त सम्प्रदायकी उत्पत्ति–मोकलजी–मुसल्मान धर्मप्रचारक शेख बुरहान–उनके आशीर्वादसे मोकलजीको पुत्रलाभ–पुत्रको शेखाजी नामका प्रदान–शेखाजी द्वारा राज्यका विस्तार–रायमल्ल–सजा, रायसाल, उसकी वीरताका प्रकाश करना–सम्राट् अकबरका शासनकी सनद देना–खण्डेला और उदयपुर लाभ–उनकी वीरता और चरित्र–गिरिधरजी–उनकी हत्याका विवरण–द्वारकादास–सिंहके साथ उनका विचित्र समर–खां जिहानलोदीके साथ समरमें उनका प्राणनाश–बरसिंहदेव–बहादुरसिंह–औरंगजेबका खण्डेलाके देवमंदिरको विध्वंस करनेकी आज्ञा देना–बहादुरका राजधानी छोडकर भाग जाना–देवमंदिरकी रक्षाके लिये सुजनसिंहकी प्रतिज्ञा–यवनसेनाके साथ युद्ध–मंदिरका विध्वंस करना–सम्राट्की सेनाका खण्डेला राज्यपर अधिकार करना–केसरीसिंह और फतेसिंह दोनों भ्राताओंका खण्डेला राज्यपर विभाग करना–फतेसिंहका प्राणनाश–दिल्लीके सम्राट्के विरुद्ध केसरीसिंहकी अवाध्यता प्रकाश–सम्राट्की सेनाके साथ केसरीसिंहका युद्ध–उनका प्राणनाश–यवनसेनाका उनके पुत्र उदयसिंहको बंदी करना–उदयसिंहका बंदीभावसे अजमेरमें रहना–खण्डेलापर फिर अधिकार–उदयसिंहका मुक्तिलाभ और खण्डेलाकी प्राप्ति–मनोहरपतिके विरुद्ध उदयसिंहका समर–षड्यन्त्र–आमेरपति जयसिंहका खण्डेलाको घेरना–उदयसिंहका भागना–उनके पुत्र सवाईसिंहका खण्डेला प्राप्त करना–सवाईसिंहका आमेरराज्यकी अधीनता स्वीकार करना–खण्डेला विभाग करना–सवाईसिंहका प्राणत्याग।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहब मूल जयपुरराज्यके राजनैतिक इतिहासको वर्णन करनेके पीछे उस मूलराज्यसे उत्पन्न हुई शेखावाटी नामक एक स्वतंत्र सामन्तोंके अधिकारी देशके इतिहासको वर्णन कर गये हैं। इतिहासवेत्ताने लिखा है, " कि हम शेखावत् सामन्त सम्प्रदायके इतिहासको वर्णन करनेके लिये आगे बढे हैं। यह सम्प्रदाय आमेरकी बहुतसी सामन्त श्रेणीसे सृष्ट हुई थी और ऐसी कितनी ही घटनाओं और समयके गुणसे यह सामन्तोंकी सम्प्रदाय इस समय प्रबल सामर्थ्यको संचय कर रही है। इसका मूलराज जयपुरके समान है; यद्यपि इस सम्प्रदायमें किसी लिखी हुई शासनमूलक व्यवस्थाका प्रचार नहीं हुआ, स्थायी राजनैतिक सम्मिलित शासनकी सभा नहीं है, न इसका कोई प्रधान नेता नियुक्त है; परन्तु सामन्त साधारणकी स्वार्थरक्षाके लिये सभी एकताके सूत्रमें बँध रहे हैं, मानो इसका किसीने भी इस प्रकारका विचार नहीं किया। इस सम्मिलित सम्प्रदायमें कोई निर्दिष्ट राजनीति नहीं है, कारण कि जिस समय साधारण सामन्त अथवा किसी सामन्तके विशेष स्वार्थ नाशके लिये कोई उद्योग हुआ उस समय शेखावाटीके समस्त सामन्तोंने उदयपुरमें इकट्ठे होकर किस प्रकारके उपाय अवलंबन करके कल्याणके निमित्त एक मतसे कार्य किया था"।

इस शेखावाटी सामन्त सम्प्रदायकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें टाड साहब लिखते हैं, "आमेरके राजा उदयकरणके तीसरे पुत्र बालोजी संवत् १४४५ सन् १३८९ ईसवीमें आमेरके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, यह सामन्त उन्हींके वंशधर हैं। बालोजीके समयमें आमेरके समाजकी जैसी राजनैतिक अवस्था थी यदि उसकी ओर हम देखते हैं तो जाना जाता है कि, वर्तमानक समस्त भूखंड शेखावाटीके सामन्तोंकी सम्प्रदायके अधिकारमें थे। वह चौहान और नरवरराजवंशीय सामन्त इस देशको खंड २ में विभक्त करके शासन करते थे, तभी वह कठिन मुसल्मानोंके अत्याचार और पीडनसे शीघ्र ही समय २ पर वश्यता स्वीकार करनेको वाध्य होते थे।

इस समय शेखावत नामकी जो सामन्त सम्प्रदाय विशेषरूपसे प्रसिद्ध है, वास्तवमें बालोजी उन अगणित वंशधरोंके आदि पुरुष थे। बालोजीके पोतेको अमृतसर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ; परन्तु उन्होंने अपने बाहुबलसे उक्त देशपर अधिकार किया था, या और किसी उपायसे प्राप्त किया हो यह नहीं जाना जाता। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए-(१) मोकलजी, (२) खेमराजजी (३) खारद। मोकलजी अपने पिताके पदपर अमृतसरके अधीश्वर हुए। दूसरे पुत्र खेमराजजीके वंशधर बालापोता नामसे विदित थ। इनमें एक आमेरके बाराकोटरी अर्थात् बारह प्रधान सामन्तोंके अन्यतर हैं। खारदका औरस नुमन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसके उत्तराधिकारी कूंपावत नामसे विदित थे, परन्तु इस समय उनकी संख्या प्रायः लोप हो गई थी।

" मोकलने दीर्घकालतक पुत्रहीन अवस्थासे समय व्यतीत किया, एक मुसल्मान धर्मप्रचारक फकीरके आशीर्वादसे मोकलके एक पुत्र उत्पन्न हुआ; उस फकीरके सम्मानके लिये पुत्रका नाम सेखाजी रक्खा गया। राजपूतानेका एक प्रधान अंश जो वर्तमान समयमें सेखावत् नामसे विदित है, इस भूखंडमें अगणित सामन्त वंशधरोंके आदिपुरुष यह सेखाजी थे। उस मुसलमान धर्मप्रचारक फकीरका नाम सेख बुरहान था। उसकी दरगाह अचरोलसे तीन कोस और मोकलके स्थानसे सात कोस दूरीपर बनी हुई है। वह दरगाह इस समय भी विराजमान हो रही है। यह घटना तैमूरके भारतजयके थोडे ही कालके पहिले हुई थी। इस कारण यह भी संभव हो सकता है, कि उक्त सेख बुरहान एक परमधार्मिक धर्मप्रचारक हो, वह वीर तेजस्वी राजपूत जातिका अपने धर्ममें दीक्षित करनेके लिये इस देशमें रहते थे, इस बातको वह भली भाँतिसे जान गये थे, यद्यपि वह अपने उद्देशको पूर्ण अर्थात् राजपूतजातिमें मुसल्मान धर्मका प्रचार करके सफलमनोरथ नहीं हो सकते थे। परन्तु अतिथि और शरणागतपालक राजपूत गण अवश्य ही उनके प्राणोंकी रक्षा करके उनका प्रतिपालन करते थे "।

शेख बुरहान भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर एक समय अमृतसरकी सीमाके एक विस्तारित प्रान्तमें पहुँच गये। दैवयोगसे मोकलजी भी उस स्थानपर

उपस्थित थे, शेखबुरहान मोकलजीके समीप जाकर अभिवादन करके बोले—क्या आप हमको कुछ भिक्षा देंगे ? " मोकलजीने नम्रतापूर्वक कहा, कि " आप जो इच्छा करेंगे वही मिलेगा । " शेखबुरहानने केवल थोडेसे दूधकी इच्छा की । शेखावत् सामन्तोंको दृढ विश्वास था कि शेखबुरहान उक्त प्रार्थनाके पीछे एक असंभव कार्य दिखावेंगे इस कारण एक दो दूधवाली भैंस कि जिनका दूध कुछ ही समय पहिले दुहागया था, शेखजीके समीप ले आये । शेखबुरहानने कुछ ही समयके उपरान्त उन दुग्धहीन भैंसोंके थनोंमेंसे नदीके समान प्रबल स्रोतसे दुग्धको दुह लिया । इस आश्चर्यजनित कार्यको देखकर वृद्ध मोकलजीके मनमें दृढ विश्वास हो गया कि यह मुसल्मान फकीर अवश्य ही देवशक्ति सम्पन्न है, यह अवश्य ही इस प्रकारसे दैवशक्तिका कार्य दिखानेमें समर्थ है । उन्होंने कुछ ही कालके पीछे उस फकीरसे आशिर्वाद माँगा कि मेरे एक पुत्र उत्पन्न हो । वास्तवमें मोकलजीकी यह अभिलाषा पूर्ण हो गई, यथासमयमें उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ और बुरहानकी आज्ञासे उस पुत्रका नाम बुरहानकी जातिके नामके अनुसार " शेखा "रक्खा गया । बुरहानने और भी आज्ञा दी कि "यह बालक मानों आजीवन मुसल्मान बालकोंके व्यवहारयोग्य बद्धी नामक माला धारण करेगा । जिस समय मालाको खोलकर रखनेका प्रयोजन होगा उस समय वह पीरकी दरगाहके किसी ऊँचे स्थानपर रखनी होगी और इस बालकको नीले वर्णका जामा और टोपी पहराई जायगी । किसी समय शूकरका मांस वा अन्य कोई मांस जिसमें उसका रुधिर रहे, बालकको आहार न कराया जायगा । शेखबुरहानने मोकलसे यह कहा कि शेखावत वंशमें जिस समय कोई पुत्र उत्पन्न होगा, उस समय एक बकरेकी बलि दी जायगी । कुरानके कलमेका पाठ किया जायगा, और उस बकरेके रुधिरसे बालकको स्नान कराया जायगा " यद्यपि इस बातको चार सौ वर्ष बीत गये परन्तु मोकलजीने शेखबुरहानसे उक्त नियम पालन करनेके लिये जो प्रतिज्ञा की थी वह बराबर मानी जाती है । मोकलजीके अगणित वंशधर दश हजार मीलकी भूमिमें निवास करते हैं, वह लोग आजतक धर्मविश्वासके साथ उस आज्ञाका पालन करते आते हैं । यद्यपि चिरकालसे प्रचलित हुई रीतिके अनुसार प्रत्येक राजपूत प्रत्येक वर्षमें एक दिन शूकरका शिकार करके उसके मांसको खाते हैं ऐसी विधि प्रचलित है, परन्तु शेखावतने किसी समय भी वराहका शिकार नहीं किया । यद्यपि समयके फेरसे शेखावत बालकोंको बद्धी पहराना, उसे दरगाहमें रखनेकी प्रथा इस समय प्रबल नहीं है परन्तु आजतक भी प्रत्येक शेखावतका बालक जन्म लेते ही दो वर्षतक नील रंगके कुर्त्ता टोपी पहिरा करता है। शेखावतोंने उक्त शेखबुरहानके संमानके लिये और एक प्रबल चिह्नकी आजतक सम्मान सहित रक्षा की है, अर्थात् शेखावतकी जातीय हरिद्रा वर्णकी पताकाके चारोंओर नीला फीता लगाया जाता है । शेखावतोंमें ऐसा प्रबल मन्तव्य प्रचलित है, कि शेखावत् चाहे दूर स्थान-पर निवास करनेसे अथवा अन्य किसी कारणसे शेखकी दरगाहमें अपने २ बालकोंके गलेमेंकी बद्धीकी रक्षा नहीं कर सकैं, नहीं तो वह किसी समय भी सौभाग्यवान् नहीं हो सकैंगे, राजपूतजातिकी प्रतिज्ञापालनका एक चूडान्त निदर्शन यह है कि यद्यपि उक्त

अमृतसर और उनके निकटवर्ती देश आमेरराज्यके अधिकारमें थे, परन्तु उक्त शेख बुरहानकी दरगाह आजतक स्वाधीन भावसे रक्षित है; और उसपर राजसामर्थ्यका प्रयोग नहीं किया जाता। जो कोई उनकी शरणमें जाता है, राजा उसको बलपूर्वक नहीं पकड सकता। दरगाहके निकट ताला नामक नगरमें उक्त शेखके सौसे अधिक वंशधर बसते हैं और वे जमीजोतका लगान नहीं देते।

शेखाजी पिताकी मृत्युके पीछे पितृपदपर विराजमान हुए, और अपने बाहुबलसे प्रतिवासियोंके निकटसे तीनसौ साठ खण्ड ग्रामोंको उन्होंने अपने अधिकारमें कर लिया। शेखाजीके बाहुवल और प्रतापका समाचार शीघ्र ही आमेरराज्यके अधीश्वरने सुना। तुरन्त ही आमेरकी सेनाने उनपर आक्रमण किया, पर उन्होंने यूनानी पठानोंकी सहायतासे अपने अधीश्वर प्रभु आमेर राज्यकी सेनाको भगा दिया। इस समय इस देशके प्रत्येक सामन्त आमेरपतिको अपना अधीश्वर मानते थे, इस देशमें जो घोडेका बच्चा उत्पन्न होता था; वह करस्वरूपमें आमेरराजको दिया जाता था, परन्तु शेखाजीने अपने बाहुवल और प्रबल प्रतापसे आमेरराज्यक अधीन तानीगढोंको एकबार ही छीन लिया और सम्पूर्ण स्वाधीनताको सग्रह कर लिया। इस कारण जिस आमेर राज्यसे यह शेखावाटीका राज्य बना था, इसी समयसे उस मूलराज्यके साथ परस्परमें सम्पूर्णतः विच्छिन्नभाव स्थापित हुआ। आमेरपति सवाई जयसिंहके समयतक दीर्घकालसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे स्वाधीनताके अमृतमय फलको भोगते रहे। पीछे सवाई जयसिंहने दिल्लीके सम्राट्के अधीनमें ऊँचे पदपर नियुक्त होकर सम्राट्की सेनाकी सहायतासे इस शेखावाटीके स्वाधीन सामन्तोंपर आक्रमण करके उन्हें युद्धमें परास्त किया, और इनको आमेर राज्यके अधीन सामन्त पदपर स्थापित कर रीतिके अनुसार उनसे कर लिया।

शेखावाटीके आदि नेता शेखाजीने दीर्घकालतक प्रवल प्रभुता विस्तार करके अपने प्राण त्याग किये। उनके पुत्र रायमल्ल पिताके पदपर स्थित हुए। रायमल्लके शासन और बलविक्रमका इतिहासमें कोई लेख दिखाई नहीं दिया। रायमल्लके पीछे सूजा अमृतसरके सिंहासनपर विराजमान हुए। उनेक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) नूनकरण (२) रायसाल और (३) गोपाल। बडा पुत्र अमृतसर और उसके अधीनके ३६० ग्रामोंका अधीश्वर हुआ, और रायसाल, लाम्बी नामक देशपर और गोपाल झाडली नाम देशके सामन्त पदपर स्थित हुए। दूसरे भ्राता रायसालसे एक घटनाके कारण शेखावाटीके सौभाग्यका सूर्य शीघ्रतासे उदित हुआ।

शेखावाटीके नेता नूनकरणका देवीदास नामका एक बनिया मंत्री था, वह बडा ही तेजस्वी और चतुर पुरुष था, एक समय देवीदासने अपने प्रभुके साथ तर्क करते

(१) कर्नल टाड साहबने टीकेमें लिखा है कि "इस रीतिका पाठ करके पाठकोंको स्मरण हो सकेगा कि प्राचीन फारिसराज्यमें इस प्रकारकी रीति प्रचलित थी, दूरके शासनकर्ता इस प्रकारसे घोडोंके बच्चेको करमें भेजते थे। हेरोडाटसने कहा है कि एक आरमेनियाने करस्वरूपमें वर्षदिनमें बीस हजार घोडे भेजे थे"।

हुए कहा " कि पिताकी सम्पत्तिपर अधिकार प्राप्त करनेकी अपेक्षा अपने ही बल और पराक्रमसे सौभाग्यका उपार्जन मनुष्यका कर्त्तव्य है, यही जगदीश्वरका अनुग्रह है। नूनकरणने इसका बिना ही समर्थन किये दृढ़तापूर्वक प्रतिवाद करके उत्तर दिया कि आपकी यह युक्ति कदापि न्यायसंगत नहीं है; वरन् अब आप हमारे भ्राता रायसालके समीप लाम्बीमें जाकर इस युक्तिकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये। नूनकरणने सरलभावसे उसको पदसे उतार दिया, परन्तु देवीदासने किसी प्रकार भी अपने मन्तव्यको न बदला, और शीघ्र ही वह अमृतसरको छोडकर अपनी धनसम्पत्ति और कुटुंबको साथ ले लांबीमें आ पहुँचा। यद्यपि रायसालने उनको भलीभाँति आदर सत्कारके साथ ग्रहण किया परन्तु देवीदास तुरन्त ही इस बातको जान गया कि रायसालकी आमदनी बहुत थोडी है इस कारण यहाँ रहनेसे खर्च बहुत बढ़ जायगा। फिर जिस मन्तव्यको प्रकाश करनेके लिये पदसे अलग हुआ हूँ उस मन्तव्यकी परीक्षा करनेका यहाँ कोई विशेष उपाय नहीं है, अतएव उसने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि मैं दिल्लीमें यवनसम्राट्के दरबारमें जानेकी अभिलाषा करता हूँ। वरन् इसने रायसालको भी अपने साथ वहाँ ले जाकर दरबारमें अपने भाग्यकी परीक्षा करनेका परामर्श दिया। रायसाल एक ऊँची अभिलाषाका वीर पुरुष था यह केवल अपनी सामर्थ्यके बलसे बीस सवारोंको साथ ले दिल्लीको गया। इस समय अफगानियोंके आक्रमणको रोकनेके लिये सम्राट्के अधीनकी एक सेना सज रही थी। ऐसी घटना प्रायः हुआ ही करती है। रायसाल मना करनेपर भी अपने उन बीस सवारोंके साथ रणक्षेत्रपर गया, और इस भयंकर युद्धमें उसने असीम बलविक्रम प्रकाश करके बादशाही सेनाके प्रधान सेनापतिके सम्मुख रणक्षेत्रम शत्रुपक्षके एक नेताका मस्तक काटकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की। उस दिन उसी नेताके मारे जानेसे युद्धमें विजय प्राप्त हुई थी। रायसाल कौन है, और कहाँ रहता है। यवनसेनापति इसको कुछ भी नहीं जानता था युद्ध समाप्त होनेके पीछे सेनापति उस अपरिचित वीरकी खोज करने लगा, परन्तु किसी विशेष कारणसे रायसालने स्वजातीय सेनाका संग त्याग दिया, यह पहिलेसे ही अन्य स्थानपर रहने लगे, इस कारण यवन सेनापतिको इसका कुछ पता न मिला। परन्तु उन्होंने रायसालकी खोज कुछ विशेषतासे नहीं की। उसीसे देवीदासकी उक्तिकी सत्यताकी परीक्षा सरलतासे न हो सकी। तब प्रधान सेनापतिने शीघ्र ही यह समाचार प्रचारित किया कि सेनाकी प्रत्येक श्रेणीके सेनापति जो रणक्षेत्रमें उपस्थित थे सबको "जियाफत्" नामक प्रमोदसभामें आना होगा और वह उस स्थानपर प्रधान सेनापतिके प्रति सन्मान दिखावैं। शीघ्र ही जियाफत् नामक प्रमोदसमिति स्थापित हुई; प्रत्येक जातिक प्रत्येक श्रेणीके प्रधान २ सेनापति एकएक करके प्रधानसेनापतिके सम्मुख आ उपस्थित हुए, और उनको मान दिखाने लगे; रायसाल भी उक्त घोषणापत्रके अनुसार वहाँ गये इनके सम्मुख होते ही प्रधान सेनापतिने तुरन्त ही इनको पहिचान लिया; कि इसी असीम साहसी वीरके लिये इतनी खोज रही थी। शीघ्र ही उसका नाम और उसके वंशका वृत्तान्त पूछा गया। अमृतसरके महाराज नूनकरण भी अपनी सेनाके साथ इसी स्थानपर यवनसेनाके

अधिकारमें उपस्थित थे। उन्होंने रायसालको देखकर ईर्षावश हो तिरस्कार करते हुए कहा, कि मेरी बिना आज्ञाके तुम इस स्थानपर क्यों आये? परंतु नूनकरणके इस तिरस्कारसे रायसालकी कोई हानि नहीं हुई। प्रधान सेनापतिने वीरश्रेष्ठ रायसालको सम्राट् अकबरके निकट परिचित करा दिया, और उसके बलविक्रमकी ऊँची प्रशंसा की। बादशाह अकबर सदैव गुणियोंको उचित पुरस्कार दिया करता था। उसने शीघ्र ही रायसालको "रायसाल दरबारी" की उपाधी दी, और अपनी कृपाके विशेष चिह्नस्वरूप उस समय चन्देल राजपूतोंके अधिकार मुक्त देवासो और कासली नामके दो देशोंका अधिकार उसको दिया। रायसालका अपने ही भाग्यसे उन्नति पानेका प्रथम सूत्रपात हुआ। उसने सम्राट्के दिये हुए नवीन देशोंपर अपना अधिकार किया था कि, इतनेमें सम्राट् अकबरका बुलावा आनेसे उसे वहां फिर जाना पडा, इस समय भटनेरके विरुद्ध सम्राट्की सेना जा रही थी। सम्राट् अकबरने रायसालको महाबलवान् पुरुष जानकर उसको उस सेनाके साथ भेज दिया। युद्धक्षेत्रमें फिर इनके विशेष बल विक्रम प्रकाशसे सम्राट् अकबर और भी संतुष्ट हुए, और इसको खण्डेला तथा उदयपुर नामक दो देशोंकी सनद दी। यह दोनों देश उस समय निरबाण राजपूतोंके अधिकारमें थे, परंतु उन राजपूतोंने यवन-सम्राट्की अधीनता स्वीकार न की थी, और क्रमानुसार अत्याचार उत्पीडन और लूटमारमें लिप्त थे।

वीरश्रेष्ठ रायसालने देखा कि सम्राट्ने उनको जिन देशोंके अधिकारका स्वत्व दिया है उन दोनों देशोंपरसे राजपूतोंको भगानेकी किसीकी सामर्थ्य नहीं है; इस कारण वह कौशलजालका विस्तार करने लगे। रायसालने भटनेरके युद्धमें जानेके पहिले खण्डेलाके अधीश्वरकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया था। विवाहके समय कन्याके पिताने जो दहेज दिया था वह अत्यन्त सामान्य था, इनके योग्य न था इसीसे इसने दहेजको बढानेके लिये कहा; निरबाण राजपूतने धीरज धरनेमें असमर्थ होकर कहा, कि "हमारे पास अब कुछ नहीं है, केवल यह शिखर प्रस्तुत है, यदि इच्छा हो तो ले लीजिये"। यह बात उस समय रायसालके हृदयमें चुभ गई थी, इस समय रायसाल उपयुक्त समरमें जाकर सेनासहित खण्डेलाकी ओर चला। वह इस बातको भली भाँतिसे जानता था कि आवश्यकता होनेपर अपनी सेना इस विषयमें सहायता करैगी। रायसालको सेनासहित आता हुआ सुनकर जब खण्डेलाके अधीश्वरने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखा तब वह भयभीत हो नगर छोडकर भाग गया। नगरनिवासियोंने भ्रमके वश हो रायसालकी अधीनता स्वीकार की, इसी समयसे यह खण्डेला देश शेखावाटीका एक प्रधान नगर माना गया। रायसालके उत्तराधिकारी रायसालोत नामसे पुकारे जाकर शेखावाटीके समस्त दक्षिण देशमें निवास करते थे। परिणाममें सृष्ट और एक वंशकी शाखासे उत्पन्न सिद्धानी नामकी सम्प्रदाय उत्तर अंशमें निवास करती थी। रायसालने खण्डेलापर अधिकार करनेके बहुत

दिन पीछे उदयपुरको अपने अधिकारमें कर लिया; उदयपुर पहिले निरबाण राजपूतोंके अधीनमें कसुंबी नामसे प्रख्यात थी।

रायसाल अपने यथार्थ अधीश्वर आमेरराज मानसिंहके साथ मेवाडके महाराणा प्रतापसिंहके साथ युद्ध करनेको गये थे। काबुलके अधीन कोहिस्थानके अफगानियोंके विरुद्धमें दिल्लीके सम्राट्ने जो सेना भेजी थी, रायसालको उस सेनाके साथ भी वहां भेजा था। रायसालने प्रत्येक युद्धमें बडी वीरता दिखाकर बादशाहसे बहुतसा पुरस्कार पाया था। इस विषयका हमें कोई समाचार नहीं मिला कि, रायसालने किस समय प्राणत्याग किये। देवीदासने जो कहा था कि, पिताके उत्तराधिकारित्व लाभकी अपेक्षा अपनी प्रतिभाके बलसे अपना सौभाग्य उपार्ज्जन करना ही आवश्यक है; और वही जगदीश्वरका प्रधान अनुग्रह है, सो रायसालने सम्पूर्णरूपसे कर दिखाया।

वीरश्रेष्ठ रायसालने अपने सुशासनसे अपने अधिकारी देशोंमें सम्पूर्णरूपसे शांति स्थापन करके प्राण त्याग किये, वह जिस सुविस्तृत देशपर शासन करते थे उसे उन्होंने सात भागोंमें विभक्त कर अपने सातों पुत्रोंको दे दिया। उन सात पुत्रोंसे अगणित परिवार और सम्प्रदायोंकी सृष्टि हुई; और वह पैतृक आदि पुरुषके नामके अनुसार भोजानी, सिद्धानी, लाडखानी, ताजखानी, परशुरामपोता, हररामपोता नामसे रजवाडोंमें सर्वत्र शेखावत व्याख्यातिसे विदित हुए।

रायसालके निम्नलिखित सात पुत्रोंको निम्नलिखित यह सात देश मिले थे—

१–गिरिधर	खण्डेला और रेवासा।
२–लाडखान	खाचरियावास।
३–भोजराज	उदयपुर।
४–तिरमलराव	कासली और ८४ ग्राम।
५–परशुराम	बिबाई।
६–हररामजी	मून्दडी।
७–ताजखान	कोई देश प्राप्त नहीं हुआ।

ज्येष्ठ पुत्र गिरधरजीको जिस प्रकार पिताके अधिकारी देशोंका प्रधान अंश प्राप्त हुआ था, उन्होंने उसी प्रकारसे पिताके समान साहस शूरवीरता और बल विक्रमको प्रकाशित कर दिल्लीके यवनसम्राट्के द्वारा "खण्डेलाके राजा" की उपाधि प्राप्त की। इस समय भारतके यवन साम्राज्यमें बडी गडबड हो रही थी। मेवातके पहाडी देशोंपर मेव जातिके पहाडी तस्कर लोगोंने भारतवर्षकी राजधानीके निकट विशेष

---

(१) निरबाण सम्प्रदाय चौहान जातिकी एक शाखा विशेष थी। इन निरबाण राजपूतोंने इस देशमें बडा आधिपत्य विस्तार किया था, और उक्त कसुंबी जो इस समय उदयपुर नामसे प्रसिद्ध है, वहां उनकी राजधानी थी। इस उदयपुरमें ही शेखावाटीके समस्त सामन्त समयपर जातीय प्रश्नकी मीमांसाके लिये इकट्ठे होते थे।

लूटमार करनी प्रारम्भ की। यवनसम्राट्ने वीरवंशीय खण्डेलापति गिरधरजीको सब अंशोंमें योग्य जानकर उस दस्युदलके नेताके जीवित पकड लाने वा मारनेका भार उन्हींको अर्पण किया। गिरधर उस कार्यके पूर्ण करनेमें समर्थ भी हुए। गिरधर उक्त आज्ञाको मान विचारने लगे कि यदि एक बडी सेना साथमें लेकर उस तस्कर दलके पकडनेके लिये बाहर होंगे तो वे अवश्य ही भयभीत हो पहाडकी कन्दराओंमें छिप जांयगे और कभी भी सरलतासे हाथ नहीं आवेंगे इस कारण उन्होंने असीम साहसके साथ निर्भय हो अत्यन्त सामान्य सेना साथ ले प्रत्येक पर्वतपर भ्रमण करनेके पीछे तस्करोंके नेताको एक स्थानमें पाकर उसपर आक्रमण किया। आक्रमण करते ही समर उपस्थित हो गया, उस समरमें असीम बलविक्रम प्रकाश करके गिरधरने दस्युदलको परास्त करके उनके नेताका जीवन समाप्त कर दिया। बादशाहने इससे अत्यन्त ही संतुष्ट हो उनको राजाकी उपाधि दी। अत्यन्त दुःखका विषय है कि गिरधर बहुत दिनोंतक इस संसारमें जीवित न रह सके। वह एक समय यमुनाजीमें स्नान कर रहे थे, इसी समयमें सम्राट्की सभाके एक उच्च पदाधिकारी दुश्चरित्र मुसलमानने अत्यन्त शोचनीय रूपसे उनके प्राणनाश किये। नीचे उसका वर्णन किया गया है।

एक समय खण्डेलाराज गिरधरजीका एक अनुचर दिल्लीके एक लुहारकी दूकानमें बैठा हुआ अपने स्वामीकी तलवार बनवा रहा था। उस समय रास्तेमें एक मुसलमान जा रहा था। उसने इस राजपूतको अकेला खडा हुआ देखकर कोई असभ्य मनुष्य समझा और उसे चिढानेकी इच्छासे उसने लुहारकी दूकानपर जाकर उस राजपूतको व्यंग वचन कहना और विद्रूप करना प्रारम्भ किया। राजपूतने अपनी मातृ भाषामें धीरभावसे उत्तर दिया। इसपर मुसलमानने एक जलता हुआ अंगार उस राजपूतकी बडी पगडीके ऊपर डाल दिया। राजपूत इससे भी कुछ कुपित न हुआ मुसलमान आनन्दित होकर हंसने लगा। परन्तु कुछ ही समयके पीछे पगडीमें आग जलने लगी। तब तुरन्त ही उस राजपूतने अपनी सानधरी हुई तलवारसे मुसलमानके दो टुकडे कर दिये। वह मुसलमान बादशाहकी सभाके एक प्रतिष्ठित अमीरका सेवक था। उक्त अमीर खण्डेलाराजके एक सेवकसे अपने सेवकके प्राणनाशकी वार्ता सुनकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ। वह अपने अनुचरोंके साथ खण्डेलाके राजाके निवासस्थानपर गया। खण्डेलाराज गिरधर उस समय वहां नहीं थे। वह उस समय इकले ही अस्त्रहीन अवस्थामें यमुनामें स्नान कर रहे थे। अन्तमें उक्त अमीरने यमुनाके किनारे जाकर कायर पुरुषोंकी तरह उस अस्त्रहीन वीर खण्डेलाराज गिरधरकी हत्या की।

खंडेलाराज गिरधरने कई एक पुत्र छोडे थे, इनमें बडे पुत्र द्वारकादास पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। परन्तु उनको सिंहासनपर बैठनेके कुछ ही दिनके पीछे एक भयानक षड्यन्त्रजालमें फँसना पडा। शेखावत् सम्प्रदायकी प्रधान शाखाके आदि पुरुष नूनकरणके एक वंशधर थे, जो उस समय मनोहरपुरके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित

थे; उन्होंने जाति शत्रुताको चरितार्थ करनेके लिये द्वारकादासको उस महाविपत्तिमें डालनेकी गुप्तभावसे चेष्टा की । दिल्लीके बादशाह इस समय शिकार करके एक सिंहको पकड लाये । उन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार एक समय उस सिंहके साथ वीरोंसे युद्ध करनेका समाचार प्रकाशित किया गया, उक्त प्रचारके प्रकाश होते ही उल्लिखित मनोहरपुरपतिने सम्राट्के यहां जाकर कहा "हमारे जातिके रायसालोत द्वारकादास जो विख्यात वीर नाहरसिंहके शिष्य हैं वही इस पशुराजसिंहके साथ युद्ध करनेके योग्य पात्र हैं" । बादशाहने यह बात सुनकर द्वारकादासको सिंहके साथ युद्ध करनेकी आज्ञा दी । द्वारकादास इस बातको भलीभांतिसे जान गये थे कि मनोहरपुरपतिने ही उनके प्राणनाशके लिये इस षड्यन्त्रजालका विस्तार किया है, परन्तु वे इससे कुछ भी विचलित वा भयभीत न हुए, वरन् शीघ्र ही उस आज्ञाके पालन करनेमें सम्मत हुए । रंगभूमि मनुष्योंसे भर गई । द्वारकादास स्नान पूजा कर एक पीतलके पात्रमें पूजाकी समस्त सामग्री अर्थात् फूल नैवेद्य लेकर रंगभूमिमें जा पहुँचे और उस भयानक सिंह पशुराजके सम्मुख हुए । मनोहरपुरपति विचार रहे थे कि द्वारकादास जिस समय निरस्त्र होकर उन्मत्तके समान पूजनकी सामग्री लेकर महाबली सिंहके निकट जा रहे हैं, तब तो इनकी मृत्यु अत्यन्त ही निकट होगी । इस रंगभूमिमें साधारण दर्शकोंके अतिरिक्त स्वयं बादशाह भी आये थे और द्वारकादासको उस भावसे बैठा हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुए।परंतु द्वारकादासने सिंहके सम्मुख जाकर सबसे पहिले सिंहके मस्तकपर चन्दनका टीका लगाकर उसके गलेमें माला डाली और आप आसनपर बैठकर पूजा करने लगे, सिंह धीरभावसे आगे जा द्वारकादासके मुखकमलको अपनी जीभसे चाटने लगा। द्वारकादास यथार्थ भक्तके समान अपनी अन्तर्हित शक्तिसे निर्भय हो अटलभावसे बैठा रहा । कुछ ही समयके पीछे द्वारकादास सम्राट्की आज्ञासे वहांसे चला आया।सिंह किंचित् भी क्रोधित न हुआ, और न उसने उनपर आक्रमण करनेकी चेष्टा की । यह देखकर प्रत्येक दर्शक अगाध विस्मयके समुद्रमें निमग्न हुए । यवनसम्राट्ने विचारा कि द्वारकादास अवश्य ही दैवीमन्त्रसे बलवान् है, इस कारण उन्होंने इनको अपने निकट बुलाकर कहा; कि "आपकी जो इच्छा हो सो मांगो, मैं वही तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा ।" द्वारकादासने केवल इतना ही कहा " कि मैंने इस विपत्तिसे अपने भाग्यबलसे ही उद्धार पाया है; आप ऐसी विपत्तिके मुखमें अब और किसी मनुष्यको न डालना, बस आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है" ।

मालूम होता है कि द्वारकादास उस समयके सुप्रसिद्ध महायोधा खाँजिहान लोदीके द्वारा मारे गये । शेखावाटीकी दन्तकथाओंमें वर्णित है कि उक्त खांजिहान लोदी भी द्वारकादासके द्वारा मारा गया था । उक्त प्रवादमें दोनों वीरोंकी वीरताकी कहानी जिस भावसे वर्णित हुई है, वह इस वीरजातिके इतिहासके पक्षमें अत्यन्त प्रशंसाजनक है । खांजिहान और द्वारकादास दोनों ही परम मित्र थे, एक समय दिल्लीके सम्राट् खांजिहानके प्रति अत्यन्त ही कुपित हुए और द्वारकादासको आज्ञा दी कि शीघ्र ही

खांजिहानके जीवित वा मृत शरीरको लाकर हाजिर करो । इस आज्ञाको सुन कर द्वारकादास महा विपत्तिमें पडे । उन्होंने खांजिहानसे कहला भेजा कि हमारे ऊपर यह अत्यन्त घृणित कार्यके साधनका भार अर्पित हुआ है अतएव या तो आप ही आत्मसमर्पण कीजिये नहीं तो आप भाग जाइये परन्तु उस वीरने कादरकी भांति भागनेकी अपेक्षा मित्रके हाथसे मरना ही श्रेष्ठ समझा । फरिश्तेसे यह खाजिहानकी जीवनी और वीरतामूलक कार्यकौतूहलका पूर्ण विवरणका वर्णन पाया जाता है अधिक क्या कहैं इसी कारणसे उक्त शेखावत्के नेताकी वीरताका वर्णन भी उसमें सम्बद्ध हुआ है । दोनों वीर संग्रामक्षेत्रमें जाकर एक दूसरेकी तलवारसे मारे गये ।

द्वारकादासके पुत्र वीरसिंह देव अपने पिताके पदपर विराजमान हुए, वीरसिंहदेव सेनासहित यवनसम्राट्की आज्ञासे उनकी सेनाके साथ दाक्षिण देशकी विजयमें नियुक्त थे, और उन्होंने अपने बलविक्रमके बलसे बादशाहको सन्तुष्ट कर परनाला देशके शासनकर्ता पदपर प्राप्त हो प्रबलप्रतापके साथ उस देशपर अपना राज्य स्थापित किया । खण्डेलाके इतिहासलेखक लिखते हैं कि वीरसिंहदेव, उनके अधीश्वर प्रभु आमेरपतिके अधीनमें न रहकर स्वयं स्वाधीनभावसे कार्य करते थे, परन्तु कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि मिरजा राजा जयसिंह इस समय राजपूत राजाओंमें सम्राट्की सभामें सबसे अधिक सम्मानित और प्रसिद्ध तथा सेनानीरूपीसे प्रबल सामर्थ्यवान् थे, और वीरसिंह उनके अधीनमें आज्ञा पालन करते थ ।

वीरसिंहदेवके निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुए, (१) बहादुरसिंह, (२) अमरसिंह (३) श्यामसिंह, (४) जगदेव (५) भूपालसिंह (६) मोकरासह (७) प्रेमसिंह । वीरसिंहने जीवित अवस्थामें बहादुरसिंहको युवराज पदपर अभिषिक्त किया, और अन्यान्य पुत्रोंको राज्यका एक २ देश जागीरमें दिया । राजा वीरसिंहदेव, बहादुरसिंहको अपनी राजधानीमें रखकर अपनी सेनासहित सम्राट्की सेनाके साथ दक्षिणको गये, उन्होंने वहां जाते ही यह समाचार पाया कि उनके ज्येष्ठ पुत्र बहादुरसिंहदेव स्वयं राजकी उपाधि धारण करके राज्यशासन कर रहे हैं । वीरसिंह यह समाचार सुनकर पुत्रके आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए, और चार सवारोंको साथ लेकर दक्षिणके डेरोंसे अपने राज्यकी ओरको चले आये । राजा वीरसिंहदेवने खण्डेलासे दो कोशकी दूरीपर एक ग्राममें जाकर एक जाटकी स्त्रीके यहां डेरा लिया और उससे भोजन तैयार करनेके लिये कहा, और यह भी कहा कि हमारे घोडोंको सावधानीसे रखन', कहीं चोर आदि न ले जांय । यह वचन सुनकर जाटकी स्त्रीने कहा, कि क्या "बहादुरसिंह यहांके राजा नहीं हैं ? तुम राजमार्गमें सुवर्णकी मुद्रा फेक आओ कोई भी उनको नहीं छू सकता" । पुत्रके ऐसे युक्तिसंगत राज्यकी प्रशंसा सुनकर वृद्ध वीरसिंहदेव इतने प्रसन्न हुए कि वह जिस छद्मवेशसे आये थे उसीसे अपने डेरोंको लौट गये । वीरसिंहदेवने दक्षिण देशमें ही प्राण त्याग किये ।

पिताकी मृत्युके पीछे बहादुरसिंह पिताके पदपर नियमितरूपसे अभिषिक्त हुए। इस समय दिल्लीके सम्राट् औरंगजेब स्वयं सेनासहित दक्षिणके युद्धमें लिप्त थे। बहादुरसिंह भी अपनी सेनाके साथ दक्षिणात्यमें जाकर बादशाहकी सेनाके साथ जा मिले। परन्तु बहादुरखाँ नामक एक प्रतिष्ठित मुसलमानने बहादुरसिंहका घोर अपमान किया था, गौंडा मुसल्मानको बादशाहके निकटसे उस अपमान करनेका कोई फल न मिला इससे तेजस्वी राजपूत बहादुर अपने डेरे त्यागकर चले आये। इसी कारणसे मनसबदार सरदारोंकी तालिकासे इनका नाम काट दिया गया। इस कठिन समरमें नरपिशाच औरंगजेबने प्रत्येक हिन्दू प्रजासे जिजियाकर संग्रह करके राज्यके समस्त हिंदूमात्रको एकबार ही समभूमि करनेकी आज्ञा दी।

शेखावाटीके अधीश्वर राजा बहादुरसिंहके साथ जिस यवनसेनापति बहादुरखाँकी शत्रुता हो गई थी, दुराचारी औरंगजेबने उसी बहादुरखाँको खण्डेलासे जिजियाकर संग्रह करने और खण्डेलादेशके समस्त देवमंदिरोंको तुडवानेके लिये भेजा। बहादुरखाँके सम्राट्‌की सेनाके साथ खण्डेलाके सम्मुख पहुँचते ही खण्डेलाराज बहादुरसिंह कापुरुषोंकी तरह अपनी राजधानी छोड़कर भाग गये। सम्राट्‌की भयंकर सेनाके साथ जयकी आशा न देखकर यद्यपि वह भाग गये परन्तु जब जातीय धर्म जातीय विग्रह विध्वंस करनेके लिये विजातीय विधर्मी इकट्ठे हुए थे तब यथार्थ राजपूत वीरोंके समान उनके लिये तो रणभूमिमें यथाशक्ति बल प्रकाश करके जीवनका बलिदान करना ही उचित था। सम्राट्‌की सेना खण्डेला राजधानीके दो कोशपर निर्विघ्नतासे आ गई, समस्त शेखावत देशमें यह समाचार फैल गया कि बहादुरसिंह खण्डेलासे भाग गये उसी समय यवन खण्डेलामें विग्रह मचाकर संपूर्ण मंदिरोंको विध्वस्त करने लगे। इस समय रायसालके दूसरे पुत्र भोजराजके वंशधर सुजानसिंह चापोली प्रदेशके अधिष्ठाता पदपर प्रतिष्ठित थे। सुजनसिंहने इस समाचारको सुनते ही यथार्थ राजपूत वीरोंके

---

(१) पापात्मा औरंगजेबकी इस आज्ञाको किस प्रकारसे प्रबल आग्रहके साथ उसके सेवकोंने पालन किया था उसके प्रत्यक्ष उदाहरणस्वरूप प्रत्येक नगर और गावोंके अगणित देवालय एवं मंदिरोंके टूटे फूटे खंडहर और खंडित मूर्तियां आजलों हीनदशामें पडी हैं; लाहौरसे कन्याकुमारीतक इतने बडे प्रदेशमें ऐसी एक भी प्राचीन मूर्ति नहीं है, जिसका कोई न कोई अंग औरंगजेबकी आज्ञा पालनेके लिये न तोड दिया गया हो। नर्मदाके एक छोटे द्वीपपर ओंकारजीकी मूर्ति है, इस मूर्तिने भारतकी मूर्तियोंके तोडते समय अपनी विचित्र शक्ति प्रकाशित की थी। नराधम औरंगजेबने कहा, कि-"यदि यथार्थ देवता हो तो अपनी शक्तिको प्रगट कर मेरी आज्ञा व्यर्थ करे। इतिहास कहता है कि उक्त ओंकारजीके मस्तकमें लगुडका अघात लगते ही उनकी नाक और मुखसे रुधिरकी धारा बह निकली, उसको देखकर पापी यवनोंने दूसरी वार मूर्तिमें कुल्हाडा मारनेका साहस नहीं किया, यद्यपि ओंकारजीने पापी औरंगजेबको प्रत्यक्षमें किसी प्रकारका दंड नहीं दिया किन्तु उक्त समयसे ओंकारजीके प्रति सर्वसाधारण हिंदूमात्रकी प्रबल भक्ति हो गई और उस देशकी समस्त मूर्तिमें ओंकारजीकी अधिक पूजा होने लगी।

समान महाक्रोधित हो उसी समय यह प्रतिज्ञा की" कि मैं अवश्य ही प्राणपणसे खण्डेलाके समस्त मंदिरोंकी रक्षा करूँगा, यदि ऐसा न करूँ तो अपना जीवन दे दूँगा "। जिस समय खण्डेलामें बादशाहकी सेनाने प्रवेश किया उस समय सुजानसिंह मारवाडकी सीमामें विवाह करनेके लिये गये थे, अतएव वह शीघ्र ही नवविवाहिता वधूके साथ अपने स्थानको लौट आये और उसको अपनी माताके समीप रखकर दोनोंसे अन्तिम बिदाले खण्डेलाकी ओर चले। इसी समय उनके समस्त कुटुम्बके लोग भी आकर उनको खण्डेलामें जानेके लिये मना करने लगे, और बोले कि " जब बादशाहकी सेना खण्डेलाके मंदिरोंको तोडनेके लिये आई है तब खण्डेलाके राजा बहादुरसिंह ही इसको रोकनेका उपाय करेंगे, आपको इस कार्यमें हस्ताक्षेप करनेका कोई प्रयोजन नहीं है"। इसपर क्रोधितचित्त सुजानसिंहने उत्तर दिया था कि "क्या मैं रायसालके वंशधरोंमें नहीं हूँ ? यवन ठाकुरजीके मंदिरोंको तोड डालैं और मैं उनको निवारण न कर सकूँ ! झगडेके मिटानेका उपाय न करू ! ! भला यह कैसे हो सकता है ? राजपूत क्या कभी इस आक्रमणको सहन कर सकते हैं ? " इस कार्यमें सुजानसिंहको दृढ़प्रतिज्ञ देखकर उनके कुटुम्बियोंमेंसे ६० वीर और भी उनकी सहायता करनेके लिये चले। और उसी अल्पसेनाके साथ सुजानसिंहने खण्डेलामें प्रवेश किया । यवनसेनापति बहादुरखाँने यह नहीं विचारा था कि, हमारे साथ लडनेके लिये यह इस प्रकारसे आ जायँगे इस कारण यह समाचार सुनकर वह अत्यन्त ही आश्चर्यमें हुआ । वह भली भाँतिसे जान गया कि, जब राजपूत वीर किसी कार्यमें दृढ़प्रतिज्ञ हो जाते हैं तब वे महा भयंकर कार्य कर डालते हैं, इस कारणसे अथवा यह स्मरण करके कि अत्यन्त सामान्य संख्यक राजपूत उसी प्रबल सेनाके विरुद्ध समर करक जीवन देनेके लिये आये हैं; उसने दयाके वश हो सुजानसिंहके दो बुद्धिमान अनुचरोंको अपने डेरोंमें सलाह करनेके लिये बुला भेजा,तदनुसार इधरसे दो सम्भ्रान्त राजपूत बहादुरखाँके डेरोंमें जा पहुँचे, बहादुरखाँने उनसे कहा" यद्यपि बादशाहने खण्डेलाके देवमन्दिरोंके तोडनेकी आज्ञा दी है परन्तु यदि आप नियमितरूपसे हमारी अधीनता स्वीकार करके मन्दिरोंके समस्त सुवर्णके कलशोंको हमें दे देंगे तो हम प्रसन्न होकर मन्दिरोंको नहीं तोडेंगे । यह सुनकर राजपूद वीरोंने बहादुरखाँसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार बहुतसा धन देकर उक्त कार्य रोकनेका अनुरोध किया, पर बहादुरखाँने किसी भांति भी इस बातको स्वीकार नहीं किया । वह बारम्बार कहने लगा "कि आपको कलशे ही तोडकर देने होंगे" इस वचनको सुनकर उक्त दोनो राजपूतोंमेंसे एक भी वीर धीरज धारण करनेको समर्थ न हुआ, वह सिंहके समान गर्जने लगा "कलश उतार लेंगे !" उसके इतना कहते ही उसी समय उसने एक मिट्टीके पिंडका कलश बनाकर सम्मुख स्थापित कर क्रोधित हो सिंहके समान लाल २ नेत्र करके कहा–"कलश तोड लोगे ? अच्छा, मैं कहता हूँ यदि तुममेंसे किसीकी भी सामर्थ्य है तो इस मिट्टीके कलशको ही पहिले तोडकर देख लो ?" उस राजपूतके ऐसे क्रोध भरे वचन सुनकर शत्रु बहादुरखाँ भी मन ही मनमें राजपूत जातिके साहसको धन्यवाद देने लगा, परन्तु वह कलश तोड लेनेकी प्रतिज्ञासे

विरक्त न हुआ। इसके पीछे वे दोनों राजपूत उसके डेरोंसे चले गये, और सम्मुख युद्ध करनेका प्रस्ताव पक्का कर गये।

हम जिस समयकी बात लिख रहे हैं उस समयतक खण्डेलामें कोई किला नहीं था। उच्च शिखरपर स्थित खण्डेलाके राजप्रासाद और उक्त विग्रह मूलमंदिरके बीचोबीच जो एक ओंहरा था, उसी मार्गके मध्यस्थानमें एक बडा तोरण (फाटक) था। सुजानसिंहने अपनी कितनी ही सेना उस तोरणमें रखी और आप स्वयं कुटुम्बियोंके साथ उस मंदिरकी रक्षापर नियुक्त हुए।यद्यपि वह इस बातको जानते थे,कि मुसल्मानोंकी सेनाकी संख्या अधिक है,उनसे परास्त होनेकी संपूर्ण संभावना है,तथापि वह यथार्थ राजपूत वीरोंके समान अपने धर्मकी रक्षाके लिये अटलभावसे शत्रुओंके आनेकी बाट देखने लगे, थोडे ही समयके उपरान्त पापात्मा औरंगजेबकी सेनाने आगे बढकर तोरणद्वारकी रक्षापर सन्नद्ध राजपूतोंके ऊपर गोलियोंकी वर्षा करनी आरंभ की।इसके उत्तरमें राजपूतसेनाने भी महापराक्रमसे आक्रमण किया, और शत्रुदलका संहार करते २ अंतमें उन सभीके प्राणोंका नाश हो गया। तब विजयी मुसलमानोंका दल मंदिरके रक्षक राजपूतोंपर आक्रमण करनेके लिये आगे बढा; यह देखते ही सुजानसिंहके अनुचर राजपूत मंदिरमें स्थित प्रतिमाको प्रणाम कर नंगी तलवारें हाथमें ले, कालांतक कालके समान शत्रुओंके सम्मुख आ डटे वे शत्रु सेनाका नाश करते २ अंतमें आप भी नाशको प्राप्त होने लगे। सबसे पीछे वीरश्रेष्ठ सुजानसिंह रणभूमिमें सर्वदाके लिये निद्रित हुए। रणविजयी यवनोंने तुरन्त ही मंदिरोंको तोडफोड कर मूर्तियोंको चूर्ण २ कर डाला। जहाँ मंदिर थे वहाँ मसजिदें बनवा दीं, और उस मसजिदकी दीवारोंकी जडमें उस पापीने मूर्तियोंके टुकडे भरवा दिये। कर्नल टाड लिखते हैं कि "समस्त रजवाडेमें ऐसा एक भी प्रसिद्ध नगर नहीं है कि जिसमें पापात्मा औरंगजेबने मंदिरोंके तोडनेके लिये अपनी सेना न भेजी हो और उन मंदिरोंकी रक्षा करनेमें इस प्रकारसे राजपूतोंने अपने जीवनका बलिदान न किया हो"। यवनसेनापति बहादुरखाँने खण्डेलाको जीतकर वहाँ एक दल बादशाही सेनाका छोड दिया। परन्तु खण्डेलाके राजा बहादुरसिंहके अधीनमें जो समस्त प्राचीन राजकर्मचारी नियुक्त थे विजयी बहादुरखाँने उन सबको शासन और राजस्वभागके कामोंपर अपने अधीनमें रक्खा।

भागे हुए कायर बहादुरसिंह समीपके ही एक नगरमें निवास करते थे। कुछ ही दिन पीछे वहाँके दीवानकी सहायतासे उन्होंने बहादुरखाँसे उक्त देशकी पैदावारीका कुछ अंश और वाणिज्य शुल्कका कुछ अंश पानेकी अनुमति ली, अर्थात् उत्पन्न धान्यके मन पीछे एक सेर और वाणिज्य शुल्कके ऊपर रुपये पर एक पैसेके हिसाबसे उनको मिलने लगा। इस प्रकारसे राजा बहादुरसिंह अतिकष्टसे कुछ समय व्यतीत करते रहे, पीछे बादशाहने इनको बाग और महल दे दिये। इसके पीछे जिस समय सैयदके दोनों भ्राता दिल्लीके बादशाहकी सभामें अपनी प्रबल सामर्थ्य चलाते थे, उस समय बहादुरसिंहने उनको संतुष्ट कर अपने समस्त राज्यको पालिया,परन्तु उस समय भी खण्डेलामें

(१ तहसील वसूलका महकमा।

बादशाहकी एक सेनाका दल रहता था, और बहादुरसिंह उसका सारा खर्च देते थे। राजा बहादुरसिंहके तीन पुत्र थे। केसरीसिंह, फतेसिंह और उदयसिंह।

बहादुरसिंहकी मृत्युके पीछे केसरीसिंह पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, और जिस प्रकारसे इनके बापदादे खंडेलाको शासन करते थे अर्थात् वे जिस भाँतिसे सेनाके साथ दिल्लीके बादशाहकी सेनाके अधीनमें रहकर स्वाधीनभावसे खंडेलाको शासन कर गये हैं उसी भावसे शासन करनेके अभिप्रायसे केसरीसिंहने अपने समस्त अनुचर और सेनाको इकट्ठा करके फतेसिंहके साहित बादशाहके डेरोंमें जाकर सब प्रकारसे अधीनता स्वीकार कर बादशाहकी आज्ञामें रहनेकी अभिलाषा की। खण्डेला बहादुरसिंहके पतनके साथ ही साथ रायसालकी ज्येष्ठ शाखासे उत्पन्न मनोहरपुरके अधीश्वरने सम्राट्के यहाँसे नष्ट हुई सामर्थ्यका फिर उद्धार कर लिया था। इस समय जब केसरीसिंह फिर सम्राट्के डेरोंमें आकर अपने वंशकी पूर्ण कीर्तिको संग्रह करनेके अभिलाषी हुए, तब उक्त मनोहरपुरपातिके हृदयमें ईर्षाग्नि प्रज्वलित हो गई कि जिससे केसरीसिंह राजसभामें और स्वत्व प्राप्त न कर सकें, और वह ऐसे षडयंत्रोंका विस्तार करने लगे कि उन्होंने फतेसिंहको कलाकौशलसे हस्तगत करके कहा "आप भी तो बहादुरसिंहके पुत्र हैं, खंडेला देशपर आपका भी तो हक है। इकले केसरीसिंह ही क्यों राज्यसुख भोगैं? आप केसरीसिंहसे राज्यका आधा हिस्सा बँटा लीजिये"। अज्ञानी फतेसिंहने मनोहर-पुरपतिके उक्त वचनोंसे उत्तेजित और ऊंची अभिलाषासे प्रदीप्त होकर भाईके साथ झगडा करना प्रारंभ किया। खण्डेलाराज्यके दीवानने इन दोनों भ्राताओंमें विवादकी अग्नि प्रज्वलित होते देखकर स्थिर किया, कि इससे तो सर्वनाश होनेकी संभा-वना है, इस कारण उसने शीघ्र ही खण्डेलाकी राजधानीमें जाकर राजमाताको समस्त वृत्तान्त सुनाकर दोनों भाइयोंकी रक्षाके लिये और खंडेलाके कल्याण साधनके निमित्त दोनों पुत्रोंको राज्य बाँट देनेका अनुरोध किया। राजमाताने उस प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रकाशित की और केसरीसिंह और फतेसिंहने शीघ्र ही अपना २ भाग लेना स्वीकार किया तब खंडेला देशकी समस्त जनसंख्या भूमिको पांच हिस्सोंमें विभाजित कर दो भाग फतेसिंहको और राजा केसरीसिंह-को तीन भाग दिये गये। इसी प्रकारसे राजधानी नगरके भी भाग करके विभा-जित किये गये। इसी समयसे दोनों भ्राताओंमेंसे परस्पर प्रेम तो एक बार ही दूर हो गया वरन् वे एक दूसरेकी सूरतसे घृणा करने लगे। राजा केसरीसिंह खंडेलाको त्याग कर कावटा नामक स्थानमें रहने लगे। वह जब कभी २ राजधानी खण्डेलामें आते तब फतेसिंह वहाँसे चले जाते थे। दोनों भ्राताओंमें इस प्रकारसे भयंकर विद्वेष चला जाता था। मनोहरपुरपति इस समय शेखावत सम्प्रदायके संपूर्ण रूपसे नेता बन गये इस प्रकारसे कुछ दिन व्यतीत हो गये, राजा केसरीसिंहसे उक्त दीवानने गुप्तभावसे प्रस्ताव किया कि फतेसिंहको मारकर मनोहरपुरपतिकी प्रबलताको दूर करना अवश्य कर्तव्य है परन्तु राजा केसरीसिंह इस बातपर सम्मत न हुए। चतुर दीवानजीने प्रगटमें दोनों भ्राताओंमें मेल होनेकी इच्छासे कावटामें जानेकी तैयारी

की। फतेसिंहको इस बातका स्वप्नमें भी ध्यान न था कि, मेरे प्राणनाशके लिये यह षड्यंत्र हो रहा है। वह भाईके साथ प्रेम बढ़ानेकी इच्छासे कावटेमें आये और उसी समय तलवार मारकर उनके प्राण ले लिये गये, परन्तु इस हत्या करनेके मूलकारण दीवानजीने भी अपनी करनीका फल तुरन्त ही पा लिया; उसने जो तलवार फतेसिंहजी पर चलाई थी वही तलवार दीवानजीके भी गलेमें जाकर लगी, जिससे वह तुरन्त ही इस संसारसे बिदा हो गये।

राजा केसरीसिंहने महापाप करके अपने भाईके प्राणोंका नाश कर उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति और देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया और दिल्लीके बादशाहके ऊपर प्रवंचना भक्ति दिखाकर केसरीसिंहने इस प्रकारसे अपना मनोरथ पूर्ण किया। इस प्रकारसे संपूर्ण खंडेला राज्यका पूर्ण स्वत्व प्राप्त करके रेवासो स्थानका कर जो अजमेरके खजानेमें और खण्डेला देशका कर नारनोलके खजानेमें दिया जाता था उसे भी इस समय बंद कर दिया। इस समय सैयद अब्दुल्ला दिल्लीके बादशाहके यहाँ प्रधानमंत्रीपदपर अभिषिक्त था, वह केसरीसिंहकी ऐसी अराजभक्ति देखकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ; और उन्हें इसका बदला देनेके लिये उसने खंडेला देशपर एक सेना भेज दी, परन्तु राजा केसरीसिंहने इस समय अपनी सामर्थ्यको इतना फैला दिया था कि जिससे शेखावतकी समस्त सम्प्रदायोंमें उनका अधिकार फिर प्रबल हो गया था। सम्राट्‌की सेनाके आनेका समाचार सुनकर केसरीसिंहने समस्त शेखावत सामन्तोंको अपनी अपनी सेनासहित बुलाया—उनके उस बुलावेपर जातीय स्वत्व और सम्मानकी रक्षाके लिये प्रत्येक रायसालोत इकट्ठे होने लगे। अधिक क्या केसरीसिंहके चिरशत्रु मनोहरपुरके सामन्त भी अपने धात्री पुत्रके अधीन बादशाहकी सेनाके विरुद्धमें केसरीसिंहकी सहायता देनेके लिये आये। राजा केशरीसिंह इस प्रकारसे स्वजातीय सेनाके बलसे बलवान् हो बादशाहकी सेनाके साथ युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। सीमाके अन्तमें स्थित देवली नामक स्थानमें दोनों ओरसे भयंकर समारानल प्रज्वलित हो गई, परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि उस युद्धमें राजा केसरीसिंहके भाग्यमें जयकी आशा शीघ्र ही असंभव हो गई; शोचनीय जातिवैरने उनके भाग्यका द्वार तुरन्त ही बंद कर दिया। राजा केसरीसिंहकी जय होते देख उनके जातिशत्रु मनोहरपुरपतिकी सेनाका सेनापति उनका धामाई केसरीसिंहका पक्ष छोड अपनी सेनासहित रणक्षेत्रसे इकबारगी हट गया। राजा केसरीसिंह इस समय और भी एक विपत्तिमें पडे। कासलीके जिस महावीर सामन्तने इस समय राजा केसरीसिंहके पक्षमें सेनासहित प्रबल युद्धमें प्रबल पराक्रम प्रकाश किया था, जिसके ऊपर केसरीसिंहको बडा भरोसा था, वह भी इस समय युद्धमें मारे गये। इस प्रकारसे केसरीसिंहको विपत्तिमें पडा हुआ देखकर दांता वा दाता देशके लाडखानी सम्प्रदायके सामन्तनेताने इस सुअवसरपर अपना स्वार्थ साधन करना कर्तव्य विचारा, और कापुरुषोंकी तरह युद्धभूमि छोडकर राजा केसरीसिंहके अधिकारी खासा देशपर अधिकार करनेके लिये सेनासहित वह उधरको चला गया।

इस समय युद्धभूमिमें चारों ओरसे राजा केसरीसिंहकी जयध्वनि हो रही थी, परन्तु उन्होंने स्वजातिके उक्त असत् व्यवहारको देखकर अत्यन्त विषादपूर्ण हृदयसे कहा, "हा पाप ! यदि जो इस समय फतेसिंह जीवित होते तो वे कभी भी इस प्रकारसे मुझे पीठ न दिखाते, यद्यपि उपरोक्त दोनों सामन्त केशरीसिंहको छोडकर चले गये परन्तु वे इससे कुछ भी विचलित नहीं हुए। यथार्थमें रायसालोतने वीरके समान रणक्षेत्रमें अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये उन्होंने दृढ़प्रतिज्ञा की। इस समय दोनों ओरकी सेना प्रबल पराक्रमके साथ अपनी २ वीरता दिखा रही थी। उसी समय उन्होंने युद्धमें विषम वीरता प्रकाश करते हुए अपने छोटे भाई उदयसिंहको बुलाया और उनको युद्धक्षेत्र छोडकर अपनी रक्षा करनेके लिये अनुरोध किया। इस प्रकार राजपूत वीरोंके पक्षमें अपमानकारी आज्ञा पालन करनेमें उदयसिंहने सर्वथा सम्मति प्रकाश की, परन्तु जब राजा केसरीसिंहने कहा कि "मैंने अपने वंशके मस्तकपर कलंकका टीका देनेके लिये सेनासहित युद्धमेंसे भागनेके लिये नहीं कहा मैं स्वयं रणक्षेत्रमें रहूँगा, तुम इस स्थानसे चले जाओ। यदि तुम भी मारे जाओगे, तो हमारा वंश एकबार ही नष्ट हो जायगा। राजा केसरीसिंहके यह वचन सुनकर दूसरे सामन्त भी उदयसिंहको रणक्षेत्र त्यागनेका अनुरोध करने लगे, उन्होंने केसरीसिंहको भी समरभूमिसे भागनेका आग्रह किया, परन्तु राजा केसरीसिंहने कहा " नहीं अब हम जीवित रहनेकी इच्छा नहीं करते, मेरे मस्तकपर दो महापापोंके कलंककी रेखा खचित हो चुकी है। मैंने अपने भाईके प्राणनाश किये हैं, और विवाहके समय बीकानेरके चारणकविको विवाहका उपहार नहीं दिया। इसी कारण उसने मुझे शाप दिया था। इन दोनों कलंकोंके ऊपर कायर पुरुषोंके समान भागनेका तीसरा कलंक अब संचय करना नहीं चाहता, यह कहकर राजा केसरीसिंहने फिर भी उदयसिंहसे वही अनुरोध किया। तब उदयसिंह इच्छा न होनेपर भी भाईकी आज्ञानुसार रणभूमिसे चले गये।

जिससे खण्डेलाका राज्य शत्रुओंके हाथमें न जाय। जिससे खण्डेला देशपर शेखावत वंशका शासन प्रचलित रहे। उस महायुद्धमें स्थित राजा केसरीसिंहने इसी लिये प्रचलित रीतिके अनुसार " मेदिनी माताको " रुधिर मांस, और मट्टीके पिंड देनेका संकल्प किया। उन्होंने शीघ्र ही अपने शरीरमेंसे एक मांसका टुकडा काट डाला, किन्तु उस कटे हुए टुकडेसे प्रयोजनके अनुसार रुधिर न निकला, तब उन्होंने अपने दूसरे अंगको काटकर उसमेंसे निकले हुए रुधिरसे अपना संकल्प पूर्ण किया। कविश्रेष्ठ मंत्र पढ़ने लगे, पिंडदान समाप्त हो गया, कविने कहा कि मेदिनीमाताने दान लिया है, आपके पीछे सात पुरुष खण्डेलापर राज्य करेंगे।

महाराज केसरीसिंह पृथ्वीमाताके निमित्त इस प्रकारसे रुधिर मांस और मट्टीका पिंडदान करके संहारमूर्ति धारण कर नंगी तलवार हाथमें ले युद्धसागरमें कूद पडे। मनोहरपुर और दांताकी सामन्त सेनाने विश्वासघातकता करके पीठ दिखाई और केसरीसिंहकी सेनाका बल भी अत्यन्त क्षीण हो गया था, परन्तु उन्होंने फिर भी अतुल पराक्रमके

साथ संग्राम किया। अंतमें यवनसेनाने विजय प्राप्त की और वीरश्रेष्ठ केसरीसिंह जन्म भूमिके निमित्त रणशय्यापर अनंत निद्रामें सो गये। उदयसिंह पहिलेसे खंडेलाको चले गये थे। पर विजयी बादशाहकी सेनाने खंडेला जीतकर उदयसिंहको बंदी कर लिया। खंडेलादेश बादशाहके अधिकारमें हो गया; उदयसिंह बंदीभावसे तीन वर्षतक अजमेरके किलेमें रहे। तीन वर्षके पीछे उदयपुर और कासलाके शेखावत दो सामन्तोंने सम्राट्की सेनाको विध्वंस कर फिर खंडेलाको स्वाधीनता देनेकी अभिलाषा की। किन्तु अजमेरके किलेमें कैद राजा उदयसिंहपर विपत्ति आ पडनेकी आशंकासे उन्होंने गुप्तभावसे एक दूत-को उदयसिंहके पास भेजकर कहला भेजा, कि "हमने खंडेलापर फिर अधिकार करनेका उद्योग किया है। पीछे अजमेरमें स्थित बादशाहके प्रतिनिधि आपको भी इसमें सम्मिलित समझेंगे. इस कारण आप अपनी निर्दोषिता दिखानेके लिये उक्त राजाके प्रतिनिधिसे कह दीजिये, जिससे कि हम खंडेलापर अधिकार न कर लें। जब आप उनसे ऐसा कह देंगे तब वह कभी नहीं बिचारेंगे कि आपके ही लिये हमने खंडेलाको विजय करनेका उद्योग किया है तथा आप भी इसमें शरीक हैं।" वह दूत उदयसिंहसे ऐसा कहकर लौट आया; उसी समय उदयपुर और कासलीके दोनों सामन्तोंने अपनी प्रबल सेनाके साथ हठात् खंडेलापर आक्रमण कर वहांसे दिल्लीके बादशाहकी सेनाको परास्त करके और उसके सेनापति देवनाथको मार डाला। उदयसिंहने उक्त दोनों सामन्तोंके उपदेशसे पहिले ही अजमेरके यवनराजप्रतिनिधिको यह समाचार प्रगट कर दिया था, इस कारण राजप्रतिनिधिने उक्त दोनों सामन्तोंका खंडेलापर अधिकार करके समस्त सेनाके विनाशका समाचार सुना तो उसने विचारा कि अब किस प्रकारसे फिर उसपर अपना अधिकार हो सकता है, इसलिये उसने उदयसिंहके साथ सलाह की। उदयसिंहने कहा कि "यदि आप मुझको कैदसे छोड दें तो मैं खंडेलादेशको फिर बादशाहके अधिकारमें करा सकता हूँ, उनके यह वचनं सुनकर राजप्रतिनिधिने कहा "कि मैं आपको छोड सकता हूँ परन्तु आप अपनी प्रतिज्ञाको पालन करेंगे इसका क्या प्रमाण है?" तब युवक उदयसिंहने कहा, "मेरे बंधु तथा कुटुम्बी कोई भी नहीं हैं; केवल एक वृद्धा माता है, मेरी साक्षीस्वरूपमें आप उनको बंदी रख सकते हैं"। वास्तवमें उदयसिंहकी वृद्धा माता अपने पुत्रकी साक्षीस्वरूप हो बंदीदशामें रहने लगी। अंतमें उदयसिंहने इस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाको पूरण किया कि, जिससे राजप्रतिनिधि इनकी भक्ति और विश्वासको देखकर अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ। उदयसिंहने उस राजप्रतिनिधिको बहुतसा धन भी दिया इससे राजप्रतिनिधिने अत्यन्त ही प्रसन्न होकर खंडेला देशका अधिकार इनको अर्पण किया।

उदयसिंह इस प्रकारसे पिताके नष्ट हुए राज्यका फिर उद्धार करके खण्डेलाके सिंहासनपर विराजमान हुए, और सबसे पहिले वह अपने समस्त स्वजातीय और अनुचरोंकी सेनाको इकट्ठा करने लगे। मनोहरपुरके अधश्विरकी विश्वासघातकतासे ही खण्डेलाका पतन हुआ था; इसको स्मरण करके उनको उचित दंड देनेके लिये उन्होंने शीघ्र ही प्रबल सेनाकी सृष्टि की। मनोहरपुरपतिने उदयसिंहको अपने नगरपर

आक्रमण करनेके लिये आता हुआ देखकर अपने धाभाईके हाथमें सेनाका भार अर्पण कर उसीको युद्ध करनेके लिये भेजा, परन्तु वह तो मुकाबिला होनेके पहिले ही अपने प्राण लेकर भाग गया, इस कारण विजयी उदयसिंहने सरलतासे मनोहरपुरको जा घेरा। जब मनोहरपुरपतिने शत्रुओंसे अपनेको घेरा हुआ देखा तब वह अपने उद्धारका उपाय शोचने लगे और षड्यंत्र करने लगे। कासलीके सामन्त दीपसिंहने सेनासहित उदयसिंहके अधीनमें मनोहरपुरको घेर लिया था। अस्तु मनोहरपुरपतिने दो विश्वासी सामन्तोंके हाथ एक पत्र लिखाकर दीपसिंहको जनाया कि "उदयसिंह केवल मनोहरपुरपर ही अधिकार करके शान्त न होंगे यह हमें भली भाँतिसे विश्वास हो गया है, वह मनोहरपुरपर अधिकार करनेके पीछे आपके अधिकारी देश कासलीको भी जीत लेंगे, यह आप निश्चय जानिये।" दीपसिंह इस पत्रको पाकर इस पर संपूर्णतः विश्वास कर दूसरे दिन प्रभात होते ही जिस समय मनोहरपुरपर अधिकार करनेके लिये रणभेरी बजने लगी, उसी समय उस सामन्तने अपनी सेनासहित डेरोंको छोड दिया, और वह अपने देशकी ओरको चला गया। उदयसिंह इस षड्यंत्रको कुछ भी नहीं समझे, इस कारण दीपसिंहको उस भावसे भागता हुआ देख तथा उसी कारणसे मनोहरपुरपर अधिकार करके अपना बदला लेनेमें सफलता न देखकर वह मारे क्रोधके उन्मत्त हो गये, और शीघ्रतासे सेनासहित दीपसिंहके पीछे चले। दीपसिंह भलीभाँतिसे जान गये कि यह किसी प्रकारसे भी उदयसिंहके आक्रमणको निवारण नहीं कर सकैंगे, इस कारण वह कासलीको छोडकर जयपुरके महाराजका आश्रय लेनेके लिये भाग गये। यद्यपि उदयसिंहने कासलीपर अपना अधिकार कर लिया। परन्तु मनोहरपुरपतिने उक्त षड्यंत्रजालके विस्तारसे शत्रुओंके हाथसे उद्धार पाया; महावीर जयसिंह इस समय आमेरके सिंहासनपर विराजमान थे, उन्होंने शरणागत दीपसिंहको अभय देकर कहा कि "यदि आप शपथ करके हमारी अधीनता स्वीकार कर हमको कर देनेमें सम्मत हो सामन्तोंकी श्रेणीमें नियुक्त हों तो मैं उदयसिंहसे कासली देशको छीनकर आपको दे दूंगा, और उदयसिंहको इसका उचित दण्ड दूंगा।" दीपसिंहने इन धीरजदायक वचनोंपर विश्वास करके शीघ्र ही आमेरराजके अधीनता-स्वीकारपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये, और जयपुरेश्वरको वार्षिक चार हजार रुपया कर देना भी स्वीकार कर लिया।

इस प्रकारसे शेखावतके सामन्तोंके सम्प्रदायके ऊपर बहुत दिनोंके पीछे जयपुरपतिके आधिपत्य विस्तारका फिर सूत्रपात हुआ, हमारे पाठकोंको यह तो भलीभाँतिसे स्मरण होगा कि जिस समय शेखावतके सामन्तोंकी संख्या बहुत सामान्य थी, और उनकी सेनाकी संख्या कई सौ थी, उस समय प्राचीन रीतिके अनुसार अमृतसरसे घोडोंके बच्चे करस्वरूप देनेमें शेखावतके नेता असम्मत हुए थे, और इसी कारणसे आमेरपतिके साथ प्रबल समर उपस्थित हुआ था, उसीके फलस्वरूपमें शेखावतपतिने आमेरराज्यकी अधीनताकी शृंखला भंगकर सब प्रकारसे स्वाधीनताको संग्रह कर लिया था। पर आज इतने दिनोंके पीछे उस शेखावत

देशमें फिर आमेरराजवंशके आधिपत्यको विस्तार आरम्भ हुआ । जब कासलीके सामंत दीपसिंहने इस प्रकारसे वश्यता स्वीकार करके कर देनेमें अपनी सम्मति प्रकाश की, तब कई दिनोंके पीछे आमेरराज जयसिंह सूर्यग्रहणके समय गङ्गाजीपर स्नान करनेके लिये गये । उस समय दीपसिंह भी उनके साथ गये । जयसिंहने गंगाजीके निकट जा स्नान कर ब्राह्मण और दीन दरिद्रियोंको धन देनेके लिये उद्यत हो एक सेवकसे पूछा, "आज कौन दान लेनेके लिये उपस्थित है ? " कसालीके सामन्त दीपसिंहने यह वचन सुनकर महाराज जयसिंहके सम्मुख अपने अँगरखेका दामन फैलाकर कहा, "मैं आपकी कृपाका प्रार्थी हूं " महाराज जयसिंहने हँसकर कहा, " इस दानको ब्राह्मण, संन्यासी और दरिद्री ले सकते हैं । आप क्या चाहते हैं ? " दीपसिंहने उसी समय उत्तर दिया कि " आपकी कृपासे फतेसिंहके पुत्रको खण्डेला देशके वह अंश जिनपर इनके पिताका अधिकार था मिल जाय, आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है " । महाराज जयसिंहने गंगाजीके किनारे खडे होकर प्रतिज्ञा की कि मैं आपकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करूंगा ।

सन् १७१६ ईसवीमें यह घटना हुई थी, इस समय जाटजाति नवीन बलसे बलवान् होकर मस्तक ऊंचा कर रही थी, और आमेरपति महाराज जयसिंह इस समय दिल्लीके बादशाहके यहां प्रतिनिधि स्वरूपसे अगणित सेनादलके ऊपर सेनापति भावसे नियुक्त थे । और समस्त नीची श्रेणियोंके राजा उनके अधीनमें रहते थे । करौली, भदावर, शिवपुर और अन्यान्य देशोंके तीसरी श्रेणीके राजाओंमें खण्डेलाके राजा उदयसिंह भी इस समय अपनी सेनासहित जयपुरके महाराजके अधीनमें रहते थे, महाराज जयसिंहने जाट जातिके नवीन बलसे बलवान् नेता चूडामणिके अधिकारी थून नामक किलेको इस समय घेर लिया उक्त राजाओंके साथ खंडेलापति उदयसिंहने भी उनकी सहायता की । परन्तु उदयसिंह नियमसहित अपने कर्तव्यको पालन न कर सके; इसपर जयसिंहने उनका महा तिरस्कार किया । जयसिंह उदयसिंहके निकटवर्ती उच्च कक्षाके प्रभु अधीश्वर और सम्राट्के प्रतिनिधि थे । उदयसिंह उनके ऊपर विशेष सन्मान दिखानेको बाध्य थे, तथापि वह न्यायके विरुद्ध इस तिरस्कारको न सहन कर क्रोधित हो उक्त स्थानको छोडकर सेना सहित वहांसे चले गये । महाराज जयसिंहने दीर्घकालतक थूनके किलेको घेरकर जिस समय वह किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण सम्भावना करने लगे; उस समय थूनपति चूडामणिने गुप्तभावसे दिल्लीके बादशाहके मन्त्री सैयदके साथ संधिबन्धन कर लिया । इस कारण जयसिंह नव बलसे बलवान् हुए जाटपातिको उचित दण्ड देनेमें असमर्थ हो अत्यन्त व्यथित हो गये, परन्तु खंडेला राज उदयसिंहको उस गुप्त संधिका एक नेता मानकर उसको उचित दंड देकर अपना बदला लेनेके लिये उद्यत हुए ।

उदयसिंहने खंडेलाके शासनका अधिकार पाकर वहां उदयगढ नामक एक दुर्भेद्य किला बनवाया, इस कारण उन्होंने जयसिंहके खण्डेला जयकी इच्छा जानकर सेनासहित उस किलेमें प्रवेश किया, और दृढभावसे वहां रहने लगे । इस ओर महाराज जयसिंहने वाजीदखांके अधीनकी समस्त सामन्त सेना और जयपुरकी राजसेनाको

इकट्ठा करके उस उदयगढको जा घेरा। उदयसिंह अपने नामसे बनाये हुए, उस उदयगढमें एक महीनेतक रहे। पर जब उन्होंने देखा कि भोजनकी समस्त सामग्री समाप्त हो गई है, भूखोंके मारे सेनाके प्राणनाशकी सम्भावना है तब वह उसी समय किलेको छोडकर मारवाडके अन्तर्गत नारू नामक स्थानको चले गये। उदयसिंहके पुत्र सवाईसिंहने पिताको भागा हुआ देखकर विजयी जयसिंहके चरणोंमें आत्मसमर्पण करके किलेकी ताली उनके हाथमें दे कृपाकी प्रार्थना की। महाराज जयसिंहने उसको बडे आदरसहित ग्रहणकर क्षमा किया, और उसको आमेरकी अधीनता स्वीकार करनेके लिये कहा। कासलीके अधीश्वरके समान सवाईसिंह आमेरराजकी वश्यताके स्वीकारपत्रपर अपने हस्ताक्षर करके वार्षिक एक लाख रुपया कर देनेके लिये सम्मत हुए। समयपर उक्त करमेंसे पन्द्रह हजार रुपया घटाया गया और फिर खण्डेलापति आमेरराजको ६४ हजाररुपया प्रत्येक वर्षमें करस्वरूपसे देने लगे। पीछे जब आमेरराजका प्रताप अत्यन्त हीन हो गया और मरहठे तथा पठानोंके तस्करदलने आमेरराजके चारों ओर अत्याचार करने आरम्भ कर दिये। तब जयपुरपति खण्डेलासे नियमित करके संग्रह करनेमें असमर्थ हो गये, और उस समय करका परिमाण भी पहिलेके समान नहीं रहा। यद्यपि आमेरराज जयसिंहने सवाईसिंहको अभय देकर उनको खण्डेलाके शासनका अधिकार और शेखावत् सम्प्रदायके नेताकी उपाधि दी थी, परन्तु उन्होंने गंगाजीके किनारे कासलीके अधीश्वरके सम्मुख जो प्रतिज्ञा की थी कि फतेसिंहके पुत्रको खण्डेलाका पूर्व अधिकार दिया जायगा, उसको स्मरण करके इस समय उस प्रतिज्ञाके पालन करनेमें भी शान्त न हुए। फतेसिंह जिस प्रकार खण्डेलाराजके दो अंशको भोगते थे उनके पुत्र धीरसिंहको वही अंश दिये गये। इस प्रकारसे सवाईसिंहके दोनों जाति भ्राता खण्डेलाका अधिकार पाकर अपने अधीश्वर प्रभु जयसिंहके अधीनमें सेनासहित चले गये। सवाईसिंहके खण्डेलाके छोडते ही इस सुअवसरको पाकर उदयसिंहने लाडखानी नामक स्वजातीय एक दल मन्दस्वभाव राजपूतोंकी सहायताको लेकर हठात् उदयगढपर आक्रमण कर उसे अपने अधिकारमें कर लिया। पुत्र सवाईसिंहने पिताका यह आचरण जयपुरके महाराजको कह सुनाया, जयपुरपति महाराजने शीघ्र ही सवाईसिंहके साथ सेनाको खण्डेलामें भेजकर उदयसिंहको भगा देनेकी आज्ञा दी। सवाईसिंहने तुरन्त ही महाराजकी आज्ञानुसार जयपुरकी सेनाके साथ उदयगढपर आक्रमण कर वहांसे अपने पिताको भगा दिया। सवाईसिंहके उदयगढको घेरनेमें उदयसिंहने पहलेसे ही विशेष बाधा दी थी और अन्तमें फिर पहिलेके समान नारूदेशको भाग गये। उन्होंने अपने जीवनके शेष अंशको उस नारूदेशमें ही व्यतीत किया और पुत्र सवाईसिंहने उनके खर्चके लिये प्रतिदिन पांच रुपया नियत कर दिया था, परन्तु सवाईसिंहने पिताकी मृत्युके पहिले ही इस संसारको छोड दिया। सवाईसिंहके तीन पुत्र उत्पन्न हुए, बडा वृन्दावन, बिचला शंभु और छोटा कुशल था। बडा पुत्र खण्डेलाके राजपदपर प्रतिष्ठित हुआ, मध्यम रानौली देशपर और छोटा पिपंरौली देशपर स्थित हुआ।

द्वितीय अध्याय २.

वृन्दावनदास-उनका आमेरपति माधवसिंहकी सहायता करना-और माधवसिंहका वृन्दावनदासको सम्पूर्ण खण्डेलाका राज्य देना-वृन्दावनदासके साथ इन्द्रसिंहका युद्ध-वृन्दावनका प्रजा और ब्राह्मणोंसे दण्डस्वरूप कर लेना-उसके उपलक्षमें ब्राह्मणोंका आत्मनाश-माधवसिंहका पहिली आज्ञाका उलंघन करना-ब्राह्मणोंको धन देना-इन्द्रसिंहको फिर पिताके अधिकारका प्राप्त होना-खण्डेलाके दोनों राजाओंमें झगड़ा-फिर समर-नजफ अलीखांपर आक्रमण-पापोंके नाश होनेके लिये वृन्दावनका ब्राह्मणोंको भूवृत्ति देना-उनके पुत्र गोविन्ददासपर आपत्ति-वृन्दावनका खण्डेला राज्यका अधिकार पुत्रके हाथमें देना-गोविन्दसिंहका हत्याकांड-नरसिंहको पिताके पदकी प्राप्ति-शेखावाटी देशपर महाराष्ट्रोंका अत्याचार-महाराष्ट्रोंके द्वारा खण्डेलापर आक्रमण करनेका उद्योग-संधिका प्रस्ताव-महाराष्ट्रोंके द्वारा खंडेलाके दो सामन्तोंकी हत्या-प्रातिहिंसा देनेके लिये इन्द्रसिंहका उद्योग-इन्द्रसिंहका प्राणत्याग-प्रतापसिंह-महाराष्ट्रोंको कर देना-नरसिंह और प्रतापसिंहका खण्डेलापर शासन-सीकरके सामन्तोंकी प्रबलताका विस्तार-सीकरके सामन्तोंके दमनके लिये नन्दराम हलदियाका सेनासहित आगमन-सीकरपतिके साथ विचित्र उपायसे संधि स्थापन-प्रतापसिंहका समस्त खण्डेलापर अधिकार प्राप्त करना-रावल इन्द्रसिंह-चौमूके सामन्तको पदसम्मान प्राप्त होना-प्रतापका समस्त खंडेलापर अधिकार करनेकी चेष्टा करना-युद्ध-नरसिंहका फिर पैतृक स्वत्व प्राप्त करना-जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंका एक साथ मिलना-नन्दराम हलदियाको पदसे अलग करना-रोडाराम-शेखावाटीके अधीश्वरके साथ आमेरराजकी संधि-आमेरराजका संधिभंग-सामन्तोंका अपने बलसे अपने २ अधिकारी देशोंको ग्रहण करना-नरसिंहकी आमेरराजको कर देनेमें असम्मति-आमेरराजका खण्डेला राज्यपर अधिकार करना-कौशलद्वारा नरसिंहको बंदी करके उसे आमेरके कारागारमें रखना।

वृन्दावनदास जिस समय खंडेलाके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित हुए, उस समय आमेरके सिंहासनको लेनेके लिये माधवसिंहने ईश्वरीसिंहके साथ भयंकर युद्धानल प्रज्वलित की थी। वृन्दावनदास पहिलेसे ही माधवसिंहका पक्ष समर्थनकर सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करते थे, जिस समय माधवसिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए, उस समय उन्होंने उपकारी वृन्दावनदासके प्रति उपकार करनेकी इच्छा की।वृन्दावनदासने यह प्रार्थना करी कि खंडेलाका राज्य दो भागोंमें विभक्त होकर उसमें दो प्रतिवासी अधीश्वर स्थित हैं, इस लिये आपसमें बहुत दिनोंसे झगडा और युद्ध चला आ रहा है। इस कारण उस वृथा रक्तपातको दूर करनेके लिये एकके हाथमें खंडेलाका राज्य देना उचित है, ऐसा करनेसे फिर परस्परमें क्लेश नहीं होगा। इस समय फतेसिंहके पुत्र धीरसिंहके अप्राप्त व्यवहार पौत्र इन्द्रसिंह खण्डेलाके अन्यान्य अंशोंके अधीश्वर थे। आमेरपति माधवसिंहने वृदावनदासकी कामनाको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही उसके अधीनमें पांच हजार सेना भेजकर इन्द्रसिंहको भगानेकी आज्ञा दी, वृदावनदास इस प्रकारसे उस पांच हजार सेनाके साथ शीघ्र ही खंडेलापर गये, और उसने इन्द्रसिंहपर आक्रमण किया। इन्द्रसिंह प्रबल पराक्रमके साथ कई महीनेतक

किलेमें रहे और अंतमें प्रबल बलशाली शत्रुओंके कराल ग्राससे अपनी रक्षा करना असंभव विचार कर वह शीघ्र ही किलेको छोडकर पारासोली स्थानको चले गये। वृन्दावनदासने फिर वहाँ जाकर इन्द्रसिंहपर आक्रमण किया, उन्होंने कुछ कालतक अपनी रक्षा करके अंतमें आत्मसमर्पण करना ही कर्त्तव्य समझा। उस समय इनके सौभाग्यसे ही एक विचित्र घटना हुई, उसीसे उन्होंने अपना उद्धार कर लिया। यही नहीं, वरन् अपने पिताके अधिकारको भी फिरसे प्राप्त कर लिया।

आमेरराज माधवसिंहने वृन्दावनदासके अधीनमें जो पांच सहस्र सेना भेजी थी, उसके वेतन देनेका भार वृन्दावनके ही ऊपर रक्खा गया था, परन्तु वृन्दावनके पूर्व पुरुष खजानेकी रक्षा भलीभांतिसे न कर सके थे, उसी प्रकार वृन्दावनने भी शीघ्र ही उस सेनाका वेतन देनेके लिये अन्य उपायका अवलम्बन किया। वृन्दावनने सर्व साधारण प्रजासे और देवालयोंसे दंड लेना आरंभ कर दिया। उसने अन्याय करके ब्राह्मणोंके निकटसे कर ग्रहण किया था, इससे वे महा क्रोधित होकर वृन्दावनको धिक्कार देने लगे, परन्तु वृन्दावनने कुछ भी ध्यान नहीं दिया, कारण कि इस समय तो किसी उपायसे हो धनका संग्रह करना ही उसने आवश्यक समझा। इधर ब्राह्मणोंने वृन्दावनदासका अपमान किया और उसके कहनेपर भी कुछ नहीं सुना, तथा उसको बलपूर्वक कर ग्रहण करते हुए देखकर वे लोग शीघ्र ही रजवाडेमें बहुत समयसे प्रचलित रीतिके अनुसार आत्मघात करके वृन्दावनको ब्रह्महत्यारूपी महापापका भागी करनेके लिये उद्यत हुए। उनके दलके दल वृन्दावनके सम्मुख जाकर अपने २ शरीरपर अस्त्राघात करके अपने प्राणोंका बलिदान करने लगे। इस ब्रह्महत्याके कारणसे वृन्दावनदास अपनी जातिसे पतित हो गये। इधर परम हिन्दू आमेरराज माधवसिंहने वृन्दावनको बलपूर्वक ब्राह्मणोंसे दंड लेते हुए देखकर और इसीसे ब्राह्मणोंको आत्मघात करते हुए देखकर अपनेको भी अप्रत्यक्ष भावसे उस ब्रह्महत्या पापके अंशका भागी जानकर शीघ्र ही उस भेजी हुई सेनाको आमेरमें बुला भेजा, और दंडित ब्राह्मणोंको अपनी राजधानीमें बुलाकर उनको बीस हजार रुपये दिये। इस प्रकार वृन्दावनदासके अन्यायकार्यसे सेना बलहीन हो गई और घोर विपत्तिमें पडे हुए इन्द्रसिंह सहसा श्रेष्ठ उपायको प्राप्त कर अपने समस्त सेवकोंको फिर इकट्ठा करके आमेरपतिका अनुग्रह संग्रह करनेके लिये बाहर हुए। इसी समय माचेडीके राव आमेरराजके विषले नेत्रोंमें पतित होनेसे, खुशालीराम बोहरा आमेरराजकी ओरसे समस्त सेना लेकर माचेडीके रावपर आक्रमण करनेके लिये जा रहे थे, इन्द्रसिंह आयाचित होकर समस्त सेनाके साथ उस आमेरकी सेनाको लेकर माचेडीके रावके साथ युद्ध करनेके लिये चले। माचेडीके रावने देखा कि इस समय अपनी रक्षा करना असंभव है तब उसने तुरन्त ही जाटोंके अधीश्वरके निकट जाकर उसकी शरण ली। उक्त माचेडीपर बहुत समय तक इन्द्रसिंहने इस प्रकारसे अपने बलविक्रमके द्वारा आमेर राजका उपकार किया, इससे आमेरपति इनके ऊपर परम प्रसन्न हुए, इस समय इंद्रसिंहने भेंटमें आमेरपतिको पचास हजार रुपये भी दिये। तब आमेरराजने नियमित पट्टा देकर फिर उनको खंडेलाराज्यमें पिताका अंश दे दिया।

यद्यपि इन्द्रसिंहको अपने स्वामी आमेरराजसे राज्यकी सनद मिल गई, परन्तु वृन्दावनदासके साथ उनकी बराबर शत्रुता चली आती थी। खण्डेलाके दोनों राजाओंने अपने २ किलेको भलीभांति सेनासे पूर्ण करके आत्मविग्रहके समुद्रको बरावर मथन करनेमें त्रुटि न की। इस परस्परके झगडेने धीरे धीरे ऐसी भयंकर मूर्ति धारण की, कि ऐसा द्रोह आजतक किसी जातिमें भी नहीं हुआ था। पिताके साथ पुत्र, चचाके साथ भ्रातृपुत्रने सांसारिक सम्बन्धबन्धनको भूलकर उस झगडेके मुखमें युद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी।

वृन्दावनदास जिस प्रकारसे सेनाके बलसे वीरता और बलविक्रमसे बलवान् हो गये थे, इन्द्रसिंहने भी उसी प्रकार प्रजाके ऊपर असीम प्रेम और भक्ति दिखाकर अपना पक्ष प्रबल कर लिया था। इन्द्रसिंह एक समय अपनी सेना साथ लेकर वृन्दावनदासके उदयगढ नामक किलेपर अधिकार करनेके लिये चले, उनके विपक्ष वृन्दावनके छोटे पुत्र रघुनाथसिंहने आकर उस समय अपने जन्मदाता पिताके साथ युद्ध करनेके लिये इन्द्रसिंहका साथ दिया। वृन्दावनदासने अपने उक्त पुत्र रघुनाथको कुचोर नामक देशका अधिकार दिया था, परन्तु रघुनाथने पिताकी असम्मतिसे और भी तीन देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया था। इसीसे वृन्दावनने क्रोधित हो रघुनाथपर अपना बल प्रबल करनेकी इच्छासे इन्द्रसिंहके साथ मेल किया था। वृन्दावनदास गुप्तभावसे इन्द्रसिंहके बलको घटानेके लिये कितनी ही सेना साथमें लेकर कुचोरपर आक्रमण करनेके लिये चले। तब रघुनाथने इन्द्रसिंहका साथ छोडकर उनके भानेजे रानोलीके सामन्त पृथ्वीसिंहको साथ लेकर कुचोरकी रक्षा करनेके लिये उधरको रास्ता लिया। परन्तु वृन्दावनदास पहिले ही कुचोरपर अधिकार करनेमें असमर्थ हो जिस समय खण्डेलाकी ओरको जा रहे थे, उस समय मार्गमें इन्द्रसिंह और रघुनाथने सेनासहित इनका मार्ग रोका। जिससे किसी ओरका भी मनुष्य नगरमें प्रवेश न करने पावे, इस लिये खण्डेला नगरके द्वारको बन्द कर दिया। जिस समय इन्द्रसिंहने वृन्दावनका मार्ग रोका उसी समय उदयगढपर भी आक्रमण हुआ था। वृन्दावनके बडे पुत्र गोविन्दसिंहने जिस प्रकार प्रबल विक्रमके साथ उदयगढकी रक्षा की थी, उसी प्रकारसे इन्द्रसिंहके शत्रु चिरानाके सामन्त नाहरसिंहने उदयगढपर अधिकार करनेके लिये विशेष चेष्टा की थी। क्रमानुसार कितने ही दिनोंतक प्रतिदिन नगरके बाहर युद्ध होता रहा। उस युद्धमें पितापुत्र, पितृव्य, भ्रातृपुत्र और जातिके भ्राता परस्पर संहारमूर्ति धारण करके आक्रमण करने लगे। अंतमें दोनों पक्ष अत्यन्त हीनतेज हो गये, वृन्दावनदास अन्तमें इन्द्रसिंहके पहिले अधिकार देनेको बाध्य हुए। इन्द्रसिंहने इस प्रकारसे अपने अधिकारको पाकर खण्डेलाका आत्मविग्रह शान्त किया।

यद्यपि खण्डेलाराज्यपर शान्तिकी वर्षा हो गई, परन्तु शीघ्र ही और एक शत्रुने आकर शेखावाटीके देशोंपर अशान्तिकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। इसी समयमें छत्रप्रताप

(१) उर्दू तर्जुमेमें भतीजे।

और हीनबल दिल्लीके बादशाहकी सेनाका सेनापति नजफकुलीखां एकबार ही अंतिम बलके साथ अपने प्रभुत्वका विस्तार करनेके लिये बादशाहकी सेनाके साथ शेखावाटी राज्यमें आ पहुँचा। माचेडीके विश्वासहन्ता राव उस यवनसेनापतिकी विशेष सहायताके लिये तत्पर थे। वही उसको शेखावाटीमें लाये थे, उसने प्रत्येक देशके अधीश्वरके ऊपर अनेक भांतिसे अत्याचार कर बलपूर्वक दंड संग्रह करना प्रारंभ कर दिया। नवलगढके नवलसिंह, खेतडीके बाघसिंह, बसाऊके सूर्यमल इत्यादि सिद्धानी सम्प्रदायके अधशिवर उस यवनसेनापतिके निर्धारित दंडस्वरूप कई लाख रुपये देनेमें असमर्थ हो गये, तब नजफकुलीखांने उनको बंदी कर लिया। शेषमें शेखावाटीके दीनदरिद्री किसानोंसे कई लाख रुपये संग्रह करके वह समस्त धन यवनसेनापतिको दे दिया, इसके पीछे उक्त सामन्तोंको मुक्ति प्राप्त हुई।

इस प्रकारसे खंडेलाराज्यमें आत्मविग्रह दूर होनेके पीछे धनके लोभी ब्राह्मण दिन प्रतिदिन वृन्दावनदासको जातिवध इत्यादि महापातकोंका भय दिखाकर उसे उन पापोंके नाशके लिये प्रायश्चित्त और भूसम्पत्ति दान करनेके लिये उत्तेजित करने लगे। वृन्दावनदास और उपाय न देख ब्राह्मणोंके शापसे प्रायः प्रतिदिन उनको राज्यके एक २ देशकी भूमिका अधिकार देकर अपने पापनाश करनेमें प्रवृत्त हुए। उनको इस प्रकारसे अपने भविष्य वंशधरोंका स्वत्व लोप करते हुए देखकर उनके बडे कुमार गोविंददास महाविरक्त हो उनके इस कार्यमें प्रबल प्रतिवाद किये बिना न रह सके। वृन्दावनदासने अन्तमें अपने बडे पुत्र गोविन्दके करकमलमें खंडेलाराज्य देकर केवल अपने प्रतिपालन करनेके लिये पांच नगरोंका भूस्वत्व और खंडेलाराज्यका कुछ कर नियुक्त कर सिंहासन छोड दिया।

यद्यपि पिताके वर्तमान समयमें ही गोविंदसिंह खंडेलाके राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त हुए थे परन्तु उनको बहुत समयतक रायसालोत गणोंके अधीश्वर पदका सम्मान भोग करनेका सौभाग्य प्राप्त न हुआ। वह जिस सालमें सिंहासनपर अभिषिक्त हुए उस वर्षमें वर्षाके न होनेसे राज्यमें प्रयोजनके अनुसार धान्य उत्पन्न न हुए, इसीसे प्रजामें चारों ओर हाहाकार मच गया, और प्रजा कर देनेसे छुटकारा पानेके लिये प्रार्थना करने लगी। नारोली देशके अधीन सामन्तने खंडेला राज्यके गोविंदसिंहको इस समय यह सलाह दी कि आप एकबार राज्यमें घूमकर खुद अपनी आंखोंसे खेतीकी अवस्था देख आवें फिर आप इसपर बिचार कर सकते हैं, कि इस समय प्रजासे कर लेना ठीक है या नहीं। गोविन्दसिंह अपने पिताकी अपेक्षा अधिक कुसंस्कारहीन थे, इस कारण ब्राह्मणोंने उनको पूस मासकी आमावस्या तिथिमें भ्रमण करनेके लिये बाहर जानेका निषेध किया, और कहा कि आपके जानेके लिये आज अच्छा दिन नहीं है, आज जानेसे अमंगल होनेकी संभावना है, परन्तु गोविन्दसिंहने उनकी बातपर किंचित् भी ध्यान न दिया और खेतीकी अवस्था देखनेके लिये वह उसी दिन चले। काजरोली स्थानका निवासी एक सेवक गोविन्दसिंहके

साथ गया था । गोविन्दसिंहने उस सेवकके पास कितने ही बहुमूल्य द्रव्य रख दिये थे । उस सेवकने अपनी असावधानीसे उन सब द्रव्योंको खो दिया । परन्तु अधीश्वर गोविन्दसिंहने उन समस्त मूल्यवान् द्रव्योंके खो जानेसे उसका बहुत तिरस्कार किया, सेवकने अपनी निर्दोषताके बहुतसे प्रमाण दिखाये, परन्तु राजा गोविन्दसिंहने किसी प्रकार भी सेवककी बातका विश्वास न किया । स्वामीको इस प्रकारसे अत्यन्त क्रोधी देखकर और अंतमें अपनेको किसी भारी दंड मिलनेकी संभावना विचार कर उस सेवकने रात्रिके समय अपने स्वामी गोविन्दसिंहके प्राण ले लिये । गोविन्दसिंहके औरससे पांच पुत्र उत्पन्न हुए (१) नरसिंह (२) सूर्यमल्ल (इन्हें दोदिया देश मिला था) (३) बाघसिंह (४) ज्ञानसिंह और (५) रणजीत (इनसे प्रत्येक वंशका ही विस्तार हुआ था) ।

पिताकी शोचनीय मृत्युके पीछे नरसिंह खण्डेलाके सिंहासनपर विराजमान हुए । परस्परमें प्रबल आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे आर निकटवर्ती राज्योंमें अनैक्यताके बढ जानेसे शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंने अपने २ अधिकारी देशोंकी सीमाको बढा लिया; और उनकी प्रजाकी संख्या भी क्रमशः बढ गई । अतुल बलशाली मुगलसम्राट्के वंशधर इस समय केवल नाममात्रके बादशाह थे; अन्य पक्षमें शेखावाटीके निकटवर्ती उपरितन प्रभु आमेरराज इस समय उनसे किंचित् कर, सम्मान और समय२पर सेनाकी सहायता मिलनेसे अत्यन्त संतुष्ट हुए थे; उन्होंने सेखावत नेताओं-की जातीय स्वाधीनताके ऊपर इस समय हस्ताक्षेप करना उचित न समझा । परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय और एक शत्रुदलने आकर दर्शन दिया । वह शत्रुदल समधर्मा-वलम्बी होनेपर भी अत्याचारी मुसल्मानोंकी अपेक्षा अधिक उत्पीडक और विध्वंसकारी था । वह शत्रुदल नवीन बलसे उद्दीप्त महाराष्ट्रोंका दस्युदल था ।

जब महाराष्ट्रोंके नेताके अधीनमें स्थित फरासीसी सेनापति डिवाइनने मेरताके युद्धमें विजय प्राप्त की, तब उनके अधीनस्थ कठिन महाराष्ट्रीदलने पंगपालके समान कई दलोंमें विभक्त होकर शेखावाटीमें जाकर लूटमार करनी प्रारंभ की, और अंतमें वे प्रत्येक दुर्बल सामन्त और उनके पुत्रोंको बंदी करके ले जाने लगे । इन्हीं कारणोंसे उस नरघातक सर्वस्व लूटनेवाले महाराष्ट्रोंके तस्करदलके हाथसे छुटकारा पानेके लिये शीघ्र ही उन बंदी हुए सामन्तोंने अपना सर्वस्व बेचकर उनको धन देना स्वीकार किया, और किसी २ सामन्तको धन देनेमें असमर्थ होनेके कारण बंदीभावसे ही रहना पडा । पीछे उनकी रखवालीमें विशेष कष्ट होता हुआ जानकर तस्करोंके दलने अंतमें उनको भी छोड दिया ।

महाराष्ट्रोंके तस्करदलका एक दिनके अत्याचारका वृत्तान्त पढनेसे पाठक सरलतासे इसका अनुमान कर सकते हैं कि इन दुराचारियोंके द्वारा शेखावाटी देशमें कैसा भयंकर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित हुआ होगा । मेरताके युद्धके पीछे महाराष्ट्र दलने शेखावाटीमें जाकर सबसे पहिले बिबाईपर आक्रमण किया बिबाईके सम्पूर्ण निवासी तस्कर दलकी

संहारमूर्ति देख उसके हाथसे किसी प्रकार भी उद्धारका उपाय न देखकर अपनी २ धन सम्पत्ति लेकर प्राणोंके भयसे आसपासके प्रधान२नगरोंमें भागने लगे । केवल अस्सी राजपूत वीर जातीय गौरवकी रक्षाके लिय बिबाईके किलेके भीतर जाकर तस्करोंके दलकी राह देखने लगे । महाराष्ट्र तस्कर दलने बलवान् होकर बिबाईके किलेपर अधिकार कर लिया, परन्तु उन अस्सी राजपूतोंमेंसे एक भी न भागा । तथा बराबर शत्रुओंके साथ युद्ध करते २ अंतमें वे सब मृत्युशय्यापर शयन किये । वह तस्करोंका दल इस स्थानसे चलकर पीछे खण्डेलाकी ओरको बढा, और जाते २ मार्गमें भी अत्याचार और उपद्रवोंके करनेमें उसने कसर न की ।

महाराष्ट्र तस्कर-दलने खण्डेलासे दो कोस दूर होदीगांग नामक स्थानमें जाकर वहां अपने डेरे डाल दिये । और खण्डेलाके दोनों अधीश्वर नरसिंह और इन्द्रसिंहसे दंडस्वरूप बीस हजार रुपया मांग भेजा । महाराष्ट्रोंके दूतने इन्द्रसिंहके पास जाकर अपने नेताका संदेश कहा कि आपको दंडमें बीस हजार रुपया देना होगा । तब नरसिंह और इन्द्रसिंहकी ओरसे दो बुद्धिमान् सामन्त शीघ्र ही उस पण्डितके साथ शत्रुओंके डेरोंमें गये, और दंड देनेके निमित्त संधि करनेके लिये तैयार हुए । उन दोनों सामन्तोंके नाम नवलसिंह और दलेलसिंह थ ।

" उक्त दोनों सामन्त दो राजकर्मचारियोंको भी साथमें लाये थे और वह इस लिये कि जबतक करका अपेक्षित रुपया महाराष्ट्र नेताके पास न पहुँच जाय तबतक वे दोनों वहां साक्षीस्वरूपसे रहैं । अतएव सामन्तोंने महाराष्ट्रनेतासे सब प्रकारकी बातें तय करके उक्त कर्मचारियोंको वहीं छोडकर रुपया लेनेके लिये किलेको वापिस जाना चाहा, परन्तु महाराष्ट्रनेताने इसमें अपनी असम्मति प्रकाश करके कहा कि आपको स्वयं साक्षीस्वरूपसे यहां रहना होगा "। इस वचनसे अपना अपमान हुआ जानकर एक सामन्तने कहा कि यह कभी नहीं हो सकता । इसके पीछे वह अपने सेवकसे हुक्का लेकर तमाखू पीने लगा यह देखकर एक असभ्य दक्षिणी महाराष्ट्रने बलपूर्वक उक्त सामन्तके हाथसे हुक्का छीनकर फेंक दिया । इस व्यवहारसे उस सामन्तने अपना विशेष अपमान जाना, इसके पीछे जैसे ही वह अपनी कमरसे तलवार निकालकर इसका शिर काटनेके लिये उद्यत हुआ कि वैसे ही महाराष्ट्र नेताने दलेलसिंहके मस्तकको लक्ष करके पिस्तौल दाग दिया । जो सेवक दलेलसिंहके साथमें थे वे यह देखकर अत्यंत क्रोधित हुए, तथा बदला देनेके लिये तैयार हुए, पर बलवान् तस्करदलने एक २ करके सबके प्राणोंका नाश कर दिया ।

खंडेलाके एक अंशके अधीश्वर इन्द्रसिंह संधिके परामर्शका फल जाननेके लिये स्वयं उत्कंठित चित्तसे कितने ही सेवकोंके साथ शत्रुओंके डेरोंकी ओरको जा रहे थे ।

---

(१) महाराष्ट्र दस्यु दलके मंत्री तथा दूतपदपर केवल ब्राह्मण नियुक्त होते थे । कर्नल-टाड साहबने लिखा है कि यह श्रेणी जिस प्रकारसे चतुर है उसी प्रकारसे प्रयोजन होनेपर असीम साहस भी दिखाती है । दौत्यकार्यमें ब्राह्मणगण ही सबसे चतुर होते थे, विख्यात पश्चिमी नीतिज्ञ मेकिया वेलीने भी इनसे हार मान ली थी ।

उन्होंने डेरोंके समीप जाते ही सुना कि दस्युदलने हमारे कुटुम्बियोंकी हत्या की है। इन्द्रसिंहके सेवकोंने उनको उसी समय खंडेलामें लौटजानेकी सम्मति दी, परन्तु इन्द्रसिंहने कहा, "नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता। जब कि हमारे कुटुम्बियोंकी हत्या की गई है तब उस हत्याका बदला दिये बिना अपमानित होकर मैं खंडेलामें जानेकी अपेक्षा इस स्थान पर प्राण त्याग करना कल्याणकर समझता हूँ" इन्द्रसिंहने वीरपुरुषके समान यह वचन कहकर उसी समय घोडेपरसे उतर कर उसे छोड दिया; इनके सेवक भी उसी समय इनकी आज्ञासे घोडोंपरसे उतर पडे। सभीने नंगी तलवारें हाथमें लेकर शत्रुओंके डेरोंमें प्रवेश किया। और विषमवेगसे बदला लेनेके लिये उन्होंने महाराष्ट्रोंपर आक्रमण किया, बडे २ बुद्धिमान् महाराष्ट्र उस समय डेरोंके भीतर थे, इस कारण साधारण थोडेसे सेवकोंके साथ इन्द्रसिंह विषमवीर प्रकाश करके पीछे स्वयं मारे गये। सबको मृतक हुआ देख दस्युदलने विचारा, कि दलेलसिंहके अपमानसे ही यह कार्य हुआ है और वह दलेलसिंह भलीभाँतिसे घायल होकर भी जीवित हैं। इस कारण वह लोग इनको उसी अवस्थामें डेरोंके भीतर ले गये।

मुगलपठानोंके स्थलाधिकारी, मुगलपठानोंके समस्त असद्गुणोंके अधिकारी सभ्यता और भद्रतासे अशिक्षित महाराष्ट्र दस्युदलने इस प्रकारसे सबसे पहिले शेखावाटीका वियोगान्त अभिनय आरंभ किया, परन्तु नरपिशाच महाराष्ट्रोंक पक्षमें वह सामान्य भूखंड शेखावाटी, अभिनयका उपयुक्त पूर्णक्षेत्र नहीं विचारा गया। उन्होंने एक समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें, सतलजसे समुद्रतक प्रत्येक देश, प्रत्येक नगर और प्रत्येक ग्रामोंपर इस प्रकारसे आक्रमण कर रक्तपात और लोमहर्षण काण्डद्वारा अपनी पैशाचिक वृत्तिका पूर्ण परिचय दिया था।

जिस समय राव इन्द्रसिंह महाराष्ट्रोंके डेरोंमें मारे गय, उस समय उनके पुत्र प्रतापसिंहने अपनी माताके साथ खण्डेलासे पाँच कोस दूर शिखरपर स्थित शिखराई नामक अभेद किलेमें निवास किया। प्रतापसिंह उस समय राजकार्यको कुछ भी नहीं जानते थे, इस कारण महाराष्ट्र दस्युदलके हाथसे नगर और अल्पवयस्क कुमारके जीवनकी रक्षाके लिये, प्रधान २ मनुष्योंने शीघ्र ही समस्त धान्यके गाल्लोंको खोलकर उनमेंका समस्त अन्न और सम्पूर्ण धन सम्पत्ति बेंच डाला और इस प्रकारसे धन संग्रह करके महाराष्ट्रोंकी अभिलाषाको पूर्ण किया। इस प्रकारसे तस्करोंका दल खंडेलासे धनसंग्रह करके पीछे संहारमूर्ति धारण कर सिद्धानी सम्प्रदायके अधिकारी देशोंपर आ पहुंचा। उन्होंने सबसे पहिले उदयपुरपर आक्रमण कर वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको लूट उसपर अपना अधिकार कर लिया। उन्होंने पीछे नगरकी समस्त दीवारोंको तोडकर अतुल धन प्राप्तिकी आशासे दीवारोंके नीचे खोदकर क्रमानुसार चार दिनतक अत्याचारका स्रोता बहाया, और उदयपुरको एकवार ही विध्वंस कर उत्तर प्रदेशके सिंहाना, झुंझुनू और खेतरी आदिके सामन्तोंके देशोंको लूटनेके लिये गमन किया।

महाराष्ट्रोंके तस्करदलके चले जानेके पीछे प्रतापसिंह और नरसिंह खंडेलामें आकर राज्य करने लगे, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह पूर्वोक्त संघात वेगको सहन न कर सके। तब उनके अधीश्वर आमेरराजने इनसे असमयमें कर लेना चाहा। प्रतापसिंहने अपने राज्यमें जितना अन्न उत्पन्न हुआ था उसका चतुर्थांश देकर आमेरपतिको सन्तुष्ट किया, परन्तु नरसिंहने पूर्व पुरुषोंके समान उद्धत स्वभावके वशीभूत हो आमेरपतिको कुछ भी न दिया। उन्होंने कहा कि इस प्रकारके कर देनेसे हमको सामान्य भूमिया जमीदारके पदपर स्थित होना होगा"।

इस समय शेखावत वंशकी एक दूरवर्ती शाखामें उत्पन्न हुए एक सामन्तने अपने बाहुबल और विक्रमके साथ आशातीतरूपसे अपना मस्तक उठाया था। उसका नाम देवीसिंह था। वह कासलीके राव तिरमल्लका वंशधर था, और उसके अधिकारी देशका नाम सीकर था। देवीसिंहने शेखावतपति खंडेलाराजके अधीन सामन्त होकर भी अपने बाहुबलसे धीरे २ लोहागढ खोह इत्यादि पचीस नगर और किलोंपर अपना अधिकार कर लिया। जिस समय उनके अधीश्वर प्रभु नरसिंह आमेरराजके क्रोधमें पतित हुए उस समय वह उपयुक्त सुअवसर जानकर रिवासो देशपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए, परन्तु इस समय उनके प्राण वियोग होनेसे उनका वह मनोरथ अपूर्ण ही रह गया देवीसिंहके आजतक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ, इस कारण उन्होंने मृत्युके पहिले साहपुराके सामन्तके पुत्र लक्ष्मणसिंहको दत्तकरूपसे ग्रहण करके उसको अपने उत्तराधिकारी पदपर नियुक्त किया था। परन्तु देवीसिंहके शेखावाटीके दुर्बल सामन्तोंके प्रति बल प्रकाश करके ग्राम नगरोंको अपने अधिकारमें कर लेनेके आचरणसे आमेरराजने महा क्रोधित हो अपने मन्त्री दौलतरामके भ्राता नन्दराम हलदियाको देवीसिंह पर आक्रमण करके राज्यकर संग्रह करनेकी आज्ञा दी। जिससे उसने शीघ्र ही लक्ष्मणसिंहपर आक्रमण करके उनको अधीन बना लिया। जयपुरके महाराजकी उक्त आज्ञाके प्रचार होते ही सीकरपति देवीसिंहने समस्त स्वजातीय सामन्तोंको निकालकर उनके अधिकारी देशोंपर बलपूर्वक अपना अधिकार कर लिया था। वह सब जयपुरके महराजकी कृपासे फिर अपने २ देशोंके पानेकी इच्छासे दलके दल सेना सहित उक्त कर संग्रह करनेवाले नन्दराम हलदियाके डेरोंमें आने लगे। खण्डेलाके अधीश्वर स्वयं अपनी सेना सहित जाकर उस पक्षके साथ मिले। तिरमल्लके वंशके अन्यान्य शाखाके अर्थात् कासली बिलारा इत्यादिके पट्टावत् भी शीघ्र ही इनके साथ आ मिले। तथा जिससे सिद्धानीकी सम्प्रदाय किसी समय भी रायशालोत्पर उपद्रव वा आत्मविग्रह करनेमें किसी प्रकार भी हस्ताक्षेप न कर सके इससे वह भी इस समय आनन्दित होकर अपने २ दियेहुए करको लेकर सेना सहित जयपुरके सेनापतिके डेरोंमें आने लगे। सारांश यह है कि सीकरपति देवीसिंहने इस समय शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंके ऊपर मस्तक उठाया था, इसीसे शेखावाटीके प्रत्येक अधीश्वर उनके दत्तकपुत्रके विरुद्ध एक मनुष्यके समान सेना सहित खडे हुए। परन्तु सीकरपति देवीसिंह सामान्य मनुष्य नहीं थे। उनमें चतुरता और नीतिज्ञता तथा

षड्यंत्रके विस्तारकी सामर्थ्य भलीभांतिसे विद्यमान थी। इन्होंने सबसे पहिले आमेर-राजकी सभामें सदस्योंके साथ विशेष प्रीति स्थापन की थी, कारण कि वह इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि राजसदस्योंके साथ विशेष सद्भावकी रक्षा करनेसे जिन समस्त देशोंपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया है, इस समय उन सबको निर्विघ्नतासे उपभोग करनेमें समर्थ होंगे। देवीसिंहके साथ जयपुरके राजमंत्री और उनके भ्रातामें विशेष प्रीति उत्पन्न हो गई थी। उस समय उस मित्रताकी परीक्षाका समय उपस्थित हुआ। जैसे ही नंदराम उस सम्मिलित प्रबल सेनादलके साथ सीकरपर आक्रमण करनेके लिये पहुंचे कि, वैसे ही एक चन्द्रावत् सामन्त सीकरके दीवान और एक धाभाईने लक्ष्मणके प्रतिनिधि स्वरूपसे नंदरामके निकट जाकर नम्रतायुक्त वचनोंसे मृत देवीसिंहके नामसे यह कहकर प्रार्थना की, कि जिससे वह देवीसिंहके अज्ञानी पुत्रको प्रतिहिंसा देनेके निमित्त क्रोधित हुए शेखावतोंके मुखमें अर्पण न करें। नंदरामने कहा कि "आपके अनुरोधकी रक्षाका मैं इस समय केवल एक उपाय देखता हूँ कि जिससे आप सरलतासे आक्रमणको निवारण करसकेंगे। और हम भी राजाकी आज्ञाको पालन करनेमें समर्थ होंगे। आप बहुतसी सेनाको इकट्ठा करके सीकरकी रक्षामें यत्नवान् हों तो कोई भी इस बातको नहीं जान सकेगा कि हमी गुप्त षड्यंत्र करके राजाकी आज्ञाको व्यर्थ करनेके लिये उद्यत हुए हैं"। देवीसिंह फतेपुरके अधीनके कई एक देशोंको लूटकर यहांसे बहुतसा धन ले गये थे, इस कारण लक्ष्मणसिंहकी ओरके मनुष्योंने शीघ्र ही बहुतसे रुपये खर्च करके बहुत थोडे समयमें ही दश हजार सेना सजाली और वे सीकरकी रक्षा करनेमें नियुक्त हुए। इस ओर पूर्व गुप्त प्रस्तावके मतसे नन्दराम सम्मिलित सेनादलके साथ सीकरको घेरकर यथार्थ युद्धके बदले केवल बाहरी समर कौशल दिखाकर युद्ध करने लगे। कई दिनतक इस प्रकारसे कृत्रिम युद्ध और सीकरपर अधिकारकी चेष्टा दिखानेके पीछे नन्दरामने जयपुरमें अपने भ्राता राजमंत्रीके पास इस मर्मका एक पत्र भेजा कि "सीकरको विजय करना किसी भाँति भी सरलकार्य नहीं है और सीकरपति लक्ष्मणसिंह वश्यता स्वीकार करके दंडस्वरूपमें दो लाख रुपये देनेके लिये तैयार हुए हैं, हमारी सम्मतिसे उस धनको लेकर सीकरको छोड देना उचित है।" नंदरामने उक्त पत्रके उत्तरकी प्रतीक्षा न करके आमेरराजके निमित्त लक्ष्मणसिंहके पाससे दो लाख रुपया और अपने लिये रिशवतमें एक लाख रुपया लेकर सीकरको छोड दिया। इस प्रकारसे सीकरपति लक्ष्मणसिंह निर्विघ्नतासे अधिकारी देशोंको भोगने लगे। विशेष करके इस समय खंडेलाके दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहमें विसंवादकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे नंदरामके स्वार्थसाधनमें विशेष सुभीता होने लगा।

खण्डेलाके अन्यतर अधीश्वर नरसिंह पहिलेसे ही आमेर राजकी आज्ञाके अनुसार कर दान करनेमें असम्मत होनेसे उनके क्रोधानलमें पतित हो चुके थे, इस कारण खंडेलाके अन्य अधीश्वर प्रतापसिंह इस सुअवसरमें पिताके विवाद विसंवादको एकबार ही निर्वाणके साथ नरसिंहको चिरकालके लिये खण्डेलाके अधिकारसे रहित

कर खंडेला राज्यके संपूर्ण अधीश्वर होनेके लिये इस समय अपनी सामर्थ्यके अनुसार विशेष चेष्टा करने लगे। उन्होंने जयपुरके सेनापति उक्त नंदरामके निकट यह प्रस्ताव किया " कि जितनी आमदनी खंडेलाकी है उसका सब कर मैं अकेला दूँगा; सब देशका अधिकार मुझे दिला दिया जाय। जिस समय महाराज आज्ञा देंगे तभी मैं सेना सहित उनकी आज्ञाको पालन करनेके लिये हाजिर हूँगा; और मेरे अभिषेकके समय जयपुरपतिको बहुतसा धन भेंटमें दिया जायगा "। नंदराम प्रतापसिंहकी प्रार्थनाके मतसे उनको समस्त खण्डेला राज्यके अधीश्वरके पदपर वरण कर तथा शासनकी सनद देनेमें शीघ्र ही सम्मत हुए।

नन्दरामके डेरोंमें नाथावत् सम्प्रदायके नेता सामोदके सामन्त रावल इन्द्रसिंह निवास करते थे। उन्होंने नरसिंहका सर्वनाश होता हुआ देखकर उनकी ओर हो उनको अभय देनेके लिये खंडेलासे अपने शिबिरमें आनेके लिये बुला भेजा।

रावल इन्द्रसिंहके बुलानेसे नरसिंहके आते ही इन्द्रसिंहने उनसे समस्त समाचार कह दिया कि " आपके प्रतियोगी प्रतापसिंहको समस्त खंडेलादेशका अधिकार देनेके लिये सनदपत्र तैयार हुआ है। आप शीघ्र ही पिताके अधिकारसे रहित हो जाँयगे, इस कारण यदि आप इस समय भी आमेरराजकी आज्ञाके पालन करनेमें सम्मत होंगे तो भी हम आपके अधिकारकी रक्षाके लिये विशेष यत्न और उपाय कर सकेंगे"। परन्तु नरसिंह किसी प्रकारसे भी उस प्रस्तावके अनुसार आमेरराजको कर देनेमें सम्मत न हुए, इसलिये इन्द्रसिंहने शीघ्र ही नरसिंहके जीवनकी रक्षाके लिये उनको उसी समय डेरोंको छोडकर खण्डेलासे भागनेकी सम्मति दी। उन्होंने कहा कि " आपके यहाँ रहनेसे मैंने जो आपका पक्ष समर्थन करनेके लिये चेष्टा की थी वह प्रगट हो जायगी, इस कारण इसमें हमपर अधिक विपत्ति आनेकी संभावना है। यदि आप इसमें सम्मत हो जाते तो इस विपत्तिकी आशा न थी " उस दिन रात्रिके समय इन्द्रसिंहने अपने ६० अनुचरोंके साथ अत्यन्त गुप्तभावसे नरसिंहको डेरोंमेंसे नवलगढमें भेज दिया और नरसिंहने दूसरे दिन प्रभात होते ही अपने किले गोविन्दगढमें निर्विघ्नतासे प्रवेश किया। परन्तु इन्द्रसिंहने जो विचार किया था वही हुआ, उनकी उस सावधानीके अवलम्बनका कोई फल न देख पडा। कारण कि उन्होंने नरसिंहको डेरोंमेंसे नवलगढमें भेजा था इससे नंदरामने उनके ऊपर क्रोधित होकर उन्हें राजकोषका भय दिखाया। परन्तु वीरतेजस्वी राजपूत इन्द्रसिंहने कहा, कि " मैंने राजपूतोंका कर्तव्य कार्य किया है, तथा उसका फल भोगनेके लिये मैं कुछ भी भयभीत नहीं हूँ "। अत्यन्त दुःखका विषय है कि, इन्द्रसिंह वास्तवमें ही आमेर-पतिके क्रोधमें पतित हुए।

नाथावत् सम्प्रदायमें सामोत और चौमू इन दोनों देशोंके दो सामन्त सबमें प्रधान थे, प्रथम शाखावाले सामोतके सामन्त सबसे अधिक सम्मानित थे, तथा रावल-की उपाधि धारण करके नीचे पदपर स्थित अगणित सामन्तोंके ऊपर अपना अधिकार

चलाते थे, परन्तु चौमूके सामन्त बहुत दिनोंसे सामोतके सामन्तोंके उक्त पद सम्मान और सामर्थ्यकी हिंसा प्रकाशके साथ स्वयं उक्त पद और सम्मानकी प्राप्तिके लिये बीच २ में झगडा करते थे, अधिक क्या इसी कारणसे रक्तपात भी हुआ था। सामोतके सामन्त इन्द्रसिंह जभी उपरोक्त प्रकारसे आमेर राजके क्रोधमें पतित हुए तभी शुभ अवसर पाकर चौमूके सामन्त शीघ्र ही जयपुरकी राजसभामें आये, और नाथावत सम्प्रदायके सबमें श्रेष्ठ सामन्त पद और उपाधि धारण करनेके लिये आमेरके महाराजको बहुतसे रुपये भेंटमें देनेके लिये तैयार हुए। आमेरके महाराज चौमूके सामन्तकी प्रार्थनापर शीघ्र ही उनकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये सम्मत हुए। नन्दरामके समीप सामोतके सामन्त इन्द्रसिंह इस समय भी निवास करते थे। इन्द्रसिंहको शीघ्र ही आमेरराजके निकटसे इस मर्मकी एक आज्ञा हुई कि आपने जो अपराध किया है उस अपराधके दंडमें सामोत देशको आमेरराजने अपने अधिकारमें कर लिया, इस निमित्त आप शीघ्र ही सामोतसे अलग हो जाँय। सामोतके सामन्त इन्द्रसिंहने राजाकी उक्त आज्ञाको पाते ही उसमें किंचित्मात्र भी आनाकानी न की, वरन् यथार्थ राजभक्तके समान उस आज्ञापत्रको मस्तक पर धारण करके शीघ्र ही उन्होंने सामोतको गमन किया। वहाँ इनकी जो कुछ भी धनसम्पत्ति थी उस सबको लेकर वह कुटुंबके साथ चिरकालके लिये सामोतका त्याग कर निर्वासित अवस्थासे मारवाड राज्यके आश्रयमें चले गये। कुछ समयके उपरान्त सामोतके उसी अधीश्वरकी स्त्रीको आमेरराजकी सभासे पिपली नामक एक ग्रामका अधिकार मिला। इन्द्रसिंह वार्धक्यदशामें अपनी मृत्युको अत्यन्त निकट देखकर अन्तमें अपनी जन्मभूमिमें तथा स्वजातिमें प्राण त्याग करनेके लिये उस ग्राममें चले आये। इन्द्रसिंहकी इस राजभक्तिसे जानागया कि, यह अत्यन्त ही प्रशंसनीय पुरुष हैं अधिक क्या कहैं इन्द्रसिंह स्वभावसे ही असीमसाहसी और वीर थे, यदि वह विचार करते तो अवश्य ही बहुत सी सेना संग्रह करके आमेरराजके उक्त अन्यायमूलक आचरणोंके विरुद्ध खडे होकर अपने पिताके राज्यखंडकी रक्षा कर सकते थे, परन्तु उन्होंने केवल राजभक्तिके भावसे स्वार्थत्याग किया था।

इस समय खण्डेलाकी ओर दृष्टि डालनी होगी। खण्डेलापति नरसिंह आमेर-पतिके विषैले नेत्रोंमें पडे, आमेरके सेनापति नन्दराम हलदियाने खण्डेलाके अन्यान्य अंशोंके अधीश्वर प्रतापसिंहको जब खण्डेला प्रदेशके अधिकारकी सनद दी तब प्रतापसिंह अत्यन्त प्रसन्न होकर अपनी समस्त सेना साथ लेकर खण्डेलामें आये। उन्होंने खण्डेलापर अधिकार करके सबसे पहिले उस तोरणको तोडकर एकसर करनेकी आज्ञा दी, जिसे नरसिंहने नगर रक्षाके लिये दुर्गस्वरूपसे बनवाया था और उसीके ऊपरसे प्रतापके पिताके महलेंपर गोले वर्षाते थे। उस तोरणके ऊपर गणदेवकी एक मूर्ति थी। गणदेवता सिद्धिदाता और सर्वमंगल विधातारूपसे पूजे जाते थे। दुर्घटनाके वश तोरणके टूटनेके समय वह गणदेवकी मूर्ति भी टूट फूट कर चूर्ण हो गई। यह बात प्रतापके पक्षमें अवश्य ही भावी अमंगल अनुमान किया जा

सकता है। जो कुछ भी हो प्रतापसिंह उस तारणको एकसर करके राजधानी खण्डेलाके शासनका बंदोबस्त कर रेवासोपर अधिकार करनेके लिये गये । अपने बाहुबलसे रेवासो जीत कर प्रतापसिंहने नन्दराम हलदियाके अधीनकी कितनी ही सेनाके साथ उस गोविंदगढ नामक किलेको भी जा घेरा जिसमें नरसिंह रहते थे। गोविन्दगढसे दो कोस और रानोलीसे चार कोस दूरीपर गोरानामक स्थानपर डेरे डाले, रानोलीके जो सामन्त इस समय तक अपने उपरितन प्रभु अधीश्वर हतभाग्य नरसिंहका पक्ष समर्थन करते थे, उन्होंने अपने मंत्रीको हलदियाके पास भेजकर यह समाचार कहला भेजा कि आमेरराजको जो कर नरसिंहके पाससे मिलता है हम उस सबको देनेके लिये तैयार हैं और यदि नंदराम नरसिंहको उनका पहला अधिकार अर्थात् खंडेलाके राजपद्पर प्रतिष्ठित कर देंगे तो उनको यथेष्ट पुरस्कार दिया जायगा । इस प्रस्तावसे नंदरामने बहुतसे धनकी आशासे फिर कौशलजालका विस्तार किया । उसने थोडीसी सेनाके साथ खंडेलामें जाकर कहला भेजा कि "गोविंदगढसे नरसिंहकी सेना रात्रिके समय बाहर होकर हमारी सेनापर आक्रमण करै तो आक्रमण होने-पर हम लोग सेना सहित परास्त होकर शीघ्र ही वहांसे भाग जायँगे । ऐसा करनेसे प्रतापसिंह कुछ भी नहीं जान सकैंगे और कार्य सिद्ध हो जायगा । " नन्दरामके उक्त गुप्त प्रस्तावसे सूर्यमल्ल और बाघसिंह नामक नरसिंहके दो भ्राता गोविंदगढसे डेढसौ अस्त्रधारी सेना साथ लेकर रात्रिके समय बाहर हुए, और उन्होंने हलदियाकी सेनापर बनावटी आक्रमण किया जिससे वह परास्त होकर उसी समय भाग गये, और उस सुअवसरमें उक्त विजयी सेनाने खंडेला पर अधिकार कर लिया । इस घटनासे प्रताप-सिंह अत्यन्त ही क्रोधित हुए और जिससे उक्त अधिकार व्यर्थ हो जाय, इस कारण बहुतसी सेनाको एक प्रवेश मार्गपर रखनेकी आज्ञा दी। परन्तु नरसिंहकी सेनाने पहिले ही उस स्थानपर अधिकार कर लिया था, इस कारण प्रतापसिंहकी वह कामना व्यर्थ हो गई । नरसिंहके ओरकी बहुतसी सेनाके दलके दल आकर खंडेलामें प्रवेश करने लगे, प्रतापसिंहने दूसरा कोई उपाय न देखकर शत्रुओंको पानीकी त्रास देनेके लिये कुओंको बंद करनेकी आज्ञा दी।इसी कारणवश नरसिंहकी सेनाके साथ प्रतापकी सेनाका एक प्रबल युद्ध उपस्थित हुआ, और दोनों पक्षकी बहुतसी सेना घायल हुई । शेषमें नन्दराम हलदियाने दोनों पक्षमें आमेरराजकी पंचरंगी पताका उडाकर युद्ध रोक दिया, और नन्दरामके प्रस्तावसे शेषमें दोनों पक्षमें एक संधि नियत हुई । उस संधिके मतसे प्रतापसिंहका रेवासो देशपर अधिकार हुआ और नरसिंहको खंडेला राज्यके समस्त पैतृक अधिकार प्राप्त हुए ।

यद्यपि उक्त संधिके अनुसार खंडेलादेशमें शांति स्थापित हो गई, परन्तु दोनों वंशोंका झगडा एकबार ही समाप्त नहीं हुआ । बीच २ में बहुधा दोनों पक्ष एक दूसरे-पर आक्रमण करने लगे । गंगोर नामक पर्वोत्सवके समयमें एक बार बडा झगडा हुआ । अन्तमें और एक घटनाके उपलक्षमें समस्त शेखावाटीके सामन्तोंकी संप्रदाय सन्नद्ध हो गई । रानोलीके सामन्त प्रतापसिंहके अधीनमें स्थित एक सामन्तके बंदी

करनेसे शीघ्र ही समस्त शेखावतोंकी संप्रदाय चमक उठी। अन्तमें सभीने एकवाक्यसे अपने प्रभु अधीश्वर आमेरराजको मध्यस्थरूपसे नियुक्त किया। आमेरपतिके उस झगडेका विचार करने और अपराधी मनुष्योंको दण्ड देनेसे उसी समय समस्त उपद्रव दूर हो गये।

शेखावाटीके उत्तर देशके सिद्धानी नामक शेखावत संप्रदायके सामन्त और रायशालोतोंके उक्त प्रकारसे अविश्रान्त जातीय विवादसे विषैला फल उत्पन्न हुआ, और उसी कारणसे शेखावाटी देशपर आमेरराजके अधिकारका विस्तार क्रमशः होता गया। आमेरपतिके कर उगाहक नन्दराम हलदियाको छल बल चतुरता और कौशलसे अनेक देशोंको अपने हस्तगत करके शेखावतोंकी स्वाधीनतापर हस्ताक्षेप करते हुए देखकर वे महा असंतोष प्रकाश करने लगे। इस समयके पूर्वतक यह सामन्त वा छोटे २ देशोंके राजा जयपुरपतिकी संपूर्ण वश्यता स्वीकार करके भी उनको किसी प्रकारका कर नहीं देते थे, केवल किसी सामन्तके प्राण त्याग करनेपर उसके उत्तराधिकारीके अभिषेकके समय आमेरराजको अपनेमें सबसे श्रेष्ठ सामर्थ्यवाला आत्मीय जानकर कुछ रुपये भेंटमें दिये जाते थे। परन्तु इस समय आमेरराजकी सेनाका दल क्रमानुसार सीमाके अन्तमें इकट्ठा हो गया, और कब कौन किस समय उनकी स्वाधीनताके हरण करनेको उद्यत होगा यह विचार कर सिद्धानी गणोंने अपने स्वार्थकी रक्षा करना एकान्त कर्तव्य विचार लिया। नंदराम हलदियाने इससे पहिले नवलगढके सामन्तोंके अधीनमें स्थित तुई नगरको घेर लिया, और रानोली देशपर प्रतापसिंहका अधिकार करनेके लिये उनको भी बंदी किया गया। इसी कारणसे समस्त सिद्धानी सामन्त महाक्रोधित होगये। यद्यपि वह लोग इतने दिनोंसे राय-शालोत्गणोंपर आत्मविवाद विसंवादसे हस्ताक्षेप न करके निरपेक्षभावसे निवास करते चले आये थे। परन्तु उन्होंने देखा कि इस समय निरपेक्षभावसे रहना सर्वथा असंभव है। इस कारण वह लोग सम्पूर्ण शेखावाटी देशके प्रत्येक सम्प्रदायके भीतरी झगडेको एकबार ही दूर करके सब एकवाणी और एकमत हो शेखावाटीकी जातीय स्वाधीनता और चिर अधिकारकी रक्षा करनेके लिये आग्रहके साथ आगे बढे। पूर्वकालमें उदयपुर नामक जिस स्थानपर समस्त शेखावतके सामन्त किसी जातीय प्रश्नकी मीमांसा वा स्वार्थ रक्षाके लिये इकट्ठे होते थे, उसी उदयपुरमें सम्पूर्ण शेखावतोंके नेता और सामन्तोंके एकत्रित होते ही यह घोषणापत्र प्रचारित हुआ। जिससे किसीके मनमें भी किसी प्रकारका संदेह उपस्थित न हो जिससे कोई भी किसी प्रकारका षड्यंत्र न चला सके, जिससे उक्त जातिकी समितिके सूत्रमें कोई भी किसी प्रकारका अनिष्ट वा किसी प्रकारके पहिले झगडेको स्मरण करके उसका बदला देनेके लिये समर्थ न हो, इसलिये पहिलेसे ही ऐसा प्रस्ताव नियत किया गया कि जातिकी प्राचीन और पवित्र रीतिके अनुसार एकत्रित हुए समस्त अधीश्वरोंको सरलविश्वास प्रकाश करनेके लिये "लूनधाव" अर्थात् नमकमें हाथ डालकर परस्परमें सद्भाव प्रकाश करनेके लिये सौगंध खानी होगी।

शीघ्र ही प्रत्येक सिद्धानीके सामन्त अपने २ अनुचरोंके साथ नियत हुए समय-पर उस उदयपुर स्थानपर आ पहुँचे। केवल खंडेलाके उक्त अधीश्वर दोनों प्रताप और नरसिंहदासके अतिरिक्त रायशालोतोंके प्रत्येक अधीश्वर भी उस जातीय महा समितिमें आ पहुँचे। नरसिंह और प्रतापसिंहमें परस्परमें जो झगडा चिरकालसे चला आता था, इसी कारणसे उनका अधिक अविश्वास हो गया था; लोग किसी प्रकारसे भी उस समितिमें सामिल होनेका साहस न कर सके। ठीक समयमें उस जातीय समितिमें सबकी सम्मतिके मतसे कार्य किया गया। समस्त शेखावाटी देशके सामन्तोंमें जो कुछ भीतरी झगडा था, उसे चिरकालके लिये सभीने छोड दिया। अंतमें यदि किसी अधीश्वरके साथ अन्य अधीश्वरका झगडा उपस्थित हो जाय तो वर्तमान समयमें जिस प्रकार आमेरराजको उस विवादके मीमांसा पदपर नियुक्त किया जाता है उस प्रकारसे अब नहीं किया जायगा। वरन विवादकी मीमांसाके लिये, वा जिस किसी प्रकारसे जातीय स्वार्थकी रक्षाके लिये इस उदयपुरमें जातीय सभाद्वारा ही उचित अनुष्ठान होगा। उस सभामें उस विवादका विचार किया जायगा, यदि आमेरराज बलपूर्वक हमारे जातीय स्वार्थमें हस्ताक्षेप करेंगे तो आवश्यकतानुसार प्रत्येक सामन्तकी सेना इकट्ठी होकर आमेरराजके विरुद्ध खडी होगी।

शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंको इस प्रकारसे एक मनुष्यके समान खडा हुआ तथा दृढप्रतिज्ञ देखकर जयपुरपति महाराज अत्यंत भयभीत हुए। नन्दराम हलदियाके ही अत्याचार और उपद्रवोंसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे खडे हुए हैं यह जानकर जयपुरेश्वरने शीघ्र ही नन्दरामको पदसे रहित कर रोडाराम नामक एक मनुष्यको उस पदपर नियुक्त किया, और उनको सेनासहित शेखावाटीमें भेजा। और नन्दराम हल-दियाको बन्दी करके जयपुरमें भेजनेकी आज्ञा भी दी। नंदराम हलदिया जयपुरपतिकी इस आज्ञाका समाचार पाकर पहिलेसे ही भाग गया। उसने जान लिया कि पकडे जाने-पर अवश्य जयपुरके कारागारमें बन्दी किया जाऊंगा। जयपुर राजने, उक्त नंदराम और उनके भ्राता जो आमेरके प्रधान राजमंत्री पदपर नियुक्त होकर नन्दरामके अत्याचार और उपद्रवोंमें सहायता करते थे उनके भी समस्त अधिकारी देशोंकी धनसम्पत्तिको राजदरबारके अधिकारमें कर लिया।

नव नियोजित सेनापति जातिका दरजी था, वह नंदराम हलदियाको बंदी करनेके लिये और उसके अधीनकी सेनाको विध्वंस करनेके निमित्त अनेक यत्न करने लगा। नंदराम हलदिया यद्यपि पहिले आमेरराजका सेवक था परन्तु आमेरराजके उसे पदसे उतारकर सारी धन सम्पत्ति छीन लेनेसे इस समय वह अपने पूर्वस्वामीको अपना दृढ शत्रु विचार कर चारों ओर अत्याचार करके गाँव २ में अग्नि लगाने लगा। नवीन सेनापतिने नन्दरामको पकडने और उसके अत्याचारोंको निवारण करनेके लिये अंतमें शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंसे सहायताकी प्रार्थना की। परन्तु शेखावाटीके सामन्त पहिलेसे ही इस भाँतिकी शिक्षा पाये हुए थे इस कारण वह सहसा उसकी

सहायता करनेमें सम्मत न हुए, और अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये सबसे पहिले पदोपयुक्त संधि करने, और आमेरपतिके साथ भविष्य राजनैतिक सम्बन्ध निर्धारित करनेके लिये अग्रसर हुए।

संधिपत्र।

पहिली धारा—नन्दराम हलदियाने जो बलपूर्वक तुई और ग्वाला इत्यादि नगरोंपर अधिकार कर लिया है, वे नगर पूर्व अधिकारियोंको लौटा देने होंगे।

दूसरी धारा—शेखावतोंकी सम्प्रदाय इच्छानुसार पहिलेसे ही जो कर देती आई है, आमेरराजको इसके अतिरिक्त और कर ग्रहण करनेकी सामर्थ्य न होगी। शेखावाटीके सामन्त अपने २ स्वीकार किये करको आमेरकी राजधानीमें स्वयं भेजते रहेंगे।

तीसरी धारा—जिस किसी कारणसे क्यों न हो आमेरराजकी सेना किसी समय भी शेखावाटीमें प्रवेश न कर सकेगी, कारण कि उसी सेनादलकी उपस्थितिके कारण खण्डेलाके युद्धमें वृथा रक्तपात हुआ है।

चौथी धारा—उक्त सम्मिलित अधीश्वरगण आमेरपतिकी सहायताके लिये एक सेना भेजेंगे, परन्तु वह सेना जबतक आमेरराजके कार्यमें नियुक्त रहेगी उतने दिनोंतक उसका खर्चा आमेरके महाराजको देना होगा।

उक्त नवीन राजसेनापतिकी मध्यस्थतामें उक्त संधिपत्र आमेरराज और शेखावतोंकी संप्रदायमें नियुक्त हुआ, उक्त संमिलित सामन्तगणोंने सेनाकी सहायताके लिये व्ययस्वरूप अग्रिम दश हजार रुपया लेकर अपने २ अनुचरोंके साथ जयपुरमें जाकर अपने स्वामीको सम्मान दिखाया। जयपुरपतिने उनके संमानको उसी समय स्वीकार भी किया; और जिससे नन्दराम तथा उनकी सेनाका दल शीघ्र ही पकडा जाय इस लिये उनको शीघ्र ही कार्यक्षेत्रमें जानेके लिये आज्ञा दी। अनिरुद्ध शेखावतने तुरन्त ही कार्यक्षेत्रमें जाकर पहिले उन गावोंका उद्धार किया, जिन्हें नन्दरामने बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर रक्खा था। परन्तु सामन्तगण शीघ्र ही जानगये कि यद्यपि वह संधिके अनुसार आमेरराजकी यथेष्ट सहायता करते हैं, परन्तु आमेरराज उस संधिके मतसे उनके स्वार्थकी रक्षामें प्रस्तुत नहीं हुए। उन्होंने देखा कि उन लोगोंने नन्दरामकी सेनाको भगा दिया है, परन्तु इस समय रोडारामकी सेना निर्विघ्नतासे उन स्थानोंपर अधिकार कर रही है। जो सामन्तोंकी सम्प्रदाय यहाँ इकट्ठी हुई थी वह महा दुःखित हुई—और शीघ्र ही उन्होंने परामर्श करके अपने निज संधिपत्रकी धाराके कार्यको पूर्ण करनेका संकल्प किया। रोडारामकी सेनाका दल शेखावाटीके जिन ग्राम और नगरोंको सामन्तोंकी सम्प्रदायकी सहायताके लिये नन्दरामकी सेनाके हाथसे लेकर वहाँ निवास कर रहा था, सामन्त सम्प्रदायोंने उन सब ग्राम तथा नगरोंपर आक्रमण करके रोडारामकी सेनाको दूर कर दिया। और उन सब ग्राम और नगरोंको पूर्व आदि अधिकारियोंके हाथमें अर्पण किया।

उक्त समयमें ही आमेरपतिने खंडेलाके राजा नरसिंहदासके निकट बाकी कर अदा करनेके लिये एक दूत भेजा, परंतु नरसिंहने उस दूतको मारपीट करके भगा दिया। वह दूत आमेरराजके मंत्रीके कुटुम्बका था; वह उक्त रीतिसे अपमानित और विताडित हुआ, तब वह जयपुरपति महाराजके निकट जाकर नेत्रोंमें जल भरकर उनके चरणोंमें अपनी पगडी रख यह वचन बोला, " नरसिंहदासने मेरा घोर अपमान किया है" । आमेरके महाराजने समस्त वृत्तान्त जानकर शीघ्र ही यह आज्ञा दी कि खण्डेलाराज्य आमेर राज्यके अधिकारमें रहै, और नरसिंहको बंदी करके शीघ्र ही जयपुरमें लाया जाय।

तुरन्त ही आशाराम नामक एक सेनापति सेना साथमें लेकर खण्डेलापर अधिकार करनेके लिये भेजा गया। नरसिंह गोविन्दगढ़में जाकर अधीश्वर आमेरपतिके प्रति उपेक्षा दिखाने लगे। आशारामके खण्डेलामें जाते ही नरसिंह और प्रतापसिंह दोनोंको एक साथ एक ही समयमें पकडनेके लिये षड्यंत्र जालका विस्तार करने लगा। नरसिंह तो गोविन्दगढ़में ही रहते थे, परन्तु प्रतापसिंह अपनी किसी विपत्तिकी सम्भावना न विचारकर जयपुरकी सेनाके साथ खण्डेलामें ही निवास करते थे।प्रतापसिंह विचार रहे थे कि नरसिंहके अपराधसे केवल उन्हींके हिस्सेके खण्डेलापर जयपुरराज्यका अधिकार हो जानेकी सम्भावना है। उधर आशारामने प्रतापसिंहको किसी प्रकारका भय न दिखाकर केवल नरसिंहको पकडनेके लिये सबसे पहिले कौशलजाल विस्तारा। आशारामने मनोहरपुरपति नरसिंहसे कहला भेजा कि उन्हें किसी प्रकारका कोई भी शारीरिक अनिष्ट नहीं होसकैगा। राजपूत प्रतिज्ञा और सौगंधके ऊपर चिरकालसे ही विशेष विश्वास स्थापन करते आये हैं। शरीरमें प्राण रहते हुए कोई भी अपनी प्रतिज्ञाको भंग नहीं कर सकता, यही राजपूतजातिका स्वाभाविक धर्म है, मनोहरपुरपति आशारामके उपदेशसे ही उसके वचनोंमें बंध गये, और उनके ऊपर सम्पूर्ण विश्वास स्थापित कर वह गोविन्दगढ़से बाहर हुए; और खण्डेलामें पहुँच गये। आशारामने उनको आदर सहित ग्रहण करके बाकी करके सम्बन्धमें सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित किया। संधिपत्र तैयार होने लगा। नरसिंहके डेरोंको छोडते ही आशाराम भी सेनासहित वहाँसे कितनी दूर चला गया। चतुर आशारामने इस प्रकारसे नरसिंहको असावधान और गाफिल कर दिया और फिर तीसरे दिन लौटकर मध्यरात्रिके समय उनके घरको घेरकर उनको उसी समय डेरोंमें जानेकी आज्ञा दी।नरसिंह आशारामकी इस चातुरीजालसे अत्यन्त क्रोधित हो आत्महत्या करनेके लिये उद्यत हुए पर आशारामने उनका वह उद्योग व्यर्थ कर दिया। तब नरसिंह शीघ्र ही कितने विश्वासी राजपूतोंके साथ आशारामके डेरोंमें चले गये।

नरसिंहको हस्तगत करके उसने प्रतापको बुलाया और वह निर्भय होकर उसके डेरोंमें चले आये। प्रताप विचार रहे थे कि अबकी बार वह अवश्य ही समस्त खंडेला देशके अधीश्वर होंगे, परन्तु चतुर आशारामने उनको घोर विपत्तिमें डालनेकी तैयारी की। इसका उन्हें स्वप्नमें भी ध्यान नहीं था। दूसरे दिन प्रताप और नरसिंह जिस समय

अस्त्रहीन होकर भोजन कर रहे थे, इसी समयमें आशारामकी आज्ञासे एक सेनादलने दोनोंको एकबार ही बंदी कर लिया। घोर अपराधियोंके समान जंजीरोंसे बांधकर बंद और एक सवारीमें चढाकर पांच सौ पहरेवालोंकी सेनाके साथ उनको जयपुरमें भेज दिया। जयपुरमें पहुँचते ही दोनों राजाके कारागारमें बंदी हो गये, इस प्रकारसे दोनोंके बंदी हो जानेपर जयपुरके महाराज और उनके मंत्री अत्यन्त ही प्रसन्न हुए और आशारामको धन्यवाद देने लगे। आशारामने राजाकी आज्ञासे शीघ्र ही समस्त खंडेलादेशपर आमेरराजका खास अधिकार करके शान्ति रक्षाके लिये वहां पांचसौ सिपाही रख दिये। वह सब नीची श्रेणीके सामन्त खंडेलाके दोनों राजाओंके अधीनमें थे, आशारामने उनको पूर्व पदपर नियुक्त रख कर उनको रीतिके अनुसार कर देनेमें सम्मत कर लिया, और उसने उनसे ऐसी प्रतिज्ञा भी करा ली कि वह कभी किसी प्रकारसे भी शान्ति भंग अथवा किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करेंगे। इस प्रकारसे खंडेलाराज्य फिर अवनतिकी अवस्थामें पतित होकर पराधीन हो गया।

तीसरा अध्याय ३.



आमेरपतिके विरुद्धमें बाघसिंहका अभ्युत्थान–बाघसिंहके साथ जार्ज थामसका योगदान–भयंकर युद्ध–बाघसिंहका खंडेलाके किलेमें जाना–हनुमंतसिंहका उनकी सेना और अनुज लक्ष्मणसिंहके प्राण नाश करना–बाघसिंहका फिर खंडेलाके किलेको जीतना–आमेरराजद्वारा एक ब्राह्मणको खण्डेलादेशमें जामाबंदीके लिये भेजना–उक्त ब्राह्मणका अपमानित होना–संग्रामसिंहका अभ्युत्थान–गावोंका लूटना–उनकी मृत्यु–जोधपुरके विरुद्धमें आमेरराज्यके साथ शेखावाटीके सामन्तोंका मिलन–आमेरराजकेसाथ शेखावतोंका नवीन संधिबंधन–नरसिंह और प्रतापसिंहका छूटना–मारवाडके युद्धमें नरसिंहकी मृत्यु–अभयसिंहको पितृपदकी प्राप्ति–आमेरराजकी विश्वासघातकता–हनुमन्तका गोविन्दगढ और खण्डेला इत्यादिपर अधिकार करना–खुशालीरामको मुक्तिलाभ और जयपुरमें मंत्रीपदकी प्राप्ति–खण्डेलाके करद सामन्तोंको नवीन शासनकी सनद मिलना–अभय तथा प्रतापसिंहको पिताके अधिकारकी प्राप्ति–मोहम्मदशाहके विरुद्ध शेखावाटीके सामन्तोंका सेनासहित गमन–आत्मविवाद–सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहका खण्डेलापर आक्रमण–हनुमन्तसिंहकी वीरताका प्रकाश करना–उनकी मृत्यु–लक्ष्मणसिंहका खण्डेलापर अधिकार–खण्डेलाके दोनों अधीश्वरोंका चिरकालके लिये पैतृक अधिकारसे वंचित होना–उनका निकाला जाना–राजमंत्रीके साथ लक्ष्मणसिंहका विवाद–विवादका फल–सिद्धान्तियोंका इतिहास–लाडखानी लोग–शेखावाटीका राजस्व–

दीनाराम बोहरा इस समय सन् १७९८–९९ ईसवीमें जयपुरके प्रधानमंत्री पदपर नियुक्त थे। आशारामको खंडेला विजय करते हुए देखकर वह शीघ्र ही राजधानी छोडकर सिद्धानीके सममन्तोंके पाससे कर लेनेके लिये शेखावाटीको चले। दीनाराम उदयपुरमें आशारामकी सेनाके साथ मिलकर सिद्धानी सामन्तोंके अधिकारी देशोंके

बीचमें परशुरामपुर नामक नगरमें सेनाको ले गये । वहां जाकर इन्होंने सम्पूर्ण सामंतोंके पास आज्ञापत्र भेजकर शीघ्र ही अपने २ देय करको उपस्थित करनेके लिये कहा । इतना ही करके वह शान्त न हुए, जिससे शीघ्र ही कर अदा हो जाय इस हेतु प्रत्येक देशमें एक २ अश्वारोही दल भी भेज दिया । इस सेना भेजनेका नाम धौंस था । इसका मूल उद्देश यही था कि अश्वारोही सेनाका दल सामन्तोंके यहाँ जाकर उनसे सरकारी कर मांगे । सामन्त जितने दिनोंतक कर देनेमें विलम्ब करैंगे सेना उतने दिनोंतक प्रतिदिन निर्द्धारित धन उनके निकटसे दंडमें लेती रहैगी । यदि सामन्त कर देनेमें राजी न हों तो उनके साथ युद्धका विचार किया जायगा । जब जयपुरके राजमन्त्री उक्त अपमानकारक उपायसे कर लेनेके लिये उद्यत हुए तब समस्त सिद्धानी सामंतोंने अत्यन्त क्रोधित हो शीघ्र ही मिलकर एक पत्रपर हस्ताक्षर करके उनके पास भेज दिया । उन्होंने उस पत्रमें लिख भेजा, कि दीनाराम यदि एक मुहूर्तका भी विलम्ब न करके उस भेजी हुई सेनाको बुलाकर स्वयं सेनासहित झुंझुनूमें न चला जायगा तो उसे विलक्षण फल मिलैगा, वह यदि झुंझुनूमें चला गया तो सामन्तोंके दिये हुए करका जो दश हजार रुपया इकट्ठा हुआ है वह शीघ्र ही मिल जायगा । समस्त शेखावाटीके नेताओंने एकमत होकर उक्त पत्रको लिखा । परन्तु खंडेलाके वेदी राजाके भ्राता वाघसिंह किसी प्रकार भी उसमें सम्मत न हुए । शेखावत देशके समस्त अधीश्वरोंने एक साथ मिलकर थोडे ही दिनोंके पहिले आमेर राजके जिस प्रकारसे उपकार किये थे, नन्दरामकी प्रबलता विनाश करनेके लिये आमेरकी सेनाकी जिस प्रकार सहायता की थी, तिसपर भी आमेरपतिके विपरीत पुरस्कार देनेसे वाघसिंह आमेरपतिके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे । आमेरराजके साथ शेखावतोंकी पहिले जो संधि हो गई थी, उसकी एक धारामें यह भी उल्लेख था कि शेखावत जितने दिनोंतक कर देते रहैंगे उतने दिनोंतक आमेरराज किसी प्रकार भी शेखावत देशपर सेना नहीं भेज सकेंगे, ऐसा प्रबंध सदा रहैगा । सारांश यह है कि संधिकी उस धाराको भंग करके आमेरकी सेनाने जब शेखावत देशमें प्रवेश किया तब वाघसिंह अपने बाहुबलसे उसी समय जन्मभूमिकी रक्षाके लिये कृतसंकल्प हुए । वाघसिंहके उक्त मन्तव्यके प्रकाश होते ही खेतरीके पांच सौ राजपूत आकर उनके साथ मिले । वाघसिंहने उस सेनादलके साथ सीकरके अधीश्वरके निकटसे सिंहसना और फतेपुरका दंडस्वरूप धन संग्रह करके इस समयके सुप्रसिद्ध जार्ज थामस नामक यूरूपीय सेनापतिको अपने पक्षमें नियुक्त कर लिया । जार्जथामस स्वयं इस समय इस विवादमान राजपूत जातिके किसी एक पक्षमें नियुक्त होकर धन उपार्जनके लिये व्यग्र हो रहे थे । जार्ज थामसने अपनी शिक्षित सामान्य संख्यक सेनाके साथ वाघसिंहके साथ मिलकर शीघ्र ही आमेरकी सेनाके साथ युद्धका प्रस्ताव किया । यद्यपि इस समय जयपुरराजकी समस्त वेतन भोगी सेना और उनके अधीनके सामन्तोंकी सेना एकसाथ मिलनेसे उनकी संख्या वाघसिंह और थामसकी सेनाकी संख्याकी अपेक्षा अधिक हो गई थी। परन्तु

जार्ज थामस अपनी उस सामान्यसंख्यक शिक्षित सेनाकी सहायतासे इस समय समस्त रजवाडेमें सभीके भयके कारणस्वरूप हो गये थे। इस कारण जब उन्होंने स्वयं अपनी सेनाके साथ वाघसिंहका पक्ष अवलम्बन किया, तव राजपक्षकी सेना संख्यामें अधिक होनेसे भी बलमें हीन हो गई। जार्ज थामसने इस प्रकारसे बल विक्रमके साथ जयपुरकी सेनापर आक्रमण किया, कि जयपुरके सेनापति रोडारामने उस आक्रमणके वेगको किसी प्रकार भी सहन न करके खेत छोड दिया। उसी समय जार्ज थामसने जयपुरके कितने ही तोपखानोंको लूट लिया। प्रधान सेनापतिकी भीरुतासे जयपुरके पक्षमें जो कलंक लगा उसको दूर करने और तोपखानेको फिर अपने अधिकारमें करनेके निमित्त आमेरराजकी तरफसे चौमूके सामन्त रणजीतसिंहने सम्पूर्ण सामन्त सेनाको इकट्ठा करके प्रवलरूपसे दल बांधकर स्वयं जार्ज थामसपर आक्रमण किया। उस प्रबल समरमें रणजीतसिंहकी ही विजय हुई, यद्यपि रणजीतसिंहने तोपखानेको छीन लिया। परन्तु वह अधिक घायल हुए और सेना भी बहुतसी मारी गई। खांगारोत सम्प्रदायके दो नेता बहादुरसिंह और पहाडसिंह भी गोलोंके आघातसे हत हुए। परन्तु जार्ज थामस शेषमें एकबार ही परास्त हो गये, और प्राणोंके भयसे उनकी सारी सेना भाग गई।

उपरोक्त समरमें वाघसिंहके परास्त होनेसे आमेरराजने उनको खडलामें प्रबल बलशाली देखकर अपने हस्तगत कर लिया; इधर जयपुरके कारागारमें बंदी दशामें पडे हुए खण्डेलाके दो अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंह वाघसिंहको उद्योगी और प्रभावशाली जानकर स्वयं सरलतासे मुक्तिकी आशा करने लगे। और जिससे उनकी वह आशा पूर्ण हो जाय इस लिये उनके पास उत्साहसूचक अनुरोध भी भेजा। जिससे रोडाराम उनके ऊपर अनुकूल होकर सहायता करैं इस लिये उनके साथ भी वह गुप्तभावसे प्रस्ताव चलाने लगे। रोडारामने कहला भेजा कि यदि एक दल प्रबल रायसालोतकी सेनाका मेरे साथ मिल जाय तो मैं आपकी आशाको पूर्ण कर सकता हूँ। इस प्रस्तावसे वाघसिंहको ही प्रतिनिधि नेतारूपसे नियुक्त किया गया। वाघसिंहने अपनी सामर्थ्यके बलसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। जो राजपुरुष आमेरराजकी ओरसे इस समय खंडेलाको शासन करते थे, वे एकमात्र वाघसिंहके उस प्रभुत्वकी सहायतासे खंडेला देशका कर संग्रहकर भूमिके सम्बन्धमें नवीन विधिकी व्यवस्था करनेमें समर्थ हुए थ। इससे उनको हस्तगत कर रखनेके लिये शासकने खंडेलाके किलेमें रहनेकी आज्ञा दी थी। वाघसिंह बहुत थोडीसी सेनाके साथ खंडेलाके महलमें निवास करते थे। इस समय जयपुरके सेनापतिने वाघसिंहको एक स्वजातीय सेना दलके साथ मेल करनेकी आज्ञा दी, वाघसिंह अपने अनुज लक्ष्मणसिंहको अत्यन्त स्नेहके साथ खंडेलामें रखकर आप जयपुरके सेनापतिके साथ मिले।

खंडेलाके दूसरे शासक राज्यबंदी प्रतापसिंहके पुत्र हनुमन्तसिंहने जब सुना कि वाघसिंह राजाकी सेनादलके साथ मिल गये हैं तब उन्होंने शुभ सुअवसर जानकर खंडेलाके किलेको जीतनेका विचार किया। रात्रि हो गई थी, हनुमन्तने कितनी ही

अस्त्रधारी सेनाके साथ खंडेलामें जाकर दुर्गकी दीवारोंको उल्लंघन करके किलेमें प्रवेश कर सावधानीसे समस्त सेना और लक्ष्मणसिंहकी हत्या करके किलेको जीत लिया। वाघसिंह इस समयमें रानोलीमें निवास कर रहे थे। उन्होंने हनुमन्तसिंहको अपने अनुज लक्ष्मणसिंहकी हत्या और खंडेलापर अधिकार करते हुए सुनकर शीघ्रतासे खंडेलामें जाकर उसको घेर लिया। वाघसिंह बाहरसे ही अस्त्र चलाने लगे और हनुमन्तसिंहने किलेके भीतरसे गोला वर्षाना प्रारंभ किया। परन्तु हनुमन्तसिंहने बहुत थोडी अवस्थावाले लक्ष्मणकी हत्या की थी इससे नगरनिवासी उस हत्याकाण्डसे उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। इस कारण वे इस समय आग्रहके साथ वाघसिंह-की सहायता करने लगे। अधिक क्या कहैं, स्त्रियांतक किलेको जीतनेके लिये सेनाकी विशेष सहायता करने लगीं। वाघसिंह प्रबल विक्रमके साथ किलेको जीतनेके लिये प्रवृत्त हुए। हनुमन्तकी सेनाने अपने प्रभुपर भयंकर विपत्ति देखकर प्राणपणसे युद्ध किया। परन्तु जयकी आशा न देखकर अंतमें उन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार संधिका प्रस्ताव-सूचक श्वेत पताका दिखाकर किलेका दरवाजा खोल दिया। वाघसिंह सानन्द किलेमें पैठ गये। वहां जाकर उन्होंने चाहा कि अपने सुकुमार भाईकी हत्या कर-नेवाले हनुमन्तसिंहसे उचित बदला लें किन्तु वह पहिले ही किलेसे निकल भागा था। इस लिये वाघसिंहकी वह प्रतिहिंसक अभिलाषा मनकी मनमें ही रह गई।

उधर दीनाराम जयपुरके राजमंत्रीपदसे उतार दिये गये। और मानजीदास उस पदपर नियुक्त हुए। रोडाराम पूर्व कथित युद्धमें पराजित और कलंकित नहीं हुए थे। इससे वह इस समयतक शेखावाटी देशके करसंग्रहके पदपर नियुक्त थे। उन्होंने खण्डेलादेशके एक ब्राह्मणको वार्षिक बीस हजार रुपयेकी जमाबन्दी पर नियुक्त किया था। उक्त ब्राह्मणने प्रथम वर्षमें विलक्षण लाभ दिखाया। इसीसे उसे फिर दो वर्षका ठेका दिया गया। इस समय जयपुरराज्यकी सिलहपोश सेना उक्त ब्राह्मणके अधीनमें नियुक्त थी। वह ब्राह्मण उक्त सेनाकी सहायतासे खंडेलाके जो समस्त सामन्त अबतक स्वाधीनभावसे रहते थे; उनके पाससे भी बलपूर्वक करसंग्रह करनेमें प्रवृत्त हुआ। जो लोग कर देनेमें असम्मत हुए उसने सेनासहित उनपर आक्रमण करके उनके कितने ही किलोंपर अधिकार कर लिया। यद्यपि जयपुरपतिने नरसिंह और प्रतापसिंहको वंदी करके समस्त खंडेलाराज्यपर अधिकार कर लिया था; परन्तु प्रताप और नरसिंहकी खास अधिकारी भूमिके अतिरिक्त अन्य सम्पूर्ण देशोंके सामन्तोंके साथ संधिबंधन करके उनसे नियमित कर लेते आये थे। इस समय उक्त ब्राह्मणने उन सामंतोंपर भी आक्रमण करके उनके ऊपर इस प्रकारके अत्याचार करने प्रारंभ किये। खंडेलाके रायसल वंशोद्भव समस्त सामन्त महाक्रोधित हुए, और बदला देनेके लिये संहारमूर्तिसे सेनासहित सुसज्जित हुए। उन्होंने नरसिंह और प्रतापसिंहके निकटसे यह समाचार पाया कि जयपुरके महाराजके निकटसे उनको कारागारसे मुक्त होनेकी अब कोई आशा नहीं है, इस कारण सामन्त और भी उत्तेजित हुए। राजपूत जाति समस्त आशाओंके लुप्त होते ही जिस प्रकार महाक्रोधित हो भयंकर काण्ड उपस्थित कर देती है, इस समय वह लोग उसी

प्रकारसे खण्डेला देशपर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित करनेके साथ बदला लेनेके लिये अग्रसर हुए। उन्होंने सबसे पहिले महावेगसे उस ब्राह्मणके अधिकारी खण्डेला नगरपर आक्रमण किया। और वहां भयंकर युद्धानल प्रज्वलित कर दी। ब्राह्मणकी ओर सात सहस्र दादूपन्थी सेना थी, तथापि सम्मिलित सामन्तोंने उस सेनाको विध्वंस कर ब्राह्मणको भगाकर नगरको लूट लिया। उन्होंने सबसे पहिले इस प्रकारसे जयलक्ष्मीका आलिंगन करके अन्तमें गगनभेदी जयशब्दसे शेखावाटीको कम्पायमान करके जयपुर राज्यमें जाकर ग्राम और अनेक नगरोंको लूट लिया। अधिक क्या जयपुरकी महाराणीके खास अधिकारी देशोंमें जाकर वे इनको विध्वंस करने लगे। इससे जयपुरके महाराज अत्यन्त क्रोधित हुए और उनको दमन करनेके लिये उन्होंने फिर एक नवीन सेना भेजी, दोनों ओरमें महा संग्राम उपस्थित हुआ। अन्तमें सामन्तोंकी सम्प्रदाय अत्यन्त हीनबल हो गई। रानोली और अन्य कितने ही देशोंके सामन्तोंने अन्तमें जयपुरपतिके साथ सन्धि स्थापन कर वश्यता स्वीकार कर ली। परन्तु रायसालकी कनिष्ठ शाखामें उत्पन्न हुए सामन्तोंने किसी प्रकारः भी वश्यता स्वीकार न की। उन्होंने अपने देशको छोडकर बीकानेर और मारवाडमें जाकर वहांके दोनों अधीश्वरोंकी शरण ली। प्रतापसिंहके जाति भ्राता सूजावासके सामन्त संग्रामसिंह मारवाडमें और वाघसिंह और सूर्यसिंह बीकानेरमें चले गये, वहांके दोनों राजाओंने उनको अभय देकर उनके भरण पोषणके निमित्त उन्हें जागीरें लगा दीं। वे कुछ समयतक वहां इस प्रकारसे रहे, और फिर प्रबल दल बांधकर जयपुरको विध्वंस करनेके लिये चले।

वीरश्रेष्ठ संग्रामसिंह उस निर्वासित सामन्त वृन्दके नेता पदपर नियुक्त होकर शीघ्र ही आमेरमें गये। और उस राज्यके बहुतसे देशोंको लूटकर विध्वंस करने लगे। अनेक स्थानोंके निवासियोंसे दण्डकर लेकरके जिस जिस स्थानपर जयपुर राजके छोटे २ किलोंमें सेना निवास करती थी, उन्हीं २ किलोंपर आक्रमण करके निर्दयीभावसे राज्यकी सेनाका विनाश करने लगे। उक्त सम्मिलित सामन्तोंने इस प्रकारसे चारों ओर अशान्ति स्थापित करते २ अन्तमें जयपुरकी राजधानीके बहुत ही निकट खोह नगरमें जाकर उस नगरको लूट वहांसे बहुतसे घोडे चुराकर अपनी सेनाके लिये ले गये। नेता संग्रामसिंह इस समय क्रमानुसार जय प्राप्त करके इतने बलवान् हो गये कि वह मनमें आते ही किसी असीम साहसके कार्यपर हाथ डाल देते थे। इनके इस उपद्रव और अत्याचारोंसे प्रजाको महान् कष्ट उपस्थित हुआ, और अन्तमें जयपुरपतिके यहां लोग चारों ओरसे हाहाकार मचाने लगे। और उनके द्वारा अपना सर्वनाश बताकर सहायताके लिये प्रार्थना करने लगे। इस समाचारसे जयपुरके महाराज भयभीत हो शीघ्र ही विद्रोही-नेता संग्रामसिंहके साथ संधि करनेके लिये अग्रसर हुए। विसाआदेशके सिद्धानी सामन्त श्यामसिंहने जयपुरके महाराजके प्रतिनिधिस्वरूपसे संग्रामसिंहके पास जाकर संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया; और भविष्य जयपुरेश्वरका कोई अनिष्ट न करनेके लिये उन्होंने राजपूत रीतिके अनुसार संग्रामसिंहको वचनबद्ध कर लिया। संग्रामसिंहने उक्त वचनोंपर विश्वास कर अन्तमें जयपुरकी राजधानीमें

जाकर जयपुरपतिके साथ साक्षात् करनेकी सम्मति प्रगट की । कई दिनोंमें वीर तेजस्वी संग्रामसिंहने अपनी विजयी सेनाके साथ जयपुर नगरमें प्रवेश किया । नगरमें जाते ही अनेक सम्प्रदायोंके लोग इकट्ठे होकर उनके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि डालने लगे । विशेष करके वेतनभोगी सिक्खोंने देखा कि संग्रामसिंहने उनमेंसे किसीके घोडे और किसीके ऊँट इत्यादि छीन लिये थे, उन्होंने उन सबको लेकर राजधानीमें प्रवेश किया है । परन्तु संग्रामसिंहने इस प्रकार बलविक्रमके साथ गर्वित हो राजधानीमें प्रवेश किया कि, उक्त सेना वा अन्य सर्व साधारण संग्रामसिंहकी सेना अपने २ घोडे ऊँट वा अस्त्र देखकर भी प्रार्थना करने वा उनका दावा करनेका साहस न कर सके ।

राजमन्त्री मानजीदासने मनही मन स्थिर किया था कि संग्रामसिंहके राजधानीमें प्रवेश करते ही किसी न किसी उपायसे उनको बन्दी करके कांटेको उखाड दिया जाय और मंत्रीके अनुरोधसे ही जयपुरपतिने शपथ की थी, कि वह संग्रामसिंहके शरीरपर हस्ताक्षेप नहीं करेंगे।परन्तु मानजीदासने जयपुरके महाराजकी प्रतिज्ञा भंग करनेसे महाकलंक लगेगा यह जानकर भी संग्रामको बन्दी करनेके लिये उद्योग किया। श्यामसिंह जो राजाके वचनोंपर विश्वास करके संग्रामसिंहके निकट वचनबद्ध हुए थे उन्होंने मन्त्रीके इस गुप्त अभिप्रायको जानकर तुरन्त ही संग्रामसिंहसे समस्त समाचार कह दिया ।४८ घंटेके पीछे जयपुरके महाराजने समाचार पाया कि संग्रामसिंह जयपुरको छोडकर तंवरावाटीको चले गये और तंवर और लाडखानी भी उनके साथ मिल गये हैं। संग्रामसिंह इस समय एक हजार अश्वारोही सेनाके नेता हुए थे ।

संग्रामसिंहने अपनी सेनाका बल बढाकर असीम साहसके साथ जयपुरपतिके खास अधिकारी देशोंमें जाकर शीघ्र ही ग्राम और नगरोंको लूटना प्रारम्भ कर दिया । वह सबसे पहिले दण्डस्वरूपमें एक २ नगर और ग्रामनिवासियोंके निकटसे कर मांगनेके लिये दूत भेजने लगा । जो लोग उसकी प्रार्थनाको पूर्ण करने लगे उनके ऊपर तो किसी प्रकारका अत्याचार नहीं किया। परन्तु जो कर देनेमें राजी नहीं हुए उनके प्रधान२ नेताओंको बन्दी करके ले जाने लगा, शेषमें करके पाते ही उनको छोडनेमें भी उसने किंचित् भी विलम्ब न किया।परन्तु जिन्होंने किसी प्रकारसे भी कर नहीं दिया उनके ग्राम और नगरोंको लूटकर समस्त धन रत्न ऊँटोंपर लदवाकर वह ले जाने लगा । संग्रामसिंहने इस प्रकारसे जयपुरराजके खास पृथ्वीके अधिक स्थानोंको लूटकर अन्तमें जयपुरकी दूसरी रानीके अधिकारी माधोपुर नगरको जा घेरा । वहां भयंकर युद्धके समय अचानक एक गोली संग्रामसिंहके मस्तकमें आकर लगी, और इसी आघातसे उन्होंने प्राणत्याग दिये । उनका शव शीघ्र ही रानोलीमें लाकर भस्म किया गया । संग्रामके मारे जानेपर उनका पुत्र पिताकी मृत्युका बदला लेनेके लिये पिताके समान महातेजस्वी हो चारों ओर अत्याचार करके लूटमार करने लगा । अन्तमें जयपुरपतिने उसके साथ सन्धि करके पिताका अधिकारी देश सूजावास उसको दे दिया, और उक्त लूटनेवालोंका दल भंग कर दिया ।

जिस समय यह घटना हुई थी उस समय आमेरके सिंहासनपर महाराज जगत्सिंहजी विराजमान थे, तथा रायचंद आमेरके प्रधान मंत्री पदपर नियुक्त थे। इस समय रजवाडेमें फूलनलिनी कृष्णाकुमारीके जन्म लेनेसे समस्त राजस्थानमें महा युद्धानल प्रज्वलित हो गया था। उसी युद्धके होनेसे शेखावाटीके अधीश्वरोंकी पूर्व शोचनीय अवस्था इस समय और भी बढ गई थी। इसी समय पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने मारवाडपति भीमसिंहके पुत्र धौंकलसिंहको अपने साथ लेकर जयपुरके महाराजका आश्रय लिया था। प्रधान मंत्री रायचन्दने यथासाध्य इस बातकी चेष्टा की कि जिसमें जगत्सिंह कृष्णाकुमारीका पाणिग्रहण करनेमें समर्थ हो जाँय। उसने अपने प्रभुकी सेना-को बढानेके लिये शीघ्र ही इस समय शेखावाटीके असंतुष्ट सामन्तोंको अपने हस्तगत करनेका यत्न किया। मंत्रीवर रायचंदने सबसे पहिले अपने भाईके पुत्र कृपारामको शेखावाटीके अधीश्वरोंके निकट भेजा। कृपारामने वहां जाकर शेखावाटीके अधीश्वरों-में कृष्णसिंहको अपने प्रतिनिधि पदपर नियुक्त किया, और उन्हींके अधीनमें सब शेखा-वत् सेनासहित उदयपुरके मार्गमें इकट्ठे होने लगे।

इस शुभ सुअवसरपर आमेरराजकी विशेष कृपासे अपनी पूर्वस्वाधीनता प्राप्त करनेमें समर्थ होकर उक्त सामन्त वर्ग अपने सर्वश्रेष्ठ नेता खण्डेलापति नरसिंह और प्रतापसिंहका बंदी अवस्थासे उद्धार करनेकी विशेष चेष्टा करने लगे। महाराज जगत्-सिंहने अपने स्वार्थसाधनके लिये शीघ्र ही शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंकी कामनाको पूर्ण कर दिया। कृपारामने तुरन्त ही आमेरपति महाराज जगत्सिंहकी ओर-से संधि करली। सन्धिपत्रके नियुक्त होते ही खण्डेला राज्यके सम्मिलित अधीश्वर नर-सिंह और प्रतापसिंहको मुक्ति देकर उनका वह राज्य उन्हींको लौटा दिया गया। उसी समय इस प्रकारकी सन्धि भी हो गई कि जबतक दूसरे शेखावतोंके नेता आमेर-पतिको कर देते रहेंगे, तबतक आमेरराज किसी प्रकार भी उक्त देशके भीतरी शासनपर हस्ताक्षेप नहीं कर सकेंगे। कृपाराम और कृष्णसिंहने जयपुरकी राजधानीमें जाकर महाराज जगत्सिंहके सम्मुख वह संधिपत्र रक्खा; महाराजने तुरन्त ही उसपर हस्ताक्षर कर दिये, उक्त सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर होते ही शेखावाटीके नेता दश हजार सेना इकट्ठी करके आमेरपतिके अधीनमें युद्ध करनेके लिये तैयार हुए। महाराजने यह भी स्वीकार किया कि जितने दिनोंतक वे लोग रणक्षेत्रमें रहेंगे उतने दिनोंतक महाराज ही उनको सब खर्च देते रहेंगे।

पोकरणके सामन्त सवाईसिंह धौंकलसिंहको लेकर पहिले ही खेतडी नामक स्थानमें आ गये थे। इस समय शेखावत् नेताओंके साथ सन्धिबन्धन समाप्त हो गया तब पोकरणके सामन्तके भ्रातृपुत्र श्यामसिंह चाँपावत् कृपारामके साथ खेतडीमें जाकर वहांसे धौंकलसिंहको ले उन सम्मिलित शेखावतोंके डेरोंमें आये। आमेरके भूतपूर्व महाराज प्रतापसिंहकी कन्या महाराणी आनन्दकुमारी और मारवाडपति भीमसिंहकी रानी महारानी आनन्दकुमारीने अपने सेवकोंके साथ उन्हीं डेरोंमें जाकर धौंकलसिंहको अपने

दत्तकपुत्रस्वरूपसे गोद लेलिया। इसके पीछे सब लोग राजधानी जयपुरमें आ गये। और वहांसे एक लाखसे भी अधिक सेना संहारमूर्ति धारण कर मारवाडको जीतनेके लिये रवाना हुई।

सम्मिलित सेनादल खण्डेलासे दशकोश दूर खट्टू स्थानमें पहुँचा, वहाँ बीकानेरके महाराज तथा अन्यान्य योगदेनेवालोंके आनेकी वाट देखने लगे। इसी समयमें शेखावाटीके सम्मिलित नेताओंने आमेरके महाराजसे यह प्रार्थना की कि "हमारे यथार्थ स्वामी दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहको छोड दिया जाय। सम्मिलित अन्य ख्यातनामा वीरोंके समान उन प्रसिद्ध वीर दोनों नेताओंके अधीनमें हम रहनेकी इच्छा करते हैं" । परन्तु सम्मिलित शेखावतोंके नेताओंकी उक्त प्रार्थनाको अस्वीकार करनेसे महा संकट उपस्थित होनेकी सम्भावना थी, इस कारण आमेरपतिने शीघ्र ही उनके मनोरथको पूर्ण कर दिया। बहुत दिनोंतक बंदीभावमें रहकर नरसिंह और प्रतापसिंह मुक्ति प्राप्त करके अपनी सेनाके साथ आकर मिले। खण्डेलाके भूतपूर्व अधीश्वर वृन्दावनदास जो इतनेदिनोंतक कई ग्रामोंका अधिकार पाकर इकले रहते थे। इस जातिय युद्धको उपस्थित देखकर वृद्धावस्थामें वह भी तलवार हाथमें लेकर आमेरकी सेनादलके साथ योग देनेको सन्नद्ध हुए। महाराज जगत्सिंह इस समय इतने अधिक संख्यक "शेखाजी" के वंशधरोंसे युक्त हुए कि किसी समय भी कोई आमेरपति इस प्रकारके बहु संख्यक रायसालोत सिद्धानी, भोजानी, लाडखानीको एकत्र करके अपने अधीन में रखनेको समर्थ न हुए थे। शेखावतोंके सब अधीश्वर शीघ्र ही जगत्सिंहके साथ मारवाडमें जानेके लिये तैयार हुए। कृष्णाकुमारीके लिये जगत्सिंहके साथ मारवाडपति मानसिंहका जो युद्ध हुआ था, उसका वर्णन पाठकोंने मारवाड और जयपुरके इतिहासमें भलीभाँतिसे पाठ किया होगा। इस कारण अब यहां दुबारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नहीं है, हम यहां केवल इतना कह सकते हैं कि इस युद्धमें शेखावतोंकी सेनाने जैसी वीरता प्रकाश की थी, जगत्सिंहके भागजानेसे अन्तमें उसी प्रकारका कलंक भी संचित किया। अत्यन्त दुःखका विषय है कि इस युद्धमें खण्डेलाराज नरसिंह और वृद्ध वृन्दाबनदास दोनोंने ही प्राण त्याग किये।

नरसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र अभयसिंह पिताके पदपर स्थित हुए, और उन्होंने खण्डेलाकी सेनापर अपना अधिकार किया। अन्तमें महाराज जगत्सिंह मारवाड छोडकर अपने राज्यकी ओरको चले आये। वह भी शेखावतोंकी सेना लेकर खण्डेलामें लौट आये। परन्तु महाराज जगत्सिंह इस समय पहिली सन्धिको भंग करके अभयसिंहको खण्डेलाका राज्य देनेमें असम्मत हुए, तब अभयसिंहने दुःखित चित्तसे माचेडी के राजा वख्तावरसिंहके यहां आश्रय लिया। परन्तु बख्तावरसिंहने उनके ऊपर जैसा अप्रिय व्यवहार किया अभयसिंहने उससे अपना अधिक अपमान जानकर एक सप्ताहके पीछे माचेडीको छोड दिया। इस समय दिवसा स्थानमें महाराष्ट्रोंके नेता बापू सेंधिया निवास करते थे, खण्डेलाके दूसरे अधीश्वर प्रतापसिंह अपने पुत्रके साथ उनके निकट

जाकर उनकी शरणमें हुए। इधर हनुमन्तसिंह राजपूत स्वभाव सिद्ध विक्रमसे इस समय फिर गोविन्दगढपर अधिकार करनेके लिये उद्योग करने लगे। उन्होंने समस्त समाचार जानकर वीर तेजस्वी ६० अस्त्रधारियोंको संध्याके समय एक नदीके किनारे छिपा रक्खा, पीछे आधीरातके समय वे पहाडी मार्गसे एक एक करके किलेकी तरफ जाने लगे। और चुपकेसे किलेकी दीवारों पर चढकर उन्होंने दुर्गरक्षक सेनाका संहार करना प्रारंभ किया। थोडे ही समयके बीचमें किलेकी सेनाके जागते ही घोर युद्ध होने लगा। वीर विक्रमी हनुमंतसिंहने उस शत्रुदलकी सेनाका संहार करके शेष सेनाको भगाय शीघ्र ही गोविंदगढ पर अधिकार करलिया। किलेको जीतते ही उस गंभीर रात्रिके समय शेखावतोंने आनंदित होकर नक्कारेको बजाया; लाडखानी सीना और निकटवर्ती अन्यान्य जातीय राजपूत लोग जातीय शब्दसे आनंदित हो शीघ्रतासे किलेमें घुसपडे। हनुमंतकी जयध्वनिसे गोविंदगढ कंपायमान हो गया। कई सप्ताहके पीछे महावीर हनुमंतने दो हजार सेना इकट्ठी करके आमेरके महाराजके साथ सब प्रकारसे सामना करनेका साहस किया। उन्होंने खंडेला और निकटवर्ती अन्यान्य स्थानोंको एक २ करके अपने हस्तगत कर लिया। जयपुरके महाराजकी जो सेना किलेमें रहती थी वह विजयी हनुमंतके आनेका समाचार पाकर प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगी। खुशियाली नाम एक दरोगा प्रसिद्ध षड्यंत्रकारी इस समय खंडेला पर शासन करनेके लिये आमेरपतिके द्वारा नियुक्त हुआ था। उसने प्राणोंके भयसे भयभीत हो आमेरमें जाकर जयपुरके महाराजके सम्मुख अपनी पराजयका वृत्तान्त कह सुनाया। यद्यपि वह दरोगा खंडेलाके किलेमें एकसौ सेना रखनेके लिये आमेरपतिके निकटसे वेतन लेता था, परन्तु वह तीस मनुष्योंकी रक्षामें रखकर बचेहुए समस्त धनको अपने अधिकारमें करता था। विजयी हनुमंतसिंहने इसी कारणसे सरलतासे विजय प्राप्त की थी।

हनुमंतसिंहने अपने बाहुबलसे ही खण्डेलाको विजय कर लिया है, खुशहाली दरोगाके मुखसे यह समाचार सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त ही क्रोधित हुए। और खंडेला पर फिर अधिकार करनेके लिये रतनचँद नामक एक सेनापतिके अधीनमें दो दल पैदल सेना और एक दल गोलंदाज खुशहाली दरोगाके साथ भेजे। महाराजने यह आज्ञा भी सुना दी थी कि यदि खण्डेलाको खुशहाली न जीत सके तो उसको उचित दंड दिया जायगा। खुशहाली इस समय नवीन सेनाके बलसे बलवान् होकर मारे गर्वके आगे बढा है यह सुनते ही महावीर हनुमन्तसिंहने प्रतिज्ञा की कि मैं अपने जीतेजी शत्रुसेनाको नगरमें धसने न दूंगा, और अपनी सजी हुई सेनाके साथ वह खुशहालीके आनेकी बाट देखने लगा। इसी अवसरमें खुशहालीकी सेनाका दल सम्मुख आया, हनुमन्तसिंहके अधीनकी सम्पूर्ण सेनाने प्रबल विक्रमके साथ युद्ध करते २ खुशहालीकी सेनाको भगादिया। अंतमें जिस समय हनुमन्त संपूर्ण रूपसे विजय पानेके लिये उद्यत हुए, ठीक उसी समयमें उन्होंने दुर्भाग्यसे घायल हो शीघ्र ही अपनी सेनाको खंडेलाके किलेमें भेज दिया। खुशहालीराम दरोगाने सेनासहित किलेको घेर लिया और घायल हुए वीर हनुमंतने दूसरी वार शत्रुओंकी सेनापर आक्रमण करके सिलहपोस सेनाके ३०

दत्तकपुत्रस्वरूपसे गोद लेलिया । इसके पीछे सब लोग राजधानी जयपुरमें आ गये । और वहांसे एक लाखसे भी अधिक सेना संहारमूर्ति धारण कर मारवाडको जीतनेके लिये रवाना हुई ।

सम्मिलित सेनादल खण्डेलासे दशकोश दूर खट्टू स्थानमें पहुँचा, वहाँ बीकानेरके महाराज तथा अन्यान्य योगदेनेवालोंके आनेकी वाट देखने लगे । इसी समयमें शेखावाटीके सम्मिलित नेताओंने आमेरके महाराजसे यह प्रार्थना की कि "हमारे यथार्थ स्वामी दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहको छोड दिया जाय । सम्मिलित अन्य ख्यातनामा वीरोंके समान उन प्रसिद्ध वीर दोनों नेताओंके अधीनमें हम रहनेकी इच्छा करते हैं" । परन्तु सम्मिलित शेखावतोंके नेताओंकी उक्त प्रार्थनाको अस्वीकार करनेसे महा संकट उपस्थित होनेकी सम्भावना थी, इस कारण आमेरपतिने शीघ्र ही उनके मनोरथको पूर्ण कर दिया । बहुत दिनोंतक बंदीभावमें रहकर नरसिंह और प्रतापसिंह मुक्ति प्राप्त करके अपनी सेनाके साथ आकर मिले । खण्डेलाके भूतपूर्व अधीश्वर बृन्दावनदास जो इतनेदिनोंतक कई ग्रामोंका अधिकार पाकर इकले रहते थे । इस जातीय युद्धको उपस्थित देखकर वृद्धावस्थामें वह भी तलवार हाथमें लेकर आमेरकी सेनादलके साथ योग देनेको सन्नद्ध हुए । महाराज जगत्सिंह इस समय इतने अधिक संख्यक "शेखाजी" के वंशधरोंसे युक्त हुए कि किसी समय भी कोई आमेरपति इस प्रकारके वहु संख्यक रायसालोत सिद्धानी, भोजानी, लाडखानीको एकत्र करके अपने अधीन में रखनेको समर्थ न हुए थे । शेखावतोंके सब अधीश्वर शीघ्र ही जगत्सिंहके साथ मारवाडमें जानेके लिये तैयार हुए । कृष्णाकुमारीके लिये जगत्सिंहके साथ मारवाडपति मानसिंहका जो युद्ध हुआ था, उसका वर्णन पाठकोंने मारवाड और जयपुरके इतिहासमें भलीभाँतिसे पाठ किया होगा । इस कारण अब यहां दुबारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नहीं है, हम यहां केवल इतना कह सकते हैं कि इस युद्धमें शेखावतोंकी सेनाने जैसी वीरता प्रकाश की थी, जगत्सिंहके भागजानेसे अन्तमें उसी प्रकारका कलंक भी संचित किया । अत्यन्त दुःखका विषय है कि उस युद्धमें खण्डेलाराज नरसिंह और वृद्ध बृन्दावनदास दोनोंने ही प्राण त्याग किये ।

नरसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र अभयसिंह पिताके पदपर स्थित हुए, और उन्होंने खण्डेलाकी सेनापर अपना अधिकार किया । अन्तमें महाराज जगत्सिंह मारवाड छोडकर अपने राज्यकी ओरको चले आये । वह भी शेखावतोंकी सेना लेकर खण्डेलामें लौट आये । परन्तु महाराज जगत्सिंह इस समय पहिली सन्धिको भंग करके अभयसिंहको खण्डेलाका राज्य देनेमें असम्मत हुए, तब अभयसिंहने दुःखित चित्तसे माचेडी के राजा वख्तावरसिंहके यहां आश्रय लिया । परन्तु बख्तावरसिंहने उनके ऊपर जैसा अप्रिय व्यवहार किया अभयसिंहने उससे अपना अधिक अपमान जानकर एक सप्ताहके पीछे माचेडीको छोड दिया । इस समय दिवसा स्थानमें महाराष्ट्रोंके नेता बापू सेंधिया निवास करते थे, खण्डेलाके दूसरे अधीश्वर प्रतापसिंह अपने पुत्रके साथ उनके निकट

जाकर उनकी शरणमें हुए। इधर हनुमन्तसिंह राजपूत स्वभाव सिद्ध विक्रमसे इस समय फिर गोविन्दगढपर अधिकार करनेके लिये उद्योग करने लगे। उन्होंने समस्त समाचार जानकर वीर तेजस्वी ६० अस्त्रधारियोंको संध्याके समय एक नदीके किनारे छिपा रक्खा, पीछे आधीरातके समय वे पहाडी मार्गसे एक एक करके किलेकी तरफ जाने लगे। और चुपकेसे किलेकी दीवारों पर चढकर उन्होंने दुर्गरक्षक सेनाका संहार करना प्रारंभ किया। थोडे ही समयके बीचमें किलेकी सेनाके जागते ही घोर युद्ध होने लगा। वीर विक्रमी हनुमंतसिंहने उस शत्रुदलकी सेनाका संहार करके शेष सेनाको भगाय शीघ्र ही गोविंदगढ पर अधिकार करलिया। किलेको जीतते ही उस गंभीर रात्रिके समय शेखावतोंने आनंदित होकर नक्कारेको बजाया; लाडखानी सीना और निकटवर्ती अन्यान्य जातीय राजपूत लोग जातीय शब्दसे आनंदित हो शीघ्रतासे किलेमें घुसपडे। हनुमंतकी जयध्वनिसे गोविंदगढ कंपायमान हो गया। कई सप्ताहके पीछे महावीर हनुमंतने दो हजार सेना इकट्ठी करके आमेरके महाराजके साथ सब प्रकारसे सामना करनेका साहस किया। उन्होंने खंडेला और निकटवर्ती अन्यान्य स्थानोंको एक २ करके अपने हस्तगत कर लिया। जयपुरके महाराजकी जो सेना किलेमें रहती थी वह विजयी हनुमंतके आनेका समाचार पाकर प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगी। खुशियाली नाम एक दरोगा प्रसिद्ध षड्यंत्रकारी इस समय खंडेला पर शासन करनेके लिये आमेरपतिके द्वारा नियुक्त हुआ था। उसने प्राणोंके भयसे भयभीत हो आमेरमें जाकर जयपुरके महाराजके सन्मुख अपनी पराजयका वृत्तान्त कह सुनाया। यद्यपि वह दरोगा खंडेलाके किलेमें एकसौ सेना रखनेके लिये आमेरपतिके निकटसे वेतन लेता था, परन्तु वह तीस मनुष्योंकी रक्षामें रखकर बचेहुए समस्त धनको अपने अधिकारमें करता था। विजयी हनुमंतसिंहने इसी कारणसे सरलतासे विजय प्राप्त की थी।

हनुमंतसिंहने अपने बाहुबलसे ही खण्डेलाको विजय कर लिया है, खुशहाली दरोगाके मुखसे यह समाचार सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त ही क्रोधित हुए। और खंडेला पर फिर अधिकार करनेके लिये रतनचँद नामक एक सेनापतिके अधीनमें दो दल पैदल सेना और एक दल गोलंदाज खुशहाली दरोगाके साथ भेजे। महाराजने यह आज्ञा भी सुना दी थी कि यदि खण्डेलाको खुशहाली न जीत सके तो उसको उचित दंड दिया जायगा। खुशहाली इस समय नवीन सेनाके बलसे बलवान् होकर मारे गर्वके आगे बढा है यह सुनते ही महावीर हनुमन्तसिंहने प्रतिज्ञा की कि मैं अपने जीतेजी शत्रुसेनाको नगरमें घसने न दूंगा, और अपनी सजी हुई सेनाके साथ वह खुशहालीके आनेकी बाट देखने लगा। इसी अवसरमें खुशहालीकी सेनाका दल सम्मुख आया, हनुमन्तसिंहके अधीनकी सम्पूर्ण सेनाने प्रबल विक्रमके साथ युद्ध करते २ खुशहालीकी सेनाको भगादिया। अंतमें जिस समय हनुमन्त संपूर्ण रूपसे विजय पानेके लिये उद्यत हुए, ठीक उसी समयमें उन्होंने दुर्भाग्यसे घायल हो शीघ्र ही अपनी सेनाको खंडेलाके किलेमें भेज दिया। खुशहालीराम दरोगाने सेनासहित किलेको घेर लिया और घायल हुए वीर हनुमंतने दूसरी वार शत्रुओंकी सेनापर आक्रमण करके सिलहपोस सेनाके ३०

मनुष्योंको मार डाला। यद्यपि खुशहाली किसी प्रकारसे भी किलेको न जीत सका था, परन्तु किलेमें जो पानी था उसके समाप्त हो जानेपर हनुमंतसिंहने अन्तमें आत्मसमर्पण करना निश्चय कर लिया, परन्तु आत्म समर्पण करनेके पहिले ही जयपुरके महाराजकी ओरसे खुशहाली दरोगाने हनुमंतसिंहको पाँच ग्रामोंके अधिकार देनेका प्रस्ताव किया, हनुमन्तसिंहने शीघ्र ही उन पाँच ग्रामोंको पाकर किलेको छोड दिया।

विख्यात खुशहालीराम बोहरा इस समयकी अर्द्धशताब्दीके पहिलेसे आमेरराज-दरबारमें विलक्षण प्रताप और प्रभुत्वको चलाता आया था, राजा प्रतापसिंहने उसको अत्यन्त दुश्चरित्र जानकर जन्मभरतक कारागारमें रखनेकी आज्ञा दी, और उसके वंशके किसी वोहराके परिवारमेंसे किसी मनुष्यको भी राजमंत्री पदपर नियुक्त नहीं किये जानेकी इच्छा की। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते हैं खुशहालीराम उस समय कारागारमें वृद्धावस्था बिता रहे थे इस समय सौभाग्यवश महाराजने इनको फिर छोड दिया, और वह राजमंत्री पदपर फिर स्थित हुए। शेखावाटीके अधीश्वरोंकी सम्प्रदायने कितने ही प्रतिनिधियोंको उनके पास भेज कर प्रार्थना की कि "आप कृपा करके हमारे पिताके अधिकारी देशोंको हमैं फिर दे दीजिये।" सौभाग्य बलसे खुशहालीरामने सामन्तोंकी प्रार्थनाको पूर्ण करनेके लिये आमेरके महाराजके निकट यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि "सामन्त ही राज्यके प्रधान बल हैं, उनके संतुष्ट रहनेसे ही राज्यका मंगल है। यद्यपि शेखावाटीके सामन्त वहुत समयसे अबाध्यता प्रकाश करके राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव करते थे, परन्तु जब कभी जाति साधारणका अधिकार लेनेके लिये कोई झगडा होता है तभी वह महाराजकी वश्यता स्वीकार करके अपना पक्ष समर्थन करनेके लिये सेनाकी सहायता करनेमें भी त्रुटि नहीं करते। मारवाड विजयके समय शेखावाटीके सामन्तोंने दश हजार सेनाके साथ आमेरकी सेनामें मिलकर महाराजके अनेक उपकार किये थे। विशेष करके शेखावाटीके सामन्तोंके साथ महाराजका सद्भाव न होनेसे किसी कुअवसरपर कठिन महाराष्ट्रोंका आमेरराज्यमें आकर अत्यन्त हृदय विदारक जघन्य उपद्रव करनेकी आशंका है, इस कारण हमारे मतसे इन सामन्तोंको सब प्रकारसे संतुष्ट करके उनको अपने हस्तगत रखना ही उत्तम बात है"। खुशहालीराम वोहराके उक्त वचनोंको सुनकर आमेरके महाराजने कहा कि "आप जो अच्छा समझैं सो करें" राजाकी आज्ञा पाकर खुशहालीरामने शीघ्र ही शेखावत् सामन्तोंके साथ एक नवीन संधिपत्र नियुक्त किया। उस संधिपत्रके मतसे यह निश्चय हुआ कि रायसालोत्गण वार्षिक ६० हजार रुपया करमें दिया करैं और इस समय भेंटमें ४० हजार रुपया दें। इसपर सब सामन्त संमत हो गये; और खंडेला नगर तथा उनके अधीनके देशोंके अधीश्वरोंको फिर नवीन शासनकी सनद दी गई;। इस प्रकारसे निकाले हुए खंडेलाके दोनों अधीश्वर अभयसिंह और प्रतापसिंह फिर अपने पिताके अधिकारको पा गए।

यद्यपि नवीन शासन सनदपत्रपर आमेरके महाराज और उनके प्रधान मंत्रीने अपने हस्ताक्षर कर दिये, परन्तु इस समय जितने नागा सेना खंडेलाके किलेमें

और शेखावत् देशकी सीमामें स्थित किलोंपर अधिकार किये हुए थी वह किसी प्रकारसे भी अभयसिंह और प्रतापसिंहको उक्त देश देनेके लिये राजी न हुई। वीरश्रेष्ठ हनुमंतसिंहने विचारा कि ऐसा बोध होता है कि खुशहालीराम बोहराने चतुरतासे चालीस हजार रुपया भेंटमें संग्रह करके इस समय धोखा देनेके लिये गुप्तभावसे इस प्रकारकी आज्ञा दी है। तब हनुमन्तसिंहने विशेष चिन्ता करनेके पीछे खण्डेलाके दोनों अधीश्वरोंके निकट यह प्रस्ताव किया कि "आप हमको कितनी सेना देंगे? मैं जिस उपायसे भी होगा उसी उपायसे खण्डेलाको अपने हस्तगत कर लूँगा"। अभयसिंह और प्रतापसिंहके अधीनमें इस समय पाँच सौ अस्त्रधारी सेवक थे, हनुमन्तसिंह उनमेंसे बीस वीर तेजस्वी मनुष्योंको चुनकर उदयगढके द्वारपर जा पहुँचा। उसने अपनेको छिपाकर किलेमें कहला भेजा, कि मैं हनुमन्तसिंहका दूत हूं, और उन्हींके पाससे आया हूं। किलेके अध्यक्षने उसको वीस अस्त्रधारियोंके साथ किलेमें जाने दिया, पश्चात् बीस अस्त्रधारी उनके पीछे और आये। उन्होंने भी किलेमें प्रवेश करनेका अधिकार प्राप्त किया। कुछ समयके पीछे अभय और प्रतापसिंहके अन्य अस्त्रधारी उनके पीछे २ किलेके द्वारपर आकर इकट्ठे हुए। हनुमन्तने कुछ ही कालके पीछे दुर्गाध्यक्ष नागोंके निकट अपना परिचय देकर आमेरके अधीश्वर और राजमंत्रीके हस्ताक्षर सहित नवीन शासनकी सनद दिखा कर उनसे कहा कि "यदि तुम इसी समय किलेसे न चले जाओगे तो इसी तलवारके बलसे मैं एक २ के प्राणोंका नाश करूँगा" वीर श्रेष्ठ हनुमन्तको इस प्रकारसे बलवान् और दृढप्रतिज्ञ देखकर नागागण शीघ्र ही प्राणोंके भयसे किलेको छोड कर भाग गये। अभय और प्रतापने बहुत दिनोंके पीछे फिर अपने पिताके विध्वंस हुए देशपर अधिकार किया। जिस हनुमन्तसिंहके बल विक्रम और साहस तथा शूरवीरताके बलसे अभयसिंह और प्रतापसिंहको इस प्रकारसे पैतृक अधिकार प्राप्त हुआ; वह दोनों ही उन हनुमन्तसिंहके प्रस्तावके मतसे प्राचीन शत्रुताको छोडकर सरल स्वभावसे रहने लगे।

अभयसिंह और प्रतापसिंहको पैतृक राज्य मिलनेके कुछ ही काल पीछे विख्यात पठान दस्युनेता अमीरखाँ कालान्तक कालके समान आमेरराज्यमें आया। महाराज जगत्सिंहने उसको दमन करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेनाके साथ अधीन सामन्तोंकी सेनाको एक साथ मिला लिया। पूर्वसंधिके मतसे इस समय खण्डेलापति अभय और प्रतापकी सेनाने भी उक्त सेनादलके साथ मेल कर लिया। अमीरखाँके प्रधान सेनापति मोहम्मदशाहखाँके विरुद्धमें शीघ्र ही वह सम्मिलित सेनादल दूनीके सामन्त राय चाँदसिंहके अधीनमें वीरदर्पसे अग्रसर हुआ। धोमगढमें मोहम्मदशाह रहता था सेनाने उस किलेको घेर लिया। अंतमें किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण सम्भावना हो गई पर एक सामान्य कारणसे ही राजपूत सेनाके सब प्रधान उद्देश व्यर्थ हो गये।

शेखावत्सेनाके एकदलने इस समय टोंकके अधीनमें स्थित एक नगरको जीत कर लूट लिया। उसीमें एक गोगावत सम्प्रदायका निवासी निहत हुआ। विजयी शेखावतोंकी सेनाने उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट की। उन मारे हुए मनुष्योंके पुत्र

शीघ्र ही गोगावतोंके नेता प्रधान राय चाँदसिंहके पास गये। और उनको समस्त वृत्तान्त सुनाकर उनसे सहायता माँगी। चाँदसिंहने उनको पैतृक सम्पत्तिपर फिर अधिकार करनेके लिये कितनी ही वर्मावृत्तिसेनाको उनके साथ भेजा। शेखावत् किसी प्रकारसे भी उनकी सम्पत्ति देनेमें राजी नहीं हुए, और अपना दल प्रबल कर लिया। इस समाचारसे चाँदसिंहने भी महाक्रोधित होकर उन बालकोंका पक्ष समर्थन करनेके लिये अपनी सेनाकी संख्याको बढा लिया। इस प्रकारसे शेखावत् और गोगावतोंमें परस्पर युद्ध होनेकी संभावना हो गई। शेखावाटीके दो अधीश्वरोंने समस्त शेखावत् सामन्तोंकी सेना लेकर विवाद स्थानमें आकर दर्शन दिया। चांदसिंहके साथ उस बालकका विशेष सम्बन्ध था, दूसरे यह चाँदसिंह उस समस्त सम्मिलित सेनाके ऊपर अध्यक्षरूपसे भेजे गयेथे इस कारण उन्होंने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये किलेको घेरनेवाली सेनामेंसे बहुतसी सेनाको विवाद स्थलपर भेज दिया। तुरन्त ही आमेरके सम्पूर्ण सामन्तोंके अधीनमें स्थित सेनाने आत्मविग्रह उपस्थित करके महा समरानल प्रज्वलित कर दी। केवल सीकरके सामन्त ही इस विवादसे दूर रहे। अंतमें झगडा अधिक बढ़ गया। तब खाङ्गारोत् सम्प्रदायके नेताने मध्यस्थ होकर कहा, कि जिससे दोनों ओरका सम्मान बना रहै ऐसा कार्य करना उचित है। यद्यपि खंडेलापतिने गोगावतोंकी सम्पत्ति लूट ली, और वह उसे अपने राज्यमें ले गये हैं, पर वे समस्त संपत्तिको प्रधान सेनापतिके पास फिर भेजदें इससे दोनों ओरका सम्मान रह जायगा। शेखावत इसमें उसी समय सम्मत हो गये यद्यपि यह झगडा मिट गया, परन्तु चांदसिंह संतुष्ट न हुए। जो हो सम्मिलित सेनादलमें उक्त प्रकारसे आत्मविग्रह शांत हुआ, इसीसे भीमगढ़का अवरोध छोड दिया गया, सामन्त अपने २ देशको चले गये। सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंह जो इस झगडेमें सामिल नहीं हुए थे; शेखावाटीके दोनों अधीश्वरोंको असरल मार्गसे खंडेलाके नगरकी ओरको जाता हुआ देखकर अच्छा सुअवसर जान शीघ्रतासे अपनी सेनाको सीकरमें ले जाकर फिर इस समय खंडेलाके अधीश्वर पदको पानेके लिये आगे बढे। इन्होंने सबसे पहिले सीसोह नामक स्थानको घेर लिया, और अनेक प्रकारकी चतुराई तथा छलबलसे उसपर अपना अधिकार कर लिया। जिन पठानोंके विरुद्ध सीकरपति कितने दिनोंके पहिले युद्धमें नियुक्त थे, अन्तमें उसी पठानको दो लाख रुपया देनेकी प्रतिज्ञा कर उससे सहायता पानेके लिये उन्होंने कहला भेजा मन्नू और महाताबखाँ दो पठान सेनापति उस धन पानेके लिये शीघ्र ही सेना सहित सीकरपतिके साथ गये। सीकरपति लक्ष्मणसिंह खंडेलापर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए हैं. यह समाचार वीर श्रेष्ठ हनुमन्तसिंहने पहिले ही सुन लिया था। इस लिये उन्होंने इस भारी विपत्तिमें अभयसिंह और प्रतापसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये पठान सेनापति महताबखाँको ५० हजार रुपये देनेको कहा कि वह किसी प्रकारसे भी खंडेलापतिके साथ युद्ध न करै, और न खंडेलामें जायँ। परन्तु दुराचारी महताबखाँने उस प्रतिज्ञाको भंग करके शीघ्र ही अधिक धन पानेके लिये लक्ष्मणसिंहके साथ मेल करनेमें कसर न की।

वीरश्रेष्ठ हनुमंतसिंह पठानसेनापति महताबखाँको ५० हजार रुपया लेकर भी प्रतिज्ञा भंग करते हुए देखकर अत्यन्त क्रोधित हुए, और वह शीघ्र ही खंडेलाकी रक्षाके लिये उपयुक्त युद्धकी तैयारी करने लगे । परन्तु विपक्षियोंके नेता लक्ष्मणसिंहने अपने पितृसंचित अगणित धनकी सहायतासे इस समय अपने पक्षको धीरे २ अनेक उपायोंसे प्रबल कर लिया था । उसने शीघ्र ही उस धनवृष्टिके द्वारा रेवासो और अन्यान्य नगरों पर अपना अधिकार कर लिया । विजयी लक्ष्मणसिंहने शीघ्र ही प्रबल सेनाके साथ खण्डेला नगरमें जाकर नगरपर अधिकार कर लिया, परन्तु वीरश्रेष्ठ हनुमन्त खण्डेलाके किलेमें भलीभाँतिसे रहकर दूरवर्ती कोटेके किलेमें बहुत दिनोंके लिये बहुतसे खाद्य द्रव्योंको गुप्तभावसे अन्य मनुष्यों द्वारा संचित कराने लगे । शेषमें तीन सप्ताहतक उस प्रबल विपक्षियोंकी सेनाके हाथसे खण्डेलाके किलेकी रक्षा करके जब उन्होंने इनके मुखसे सुना कि कोटेका किला सब प्रकारसे धन संपत्तिसे पूर्ण कर लिया गया है, तब वह सेनासहित नंगी तलवारें हाथमें ले विपक्षियोंके द्वारा विध्वंस होनेवाले खंडेलाके किलेको छोडकर शत्रुओंका संहार करने लगे.और शत्रुओंके डेरोंको भेदन कर सेनाके साथ कोटेके किलेमें चले गये । संपूर्ण सामन्तोंने अभय और प्रतापसिंहके लिये अपने प्राणतक देनेका निश्चय कर लिया था, और इसीसे वह लोग पहिलेसे ही इस कोटके किलेमें इकट्ठे होगये थे ।

सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंह और शेखावाटीके प्रभु दोनों अधीश्वर अभयसिंह और प्रतापसिंहके नीचे पदपर स्थित सामन्त मात्र थे । इनके नीचे पदपर स्थित होकर उपरि-तन प्रभुके अधिकारको लोप करते हुए देखकर अन्यान्य सामन्त महाक्रोधित हो गये,और बहुतसे अभय और प्रतापसिंहकी सहायता करने लगे। परन्तु चतुर लक्ष्मणसिंहने उनमेंसे अनेकोंका बहुतसा धन अपने हस्तगत कर लिया । जिन्होंने धन नहीं दिया लक्ष्मणसिंहने उनके अधिकारी देशोंमें पठानोंकी सेनाको भेजा, इससे उन लोगोंने अन्तमें अपना सर्व नाश जानकर निरपेक्षतासे रहना स्वीकार किया । यद्यपि किसी २ सामन्तने आमेर-राजके निकट यह प्रार्थना की कि सीकरपतिने अन्यायाचरणसे खण्डेलापर आक्रमण किया है, परन्तु आमेरराजने उनकी प्रार्थनाको नहीं सुना, शेखावाटीके दोनों अधी-श्वरोंके दोषसे ही भोमगढका अवरोध व्यर्थ हो गया है यह जानकर आमेरके महाराज उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए । इस कारण शेखावाटीके दोनों अधीश्वरोंका पतन आमेरराजकी इच्छासे ही हुआ ।

वीरश्रेष्ठ हनुमन्तसिंह कोटेके किलेमें आकर शीघ्रतासे किलेके बाहरकी दीवारोंको बनाकर कई सौ सेनाके साथ प्रबल बलशाली लक्ष्मणसिंहकी बाट देखने लगे । लक्ष्मण-सिंहने पठानोंकी सेनाकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार करनेके पीछे कोटेको भी जा घेरा; हनुमन्तसिंहने किलेमें न जाकर उस बाहिरी किलेमें रहकर क्रमानुसार तीन महीनेतक शत्रुओंकी आशाको व्यर्थ किया । अंतमें तीन महीनेके पीछे शत्रुओंने अतुल-विक्रमके साथ उस बाहिरी किलेपर आक्रमण किया । सभीने हनुमन्तको मूल किलेमें

जानेके लिये अनुरोध किया, परन्तु वीर विक्रमी हनुमन्तने कहा, " जब कि खंडेला चिरकालके लिये शत्रुओंके हाथमें पड गया है, तब अब किलेके भीतर जानेका प्रयोजन क्या है ? " उन्होंने शीघ्र ही अपनी सेनाको राजपूतस्वभाव सुलभ तेजस्विताके साथ उद्दीपित करके कहा, " क्या तो आप शत्रुओंका संहार करिये, और नहीं तो आओ अपने जीवनका वलिदान करैं । " उसी मुहुर्तमें सेनासहित हनुमन्तसिंहने नंगीं तलवारें हाथमें लेकर वडे वेगसे शत्रुओंपर धावा किया और उन्हें परास्त कर दिया । और बाहिरी किलेको पुनः अपने हस्तगत कर लिया । पर भागी हुई शत्रुसेना फिर सहसा आ गई और प्रभातकालसे लेकर संध्यातक दोनोंमें घोर युद्ध होता रहा । हनुमन्तसिंह ने अंतिम बलके साथ फिर प्रचंडवेगसे शत्रुदलके व्यूहको भेदकर सब सेनाको भगा दिया । असीम साहसी हनुमन्तसिंहने इस समय शत्रुदलको भागा हुआ देखकर उनका पीछा किया, किन्तु खेद है कि उनके तोपखानेके सम्मुख तक पहुँचते ही अचानक एक गोलेके आघातसे उसी क्षण उनके प्राणपखेरू पयान कर गये । हनुमन्तकी मृत्यु होते ही उसी समय शत्रुओंकी जय हो गई। परन्तु नेताकी मृत्युसे उस अवरुद्ध सेनादलने शीघ्र ही बाहिरी किलेको छोडकर भीतरके किलेका आश्रय जा लिया । उक्त समरमें पाँचसौ पठानों की सेना और सीकरपतिके अधीनकी सेनाके सिवाय हनुमन्तके अधीनमें अधिक सेना नहीं थी, दूसरे दिन प्रभात होते ही हनुमन्तका शव संस्कार करने और घायल मनुष्योंको अन्य स्थानपर भेजनेके लिये किलेमें स्थित सेनादलने लक्ष्मणसिंहसे कुछ कालके लिये समरको स्थित रखनेकी प्रार्थना की, लक्ष्मणने उसमें अपनी सम्मति प्रकाश की; और उसी अवसरमें अभय और प्रतापसिंहके साथ संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया गया। परन्तु अभय और प्रतापसिंहने अवज्ञाके साथ उस प्रस्तावको अस्वीकार किया । हनुमन्तके मारेजानेका समाचार पाते ही उदयपुरके अधीश्वर जो पहिलेसे ही अभय और प्रताप-सिंहका पक्ष समर्थन करते थे, उन्होंने फिर कितनी ही सेनाके साथ भोजनकी सामग्रीको किलेमें भेज दिया । खेतडीके सामन्त इस समय उपस्थित होते तो वह अवश्य ही सहायता करते, परन्तु वह इस समय जयपुरमें थे । यद्यपि उन्होंने अपने पुत्रसे कह दिया था कि बिसाऊ देशके सामन्तकी सम्मतिसे कार्य करना परन्तु बिसाऊ देशके सामन्तने लक्ष्मणसिंहसे घूंस लेने और अंतमें खंडेलाराज्यके कितने ही अंश पानेकी आशासे लक्ष्मणसिंहका ही पक्ष समर्थन किया था, इसी कारणसे खेतडीके सामन्तपुत्रोंने अपने पिताके कहनेके अनुसार अभय और प्रतापसिंहकी सहायता नहीं की । अभय और प्रतापसिंहके अधीनकी सेना कहीं भी सहयताके न मिलनेसे वीर स्वभाव राजपूतोंके समान केवल साधारण बाजराकी रोटी खा करके और भी पाँच सप्ताहतक किलेली रक्षा करती रही । अंतमें आहारके अभावसे किलेमें सेनाके प्राणनाशकी संभावना होगई । तब सब कोई आत्मसमर्पण करनेके लिये चिन्ता करने लगे । इसी समयमें अवरोधकारी लक्ष्मणसिंहने प्रस्ताव कर भेजा कि वह अभय और प्रतापसिंको दश ग्रामोंका अधिकार देनेके लिये तैयार है, इसी पर किलेमें की सेनाने आत्म समर्पण कर दिया। प्रतापसिंहने तो पाँच

ग्रामोंका लेना स्वीकार किया, पर अभयसिंह अपने वंशगौरवको स्मरण करके पैतृक तेजके साथ उन पांच ग्रामोंके लेनेमें राजी न हुए । यद्यपि प्रतापसिंहने पांच ग्रामोंको ले लिया परन्तु कुछ ही दिनके पीछे दुराचारी लक्ष्मणसिंहने उनको उन ग्रामोंके अधिकारसे वंचित कर दिया । इतिहासवेत्ता टाड साहब सन् १८१४ ईसवीमें लिखते हैं कि जिस समय खण्डेलाके शेष शेखावत् दोनों अधीश्वर अभय और प्रतापसिंह झुंझुनू नामक स्थानमें अत्यन्त दीनभावसे थे, उस समय सिद्धानीके सामन्तोंने सभीसे चन्दा संग्रह किया, और उस महाविपत्तिमें उनको वह प्रतिदिन पांच रुपया दिया करते थे ।

सन् १८१४ ईसवीमें जिस समय आमेरके राजमन्त्री पदपर मिश्र शिवनारायण विराजमान थे, उस समय अफगान लोगोंने अमरिखाँ महाराष्ट्रनेताकी ओरसे जयपुरपतिके पाससे दण्डमें नौ लाख रुपया माँगा । आमेरके राजाका खजाना इस समय एकबार ही खाली हो गया था । राजमन्त्रीने अन्य कोई उपाय न देखकर अन्तमें सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहकी ओर दृष्टि डाली । लक्ष्मणसिंहने जयपुरपतिके मतको ग्रहण न करके बलपूर्वक खंडेलापर अधिकार कर लिया था और इस समयतक जयपुरेश्वरके पाससे खण्डेलाके शासनकी सनद न मिली थी । उसने बहुत दिनोंतक शासनकी सनद संग्रह करनेके लिये भलीभांतिसे चेष्टा की थी इस समय विशेष सुभीता पाकर मिश्र शिवनारायणने लक्ष्मणसिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा कि यदि वह स्वयं पांच लाख रुपया दें और जयपुरकी सेनाकी सहायताके लिये सिद्धानीके सामन्तोंके पाससे चार लाख रुपया इकट्ठा करके अमीरखांको दे दें तो उनको खण्डेलाकी शासनसनद दी जांयगी । लक्ष्मणसिंह उक्त प्रस्तावके अनुसार कार्य करनेको राजी हो गये । इस समय अमीरखां रानोलीमें निवास करता था। लक्ष्मणसिंहने वहां जाकर उसके हाथमें नौ लाख रुपया देकर उसकी रसीद जयपुरपतिके यहां भेज दी, जयपुरके महाराजने भी लक्ष्मणको खण्डेलाका पट्टा दे दिया ।

लक्ष्मणसिंह पट्टेको पाकर महा आनन्दित हो जयपुर राजधानीमें गये और वहां जाकर खण्डेलाका एक वर्षका राजस्व उन्होंने अग्रिम दे दिया, जयपुरपति महाराज जगत्सिंहने उनका दिया हुआ राजस्व वार्षिक ५७ हजार रुपया नियुक्त कर उन्हें खिलत अर्थात् (सिरोपा) पोशाक और आभूषण देकर उनको अपने हाथसे अभिषिक्त कर दिया । इस प्रकारसे रायसलके शेष वंशधर अभय और प्रतापका पैतृक अधिकार सर्वदाके लिये लोप हो गया, खण्डेलादेश शेखावतोंकी एक नीची शाखामें उत्पन्न हुए लक्ष्मणके अधिकारमें हो गया ।

पाठकोंको स्मरण होगा कि एक ब्राह्मणने खंडेला देशको जयपुरपतिके पाससे जमाबंदीमें ले लिया था । उसने प्रजाको पीडित करके और निकटके देशोंके सामन्तोंपर आक्रमण करके अत्यन्त दुःख दिया था । इस समय उस ब्राह्मणने अपमानित होकर अपने भाग्यके उद्धारके लिये विशेष चेष्टा करके अपने पोषक राजमंत्री मिश्र शिवनारायणके पास जाकर आश्रय लिया । अंतमें चातुरी और षड्यंत्रजालका विस्तार करके

शिवनारायणको राजाके समीप इस प्रकारसे कलंकित किया कि अंतमें उसी कारणसे उन्होंने आत्महत्या कर ली। ब्राह्मणने पीछे असीमसाहसके साथ षड्यन्त्रके बलसे शेषमें आमेरके मंत्रीपद पर अधिकार कर लिया। लक्ष्मणसिंह जिस समय आमेरकी राजसभामें आये तब इन्होंने अपनी बुद्धिमानीसे वहाँ अपनी प्रभुताईका विस्तार किया वह ब्राह्मण उस समय मंत्रीपदपर प्रतिष्ठित था। उस चतुर ब्राह्मणने लक्ष्मणको इस प्रकारसे अपना प्रभुत्व बढाते देख कर अपनी सामर्थ्य और अधिकारके लोप होनेकी आशंका की और शीघ्र ही उसने लक्ष्मणको किसी न किसी उपायसे राजकोपमें डालनेकी चेष्टा की। ब्राह्मणने यह स्थिर कर लिया कि कुछ ऐसा उपाय करना उचित है, कि जिससे लक्ष्मण राजाके विरुद्धमें खडा हो जाय, उसने लक्ष्मणसिंहके नवीन अधिकार युक्त खंडेलादेशपर आक्रमण करनेके लिये गुप्तभावसे आज्ञा दी। सिद्धानी राजपूत गणोंने फिर अपने पूर्व अधिकार प्राप्तिकी संभावना विचार कर शीघ्र ही उक्त ब्राह्मण राजमंत्रीके अधिकारमें स्थित जयपुरकी सेनाके साथ मिल कर खंडेलापर आक्रमण किया। ब्राह्मण मंत्री अपने उस आक्रमणकार्यमें नेतृत्व करने लगा परन्तु चतुर लक्ष्मणसिंह इस समय इस प्रकारके राजनैतिक उपायका अवलम्बन किया कि जिससे ब्राह्मण सफलमनोरथ न हो सका। लक्ष्मणसिंह खंडेलाकी रक्षाके लिये स्वयं वहां न जाकर जयपुरमें ही रहने लगे। परन्तु उन्होंने अत्यन्त गुप्तभावसे पठान नेता जमशेदखांके पास बहुतसा धन भेजा। जमशेदने शीघ्र ही सेनासहित जाकर ब्राह्मण मन्त्रीके डेरोंपर अधिकार करके और उसको महाभय दिखाकर उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट ली। मन्त्रीने अकस्मात् आई हुई विपत्ति देखकर शीघ्र ही अवरोधको त्याग महाक्रोधित हो राजधानी जयपुरकी ओरको कूच किया। क्रुद्ध हुए मन्त्रीने राजधानीमें जाकर अपने शत्रु लक्ष्मणसिंहको पकडनेकेलिये पीछा किया लक्ष्मणसिंह शीघ्र ही प्राणोंके भयसे केवल पांचसौ अश्वारोही साथ लेकर राजधानी छोडकर शीघ्रतासे भाग गये। राजमंत्रीने कुछ दूरतक पीछा किया। अन्तमें मन्त्रीने राजधानीमें जाकर लक्ष्मणसिंह और उनके पक्षके समस्त सामन्तोंकी धन सम्पत्तिपर अपना अधिकार कर लिया। इतिहाससे जाना जाता है कि उक्त ब्राह्मण मंत्री जमशेदके आक्रमणके भयसे डेरोंको छोडकर भाग गया, और सम्मिलित सिद्धानी सामन्त अभयसिंहको नेतापदपर वरण करके उसने फिर अंतिम बलके साथ खंडेलापर आक्रमण किया; परन्तु अन्तमें परास्त होकर भाग गया। इस प्रकारसे अभयसिंहकी शेष आशा एकबार ही दूर हो गई।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने लक्ष्मणसिंहके पूर्व पुरुषोंके विषयमें वर्णन किया है। वह लिखते हैं कि "यह स्मरण हो सकता है कि शेखाजीके पुत्रोंमें सबसे बडे राजा रायसलके सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। इनमें चौथे पुत्र तिरमल थे, रावकी उपाधि पाकर उन्होंने कासली देश और ८४ ग्रामोंका अधिकार प्राप्त किया। तिरमलके पुत्र हरिसिंहने अपने बाहुबलसे फतेपुरके कायमखानियोंके पाससे बीलाडा नामक स्थान और उसके अधीनके १२५ ग्रामोंपर अधिकार कर लिया

और कुछ ही समयके पीछे रेवासोंके और भी २५ ग्रामोंपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया। हरिसिंहके पुत्र श्योसिंह कायमखानियोंके प्रधान स्थान उक्त फतेपुरको जीत कर वहाँ निवास करते थे। श्योसिंहके पुत्र चाँदसिंह सीकरनगरके स्थापनकर्ता थे। उन चाँदसिंहके वंशोत्पन्न देवीसिंहने अपने अत्यन्त कुटुम्बी साहपुराके ठाकुरके पुत्र उक्त लक्ष्मणको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था। लक्ष्मणसिंहने जिस समय सीकर-पर अधिकार किया उस समय सीकरकी अवस्था बहुत अच्छी थी। लक्ष्मणसिंहने अपने बुद्धिबलसे देशकी अवस्थाको और भी सुधार लिया था। लक्ष्मणने खण्डेलापर अधिकार करनेके पहिले ही अपने अधीनमें स्थित प्रत्येक करद सामन्तको हीनबल करनेके लिये उनके प्रत्येक अधिकारी देशोंके किलोंको विध्वंस कर दिया। अधिक क्या कहैं, उसने अपनी पितृभूमि साहपुराके दुर्ग और वीलाडा भटौती और पासलीके किलोंको भी गिराकर सम कर दिया। लक्ष्मणसिंह इस प्रकार प्रचंड प्रतापसे शासन करते थे कि उक्त साहपुराके ठाकुर उनके जन्मदाता पिता भी अत्यन्त दुःखित होकर अपने अधिकारी देशोंको छोडकर जोधपुरको चले गये, और वहीं महाराणाके आश्रयमें रहने लगे।

साधु टाड साहबने लिखा है, "लक्ष्मणसिंहके अधिकारी देश इस समय एकत्र सम्बन्ध और उन्नत अवस्थामें थे। ग्राम और नगरोंकी संख्या पंद्रहसौ थीं, और उनसे वार्षिक आठ लाख रुपयेकी आमदनी होती थी। लक्ष्मणने अपने नामको अक्षय करनेके लिये लक्ष्मणगढ नामका एक किला बनवाया तथा अन्यान्य अनेक स्थानोंको दुर्गबद्ध किया। अधिकारी देशोंकी रक्षाके लिये उन्होंने अलीगोल नामके बन्दूकधारी आठदल सेनाकी सृष्टी की थी। प्रत्येक दलमें एक २ दल गोलन्दाज थे। इसके अतिरिक्त उनके अधीनमें एक हजार शिक्षित अश्वारोही सेना थी। इसमें पाँचसौ वेतनभोगी और पाँचसौ भूवृत्ति पानेवाले थे। लक्ष्मणसिंह जिस प्रकार प्रबल बलशाली थे, यदि जयपुरपति अंग्रेज गवर्नमेण्टके संधिबंधनके कारण उनकी लूटनेकी रीतिको दूर न करते तो लक्ष्मणसिंहने जिन पठानोंके दस्युदलकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार किया था उन्हींकी सहायतासे यह समस्त शेखावाटीपर अपना अधिकार कर सकते थे"।

अर्द्धशताब्दीके बहुतकाल पहिले कर्नल टाड साहबने खंडेलादेशका जो इतिहास वर्णन किया है अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम अनेक कारणोंसे इससे आगे उसको यहांपर नहीं लिख सकते उन्होंने इतना ही लिखा है।

---

(१) कर्नल टाड साहबने टीकेमें लिखा है कि "संवत् १८६२ सन् (१८०६ ईसवी) में सबसे ऊँचे शिखर अर्थात् किसी प्राचीन किलेके ध्वंस होनेसे बचे हुए शिखरके ऊपर यह लक्ष्मणगड बनाया गया था, यह नगर भी जयपुरके समान श्रेष्ठ रीतिसे बनाया गया था"।

(२) टाड साहबने कहा है कि खोकर राजपूतोंसे खंडेला नामकी उत्पत्ति हुई है खंडेला नगरमें ४ हजार घर हैं, और उनके अधीनके ग्रामोंकी संख्या ८० हैं;

खंडेलाके राजवंशका वर्णन करके इतिहासवेत्ताने अंतमें शेखावाटीकी और एक प्रबलशाखा सिद्धानियोंका संक्षिप्त वृत्तान्त यहाँपर वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है, कि "रायसालके तीसरे पुत्र भोजराजसे सिद्धानियोंकी उत्पत्ति हुई है। रायसाने जिस समय सातपुत्रोंमें अपने राज्यको विभक्त कर दिया था उस समय भोजराजको उदयपुर नगर और उनके अधीनके देश मिल गये थे। भोजराजके वंशधरों की संख्या अधिक थी, समयपर वह भोजानी नामसे विदित हुए, परन्तु किस कारणसे यह प्रकाशित नहीं हुआ कि वह उदयपुर अत्यन्त पूर्वकालसे शेखावतोंका प्रधान समिति स्थानरूपसे प्रसिद्ध हो गया था। इसी उदयपुरमें अनेक समयपर शेखावत् नेता-ओंने इकट्ठे होकर जातिकी एकता की थी"।

भोजराजकी कई पीढियोंके पीछे जगराम उनके वंशधर उदयपुरकी गद्दीपर वैठे थे। उनके छः पुत्रोंमें सबसे बडेका नाम साधु था। यह दशहरेके पर्वोत्सवके समय किसी कारणसे पिताके साथ झगडा करके पिताके राज्यको छोड कर अन्य स्थानपर सौभाग्य उपार्जन करनेके लिये चला गया। इस समय सिद्धानी गण जिन समस्त भूखंडोंपर निवास करते थे। यह देश फतेपुर (प्राचीन नाम इसका झुंझुनू था) नामक देशके अफगान[2] जातीय कायमखानी सम्प्रदाय नव्वाबके अधीनमें था। वह नव्वाब दिल्लीके सम्राट्के अधीनमें कर देकर उस देशका शासन करते थे। साधु घरसे निकल कर उक्त नव्वाबके पास गया। तब नव्वाबने इनको अत्यन्त आदरके साथ ग्रहण करके अपने घरमें रक्खा। साधु अपने बाहुबल और बुद्धि बलसे शीघ्र ही इस प्रकारसे नव्वावका विश्वासभाजन और प्रियपात्र हो गया कि जिससे नव्वाबने इसको फतेपुरके समस्त कार्योंका भार अर्पण कर दिया। इस विषयमें दो विवरण प्रकाशित हुए हैं और दोनों ही विश्वासयोग्य हैं। एकसे जाना जाता है कि नव्वाबके कोई पुत्र नहीं था, इसी कारणसे उन्होंने साधुको दत्तक स्वरूपसे ग्रहण करके उसको उक्त झुंझुनूदेश और उसके अधीनके ८४ ग्राम दे दिये। दूसरा यह कि नव्वाबकी मृत्युके पीछे साधुका ही अधिकार हुआ था। इसके सम्बन्धमें एक प्रवाद प्रचलित है, उससे जाना जाता है कि साधुने उक्त नव्वाबके अधिकारी देशोंपर अपना अधिकार भली भाँतिसे करके एक समय वृद्ध नव्वाबसे कहा कि आपने मुझे जो शासनका भार अर्पण किया है उसको मैं अपने हाथमें रखनेकी इच्छा करता हूँ। आपके निवासके लिये मैंने जो अमुक ग्राम नियुक्त कर रक्खे हैं आप उनमें जाकर अपने पदोचित वृत्तिको भोग करते रहैं। नव्वावने देखा कि साधुने जिस भाँतिसे अपने अधिकारोंको फैला लिया है इससे इस समय राज्यमें किसी प्रकार भी अपने पक्षका संग्रह करके साधुके विरुद्धमें खडे होनेका कोई उपाय नहीं है

(१) उदयपुरका प्राचीन नाम काइस है, और इसके अधीनमें चार भागोंमें विभक्त ४५ गाँव हैं।

(२) कायमखानी अफगान नहीं है चौहान जातिके मुसलमान राजपूत हैं।

यह विचार कर नव्वाबने शीघ्र ही झुंझुनूसे फतेपुरमें जाकर वहाँके निवासी अपने कुटुम्बियोंके अधीनके शासनकर्ताका आश्रय लिया। वह कुटुम्बी शीघ्र ही साधुको झुंझुनूसे भगानेके लिये अपनी सेनाको सजाने लगा। साधुने उस विपत्तिमें पडकर अंतमें अपने पितासे सहायता माँगी। यद्यपि पिता इसके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए थे, परन्तु उन्होंने पुत्रकी सहायता करना स्थिर किया। उदयपुरपति जगरामका और एक पुत्र इस समय मिरजा राजा जयसिंहके अधीनमें सेना सहित रहता था। जगरामने उस पुत्रको लिख भेजा कि वह तुरन्त ही आमेरके महाराजसे सहायताके लिये अपने साथ सेना लेकर साधुके साथ जा मिले। वह पुत्र उस पत्रको पाकर आमेरके महाराजके अनुग्रहसे कितनी ही शिक्षित सम्राट्की सेना और तोपखानेको साथ लेकर साधुके पास पहुँच गया। साधुने अपने भाईको आता हुआ देख शीघ्र ही फतेपुरतक अपना अधिकार करके झुंझुनूको अपने अधीनमें कर लिया। साधुने इस प्रकारसे कायमखानी नव्वाबको दूरकर अपने देशके समान मूल्य विशिष्ट उक्त फतेपुर और उसके अधीनके समस्त देश उक्तभ्राताको देकर दोनोंने ही पूर्व प्रस्ताव के अनुसार आमेरके महाराजको अपना प्रभु स्वीकार किया। और अपने वंशधरोंमें प्रत्येकके अभिषेकके समयमें भेंटमें कर देना स्वीकार किया। वीरश्रेष्ठ साधुने कुछ काल के पीछे और एक संप्रदायके अधिकारी सिंहाना देशको अपने बाहुबलसे अधिकारमें कर लिया। इस देशके अधीनमें १२५ ग्राम थे। साधुने इसके पीछे गौड़ राजपूतोंके अधीनमें स्थित ८४ ग्रामोंमेंसे बचे हुये सुल्तानो नामक ग्रामपर अधिकार कर लिया। अन्तमें साधुने दिल्लीके अत्यन्त प्राचीन सम्राट् तूंअरवंशमें उत्पन्न हुये खेतडीके अधिपतिके अधीनमें स्थित संपूर्ण ग्रामोंको अपने हस्तगत कर लिया, इस प्रकारसे साधुके अधिनमें सहस्रसे आधिक ग्राम और नगर हो गये। मृत्युके कुछ काल पाहिले साधुने उन समस्त देशोंको अपने पाँचो पुत्रोंमें बाँट दिया। पुत्रोंके नाम इस प्रकार थे (१) जोरावरसिंह; (२) किशनसिंह (३) नवलसिंह, (४) केसरीसिंह और (५) पहाडसिंह। इनके वंशधर साधुके नामके अनुसार ही सिद्धानी नामसे विदित हुए"।

साधुके बडे पुत्र जोरावरसिंहको पैतृक अंशके अतिरिक्त सबसे बडे चोकेडी नामक नगर और उसके अधीनके बारह ग्राम तथा सर्वोच्च मंत्रमूलक चिह्नस्वरूप हस्ती और अनेक सवारी आदि प्राप्त हुईं। परन्तु समयपर साधुके मध्यमपुत्र किशनसिंहके वंशधरने जोरावरके वंशधरोंको पैतृक अधिकारसे रहित करके उनके समस्त देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया। ज्येष्ठ शाखा जोरावरके वंशधर इस समय केवल सामान्य चोकेडी देशके अधिकारको भोग करते थे। यद्यपि किशनसिंहके वंशधर एकमात्र चोकेडीके अधीश्वर थे तथापि वह अपने वंश और पदमर्यादामें सबसे श्रेष्ठ गिने जाते थे।

"साधुके अन्य चार पुत्रोंके वंशधरोंमें निम्नलिखित सिद्धानी सम्प्रदायोंमें सबसे श्रेष्ठ सामर्थ्यवान् गिने गये—

१ खेतडीके अभयसिंह।
२ बिसाओंके श्यामसिंह।
३ नवलगढके ज्ञानसिंह।
४ सुलतानोंके शेरसिंह"।

" साधुने अपने बडे पुत्रको जिस भाँति कितने ही देश दिये थे, उसी प्रकारसे कनिष्ठ शाखाके लिये सिंहाना, झुंझुनू और सूर्यगढ (प्राचीन उडैछा) आदि कई एक देश दिये। खेतडीके अभयसिंहने उक्त सिंहाना और उसके अधीनके १२५ ग्रामोंको अपने अधिकारमें कर लिया था। परन्तु उन कनिष्ठ शाखाके वंशधरोंकी संख्या क्रमशः दिन २ बढती गई थी, और अन्य देश तथा ग्राम भी क्रम २ से खण्ड २ में विभक्त होते गये "।

" सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहने जिस प्रकार अपने बाहुबलसे अनेक भाँतिके असत् उपायोंसे रायसालोत् पर अपनी प्रधानता तथा प्रभुताका विस्तार कर लिया, उक्त अभयसिंहने भी उसी प्रकारसे अपने बाहुबलसे वा घृणित उपायोंसे सिद्धानियोंमें उसी प्रकार मस्तक उठाया। सीकरके सामन्तने केवल खण्डेलाकी श्रेष्ठ शाखाको एकबार ही लुप्त कर दिया, परन्तु खेतडीके सामन्त अभयसिंहने केवल साधुकी श्रेष्ठ शाखाको ही नहीं वरन् साधुकी कनिष्ठ शाखाका भी सर्वनाश करनेमें कसर न की। शेरसिंहके वंशधर किस प्रकार सुलतानोंदेशके अतिकारसे उतार दिये गये ? उस लोमहर्षण वृत्तान्तको पढनेसे पाठक सरलतासे जान सकैंगे कि उस भूमिपर अधिकार करनेके लिये राजपूतोंने कहांतक शोचनीय काण्ड उपस्थित किये थे "।

"वीरश्रेष्ठ साधुके सबसे छोटे पुत्र पहाडसिंहके औरससे भूपाल नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। भूपालसिंहके लुहारूकी विजयके समय निहत होनेसे पहाडसिंहने अपने भ्राताके पुत्र खेतडीके सामन्त बाघसिंहके सबसे छोटे पुत्रको दत्तकरूपसे ग्रहण किया। पहाडसिंहकी मृत्युके पीछे दत्तक पुत्रने सुलतानोंके सामन्त पदको ग्रहण किया। परन्तु उसकी अवस्था उस समय बहुत थोडी थी, इससे वह शीघ्र ही पिताके घर जाकर निवास करने लगा। परन्तु दुराचारी बाघसिंहने बारह वर्षके पीछे प्राण त्याग किये। जिस समय उसका शव दाह करनेक लिये बाहर किया गया उस समयमें भी उसके समस्त कुटुम्बियोंने उससे अत्यन्त घृणा की थी "।

इतिहासवेत्ता टाड साहब रायसालोत् और सिद्धानियोंके पूर्वोक्त विवरणको वर्णन करके अंतमें लाडखानियोंके सम्बन्धमें लिखते हैं कि " लाडखानी शब्दका अनुवाद प्रियतम प्रभु हैं" परन्तु लाडखानीगण राजपूतानेमें विख्यात दस्युरूपसे विदित थे, इस नामका अप्रयोग किया गया है। लाडला शब्दका प्रयोग सर्वसाधारणमें बालकोंपर स्नेह प्रकाशके लिये किया जाता है। रायसलके उक्त पुत्रके इस नामके साथ खाँशब्दका

(१) बाघसिंहने अपने बेटेको मारकर सुलतानोंको खेतडीमें मिला लिया। इसका फल भी उसको इस पापकर्मके अनुसार ही मिला। प्रत्येक कुटुम्बीने उससे घृणा की उसके मुहँपर थूका उसके शिरपर धूल डाली यहां तक कि वह इस लायक नहीं रहा कि किसीको अपना मुहँ दिखावे। उसकी स्त्रीने भी उसका मुहँ देखना छोड दिया। तब उसने अपने बेटे अभयसिंहके नामसे जो विद्यमान है राज करना शुरु किया इसके पीछे बाघसिंह बारह वर्षतक जीता रहा मगर कभी खेतडीके किलेमें अपने मकानसे बाहर नहीं निकला।

क्यों संयोग हुआ और उनके कनिष्ठ पुत्रका नाम "ताजखां" क्यों रक्खा गया,. यह जाना नहीं जाता। क्या अन्य एक मुसल्मान फकीरके संमानके निमित्त खां शब्दका संयोग किया गया था यह हमें विदित नहीं है।.उक्त लाडखांने मारवाड राज्यकी सीमामें स्थित आमेरके अधीन दाँतारामगढ नामक देशको अपने बाहुबलसे अधिकारमें कर लिया, उनके पिता बादशाहकी सभामें अधिक सम्मान पाते थे, इसी कारण उन लाडखाँको उक्त देशका मिलना सम्भव हो सकता है। उक्त देशके अतिरिक्त उन्हें तप्पनोसल प्राप्त हुआ, सब मिलाकर ८० नगर इसके अधिकारमें हुए। इनमें कितने ही मारवाड और बीकानेरके दोनों राजाओंने अपने अधीनमें कर रक्खे थे। लाडखानी गण जिससे उक्त दोनों राज्योंके लूटनेमें नियुक्त न हो इस कारण यह देश उन्हें रक्षाके लिये दिये गये थे। लाडखानीगण इस देशके पिंडारी आदिके समान भयंकर तस्कर जाति गिने जाते थे। वह इच्छा करते ही पाँचसौ अश्व इकट्ठे कर सकते थे। यह सभी भयके कारणस्वरूप थे; इनके अधीश्वर जयपुरके महाराज यद्यपि समय २ पर इनसे अपने २ करकी प्रार्थना करते थे परन्तु यह जिस देशमें निवास करते थे। वह अत्यन्त दुर्गम और इनके अधिकारी रामगढ नामका किला अत्यन्त दुर्भेद्य था। यह अनायास ही जयपुरके महाराजके निकट उस प्रार्थनाकी उपेक्षा कर जाते पर समय २ पर अमीरखाँके समान तस्करोंका दल सेनासहित वहाँ पहुँचता तब इनको विवश होकर करका वार्षिक बीस हजार रुपया देना पडता था। इतिहासवेत्ता टाड साहबने उक्त सिद्धानी और लाडखानियोंके जिस विवरणको वर्णन किया है, इसका पाठकोंको स्मरण होगा कि उन्होंने उसे सन् १८१४ ईसवीमें लिखा है, इस कारण आजकलके समयमें उक्त दोनों संप्रदायोंकी अवस्था अत्यन्त परिवर्तित हो गई थी।

कर्नल टाड साहब शेखावाटी राज्यके इतिहासके उपसंहारमें उन देशोंके राजस्वीकी एक तालिकाको प्रकाशित करगये हैं।हमने भी यहाँपर उस तालिकाको प्रकाशित किया है।

"सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहको खंडेलाकी आमदनी सीकर सहित	८०००० रुपये।
खेतडीके अभयसिंहको लार्डलेककी दी हुई कोटपूतलीकी आमदनी सहित	६००००० "
बसाओके श्यामसिंह और उनके भ्राता रणजीतसिंह जिन्होंने उनकी हत्या कीथी उनकी४०००आमदनीके सहित	१९०००० "
नवलगढके ज्ञानसिंह मंडावाके५०ग्रामों सहित... ...	७०००० "
मेदसरके लक्ष्मणसिंह	३०००० "
साधुके बडे पुत्र जोरावरसिंहके २७ प्रपौत्रोंके अधिकारी ताइन और उससे लगी हुई भूमिकी आमदनी ...	१००००० "
उदयपुरवाटी	१००००० "

मनोहरपुर	३०००० रुपया.
लाडखानियोंकी आमदनी	१००००० ”
हररामजीगण	४०००० ”
गिरिधर पोताओंकी आमदनी...	४०००० ”
छोटे सामन्तोंके अधिकारी देशोंकी आमदनी ...	२००००० ”
	कुल २३००००० रु० ।

जयपुरके महाराजको निम्नलिखित देशोंसे नीचे लिखा हुआ कर मिला करता है ।

सिद्धानीगण	२००००० रुपया.
खंडेला	६०००० ”
फतेपुर	६०००० ”
उदयपुर और बवाई	२२००० ”
कासली	४००० ”
	३५०००० रुपया थी ।

उपसंहारमें हम केवल इतना ही कहते हैं कि शेखावाटीके सामन्तोंके उक्त राजस्व और करके सम्बन्धमें गत पचास वर्षोंमें अधिक परिवर्तन हो गया है ।

शेखावाटीका इतिहास समाप्त ।

---

(१) मनोहरपुरके अधीश्वरके जयपुरपतिके विरुद्धमें उत्तेजित होनेसे महाराज जगत्‌सिंहने उनके प्राणोंको नाश करके उनके अधीनमें स्थित समस्त देशोंपर अपना अधिकार कर लिया था, और शेखावाटीको अन्यान्य सामन्तोंमें विभाग कर दिया था ।

श्रीः ।

जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट ।

जयपुरके इतिहासका भाषान्तर और इसके मुद्रित होनेके पीछे हमें जयपुरके दरबारके एक उच्च मनुष्यकी कृपासे "जयवंश" नामका एक महाकाव्य मिला; यह सीताराम नामक एक कविके द्वारा संस्कृत भाषामें रचा गया है । इस काव्यमें कुशावह वा कछवाहे राजवंशके आदि-पुरुष सोढदेवसे तीसरे जयसिंहके शासनतकका वृत्तान्त प्रवाहित धाराके समान वर्णन किया गया है । हमने आदिसे अन्ततक पढकर देखा कि कितने ही स्थानोंपर इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहबके लिखे हुए इतिहासके साथ उक्त काव्यके मतका भेद और असमंजस विराजमान है । इस बातको अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि कर्नल टाडने अर्द्ध शताब्दीके अधिक कालके पहिले कछवाहोंके द्वारा लिखे हुए अत्यन्त प्राचीन अनेक ग्रन्थोंको देखकर जयपुरके इतिहासका वर्णन किया है ! और "जयवंश"के प्रणेता कविश्रेष्ठ सीताराम जयपुरके महाराजके तीसरे जयसिंहकी आज्ञासे संवत् १९४२ में उक्त ग्रन्थको वर्णन किया है । कविने भी अवश्य ही जयपुरके महाराजके महलमें स्थित प्राचीन ग्रंथ और राजकीय कागजपत्रोंको देखकर अपने ग्रंथोंको निर्माण किया है यह भी मानना होगा, इस कारण इस प्रकारके स्थलोंपर दोनोंमें जिस २ स्थानपर मतभेद विराजमान है उस स्थानपर किसका वर्णन अभ्रान्त है इसका निसन्देह निर्णय करना कोई सहज बात नहीं है ।

कर्नल टाड साहबने यथार्थ इतिहासवेत्ताके समान निरपेक्षभावसे जयपुरके राजनैतिक इतिहासका वृत्तान्त वर्णन किया है, परन्तु " जयवंशके प्रणेताने सोढदेवसे जयसिंहके शासनतकका वृत्तान्त वर्णन करके निरपेक्षभावसे समस्त अंशोंको प्रकाशित नहीं किया । उनका काव्य भारतवर्षके प्राचीन कविकुलकी लेखनीसे निकले हुए काव्यके समान कल्पनासे जडित और ऊँची प्रशंसासे परिपूर्ण है । अनेक प्रयोजनीय ज्ञातव्य राजनैतिक विषयोंको उसमें एकबार ही छाड दिया है । जयपुर राजवंशके साथ दिल्लीके सम्राट् वंशकी जो विशेष आत्मीयता और घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ था, जयपुरके महाराजको जिस सम्राट्वंशकी अधीनता स्वीकार करनी पडी थी इस काव्यमें उसका कोई उल्लेख नहीं हुआ है । इस कारण कर्नल टाड साहबने निरपेक्षभावसे जिन समस्त ऐतिहासिक सत्य और तथ्यको प्रकाशित किया है, उन सबको इस काव्यमें स्थान नहीं मिला । पर हम ऐसा भी निश्चय नहीं कर सकते कि यह सब काव्य भ्रान्तिसे परिपूर्ण है । तब दोनोंने जिन २ विषयोंका उल्लेख किया है। उसी २ स्थानपर सावधानीके साथ हमें किसी एक पक्षका अवलम्बन करना ही होगा ।

कर्नल टाड साहब संस्कृतभाषाके विद्वान् नहीं थे। उन्होंने अपने ग्रंथोंमें अनेक स्थानोंपर इस बातको स्वीकार किया है । उनके गुरु यति ज्ञानचंद्र प्राचीन ग्रंथोंको पढकर मुखसे उसकी व्याख्या करके अर्थ करते जाते थे,और वह उसी समय उन सबको अंग्रेजी भाषामें लिख लेते थे । यद्यपि यति ज्ञानचंद्र बडे भारी पाण्डित थे तथापि शीघ्रतासे

व्याख्याके समय किसी स्थानपर उनसे कहीं भी भ्रम न हुआ हो अथवा उन्होंने भ्रमसे किसी स्थानको भी नहीं छोडा हो अथवा कर्नल टाड साहबने भाषान्तर करनेके समयमें किसी स्थान विशेषका नाम वा किसी कविताका कोई अंश भ्रमसे विपरीत अर्थमें न लिखा हो यह असम्भव नहीं हो सकता । मुनियोंको भी भ्रम हो जाता है, सारांश यह है कि यति ज्ञानचन्द्र वा कर्नल टाड साहबको भ्रम न हुआ हो यह कदापि सम्भव नहीं हो सकता । जयवंशके कर्ताको भ्रम न हुआ हो यह भी असम्भव नहीं है पर वह संस्कृतके एक विख्यात पण्डित थे। उन्होंने स्वयं राजमहलके अनेक ग्रन्थोंको देखकर जयपुरराजवंशके प्राचीन राजाओंकी संक्षिप्त जीवनीका संग्रह किया था, इस कारण इसके सम्बन्धमें उनके अल्प भ्रम होनेकी सम्भावना है ।

जिस २ स्थान पर दोनों मत और घटनाओंकी एकता नहीं है हम अत्यन्त संक्षेपसे उन कई एक घटनाओंके उल्लेख करनेकी अभिलाषा करते हैं, जयपुरके इतिहासके प्रथम अध्यायका पाठक पढकर भलीभाँतिसे जान सकेंगे कि टाड साहबने लिखा है कि "राजा नलसे३३पुरुष पीछे नरवरके महाराज सूरसिंहके प्राण त्याग करनेपर उनके भ्राताने बलपूर्वक सिंहासनपर विराजमान होकर कुमार भाईके पुत्र दूलेरायको अधिकारसे रहित कर दिया" इत्यादि जयवंशकाव्यमें अन्य प्रकारका वर्णन देखा जाता है, कविने जो लिखा है उसका सारा मर्म यह है कि निषधदेशके अन्तर्गत बरेली राजधानीमें ईशसिंह राज्य करते थे। ईशसिंहके औरस सोढदेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ । साढदेवने युवा होकर अपने पिताकी आज्ञासे गुर्जर देशके अधीन योधानामक राज्यपर आक्रमण किया। प्रबल युद्धके समयमें उक्त राज्यको जीतकर उसने वहां अपनी आधिपत्यताका विस्तार कर अपने पिताको वहां जानेके लिये कहा, पिता ईशसिंह अपने कुटुम्बसहित नवजीत राज्यमें जाकर वहां निवास करने लगे। सोढसिंह कुछ समयके पीछे पूर्वाञ्चलके माचीके महाराजके साथ युद्ध करनेके लिये चले। माचीके राजा और उनके अधीनमें स्थित छोटे २ राजाओंके साथ सोढदेवका भयंकर युद्ध हुआ । सारे दिन संग्राम हानेक पीछे रात्रिके समय जब कुलदेवी प्रसन्न हुई तब देवीने सोढदेवको प्रत्यक्ष दर्शन देकर अभय दी । दूसरे दिन प्रभात होते ही फिर प्रबल युद्ध हुआ, देवीके वरसे सोढदेवने विपक्षी माचीपतिके तथा अन्य राजाओंके जीवनको नाश कर जय प्राप्त की। माची नगरमें सोढदेवने देवीका एक मन्दिर बनाया । माचीदेशके जीतनेके पीछे सोढदेवने खोह नामक देशको जीतकर वहां अपना अधिकार किया । पिता ईशसिंहकी

(१) कर्नल टाड साहबने सूरसिंह लिखा है । अंग्रेजी भाषामें "ढ" वर्ण नहीं है, इस कारण अग्रजीमें लिखनेके समयमें उन्होंने (R) (र) शब्दको ही प्रयोग किया हो ।

(२) पाठकोंको जयपुर इतिहाससे विदित हुआ होगा कि सोढदेवके पुत्र दूलेरायने आश्रयदाता मीनाके अधीश्वरकी हत्या करके खोहगांवपर अधिकार किया। परंतु जयवंशकार कहते हैं कि सोढदेवने खोह देशको जय किया था। खोह शब्दकी दूसरी विभक्तिसे खोह हुआ । ऐसा जाना जाता है कि कविने ज्ञानचन्द्रके मुखसे खोह शब्दको सुनकर भूलसे खोहगांव लिख दिया है ।

आज्ञासे सोढदेवने उस नवजीत खोहदेशमें निवास किया। कुछ ही समयके पीछे उनके पिता ईशसिंहने इस संसारसे बिदा ली, तब सोढदेव संवत् १०२३ में पिताके राज्यपर अभिषिक्त होकर प्रबल प्रतापके साथ राज्य करने लगे।

इस समय देखा जाता है कि इतिहासवेत्ता टाड साहबने सोढसिंहके शासनका कोई उल्लेख नहीं किया; केवल उन्होंने उनके पुत्रके द्वारा खोहकी जयका उल्लेख किया, परन्तु जयवंशकार कहते हैं कि सोढसिंहने स्वयं खोहको जय किया, हमैं ऐसा अनुमान होता है कि यति ज्ञानचन्द्रके अनुवादके दोषसे ही टाड साहबने इस प्रकार लिखा है, अथवा टाड साहबने जिस ग्रंथसे सहायता ली थी उसीमें इस मतका वर्णन होगा।

कर्नल टाड साहबने सोढदेवके पुत्र दूलेरायके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है जयवंशकारने उसका समर्थन नहीं किया। पहिली बात यह है कि टाड साहबने सोढदेवके पुत्रका नाम दूलेराय लिखा है, परन्तु कविने उनका नाम दुर्लभ लिखा है। दुर्लभ के बदलेमें दूले होना कभी संभव नहीं हो सकता, तब टाड साहबने अनेक स्थानोंमें नामोंका अदलबदल किया है, जयवंशकारने लिखा है कि सोढदेवके प्राण त्याग करनेपर उनके पुत्र दुर्लभसिंह पिताके राज्यपर विराजमान हुए। दुर्लभ अतुल विक्रमके साथ राज्यशासन करते थे; टाड साहबने जिन दूलेरायकी विपत्तिका विवरण और उनके द्वारा खोहदेशके मीनाके अधीश्वरका आश्रय ग्रहण करना तथा मीनापतिके प्राणनाशका वृत्तान्त वर्णन किया है, कविने उसका कोई उल्लेख नहीं किया। टाड साहब लिखते हैं कि "दूलेरायकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम काकिल रक्खा गया।" परन्तु जयवंशके प्रणेताने लिखा है, कि "दुर्लभसिंहके औरस काकिल नामवाला पुत्र उत्पन्न हुआ जब काकिल स्याना हुआ तब राजा दुर्लभसिंहने उसको भांडारेजको जीतनेके लिये भेजा। कुमार काकिलने अपनी प्रबल सेनाकी सहायतासे भांडारेजपतिको परास्त करके वहां अपने पिताके अधिकारका विस्तार कर फिर पिताकी राजधानीमें लौट आये। इस स्थानपर दोनोंके मतका भेद फिर दृष्टि आता है। किस ओरकी बात ठीक है इसका निर्णय करना कोई सरल बात नहीं है।"

इतिहासवेत्ता टाड साहबने लिखा है, कि उन्होंने काकिलका भ्रमवश हो (कंकाल लिखा) पुत्र माईदल अथवा मादल पिताके सिंहासन पर विराजमान हुआ; इसके पीछे उनके पुत्र हनूने राजसिंहासनको प्राप्त किया। जयवंशकाव्यमें माईदल वा मादल नामका आजतक कोई उल्लेख नहीं है। कविने काकिलका पुत्र हनूदेव, लिखा है।

साधु टाड साहब लिखते हैं कि हनूदेवके पुत्र कुण्डलको पीछे राज्य प्राप्त हुआ जयवंशके प्रणेताने लिखा है कि हनूदेवके पुत्र ज्ञानदेव थे। यहांपर फिर भेद देखाजाता है।

महामान्य टाड महोदयने लिखा है कि पीछे पंजन वा पजून कछवाहोंके सिंहासनपर विराजमान हुए। कविने उस नामको "प्रंजोन" लिखा है। पर हमको पजवन ज्ञात हुआ है। यहां भी भ्रम है।

टाड साहबने मलेसीके पीछे जिन ग्यारह राजाओंकी नामावली प्रकाश की है उसके साथ जयवंशके प्रणेताके ग्रंथमें मलेसीके परिवर्ता जो १० नाम लिखे हैं, हमने क्रमानुसार उनकी नामावलीको प्रकाशित किया है,—

टाड साहबकी लिखी।	जयवंशके प्रणेताकी लिखी हुई।
(१) बीजल	...(१) बीजर।
(२) राजदेव	...(२) राजदेव।
(३) कल्याण	...(३) कीलन।
(४) कुन्तल	...(४) कुतिलक।
(५) ज्ञानसिंह	...(५) जूनसी।
(६) उदयकरण	...(६) उदयकरण
(७) नरसिंह	...(७) नृसिंह।
(८) वनवीर	...
(९) उद्धारण	...(८) उद्धरण।
(१०) चन्द्रसेन	...(९) चन्द्रसेन।
(११) पृथ्वीराज	...(१०) पृथ्वीराज।

उपरोक्त दोनों तालिकाओंमें किस प्रकारका भेद पडा है, यह तो सरलतासे ही जानाजासकता है। टाडने जिन ११ जनोंके नाम लिखे हैं कविने दशहीके नाम लिखे हैं। कविने वनवीरके नामको आजतक प्रदान नहीं किया। उसने अपने ग्रंथमें स्पष्ट लिखा है कि नृसिंहके औरससे उद्धरणका जन्म हुआ परन्तु हम कभी यह अनुमान नहीं कर सकते कि कर्नल टाड साहबने इच्छानुसार ही नृसिंहके पुत्रको वनवीर लिख दिया हो, उन्होंने जिस ग्रंथके आश्रयसे इस तालिकाको प्रकाश किया है उस ग्रन्थमें अवश्य वनवीर नाम होगा।

जयवंशके प्रणेताने पृथ्वीराजके एक मात्र पुत्र भारमल्लका वर्णन किया है। टाड साहबने पृथ्वीराजके सत्रह पुत्रोंकी कथा लिखी है, परन्तु उक्त कविने उसको नहीं लिखा। पृथ्वीराजके भारमल्लके अतिरिक्त और भी पुत्र थे, उनके अनेक प्रमाण विराजमान हैं। पृथ्वीराजने आमेरराज्यको बारह अंशोंमें विभाग करके उन बारह पुत्रोंको देदिया, इसको सभी जानते हैं, और उसीके अनुसार आमेर "बाराकोटरि" अर्थात् बारह प्रधान सामन्तोंकी सम्प्रदायमें विभक्त हैं। हमें ऐसा बोध होता है कि जयवंशकारने इस ऐतिहासिक तथ्यको इच्छानुसार ही छोड दिया था।

कर्नल टाड साहबने लिखा है कि पृथ्वीराजके दूसरे पुत्र भीमने अपने पिता पृथ्वीराजके प्राण नाश किये। जयवंशकारने इसको नहीं लिखा। उन्होंने पृथ्वीराजकी स्वाभाविक मृत्युका उल्लेख किया है, हमें ऐसा विदित होता है कि कविने राजवंशके कलंकको गुप्त रखनेके लिये ही उक्त दुःखदाई घटनाका उल्लेख नहीं किया।

राजवंशके प्रणेताने लिखा है कि भारमल्लके पुत्र। भगवतदास थे टाड साहबने इनके नामको भगवानदास लिखा है "परन्तु साधु टाड साहबने भगवानदासके साथ

दिल्लीके बादशाह अकबरकी मित्रताके विषयमें जो उल्लेख किया गया है, उस विषयमें जयवंशकार तो एकबार ही मौन रहे। कविने भूलसे भी किसी स्थानमें एक पंक्तिमें भी यह नहीं लिखा कि यवन बादशाहके साथ जयपुरके महाराजकी मित्रता थी; या आत्मीयता वा करदका कोई सम्बंध था। भगवान्दासकी कन्याके साथ कुमार सलीमके विवाहका वृतान्त केवल कर्नल टाड साहबने ही नहीं वरन अन्यान्य इतिहास लेखकोंने भी लिखा है, परंतु कविने उसका कोई उल्लेख नहीं किया।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने लिखा है कि "भगवान्दासके चचाके पुत्र और उत्तराधिकारी मानसिंह थे"। परंतु जयवंशकारने लिखा है कि "मानसिंहने भगवान्दासके औरससे जन्म लिया। यहांपर केवल टाड साहबका ही भ्रम विदित होता है। टाड साहबने लिखा है, कि भगवान्दासके अन्य तीन भ्राता थे, उनके नाम सूरतसिंह, माधोसिंह और जगत्सिंहके पुत्र थे।" कविने लिखा है "कि मानसिंहके औरस कनकावती रानीके गर्भसे जगत्सिंहका जन्म हुआ।" हमैं ऐसा बोध होता है कि टाड साहबने भ्रमसे ही जगत्सिंहको मानसिंहका पुत्र न लिखकर मानसिंहको जगत्सिंहका पुत्र लिख दिया था। जगत्सिंह मानसिंहके पुत्र थे इसका वृत्तान्त अनेक स्थानोंमें पाया जाता है।

जयवंश प्रणेताने लिखा है, "कि राजा भगवत्दासने अपने पुत्र मानसिंह और पौत्र जगत्सिंहके साथ भारतवर्षके अनेक देशोंके युद्धमें जयप्राप्त की। मानसिंहके समान जगत्सिंह एक महाबलवान् धनुर्धारी थे। वह पिताके साथ अनेक स्थानोंपर जय प्राप्त करके विशेष यशस्वी हुए। परन्तु अकालमें ही वह संसारसे बिदा हो गये, भगवत्दास और मानसिंह महान् शोकसागरमें निमग्न हुए, कुछ दिनोंके पीछे मानसिंह गुर्जर देशको जीतनेके लिये गये; राजा भगवान्दास उस समय संसार छोड गये। इसके पीछे मानसिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए और अपने पोते (जगत्सिंहके पुत्र) महत्सिंहके साथ[२] अनेक देशोंको जीतनेके लिये गये। दुर्भाग्यसे महत्सिंहकी मृत्यु अकालमें हो गई, इस प्रबल शोकसे थोडे दिनोंके पीछे ही मानसिंहने भी अपने प्राण त्याग किये।" टाड साहबकी अपेक्षा कविकी यह उक्ति सत्यतासे पूर्ण विदित होती है।

अंतमें टाड साहबने लिखा है, कि जगत्सिंहके पोते जयसिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। कविने भी इस बातको माना है, उनके पुत्र रामसिंह आमेरके राजछत्रके नीचे शोभयमान हुए, यह दोनों ग्रंथोंसे प्रकाशित होता है। टाड साहबने लिखा है कि "रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र विशन वा विष्णुसिंह आमेरके सिंहासनपर प्रतिष्ठित हुए।" परन्तु जयवंशकारने लिखा है कि रामसिंहके पुत्र कृष्णसिंह थे। उनका वर्ण काला था, इसीसे उनका नाम कृष्णसिंह रक्खा गया। रामसिंहने अपने पुत्र

(१) जयपुरके इतिहासकी टिप्पणी १ अध्यायकी देखो।

(२) टाड साहबने लिखा है कि महासिंहके पुत्र भावसिंह थे, परन्तु कविने भावसिंहके नामका उल्लेख नहीं किया।

कृष्णसिंहके साथ दक्षिणके युद्धमें गमन किया । रणभूमिमें रामसिंह शत्रुओंके आघातसे घायल हुए, कृष्णसिंहने आघात करनेवालेकी ओरको महाक्रोधित हो अस्त्रोंकी वर्षा की। इसी कारणसे शत्रुओंके आघातसे कृष्णसिंह रणभूमिमें मारे गये । उन्हीं कृष्ण-सिंहके पुत्र विष्णुसिंह हैं। रामसिंहके प्राण त्याग करने पर उनके पोते उक्त विष्णुसिंह आमेरके महाराजा हुए। " विष्णुसिंहके पुत्र जयसिंह और विजयसिंह थे । यह दोनों ग्रंथोंमें प्रगट हैं। टॉड साहबने लिखा है कि जयसिंह अश्वमेध यज्ञ करनेके लिये गये थे, परंतु कवि सीतारामने लिखा है कि उन्होंने महा समारोहके साथ अश्वमेध यज्ञको पूर्ण किया था इसके उपलक्षमें महाराजने बहुतसा धन खर्च किया था।

कर्नल टाड साहबने लिखा है कि जयसिंहके बडे पुत्र ईश्वरीसिंहने शत्रुओंके भयसे विषपान करके आत्महत्या की, परन्तु कवि लिखते हैं कि ईश्वरीसिंहने मल्लारी देशको जीतकर वहाँके महाराजको पैरोंसे प्रहार किया, उसी मल्लारीपतिने उनको विष देकर मारडाला। कवि सीतारामने अपने काव्यमें सब प्रकारसे जयपुर राजवंशकी हीनताकी कथाको प्रकाशित नहीं किया था, इसी कारणसे उसने ईश्वरीसिंहके गौरवकी रक्षाके लिये उक्त विवरणको प्रकाशित न किया हो ऐसा अनुमान करना असंगत नहीं है। जयपुरका सिंहासन लेकर ईश्वरीसिंहके साथ माधवसिंहका प्रबल विवाद और संग्राम हुआ था; कविने उसका भी कोई उल्लेख नहीं किया ।

ईश्वरीसिंहके पीछे माधवसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए, यह दोनों ग्रंथों-में प्रकाशित है, माधवसिंहके दोनों पुत्र पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह हुए। कविने लिखा है कि पृथ्वीसिंहने एक वर्ष ही राज्य करके शरीर त्याग दिया, तब प्रतापसिंह राजा हुए। प्रतापसिंहके पुत्र जगत्सिंहके विषयमें कविने कुछ भी नहीं लिखा है । अंग्रेजी गवर्न-मेण्टके साथ जगत्सिंहका जो संधिबन्धन हुआ है कविने उसका उल्लेख नहीं किया। जगत्सिंहके पुत्र जयसिंह थे कवि सीतारामने इन्हींकी आज्ञासे " जयवंशक " नामक एक महा काव्यको निर्माण किया है।

तीसरे जयसिंहके पुत्र रामसिंह और उनके दत्तक पुत्र वर्तमान महाराज माधोसिंह हैं।

जयपुरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बम्बई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

बूँदीराज्यका इतिहास.



बून्दी।

H. H. Maharao Raja Sir Raghabir Singh Bahadur,
G. C. I. E., K. C. S. I.
of Bundi.















बून्दी ।

(१) सुरजन,	१५३३.	(५) छत्रसाल	१६३१,	(१०) अजीतसिंह.	१७७१,
(२) भोज,	१५८८,	(६) भाऊसिंह.	१६५९,	(११) विशनसिंह,	१७७२.
(३) रतन,	१६०७,	(७) अनुरुधसिंह.	१६८२.	(१२) रामसिंह,	१८२१
(४) गोपीनाथ,	१६१४.	(८) बुद्धसिंह,(ना० नहीं मालुम)		(१३) महारावराजा रघुवीरसिंह,	
		(९) उम्मेदसिंह.१७४४,मरे१८०४,		१८८९,	

नोट—[illegible] यह भी मत है कि गोपीनाथ रतन के [illegible]

श्रीः ।

राजस्थानका इतिहास।

दूसरा भाग २.

बूँदीराज्यका इतिहास.

हाडौतीप्रदेश–अग्निकुलकी उत्पत्तिका वृत्तान्त–आबूपर्व्वत–चौहान जातिको महकावती (मैकावती) गोलकुण्डा और कोंकनदेशकी प्राप्ति–अजमेरकी प्रतिष्ठा–जयपाल–माणिकराय–प्रथम बार यवनोंका आक्रमण–अजमेरपर अधिकार–संभरके लवणहृदकी उत्पत्तिका विवरण–माणिकरायका वंश–चौहानोंका राजपूतानेमें प्रवेश–मुसल्मानोंके साथ युद्ध–अजमेरका वीलनदेव–गोगाकी वीरता–मैडीका चौहान–महमूदका उभयकी हत्या करना–उनके अधीन राजाओंका सेना सहित इकट्ठे होना–उनका समय निश्चय करना–हाडा जातिकी उत्पत्ति–अनुराजका आसेर देशको प्राप्त करना–उनका राज्य नाश–अस्थिपालका आसेरदेशको प्राप्त करना–रावहमीर–रावचन्द–अलाउद्दीनका आसेर पर अधिकार–वहां निवास–उनके पुत्र कोल्हनका पठार देशपर अधिकार करना–राववागा–उनका मयनाल पर अधिकार करना–बंबावदाके किलेका बनवाना–दिग्विजय–रावदेवा–बून्दीकी राजधानीकी स्थापना।

राजस्थानके जो अंश हाडौती नामसे प्रसिद्ध है, उन अंशोंमें दो राज्य स्थापित हैं एकका नाम बूँदी और दूसरेका नाम कोटा है। बूँदी कोटा पहिले एक ही राज्य था, तीनसौ वर्षसे इसके दो भाग हो गये हैं। चम्बल नदी इन दोनों राज्योंके बीचमें बहती है; इस कारण इस तरंगिनीने दोनों राज्योंकी सीमा नियत कर दी है। हाडा वंशीय राजपूत इस देशके निवासी हैं, उन्हींके नामके अनुसार इस देशका नाम हाडौती हुआ है। इसी हाडौती देशमें, बूँदीराज्यके इतिहासके लिखनेको हम आगे बढ़े हैं।

चौहान राजपूतोंकी चौबीस शाखाओंमें यह हाडा नामकी शाखा ही श्रेष्ठ गिनी गई है। अजमेरके अधीश्वर माणिकरायके पुत्र अनुराज इस शाखाके आदिपुरुष हैं। माणिकरायने संवत् ७४१ सन् ६८५ ई. में सबसे पहिले भारतीय राजाओंके साथ भारतके विजयकी इच्छासे मुसल्मानोंके साथ महायुद्ध किया था।

इतिहासलेखक कर्नल टाड साहबने चौहान जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें विख्यात कवि चन्दका आश्रय लिया है। चंदकविने अपनी अमृतमयी लेखनीसे अग्निकुलकी उत्पत्तिके संबन्धमें जो कुछ वर्णन किया है, उसकी सत्यताके संबन्धमें वर्तमान

समयमें संदेह उपस्थित होनेपर भी यहाँपर उसका वर्णन करना हमने अत्यन्त आवश्यक समझा है। चंद कवि लिख गये हैं कि "वीर तेजस्वी क्षत्री राजा अनाचारयुक्त हो परशुरामके क्रोधमें निमग्न हुए। परशुरामने इक्कीस बार पृथ्वीको क्षत्रियहीन किया, उस समय बहुतसे क्षत्रियोंने अपने जीवनकी रक्षाके लिये अपनेको क्षत्री न बताकर उसके बदलेमें कवि जातिका परिचय दिया था, और बहुतोंने स्त्रियोंका स्वरूप धारण कर परशुरामके हाथसे छुटकारा पाया। इस प्रकारसे बहुतसे क्षत्रियोंने अपने प्राणोंकी रक्षा की। परशुरामने समस्त राज्य ब्राह्मणोंको शासन करनेके लिये अर्पण किया। नर्मदानदीके किनारे माहेश्वर नगरके हैहय जातिके राजा सहस्रार्जुनने परशुरामके पिताका संहार करके शेष युद्ध उपस्थित किया था।

"ब्राह्मणोंके प्रधान अस्त्रोंमें केवल अभिशाप और आशीर्वाद ही सबसे प्रधान। राज्यपालन, शान्तिरक्षा और दुष्टोंको दमन करनेमें किसीकी भी सामर्थ्य न थी, इसी कारणसे राज्यमें शीघ्र ही अराजकता विराजमान हो गई। अशान्तिरूपी भयंकर अग्नि प्रज्वलित हो गई। राज्यमें सर्वत्र मूर्खता और अधार्मिकता फैल गई, पवित्र धर्मग्रन्थोंको मनुष्य पापमार्गसे दलन करने लगे, और तस्कर असुर चोर तथा दानव मनुष्योंके ऊपर घोर अत्याचार करने लगे। आयुध-गुरु महर्षि विश्वामित्रने उस अशान्ति और अत्याचारोंको देखकर दुःखित हो, मनही मन विचार किया कि फिर क्षत्रियोंकी सृष्टि करना कर्तव्य है। आबू शिखरके जिस स्थान पर ऋषि मुनि निवास करते थे और तप योग यज्ञ तथा योगके साधनसे जिस शिखरको पवित्र किया था; महर्षि विश्वामित्रने उस स्थानमें जाकर क्षत्रियोंकी सृष्टिके लिये यज्ञ करनेका विचार किया। पीछे समस्त ऋषि मुनि क्षीरोद समुद्रके किनारे जाकर सृष्टिकर्ताकी आराधनामें नियुक्त हुए। सृष्टिकर्ताने उनको फिर वीर क्षत्रिय जातिकी सृष्टि करनेकी आज्ञा दी। ऋषि मुनि उस आज्ञाको पाते ही इन्द्र, ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु और अन्यान्य देवताओंके साथ आबू शिखरपर आये। शीघ्र ही यज्ञ प्रारंभ होगया। पवित्र गंगाजीके जलसे यज्ञकुंडको पवित्र कर यज्ञकार्य होनेके पीछे देवताओंने आपसमें सलाह की। देवराज इन्द्रने नवीन दूबसे एक पुतली बनाकर उसकी प्राणप्रतिष्ठा कर उसे उस प्रज्वलित यज्ञकुंडमें डाल दिया। इसके पीछे संजीवन मंत्रका पाठ करते ही उस कुंडमेंसे दहिने हाथमें गदा धारण किये एक वीर पुरुष "मारमार" शब्द करता बाहर निकला। उस वीर पुरुषका नाम प्रमार रक्खा गया, और देवताओंने उसको आबू धार, तथा उज्जयिनी देश शासन करनेके लिये दिये"।

---

(१) कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर लिखा, "कि चिन्दने जिन चोर और तस्कर जातियोंका उल्लेख किया है, यह उत्तर पश्चिमाचलकी भारतकी सीदियन जाति होगी। यह ब्राह्मणोंके ऊपर किसी प्रकारकी दया नहीं करती थी"। परंतु हमारा ऐसा अनुमान है कि कविने इस स्थानपर भारतवर्षका वन्यमीना इत्यादि जातियोंपर ही लक्ष्य किया है। त्रेता युगमें परशुरामके समयमें भारतमें "सीदियन" जाति थी, इसका प्रमाण शास्त्रमें नहीं पाया जाता।

"इसके पीछे सभी मिल कर पितामह ब्रह्माजीसे अपने अंशसे एक क्षत्रियकी सृष्टि करनेकी प्रार्थना करने लगे। तब पद्मासन ब्रह्माजीने सभीके अनुरोधसे दूर्वाकी एक पुतली बनाकर अग्निकुंडमें डाली। पुतली कुंडमें डालते ही उसमेंसे एक वीर पुरुष निकला। इसके एक हाथमें खड्ग और दूसरे हाथमें वेद शोभायमान थे। उसका नाम चालुक वा सोलंकी रक्खा गया। अनलपुर पत्तन देशका उसको राज्य मिला"।

"देवादिदेव रुद्रने उसके पीछे और भी एक वीर पुरुषकी सृष्टि की। देवादिदेव महादेवने दूर्वादलकी बनीहुई पुतलीको पवित्र गंगाजलमें स्नान कराकर यज्ञकुण्डमें डाल दिया, और आप मंत्र पढने लगे, मन्त्रके पढते ही धनुष बाण हाथमें लिये कृष्णवर्ण भयंकर मूर्तिका एक वीर पुरुष सम्मुख आया। असुरोंके साथ युद्ध करनेको जानेके समय उस वीर पुरुषका पदस्थल न हुआ इसीसे उसका नाम प्रतिहार रक्खा गया, उसको देवतारूपसे नगर तोरणकी रक्षाका भार मिला, और मरुस्थलीके नौ देश उसको दिये गये"।

"सबसे पीछे विष्णु भगवानने चौथे वीरको उत्पन्न किया, विष्णु भगवानके दूर्वादलकी बनी हुई पुतलीको अग्निकुंडमें मंत्र उच्चारण कर डालते ही उनके अवयव स्वरूप चार हाथ युक्त अस्त्रधारी एक वीर पुरुषने जन्म लिया। चार हाथ होनेसे उसका नाम चतुर्भुज चौहान हुआ। समस्त देवताओंने आशीर्वाद देकर उसको मैहकावती नगरीका राज्य दिया। इस समय जो स्थान गढामंडला नामसे विख्यात है द्वापरयुगमें वह मैहकावती नामसे प्रसिद्ध था"।

चंदकवि इसके पीछे लिखते हैं कि "जिस समय यज्ञकार्य समाप्त हो रहा था उस समय असुर और दानव उसकी दृढ दृष्टिसे देख रहे थे, उनके दो नेता अग्निकुंडके बहुत धोरे खडे हुए थे, परन्तु यज्ञकार्यके समाप्त होते ही क्षत्रियोंकी सृष्टिका कार्य भी समाप्त हो गया। वह चारों वीरक्षत्री उन दानव और असुरोंके साथ युद्ध करनेके लिये भेजे गये। दोनों ओरसे भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई, परन्तु जैसे २ वह क्षत्रिय वीर अस्त्राघातसे असुरोंको मारते जाते थे वैसे २ उनको मृतकोंके रुधिरसे फिर नवीन असुर जन्म लेकर युद्ध करते जाते थे। इस प्रकार किसी भाँति भी दानवोंकी सेनाकी घटती नहीं हुई। अन्तमें उस नवीन सृष्टिके चारों वीरोंकी कुलदेवी अनुचरोंके साथ रणक्षेत्रमें जाकर उन निहत असुरोंका रक्तपान करने लगी। इस कारणसे उस रुधिरसे उत्पन्न होनेवाले असुरोंकी संख्या एक बार ही समाप्त हो गई"।

उन चारों देवियोंके नाम इस भांति चन्दकविके ग्रन्थमें लिखे गये हैं—

चौहानोंकी कुलदेवी ... ... आशा पूरा।
पडिहारोंकी कुलदेवी ... ... गाजनमाता।
सोलंकियोंकी कुलदेवी ... ... खींवजमाता।
प्रमारोंकी कुलदेवी ... ...सिचियायमाता।

इसके पीछे कवि लिखते हैं कि " समस्त दैत्योंके निहत होते ही जयध्वनिसे आकाशमंडल कम्पायमान होंने लगा। स्वर्गसे देवता फूलोंकी वर्षा करने लगे, और उस जयप्राप्तिसे महा असंतुष्ट होकर देवता अपनी २ सवारी पर चढ कर रणभूमिमें जा विजयी वीरोंको धन्यवाद देने लगे "।

चौहानोंके प्रधान कविचन्द वरदाईका शेष कहना यह है कि छत्तीसकुली क्षत्रियोंमें अग्निकुल सबसे श्रेष्ठ है शेष सभी स्त्रियोंके गर्भसे उत्पन्न हैं, ब्राह्मणोंके द्वारा सृष्टि हुए चौहानोंमें गोत्रोच्चार यथा सामवेद सोमवंश माध्यंदिनी शाखा, वत्स गोत्र, पंच प्रवर जंनेऊ, चन्द्रभागा नदी, भृगु निशान, अम्बिकाभवानी, बालनपुत्र, कालभैरव आबू अचलेश्वर महादेव चतुर्भुज चौहान "।

" इतिहासवेत्ता टाड साहबने चंदकविके महाकाव्यसे उक्त अंशको उद्धृत करके कहा है, कि जिस समय भारतवर्षमें सर्वत्र व्याप्त धर्म--द्रोहियोंको दमन करनेके लिये भारतकी वीर जातिकी पुनः सृष्टिकी अभिलाषासे आबूके शिखर पर देवताओंकी महा समिति हुई, उस समय हिंदूजातिका दूसरा युग हो गया था, इसके सम्बन्धमें हम किसी प्रकारका तर्क करनेकी इच्छा नहीं करते। इतिहासका अनुसरण करनेके पहिले यहां पर इसकी खोज करनी होगी कि ब्राह्मणोंके पक्षको समर्थन करनेके लिये इस नवीन जातिकी सृष्टि हुई, और हिंदूसमाजमें ग्रहण की गई, यह वीर किस जातिके थे। या तो वह लोग अवश्य ही यहाँके आदिम प्रतीत निवासी होंगे और ब्राह्मणोंने उनको फिर हिन्दूजातिमें ग्रहण किया होगा, या वह लोग विदेशी होंगे और ब्राह्मणोंने उनको बलवान् देखकर अपने धर्ममें दीक्षित कर लिया होगा। यदि यहांकी आदिम पतित जाति और विदेशियोंकी आकृतिकी तुलना की जाय तो इस प्रश्नका विचार सरलतासे हो सकता है। यहांके आदिम पतित निवासी काले शरीरके होते हैं खर्व और श्रीहीन होत हैं, अन्य पक्षमें अग्निकुली क्षत्री प्राचीन राजाओंके समान सबल सुन्दर और वीर मूर्तियुक्त थे। अतीव पूर्वकालमें सिदियोंमें जिस प्रकार वीररसका स्रोत बहता था, अग्निकुल सम्भूत क्षत्रियोंके हृदय भी उसी रसमें प्रवल हैं "। कर्नल टाड साहब उक्त मन्तव्यको प्रकाश करनेके साथ ही साथ यह सिद्धान्त कर गये हैं कि जब परशुरामने क्षत्रियोंको विध्वंस कर दिया तब कुछ दिनोंके लिये ब्राह्मणोंने राज्य किया था; परन्तु वह लोग अत्यन्त दुर्बल थे। इस कारण भारतवर्षके सिदियोंने

---

(१) कविचन्दने रासोमें एकमात्र गोत्रके सिवाय वेद प्रवर आदि किसीका वर्णन नहीं किया है रासोंमें केवल इतना ही लिखा है।

आसापूर कहै मो नामं, पुज्जै पुत्र पौत्र धन धामं
कुलह गोत्र मुझ थप्पै नामं, अप्पो ऋद्धि अचल्लह तामं

किन्तु चाहुआणोंका सही शिखासूत्र इस प्रकारसे है:—वत्सगोत्र सामवेद–कौथमीशाखा—गोलिमसूत्र,--आप्रवान, जामदग्नि, च्यवन, भार्गव, और्व, पांचप्रवर—आशापूरा.कुलदेवी—श्री कृष्ण कुलदेवता–चन्द्रभागा नदी,--मयूरपक्षी, वामशिखा, वामपाद—ध्वजरक्षक गरुड और आयुध खड्ग।

ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार किये थे। ब्राह्मणोंने उस महा विपत्तिमें पड़कर भारतासिदियोंके एक दलको हिन्दूधर्ममें दीक्षित कर उनको राज्यशासनका भार दिया, और वही चौहान पडिहार, सोलंकी और प्रमार नामसे गिने गये।

इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा। चौहान पडिहार सोलंकी और प्रमार इन चारों अग्निकुल राजवंशोंमें चौहानोंने सबसे अधिक विस्तारित राज्य पाया था। प्रमार राजवंशका आधिपत्य सर्वत्र फैलरहा था, यह प्रवाद वाक्य आजतक विख्यात है, परन्तु चौहानोंका आधिपत्य जैसा अधिक था वह कठिनाईसे जाना जा सकता है, क्योंकि जिस समय प्रमारवंशियोंकी गौरव गरिमा मध्याह्नकालके सूर्यके समान भारतके प्रत्येक प्रान्तमें विभासित होरही थी, उस समय चौहानोंके गौरवका सूर्य धीरे २ अस्ताचलकी ओरको चलने लगा था।

चौहानोंके जातीय इतिहासमें देखा जाता है कि एक समय उन्होंने सबके ऊपर अतुल सामर्थ्य और प्रभुत्वका विस्तार किया था, परन्तु वह अधिक कालतक स्थाई नहीं रहा। मैहकावतीसे माहेश्वरीपुरीतक नर्मदाके दोनों किनारोंके उत्तर और दक्षिणमें

(१) हम इस वातको कह सकते हैं कर्नल टाड साहबने भ्रममें पडकर यह सिद्धान्त किया है। जब कि वर्तमान कलियुगमें हिन्दूधर्मकी शोचनीय दुर्दशा होनेपर भी कोई विधर्मी विजातीय हिन्दूधर्मको ग्रहण कर हिंदूसमाजमें युक्त होनेके लिये समर्थ नहीं हुआ; तब अत्यन्त प्राचीन समयमें हिन्दूधर्म परमपवित्ररूपसे प्रबलताके साथ भारतवर्षमें फैल रहा था, उस समय विश्वामित्र आदि ऋषि अथवा ब्राह्मणोंने भारतवर्षके बहिस्थित भारतसिदियोंको अपने धर्ममें दीक्षित कर उनके हाथमें राज्यभार अर्पण किया हो यह कभी सम्भव नहीं हो सकता। कहीं किसी जातिके किसी मनुष्यने जगत्के किसी धर्ममें प्रवेशका अधिकार प्राप्त किया हो परन्तु हिन्दूधर्ममें विजातीय किसी मनुष्यको भी प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है। यदि कहो मुसल्मान इत्यादि विजातीय मनुष्योंने वैष्णवधर्म स्वीकार किया था। परन्तु वह वैष्णवधर्मावलम्बी कोई मुसल्मान भी हिन्दूसमाजमें भुक्त नहीं हो सका था। इस कारण भारतसे विताडित हुए विजातियोंको ब्राह्मणोंने हिन्दूओंके धर्ममें दीक्षित कर लिया होगा, यह कभी सम्भव नहीं हो सकता। और दूसरी वात यह है कि चन्दकविने जिन चार नवीन क्षत्रियश्रेणीकी उत्पत्तिका विषय वर्णन किया है यदि हम उसको सब प्रकारसे कविकी कल्पना भी मानें तो भी यह ठीक ही है कि पितामह ब्रह्माजीने प्रथम सृष्टिके समय ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य और शूद्रकी सृष्टि करनेके पीछे परिणाममें फिर किसी जातिकी सृष्टि की हो, हमने इस प्रकारका उल्लेख किसी शास्त्रमें नहीं पाया। हमें अनुमानसे भी यही विदित होता है कि परशुराम किसी प्रकारसे भी एक ही समय प्रत्येक क्षत्रियको संहार करनेमें समर्थ नहीं हुए थे। यद्यपि उन्होंने बराबर युद्धोंमें अनेक क्षत्रियोंका प्राण नाश किया था, तथापि भारतके प्रत्येक प्रान्तोंमें अनेक क्षत्रिय राजा उस समय जीवित थे इसका भी प्रमाण है, उस अंशसे भारतके असभ्य जंगली जातियोंने ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार कर हिंदूधर्मको विशेष हानि पहुँचाई हो और ब्राह्मणोंने जीवित बचे हुए क्षत्रियोंके वंशधरोंमेंसे चार प्रधान वीरोंको नवीन यज्ञमें दीक्षित कर चार देशोंका राज्यभार दिया हो तो इसमें क्या आश्चर्य है अथवा मन्त्रबलसे भी चार वीरोंका उत्पन्न होना तो हिंदूशास्त्रके अनुसार असंभव नहीं है"।

स्थित समस्त देशोंमें चौहानोंका आदि राज्य था। राजवंशधरोंकी संख्या प्रबल होनेसे क्रमशः समस्त द्वीपोंमें माण्डू आसेर गोलकुण्डा और कोकनतक तथा उत्तरमें गंगाजीके किनारेतक उनके राज्यकी सीमा फैल रही थी। कविश्रेष्ठ चन्दचौहानोंके राज्यके संबन्धमें लिख गये हैं कि "राजधानी मैहकावतीके ५२ किलोंमें चौहानराजके अनुकूल शपथ सुनाई जाती थी। चौहानोंने अपने बाहूबलसे ठट्ठा, लाहौर, मुलतान, पेशावर आदि देशोंपर अधिकार कर अन्तमें भारतके शिखरतक अपना अधिकार कर लिया था। विधर्मी असुर चौहानराजके भयसे भाग गये थे। दिल्ली और काबुलमें चौहानराजका शासन स्थापित था, तथा इनकी जय विघोषित होती थी। चौहानराजने ही नैपालका राज्य माल्हनको प्रदान किया था। देवताओंसे वर और आशीर्वादको पाकर चौहानराज अपनी राजधानी मैहकावतीको लौट आये।" और माल्हनको साथ न लाये।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि यह तो पहिले ही जाना गया है कि गढमण्डलाका प्राचीन नाम मैहकावती था। उस मैहाकावतीके राजा बहुत कालसे "पाल" उपाधिधारी थे। ऐसा विख्यात है कि वह लोग पशुओंका पालन करते थे इसीसे इनको यह उपाधि दी गई थी। अहीर-लोगोंने एक समय समस्त मध्य भारतपर अधिकार किया था व परिणाममें केवल एकमात्र "अहीरवाडा" अपना चिह्न छोड गये हैं। यह अहीरशब्द पाल शब्दके अन्य अर्थका बोधक है, और यह अहीरजाति उक्त जातिकी एक शाखामात्र है। पाल अथवा पालियोंके द्वारा जो समस्त प्राचीन नगर प्रतिष्ठित हुए थे, उनमें भेलसा, भोजपुर, दाप, भूपाल, आइरण, गार्सपुर यह कितने ही प्रधान हैं।

---

(१) कर्नल टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "मुसलमान इतिहासवेताने इस घटनाके सत्यताको स्वीकार किया है। संवत् ७४६ में मुसलमान जिस समय प्रथम भारतवर्षपर अधिकार करनेको आये थे उस समय लाहौर और अजमेरके हिन्दू राजा इसी चौहानजातिके थे। वह अपने प्रबल पराक्रमके साथ यवनोंके विरुद्ध युद्ध करनेको सनद्ध हुए थे। यह हम निस्संदेह जानते हैं कि उस समय अजमेर चौहानोंकी प्रधान राजधानी थी"।

(२) टाड साहब लिखते हैं, कि "माल्हन चौहानोंकी एक शाखा है। अलिकजेंडरके भारतपर आक्रमण करनेके समय समुद्रके किनारे मल्लारी नामके जिस राजाने उसपर आक्रमण किया था, ऐसा बोध होता है कि वास्तवमें वही माल्हन होंगे। इस शाखाका इस समय लोप हो गया है। पांच शताब्दी पहिले इसके अस्तित्वको कोई नहीं जानता था। हाडा जातीय बूँदीके एक अधीश्वरने एक माल्हन स्त्रीका पाणिग्रहण किया। परन्तु अन्तमें एक चतुर भाटने प्राचीन ग्रंथसे प्रमाणित किया कि उक्त माल्हन स्त्री उसकी स्वगोत्रिया थी। तब बून्दीके महाराजने उस स्त्रीको त्याग दिया था।

(३) टाड महोदयने अपनी टीकामें लिखा है कि कितने ही नगर, विशेष करके दीय भोजपुर और भेलसामें बहुतसे प्राचीन स्मृतिचिह्न विराजमान थे; बीस वर्षके पहिले हम भ्रमण करनेके लिये आइरन नगरमें गये थे; उस नगरीमें दो नदियोंके मुहानोंपर एक बडा भारी खम्भ स्थित देखा। यह तीस फुट ऊँचा था, इसके ऊपर एक मनुष्यकी मूर्ति विराजमान थी। उस मूर्तिके शिरपर मुकुट शोभायमान था; और स्तम्भके नीचे एक बैलकी आकृति खुदी हुई थी;-

"अजयपाल नामक मैहकाव्रतोके एक राजवंशधरने अजमेर राज्य स्थापन कर वहाँ तारागढ नामवाला अभेद्य किला बनाया। प्राचीन राजाओंमें अजयपालका नाम आजतक भलीभाँतिसे प्रसिद्ध है, वह राजा चक्रवर्ती अर्थात् बहुत राजाओंके अधीश्वर थे, यह भी इसी सूत्रसे जाना जाता है, वह किस समय राज्यशासन करते थे, उसका निश्चय करना कठिन है।

"पालीभाषामें लिखे हुए ताँबेके अनुशासनपत्रोंमें और पत्थरके स्तंभोंपर खुदी हुई अनुलिपियां पाई जाती हैं परन्तु वह भाषा जबतक हमारे हस्तगत न हो तबतक उक्त समयका निश्चय करना कोई साधारण बात नहीं है। मैहकाव्रतोसे कुमार पृथ्वीपहाड अजमेरमें आये यद्यपि यह निश्चय नहीं कहा जा सकता कि वह किस कारणसे आये थे परन्तु ऐसा जाना जाता है कि राजाके पुत्र नहीं था इसीसे वह पृथ्वीपहाड अजमेरमें आये थे। उनकी एकमात्र स्त्रीके गर्भसे (इस समय इस जातिमें अनेक विवाह प्रचलित नहीं थे) चौबिस पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेंसे एकके वंशधर माणिकराय संवत् ७४१सन्६८५ई० में अजमेर और सांभरके अधीश्वर हुए"।

कर्नल टाड साहबने इसके पीछे लिखा है,कि माणिकरायके समयसे चौहान जाति-के इतिहासने घोर अंधकारसे मुक्ति प्राप्त की।इसी समय संवत् ७४१ हिजरी सन्६३ में सबसे पहिले मुसलमानोंने राजपूतानेमें सेना सहित प्रवेश किया था। अजमेरके सिंहा-सनपर इस समय दुर्लभ वा दुलेराय विराजमान थे। यवनोंके साथ युद्ध करके अजमेर-पति दुर्लभ मारेगये। इनका इकलौता सात वर्षका अवस्थाका पुत्र किलेकी छत्तपर खेल रहा था, वह भी शत्रुओंके आघातसे अकालमें ही मृत्युको प्राप्त हुआ। दुर्लभरायने रोशनअली एक मुसल्मान धर्मप्रचारकके प्रति घोर अत्याचार किये थे, इसीसे यवनोंने सिन्धदेशसे अजमेरमें जाकर यह युद्ध उपस्थित किया और इसी कारणसे मुसलमानों-में यह धर्मयुद्ध कहकर विदित हुआ है। ऐसा भी प्रसिद्ध है कि उक्त रोशनअलीके अंगूठेको काटा गया था, वह अंगूठा देकर मक्केको चला गया, और राजपूत पौत्तालियों-के विरुद्धमें इस अत्याचारका बदला चाहा शीघ्र ही यवनाका सेना अश्व व्यवसायीरूपसे भेष बदलकर अजमेरमें आई। उसने दुर्लभराय और उनके पुत्रोंका प्राण नाश कर गढबीटली और महलों पर अधिकार कर लिया।" कर्नल टाड साहबने कहा है कि "यद्यपि

–=उसी समय मिस्टर कोलब्रुकके पास हमने उसकी प्रतिमूर्तिको भेज दिया परन्तु इस समय हमारे पास उसकी कोई अनुलिपि नहीं है"

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि "यह स्थान अन्यरूपसे अजयमेर अर्थात् अजेयशिखर और अजयगढ अर्थात् अजेयदुर्ग नामसे विदित हुआ है। परन्तु ऐसा विख्यात है कि राजापूतानेके प्रवेशके द्वारस्वरूप इस स्थान पर युवक चौहान–राज अजयपाल निवास करते थे इसीसे इसका नाम अजमेर हुआ।" परन्तु देशियोंका यह विचार है कि पुराणोक्त विख्यात राजा अजमेरसे इसका नाम अजमीढ हुआ और इस समय उसीका अपभ्रंश अजमेर हुआ हैं।

यह समर सम्बन्धी प्रवाद बालककी उक्तिके समान जाना जाता है, परन्तु दूसरी प्रकृत सत्यताके द्वारा यह घटना प्रमाणित हुई है। खलीफा उमरने ठीक उसी समय सिन्धु-देशमें एक सेना भेजी थी। उस सेनादलके नेता अतुलआस प्राचीन राजधानी आलोरपर अधिकार करनेके समय मारे गये; ऐसा जाना जाता है कि उस सेनादलने स्वजातिय धर्म प्रचारकके उक्त अपमानसे महाक्रोधित और धर्मके नामसे उत्तेजित होकर मरुक्षेत्रमें जाकर अपमानकारी राजपूतोंपर आक्रमण किया था"।

जिस कारण वा जिस उपायसे अजमेरके अधिकारी दुर्लभराय मारे गये, और अजमेर छीना गया, वह घटना चौहानोंके हृदयपटपर भलीभाँतिसे अंकित हो गई। चौहान उक्त समरके स्मृति–चिह्न स्वरूप दुर्लभरायके मृतक पुत्र लौठको आजतक देवता-के समान पूजा करते हैं। अधिक क्या कहैं लौठ अपने पैरमें जिन घूंघरुओंको पहिने हुए था चौहान उन्हींकी देवालंकाररूपसे पूजा करते हैं, और उन्हीं लौठके सम्मानके लिये वह अपने २ बालकोंके पैरोंमें और घूंघरू नहीं पहिनाते।

कविश्रेष्ठ चंदकवि लिख गये हैं कि "चौहान जातीय दुर्लभरायके उत्तराधिकारी लौठदेव, शिवकी इच्छानुसार ज्येष्ठ मासकी बारहवीं तिथि सोमवारके दिन स्वर्गवासी हुए"।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने फिर लिखा है कि चौहानोंकी स्त्रियाँ आजतक जिन लौठदेवकी पूजा करती हैं उन्हीं लौठदेवके चाचा माणिकराय यवनोंके अजमेर पर अधिकार करनेसे, संवत् ७४१ में स्वर्गवासी हुए थे। माणिकराय उस विपत्तिमें पडकर देवीके वरसे निर्भय होगये, राजपूत कविने यहाँपर इस प्रकार वर्णन किया है, कि माणिकराय निर्दयी शत्रुओंके हाथसे प्राणरक्षा करनेके लिये भाग गये। उस समय शाकम्भरी देवीने दर्शन देकर माणिकरायसे कहा कि हे वत्स! मैंने तुमको यहाँपर दर्शन दिया, तुम इस स्थानपर अपना राज्य स्थापन करो, आज तुम घोडे पर सवार होकर जितनी दूरतक जासकोगे उतनी ही दूरतक तुम्हारे राज्यकी सीमाका विस्तार

(१) पृथ्वीराज रासोमें इस बातका कहीं भी कोई जिक्र नहीं आया। कहीं अन्यत्र कविचंदने इस विषयमें कुछ लिखा हो तो कह नहीं सकते। मीर रोशन अलीके कारण मुसलमान और चौहानोंके युद्धके विषयमें मीरा समय नामसे एक पद्य पुस्तक और भी है जिसे महाकवि चंदवरदाईकृत पृथ्वीराजरासोका एक अंश कहा जाता है क्योंकि उसमें इस घटनाका होना पृथ्वीराजके समयमें वर्णन किया गया है परन्तु यह किसी अन्य कविकी कपोलकल्पना मालूम होती है क्योंकि कन्नोज समयमें उसी घटनाको पृथ्वीराजके परपिताके समयमें होना बतलाया गया है।

(२) राजपूत कविकी निम्नलिखित कवितासे प्रमाणित होता है कि माणिकराय वास्तवमें संवत् ७४१ में सांभरको गये थे।

(३) बूंदीराज्यवंशावलीमें लिखा है कि देवीने यह वरदान दिया था कि घोडेपर चढकर तुम जितनी पृथ्वीकी परिक्रमा कर आवोगे वह सब चांदीकी हो जायगी परन्तु दुर्भाग्यवश--

होगा, परन्तु जबतक तुम यहाँ न लौट आओ तबतक घोडेपर चढकर जानेके समय कभी पीछे फिर कर न देखना''। ''माणिकरायने अपने घोडेको अधिक बलशाली और बहुत दूरतक जानेमें समर्थ देखकर देवीकी आज्ञानुसार शीघ्रतासे भ्रमण करना प्रारम्भ किया। कुछ ही दूर चलनेके पीछे वह देवीकी आज्ञाको भूल गये, जैसे ही उन्होंने पीछे फिरकर देखा कि वैसे ही इनको महा आश्चर्य हुआ कि समस्त प्रदेश ऊसर हो गया है। रजवाडेके विख्यात लवणहृदकी उत्पत्तिका यही कारण है। माणिकरायने देवीकी आज्ञानुसार उक्त हृदका नाम शाकम्भरी हृद रक्खा, और उस हृदके निकट ही एक छोटेसे द्वीपमें देवीकी प्रतिष्ठा की। वह प्रतिमा आजतक वहाँ विराजमान है। प्रतिमाका शाकम्भरी नाम बिगडते २ इस समय सांभर हो गया है''।

माणिकराय जिनको हम उत्तर देशके चौहानोंके आदिपुरुष मानते हैं, उन्होंने समयपर फिर अजमेरपर अधिकार करलिया, उनके अनेक सन्तान उत्पन्न हुईं। उनके वंशधरोंने पश्चिम रजवाडेमें फैलकर बहुतसी सम्प्रदायोंकी सृष्टि की है, अधिक क्या कहैं सिन्धुतक एक २ सम्प्रदायका विस्तार हो गया है। खीची, हाडा, मोयल, निरवान, भदौरिया, भूरेचा, धनेरिया (धंधेरिया) और बागडेचा इत्यादि समस्त सम्प्रदाय इन्हीं माणिकरायसे उत्पन्न हुए हैं। खीची सम्प्रदायने बहुदूरवर्ती दोआब नामक स्थानमें जो सर्वसाधारणमें सिन्धु सागर नामसे विख्यात है, वहाँ जाकर बास किया, इस देशकी भूमिका परिमाण वेतवासे लेकर सिन्धुतक ६८ कोस परिमित है और इनकी राजधानीका नाम खीचीपुर पाटन था। हाडा सम्प्रदायमें हरियानादेशके मध्यस्थ असी वा हांसी देशको जीतकर वहाँ निवास किया, और एक सम्प्रदाय गोबाल कुंड जो इस समय गोलकुंडा नामसे विदित है वहाँ गई, और अंतमें वहाँसे चलकर आसेर नामक स्थानपर अधिकार करलिया। मोयलोंको नागौरके चारों ओरके देश मिले। भदोरियोंको चम्बलके किनारेका एक देश प्राप्त हुआ। वह देश उन्हींके नामके अनुसार भदावर नामसे विदित है, और आजतक वह देश उन्हींके अधीनमें है। धुंधेरियोंने शाहाबाद

--माणिकरायने देवीकी आज्ञा भंग करके जो पीछेको देखा तो चांदीके स्थानमें सारी भूमि नमककी हो गई थी।

(१) संवत् सातसौ एकतालिस, मालौत वाली वेश। साँभर आयो तुतिमरस, माणिकराय नरेश ॥ टाड साहबने अपने टीकामें लिखा है "कि दिल्लीमें फीरोजशाहाके मकानके निकट इस वंशके एक राजाका स्मृतिस्तंभ है. उसके गात्रमें शाकम्भरी शब्द खुदा हुआ है। सरविलियम जोनूस, मि० कोलब्रुक और कर्नल विलफोर्डने उसमें कितने ही भ्रान्त अनुमान किये हैं"।

(२) वंशभास्करके आधारपर लिखित बूँदीराज्य वंशावलीमें लिखा है कि चाहुआणवंशके आदि पुरुषसे १३३ वीं पीढीमें माणकरायजीका जन्म हुआ। उनके १० पुत्र थे। तीसरे हरिसिंहजीने सिन्धुदेश जीत कर वहा राज्य किया, और उनका संतानके लोग धुन्धेरया चाहुआण कहलाये। परन्तु आजकल धुंधेरिये चहुआण अधिकांश बुन्देलखण्ड और चंबलके किनारे मालवेमें ही अधिक पाये जाते हैं। बुन्देलखण्डके धुंधेरिये धंधेर नामसे प्रसिद्ध हैं और उनका व्यवहार बुन्देलोंमें है (पर यह भी तो होसकता है कि सिन्ध पर मुसल्मानी आक्रमण होनेके समय ही ये लोग वहांसे भगाकर शाहाबादमें आ रहे हों)

नामक स्थानमें जाकर निवास किया, परन्तु समयके फेरसे वह देश कोटेकी हाडा सम्प्रदायके हस्तगत होगया, और एक सम्प्रदायने नारोलमें निवास किया, परन्तु उनका चौहान नाम कभी भी परिवर्तित नहीं हुआ।

टाड साहब लिखते हैं कि, इस वंशके बहुतसे वीर पुरुष मरुक्षेत्रके अनेक स्थानोंमें फैल गये थे। अनेक स्थानोंमें उन्होंने अपने २ बाहुबलसे देशोंपर अधिकार करनेके साथही साथ स्वाधीनता सभोग की थी, और बहुतसे अपनी अपेक्षा बलवान् स्वजातियोंके अधीनके देशोंको शासन करनेमें नियुक्त हुए। उनका इतिहास विशेष प्रयोजनीय होनेपर भी यहाँ उसका प्रकाश करना अप्रासंगिक विचारा गया। जागा ग्रन्थमें माणिकरायसे वीसलदेव तक ग्यारह राजाओंके नाम लिखे हैं। उन ग्यारहोंमेंसे हर्षराजके विषयका उल्लेख करनेका इस स्थानपर विशेष प्रयोजन है, कारण कि उक्त जागा ग्रन्थमें तथा हमीररासा ग्रंथमें हर्षराजके विशेष बल विक्रमकी कहानी ऊंची प्रशंसाके साथ वर्णन की गई है। वीरश्रेष्ठ हर्षराजका आधिपत्य अरबलीके शिखरसे आबूकेशिखर तक तथा पूर्वमें चम्बलतक विस्तारित था। उन्होंने संवत् ८१२ से ८२७ तक हिजरी १३८ से १५३तक राज्यशासन किया। यह रणभूमिमें शत्रुओंका संहार करके "अरिमर्दनकी उपाधि प्राप्त कर अन्तमें रणभूमिमें ही मारे गये। तवारीख फरिस्तामें लिखा है कि सन् १४३ हिजरीमें मुसलमानोंकी संख्या अधिकतासे बढ गई थी। उन्होंने पर्वतों परसे उतर कर किरमान, पेशावर और २ भी आसपासके सभी देशोंपर अपना अधिकार कर लिया। अजमेरके राजाके स्ववंशीय लाहौरके राजाने उक्त अफगानोंके विरुद्धमें

---

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है, कि नाडोल एक समय अत्यन्त समृद्धिशाली देश था, स्थानीय इतिहास और उक्त देशकी तांबेकी अनुशासन पत्रावलीसे इसका प्रमाण मिला है। आठवीं शताब्दीमें उक्त राज्यकी प्रतिष्ठाके समयसे बारहवीं शताब्दीतक उस देशके पतन समयके मध्यमें वहांके सिंहासन पर संवत् १०३९ सन् ९८३ ईसवी में राव लाखनसी विराजमान थे, उन्होंने नहरवालाके अधीश्वरके साथ घोर विक्रम प्रकाश करके युद्ध किया। निम्नलिखित कविता उस भावको प्रकाश करती है।

संवत् दश सो उनचालीस, बारइखोता पाटन।
दानचौहान अगावी, मेवाडदानी दण्डभरी॥
तिसवार राव लक्ष्मण थप्पी, जो आरंभै सो करि।

इसका अर्थ यह है कि संवत् १०३९ में पाटन नगरके शेष तोरनद्वारमें चौहानराजने वाणिज्य शुल्क संग्रह किया और मेवाडपतिसे भी उन्होंने कर ग्रहण किया। उनके मनमें जो अभिलाषा होती उसको पूर्ण करनेमें वह समर्थ होते।

सुबुक्तगीन और उसके पुत्र महमूदने लक्ष्मणके शासनकालमें नाडोलको आक्रमण करके उसे लूटा और किलेको विध्वंस कर दिया, किन्तु समयपर नाडोलराजने फिर अपने लुप्त प्रतापको संग्रह कर लिया। तेरहवीं शताब्दीमें इस वंशकी बहुतसी सेना अलाउद्दीनके साथ समर करके नष्ट हुई थी, शहाबुद्दीन जिस समय भारत जय करता था, उस समय नाडोलपति भी कर देकर उसके अधीन हुए।

अपने भ्राताको युद्ध करनेके लिये भेजा, उस राजभ्राताके साथ काबुलकी खिलजी और गौरी जातिने उसके साथ मिलकर युद्ध किया पर पीछे उनको मुसलमान धर्म स्वीकार करना पडा। इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि पाँच महीनेके बीचमें सात युद्ध हुए। इसीसे राजपूतगण एकवार ही परास्त होकर भाग गये। परन्तु शीतकालके व्यतीत होते ही राजपूत फिर नवीन सेनादलके साथ पेशावरके मध्यस्थानोंमें आपहुँचे। फिर भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई। इस युद्धमें कभी तो राजपूत विजयी होकर मुसलमानोंको भगाकर कोहिस्थानतक अधिकार करलेते, और किसी समय मुसलमान नवीन सेनाका संग्रह कर बाणोंके आघातसे उनको फिर भगा देते थे"।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि "अजमेरके अधीश्वर स्वयं इन दूरवर्ती देशोंके युद्धमें लिप्त हुए थे या नहीं, राजपूतोंके इतिहाससे यह कुछ नहीं जाना जाता। हमीररासेंसे जाना जाता है कि हर्षराजके पीछे दुजगनदेव वा दुर्जदेवने राजमुकुटको अपने शिरपर धारण किया। उनकी अग्रगामी सेनाके डेरे भटनेर तक स्थापित हुए थे। दुजगनदेवने नासिरुद्दिन नामक मुसलमाननेताको युद्धमें परास्त करके उसके बारह सौ अश्व बलपूर्वक छीन लिये, इसीसे उन्हें "सुलतानग्राह" अर्थात् राजाको बंदी करनेवालेकी उपाधि प्राप्त हुई। विख्यात महमूदके पिता सुबुक्तगीनका ही नाम नासिरुद्दीन था, अलप्तगीनके पन्द्रह वर्षतक शासनके समयमें सुबुक्तगीन क्रमानुसार भारत-पर अधिकार करनेके लिये आया।

महात्मा टाड साहबने अजमेरके अन्यान्य राजाओंके शासन वृत्तान्तको छोडकर अन्तमें एकवार ही वसिलदेवके शासन समयके इतिहासका वर्णन करना आरम्भ किया है। छोडेहुए राजाओंके शासन समयमें केवल मुसलमानोंके साथ संग्राम हुआ, इसके सिवाय और कोई वृत्तान्त नहीं है, यही उन्होंने कहा है अजमेरपति वीसलदेवके सम्बन्धमें टाड साहबने लिखा है, कि हाडा जातिकी कारिकाकारोंके मतके अनुसार वीसलदेवके पिताका नाम धर्मगज था, परन्तु जागाकी कारिकामें वीर वेलनदेव लिखा गया है। इससे ऐसा बोध होता है कि उनका वीरवेलनदेव ही यथार्थ नाम था। वह अत्यन्त धार्मिक थे; इसीसे उनको "धर्मगज"की उपाधि मिली थी; दिल्लीके विजयखम्भमें जो खोदी हुई लिपि है, उससे भी इसी अनुमानका समर्थन होता है। वीर वीलनदेवके शासन समयमें सुल्तान महमूदने पिछली बारमें भारतवर्षपर आक्रमण किया था। वीलनदेव उस समय दुर्द्धर्ष बलशाली थे, उन्होंने विजेता महमूदको एकसाथ ही परास्त कर अजमेरसे भगाकर अतुल यश प्राप्त किया था, परन्तु उस समरमें वह भी स्वयं मारेगये।

वीसलदेवके शासन वृत्तान्तको वर्णन करनेके पहिले इतिहास लेखक टाड साहबने इस स्थानपर एक चौहान वीर पुरुषकी वीरताकी कहानीको वर्णन किया है। जब सुल्तान महमूद[1] पहिली बार भारतको लूटनेको आया, उसी समय इस चौहान

(१) महमूद गजनवी जिसने सन् १०१० ई० से सन् १०२४ तक हिन्दुस्थान पर बारह हमले किये और काशीतक मुसल्मानी दीनका प्रभाव डाला था। महमूद गजनवीके बारह हमले हिन्दुस्थानके इतिहासमें प्रसिद्ध हैं।

वीरने महावीरता प्रकाश करके अपने नामको अक्षय किया था। टाड साहबने लिखा है कि विख्यात चौहान राजा वाचाके गोगा नामवाला एक पुत्र था। उस राजा गोगाने सतलजसे हरियानेतकक विस्तारित देशोंके समस्त " जांगल देश " को शासन किया। सतलजके किनारे महलावा " गोगाकी मैडी " नामकी उसकी राजधानी थी। वीरश्रेष्ठ गोगाने सुलतान महमूदके करालग्राससे अपनी राजधानीकी रक्षाके लिये भयंकर युद्धसागरमें निमग्न हो अतुलनीय वीरता प्रकाश करके पीछे अपने ४५ पुत्र और ६० भतीजोंके साथ उस युद्धमें प्राण त्यागन किये। रविवार नौमी तिथिमें गोगाने इस चिरस्मरणिय लीलाको समाप्त किया था, समस्त राजस्थानकी छत्तीस राजपूत संप्रदाय उस तिथिको परम पवित्र जानकर गोगाके समाधिमंदिरमें इकट्ठे होते हैं, विशेष करके मरुक्षेत्रके निवासियोंने गोगाको सबसे अधिक भक्तिके साथ स्मरण किया है। मरुस्थलीमें " गोगाका थल " आजतक विराजमान है। गोगाके " जवादिया " नामका रणाश्व था, इसीसे राजपूत अपने २ पराक्रान्त समरके घोड़ोंको आजतक ' जवादिया ' नामसे पुकारते हैं।

साधु टाड साहबने ऐसा अनुमान किया है, "कि यह सम्भव हो सकता है कि महमूदके शेष भारतको जयकरनेके समय उक्त युद्ध हुआ हो, उस समय महमूद सुलतान बराबर मरुक्षेत्रमें होकर अपनी सेनाको लेगया होगा। महमूदके अजमेरपर आक्रमण करते ही चौहानराज उस स्थानको छोडकर भाग गये, यवनोंकी सेनाने अजमेर और उसके आसपासके सभी देशोंको लूट कर विध्वंस करादिया। परन्तु राजपूतराजने प्रबल पराक्रमके साथ गढवीठली नामक किलेकी रक्षा की। इसीसे महमूद परास्त और घायल होकर अन्य चौहानराजके अधिकारी नाडोलको भाग गया, परन्तु भागनेके समय महमूदने नाडोलको लूटकर समभूमि कर नहरवाला

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकामें लिखते हैं कि राजपूत इतिहास लेखकने कहा है कि गोगाके पहिले एक भी पुत्र नहीं था इस लिये वह अत्यन्त दुःखित होकर समय व्यतीत करते थे। एक समय उनकी कुलदेवीने प्रसन्न होकर गोगाको दो जव प्रदान किये, गोगाने उनमेंसे एक जव अपनी रानीको और दूसरा अपनी घोडीको दिया, उस जवके खानेसे युक्त घोडीने एक बछडा दिया। जव खानेसे उत्पन्न होनेके कारण गोगाने उस बछेडेका नाम "–जवादिया" रक्खा। उदयपुरके राणाने ग्रंथकारको (कर्नल टाडको) काठियावारका एक रणाश्व उपहारमें दिया था उसका नाम भी जवादिया था। यद्यपि वह घोडा देखनेमें बिलकुल सीधा सादा था, परन्तु सवारी होने पर वह अपनी प्रचंड शक्तिको भली भाँतिसे प्रकाश करना जानता था। इस समय शिक्षित अश्व दिखाई नहीं देते। टाड महोदय उस जवादिया और मृगराज नाम एक अश्वको अपने देशमें लेजानेके लिये उदयपुरसे समुद्रके किनारेतक ले आये; परन्तु समुद्रकी यात्राके समय घोर अनिष्ट होनेकी आशंकासे उन्होंने मृगराजको एक मित्रको उपहारमें भेज दिया, और जवादियाको छः सौ मील मार्गकी दूसरे से उदयपुरके राणाके पास यह कहकर भेजा कि दशहरा अर्थात् विजयादशमी तिथिको जो रणोत्सव होता है उस उत्सवमें इस जवादियाकी सबसे पहिले पूजा कीजाय। यह मैं (ग्रन्थकार) आशा करता हूँ राणाने उनकी इस आज्ञाको पालन किया होगा।

राज्यपर अधिकार करलिया। सुलतान महमूदने अधिकारी देशोंके निवासियोंके ऊपर घोर अत्याचार करने प्रारम्भ किये, इससे सभी जातियां इसके विपरीत हो गईं, तब महमूद प्राणोंके भयसे मरुक्षेत्रके पश्चिम ओर होकर समुद्रकी उपत्यकाकी ओरको भागा।

दिल्लीपति पृथ्वीराजके सर्व प्रधान कवि चंदवरदाईने अपने विख्यात रासाकाव्यमें राजा वीसलदेवकी वीरताकी कथाको भली भाँतिसे वर्णन किया है।–

कविचंदने वीसलदेवका शासन समय संवत् ९२१ में लिखा है परन्तु महात्मा टाड साहब उसे भ्रान्त कहते हैं।

वीसलदेव उस समयके हिन्दू राजाओंके सर्वप्रधान नेतारूपसे माने जाते थे। कविचन्दने लिखा है; कि "विसलदेवको हिन्दू जातिके नेता जानकर यवन लुटेरे महमूदके साथ युद्ध करनके लिये आये राजाओंने उनके अधीनमें सना सहित गमन किया था। उस समय राजाओंमें एकमात्र अनहलवाडेके चालुक्य राजाके अतिरिक्त और सभी राजा उस जातीय महासमितिमें गये थे, अनहलवाडेके अधिपति वीसल- देवके अधीनमें कौन २ राजा सेना सहित आये थे, सो कविचन्दके लिखे हुए काव्यमें भलीभाँतिसे इसका वर्णन हुआ है।

कविकुल केसरीचंदवरदाईने लिखा है कि "जयतके हाथमें बीसलदेवने अज- मेरकी रक्षाका भार अर्पण करके कहा कि "मैंने आपको विश्वास पालनके ऊपर निर्भर किया। अनहलवाडेका राजा चालुक्य भागकर कहां जायगा?" वीसलदेवने यह कह- कर अपनी सेनाके साथ अजमेरनगरीको छोड दिया और वीसलताल नामक सरोवरके किनारे जाकर वहाँ डेरे स्थापन कर अनुमत और ऋणिराजाओंको सेना सहित शीघ्र इकट्ठे होनेके लिये भेजा। सोहनसी मण्डोरके पडिहारने सेनादलके साथ आकर उनके चरणोंकी वंदना की। इसके पीछे वीरोंके अलंकारस्वरूप गहिलोत एवं तुंबारके (१) साथ पावासरके, एवं मेवातके अंधीश्वरके मेवके (२) साथ गौडजातिके राम (३)

---

(१) यद्यपि वीसलदेवने सहस्र वर्ष पहिले यह बहुत बडा सरोवर तैयार करवाया था, परन्तु आजतक यह बीसलताल नामसे विख्यात है। बादशाह जहांगीरने इस "वीस ताल" के किनारे एक बड़ाभारी मकान बनवाया था, और इंगलैंडराज प्रथम जेमसके भेजे हुए दूतको उन्होंने इसी महलमें ग्रहण किया था।

(२) इससे जाना जाता है कि पडिहारजाति अजमेरके चौहान अधीश्वरोंके अधीनमें थी।

(३) चन्दकविने चीतोडके महाराजको "वीरेन्द्रोंका अलंकार" कहकर उल्लेख किया है। यह गहिलोत जाति चीतोडराज अजमेरपतिके समीप मित्ररूपसे सेना सहित यवनोंके विरुद्धमें आये थे। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि वीसलदेवके साथ चीतौडके महाराज तेजसिंहका जिस प्रकारसे मित्रता मूलक संमिलन हुआ है, वारहवीं शताब्दीमें उसी प्रकार वीसलदेवके वंशधर दिल्लीके महाराज पृथ्वीराजके साथ तेजसिंहके पौत्र समरसिंहका संमिलन हुआ था, तथा दोनों महाराजोंने उसी प्रकार सेना सहित अनहलवाडेके अधीश्वरके विरुद्ध युद्ध किया था। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि उक्त तेजसिंह संवत् ११२० (सन् १०६४ ई०) में चीतोडके राजसिंहासनपर विराजमान हुए; वे वीस- लदेवके साथ मिलकर यवनोंके साथ युद्धमें गये। कविचंदकी उक्त सूचीमें उदयादित्यके नामका उल्लेख पाया जाता है। कर्नल टाड साहबने उक्त तांबेके—अनुशासन पत्रोंको देखकर उनका जो समय—

उपस्थित हुए। द्रोनपुरके मोयल (४) ने अधीश्वरके पास करको भेज कर उपस्थित न होनेके कारण क्षमा माँग भेजी। वाल्लोच राज (५) ने हाथ जोडकर दर्शन दिया। वामनार्क अधीश्वर (६) सिन्धुको छोडकर वहाँ आये। पीछे भटनेर (७) से कर, और ठट्टा (८) और मुलतान (९) से नालवनी उपस्थित हुए। देरावरके भूमिया भट्टीगण (१०) वीसलदेवकी आज्ञा पाते ही इकट्ठे होगये। मालनवासके दो यादव (११) भी तुरन्त ही उपस्थित हुए। मोरी (१२) वडगूजर (१३) अन्तर्वेदके कछवाहे (१४) योग दनेमें शान्त न हुए। मेरगण वीसलदेवके चरणोंकी पूजा करते हुए आये (१५) इसके पीछे जयतके अधीनमें ताखतपुरकी सेना उपस्थित हुई (१६) निरवाण (१७) डोडे (१८) चंदेला (१९) एवं दाहिमाके अधीश्वरोंके (२०) साथ उदय प्रमार आदि राजालोग (२१) घोडों पर चढचढ कर शीघ्रतासे आ पहुँचे।

–स्थिर किया है वह रायल एसियाटिकसोसाइटीके १ वाल्यूमके ३२३ पृष्ठमें प्रकाश हो चुका है।

(१) टाड साहबने ऐसा अनुमान किया है कि यह तूंवर राज अवश्य ही दिल्लीके तूंवर सम्राट्के अधीनके कोई राजा होंगे।

(२) मेवातके मेवजातिका विषय सर्वत्र विख्यात है, इस जातिने पीछे मुसलमानी धर्म ग्रहण किया था।

(३) गोडजाति विशेष प्रसिद्ध थी, और चौहानके करद राजाओंमें महावीर गिनी जाती थी।

(४) मोयलोंका विषय भलीभांतिसे कहा गया है।

(५) टाड साहबने कहा है कि इस वल्लोचजातिने पीछे मुसलमान धर्म ग्रहण किया है।

(६) वामनी देशका अन्यत्र वा मनवासा नाम कहा गया है, इसका मूल नाम ब्राह्मणवाद, वा देवल था। उसी स्थानपर ठट्टा नगर स्थापित है।

(७) जयसलमेरके इतिहासको देखो।

(८–९) उक्तदेशके सोढा समा और सोमरा इत्यादि जातिके ऊपर चौहान अधिकार करते थे,

(१०) इसका विषय यथास्थान पर पहिले ही वर्णन हो चुका है।

(११) मलनवास कहां था टाड साहब इसको नहीं जान सके।

(१२–१३–१४) पाठकोंको इसका वर्णन यथास्थान विदित हो चुका हैं।

(१५) मेरगण आडावलाके शिखर पर निवास करते थे।

(१६) इस स्थानका वर्तमान नाम टोंडा हैं, यह टोंकके निकट स्थापित है, इस स्थानपर अनेक प्राचीन कीर्तिस्तंभ विराजमान हैं।

(१७) शेखावाटीके इतिहाससे जाना जाता है कि निरवाण अजमेरके महाराजाओंको कर देते थे।

(१८–१९) डोड एवं चन्देल जाति प्रसिद्ध है। चन्देलोंने एक समय पर पृथ्वीराजके साथ युद्ध किया था। पृथ्वीराजने उनसे महोवा और कालिंजर तथा समस्त बुन्देलखण्ड छीनकर अपना अधिकार करलिया था।

(२०) दाहिमा वियानाके अधीश्वरका नाम है। वह धरणीधर नामसे भी पुकारे जाते थे।

(२१) उदयादित्यने समस्त भारतवर्षमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

चँदकवि भारतवर्षके शेष चौहान राजा पृथ्वीराजकी सभामें "राजकवि" थे। उनके रचेहुए प्रसिद्ध काव्यमें पृथ्वीराजके गुण भलीभाँतिसे परिपूर्ण हैं। कविचंदने पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोंकी नामावली और कारिकाको प्रकाश करके उक्त सूचीको सबसे पहिले संग्रह किया था। अत्यन्त प्राचीनकालके कवियोंके ग्रन्थोंसे कविचंद इत्यादिने राजपूत कवियोंके उक्त श्रेणीके जिन इतिहासोंको उद्धृत किया है, वह सब राजपूतानेके प्राचीनकालके राजाओंके वंशकी सूचीके निर्णय करनेमें विशेष सुभीता देनवाले हैं।

कर्नल टाड साहब कहते हैं कि मेवाड़के अत्यन्त प्राचीनकालके एक इतिहास-मूलक काव्यसे उक्त प्रमार वंशकी कारिकाको उद्धृत कर मुसलमानोंके आक्रमणके वृत्तान्तको उद्धृत किया है। महात्मा टाड साहबने इसके पीछे माणिकरायसे चौहान सम्राट् पृथ्वीराजतकके जिन प्रधान २ राजाओंके नाम लिखे हैं, उनमें सबसे अधिक तेजस्वी वीर वीसलदेवके समयका निर्णय करना इस स्थानपर [1]विशेष प्रयोजनीय हुआ है। उन्होंने सबसे पहिले आनलसे लेकर लाखनसीतककी जो सूची प्रकाश की है हमने यहां पर उसीको ग्रहण किया है।

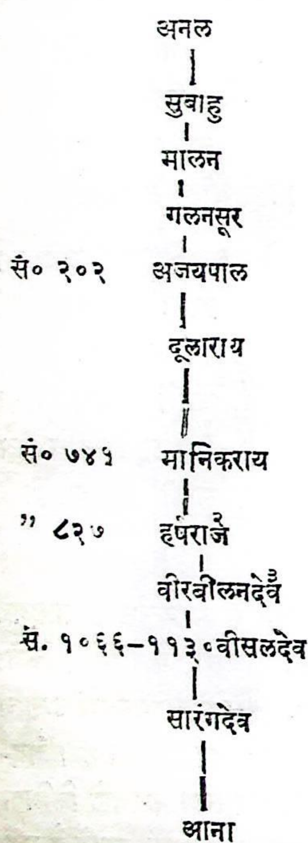
महा कविचंदने वीसलदेवके शासनका समय ९२१ लिखा है परन्तु टाड साहबने इसको उनकी भूल कहकर इस स्थानपर अनेक प्रमाणोंका प्रयोग कर सिद्ध किया है कि वीसलदेवने संवत् १०६६ से ११३० तक राज्य किया, इसके सम्बन्धमें उन्होंने जिन युक्तियोंका प्रयोग किया है हमने सबसे पाहिले उन्हींको प्रकाशित किया है। चंद-कविने अपने ग्रंथमें लिखा है कि चौहानराज वीसलदेवकी वीरताके स्मरण करनेके निमित्त निगमबोध स्थानमें एक कीर्तिस्तंभ स्थापित किया गया था। टाड साहब कहते हैं यह निगमबोध दिल्लीसे थोडी दूर यमुनाके किनारे है। उन्होंने कहा कि "दिल्लीके फारो-जशाहके महलके सम्मुख जो विख्यात कीर्तिस्तंभकी चोटी पर विशालदेव वा वीसलदेवका नाम खुदा हुआ है, यही स्तंभ कवि श्रेष्ठ चन्द लिखित निगमबोध नामक स्थानका कीर्तिस्तंभ है, यह अवश्य ही उस निगमबोधसे उखाडकर इस स्थानपर स्थापित किया गया है।

---

(१) यहांपर कविचन्दका भ्रम नहीं है वरन टाड साहबका स्वयं भ्रम नाश नहीं हुआ है। वह संवत् ९२१ नहीं संवत् ९३१ है उसमें यदि ९१ जोडे जांय तो १०२२ होते हैं और यह संवत् वीसलदेवजीके पाट बैठनेका है रासोमें आगे लिखा है कि "चौसठि बरस वर राज कीन" इससे १०२२ में ६४ जोड देनेसे वीसलदेवजीका समाप्तिकाल १०८६ निश्चित होता है।

मूल संवतमें ९१ जोडनेसे यह मतलब है कि पृथ्वीराज रासोमें जितने संवत दिये हैं वे आनन्द शक हैं यथा एकादशसे पंचदश, विक्रम शाक आनन्द (१००–९–९१)

(२) एशियाटिकरिसर्चेज पहिला बालम ३७९ पृष्ठ और ७ बालम १८० पृष्ठ और पहिला बालम ४५३ पृष्ठ, कर्नल टाड साहबने इसके सम्बन्धमें जो मन्तव्य प्रकाश कियाहै वह देखने योग्य है।



{ या अग्निपाल, चाहुआन वंशके आदि पुरुष जो विक्रमादित्यसे ६५० वर्ष पहले अग्निकुण्डसे उत्पन्न हुए। इन्होंने तुरष्क लोगोंको जीतकर मेहकावर्तीमें राजधानी स्थापित की और फिर कोकन असीर और गोलकुण्डाको जीता.

[इनके वंशधर मालन चौहान कहलाते हैं

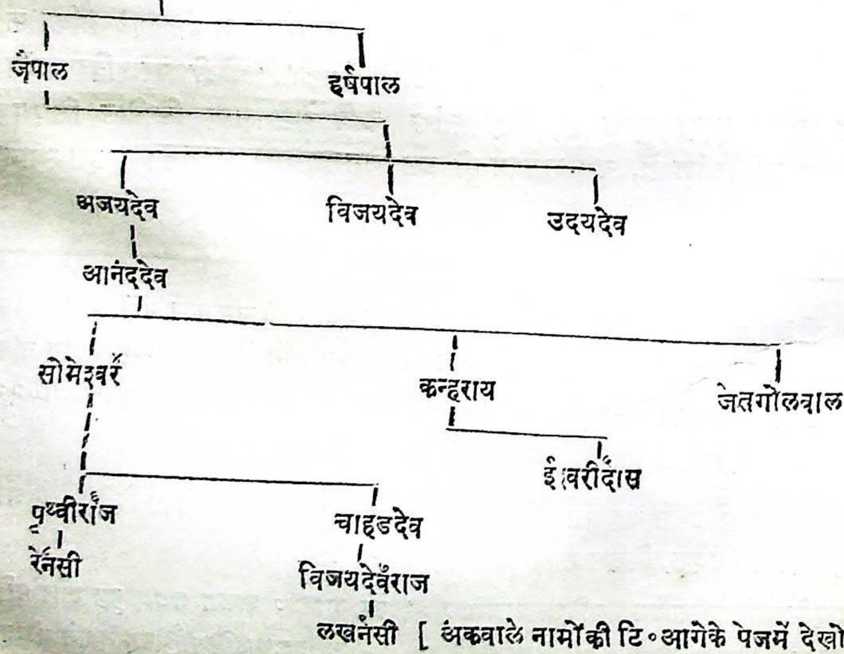
[इन्होने अजमेर नगर स्थापित किया.

{ सन् ६८५ ई० में मुसल्मानोंके हाथसे मारे गये और इन्हींसे अजमेरका राज्य चौहानोंसे गया.

{ इन्होंने सांभरमें चहुआणोंकी राजधानी स्थापित करके संभरीरावकी उपाधि पाई। तभीसे चौहान संभारीराव कहे जाते हैं

[कुमार अवस्थामें मरे.

{ अजमेरमें आना सागर ताल बनवाया जो अब तक उन्हींके नामसे विख्यात है।



[अंकवाले नामोंकी टि०आगेके पेजमें देखो]

इतिहासवेत्ता टाड साहब फिर लिखते हैं कि " उक्त कीर्तिस्तम्भके गात्रमें अंकित श्लोकोंके पहिले और अंतमें एक प्रकारका सन और तारीख लिखी गई है, यथा—१५ वैशाख संवत् १२२० यदि अनुलिपि शुद्ध है तो वीसलदेवके साथ इसका कोई संसर्ग नहीं। केवल इतना ही संसर्ग है कि विशालदेव (वीसलदेव) चौहान तिलक शाकम्भरी पृथ्वीराजके भूपतिके आदि पुरुष थे, पृथ्वीराजने संवत् १२२० में दिल्लीको शासन किया, और संवत् १२४९ में मारे गये। दूसरी कविताकी ओर देखनेसे हम अवश्य ही इस स्मृतिस्तम्भके गात्रमें प्रथम जो समय अंकित हुआ है, उसको भ्रामक कह सकते हैं। संवत् १२२० के बदलेमें संवत् ११२० पढना न्यायासिद्ध है और उसी समय ही वीसलदेवने आर्यावर्तसे यवनोंको भगाया था, संस्कृत भाषामें एक दो अंक प्राय: एकसे हैं, इसी लिये सरलतासे भूल होनेकी सम्भावना है। परन्तु अन्य पक्षमें यदि यह निश्चय हुआ कि संवत् १२२० है, ऐसा माना जाय तो यह केवल चौहानपति पृथ्वीराजके स्मरणका स्तम्भमात्र है "।

बीसलदेवसे पृथ्वीराजके शासनसमयके मध्यमें और भी छ: राजाओंके नाम लिखे हैं। स्तम्भके गात्रमें प्रथम जो कविता वर्णन की गई है ऐसा बोध होता है कि वह पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोंने बीसलदेवके नामके उल्लेखके लिये ही वर्णन की है और उस पर खुदी हुई तारीख भ्रमवश ठीक नहीं लिखा गई"।

इसके पीछे इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं, कि "हमारी समझमें पहिले कवितामें (वीसलदेव) विशालदेवके सम्बन्धमें लिखा है, और दूसरीमें उनके वंशधर

---

(१) अग्निपाल प्रमार कुलके आदिपुरुषका नाम था । चाहुआण कुलके आदि पुरुषका नाम चतुर्बाहुमानजी या चुहाणजी था । इसके बाद जो सुबाहु और गिलनसूर दो नाम दिये हैं वे भी गलत हैं। इसमें रासोके आधारपर नाम लिखे गये हैं पर रासोके छन्द समझमें न आनेसे ऐसा हुआ है। यह कारिका न तो रासासे ठीक मिलती है । न वंशभास्करके आधारपर बनी हुई बूंदी राजवंशावलीसे मिलती है। (२) इन्होंने नाजिमुद्दीन या सुबक्त दीनको शिकस्त दी। (३) महमूद गजनवीके विरुद्ध अजमेरकी रक्षामें मारे गये। इनका दूसरा नाम धर्मगज भी है । (४) दिल्लीके तूंअर राजा अनंगपालकी बेटी रूकाबाईसे व्याह किया। (५) इन्होंने दिल्लीका राज्य प्राप्त किया और सन् ११९३ में शहाबुद्दीनके द्वारा मारे गये। (६) मुसल्मान होगये। (७) दिल्लीकी रक्षामें काम आये। (८) पृथ्वीराजके दत्तक पुत्र इनका नाम दिल्लीके एक स्तूपपर खुदा हुआ है। (९) लखनसीके २२ पुत्र हुए जिनमें ७ असली थे, उनसे चाहुबाणोंके सात वंश प्रख्यात हुए, नीम राणाके सरदार नन्दसिंह उक्त लखनसीसे २६ वी पीढीमें हैं यही अजैपाल या पृथ्वीराजके मूलवंशधर हैं।

(१) कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "चौहानराजका आदि वासस्थान हांसी, वा असि था। इस स्थानके ध्वंसावशेषसे संवत् १२२४ की खुदी हुई अनेक अनुशासन लिपियोंका संग्रह किया था।" इसके सम्बन्धमें टाडने रायल एसियाटिकसोसाइटीके पहिले वाल्यूमके १३३ पृष्ठमें जो कुछ लिखा है वह द्रष्टव्य है।

(२) प्राचीन नाम विशालदेव ही ठीक मालूम होता है और वीसलदेव उसका अपभ्रंश मात्र है।

पृथ्वीराजके सम्बन्धमें लिखा है । ऐसा विदित होता है कि पृथ्वीराजने अपने पूर्वपुरुष वीसलदेवके वार्षिक जयोत्सवके समयमें उक्त स्मरणस्तम्भमें अपनी कीर्तिकी कविताको अंकित करवाया था । पृथ्वीराजने अवश्य ही वीसलदेवके समान भारतवर्षमें यवनोंको अपने बलविक्रमसे वारम्वार परास्त किया । अधिक क्या कहैं यवन इतिहासवेत्तागणोंने स्पष्ट ही लिखा है कि उत्तर भारतवर्षको सब प्रकारसे जय करनेके पहिले शहाबुद्दीन बारम्बार युद्धमें परास्त हुए थे " ।

"मैं जिस प्रकारका अनुमान करता हूं कि यही प्रथम कविता वीसलदेवके सम्बन्धमें लिखी गई है, और वीसलदेवने संवत्११२० सन् १०६४ ई० में कविचन्द-के द्वारा लिखे हुए मतसे यवनोंको भगानेके लिये बहुतसे वीरोंको इकट्ठा किया था, और उसी घटनाके स्मरणके लिये उक्त स्तंभ स्थापित हुआ है " ।

वीसलदेवके अधीन जो राजा सेना सहित इकट्ठे हुए थ कविचन्दके ग्रंथोंमें उनकी नामावली प्रकाश की गई है उनमेंसे चार राजाओंके समयका निर्णय हुआ है पर हम प्रत्यक्षरूपसे एक ही नामके समयको यथार्थ निर्णय कर सकते हैं, और तीन नाम समयके निश्चय करनेके पक्षमें अप्रत्यक्षतामें सहायता करते हैं । पहिले राजा भोजके पुत्र धारनगरके अधीश्वर प्रमार उदयादित्य थ । मैंने बहुतसे ताम्रानुशासने लिपियोंसे प्रमाणित किया है कि उदयादित्य ११०० संवत् ११४० के मध्यमें थे, इस कारण उदयादित्य जिस समय वीसलदेवके साथ सेना सहित आये थे वह उसके शासनके समय थे । और भी दो प्रत्यक्ष अथवा प्रबल प्रमाण हैं—

प्रथम ' देरावरके भूमियांभट्टी लोग आये ' ऐसा लिखा है । कविचन्दकी उक्तिसे ही यह प्रमाण सिद्ध हुआ । तथा भाटियोंकी वर्तमान राजधानी जयसलमेरका उल्लेख भी दृष्टिगत हुआ है ।

द्वितीय-यमुना और गंगाजीके मध्यवर्ती अन्तरवेदसे कछवाहे आये, ऐसा लिखा गया है । कारण कि नरवरसे कछवाहोंने आमेरमें जो राजधानी स्थापन की थी वह इस समय प्रसिद्ध नहीं हुई थी ।

तीसरा प्रमाण-मेवाडकी खुदी हुई अनुशासनलिपि । उन अनुशासन पत्रोंमें अंकित हुई है समरसिंहके पितामह तेजसिंह वीसलदेवके मित्र थे । ऐसा जाना जाता है कि वीसलदेव ६४ वर्षतक जीवित रहे । यदि ऐसा अनुमान किया जाय कि उक्त संवत् ११२० उनके शासनका मध्य समय था, तो यह स्थिर किया जाता है कि वह संवत् १०८८ से संवत् ११५२ तक अर्थात् १०३२ ई० से १०९६ ई० तक जीवित थे, किन्तु जब यह प्रकाश हो चुका है कि वीसलदेवके पिता धर्मगज वा वीर बलिनदेव; हमीर रासाग्रन्थमें इनका नाम मालनदेव लिखा है, महमूदके शेष आक्रमणके समय अजमेरकी रक्षामें मारे गये, तब अवश्य ही वीसलदेवके जन्मका समय (उक्त

(१) टाड साहबने वीसलदेव और विशालदेव दोनों ही नाम लिखे हैं ।

युद्धके समय वह बालक थे ऐसा अनुमान हो सकता है, और भी दस वर्ष पहिले अर्थात् संवत् १०७८ निश्चित होता है'' ।

इसके पीछे टाड साहब कहते हैं कि '' बीसलदेव दिल्लीके तुंअर राजा जयपाल गुजरातके राजा दुर्लभ और भीम, धारके दोनों अधीश्वर भोज और उदयादित्य, मेवाडके दोनों महाराणा पद्मसिंह और तेजसीके समसामयिक थे, और वह जो प्रबल-सेनादलके नेतारूपसे यवनोंके विरुद्धमें खडे हुए वह यवननेता अवश्य ही महमूद था । वीसलदेवने उस महमूदको राजपूतानेके उत्तरांशसे निकाल दिया था, तभीसे आर्यावर्तमें फिर आर्यधर्मकी रक्षा हुई । महमूद पिछली बार भारतवर्षसे सिन्धुदेशको भागा और उसके विरुद्धमें जो वरिमदेव अजमेरके अधीश्वरोंके साथ मिलकर उनके विरुद्धमें खडे हुए वह युद्ध हिजरी ४१७ सन् १०२६ ईसवी वा संवत् १०८२ में हुआ । परन्तु चँदकवि लिखते हैं कि संवत् १७८६ में हुआ था '' ।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते हैं कि बीसलदेवने गुजरात राजके विरुद्धमें समर उपस्थित कर उसमें जो जय प्राप्त की थी, और अपने बाहुबलसे शत्रुओंके साथ जिस स्थान पर विजय प्राप्त की थी, उस स्थान पर जयचिह्नस्वरूप वीसलनगरकी प्रतिष्ठा की, हम उसे इस स्थानपर विस्तारसहित वर्णन: करते परन्तु जगतविख्यात पृथ्वी-राजके शासन-वर्णनके समय उस सबका वर्णन किया जायगा, इसीसे यहाँ उस प्रसंगको नहीं कहते । कालिक जुहनेर स्थानमें जो वीसलदेवका धोंध अर्थात् तपस्या-का स्थान था उसके विषयमें हमारे पाठक इतिहासके कितने ही स्थानोंमें पढ चुके होंगे।

हाडाजातिके राजकवि गोविन्दरामके बनाये हुए ''राजग्रन्थ'' में लिखा है कि वीसलदेवके पुत्र अनुराजसे हाडाजातिकी उत्पत्ति है । परन्तु खीची राजवंशके कवि मगजींने अपने ग्रंथमें लिखा है कि अनुराज माणिकरायके पुत्र थे और वह खीची वंशके आदिपुरुष थे । हाडा कविने गोविन्दरामका अनुसरण किया होगा ।

गोविन्दराम कहते हैं कि अनुराजको सीमान्तवर्ती आसि (सर्वसाधारणमें विख्यात हाँसी) नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था। अनुराजके पुत्र अस्थिपाल एवं सिन्धुसागर देशके अन्तर्गत खीचीपुर पाटनके आदि प्रतिष्ठाता और अजयराजके पुत्र अगनराज दोनों मिलकर अपने सौभाग्यके उपार्जनकी इच्छासे गोलकुंडाके चौहान राज रणधीरके अधीनमें नियुक्त होनेक लिये सजे । परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय कजलीवनके बर्बरोंन एकसाथ ही आसि और गोलकुंडापर आक्रमण किया । उस समय चौहानराज रणधीरने पुत्रोंके साथ असीम बलविक्रम प्रकाश करक रणक्षेत्रमें प्राण त्याग किये । उनके वंशमें केवल एकमात्र सूराबाई एक कन्या प्राणरक्षामें समर्थ होकर शत्रुओंके हाथसे अपनी रक्षा करनक लिये गोलकुंडाका छोड कर आश्रयके निमित्त असिकी ओरको भाग गई । परन्तु उक्त वनवासी बर्बरोंने इस समय उस असिप्रदेश पर भी महाविक्रम प्रकाश करके आक्रमण किया । शत्रुओंके आगमनका समाचार पाते ही असिपति अनुराज भी भाग गये; परन्तु उनके उक्त पुत्रोंने शत्रुओंके आक्रमणकी

प्रतीक्षा न करके वीरपुरुषोंके समान असीम साहससे आगे बढ़ सेना सहित उनपर आक्रमण किया। भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गयी, उस घोर युद्धमें शत्रुपक्षके नेता अस्थिपाल अस्त्रोंके आघातसे घायल हुए, तुरन्त ही शत्रुओंकी सेना प्राणोंके भयसे भागने लगी यह क्षत विक्षत देह उस शत्रुओंकी सेनादलके पीछे २ चले। परन्तु बहुत दूर चलनेके पीछे मार्गमे ही अचेतन होकर गिर गय। इस ओर सूराबाई भी आश्रय पानेके लिये इकली असिकी ओरको चली, अंतमें थकित होकर मार्गमें ही संज्ञाहीन (क्षुधा तृष्णासे कातर और जीवनकी आशासे वंचित) होकर एक वृक्षकी जडके नीचे गिर गई। उस समय सूराबाई अपनी मृत्युको अत्यन्त समीप देख रही थी। जिस समय वह अश्वत्थ वृक्षकी जडमें गिरी थी, उसी समय उस वृक्षके दो खंड हो गये। और उसमेंसे चौहानोंकी कुलदेवी आशा पूरामाताने बाहर निकल उसको दर्शनकर दिया। देवीका दर्शन पाते ही सूराबाई विचालित हृदयसे नेत्रोंमें जलभर कर देवीके चरणोंमें हृदयको भेदन करनेवाली अपनी विपत्तिको वर्णन करने लगी। कजलीवनके वनवासी वर्वरोंके हाथसे राजधानी गोलकुण्डाकी रक्षाके लिये किस प्रकारसे उसके पिता और बारह भ्राता युद्धमें मारे गये और किस प्रकारसे वह इकली भाग कर आई, उसने एक २ करके सभी बातोंको निवेदन किया। तब देवीने उसको अभय देकर कहा, "हे वत्से! अब तुम्हें कुछ भय नहीं है, तुम्हारे स्वजातीय एक चौहान वीरने उस शत्रुपक्षके नेताको अपने हाथसे मार डाला है, और वह बहुत ही समीप स्थित है।" यह कह कर देवी उस सूराबाईको अपने साथ ले, घायल हुए अस्थिपाल जिस स्थान पर अचेत अवस्थामें पडे थे वहां ले गई, देवीके वरसे उनका शरीर ज्योंका त्यों हो गया और फिर बल पाकर चैतन्य हो अस्थिपाल अन्तमें चौहानोंके विख्यात पैतृक अभेद्य किले आसेरगढको चले गये।

इस स्थान पर कर्नेल टाड साहब लिखते हैं कि "हाडा जातिके आदि पुरुष अस्थिपालको संवत् १०८१, १०२५ ई० में असिका किला मिला था। अब जाना जाता है कि सुलतान महमूद भारतपर शेष आक्रमण करनेके लिये मुलतान होकर मरुक्षेत्रको मध्यमें छोड अजमेरमें, हिजरी ४१७, सन् १०२२ ईसवीमें आया था, तब हम अवश्य ही इस बातको स्थिर कर सकते हैं कि अस्थिपालके पिता अनुराजने गजनीके महमूदके साथ युद्ध करके अपने जीवन और असि नगरको खो दिया था। इसी समयमें मुसलमान विजेता महमूदने अजमेरको भी विध्वंस किया।

(१) टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "इस प्रकारकी गप्प प्रचलित है कि सूराबाईने अस्थिपालके छिन्नभिन्न हाथपैर यथास्थान जोडे और देवीने अभिमंत्रित जल छिडककर अस्थिपालको प्राणदान दिया। उक्त प्रकारसे सब हाडोंके एकत्र होनेसे अस्थिपालको जीवन प्राप्त हुआ, इसीसे उनके वंशधरोंको हाडाकी उपाधि प्राप्त हुई। परन्तु इसीकी अपेक्षा यह भी संभव हो सकता है कि उन्होंने असिराज्यको खोदिया था इसीसे हारा नाम प्राप्त हुआ हो।"

(२) हाडाजातिके कविने अपने ग्रन्थमें उक्त घटनाका समय संवत् ९८१ लिखा है, परन्तु टाड साहबने कहा है कि वह भूल है।

हिन्दू कविने इसको "कजलीवनका असुर" कहकर अपने काव्यमें लिखा है। यद्यपि कर्नल टाड साहबने इस मन्तव्यको प्रकाशित किया है, परन्तु मुसलमान इतिहासवेत्ताने भ्रमसे भी इसका उल्लेख नहीं किया कि सुलतान महमूद सेना लेकर किस समय दाक्षिणमें आया था, और किस समय उसने गोलकुंडेको जय किया था। परन्तु कवि गोविन्दरामने जो कजलीबनकी बर्बरजातिका उल्लेख किया है, सुलतान महमूद उसी कजलीवनका बर्बरनेता था, यह विश्वास सरलतासे नहीं हो सकता। यद्यपि यदुवंशीय राजा गजसे गजनीकी सृष्टि हुई है, परन्तु महमूदके दाक्षिणात्यमें जानेपर मुसल्मान लेखकोंमेंसे कोई न कोई अवश्य ही उसका उल्लेख करता। हमारा ऐसा विचार है कि दक्षिणाके किसी पर्वतीदेशका कजलीवन नाम हो। वह कजलीवन कहां था, इसका निर्णय करना सामर्थ्यसे बाहर है। टाड साहबने इस स्थान पर और भी एक मन्तव्य प्रकाशित किया है कि "उत्तर और दाक्षिण देशके जो समस्त राजपूत राज्य थे, उन्हीं राजवंशधरोंने वहाँके आदिम निवासियोंके साथ मिलकर नूतन मिश्र महाराष्ट्र जातिको जन्म दान किया, महाराष्ट्रोंने राजपूतोंके समान वीरविक्रमी होकर भी जादव तुंवर पंवार इत्यादि प्राचीन राजपूतवंशके नामकी रक्षा न करके जिस देशमें जन्म ग्रहण किया उसी देशके नामसे वह निमालकर, फाल किया और पाटनकर इत्यादि नामसे परिचित हुये।

अस्थिपालके औरस चन्द्रकरण नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। चन्द्रकरणके पुत्रका नाम लोकपाल था। लोकपालके दो पुत्र हुए, एकका नाम हमीर और दूसरेका गम्भीर था। यह दोनों महापुरुष थे। दिल्लीपति पृथ्वीराजके शासनसमयमें यह उनके अधीनमें थे उस समय इन्होंने अनेक युद्धोंमें महावीरता प्रकाश की थी। दिल्लीपति पृथ्वीराजके अधीनमें जो १०८ करद राजा थे, इन दोनों वीर भ्राताओंने उन सबोंमेंसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। इससे हमें ऐसा अनुमान होता है कि असिदेश यद्यपि दिल्लीके बादशाहके सब प्रकारसे अधीनमें न था तथापि चौहानवंशीय असिदेशके अधीश्वर उनका अधिक सम्मान करते थे।

चौहानवंशके शिरोमणि राजा पृथ्वीराज जिस समय कान्यकुब्जपति जयचंदके साथ घोर संग्राम कर उनकी कन्या अनंगमंजरी (संयोगिता)को बलपूर्वक हरण करके ले आये थे, चन्दकविने अपने ग्रन्थमें उसका विवरण भलीभांतिसे वर्णन किया है, उन्होंने उसमें वीरश्रेष्ठ हमीर और गंभीरके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा करनेमें त्रुटि नहीं की है।

---

(१) कर्नल टाड साहब लिखते है, " कजलीवनका अर्थ हस्तीका जंगल है। राजपूत कहते हैं कि गिजनीका प्रकृत नाम गजनी है, और वह यदुवंशीय राजा गजके द्वारा स्थापित हुई। हमने रायलएशियाटिक सुसाइटीको एक प्राचीन हिन्दू भूवृत्तान्त प्रदान किया है, उस भूवृत्तान्तसे गंगाजीके तीरवर्ती समस्त पहाड़ी देश 'कजलीवन' वा 'गजलीवू' नामसे लिखे गये हैं। उसका अर्थ हाथीका जंगल है। अबुलफजल लिखते हैं वजीर अंचलपर गजलीगढ नामका एक देश है वहां सुलतानी यादो और योसुफ़जई जाति निवास करती है। "

कवि चंदकी उक्ति है कि " इसके पीछे हाडाराव हमीर अपने अनुज गंभीरके साथ रण तुरंगिनीपर चढकर अपने अधीश्वर पृथ्वीराजके सम्मुख जाकर बोले, "जंगलेश! हम जयचंदकी सेनाको विध्वंस करनेमें प्रवृत्त हुए हैं, आप निर्विघ्नतासे चलिये। नौका जिस प्रकारसे सागरके वक्षस्थलको विदलित करती हुई चलती है उसी प्रकारसे हमारे रणतुरंगोंके खुरोंसे युद्धक्षेत्र कंपित होगा "।

कविकी पिछली उक्तिसे जाना जाता है कि "जयचंदके अधीनमें इकट्ठे हुए महाबली राजाओंमें जो काशीराज सेनासहित उपस्थित थे, उक्त दोनों वीर भ्राताओंने उनपर आक्रमण किया। वीरश्रेष्ठ हमीरने वीरगर्वसे आगे बढकर इस प्रकार सिंहनाद किया कि कैलासके शिखरपर भगवती दुर्गाजीका सिंहासनतक उच्च स्वरसे कंपायमान हो गया। " कविचंद लिखते हैं कि उन दोनों वीर भ्राताओंने अतुल बल विक्रम प्रकाश करनेके पीछे उस समरभूमिमें प्राण त्याग किये।

हमीरके कालकर्ण नामक एक पुत्र था। शहाबुद्दीनने जिस समय कग्गरोंके युद्धमें भारतकी स्वाधीनताको हरण किया उस समय वह वीरश्रेष्ठ कालकर्ण पृथ्वीराजके अधीनमें उनके विपक्षमें नियुक्त होगये थे। कालकर्णके पुत्रका नाम महासुग्व था। उनके औरससे राववाचाने जन्म ग्रहण किया। उनके पुत्रका नाम रावचंद था।

कठिन यवन अलाउद्दीनने चौहान जातिके समस्त स्वाधीन राजाओंके शासनको लुप्त कर दिया, उन्होंमें यह रावचंद भी एक थे। आसेरगढका किला अत्यन्त अभेद्य गिना जाता था, इसीसे अलाउद्दीनने वलपूर्वक इस किलेको फतह कर रावचंदको वंश-सहित निहत किया। केवल रावचंदके ढाई वर्षकी अवस्थाका रैनसी नामका एक पुत्र था। वह बालक चीतौडपति महाराणाका भानजा था इस कारण अलाउद्दीनके किलेको जीतनेके पीछे वह बालक चीतौडके महाराणाके निकट भेज दिया गया। रैनसी मामाके यहाँ जाकर सब व्यवहारोंको जान गये; एक समय इन्होंने अपनी सेना सहित जाकर भैंसरोड नामक देशके विध्वंस हुए किले पर आक्रमण करके वहाँके दूंगानामक भील नेताको वहाँसे भगा दिया।

यह भैंसरोड पहिले मेवाडके अधीनमें था, अलाउद्दीनने चित्तौडपर आक्रमण करनेके समय इस देशको विध्वंस कर दिया था, और उक्त दूंगाने सुविधा पाकर उस स्थानपर अपना अधिकार कर लिया।

रैनसी वा रैनसिंहके औरससे कुलन और कनकल नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। बडा पुत्र कोल्हण दुरारोगसे ग्रसित होकर गंगाजीके किनारे केदारनाथकी तीर्थयात्रा करनेको गया, इससे उसे शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त हुई, केदारनाथका वहुत दिनोंका मार्ग था; परन्तु यह न तो पालकीकी सवारी पर चढ कर गये और न घोडे पर ही गये, यह देवादिदेव केदारनाथ, जिससे अधिक प्रसन्न हो इससे किसी सवारीपर

(१) पृथ्वीराजकी एक उपाधि जंगलेशकी भी थी।
(२) वंशभास्करमें रतनसिंह लिखा है।

न चढ कर केवल साष्टांग दंडवत करते हुए राजधानी भैंसरोडसे केदारनाथके मंदिरतक गये। इस बातको तो सभी जानते हैं कि यह तीर्थयात्रा महा कठिन है। इसी रीतिसे छः महीने तक बराबर चलनेके पीछे वह बूंदीके समीपमें आपहुँचे। उस स्थान पर एक पर्वतके शिखरसे निकली हुई बाणगंगा नदीमें जाकर इन्होंने स्नान किया, और स्नान करते ही समझ गये कि मैं आरोग्य हो गया। उस स्थान पर ही देवादिदेव केदारनाथने उनको आज्ञा दी कि हे वत्स! मैं तुम्हारी भक्तिसे अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ तुम अब सब भाँतिसे अरोग्य हो गये हो। आजसे तुम पठार देशके अधीश्वर हुए"। उक्त समस्त पठारदेश पहिले चित्तौंडके राणाके अधिकारमें था, परन्तु दुराचारी अलाउद्दीनने उस विख्यात किलेको लूट कर वहाँके अगणित गेहिलोतोंको निहत कर इस देशसे राणाकी प्रभुता घटादी, यहाँके आदिम निवासी मेरगणोंने इस सुअसरमें अपने इस आदिम पर्वतके स्थान पर अपना अधिकार करलिया।

यह प्रसिद्ध है कि पूर्वकालमें प्रमारजातिके राजा हूँन इस पठारदेशके अधिपति थे, और मैनाल नामक स्थानमें उनकी राजधानी थी। उक्त मैनाल नामक स्थानमें उस प्राचीन हूंणाराजाके अनेक स्मृतिचिह्न विराजमान हैं। ऐसा प्रगट है कि आठवीं शताब्दीमें जिस समय चीतौड पहिले पहिल आक्रांत हुआ था उस समय हूनपति अंगतसीने अपनी सेनाके साथ इन महाराणाकी सहायता की थी और ऐसा कहा जाता है कि विख्यात बारौलीका मंदिर इन्हीं हंसराजका बनवाया हुआ है।

कोल्हनके पुत्र राव बांगाने उस पुराने मैनालपर अधिकार करलिया उन्होंने पठारके पश्चिमकी ओर एक शिखर पर बंबावदा किला बनाया, पूर्वमें भैंसरोड, पश्चिममें बंबावदा और मैनाल यह सब पठार देश हाडाजातिके अधिकारमें हो गये, इसके पीछे मांडलगढ बिजोलिया बेगूं रत्नगढ और चौराइतगढ इत्यादि पर अधिकार करनेसे राज्यकी सीमा क्रमशः बढगई।

राव बांगाके बारह पुत्र हुए उन सभीने पठार देशका विस्तार करके अपने वंशको बढाया, राव देवा राव बांगाके पीछे राजसिंहासन पर विराजमान हुये। राव देवाके हरराज हर्थजी और समरसी यह तीन पुत्र हुए।

हाडानरेशोंने उक्त प्रकारसे अपने अधिकारको स्थापन कर प्रसिद्धि प्राप्त की। तब दिल्लीके बादशाहका ध्यान इनकी ओर गया। सिकन्दरलोदी इस समय दिल्लीके सिंहासनपर स्थित थे। उन्होंने हाडा नरेशको दिल्लीमें बुलाया। रावदेवा दिल्लीश्वरकी आज्ञा-

---

(१) मध्य भारतवर्षका नाम पठार था, कवि लिखते हैं कि कोल्हणको जो देश मिले थे उनके दश अंशोंमेंका एक अंश उन्होंने अनुजको देदिया था।

(२) हरराजके बारह पुत्र जन्मे, हाबुके वीरताका वर्णन टाड साहबके दूसरे भ्रमण वृत्तान्तमें प्रकाशित होगा यह हांबु सबमें बडा था। बंबावदाका अधिकार इसे ही मिला था।

(३) ये गलत लिखा है क्योंकि सिकन्दरलोदी तो देवायतजीके समयमें २०० वर्ष आसर पीछे हुआ है और उस समय देवायतजीकी औलादमें राव नारायणदास बूंदीके राजा थे।

को शिरपर धारण कर अपने ज्येष्ठ पुत्रको बंबावदाके सिंहासन पर अभिषिक्त कर छोटे पुत्र समरसीके साथ दिल्लीको गये। हाडाजातीय कविने लिखा है कि राव देवा बहुत दिनतक दिल्लीमें रहे, अंतमें जब रावदेवाके घोडा लेनेकी दिल्लीपतिकी प्रबल इच्छा हुई और राव देवाने किसी प्रकार भी उसको देना न चाहा और अपने देशको जानेकी तैयारी की। उस घोडेका वृत्तान्त इस प्रकार है कि सम्राट्के मन्दारीका एक अश्व था, "वह नदीके पार होजाता परन्तु उसके पैरमें एक बूँद जल भी नहीं लगता था, रावदेवाने सम्राट्के प्रधान अश्वपालको रिश्वत देकर वशीभूत किया, और पठारदेशकी एक अश्वनीके गर्भसे उक्त अश्वद्वारा एक बछडा उत्पन्न कराया। वह अश्वका बच्चा धीरे २ बढकर पूरा घोडा हो गया। बादशाहने उस घोडेको लेनेके लिये अत्यन्त अभिलाषा प्रगट की। रावदेवाने बादशाहकी अभिलाषाको जानकर धीरे २ दिल्लीसे अपने परिवार और पारिषदोंको एक २ करके सभीको गुप्तभावसे विदा दी, और अन्तमें आप तलवार हाथमें ले उसी श्रेष्ठ घोडे पर चढकर बादशाहके महलके सम्मुख पहुँचे। बादशाह उस समय बरामदेमें विराजमान थे। रावदेवाने नीचेसे ही उस घोडे पर चढे रहकर बादशाहको अभिवादन करके कहा, "जहाँपनाँह! यह शेष अभिवादन जानिये। मेरा यह निवेदन है–कि आप राजपूतोंसे तीन वस्तुओंकी इच्छा न करें, प्रथम उनका अश्व, दूसरी उनकी स्त्री और तीसरी उनकी तलवार।" यह कहते ही रावदेवाने बडी शीघ्रतासे अश्वको चलाया, और शीघ्र ही निर्विघ्नतासे वह पठारमें आपहुँचे।

रावदेवा बंबावदा देशका समस्त अधिकार अपने बडे पुत्र हरराजको पहिले ही दे गये थे, इस कारण उन्होंने वहाँ न जाकर, बुंदानाल नामक जिस स्थानपर उनके पूर्व पुरुषोंने कठिन रोगसे आरोग्यता प्राप्त की थी उसी स्थानपर आपहुँचे। इस देशमें मीना और उसाराजाति उनके अधीश्वर जेताके अधीनमें निवास करती थीं। उस समय उस देशमें एक भी रीतिके अनुसार नगर नहीं था, केवल उपत्यका बाहरी सीमाके अन्तर चारों ओर पाषाणप्रकार और तोरणसे युक्त था एवं उसके मध्यवर्ती किसी स्थानमें इच्छानुसार मीनागणोंने कुटी बनाई थी उसीमें आप निवास करते थे। यहाँके निवासी चितौडके विध्वंस होनेके पहिले महाराणाकी अनुगत्यता स्वीकार कर उनके अधीनमें वास करते थे; परन्तु इस समय राणाकी सामर्थ्य घट गई थी इसीसे रामगढक खीची जातिके अधीश्वर राव गांगा इस देशमें जाकर अपने बाहुबलसे प्रत्येक निवासियोंके निकटसे बलपूर्वक कर लेते थे। रावगांगाके उत्पीडन और अत्याचारासें अपनी रक्षा और बुंदादेशकी रक्षाके लिये उसारा और मीना जाति शीघ्र ही रावगांगाके साथ इसप्रकार संधिबंधनमें आबद्ध हो गई कि वह प्रति दो महीनेके बीचमें पूर्णिमाके दिन बुंदाकी सीमाके बाहर करस्वरूप चौथ दिया करते थे। उन्होंने इस संधिक मतसे अनेक दिनतक चौथ दी। अंतमें रावदेवा उक्त समयमें वहाँ पहुँच गये, सब बात जानकर उन्होंने मीना और उसारा-

(१) "थल" और "नाल" शब्दका अर्थ उपत्यका है। नाल शब्दमें गिरिसंकटको समझना।

दिकोंको रावगांगाके उत्पीडनसे उद्धार और कर देनेसे रहित करनेकी प्रतिज्ञा की। रावदेवाको वीर पुरुष जानकर उसारा और मीनागण उनके ऊपर विशेष विश्वास स्थापन कर उनके द्वारा रावगांगाके हाथसे अपने उद्धारप्राप्तिके लिये प्रतीक्षा करने लगे।

यथासमयमें रावगांगा सेनासहित बुंदी देशकी सीमामें पहिलेके समान कर ग्रहण करनेके लिये पहुँचे। ठीक समय पर करको आया हुआ न देखकर वह अत्यन्त विस्मित हुए अन्तमें उन्होंने दूरसे सेनासहित रावदेवाको उस श्रेष्ठ घोडेपर आता हुआ देखकर पूछा, "कौन आरहा है?" कुछ ही समयमें उत्तर आया "पठारके महाराज आरहे हैं"। रावगांगा जिस अश्वके ऊपर सवार थे वह अश्व भी रावदेवाके उक्त अश्वकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट नहीं था, कवि लिखते हैं कि रामगढके निकटवर्ती पार्वती नदीके किनारे खीचीराज रावगांगाकी एक घोडी एक समय विचरण कर रही थी, इसी अवसरमें पहाडी नदीके गर्भसे एक घोडेने आकर उस घोडीको गर्भाधान कराया, उसीसे उस अश्वका जन्म हुआ, रावगांगा उसी घोडेपर चढकर गये थे। वह घोडा जैसा अद्भुत सामर्थ्यवान् था वैसा ही सुशिक्षित भी था। रावगांगा उस घोडेपर चढकर महावेगसे पठारपती राव देवाकी ओरको चले।

शीघ्र ही दारुण ओर भयंकर युद्धानल प्रज्वलित हो गइ। उस युद्धमें पठारपति रावदेवाकी विजय होनेसे रावगांगा युद्धभूमि छोडकर भाग गये। पठारपति रावगांगाके अश्वके बल और उसके गुणकी परीक्षाके लिये उसके पीछे२ गये। रावगांगाने उपत्यकाको छोडकर शीघ्र ही चम्बल नदीमें प्रवेश किया। रावदेवा अत्यन्त विस्मित होकर चारों ओरको देखने लगे, कुछ ही समयमें रावगांगा चम्बल नदीके पार हो गये हैं। यह देखकर रावदेवाने अत्यन्त विस्मित होकर कहा, "राजपूत तुम धन्य हो! आपका नाम क्या है?" तुरन्त ही उत्तर आया "गांगारखींची" राव देवाने कहा "हमारा नाम देवाहाडा है; हम दोनों जातिके भ्राता हैं, हममें परस्पर कभी शत्रुता नहीं हो सकती, यह चम्बल नदी हम दोनोंके राज्यकी सीमा है"।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं "कि संवत् १३९८ (सन् १३४२ ई०) में मीना और उसारादिकोंके अधीश्वर जैतने रावदेवाको अपना अधीश्वर राजा स्वीकार किया। रावदेवान उस बुंदानाल नामक देशके मध्यस्थलमें बूँदी नामके एक नगरकी प्रतिष्ठा की, और अंतमें वही हाडाजातिकी राजधानीके नामसे परिणत हुई। पूर्वोक्त घटनासे यद्यपि चम्बल नदी उस समय इसकी पूर्वसीमारूपसे निश्चित हुई थी, परन्तु शीघ्र ही बीचमें हाडाजातिने बलविक्रमसे उस सीमाको लांघकर चम्बलके उस पारके बहुत देश बूँदीके अधीनमें कर लिये। कुछ ही कालके पीछे हाडाजातिका बलविक्रम दिल्लीके बादशाहने सुना, बादशाहके सेनापतिके साथ मिलकर हाडाजातिने अपना अधिकार यहाँतक फैला दिया, और बादशाहसे इतनी भूमि प्राप्त की कि बुंदीराज्यकी सीमाका विस्तार मालवेतक होगया। यही विस्तृत समस्त देश पीछे हाडवती हाडोती नामसे विख्यात हुआ है।

द्वितीय अध्याय २.

राववेवाका बून्दीमें राजधानीकी प्रतिष्ठा करना—उसारा जातिकी हत्या-राबदेवाका राज्य-त्याग-समरसीका अभिषेक-चम्बलके पूर्वाञ्चलतक उनके शासनका विस्तार-कोटिया भील-पर आक्रमण और उसका मारा जाना-कोटेकी उत्पत्तिका वृतान्त-नापाजीका अभिषेक-टोडासोलंकी-राजके साथ विवाद-नापाजीका हत्याकाण्ड-हामाका अभिषेक-पठारदेशमें चीत्तौडपति राणाका अपने अधिकारके विस्तारनेकी चेष्टा करना-हामाका राणाकी सम्पूर्ण आधीनता स्वीकार करनेमें असम्मति-हामाका राणापर आक्रमण-राणाकी प्रतिज्ञा-प्रतिज्ञापालनमें विचित्र प्रवाद-वरसिंह वैरीसाल रायभांडा दुर्भिक्ष-इनके सम्बंधमें प्रवाद-बूंदके भांडाके दोनों भाइयोंका समर और अमरका बून्दीपर अधिकार-नारायणदासका यवनधर्माक्रान्त चाचाके साथ समर और अमरकी हत्या-नारायणदासका बून्दीपर अधिकार-उनके चरित्रोंके संबंधमें झगडा-नारायणदासका चीतौडके राणाकी सहायता करना-नारायणदासकी विजय-राणा रायमलकी भतीजीके साथ नारायणदासका विवाह-उनकी मृत्यु-राव सूर्यमल राणा रत्नसिंहकी भगिनीके साथ उनका विवाह-मृगया-राणा रत्नसिंहका सूर्यमलके प्राणनाश करना—सूर्यमलकी प्रतिहिंसादान-राव सुरतान-उनको सिंहासनसे उतारना-राव अर्जुनका अभिषेक--उनकी प्रशंसनीयमृत्यु--बून्दीके सिंहासनपर राव सुरजनका अधिरोहण ।

राबदेवाने संवत् १३९८, सन् १३४२ ई० में मीनादिकोंसे बुंदी नामक उपत्यका लेकर वहाँ बुँदीनामक राजधानीकी प्रतिष्ठा की इसी समयसे समस्त देश हाडौती नामसे विख्यात हुआ। हाडाजातिके राजकवि लिखगये हैं कि:इसी समय रावदेवाकी हाडाजातीय प्रजाकी अपेक्षा मीना प्रजाकी संख्या बहुत अधिक थी। यद्यपि मीनागण रावदेवाको अपना अधीश्वर मानते थे, परन्तु उनके राजकी सामर्थ्यको घटानेका यत्न हो रहा था। दूसरी ओर मीनाजातिके नेताने रावदेवाकी एक कन्याके साथ विवाह करनेके लिये बडे साहसके साथ उनके समीप यह प्रस्ताव उपस्थित किया। असभ्यनीच जाति मीनानेताको यह अनुचित प्रस्ताव उपस्थित करते हुए देखकर राव देवाने महा क्रोधित हो मीनोंको उचित दंड देनेका विचार किया। इसी कारणसे मीनोंके साथ उनका विवाद होगया। रावदेवाके अधीनमें इस समय जो बहुतसी हाडाजातीय सेना थी, उसकी अपेक्षा निवासी मीनोंकी संख्या अधिक होनेसे रावदेवाने शीघ्र ही बंबावदासे हाडाजातिको और टोडासे सोलंकी जातिको बुलाकर ओसारा जाति और मीनोंको एकवार ही विध्वंस कर दिया। प्रायः सभी मीना इस कारण मारे गये"।

कविने लिखा है, कि "मीनावंशध्वंसके पीछे बुँदीराज देवाने दूसरी बार अपने पुत्रके हाथमें यह दूसरा राज्यभार अर्पण किया। वे पहली बार अपने बडे पुत्र हरराजके हाथमें बंबावदाराज्यको अर्पण कर दिल्लीको चले गये थे। फिर वे बंबावदामें नहीं आये इस समय उन्होंने यह नवीन राज्य बुँदी देश अपने छोटे पुत्र समरसीको दे दिया। राव देवाने किस कारणसे दूसरी बार राज्यको त्याग किया इसका कोई

विशेष भेद नहीं पाया जाता तब केवल इतना अनुमान हो सकता है कि मीनोंके वंशको विध्वंस करके राव देवाका हृदय अत्यन्त व्यथित हुआ था; और इसी कारणसे उनको फिर राज्य करनेकी अभिलाषा नहीं हुई " पुत्रको राज्यपर अभिषिक्त करनेपर राजपूत राजा फिर उस राजधानीमें नहीं रहते। कारण कि उस समय वृद्ध राजाको राज्यशासनकी कोई सामर्थ्य नहीं रहती है। पुत्र ही प्रकृत राज्यरूपसे समस्त शासनशक्तिका प्रयोग करता है । ऐसी अवस्थामें वृद्ध राजा शासनशक्तिको त्याग कर राजधानीमें प्रजारूपसे रहना न्यायसंगत नहीं समझता । उसी प्राचीन रीतिके अनुसार राव देवा बूँदी छोडकर वहांसे पांच कोशकी दूरीपर अमरथून नामक एक ग्राममें रहने लगे फिर वह कभी बूँदी वा बंबावदामें नहीं गये। राजपूत जातिमें इस प्रकारकी रीति प्रचलित है कि राजा वृद्ध होने पर पुत्रको राज्यभार देकर राजधानीसे चले जाते हैं। क्षत्रियोंमें जिस भांति बारह दिन तक अशौच रहता है, उन्हीं बारह दिनोंके पीछे उस शासनशक्तिसे रहित वृद्ध राजाकी एक प्रतिमा निर्माण कर रीतिके अनुसार उसकी दाह क्रिया की जाती थी। रावदेवाके छोटे पुत्र समरसीके हाथमें बूँदीका राज्यभार अर्पण किया गया, बूँदी और बम्बावदा यह दोनों देश स्वतन्त्र दोनों राजाओंके द्वारा शासित होते थ।

समरसीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए ज्येष्ठ नापाजी, यह बूँदीके सिंहासनपर विराजमान हुए, (२ हरपाल) यह जजावर गांवको प्राप्त कर वहीं रहने लगे, और इनके अगणित वंशधर हरपालपोता नामसे पुकारे गये, तीसरे जैतसिंह इन्होंने सबसे पहिले चम्बलके बाहर हाडाजातिके प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार कर दिया । कवि लिखते हैं " कि जैतसिंहने एक समय अस्त्रधारी अनुचरोंके साथ केतून देशके तुंबर अधीश्वरके साथ साक्षात् करनेके लिये, आनेके समय मार्गमें नदीके पार्श्वमें स्थित गिरिसंकटवासी भीलोंके अधिकारी देशपर सहसा आक्रमण किया और उनको परास्त कर दिया। हाडाजातिकी सेनाके महाविक्रमके सम्मुख बहुतसे भीलोंका जीवन नष्ट हो गया। उक्त गिरिसंकट प्रवेशके मार्गमें बाहर एक किला था, जैतसिंहने उसी स्थानपर भीलोंके नेताके प्राण संहार किये । उनके स्मरणके अर्थ उन्होंने इस स्थानपर रणदेव भैरवके उद्देशसे एक विराट्काय पत्थरका हाथी स्थापन किया । वह हाथी कोटा-राजधानीके किलेके चार झोंपरा नामक स्थानके निकट स्थापित है । कोटिया नामक एक श्रेणिके भीलसे कोटा नामकी उत्पत्ति हुई है ।

---

(१) इतिहासवेत्ता टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "जैतसिंह और उनके वंशधरगणोंके कई एक पुरुषोंने जब उक्त किले और आसपासके देशपर अधिकार कर लिया था । पंचम पुरुष भोनंगसीके शासनसमयमें बून्दीके राव सूर्यमल्लने उसपर अधिकार किया । जैतसिंहके सुरजन नामका एक औरस पुत्र उत्पन्न हुआ । उसने भीलोंके आदि वासस्थान उक्त देशका नाम कोटा रक्खा, और चारों ओर उसके दीवारें बनवा दी । सुरजनके पुत्र धीरदेवने बडे २ बारह सरोवर खुदवाये, और नगरके पूर्व प्रान्तमें बाँध बंधनसे एक बडा भारी हद तैयार करवाया यद्यपि वह इस समय किशोर—

समरसीके स्वर्ग चले जानेपर नापाजी बुंदीके राजसिंहासनपर विराजमान हुए। राजपूतकविने अपने ग्रंथमें नापाजीकी वीरताकी कथा बहुतसी वर्णन की हैं। नापाजीने टोडा देशके सोलंकी अधीश्वरकी एक कन्याके साथ विवाह किया। वह सोलंकी राजा अन्हलवाडाके अत्यन्त प्राचीन राजाओंके वंशधर थे। एक समय नापाजी टोडा राज्यमें

—सागर नामसे पुकारा जाता है परंतु यह सभीको विदित है कि वह किसके द्वारा बनाया गया है। धीरसिंहके पुत्र खंघल खंघलके पुत्र भोनंगसी थे; भोनंगसीने कोटाराज्यको खोकर फिर उसपर निम्नलिखित उपायोंसे अधिकार कर लिया। धाकर और केसरखां नामके पठानोंने कोटेपर आक्रमण किया। भोनंगसी इस समय अफीम अधिकतासे सेवन करता था और मदिरा भी पीता था इसीसे उसे उन्माद हो गया, इस कारण उसको बूँदीसे निकाल दिया। उसकी स्त्री अपने स्वामीकी समस्त सेनाके साथ केतून देशको चली गई। उस केतूनदेशके निकट ३६० ग्राम हाडाजातिके अधिकारमें थे। भोनंगसी निर्वासित अवस्थामें कुछ दिन रहकर क्रमानुसार चैतन्यता प्राप्त होनेपर अधिक नशा सेवन करनेसे अत्यन्त दुःखित हुए; अंतमें उन्होंने कहा कि अब हम अफीम और मदिराका पान नहीं करेंगे और मैं इसी समय केतूनमें स्थित अपनी स्त्री, तथा अपने कुटुम्बीजनोंके साथ मिलनेकी इच्छा करता हूँ। भोनंगकी स्त्री अपने स्वामीके ज्ञानप्राप्ति होने और उनका आगमन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। बुद्धिमती राजपूत स्त्रीने उस समय एक विचित्र उपायसे कोटाराजधानीपर अधिकार करनेका विचार कर अपने स्वामीको उस कार्यमें लिप्त होनेकी सलाह दी। सेनाबलके द्वारा पठानोंके हाथसे कोटे पर अधिकार करते ही जडसे नष्ट होना होगा, यह निश्चय जानकर भोनंगकी रानीने केवल साहस और चतुरतासे अपने मनोरथको सिद्ध करनेका विचार किया। वसंतऋतुमें फाल्गुनोत्सवके समीप आते ही जिस उत्सवके कुछ दिनके लिये क्षत्रिय राजपूत समाजमें सामाजिक रीति भीति एकबार ही दूर हो जाती है, जिस उत्सवमें स्त्री पुरुष सभी स्वाधीनभावसे स्वेच्छाचारका प्रदर्शन किया करते हैं। अश्लीलताकी श्रद्धासे उत्सवके उपलक्षमें भोनंगकी रानीने केतूनकी समस्त राजपूत युवतियोंको अपने यहां बुला भेजा कि "हम सभी कोटेके पठानोंके साथ होली खेलेंगी"। अन्य पक्षमें भोनंगरानीने पठानोंसे भी कहला भेजा; कि वह समस्त राजपूतोंकी स्त्रियोंके साथ मिलकर होलीक्रीडा करें पठानोंने कोटेकी भूतपूर्व रानीके इस आमंत्रणसे अत्यन्त प्रसन्न होकर किंचित् भी विलम्ब न करके उस आमंत्रणको स्वीकार कर लिया। इधर भोनंगकी रानीने अत्यन्त गुप्तभावसे तीनसौ अत्यंत सुन्दर हाडाजातिके अल्प अवस्थावाले-युवकोंको स्त्रीवेशसे सजाकार वृद्धाधात्रीके साथ भज दिया। ठीक समयपर वह तीनसौ छद्मवेशी युवक अबीर हाथमें लेकर ताली बजाते हुए होली खेलनेके लिये आगे बढे। जिस समय वह छद्मवेशी युवक कोटेमें जाकर पठानोंके मुख और शरीरपर अबीर छिडकने लगे, उस समय वृद्धाधात्रीने भोनंगको लेकर पठाननेताके केसरखांके निकट उपस्थित किया। छद्मवेशी भोनंगने पठाननेताके निकट आते ही अपने हाथमेंके अबीरपात्रको उनके मस्तक पर दे मारा। इसी समय पूर्वसंकेतके अनुसार वह तीन सौ हाडायुवक घाघरेमेंसे तलवार निकाल कर पठानोंका संहार करने लगे। कुछ ही समयके पीछे पठाननेता और उनके अधीनके समस्त पठान यमराजके यहां पहुँच गये और भोनंगने कोटेपर अधिकार कर लिया। पठाननेता केसरखांने नगरमें जो मसजिद बनवाई थी आजतक वह विद्यमान है। भोनंगकी मृत्युके पीछे डूंगरसी कोटेके अधीश्वर हुए। बूंदी अधीश्वर राव सूर्यमलने इनको शासनकी सामर्थ्यसे रहित कर कोटेको बूंदीराज्यके अंतर्गत कर लिया।

गये वहाँ इन्होंने एक अत्यन्त सुन्दर संगमर्मरके पत्थरका स्तंभ देखा । तब उसको लेनेके लिये अपनी स्त्रीको आज्ञा दी कि तुम अपने पितासे इसको मांग लेना । हाडाराज-रानीने अपने पिताके निकट उक्त कामनाको प्रकाशित किया, सोलंकी राजने उसकी आशा पूर्ण करना तो दूर रहा, वरन् उसको विशेष अपमानकारक उत्तर दिया । उन्होंने कहा, "कि यों तो एक दिन हाडाराज नापाजी हमारी स्त्रीतकको मांग लेंगे ।" वह केवल इतना कहकर ही शान्त न हुए, वरन् जामाता नापाजीको टोडा छोड जानेके लिये आज्ञा दी । यद्यपि नापाजी इस अपमानसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए, परन्तु उन्होंने प्रगटमें अपने श्वशुरके साथ झगडा करना न विचारा, इस लिये वह अपने राज्यको चले आये, और तभीसे सोलंकी रानीका तिरस्कार कर उससे घृणा करने लगे; अधिक क्या उन्होंने रानीको अपने शयनागारमें आनेतकका निषेध कर दिया । सोलंकी रानीने इस प्रकारसे अपने स्वामीके क्रोधमें पडकर कुछ दिनके पीछे अपने पिताके निकट समस्त वृत्तान्त कहला भेजा ।

श्रावणमासकी तृतिया तिथि राजपूतोंमें कजलीतीज नामसे विदित है । इस दिन प्रत्येक राजपूत निश्चय ही अपनी २ स्त्रियोंके निकट विवाह करनेके लिये जाते हैं । हमारे देशमें जिस भांति षष्ठीदेवी परम आराध्य है, उक्त कजलीतीजको राजपूत जनक जननी उसी प्रकार षष्ठीदेवीकी पूजा करती हैं । बूँदीराज नापाजीने चिरप्रचलित रीतिके अनुसार उस तिथिमें अपने अधीनमें स्थित समस्त सामन्तोंको अपने अपने देशमें स्त्रियोंके पास जानेकी आज्ञा दी, और उनको बिदा किया । इस कारण उसी दिन बूँदीराजधानी एकवार ही सामन्तोंसे शून्य हो गई, इस शुभ सुअवसरको पाकर उक्त सोलंकी रानीके भ्राता टोडा राजकुमार अपने कितने ही विश्वासी अस्त्रधारियोंके साथ रात्रिके समय अत्यन्त गुप्तभावसे बूँदीकी राजधानीमें आये और महलके भितर जा अपनी तीक्ष्ण तलवारसे नापाजीके शरीरको खंडखंड करके उनके जीवनको समाप्त कर बूँदीसे भाग गये । उस दिन जितने सामन्त बूँदीराज्यसे बिदा हुए थे उनमेंसे एक सामन्तकी स्त्री अत्यन्त पीडित थी, इस कारण उस सामन्तने ऐसी अवस्थामें स्त्रीको देशमें ले जाना उचित न जाना और वह बूँदी नगरके बाहर राजमार्गमें बैठकर अफीम सेवन कर रहा था । इसी समयमें टोडाके राजकुमार नापाजीका जीवन समाप्त कर अपने सेवकोंके साथ उस मार्गसे हँसते २ जा रहे थे और जिस भाँतिसे उनका प्राण हरण किया था, उसकी सब वार्तालाप करते जाते थे । बूँदीके उक्त सामन्तने उसी समय इस वृत्तान्तके सुनते ही अपनी कमरसे तलवार निकाल कर नापाजीके जीवन हननकारी टोडाके राजकुमारके ऊपर वार किया । राजकुमारका एक हाथ तलवारके आघातसे कटकर राजमार्गमें गिर पडा सोलंकी राजकुमारके सेवकोंने राजकुमारको लेकर उसी समय बडी शीघ्रतासे घोडा चलाया । सामन्त राजकुमारके कंकणसहित कटे हुए हाथको ले अपने दुपट्टेमें बाँधकर उसी समय बूँदीकी राजधानीमें आये ।

सामन्तने बूँदीमें आकर देखा कि सर्व नाश हो गया है नापाजी मारे गये हैं । तथा राजमहलमें हाहाकार मच रहा है । सोलंकी रानी जिसके भ्राताने उसके स्वामीका

प्राण नाश किया है वह शीघ्र ही राजपूतरीतिके अनुसार स्वामीके मृतक शरीरको लेकर चितापर चढनेके लिये तैयार हुई। परन्तु उन्होंने जिस वीरवंशमें जन्म लिया था, उसी वीरवंशके उग्र तेजके बलसे इस महाशोकके समयमें भी वह अपने भ्राताको महावीर कहकर उसकी ऊँची प्रशंसा करने लगीं। उनके भ्राताने तलवारके आघातसे नापाजीके शरीरमें सहस्रों घाव कर दिये थे। सोलंकी रानी उस प्रत्येक स्थलको नापाजीका मुख जानकर उस प्रत्येक मुखमें जिससे ताम्बूल दे सकें इसे निमित्त देवतोंसे प्रार्थना करने लगीं। सोलंकनी जिस समय पतिके शवके साथ चितापर चढनेके लिये सज्ज रहीं थीं उसी समय उक्त सामन्तने आकर हत्याकारी जो टोडा राजकुमारका कंकनसहित कटा हुआ हाथ कपडेमेंसे निकाल कर उनके हाथमें अर्पण किया। सोलंकनी कंकनको देखते ही तुरन्त पहचान गई कि यह उसके भाईका हाथ है। इससे वह कुछ भी शोकित न हुई, और चितापर चढनेके पहिले कलम दवात लेकर अपने भ्राताको इस मर्मका एक पत्र लिखा कि आपके हाथ कट जानेसे आपके वंशमें महाकलंक लगा है। आप जिस भांतिसे हो इस कलंकको दूर करनेका उद्योग करिये। नहीं तो आपके वंशधरोंका सभी एक हाथवाले सोलंकीके वंशधर कहकर उपहास करेंगे। कवि लिखते हैं टोडा राजकुमारने अपनी सती भगिनीके उक्त मंत्रको पढकर उस कलंकको दूर करना असंभव जान शीघ्र ही थंभपर अपना मस्तक बडे बेगसे दे मारा उसीसे उनका मस्तक चूर्ण २ हो गया। और वह इस संसारसे बिदा हो गये।

नापाजीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) हामाजी, (२) नौरंग, वा नवरंग और (३) थर। संवत् १४४० में हामाजी पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। नवरंगके वंशधर नवरंग पोता और थरके उत्तराधिकारी थरु हाडा नामसे विदित हुए।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि रावदेवाने जिस समय बूँदी राज्यकी प्रतिष्ठा की उसके पहिले उन्होंने पटार देश और बंबावदाका किला बडे पुत्र हरराजको दे दिया था। हरराजके बडे पुत्र हालूहाडा पिताके वियोगके पीछे पठारके अधीश्वर हुए परन्तु हालूके साथ चीतौडके महाराणाका विवाद उपस्थित हुआ, महाराणाने उक्त पठार देशको बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर बंबावदाके किलेको एकसा कर दिया। इस प्रकार स्वतंत्र स्वाधीन पठार राज्य एकबार ही लुप्त हो गया।

अलाउद्दीनके द्वारा चीतौड विध्वंस होकर राणाके प्रबल प्रतापके लुप्त होनेके पीछे राणाओंने बहुत समय तक हीनवीर्य होकर चीतौडका शासन किया था। चीतौडके अधीनके सामन्त और छोटे २ राजाओंने राणाके इस दुःखमय समयमें मस्तक उठाकर स्वाधीनताको संग्रहकर पिताके देशोंपर अधिकार कर लिया। कुछ ही दिनोंके पीछे चीतौडके महाराजका बलविक्रम पहिलेके समान बढ गया, वह सबसे पहिले उक्त सामन्त और

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि वे यह प्रार्थना करती थीं कि जितने जखमके मुंह उसके भाईने पतिके शरीरमें बना दिये हैं उतने ही हाथ उसके हो जावें तो एक एक हाथसे एक एक मुँहमें पान देवें।

छोटे२ राजाओंको दण्ड देने और उनको आधीनताकी जंजीरमें बांधनेके लिये अग्रसर हुए। चीतौरके महाराजने सबसे पहिले बूंदीके अधीश्वर हामाजीकी ओर तीक्ष्णदृष्टिसे देखा। महाराणाने हामाजीसे कहला भेजा कि जिस देशमें बूँदीराजधानी स्थापित हुई है वह देश राणाके अधिकारमें है, इस कारण बूंदीराजके राणाकी वश्यता स्वीकार कर नियमित कर देकर राणाकी आज्ञा पालन करनेके लिये नियमित समयपर चीतौडमें उपस्थित होना होगा। राणाके निकटसे उक्त पत्रको पाकर बूंदीराज हामाजीने कहला भेजा " मैं किसी समयमें भी किसी प्रकारसे चीतौड-पतिके अधीनका सामन्त नहीं हूं। यद्यपि मैं चीतौडपतिके प्रभुत्वको स्वीकार करनेमें नित्य तैयार रहता हूँ, परन्तु अपने अधीनके देशोंका हमने राणाके अनुगत रूपसे पट्टा ग्रहण नहीं किया, हमने तलवारके बलसे पठारके मीनोंके निकटसे इस राज्यको जीता है " वास्तवमें महाराणा और हामाजी इन दोनोंकी उक्ति कहांतक सत्य है, यह विचारकी बात है। हामाजीके पूर्वपुरुष रणसीवा रायसी असीरगढसे निकाल दिये गये थे, उस समय चितौडपति राणाने ही उनको आश्रय दिया था और उन्होंने भैंसरोडपर अधिकार करनेमें सहायता की थी तथा अलाउद्दीनके चित्तौडपर आक्रमणकरने के पाहिले समस्त पठार देश सिसोदीया राज महाराणाके अधिकारमें था। अलाउद्दीनके चीतौडको जय करनेके पीछे राणाका प्रताप और प्रभुत्व एकबार ही लुप्त हो गया। और उसी सुअवसरमें भूमियाँ आदिमें मीना इत्यादि जातिने अपने पिताके देशपर अधिकार कर लिया, और शेषमें उनसे हाडाजातिके पठारदेशको हस्तगत करनेका संकल्प किया।

यद्यपि हामाजीने कहला भेजा था कि उनके पूर्व पुरुषगण तलवारके बलसे बूंदी राज्यको स्थापन कर गये हैं, परन्तु महाराणाने कहा, कि कुछ समयके लिये हमारा शासन रहित हो गया था, पर कोई भी बलसे हमारे पूर्वाधिकारी देशोंपर अधिकार करनेमें समर्थ नहीं है। राणाने फिर हामाजीसे कहला भेजा, कि वे तुरन्त ही बूंदी राज्यके कारण वश्यता स्वीकार करें। हाडाराज हामाजीने बहुतसी चिन्ता करनेके पीछे स्वीकार किया कि वह प्रत्येक दशहरा तथा होली पर्वके समय सेनासहित चीतौडमें जाकर राणाकी आज्ञा पालन करेंगे और अभिषेकके समय राणासे राजतिलक ग्रहण करनेके लिये तैयार हैं, परन्तु वह नित्य चीतौडमें जाकर सामान्य सामन्तोंके समान कभी नहीं रह सकते। हामाजीके इस उत्तरसे महाराणा किसी प्रकार भी संतुष्ट न हुए। और उन्होंने उनको एकबारही अधीनताकी जंजीरमें बाँधने वा रावदेवाके वंशको पठार-से एक बार ही दूर करनेका विचार किया। बूँदीराज हामाजी राणाके अभिप्रायको जानकर कुछ भी भयभीत न हुए वरन् उन्होंने यह स्थिर किया कि इस समय प्राणपण-से स्वाधीनताकी रक्षा करना कर्तव्य है।

चीतौडके महाराणाने शीघ्र ही अपनी सेना और सामन्तोंके साथ बूंदीको जय करनेके लिये बाहर जाकर बूंदीसे कई कोश दूर निमोरिया नामक स्थानमें अपने डेरे डाले। महाराणाके आगमनकी वार्ता सुनकर हामाजीने शीघ्र ही स्वजातीय पाँचसौ बल-वान् सेनाको सुसज्जित किया। नेता हामाजीके अधीनके वीर लाल वर्णके वस्त्र धारण

करके संहारमूर्तिसे आगे बढे। घोर रात्रिके समय अत्यन्त संतापित हो उन पाँचसौ वीर पुरुषोंने निमोरिया नामक स्थानमें राणाके डेरोंमें जाकर बिना सावधान हुई सिसोदीय सेनाका संहार करना प्रारम्भ कर दिया। राणा अचानक एकाएक शत्रुदलसे अपनेको घिरा. हुआ देखकर प्राणोंके भयसे चीतौडको भाग गये, और हाडादलकी तीक्ष्ण तलवारसे अगणितं सिसोदिया सेना और वहुतसे सामन्त मारे गये। हामाजी विजय प्राप्त कर महा आनंदित हो बूंदीकी राजधानीको लौट आये।

इसके पीछे कविने लिखा है कि हिन्दू कुलतिलक महाराणा उस अति सामान्य सेनासे परास्त और अपमानित होकर राजधानीमें आ बूँदीराजसे बदला देनेके लिये महा क्रोधसे उन्मत्त चित्त हो सेनाका संग्रह करने लगे, और यह प्रतिज्ञा की कि जबतक मैं उनको न जीत लूंगा तबतक अन्न जल नहीं ग्रहण करूंगा। राजपूत महाराजने एकवार जो प्रतिज्ञा की है प्राण रहते हुए वह प्रतिज्ञा किसी प्रकार भी अपूर्ण नहीं होगी। चीतौडके महाराज बिना बूंदीको जय किये हुए अन्नजल नहीं करेंगे ऐसी प्रतिज्ञा की है यह सुनते ही मंत्री समाज और सामन्त अत्यन्त उत्कंठित हुए उनकी उत्कण्ठाका कारण यह था कि बूंदी राजधानी चीतौडसे ३० तीस कोश दूर है, और महा पराक्रमी हाडाजाति प्राणपणसे बूंदीकी रक्षामें नियुक्त हैं। इस कारण सरलतासे बूँदीको जय करना असंभव है, इस लिये राजाकी प्रतिज्ञा पालन करना भी अत्यन्त दुष्कर है। इसी निमित्त मंत्री और सामन्त महाराजको ऐसी कठिन प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये वारंवार निषेध करने लगे, परन्तु चीतौडके राजाने जब इस प्रकारकी प्रतिज्ञा की है तब अब किसी प्रकारसे भी वह प्रतिज्ञा रहित नहीं होसकते विना प्रतिज्ञाका पालन किये महाराज किसी भांति अन्नजलका ग्रहण नहीं करेंगे अन्तमें कुटुम्बियोंने एक विचित्र उपायसे चीतौडके महाराजको उस कठोर प्रतिज्ञाके पाशसे मुक्त कर लिया। मंत्रियोंने महाराजके समीप प्रस्ताव किया कि चीतौडमें हम एक कृत्रिम बूँदी दुर्ग बनाये देते हैं आप सेनासहित उस किलेपर अधिकार कर अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कर लीजिये। सामन्तोंकी सम्मतिसे महाराज शीघ्र ही सम्मत हुए। शीघ्र ही चीतौडमें कृत्रिम बूँदी दुर्ग तैयार हो गया सच्चे बूँदीके किलेमें जितने अंश तथा वह जिस नामसे पुकारा जाता था तथा जो स्थान जिस भावसे स्थित थे शिल्पीदलने अविकल ठीक ज्योंका त्यों किला बनाकर तैयार कर दिया। चीतौडके महाराजके यहाँ पाथर हाडा पठारहाडा जातिकी सेनाका एक दल था कुंभावैरसी उस दलके प्रधान नेता थे। वैरसी शिकार खेलकर लौट रहे थे कि मार्गमें उस कृत्रिम किलेको बनता हुआ देखकर कौतूहलके वशीभूत हो उसके निकट गये वैरसीने सुना कि इस कृत्रिम बूँदीके विना जय किये हुए महाराणा अन्न जल ग्रहण नहीं करैंगे। यह सुनते ही वैरसीके हृदयमें जातीय गौरवकी कामना उदय हुई, उन्होंने कहा कि बूँदीके किलेके कृत्रिम होनेसे भी हम इसकी महाराणाके हाथसे रक्षा करैंगे।

किलेका बनना समाप्त हो गया, राणाके पास समाचार भेजा गया। राणा सेना लेकर उस कृत्रिम किलेपर अधिकार करके अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये आगे

बढ़े । महाराणाने आज्ञा दी थी कि किलेमें सभी सिसोदिया सेना रहकर खाली बंदूकों-का फैर करै, और वह बल प्रकाश करके किलेकी रक्षा करनेमें नियुक्त रहै । परन्तु जैसे ही महाराणा किलेके समीप गये कि वैसे ही उस शब्दके बदलेमें सन् सन् शब्द करती हुई यथार्थ गोली किलेके भीतरसे निकलकर राणाकी सेनादलके ऊपर गिरने लगी । राणाने इस आश्चर्यदायक घटनाकी खोज करनेके लिये किलेके भीतर एक दूतको भेजा । वैरसीने उस मट्टीके बने हुए किलेके द्वारपर दूतने आते ही उससे कहा " कि तुम राणासे जाकर कह दो कि हाडाजातिके इस कृत्रिम किलेको भी सरलतासे जय करके हाडाजातिके मस्तकपर कलंकका टीका नहीं दे सकते । " हाडाजातिके नेता वैरसीने महाराणाके प्रति सम्मान दिखाकर शीघ्र ही उस छोटे किलेके द्वारपर अपनी पगडी बिछाकर किलेपर अधिकार करनेके लिये बुला भेजा । शीघ्र ही प्रबल समर उप-स्थित हो गया । जातिके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये वैरसी और उनके अधीनकी सेनाने घोर पराक्रमके साथ युद्ध करके अन्तमें सभीने उस अगणित सिसोदिया सेनादलके द्वारा आक्रान्त हो अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये जीवन त्याग किये[1] ।

कविने लिखा है कि हिन्दूपति राणाने उक्त प्रकारसे कृत्रिम बूँदीको जय करनेके पीछे फिर यथार्थ बूँदीपर अधिकार कर हामाजीको दंड देने वा पठारसे हाडाजातिको दूर करनेकी अभिलाषा नहीं की, कारण कि उन्होंने यह निश्चय जान लिया था कि हाडाजाति अत्यन्त बलशाली और असीम साहसी है इससे यह विपत्ति आनेपर भली भाँतिसे सहायता करैगी, इसीसे हाडाजातिको असंतुष्ट न किया । वरन् हामाजी जहांतक वश्यता स्वीकार करनेको सम्मत हुए उसीसे महाराणाने भलीभाँतिसे तृप्त होना अपना कर्तव्य जाना ।

वीरश्रेष्ठ हामाजी सोलह वर्षतक बूँदीके सिंहासन पर बैठकर स्वर्गको चले गये । हामाजीके दो पुत्र उत्पन्न हुए नरसिंह और लाला । लालाको खुटकड नामवाला देश मिला, लालाके नोवर्म और जैता नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनके अगणित वंशधर नोवर्मपोता और जैतावत नामसे विख्यात हुए।हामाके बडे पुत्र वरसिंहने बूँदीके राजछत्रके नीचे पंद्रह वर्षतक बैठकर राज्य किया । उनके तीन कुमार उत्पन्न हुए बैरीसाल जवद और तीसरे नीमा । जवदसे तीन शाखाओंकी उत्पत्ति हुई, और नीमाके वंशधर नीमावत नामसे विख्यात हुए । वीरसिंहके बडे पुत्र बैरीसालने एकादि क्रमसे पचास वर्षतक राज्य करके पीछे संवत् १५२६ में प्राण त्याग किये । उनके औरससे निम्नलिखित सात

(१) इतिहासवेत्ता टाड साहब इस स्थानपर लिखते हैं कि फ्रान्सके एक बादशाहका इतिहास इस घटनासे बहुत मिलता जुलता है ।"फ्रांसमें वाइसडी बलुगन"स्थान है उसे मडरिड कहते हैं । जब कि फ्रांसिस १ को राजधानीको लौटनेकी आज्ञा हुई तो उसने " मडरिड " का सर्वनाश करनेकी प्रतिज्ञा की, परन्तु सौभाग्यवश उसका पैरिसमें आ जाना ही बडे आनन्दकी बात थी, अतएव उस समय इसके मंत्रियोंने उसे ऐसी ही सलाह दी थी जैसी कि राणाके मंत्रियोंने राणाको दी ।

पुत्र उत्पन्न हुए। (१) राय भांडा, (२) राव सांडा, (३) अखैराज, (४) राव ऊधो, (५) राव चूडा, (६) समरसिंह और (७) अमरसिंह। टाड साहब लिखते हैं कि पहिले पांच वीरोंसे पाँच वंशोंकी शाखाओंका विस्तार हुआ। परन्तु समर और अमरसिंहने हिन्दू धर्मको छोडकर यवनधर्मको अवलम्बन किया था।

राव भांड दान वीरता और चतुराईके बलसे समस्त रजवाडेमें अपना नाम अक्षय करगये हैं। उनके समान निःस्वार्थ दाता इस समय रजवाडेमें दूसरा नहीं था। संवत् १४४२, सन् १४८६ ई० में जिस समय समस्त राजस्थानमें दुर्भिक्षकी अग्नि प्रबलतासे प्रज्वलित होकर अगणित जीवोंका प्राण संहार करती थी, राव भांडाने उस समय मुक्तहाथसे अन्न और धन दान करके अपनी अक्षय कीर्तिको उज्ज्वल किया था। कविने लिखा है, कि उस समस्त भारतवर्षव्यापी दुर्भिक्ष होनेके एक वर्ष पहिले बूँदीराज रावभांडा स्वप्न देखकर जान गये थे, अर्थात् उन्होंने स्वप्नमें महाकाल पडा हुआ देखा था। उन्होंने स्वप्नमें देखा कि अत्यन्त काले वर्णके भैंसे पर सवार हुआ काल आकर उनके सम्मुख उपस्थित हुआ। रावभांडाने कालको स्वप्नमें देखकर उसी समय ढाल तलवार लेकर कालपर आक्रमण किया। कालने कहा, "धन्य भाँडा! मैं काल हूँ मेरे शरीरमें तुम्हारी तलवारका आघात नहीं लगेगा सृष्टि भरमें एकमात्र तुमहींने साहसमें भरकर मुझपर आक्रमण किया है। इस समय मैं जो कहता हूँ उसे श्रवण करो। मैं संवत् १५४२ में दर्शन दूँगा, समस्त भारतवर्ष मरुभूमि हो जायगा; तुम पाहिलेसे ही धन धान्यका संग्रह करना प्रारम्भ करना और जब दुर्भिक्ष पडैगा उस समय उस धान्यके द्वारा सबकी सहायता करना, कभी तुम्हारा धान्य समाप्त नहीं होगा।" यह कहकर काल उसी समय अन्तर्ध्यान हो गया। राव भांडाने कालकी इस आज्ञा पालन करनेमें शीघ्रतासे यत्न किया। उन्होंने आसपासके प्रत्येक राज्योंसे बहुतसा धान्य संग्रह कर लिया। इस प्रकार एक वर्ष बीत गया। फिर इसी प्रकारसे दूसरा वर्ष व्यतीत हुआ, परन्तु इस वर्षमें वर्षा न हुई इससे शीघ्र ही समस्त भारतवर्षमें महा दुर्भिक्षने आकर दर्शन दिया। राव भांडा पाहिला संग्रह किया हुआ धान्य जौ, गेहूँ, चावल इत्यादि नाज बराबर अनाहारी प्रजाको दान करने लगे। अन्तमें भारतवर्षके दूरवर्ती देशके राजाओंने राव भांडाके निकटसे धान्यकी सहायता मांगी। राव भांडाने उनकी वह कामना पूर्ण करनेमें किंचित् विलम्ब नहीं किया। यद्यपि उस महा दुर्भिक्षके समयमें भारतके अगणित देशोंके बहुतसे मनुष्योंने प्राण त्याग किये परन्तु बूँदी राज्यके सब श्रेणीके मनुष्य राज्यकी सहायतासे दुर्भिक्षके प्रबल कोपसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। राव भांडा के स्मरणके अर्थ आजतक "लंगरका गूदरी" नामसे बूँदीमें दीन दुःखियोंको धान्य वितरण किया जाता है।

यद्यपि राव भांडा परम दयाशील और परोपकारी पुण्यवान राजा थे; परन्तु विधाताने उनके भाग्यमें अन्त समयमें अत्यन्त दुःख भोगना लिखा था। राव भांडाके

दो भाई इनसे छोटे थे समरसिंह और अमरसिंह, यह मुसलमान धर्मका अवलम्बन करनेसे दिल्लीश्वरके प्रियपात्र होकर दिल्लीश्वरकी सहायतासे बूंदीराज्यको जय करनेमें अग्रसर हुए । राव भांडा प्रबल बलशाली होकर भी सम्राट्की शिक्षित सेनाके अधिक होनेसे कुछ न कर सके। शीघ्र ही समर और अमरने बूंदीराज्यको जय कर लिया । यवन धर्मावलम्बी दोनों भ्राताओंके हाथमें बूँदीके पडते ही अन्तमें राव भांडाने मातोंदा नामक स्थानमें जाकर पर्वत शिखरपरसे गिरकर प्राण त्याग दिये, उन्होंने सब मिलाकर इक्कीस वर्षतक राज्य किया था। उक्त समर और अमरने यवन होकर समरकंदी और अमरकंदी नाम धारण कर एक साथ मिलकर ग्यारह वर्षतक बूँदीका राज्य किया था ।

राव भांडा दो पुत्र छोड गये थे, एकका नाम नारायणदास था और दूसरेका नाम नरवद था । नरवद अन्तमें मातोंदा ग्रामके अधीश्वर हुए । नारायणदास उस मातोंदा गाँवमें रहकर जब अवस्थापर पहुँचे तभी इनके वीर हृदयमें पिताके राज्यके उद्धार करनेकी कामना प्रबल हो गई । नारायणदासने शीघ्र ही पठार देशकी समस्त हाडाजातिको इकट्ठा करके कहा, कि हम क्या तो बूँदी राज्यपर अधिकार करैंगे, और नहीं तो रणभूमिमें अपना प्राण त्याग देंगे । सभी हाडा-जातिके प्रत्येक वीरने नारायणदासके समान उक्त प्रतिज्ञाके करनेमें किंचित् भी विलंब नहीं किया । थोडे ही दिनोंकें पीछे नारायणदासने उक्त बूँदीपति दोनों यवन चचाओंके पास कहला भेजा, " कि मैं आपसे साक्षात्कर आपके चरणवंदन करनेकी अभिलाषा करता हूं । " नारायणदास आशिक्षित हैं; और एक सामान्य देशमें रहकर इतने बडे हुए हैं, इस कारण उनसे कुछ अनिष्टकी संभावना नहीं है, यह विचार कर दोनों चचाओंने नारायणदासको बूँदीके महलमें चले आनेमें सम्मति दे दी ।

दोनों विधर्मी चचाओंकी अनुमति पाकर नारायणदास अत्यन्त अल्पसंख्यक परम विश्वासी और महाबली कितने ही अस्त्रधारी अनुचरोंके साथ बूँदी नगरके चौकमें आकर दिखाई दिये । वह अपने सेवकोंको वहाँ ही गुप्तभावसे रखकर इकले महलकी ओरको चले । नारायणदासके दोनों चचा विपत्तिकी कुछ भी आशंका न करके अस्त्र-हीन हुए एक कमरेमें बैठे थे । नारायणदासके हृदयपर प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकर रूपसे प्रज्वलित हो रही थी । इस कारण खड्ग हाथमें लिय हुए उसकी संहारमूर्तिको देखते ही उनके दोनों चचा प्राणोंके भयसे सुरंगके रास्तेसे भाग जानेके लिये बडी शीघ्रतासे कमरेसे चल दिये । नारायणदासने दोनों विधर्मी चचाओंके अभिप्रायको जानकर उसी समय क्रोधित हुए सिंहके समान छलांग मारकर आगे बढे खड्गके प्रहा-रसे अपने चचा समरको पृथ्वीपर गिरा दिया ।उस अवसरमें अमर दूसरे कमरेमें न जा सका था कि इसी अवसरमें नारायणदासने अपने तीक्ष्ण भालेसे अमरके शरीरको बेध दिया । उसी समय वीर नारायणदासने अपने खड्गके आघातसे दोनोंका शिर काटकर उस रुधिरसे भीगे हुए शरीरको बूँदीमें ले जाकर देवीके मंदिरमें देवीके सन्मुख मुंडोंका

उपहार दिया और जयशब्दका उच्चारण कर चौकमें स्थित अपने अनुचरोंको बुला लिया। अनुचरगण पहिले इशारेसे नारायणदासके बुलाते ही नंगी तलवारें लिये हुए नगरमें आये और उन्होंने बडी शीघ्रतासे यवनोंका विध्वंस करना प्रारंभ कर दिया। इस समय नगरवासी प्रत्येक हाडाजातिकी प्रजाने नारायणदासके साथ मिलकर बूँदीमें रहनेवाले प्रत्येक यवन वीरका प्राण नाश करके अवज्ञाके साथ उनके शवोंको नगरकी हद्दसे दूर फेंक दिया। राव नारायणदासने अतुल वीरताके साथ यवनोंका संहार करके अपने पिताकी राजधानी बूँदीपर अधिकार कर लिया था, इसके स्मरणार्थ हाडागण राव नारायणदासने महलके भीतर जिस कमरेमें समरके मारनेके समय खड्गका आघात किया था, तथा उस हत्याके समय कमरेमें स्थित जिस पत्थरपर वह खड्गके आघातसे गिरे थे। दशहरा पर्वोत्सवके समयमें उस आघात चिह्नयुक्त रुधिरसे सने हुए पत्थरकी पूजा की जाती है[1]।

कविके वर्णनसे जाना जाता है कि नारायणदास एक विराट्काय महाबलवान् वीरपुरुष थे। प्राचीन राजपूत वीरोंमें बहुतसे वीर भय किसको कहते हैं; इसको जानते ही नहीं थे। नारायणदासके साथ भी भयका इसी प्रकारका सम्बन्ध था वह कहा करते थे, कि मैं बडा हूँ, विपत्ति छोटी है। वास्तवमें नारायणदासने यौवन समयसे मृत्युतक जैसे असीम साहससे अपने बलविक्रमको प्रकाशित किया था इससे उनका वह गर्व-पूर्ण वचन सत्य बोध होता है, परंतु अत्यंत दुःखका विषय है कि वह असीम साहसी वीर पुरुष होकर भी एकमात्र अधिक अफीमके सेवन करनेसे समय २ पर अपनी सद्गुणावलीको भली भाँतिसे प्रकाशित न कर सके। वरन् उनके उसी व्यसनके कारण एक २ समयपर अत्यन्त अप्रीतिदायक कारण उपस्थित हो जाते थे। नारायणदासके समयमें समस्त रजवाडेमें अफीम सेवनकी रीति अत्यन्त प्रबल हो गई थी। सर्वसाधारण राजपूत एक पैसेके मूल्यकी अफीमको सेवन करते थे। अनभ्यासियोंके पक्षमें उस बूँदी राज्यमें प्रचलित एक पैसेकी अफीमसे प्राण नाश हो जाते थे परन्तु वीर तेजस्वी नारायणदास एक दफेमें सात पैसेकी अफीम खाते थे। इसी कारण अधिक अफीमके सेवन करनेसे अनक प्रकारके अप्रार्थनीय काण्ड उपस्थित हो जाते थे, इसीसे बूँदीमें आजतक नाना भाँतिके प्राचीन प्रवाद प्रचलित देखे जाते हैं।

नारायणदासके समसामयिक राणा रायमल्ल जिससमय चीतौडके सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय मांडू देशके पठानोंने चीतौडपर आक्रमण कर किलेको घेर लिया, पूर्वसंधिके मतसे चीतौडपतिने नारायणदासको सेनासहित सहायता करनेके लिये बुला भेजा, वीरवपु नारायणदासने हाडा सेनादलक मध्यमेंसे ५०० वीरोंको चुन लिया और उन्हींके साथ आप चीतौडकी ओरको चले। बूँदीसे चलकर पहिले दिन मार्गमें विश्राम करनेके लिये नारायणदास एक वृक्षके नीचे नित्य नियमानुसार

(१) कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि बून्दीके प्राचीन महलमें सीढीवाले कमरेके पार्श्वमें उन्होंने वह पत्थरका टुकडा देखा था।

अफीम सेवन कर नेत्रोंको मूँदकर सो रहे थे, और मक्खियाँ आ आ कर उनके मुखमें घुस रही थीं। इसी अवसरमें एक तेलीकी स्त्री कुएँसे जल भरनेके लिये उसी वृक्षके नीचे आकर खडी हुई। उसने नारायणदासको देखकर एक सेवकसे पूछा कि "यह कौन है ?" उत्तर मिला कि, "यही बूंदीके महाराव हैं, चीतौडपतिकी सहायताके लिये वहाँ जा रहे हैं।" इसपर उस रमणीने नारायणदासकी उस अवस्थाको देखकर कहा कि "हा भाग्य ऐसा बोध होता है कि महाराणाको और किसीकी सहायता न मिली जो कि इस नशेखोरकी सहायता माँगी है।" रजवाडेमें इस प्रकारका प्रवाद प्रचलित है कि अफीमके सेवन करनेवाले नेत्र मूंदे रहते हैं, पर जो कुछ बात उनके कानमें कही जाती है उसको वह बडी जल्दी सुन लेते हैं। वास्तवमें उस स्त्रीकी उक्त उक्तिको सुनते ही अधखुले नेत्रोंसे मुख फैलाये हुए उस वीर श्रेष्ठ नारायणदासने शय्यासे उठकर उस स्त्रीके पास जाकर गंभीरस्वरसे पूछा "कि तुम क्या कह रही हो ?" तब वह नारायणदासकी भयंकर मूर्तिको देखकर भयभीत हो क्षमा मांगनेके लिये उद्यत हुई; नारायणदासने कहा कि "कुछ भय नहीं है, क्या कहरही थी सो कहो"। अतः उस स्त्रीके हाथमें एक दीर्घकठिन लोहेका दंड था, नारायणदासने उस दण्डको लेकर दोनों ओरसे पकडकर थोडे बलसे ही झुका कर उस स्त्रीके गलेमें अलंकारके समान पहरा दिया, वह अत्यन्त काठिन लोहेका दंड दोनों ओरसे परस्परमें मिलकर स्त्रीके गलेमें हारके समान पड गया, वीरश्रेष्ठने उसी समय स्त्रीसे कहा कि "मैं जब तक राणाकी सहायता करके न लौट आऊँ तब तक तुम उस लोहेके अलंकारको पहिरे रहना। यदि यवनोंमें ऐसा कोई वीर हो जो कि तुम्हारे गलेमेंसे इसे निकाल सकै तो उससे इसको निकलवा लेना।" वास्तवमें तेलीकी स्त्रीके उस लोहके अलंकारको निकालनेका योग्य पात्र एक नारायणदासके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं था।

जो हो, पठानगणोंने इस समय सेनासहित चीतौडको चारों ओरसे इस प्रकारसे घेर लिया था कि चितौडसे एक प्राणीको भी बाहर होनेकी आशा नहीं थी। बूंदीके राव नारायणदासने पठारके गिरिसंकटमें होकर पांचसौ वीर सेना ले रात्रिके समय हठात् पठानोंके डेरोंमें जाकर शत्रुओंका संहार करते २ पठानोंके सेनापतिके डेरोंमें प्रवेश किया। उनकी उग्र विराट्मूर्ति और हाडासेनादलका वह भयंकर हुंकार और संहार मूर्ति देखकर पठानोंकी सेना महाभयभीत हो डेरोंको छोडकर चारों ओरको भागने लगी। वीर नारायणदास और उनके अधीनके हाडादलने उस समय मनकी साधसे पठानोंका संहार करनेमें कसर न की। पठानोंने चीतौडके घिरते ही भागना प्रारम्भ कर दिया, बूंदीके राजमें नगारे बजने लगे, चीतौडके राजा रायमलने दूसरे दिन प्रातःकाल ही चीतौडके किलेकी दीवारपरसे देखा कि समस्त पठान भाग रहे हैं, और राव नारायणदास सेना सहित आ पहुँचे हैं। महाराणा रायमलने महा आनंदित होकर उसी समय चीतौडसे बाहर जा नारायणदासको बडे आदरभावके साथ ग्रहण कर जयजयकार करते हुए चीतौडमें प्रवेश किया। बूंदीके अधीश्वर नारायणदासके केवल पांचसौ हाडा

सैन्यकी सहायतासे पठानोंको भगानेसे राणाके अधीनके सिसोदिया वीरसामन्त प्रगट रूपसे उनकी वीरताकी ऊँची प्रशंसा करने लगे । शीघ्र ही महलमें नारायण-दासके सम्मानके लिये एक बडी भारी सभा हुई । उस सभामें मेवाडके सभी सामन्तोंने बूंदीके महारावके प्रति सम्मान दिखाया, जिन महावीरकी सहायतासे चीतौडकी रक्षा हुई उन वीरको देखनेके लिये राणाके रनिवासकी स्त्रियाँ परदेके भीतरसे उनकी उस विराट्मूर्तिको देखने लगीं । यद्यपि नारायणदास अफीमको अत्यन्त सेवन करते थे, और अफीम सेवन करनेमें अधिक प्रसिद्ध हो गये थे, यद्यपि उनकी मूर्ति यथार्थ भीमके समान थी, परन्तु राणाके भाईकी कन्याने उन महावीरको पतिरूपसे वरण करनेके लिये सखियोंके सामने अपनी अभिलाषाको प्रकाशित किया । दूसरे दिन यह समाचार राणाके कानमें भी पहुँचा, वीरश्रेष्ठ नारायणदासके द्वारा जिस प्रकारके उपकार हुए हैं, उनकी कृतज्ञता प्रकाश करनेके लिये अपनी भतीजीको उनके करकमलमें अर्पण कर उनका सम्मान बढाना अवश्य कर्त्तव्य है, राणाने यह सिद्धान्त कर लिया । इधर बूंदीके महाराज नारायणदासने भी महाराणाके वंशसे कन्या लेनेमें अधिक सम्मान जानकर शीघ्र ही उस विवाहमें अपनी सम्मति दी, बडी धूमधामके साथ विवाह हो गया । नवीन विवाहिता बहूके साथ वीरश्रेष्ठ नारायणदास गौरवके साथ बूंदीको लौट आये । ऐसा भी प्रसिद्ध है कि वीरश्रेष्ठ नारायणदास दिनपर दिन अधिक अफीम सेवन करते थे और इसी कारणसे नशेकी तरंगमें एक समय उन्होंने रात्रिको मेवाडकी राजकुमारीके अंगको क्षत विक्षत करके उसके अनुपम सौन्दर्यको नष्ट कर दिया था । जब दूसरे दिन प्रातःकाल उन्हें चैतन्यता हुई तो देखा कि मेवाडकी राजकुमारी कुछ भी दुःखित नहीं हुई है और उसने मेरा कुछ भी तिरस्कार नहीं किया है, तब उन्होंने स्वयं अपनेको धिक्कार दिया, और जिस पात्रमें अफीम थी उस पात्रको स्त्रीके हाथमें देकर कहा कि अब मैं किसी प्रकारसे अधिक अफीम सेवन करके ऐसा कुकर्म नहीं करूँगा । इस प्रकारसे वीर तेजस्वी नारा-यणदासने अपने पिताके राज्यको अधिक बढा लिया था, और शांति स्थापन कर बत्तीस वर्ष तक उस राज्यको शासन करके आप स्वर्गको चले गये ।

नारायणदासके स्वर्ग चले जानेपर उनके एकमात्र पुत्र सूर्य्यमल संवत् १५९० सन् १५३० ईसवीमें बूंदीके सिंहासनपर विराजमान हुए, कवि कर्णीदानने इस बातको भली-भांतिसे लिखा है कि सूर्यमल भी अपने पिताके समान दृढ बलिष्ठ और असीमसाहसी पुरुष थे; कवि लिखते हैं कि रामचन्द्र और पृथ्वीराजकी जिस भाँति जानुतक लंबी भुजा थी सूर्यमलकी भी दोनों भुजायें उसी प्रकारसे महावीरोंके समान जानुतक लम्बी थीं ।

सूर्यमल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए, मेवाडके राणाके वंशके साथ फिर एक वैवाहिक सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ राव सूर्यमलने सूजाबाई नामकी अपनी एक भगिनीको चितौडके महाराजा राणा रत्नसिंहके करकमलमें अर्पण किया, और राणा

(१) इस प्रकार लंबी भुजाओंवाले पुरुषको आजानुबाहु कहते हैं ।

रत्नसिंहने भी अपनी बहिनको राव सूर्यमलके करकमलमें अर्पण किया। इस दोनों ओरके विवाह होनेसे मेवाड़के महाराजके साथ बूँदीराजकी दृढ़ आत्मीयता स्थापित हो गई। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि यह आत्मीयता अन्तमें महा शत्रुतामें परिणत हुई। कवि लिखते हैं कि राव सूर्य्यमल अपने पिता नारायणदासके समान अत्यन्त अफीमची थ। एक समय राव सूर्यमल चीतौडकी राजधानीमें जाकर राजसभामें अधिक अफीम सेवन करनेसे नेत्रोंको मूँदे हुए बैठे थे। कि इसी समयमें मेवाडके पूर्वदेशके एक सामन्तने सूर्यमलको सोया हुआ जानकर हँसीसे इनके कानमें एक तिनका कर दिया। तुरन्त ही सूर्य्यमलने अपने दोनों नेत्र खोले और क्रोधित हुए सिंहके समान उठकर अपनी तलवारके एक ही आघातसे उस सामन्तके शिरके दो खंड कर दिये। उस मृतक सामन्तके पुत्रके हृदयमें बदला लेनेकी अग्नि प्रबलतासे भडक उठी। परन्तु सूर्यमलके अत्यन्त बलशाली वीर और महाराणाका परम आत्मीय जानकर उस समय उसने किसी भांति भी बदला लेनेका साहस न किया, परन्तु उसी समयमें उसके मनही मनमें प्रतिहिंसाकी अग्निप्रबल होन लगी। मृतकसामन्तके पुत्रने सबसे पहिले सूर्यमलके प्रति महाराणा रत्नसिंहके विजातिय कोपको उत्तेजित करनेके लिये चेष्टा की। उसने राणा रत्नसिंहसे कहा कि "सूर्यमल केवल अपनी भगिनी सूजाबाईके साथ साक्षात् करनेकी इच्छासे आपके रनिवासमें नहीं गये हैं, उनके हृदयके भीतर अवश्य ही अन्य कोई दुरभिसंधि है।" पिछली एक घटनासे राणाके हृदयमें वह कथा प्रबलरूपसे अंकित हो गई।

सुन्दरी सूजाबाईने अपन स्वामी और भ्राताको परितोषरूपसे भोजन करानेके लिये स्वयं अनेक भांतिके व्यंजन बनाकर दोनोंको भोजन करनेके लिये रनिवासमें बुला भेजा। राणा रत्नसिंह और सूर्य्यमल रनिवासमें भोजन करनेके लिये गये, सूजाबाई दोनोंको भोजन परोस कर स्वयं व्यंजन करनेके लिये बैठी। राजपूतानेमें नारीकुलमें सभीने जिस वंशमें जन्म लिया है वह पतिके वंशकी अपेक्षा उस पिताके वंशके गौरव और सम्मानकी रक्षा करना मुख्य जानती हैं। पिताके कुलकी यदि कोई निन्दा करने लगे, तो वह उसको कदापि सहन नहीं कर सकती। इसीसे पहिलेसे ही राजवाडोंमें अनेक अनिष्ट होते आये हैं। जब राणा और राव दोनों भोजन कर चुके तब सूजाबाईने व्यंग वचनसे कहा, कि "हमारे भ्राताने सिंहके समान भोजन किया है, परन्तु मेरे स्वामीने तो मानों बालकके समान अन्न और व्यंजन लेकर खेल किया है"। जैसे ही राणाने यह वचन सुने कि वैसे ही वह अपने मनमें अत्यन्त क्रोधित हुए। उन्होंने समझा कि मानों उनके

(१) यह बात असंगत मालूम होती है। पहिले तो जब राणारायमलकी भतीजी नारायणदासको व्याही गई थी तब नारायणदासकी पुत्री सूजाबाईका व्याह राणा रत्नसीके साथ होना अनुचित है फिर हिंदूशास्त्रका राजपूतरीतिके अनुसार यह तो और भी अयोग्य सम्बन्ध है कि राणा रत्नसी भी अपनी बहिन सूर्य्यमलको व्याह दें। इसमें कवियोंकी कुछ गड़बड़ अवश्य है और विदेशी होनेके कारण टाड साहब इस बातको समझ नहीं सके।

अपमानके लिये ही रानी सूजाबाई और राव सूर्यमलने इस प्रकारसे व्यंग किया है। यह अनुभव कर वह प्रतिहिंसाका बदला लेनेके लिये उत्तेजित हुए।परन्तु राजपूतजातिके पक्षमें अतिथिके प्रति अभद्र आचरण वा उसका जीवन नाश करना महाकलंककारी जानकर राणाने उस समय उनसे बदला नहीं लिया । कुछ ही दिनके पीछे इस रहस्यसे ही सूजाबाई अकालमें इस लोकको छोडकर परलोकवासिनी हुई; और राव सूर्यमल भी मारे गये । और इसी काण्डकी प्रतिक्रियास्वरूपमें राणा रत्नसिंहने स्वयं भी प्राण त्याग किये ।

राव सूर्यमल चीतौड़से बिदा होकर बूँदीको जानेके लिये तैयार हुए तब राणा रत्नसिंहने सूर्यमलसे कहा कि "आगामी वसन्तऋतुमें फाल्गुनोत्सवके समयमें हम बूँदीके वनमें शिकार खेलनेके लिये आवैंगे।" राव सूर्यमलने यह सुनकर आनंद प्रकाश कर राणाको निमंत्रण भेजा । कुछ दिनके पीछे फाल्गुनोत्सवके आनेपर राणा रत्नसिंह अपनी सेना और सामन्तोंके साथ पठारके मार्गसे बूँदीकी ओरको चले । चम्बल नदीके पश्चिम किनारे नान्दता नामक स्थानके गहनवनमें मृगया की जायगी पहिले यह निश्चय हो गया था । उस वनमें अगणित पशु थे, सिंहसे लेकर सामान्य खरगोशतक रहते थे । राणाके वहाँ पहुँचते ही बूंदीके अधीश्वर राव सूर्यमल भी सेनासहित उनसे आ मिले । तुरन्त ही दोनों महाराज सेनासहित मृगया करनेके लिये बाहर चले । सबसे पहिले सेनादल दो भागोंमें विभक्त होकर आगे २ भयंकर नादसे चीत्कार करते हुए जंगलमें जाने लेंग। उनके उस भयंकर स्वरसे तथा ताडनासे सिंह व्याघ्र, भालू अनेक जातिके मृग; नीलगाय, शृगाल, खरगोश और छोटे २ बनके कुत्ते शीघ्र ही व्याकुल होकर चारों ओरको भागने लगे। राजपूतवीर उस भयंकर हिंसक जन्तुओंसे युक्त गहन वनमें जाकर महा आनंदित हुए ।

उसी सघन वनमें कापुरुष राणा रत्नसिंहने अपनी पहिली प्रतिहिंसाको सफल करनेकी चेष्टा की । दोनोंके अधीनकी सेना दो भागोंमें विभक्त होकर वनके दोनों ओरसे पशुओंको भगाने लगी । और दोनों राजा वनके अन्य प्रान्तमें इस प्रकारके स्थानमें घोडेपर खडे हुए कि भागे हुए सभी पशु उनके सम्मुखसे निकलैं । उस समय दोनों राजाओंके साथ केवल दो दो चार २ सेवक थे; पाठकगणोंको स्मरण होगा कि बूँदीके रावके कानमें तिनका देनेसे उन्होंने मेवाडके पूर्वदेशके एक सामन्तकी हत्या की थी और उस सामन्तपुत्रने बदला लेनेके लिये मनही मनमें दृढ़ प्रतिज्ञा की थी । इस घटनास्थलमें राणा रत्नसिंहके साथ वह सामन्त पुत्र भी उपस्थित था । राणा रत्नसिंह उस सामन्तपुत्रको बुलाकर बोले कि "समय आ गया है वराहका शिकार करिये" । कुछही समयके पीछे उस सामन्तपुत्रने धनुष खैंचकर तीव्र वेगसे राव सूर्यमलकी ओरको एक बाण छोडा, परन्तु तीक्ष्णदृष्टि राव सूर्यमलने उसकी ओरसे बाण आता हुआ देखकर उस बाणको अपने धनुषसे बाण छोडकर व्यर्थ कर दिया । उन्होंने उस समय भी यह नहीं विचारा कि बदला लेनेके लिये राणा और उक्त सामन्तपुत्रने

षड्यंत्र करके इस बाणको छोडा है। परन्तु प्रथम बाणको व्यर्थ हुआ देखकर राणाके धाभाई (धात्री) पुत्रने सूर्यमलकी ओर दूसरा बाण छोडा; तब तो सूर्यमल चैतन्य हो गये, और उन्होंने समझा कि हमारा प्राण नाश करनेके लिये इस षड्यंत्र जालका विस्तार हुआ है। राव सूर्यमलके उस दूसरे बाणको व्यर्थ न करते २ कापुरुष राणा रत्नसिंहने घोडेको शीघ्रतासे आगे बढा बूंदीके अधीश्वर राव सूर्यमलको खांडेके आघातसे पृथ्वीपर गिरा दिया। भलीभाँतिसे घायल होकर राव सूर्यमलने पृथ्वीपरसे उठ अपने घावोंपर पट्टी बाँधी। बदला भलीभाँतिसे ले लिया है यह विचार कर राणा उसी समय उस स्थानको छोडनेके लिये उद्यत हुए, राव सूर्यमल उसी अवस्थामें सिंहके समान शब्दसे बोले "भागते क्यों हो! निश्चय जान लो कि अब मेवाडका पतन बहुत पास आ गया है।" राणाने इनकी बातपर कुछ भी ध्यान न देकर शीघ्रतासे घोडा चला दिया, पूर्वोक्त सामन्तपुत्रने उनके पीछे २ जाकर कहा "अभी कार्य सम्पूर्णतासे शेष नहीं हुआ है, राव सूर्यमल अभी जीवित हैं।" तुरन्त ही कायर पुरुषोंके समान राणा रत्नसिंहने घोडेपरसे गिरे हुए सूर्यमलकी ओरको अपना घोडा चलाया, राणाने सम्मुख आकर जैसे ही फिर सूर्यमलके प्राण नाश करनेके लिये दूसरी बार खड्ग उठाया कि वैसे ही क्रोधित हुए सिंहके समान घायल सूर्य्यमलने अन्तिम बलके साथ उठकर राणाके पिछले भागको पकडकर बडी शीघ्रतासे उनको घोडेपरसे पृथ्वीपर गिरा दिया; बहुत देरतक दोनों वीरोंकी कुश्ती होती रही फिर कुछ ही समयके पीछे राणाके वक्षस्थलपर बैठकर वीर तेजस्वी सूर्यमलने एक हाथसे तो राणाका गला पकडा और दूसरे हाथसे अपनी कमरमेंसे तलवार निकाली, देखो, कैसा बदला लिया कि कुछ ही समयके बीचमें घायल हुए राव सूर्यमलने हत्याकी अभिलाषा करनेवाले राणा रत्नसिंहके हृदयमें अपनी उस तीक्ष्ण धारवाली तलवारको घूँस दिया। राणाका प्राणपक्षी तुरन्त ही उड गया। यद्यपि वीर सूर्यमलकी प्रतिहिंसा सफल हो गई थी परन्तु उन्होंने उसी समय शत्रुके मृतक शरीरके ऊपर गिरकर प्राण त्याग कर दिये।

कवि लिखते हैं कि "शीघ्र ही यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद बूंदी नगरके रनिवासमें जा पहुँचा। वीरश्रेष्ठ राव सूर्य्यमलकी माता पुत्रके मृतक होनेका समाचार सुनकर वीरांगनाओंके समान बोली, "क्या सूर्य हत हो गया है? क्या वह इकला ही मृतक हुआ है, अवश्य ही किसी शत्रुके प्राण लेकर वह इस संसारसे बिदा हुआ होगा।" रानी जिस समय वीरमाताके समान यह वचन कहने लगी थी, इस समय असीम मातृस्नेह उद्वेलित हो गया, और उसके दोनों स्तनोंसे दूध निकल कर प्रबलवेगसे पृथ्वीको प्लावित करने लगा"।

रानी केवल पुत्रके मारे जानेका समाचार सुनकर अधीर हो गई थी और पुत्र शत्रुका संहार न कर सका यह विचार कर स्वामीवंशको कलंकित होता हुआ देखकर अपने मनमें अत्यन्त दुःखित हुई थी, परन्तु उसी समयमें एक मनुष्यने रनिवासमें जाकर वृद्धारानीसे कह दिया कि राव सूर्यमलने अपने शत्रु राणा रत्नसिंहके प्राण

नाश कर अपना बदला लिया है । यह सुनते ही वीरमाताका हृदय उसी समय आनंदसे भर गया । कुछ ही समयके पीछे बूंदी राज्य और चीतौडके राज्यमें फिर शोचनीय वियोगान्त अभिनय हो गया । राव सूर्यमलने राणा रत्नसिंहकी भगिनीका पाणिग्रहण किया था । उन दोनों राजबालाओंने मृतक पतियोंके साथ प्रज्वलित चितानलमें अपने जीवनकी आहुति दी । बूँदीके महाराज और चीतौडके महाराज जिस स्थानपर मारे गये थे, उसी स्थानपर दोनोंके समाधि मंदिर बनाये गये, तथा सूजाबाईका समाधिमंदिर शिखरके ऊपर स्थापित हुआ । इस स्थानका दृश्य जैसा परम रमणीय है उक्त समाधिमंदिर भी उसी प्रकारसे हृदयमें इस वियोगान्त अभिनयकी विचित्र स्मृतिको जागृत करता है ।

वीर तेजस्वी सूर्य्यमलके मारे जानेपर उनके पुत्र सुरतान संवत् १५९१, सन् १५३५ ई०में बूंदीके सिंहासनपर विराजमान हुए । मेवाडके शक्तावत सम्प्रदायके आदिपुरुष शक्तसिंहकी एक कन्याके साथ सुरतानका विवाह हुआ था । इसी समयमें बूंदीराज्यमें तांत्रिक शैवियोंका भयानक प्रादुर्भाव हुआ । बहुतसे राजपूत उन तांत्रिकोंके दलमें नियुक्त होकर रणदेव महाकालभैरवकी उपासनामें नियुक्त हुए तांत्रिक अनुष्ठानावली जिस प्रकार महाभीतिदायक लोमहर्षणकारी थी, उसी प्रकारसे वह नरबलिदानको एक साक्षात् नरपिशाचके समान समाजके भयस्वरूप गिने जाते थे । राव सुरतानने स्वयं तांत्रिक दलमें मिलकर महाकाळ भैरवके मंदिरमें अपनी प्रजाका बलिदान करना आरंभ किया, इसके सामन्त तथा उनकी प्रजावर्ग सभी उनसे अप्रसन्न हो गये, और सभीने एकताका अवलम्बन करके शीघ्र ही उनको सिंहासनसे रहित कर दिया । सूरतानको चम्बलके किनारे एकमात्र छोटासा ग्राम रहनेके लिये मिला, उन्होंने उस ग्रामका नाम सुरतानपुर रक्खा । राव सुरतानके कोई पुत्र नहीं था, इस कारण बूँदीके सामन्तोंने परामर्श करके बूँदीके पूर्वतन अधीश्वर राव भांडाके दूसरे पुत्र नरबुधके ज्येष्ठ तनय अर्जुनको मातोंदासे बुलाकर बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त किया ।

राव अर्जुन बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर नियमसहित राज्य पालन करने लगे । हाडाजातिके पूर्ववर्ती राजाओंके समान राव अर्जुन भी महाबलशाली और असमि साहसी वीर पुरुष थे । राजपूतोंमें एक समय कैसा महानुभाव विराजमान था यदि भारतवासियोंमें किसी कुटुम्बके साथ अन्य परिवारकी शत्रुता होगई, तब हम वंशानुक्रमसे उस शत्रुको पोषण कर एक दूसरेका अनिष्ट करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि न करेंगे । परन्तु चित्तौडके महाराणा रत्नसिंह और बूंदीके महाराज राव सूर्यमल परस्परके वैरभावसे ही एक दूसरेके द्वारा मारे गये । राव अर्जुन और रत्नसिंहके पुत्र नवीन राणा परस्परकी उस शत्रुताको भूलकर सद्भावके सूत्रमें बँध गये । गुजरातके बहादुर शाहने जिससमय चीतौडको घेरलिया था, उस समय जिस हाडाजातिके अधीश्वर चीतौडपतिकी सहायताके लिये सेनासहित उस युद्धमें लिप्त थे, और जो सेना चीतौडके

किलेके एक बुर्जकी रक्षामें नियुक्त होनेके समय शत्रुओंकी गोलीसे भस्मीभूत हो गई थी, मेवाडके इतिहासमें उसका वर्णन हो चुका है। यह राव अर्जुन ही वह असीम साहसी हाडाराज थे। यह राव अर्जुन ही जिस समय प्रबल पराक्रमके साथ चीतौडके एक बुर्जकी रक्षामें नियुक्त थे, उस समय बहादुरशाहने बुजर्के नीचेके भागमें सुरंग लगवाई; और उसके भीतर बारूद भरकर आग लगा दी। राव अर्जुनने सम्मुख विपत्तिको आया हुआ देखकर कहीं न जाकर नंगी तलवार हाथमें ले वहीं प्राण त्याग दिये। हाडा कविने वीरश्रेष्ठ अर्जुनकी वीरताकी अत्यन्त ही प्रशंसा की है। मेवाडके कवियोंने भी उस वीरकी कीर्तिको कीर्तन करनेमें त्रुटि नहीं की है। कवि लिखते हैं,-

सोर[1] कियो बहुजारे। धर परवत आडी खिला ॥
तैं काटी तलवार। अधिपतिया हाडा अजों[2] ॥

इसका अर्थ यह है कि अर्जुनने उस सुरंगसे निकली हुई अनलराशिमें एक पत्थर को रख उसपर बैठकर तलवार निकाली, समस्त जगत्में उनका वह स्वर्गारोहण, अत्यन्त आश्चर्यके साथ देखा।

अर्जुनके चार पुत्र उत्पन्न हुए, इनमें सबसे बडे सुरजन संवत् १५९८, सन् १५५५ ई० में पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए।

तीसरा अध्याय ३.

राव सुरजनको रणथंभौरके किलेकी प्राप्ति-बादशाह अकबरका उक्त किलेको घेरना-विचित्र उपायसे अकबरका उक्त किलेमें प्रवेश-राव सुरजनका बादशाहको उस किलेका देना-राव सुरजनका अकबरकी अनुगतयता स्वीकार करना-संधिबंधन-अकबरका सुरजनको राव राजाकी उपाधि देना-गोंडवानाको जय करनेके लिये सुरजनका जाना-जयप्राप्ति-बादशाहका सम्मान प्रदान-राव भोजका अभिषेक-अकबरका गुजरातको जय करना-हाडाराज भोजका सूरत और अहमदनगरको जीतनेके समय महावीरता प्रकाश करना-भोजका अपमान-राव रतन-सम्राट् जहांगीरके विरुद्धमें विद्रोह-राव

---

(१) सोर शब्दका अर्थ "बारुद" है।

(२) कविने छन्दके सुभीतेके लिये अर्जुन * शब्दको अज कहकर लिखा है।

* अर्जुनके दूसरे पुत्रका नाम रामसिंह था, इनके वंशधर राम हाडानामसे विख्यात थे। चौथे पुत्रका नाम अखैराज था, इनके वंशके अखैराज पोता नामसे विख्यात हैं, छोटे कुमारका नाम कांदल था उनके वंशज जसाहाडा नामकी सम्प्रदायसे विख्यात है।

रतनका विद्रोहियोंको पराजित करना—हाडावर्तीका विभागकरण—माधवसिंहको कोटेराज्यकी प्राप्ति—राव रतनका प्राणनाश—उनके उत्तराधिकारी गोपीनाथकी हत्याका वृत्तान्त—राव छत्रशालका अभिषेक—छत्रशालको आगरेके शासनकर्ताकी पदप्राप्ति—दक्षिणमें गमन—दौलताबादके किले पर अधिकार—गुलबरगा—धामूनी—शाहजहांके पुत्रोंमें युद्ध—हाडाराजका विश्वासपालन—उज्जयनी और धौलपुरका युद्ध—छत्रशालकी विषम वीरताका प्रकाश करना—छत्रशालकी मृत्यु—राव भावसिंहका अभिशेक—बूँदीपर आक्रमण—बादशाहकी सेनाकी पराजय—राव भावसिंहका फिर बादशाहकी कृपापाना—उनका औरंगाबादके शासनकर्ता पदपर नियोग—उनकी मृत्यु—राव बुधसिंहका जाजौ नामक स्थानमें समर—कोटाराजकी मृत्यु—राव बुधसिंहका वीरता प्रकाश करना—बहादुरशाहके पक्षमें जयप्राप्ति—बूँदीराजकी राजभक्ति—भागजाना—आमेरराजके साथ विवाद—विवादका कारण—आमेरराजकी ऊँची आशा—आमेरराजका षड्यंत्र—समर—राव बुधसिंहका भागना—कोटेराजका बूँदीके बहुतसे देशोंको अपने अधिकारमें करना—बुधसिंहकी मृत्यु—उनके दो पुत्र।

राव सुरजनसिंहके अभिषेकके समयसे बूंदीकी राजनैतिक अवस्था बदल गई। बूंदीके महाराज इतने दिनोंतक अपने राज्यमें सब प्रकारसे स्वाधीनताको भोगते आये थे; कोई भी किसी राजाके अधीनकी जंजीरमें नहीं बंधा, केवल स्वजातीय और आत्मीय जानकर उन्होंने मेवाडके महाराणाके प्रति सम्मान दिखाया था, और महाराणाके विपत्तिमें पडनेपर वे सेनासहित उनकी सहायता करते थे। परन्तु राव सुरजन पिताके सिंहासनपर विराजमान होकर अपने पूर्वपुरुषोंके समान केवल बूँदीराज्यमें ही नहीं, एक मात्र रजवाडेमें ही नहीं, वरन समस्त भारतसाम्राज्यमें राजनैतिक अभिनय करनेके लिये सबसे पहिले अग्रसर हुए। उनके समयसे बूँदीके राजवंशने यवनशासनके समयमें भारतसाम्राज्यमें राजनैतिक क्षेत्रमें ऊंची प्रशंसाके साथ अपने वंशके गौरवकी गरिमाको और बूँदीके सामर्थ्यकी प्रतिपत्तिको धीरे २ बढा लिया था।

बूँदीके राजवंशकी कनिष्ठ शाखामें उत्पन्न सामन्तसिंह नामक एक सामन्त इस समय बूँदीराज्यका विशेष विख्यात मनुष्य था। सेरशाहका शासन लुप्त होनेके पीछे उक्त सामन्तने बैदलाके चौहान सामन्तके साथ मिलकर रणथंभोर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध किलेके अफगान शासनकर्ताओंके किलेको छोड देनेके लिये पत्र लिखा। अफगान शासनकर्ताने विशेष चिन्ता करनेके पीछे शीघ्र ही उस किलेको सामन्तसिंहके हाथमें अर्पण कर दिया। सामन्तसिंहने राव सुरजनसिंहको वह किला दे दिया। बूँदीराजके अधीनमें ऐसा अभेद्य और प्राचीन प्रसिद्ध किला उनके अधीनके भूखंडमें दूसरा नहीं था। इस कारण राव सुरजनसिंहने उस देश और किलेको पाकर सामन्तसिंहसे विशेष तुष्ट हो उनको नगरके निकट भूवृत्तिदान की। सामन्तसिंह एक महाबलशाली वीर थे उनके वंशधर उनके नामसे सामन्त हाडा नाम प्रसिद्ध हैं।

बेदलाके जिन चौहान सामन्तोंने उक्त किलेको लेनेके समयमें विशेष सहायता की थी, उन्होंने राव सुरजनके समीप यह प्रस्ताव किया कि राव सुरजनको मेवाडके अधीनरूपसे उक्त किलेकी रक्षा करनी होगी। राव सुरजनने इसमें सम्मत होकर रणथंभोरके किलेपर अधिकार कर लिया। यह रणथंभोरका किला और उसके

अधीनके देशके बहुतसे पुरुष अजमेर राज्यके अधीनमें थे, चौदहवीं शताब्दीमें वीसलदेव-के वंशमें उत्पन्न महाबीर हमीरके शासनसमयमें यह किला उनके पाससे प्रबल युद्धके पीछे छीन लिया गया था। इस समय वही किला उक्त प्रकारसे उस चौहानजातिके हस्तगत हो गया।

मुगल कुलतिलक अकबरने भारतके सिंहासनपर विराजमान होकर इस प्राचीन किले तथा रणथंभोरपर अधिकार करनेके लिये विशेष अभिलाषा कर स्वयं सेना-सहित उस किलेको जा घेरा। वीर तेजस्वी सुरजनने अपने असीम बलविक्रमको प्रकाश करके यवन बादशाहकी अगणित सेनाके आक्रमणसे उस किलेकी रक्षा की थी। बादशाह अकबर कुछ कालतक सेनासहित उक्त अभेद्य किलेकी दीवारोंको विध्वंस करते रहे, अंतमें जब देखा कि इसमें प्रवेश करनेका कोई उपाय नहीं है और राव सुरजनने भी आत्मसमर्पण करनेके कुछ चिह्न न दिखाये; तब यह हतउद्योग हो गये। और कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत किये; तब आमेरके महाराजा भगवान् दासने तथा उनके पुत्र मानसिंहने इस समय दिल्लीके बादशाह अकबरकी अनुगत्यता स्वीकार की; और इसी समय भगवानदासने अकबरको अपनी एक कन्या देकर राजपूतजातिके पवित्र रुधिरको कलंकित कर दिया।

बादशाह अकबर किसी प्रकार भी रणथंभोरपर अधिकार न कर सके। मानसिंह अन्य उपायसे राव सुरजनको चीतौडपतिकी अनुगत्यता छुटाकर उक्त किलेको बादशहको अर्पण करनेके लिये तैयार हुए। यदि प्रबल शत्रु भी अतिथ्यकी प्रार्थना करता तो राजपूत जाति प्राणतक देकर उसके अतिथिसत्कारमें तथा आश्रय देनेमें किसी प्रकार-की कसर न करती। मानसिंहने राव सुरजनसे आतिथ्यकी प्रार्थना की, बूँदीके महाराजने उनको स्वजातीय राजपूत और राजवंशधर जानकर बिना कुछ कहे सुने रणथंभोरके किलेमें बुला लिया[2]। बादशाह अकबरने कपटभेष धारण कर साधारण अनुचरोंके समान सोंटा हाथमें लिये मानसिंहके साथ विना बाधाके उस किलेमें प्रवेश किया। मानसिंह किलेमें जाकर जिस समय राव सुरजनके साथ बातचीत कर रहे थे, उस समय राव सुर्जनके चाचाने कपटभेषधारी अकबरको पहिचान लिया और तुरन्त ही उनके हाथसे सोंटा छीनकर उनको एक ऊंचे सिंहासनपर बैठाया। धीरचेता अकबरने उसी समय सुरजनको बुलाकर कहा, "राव सुरजन! इस समय क्या करना उचित है?" राजा मानसिंहने राव सुरजनसे कहा कि "आप चीतौडपति राणाकी अधीनता छोडकर रणथंभोरके किलेको बादशाहके करकमलमें अर्पण कीजिये। आपको बादशाहकी

(१) प्रसिद्ध चँदकविके एक वंशधरने उक्त हमीरकी वीरता प्रकाशक एक महाकाव्य लिखा है, वह काव्य हमीर रासा नामसे विदित है।

(२) हाडा जातिके कविने इस स्थानपर मानसिंहको कलियुगकी प्रतिकृतिरूपसे वर्णन किया है, वह लिखते हैं कि मानसिंहने यवन सम्राटकी अनुगत्यता स्वीकार की थी, और उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधन होनेसे राजपूतोंके पवित्र चरित्र और सामाजिक आचार व्योहार बदल गये थे।

वश्यता स्वीकार करते ही महा ऊँचा सम्मान प्राप्त होगा। आपको ५२ देशोंके शासन-कर्ताका पद दिया जायगा, आप उन सब देशोंकी समस्त आमदनीको उपभोग करैंगे, बादशाह उस आमदनी और खर्चका कोई हिसाब आपसे नहीं लेंगे, परन्तु नियमित-रूपसे आपको समस्त सेनाके साथ बादशाहकी आज्ञा पालन करनी होगी। इसके अतिरिक्त आप और जो कुछ न्यायसंगत प्रार्थना करैंगे, बादशाह उसको पूर्ण करनेके लिये तैयार हैं" वास्तवमें राजा मानसिंहने बादशाहकी ओरसे जो अनेक प्रकारके लोभ दिखाये उनको अवश्य ही ऊंचा कहना होगा। शीघ्र ही उस स्थानपर संधिपत्र लिखना प्रारंभ हुआ। बादशाह अकबरने उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये। उस संधिपत्रका सारा मर्म नीचे लिखा गया है, पाठक इसको पढ़कर भली भांतिसे जान जायँगें कि राव सुर्जनने किस प्रकारके उपायसे जातीय स्वाधीनता और अपने स्वत्वकी रक्षा की थी।

संधिपत्रकी पहिली धारा—कि बूंदीके राजा किसी समय भी दिल्लीके सम्राट् वंशको कन्या नहीं देंगे।

दूसरी धारा–जिजियाकर नहीं दिया जायगा।

तीसरी धारा–बूंदीके महाराजको बादशाह कभी भी अटकके बाहर युद्ध करनेके लिये न भेज सकैंगे।

चौथी धारा–नौरोजा पर्वके उपलक्षमें दिल्लीके बादशाहके महलमें जो मीनाबाजार नामकी समिति है, और उस समितिमें जो राजपूत राजा तथा सामन्तोंकी अंत:पुरवा-सिनी स्त्रियोंको भेजनेकी विधि है, बूंदीके अधीश्वर, और उनके अधीनके सामन्तोंकी अंत:पुरवासिनी स्त्रियोंको उस मीनावाजारमें नहीं बुलाया जायगा।

पांचवीं धारा–बूंदीके महाराज दीवान हाथमें हथियारोंसे सजे हुए जा सकेंगे।

छठवीं धारा–उनके पवित्र देवस्थानोंपर कोई व्याघात न किया जायगा।

सातवीं धारा–बूंदीके अधीश्वर और उनके अधीनके सामन्त किसी समय सेनाके साथ किसी हिन्दूराजाके अधीनमें नियुक्त नहीं हो सकेंगे।

आठवीं धारा–सम्राट्के अधीनस्थ राजाओंकी अश्वारोही सेनादलके अश्वोंपर जो बादशाहका चिह्न अंकित किया जाता है बूंदीके अश्वारोहियोंके अश्वोंपर उस प्रकारका चिह्न नहीं दिया जायगा।

नौवीं धारा–जब बूँदीके महाराज दिल्लीमें जायँगे तो दिल्लीके राजमार्गसे तथा महलके लाल दरवाजे तक नगाडे बजनेके साथ २ जा सकैंगे।

दशवीं धारा–बूँदीके महाराज जिस समय बादशाहके सम्मुख जायँगे उस समय वह घुटने झुकाकर सम्मान नहीं दिखावैंगे।

उपरोक्त संधिपत्रके तैयार हो जानेपर बादशाह अकबरने राव सुरजनको पुरस्कारस्वरूपमें हिन्दुओंके पवित्र तीर्थक्षेत्र काशीधाममें एक महल बनानेकी आज्ञा

(१) कर्नल टाड साहबने बूँदीके राव राजाके द्वारा लिखे हुए जिस इतिहासको पाया था। उन्होंने उसीका अविकल अनुवाद इस स्थानपर किया है, पिछले समस्त अंश रावराजाके द्वारा लिखे हुए हैं।

दी। हिन्दूराजाओंके पक्षमें तीर्थक्षेत्रमें रहनेके लिये अज्ञानकी प्राप्ति कोई सामान्य नहीं थी। राव सुरजनके पितृपुरुष अबतक मेवाडपति राणाकी अनुगत्यता स्वीकार करते आये थे, राव सुरजनने इतने दिनोंके पीछे उस अनुगत्यताकी जंजीरको खोलकर यवन बादशाहकी अधीनता स्वीकार की। वास्तवमें इस समय प्रबल प्रतापशाली अकबरके प्रचण्ड शासनसे मेवाडपति वीरोंमें शिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह राज्यसे रहित होकर वनमें निवास करते थे। इस कारण राव सुरजनने उनकी उस दुर्गतिको देखकर मुगलबादशाहकी सहायतासे अपने भाग्यके सूर्यको उदय कर भविष्यके वंशधरोंके गौरवकी गरिमाका मार्ग साफ कर दिया, बूँदीके अधीश्वरगण यहाँतक केवल " राव " की उपाधि धारण करते आये थे। किन्तु इस समय बादशाह अकबरने सुरजनको " रावराजा " की उपाधिसे विभूषित किया। राव राजा सुरजन इसी समयमें राजनैतिक क्षेत्रमें प्रशंसनीय अभिनय करनेके लिये प्रवृत्त हुए।

सम्राट् अकबरने सबसे पहिले रावराजा सुरजनको सेनासहित सेनापति पदपर वरण कर गौडपतिको दमन करके उनके वासस्थान गोंडवाना देशको जय करनेके लिये भेजा। वीरश्रेष्ठ सुरजनने बलशाली हाडादलके साथ प्रबल युद्धके पीछे गोंडवानापर आक्रमण कर गोंडोंकी राजधानी वाडीपर अधिकार कर लिया। उस गोंडवानाके जयके चिह्नस्वरूपमें राव सुरजनने उक्त राजधानीमें अपने नामसे " सुरजनपोल " नामका एक बडा दरवाजा बनवा दिया। वह आज भी उसी नामसे पुकारा जाता है। गोंडवानाकी जयके पीछे राव सुरजन गोंडोंके प्रधान २ नेताओंको बंदी करके सम्राट् अकबरके सामने ले गये। परन्तु उन्होंने दयालुचित्तसे उनको मुक्तिदान तथा राज्यके कितने ही अंश प्रदान करनेके लिये बादशाहसे अनुरोध किया, शीघ्र ही उनकी प्रार्थना पूर्ण की गई। राव सुरजनने उक्त पहिले युद्धमें प्रशंसनीयरूपसे जय प्राप्त की इससे बादशाह अकबरने उनसे अत्यन्त संतुष्ट होकर उनको पवित्र तीर्थ वाराणसी और चुनार यह दो स्थान तथा और भी पाँच देशोंका अधिकार दिया। संवत् १६३२, सन् १५७६ ई०-में अर्थात् जिस वर्षमें मेवाडके राणा प्रतापने शाहजादा सलीमके[1] विरुद्ध हलदी घाटीपर चिरस्मरणीय महायुद्ध उपस्थित किया था, उसी वर्षमें राव सुरजनको यह पुरस्कार मिला।

रावराजा सुरजनने नवप्राप्त वाराणसीधाममें रहकर इस प्रकारके नियमसे शासनकार्य चलाया कि क्या प्रशंसा करें, ऐसी दया, ऐसे विचार और उदारताके साथ शासनकार्यकी रीति नियत की कि उससे समस्त हिन्दूजातिका महा उपकार हुआ। एक ओर तो हिन्दूधर्मके प्रति अत्याचार लोप हो गये और दूसरी ओर हिन्दू निश्चिन्त भावसे रहने लगे। पहिले इस देशमें चोर और डाँकुओंका भयानकरूपसे प्रादुर्भाव था,

(१) शाहजादा सलीम इस लडाईमें नहीं था। उस समय उसकी अवस्था केवल छः वर्षकी थी।

धन प्राण लेकर सभी शंकितभावसे रहते थे, परन्तु राव सुरजनके शासनगुणसे वह चोर तस्करोंका भय एकबार ही दूर होगया और चारोंओर स्थायी शान्ति स्थापित हो गई। राव सुरजनने वाराणसी नगरमें और विशेष करके वाराणसीके जिस स्थानमें वह रहते थे, उस स्थानमें अत्यन्त रमणीय महल और सर्वसाधारणके उपयोगी ८४ भिन्न स्थान बना दिये, तथा गंगाजीके किनारे स्नान करनेके लिये २० घाट बनवाये। इससे उनका बहुत धन खर्च हुआ अधिक क्या कहैं, राव सुरजन अपने शासनगुणसे सभीके प्रियपात्र हो गये। उन्होंने उसी वाराणसी धाममें प्राण त्याग किये। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव भोज (२) दूदा, सम्राट अकबर इनको लकडखां नामसे पुकारा करते थे, और (३) रायमल। रायमलको पलायता नगर, और उसके अधीनके देश प्राप्त हुए और किसी समयमें उनके अधीनमें कोटा राज्य हो गया।

पूर्वोक्त समयमें बादशाह अकबर दिल्लीसे राजधानी उठाकार आगरेमें ले गये। अकबरने आगरेको विस्तारित और शोभायमान करके अपने नामके अनुसार उसका नाम अकबराबाद रक्खा। अकबराबादमें जानेके पीछें, बादशाह अकबरने गुजरातको जीतनेका विचार किया, और वहां बहुतसी सेना भेजी पीछे स्वयं कितनी ही निर्वाचित ऊंटपर चढीहुई सेनाके साथ वहां गये। मरुक्षेत्रके राजपूत राजगण जिस प्रकारकी रीतिसे एक २ ऊंटकी पीठपर दो २ आसन स्थापन कर, दो २ जनोंके साथ सेनाको बैठालकर लेजाते हैं, अकबर उसी रीतिसे पांचसौ सेना प्रधानतः राजपूतसेनाको भी ऊंटोंपर चढाकर ले गये, और उसी सेनादलके नेतापदपर रावभोज और उनके भ्राता दूदा नियुक्त होकर गये। बादशाहकी प्रधान सेनाने पहिले आगे बढकर सूरतको घेर लिया था। परन्तु बादशाह भी उक्त सेनाके साथ शीघ्रतासे वहां जाकर प्रधानसेनाके साथ मिल गये। क्रमानुसार भयंकर युद्ध उपस्थित हो गया। उस युद्धमें राव भोजने असीम साहस करके शत्रुओंके प्रधाननेताओंका मस्तक काटलिया। बादशाहने, सरलतासे जयलक्ष्मीका आलिंगन पाकर संतुष्ट हो राव भोजसे पूछा किं "आप क्या पुरस्कार चाहते हैं ?" राव भोजने कहा, कि "प्रतिवर्षमें वर्षा ऋतुके आनेपर मैं जिससे अपनी राजधानी बूँदीमें जाकर वर्षाऋतुको वहाँ व्यतीत करसकूँ ऐसी आज्ञा चाहता हूँ।" बादशाह अकबरने राव भोजकी वह प्रार्थना तत्काल पूर्ण की।

इतिहाससे जाना जाता है किं महावली अकबरने एक २ करके अनेक राज्य जीते; और अपने अधिपत्यका विस्तार करता साम्राज्यकी शक्तिको बढानेके लिये पहिलेसे जिस २ स्थानपर युद्ध उपस्थित किया; उसी २ युद्धमें राजपूतराजाओंने नियुक्त होकर अपने बल विक्रमको प्रकाश करनेके साथ ही साथ अपने गौरवकी गरिमाको बढा लिया। उनमें बूँदीके महाराज राव भोजने भी बहुतसे युद्धोंमें अतुलनीय विक्रम प्रकाशकर बडा ऊंचा पद पाकर सम्मान प्राप्त किया था अहमदनगरके प्रसिद्ध युद्धमें चांदाबेगमने सातसौ अस्त्रधारिणी स्त्रियाके साथ बादशाहकी अगणित सेना दलके विरुद्धमें भली भांतिसे वीरता प्रकाशकर और उस युद्धमें जीवन दान कर भारतके इतिहासमें अपनी

अक्षय कीर्तिका परिचय दिया है। उस अहमदनगरको जीतनेके लिये बादशाहने राव भोजको प्रधान सेनापतिपदपर नियुक्त करके भेजा। वीरश्रेष्ठ भोजने असीम साहसके साथ अहमदनगरके किलेकी दीवारको लांघकर सेनासहित उसमें प्रवेश कर किलेको जीत लिया। बादशाह अकबरने इससे महा संतुष्ट होकर राव भोजके पदसम्मान बढ़ानेमें और उनको पुरस्कार देनेमें कुछ भी विलम्ब न किया। विशेष करके अहमद नगरके युद्धमें राव भोजने अतुलनीय वीरता प्रकाश करके जिस किलेके बुर्जपर आक्रमण कर अधिकार कर लिया था, बादशाह अकबरने भोजके सम्मानके लिये उसी स्थानपर एक नवीन बुर्ज बनाकर उसका "भोजबुर्ज" नाम रक्खा।

हम इतिहासमें देखते हैं कि बूँदीके राव राजा भोजने सम्यक् प्रकारसे बादशाह अकबरके अनेक उपकार किये थे। और इसी कारणसे वह उनके अत्यन्त प्रियपात्र हो गये थे। तो भी वह एक समय बादशाहके भयंकर कोपमें गिरे। जब अकबरकी राजपूत रानी जोधबाईकी मृत्यु हो गई तब बादशाहने समस्त राजपुरुष और देशीय राजाओंको उस रानीके अशौच ग्रहण तथा उसके शोकचिह्न धारण करनेकी आज्ञा दी। बादशाह अकबरने राजपूत राजाओंके समान मुसल्मान और अमीर इत्यादिकोंको भी आज्ञा दी कि तुम सभीको मृत रानीके सम्मानके लिये डाढ़ी मुडवानी होगी। जिससे सभी बादशाहकी इस आज्ञाको पालन करैं, इसलिये बादशाहकी हजामत करनेवाला नाई बादशाहकी आज्ञासे उक्त मनुष्योंकी हजामत करनेमें नियुक्त हुआ। राजाका नाई अंतमें बादशाहकी राजधानीमें स्थित बूँदीराजके यहाँ जाकर बादशाहकी आज्ञा पालन करनेके लिये उद्यत हुआ। राजाके सेवकोंने उस नाईको मारकर भगा दिया। राव भोजके शत्रुओंने शीघ्र ही यह समाचार बादशाहतक पहुँचा दिया। राव भोजके विरुद्धमें यह अनृतयोग उपस्थित किया कि "राव भोजने केवल नाईको मारकर ही शान्ति नहीं पाई है वरन् उन्होंने मृतक महारानीको भी अनेक प्रकारके कटु वचन कहे हैं" शोकसे आतुर हुए अकबरने यह समाचार सुनते ही उसी समय राव भोजके समस्त गुणग्रामोंको भूलकर तुरन्त ही आज्ञा दी कि "राव भोजको बाँधकर बलपूर्वक उनकी डाढ़ी मूँछोंको मुडवा दो।" बादशाहकी इस आज्ञाको सुनते ही राव भोज और उनकी सेना क्रोधित हुए सिंहके समान उन्मत्त होकर शीघ्र ही तलवार निकालकर भयंकर काण्ड उपस्थितके पूर्वलक्षण प्रकाश करने लगे; परन्तु बादशाहने उक्त आज्ञा देनेके पीछे जब समझा कि हमने अत्यन्त अन्यायकी आज्ञा दी है तब वह स्वयं शीघ्रतासे हाथीपर चढ़कर राव भोजके यहां गये। यदि बादशाह इस समय न जाते तो निश्चय ही हाडाराज भोज और उनके सैनिक राजधानीमें रुधिरकी नदी बहा देते, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। बादशाह हाथीपरसे उतरकर राव भोजके विक्रमकी भलीभाँतिसे प्रशंसा करके उनको धीरज देने लगे और राव भोजने स्वयं बादशाहके सम्मुख आकर विशेष विचारके साथ कहा, कि "अपने स्वर्गीय पिताके नामसे मैं क्षमा प्रार्थना करता हूँ। मैं अत्यन्त निर्बोध हूँ, मृत-रानीके सम्मानके लिये क्षौरकर्म करानेके योग्यपात्र भी मैं नहीं हूँ।" बादशाह

अकबर यह वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और राव भोजको साथ लेकर अपने स्थानको लौट आये। बादशाह अकबरकी मृत्युके पीछे राव भोजने अपनी राजधानी बूँदीमें जाकर कुछ कालतक वहाँ रहनेके पीछे प्राण त्याग किये। राव राजा भोजके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव रतन (२) हिरदेव नारायण[1] और (३) केशवदास[2]।

अकबरकी मृत्युके पीछे जहाँगीर मुगल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए। वह अपने पुत्र परवेजको दक्षिणके शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर बुरहानपुरमें शासनकी सनद देकर उत्तरकी ओरको चले आये। परन्तु जहाँगीरके दूसरे पुत्र कुमार खुर्रमने भ्राताके सौभाग्यसे वैरभावके वश हो षड्यंत्रजालका विस्तार करके उनके प्राण नाश करनेमें किंचिन्मात्र भी त्रुटी न की। कुमार खुर्रम अपने सौतेले भाईका प्राण संहार कर अपने जन्मदाता सम्राट्र जहाँगीरको सिंहासनसे रहित करके स्वयं भारतके साम्राज्यका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुए। कुमार खुर्रम राजपूत राजनंदिनीके गर्भसे उत्पन्न थे। इस कारण उन पितृद्रोहीकी सहायताके लिये बाईस राजपूत राजा मिलकर जहांगीरको सिंहासनसे उतारनेके निमित्त उनके अधीनमें सेनासहित इकट्ठे हुए। परन्तु एकमात्र बूँदीके अधीश्वर राव रतनने उस दुःखके समयमें बादशाह जहाँगीरके पक्षका अवलम्बन कर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी। इसके सम्बन्धमें हाडा कविने लिखा है।

" सरवर फूटा जल वहा, अब क्या करो यतन्न ?
जाता घर जहाँगीरका, राखा राव रतन्न "।

इसका अर्थ यह है कि सरोवरका जल उबलकर प्रबल तरंगोंसे बह रहा है इस समय अब क्या यत्न करना होगा ? जहाँगीरका शासन लुप्त हो गया था, राव रतनने उसकी रक्षा की है।

बूँदीराज रतनसिंहने माधवसिंह तथा हरिसिंह नामक दोनों पुत्रोंके साथ सेनासहित जहाँगीरके उस महादुःख समयमें बुरहानपुरमें जाकर पितृद्रोही खुर्रम और उनके अधीनके राजपूत राजाओंके साथ प्रबल संग्राम करके उनको एकबार ही परास्त कर दिया। बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि संवत् १६३५सन् १५७९ई० में कार्तिक शुक्ल मंगलवारके दिन यह स्मरणीय संग्राम हुआ था, और उसी रणक्षेत्रमें राव रतनके उक्त दोनों पुत्र भयंकररूपसे घायल हुए। बुरहानपुरके युद्धमें राव रतन और उनके दोनों पुत्रोंने घोर वीरता प्रकाश की थी और बादशाहके अनुकूल विजय प्राप्त की।

---

(१) हिरदेवनारायणको बादशाहसे कोटेराज्यके शासनकी सनद मिली थी इन्होंने १५ वर्षतक उसे शासन किया।

(२) इन्हें चाम्बलके किनारे ढीपरी नगर और उसके अधीनमें २७ ग्रामोंका अधिकार मिला।

(३) उर्दू तर्जूमेमें संवत् १६८१ सन् १६२५ लिखा है और ये ही सही है क्योंकि संवत् १६३५ में तो अकबरबादशाह था, जहांगीर संवत १२६२ में हुआ था।

इससे दिल्लीके महाराजने प्रसन्न होकर पुरस्कार स्वरूपमें राव रतनको बुरहानपुरके शासनकर्ता पदका भार अर्पण किया और उनके दूसरे पुत्र माधवके कोटानगर और उनके अधीनके समस्त देशोंके अधिकारकी सनद वंशानुक्रमसे साक्षात् दिल्लीश्वरके अधीनमें संभोग करनेको प्राप्त हुई । इसी समय हाडोती देश रीतिके अनुसार दो भागोंमें विभक्त हो गया । राव रतनने बादशाहके अनेक उपकार किये थे, इससे इसका अनुमान तो सरलतासे हो सकता है कि उनको कितना पुरस्कार मिला था ।

टाड साहब लिखते हैं कि जहाँगीरने एक प्रबल गुप्त राजनैतिक कारणसे इस प्रकारके अन्यायका कार्य किया था । वह राव रतन और उनके पुत्रको अत्यन्त बलशाली योधा देखकर अपने मन ही मनमें भलीभाँतिसे ज़ान गये कि यदि यह दोनों वीर पिता पुत्र एक साथ मिलकर असीम साहसी स्वजातीय सेनादलका नेतृत्व करैंगे तो यह दोनों एक मत होकर जिस किसी विषयमें सरलतासे प्रधानका विस्तार और राजनैतिक विपत्तिको उपस्थित करनेमें समर्थ हो जायँगे, इस कारण पिता पुत्रमें भेद साधन करके प्रबल सामर्थ्यको विभक्त कर देना उचित है । बादशाहने उसी अभिप्रायसे राव रतनको केवल बुरहानपुरके शासनका भार देकर उनके पुत्रको स्वाधीनभावसे कोटा राज्य दे दिया । शाहजहाँने माधवसिंहको जिस प्रकार कोटेके राज्यसंभोगकी सनद दी उसका वृत्तान्त कोटेके इतिहासमें वर्णन किया जायगा ।

राव रतन जिससमय बुरहानपुरके शासन करनेमें नियुक्त थे, उस समय उन्होंने वहाँ एक नगर स्थापनकर अपने नामके अनुसार उसका नाम "रतनपुर" रक्खा । बूंदीके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने फिर एक ऐसा कार्य किया कि जिससे एक ओर तो दिल्लीके बादशाह प्रसन्न हुए और दूसरी ओर बूंदी राजवंशने पहिले जिन मेवाडपति राणाओंकी अनुगत्यता स्वीकार करके उनसे विशेष शान्ति प्राप्त की थी वे भी प्रसन्न हुए ।

दरियाखां नामक एक मुसलमान अमीरने बादशाहकी आज्ञा न मान कर मेवाडराज्यमें जाकर सेनासहित प्रजापुंजके ऊपर अत्यन्त अत्याचार किये थे । राव रतन सेनासहित वहां जाय दरियाखांपर आक्रमण कर युद्ध होनेके पीछे उसको पकडकर बादशाहके सम्मुख ले गये । दरियाखां काठिन वीररूपसे प्रसिद्ध था, इस कारण उसको पकडनेसे राव रतनका बल विक्रम विशेषरूपसे विदित हो गया । बादशाहने उनकी उस वीरतासे महासंतुष्ट होकर पुरस्कारमें उनको एक दल नौबतके बाजेका दिया और रतनके स्थानपर लाल पताका उडानेकी आज्ञा दी । तथा वह जिस समय सेनासहित बाहर हों उस समय एक बडी पीले वर्णकी पताका उनके समीप उडाई जाय । राव रतनके उत्तराधिकारी आजतक उस राजसम्मानसूचक पताकाको रखते आये हैं । राव रतनने केवल स्वजातिके निकटसे ही महा ऊंचा सम्मान नहीं पाया था वरन् भारतवर्षकी समस्त हिन्दूजाति हिन्दूधर्मके रक्षकस्वरूपसे उनके प्रति सम्मान दिखाती थी । बादशाहके यहां उन्होंने जिस प्रकारकी सामर्थ्य और प्रतिपत्ति प्राप्त की

थी, उससे उनकी हिन्दूजातिकी मुसलमानोंके अत्याचारोंसे सरलतासे रक्षा हो सकी थी। वह जिस किसी स्थानमें भी रहते मुसलमानोंको किसी प्रकारसे उस स्थानपर गोहत्या करनेका साहस नहीं होता था। बूंदीके इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने युद्धमें बहुतसी वीरता प्रकाशकर प्रशंसनीय यश संग्रह किया था, केवल हाडाजाति ही नहीं वरन् समस्त हिन्दूजातिमें महा ऊंचा गौरव संग्रह करके अन्तमें बुरहानपुरके एक भयंकर युद्धमें वह मारे गये। हाडा जाति आजतक सबसे पहिले राव रतनसिंहके नामको स्मरण करती है।

राव रतनके चार पुत्र उत्पन्न हुए (१) गोपीनाथ, (२) माधवसिंह; (३) हरिजी और (४) जगन्नाथ। यह तो हमारे पाठकोंको पहिलेसे ही ज्ञात हो गया है, कि माधवसिंहने कोटेराज्यको पाकर उसे स्वाधीनभावसे शासन किया था। तीसरे पुत्र हरिजीको गूंगेर नामक देश प्राप्त हुआ। कर्नल टाड साहबके समयमें हरिजी वंशोत्पन्न प्राय: पचास आदमियोंका कुटुम्ब नीमोदा नामक स्थानमें रहता था चौथे जगन्नाथने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग दिये। सबसे बडे और उत्तराधिकारी गोपीनाथ पिताकी मृत्युके पहिले ही मारे गये। युवराज गोपीनाथकी मृत्युका वृत्तान्त पढनेसे राजपूतोंके चरित्रोंका और भी एक विचित्र निदर्शन पाया जाता है।

युवराज गोपीनाथ बूंदीके बलदिया जातीय एक ब्राह्मणकी अत्यन्त सुन्दरी स्त्रीके प्रेममें मोहित होकर अत्यन्त गुप्तभावसे अपनी प्रेमपिपासाकी निवृत्ति करते थे। गोपीनाथ प्रतिदिन रात्रिके समय उस ब्राह्मणके घर दीवार लांघकर जाया करते थे। और चुपचाप अपनी कुप्रवृत्तिको चरितार्थ कर आते थे। कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत हुए एक समय उक्त ब्राह्मणने उनको रात्रिके समय अपने घरमें आया हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हो उनके हाथ पैर बांधकर घरमें रख लिया, और राजमहलमें जाकर राव रतनके सम्मुख निवेदन किया कि, "एक चोरने हमारे यहां रात्रिमें आकर हमारी स्त्रियोंके सतीत्व नाश करनेकी चेष्टा की थी। हमने उसको पकड लिया है। उसको क्या दंड दिया जायगा सो आप निश्चय कीजिये।" बूंदीराज रतनसिंहने उसी समय कहा कि "उसको जानसे मार डालना ही उचित दंड होगा"। ब्राह्मणने तुरन्त ही अपने घरमें आकर एक खड्ग लेकर युवराज गोपीनाथका मस्तक चूर्ण कर दिया। गोपीनाथने उस दारुण आघातसे प्राण त्याग किये, ब्राह्मणने युवराजकी लाशको राजमार्गमें फेंक दिया। शीघ्र ही राव रतनके पास यह समाचार गया कि युवराज गोपीनाथ मारे गये हैं। यद्यपि राव रतनने इस समाचारसे पहिले तो भयंकररूपसे क्रोधित हो हत्याकारीको पकडकर उसको उचित दंड देनेकी आज्ञा दी थी, परन्तु जब उन्होंने सुना कि उनकी आज्ञानुसार ही ब्राह्मणने गोपीनाथकी हत्या की है तब राव रतनने बिना कुछ कहे सुने पुत्र शोकको सहन किया।

युवराज गोपीनाथके बारह पुत्र उत्पन्न हुए थे। राव रतनने उन सबको एक २ देश दिया, वह राज्यके प्रधान सामन्त श्रेणीमें गिने गये। उन बारहमेंसे गोपीनाथके सबसे बडे पुत्र छत्रशालको बूँदीका राजसिंहासन प्राप्त हुआ, और वे नीचे लिखे हुए चार देशोंके अधीश्वर हुए:-

१-इन्द्रसिंह- इन्होंने इन्द्रगढको स्थापन किया-

२-वैरीशाल- इन्होंने बलवान और फिलोदी नामक दो नगरोंको स्थापन किया, और करवर तथा पिपलोदा दो देश भी इनको मिले।

३-मोखिमसिंह- इनको आंतरदा ग्राम प्राप्त हुआ।

४-महासिंह- इनको थाना[२] ग्राम प्राप्त हुआ।

गोपीनाथके अन्य कई एक पुत्रोंका वंश लोप हो गया है, यहां पर उनके नामोंका उल्लेख करना निष्प्रयोजन है।

राव रतनके स्वर्ग जानेपर गोपीनाथके बडे पुत्र शत्रुशाल (छत्रसाल) पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। बादशाह शाहजहांने स्वयं बूँदीकी राजधानीमें जाकर शत्रुशालका अभिषेक किया और उनका सम्मान बढानेके लिये उन्हें दिल्ली राजधानीके प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त किया। शाहजहांने जितने दिनोंतक राज्य किया था, राव शत्रुशाल उतने दिनोंतक उक्त पदपर नियुक्त रहे। बादशाह शाहजहांने जिस समय अपने विस्तारित भारतसाम्राज्यको चार भागोंमें विभक्त कर अपने चार पुत्रों (दारा औरंगजेब सुजाय और मुराद) को चार भागोंके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त करके भेजा, उस समय राव शत्रुशाल औरंगजेबकी एक प्रधान सेनाके सेनापतिपदपर नियुक्त होकर दक्षिणको गये। औरंगजेबने दक्षिण प्रान्तके भिन्न २ प्रान्तोंमें प्रबल समरानल प्रज्वलित करके कई किलोंको घेर लिया तथा उन्हें आक्रमण कर अपने अधिकारमें कर लिया। विशेष करके दौलताबाद और बीदर नामक किलेपर अधिकार करनेके समय हाडाराज शत्रुशालने अतुल बल विक्रम प्रकाश कर अपने बाहुबलका चूडान्त बल दिखा दिया। वीर श्रेष्ठ शत्रुशालने स्वयं सेनासहित बीदरके किलेपर आक्रमण कर तथा उसको जीत शत्रुकी समस्त सेनाको तलवारसे नाश करके यमराजके यहाँ भेज दिया। संवत् १७०९,

---

(१) इन्द्रगढ बलवन और आन्तदा यह तीन प्रधान देश कोटेके जालिमसिंहने अपने षड्यंत्रसे बूँदीसे छीन लिये थे।

(२) उर्दू तर्जुमेमें "थानवा" लिखा है।

(३) टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "यह थाना ग्राम पहिले युजावर नामसे विदित था। गोपीनाथके बारह पुत्रोंमें केवल थानाके अधीश्वर आजतक बूँदीके अधीश्वरकी अनुगत्यता स्वीकार करते आये थे; महासिंहके वंशधर महाराज विक्रमसिंह इस समय इसी थानाके अधीश्वर हैं, यदि वह जीवित होते तो हम कह सकते हैं कि इस संसारमें उनके समान सम्माननीय साहसी और सरलचित्त राजपूत दूसरा नहीं था, वह अपने अधीश्वरके अत्यन्त प्रियपात्र और हमारे सच्चे मित्र थे, इनका सिंहके साथ युद्धका वृत्तान्त हमारे भ्रमण वृत्तांतमें पाया जायगा।

सन् १६५३ ई०में प्रबल युद्धके पीछे कलवर्णका पतन हुआ, और शत्रुशालने फिर असीम साहसके साथ किलेकी दीवारको लांघकर उसको जीत लिया। धामूनीनामक स्थानके किलेको जीतनेके पीछे दक्षिणमें पूर्णरूपसे शांति विराजमान हो गई।

बूँदीके राजमहलमें स्थित ग्रंथके देखनेसे जाना जाता है कि "जिस समय दक्षिणमें यह सब घटनाएँ हुईं उसी समय यह जनरव हुआ कि सम्राट् शाहजहांने प्राण त्याग किये हैं। विशेष करके बादशाहके बराबर बीस दिनतक सभामें न बैठनेसे उस समाचारको सभीने सत्य मान लिया था। बादशाहके पुत्रोंमें एकमात्र दाराशिकोह इस समय राजधानीमें रहते थे। उनके अन्य भ्राताओंने जब यह समाचार सुना तब वह सिंहासन पानेके लिये बडे आग्रहके साथ राजधानीकी ओरको गये। जिस समय शुजाने बंगदेशसे यात्रा की, उस समय औरंगजेबने भी दक्षिणको छोडनेके लिये तैयार होकर मुरादको सेनासहित योग देनेके लिये अनुरोध किया। औरंगजेबने मुरादसे यह कहला भजा कि "मैं एक उदासीन विरागी हूँ सिंहासन वा संसारके किसी भी सुखकी मुझे लालसा नहीं है, केवल निर्जनमें रहकर मोहम्मदकी आज्ञानुसार धर्मका साधन करना मेरे जीवनका मुख्य उद्देश है। दारा एक नास्तिक है, मैं उदासीन हूँ इस कारण बादशाह शाहजहाँके पुत्रोंमें एकमात्र आपही सब अंशोंमें योग्यपात्र हैं। आपको ही राजसिंहासनपर बैठालनेके लिये हम विशेषरूपसे तय्यार हैं।

"बादशाह शाहजहाँने औरंगजेबकी पापकामनाको जानकर गुप्तभावसे हाडाराज शत्रुशालको राजधानीमें सेनासहित आनेके लिये बुला भेजा। शत्रुशालने बादशाहकी यह आज्ञा पाकर विशेष विचार कर यह कार्य किया कि, मैं जब बादशाहके अनुगत अधीन हूँ, तब उनकी आज्ञा पालन करना ही मुझे सबसे पहिले कर्तव्य है। अतः शत्रुशाल शीघ्र ही दक्षिणके डेरोंके छोडनेकी तैयारी करने लगे। राव शत्रुशाल डेरोंको छोडनेके लिये उद्यत हो गये हैं, औरंगजेबने यह समाचार पाते ही पूछा कि इतनी शीघ्रतासे डेरोंको छोडनेका कारण क्या है कुछ दिन और ठहरिये; हम सभी एक साथ राजधानीमें चलेंगे। बूँदीके अधीश्वर शत्रुशालने सिंहासनपर बैठे हुए बादशाहकी आज्ञाका पालन करना हमारा प्रथम कर्तव्य कार्य है।" यह कहकर बादशाह शाहजहाँने उनके निकट जो आज्ञापत्र भेजा था; उसे औरंगजेबके हाथमें अर्पण किया। परन्तु पापाचारी औरंगजेबने उस आदेशपत्रको पढते ही शत्रुशालको आज्ञा दी, कि 'आप किसी प्रकारसे इस समय डेरोंको न छोडिये'। दूसरी ओर औरंगजेबने आज्ञा दी कि "राव शत्रुशालके डेरोंको जिस प्रकारसे हो सके उखडने न दो"। परन्तु बुद्धिमान् शत्रुशालने ऐसा होगा जानकर पहिलेसे ही अपने समस्त द्रव्य संभार और कितनी ही सेनाको आगे भेज दिया था। उन्होंने इस समय औरंगजेबकी

(१) राजपूत इतिहास लेखकने औरङ्गजेबकी इस उक्तिको प्रकाशित किया है, अन्यान्य इतिहासवेत्ताओंने भी अविकल इसी भावको लिखा है।

आज्ञाको अग्राह्य करके अपनी बची बचाई सेना और जो राजा शाहजहांके पक्षावलम्बी थे, उनको एकत्र दलबद्ध करके वीरतेजसे डेरोंको छोडकर नर्मदाकी ओरको गमन किया । यद्यपि औरंगजेबकी सेना उनके पीछे २ गई परन्तु किसी प्रकारसे भी उन असीम साहसी और महाबली राजपूतोंको आक्रमण करनेका साहस प्राप्त न हुआ। इस समय प्रबलवर्षाके उपस्थित होनेसे नर्मदा नदीने भयंकरी मूर्ति धारण की थी । राव शत्रुशाल उस नर्मदा नदीके किनारेके कितने ही देशोंके सोली राजाओंकी सहायतासे उस भयंकर तरंगोंसे समायुक्त नर्मदानदीके पार हो गये। तब भी औरंगजेबने निराश होकर शत्रुशालका पीछा करनेमें त्रुटि न की। राव शत्रुशाल निर्विघ्नतासे अपनी राजधानी बून्दीमें चले आये। राव शत्रुशालने अपनी राजधानीमें कई दिनतक रहकर राज्यके अनेक विषयोंकी प्रयोजनीय व्यवस्था कर दिल्लीकी ओरको सेनासहित गमन किया। वृद्ध बादशाहके पुत्रोंको कुलांगारके समान उनकी जीवितदशामें ही राजसिंहासन ग्रहण करनेकी इच्छासे बादशाहके करसे राजदण्ड छीनने और उनके जीवनमें हस्ताक्षेप करनेको अग्रसर हुआ देखकर राव शत्रुशालने उस वृद्ध बादशाहकी विपत्तिमें सहायता करनेके लिये शीघ्रतासे दिल्लीको गमन किया।

"टाड साहब लिखते हैं, कि पितृद्रोही पापात्मा पिशाच औरंगजेब छलना, चातुरी और षड्यन्त्रजालका विस्तार कर फतेहाबादमें जा पहुँचा। मारवाडके महाराज जसवन्तसिंह बहादुरने सेनादलके साथ उस फतेहाबादमें भयंकर समरानल प्रज्वलित कर दी। परन्तु कूट षड्यन्त्रजालका विस्तार कर औरंगजेबने सरलतासे उस युद्धमें जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त कर भारतके सिंहासनपर चढनेका मार्ग साफ कर लिया । राव शत्रुशालको हमने उस युद्धमें बादशाहके पक्षमें नियुक्त होता नहीं देखा, बादशाह अकबरके साथ बून्दीके अधीश्वर राव सुरजनका जो पहिला संधिबन्धन हुआ था, उस संधिबन्धनके अनुसार वह वा उनके भाविष्य उत्तराधिकारी किसी हिन्दूराजाके अधीनमें किसी रणभूमिमें गमन नहीं करेंगे ऐसा नियम था । बोध होता है कि उस संधिके मतसे राव शत्रुशाल महाराज मानसिंहके अधीनमें फतेहाबादके रणक्षेत्रमें न गये। परन्तु बून्दीके राजवंशोत्पन्न कोटेके अधीश्वर अपने चार भ्राताओंके साथ सेनासहित उस फतेहाबादके संग्राममें बादशाहकी ओरसे नियुक्त होकर आये थे विषमवीरता प्रकाश करनेके पीछे चारों भ्राताओंने उस संग्राममें अपना प्राण देकर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई।

दुराचारी औरंगजेबने पिताके सिंहासनपर अधिकार करनेके पहिले अपने बडे भ्राता दाराके साथ धौलपुरमें फिर युद्ध किया । उस धौलपुरके युद्धमें बून्दीके अधीश्वर राव राजा शत्रुशालने कुंकुमवर्णक भेष और विवाहके समयका जिस प्रकार पहरावा राजपूतजातिमें व्यवहार किया जाता है, उसी प्रकार पहरावा धारण कर क्या तो नंगी तलवार हाथमें लेनी होगी नहीं तो जीवन त्याग दिया जायगा, यह दृढप्रतिज्ञा करके वीरदर्पसे दाराके समस्त सेनादलमें सबसे आगे जाकर औरंगजेबके साथ भयंकर समरा-

नल प्रज्वलित कर दी । प्राच्य जगत्की चिरप्रचलित रीति यह थी कि युद्धके समय दोनों ओरके राजा वा प्रधान सेनापति रथ वा हाथीपर चढकर जब युद्धभूमिमें जाते थे तब सेनादल उस राजा अथवा सेनापतिको जबतक युद्धसे जाता हुआ न देखते तबतक प्राणोंकी बाजी लगाकर दुगने उत्साहके साथ युद्ध करते रहते थे । उसी रीतिके अनुसार दारा एक हाथीपर चढकर उस भयंकर रणभूमिमें जाने लगा । यदि वह और कुछ समयतक साहसमें भरकर उसी भावसे वहां विराजमान रहता तो अवश्य ही शाहजहां बादशाहको वृद्धावस्थामें कुलांगार पुत्र औरंगजेबके द्वारा बन्दी होकर राज्यसे च्युत होना नहीं पडता, दाराके हठात् रणभूमिसे जाते ही उसकी समस्त सेना संग्रामको छोडकर चारों ओरको भागने लगी । वीर तेजस्वी शत्रुशालने भीरु कापुरुष दाराको भागता हुआ और उसी कारणसे उसकी सेनाको भी भागता हुआ देखकर अपने अधीनके सामन्त और सेनासे गर्वपूर्ण यह वचन कहे "कि जो कोई युद्धभूमिसे भागेगा वह नरकको जायगा । मैं बादशाहके अधीन हूं, मैंने युद्धभूमिमें चरण रक्खा है, यह मेरा अटल है, क्या तो इस समय विजय ही होगी, और नहीं तो प्राण त्याग दूंगा" । इन प्रकाशमान वचनोंसे सामन्त और सेनाको उत्साहित करके, शत्रुशाल अपने हाथीपर चढकर अपने आदर्शसे जिस समय सेनाको शत्रुपक्षकी ओरको चला रहे थे, उसी समय शत्रुओंकी ओरसे एक जलता हुआ गोला आकर उनके हाथीके ऊपर गिरा । हाथीने घायल होनेसे उन्मत्त हो रणक्षेत्रको छोडकर भागना प्रारम्भ कर दिया, परन्तु महावीर शत्रुशाल तुरन्त ही उस भागते हुए हाथीकी पीठपरसे छलांग मारकर कूद पडे, और घोडेपर चढकर अपनी समस्त सेनाको चक्राकारमें मिलाकर जयस्वरसे रणभूमिको कम्पायमानकर कुमार मुरादके साथ संग्राम करनेके लिये उसकी ओरको चले । राव शत्रुशाल मुरादके अत्यन्त निकट जाकर अपने विषम भालेसे मुरादके बाहुबलकी परीक्षाके लिये जिस समय उद्यत हुए उसी समय शत्रुओंकी ओरसे एक गोली आकर उनके मस्तकमें लगी । राव शत्रुशालने उसी गोलीके आघातसे अपने जीवनकी लीला समाप्त की । राव शत्रुशालके छोटे पुत्र भारतसिंह उस रणभूमिमें उपस्थित थे । पिताके मरनेसे वह महाक्रोधसे उन्मत्त हुए और केशरीके समान मुरादके साथ प्रवल संग्राम करने लगे; शत्रुशालके भ्राता मोखमसिंहने अपने दोनों पुत्र और उदयसिंह नामके भतीजेसहित संहारमूर्ति धारण कर युद्ध करना प्रारम्भ किया, प्रवल युद्धके पीछे बहुतसे शत्रुओंका संहार करके भारतसिंह और उक्त कई जने राव शत्रुशालके समान युद्धभूमिमें प्राणदान दे सूर्यलोकको चले गये । कर्नल टाड साहव कहते हैं कि " उज्जैनी और धौलपुर इन दो

---

(१) राजपूत वीर किसी युद्धमें जयका सन्देह होनेपर, अथवा किसी प्रकारसे भी हो शत्रुसे जय प्राप्त करना अथवा शत्रुका संहार करना कर्तव्य है ऐसी प्रतिज्ञा करनेपर उक्त प्रकारका वर वेश धारण कर युद्धमें प्रवेश किया करते हैं । और युद्ध भूमिमें मरते ही सूर्यलोकको या अप्सराओंकी सभामें हो जायँगे, इसी विश्वाससे वह उक्त वर वेशका व्यवहार करते हैं ।

स्थानोंके संग्राममें बारह राजपूत राजवंशीय और हाडा सम्प्रदायके प्रत्येक नेताने अपना जीवन त्यागकर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी, हमने ऐसा दृष्टान्त और कहीं नहीं पाया "।

बूँदीके इतिहासमें पीछे वर्णन किया गया है कि राव शत्रुशाल समस्त जीवनमें ५२ युद्ध करके असीम साहसका चूडान्त निदर्शन और विश्वासकी अक्षय कीर्ति स्थापन कर गये हैं। राव शत्रुशालने बूँदीके राजमहलका विस्तार कर "छत्रमहल" नामका एक अंश निर्माण किया था, पाटन नामक स्थानमें "केशवराय भगवान्" का एक रमणीक मंदिर उन्हींके व्ययसे बना है। संवत् १७१५ में राव शत्रुशालने प्राण त्याग किये। राव शत्रुशालके औरससे चार पुत्र उत्पन्न हुए-(१) राव भावसिंह, (२) भीमसिंह, (३) भगवन्तसिंह, (४) और भारतसिंह। भीमसिंहको गुगोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ, भगवन्तसिंह मऊनामक स्थानके अधिकारी हुए, भारतसिंह धौलपुरके युद्धमें मारे गये, इसका वर्णन पहिले ही कर चुके हैं। राव शत्रुशालकी मृत्युके पीछे बूँदीका राजमुकुट उनके बडे पुत्र राव भावसिंहके मस्तकपर शोभायमान हुआ"।

हिन्दूजातिके परम शत्रु औरंगजेबने दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान होकर बूँदीश्वर राव शत्रुशालके प्रति उसका जो कुछ कोप क्रोध और शत्रुता थी उसे उनके पुत्र राव भावसिंहके प्रति प्रयोग करनेमें कसर न की। शिवपुरदेशके राजा आत्मारामको बुलाकर औरंगजेबने उनको आज्ञा दी कि "उद्धत स्वभाव और सदा असन्तुष्ट हाडा जातिको भलीभांतिसे दंड देकर बूँदीराज्यको रणथम्भोरके अधीनमें स्थापित करो। बूँदीको जय और हाडाजातिको दंड देते ही दक्षिणमें जानेके समय बूँदी राज्यमें प्रवेश करके इस जयप्राप्तिसे आपको सम्बन्धित करूँगा।" राजा आत्मारामने बादशाहकी आज्ञानुसार शीघ्र ही बारह हजार शिक्षित सेनाके साथ हाडौती देशमें जाकर तलवार तथा अग्निकी सहायतासे चारों ओर अत्याचार कर देशका सर्वस्व विध्वंस करना प्रारंभ कर दिया। जैसे ही राजा आत्मारामने बूँदीके सबमें प्रधान सामन्तके अधीन इन्द्रगढ़के मध्यमें स्थित खातौलीनगरको घेरा कि वैसे ही हाड़ाजातिने चुपचाप दल बांधकर गोठडा स्थानमें राजा आत्मारामके अधीनमें स्थित उस बारह हजार शिक्षित सेनाके साथ भयंकर युद्ध करना प्रारंभ किया, उस युद्धमें राजा आत्माराम एकबार ही परास्त होकर प्राणोंके भयसे भाग गये। विजयी हाडासेनाने उस भागे हुए राजा आत्माराम और बादशाहकी सेनापर फिर आक्रमण करके समस्त युद्धके द्रव्य तथा बादशाहकी चिह्नात्मक पताका आदि छीन ली। हाडाजातिने इससे भी संतुष्ट न होकर हतभाग्य राजा आत्मारामसे अत्याचारोंका बदला लेनेके लिये उसके शिवपुरीको जा घेरा। परास्त और अपमानित राजा आत्माराम कलंकका भार शिरपर लेकर बादशाह औरंगजेबके निकट गये और जाकर हाडाजातिका बलविक्रम तथा अपने उद्धत स्वभावका नवीन परिचय दिया। औरंगजेबने राजा आत्मारामसे अत्यन्त घृणा प्रकाश की। और इनका उचित तिरस्कार किया।

कपटी औरंगजेबने हाडाजातिके वीर विक्रमका विशेष परिचय पाकर हाडा-राजको अपने हस्तगत करनेके लिये प्रकाशमें हाडाजातिकी वीरतासे संतोष प्रकाश करते हुए उनको सब प्रकारसे क्षमा कर अपनी राजधानीमें आनेके लिये बुला भेजा। राव भावसिंह, पहिले किसी प्रकारसे भी कुचक्री औरंगजेबकी बातपर विश्वास करके दिल्ली जानेके लिये सम्मत न हुए, परन्तु बादशाहने बारम्बार प्रतिज्ञा-पूर्ण पत्र भेजकर "मुझसे आपका कोई अनिष्ट नहीं होगा" इस वातकी शपथ की इसी कारणसे वीरतेजस्वी राव भावसिंह अन्तमें सेनासहित दिल्लीको गये। बादशाह औरंगजेबने राव भावसिंहको बडे आदरभावके साथ ग्रहण कर कुमार मोअज्जिमके अधीनमें उनको औरंगाबादको प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर दिया।

हाडाजातिके इतिहाससे जाना जाता है कि राव भावसिंहने औरंगाबादके महा ऊँचे पदपर प्रतिष्ठित होकर स्वजातीय राजपूतोंको औछडा एवं दतियाके बुंदेला सेनादलके साथ बहुतसे युद्धोंमें अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश किया था। बीकानेरके राजा करणके प्राणनाश करनेके लिये इस स्थानपर जो षड्यंत्रजालका विस्तार हुआ था, राव भाव-सिंहने ही अपने असीम साहससे उस षड्यंत्रजालको नष्ट कर बीकानेरके महाराजके जीवनकी रक्षा की। राव भावसिंहने औरंगाबादमें सर्वसाधारणके हितकारी बहुतसे महल बनवाये। उक्त इतिहासके पढनेसे जाना जाता है, कि उन्होंने अपने साहस, वीरता, दया और अपने पवित्र स्वभावके बलसे औरंगाबादकी सब जातियोंके हृदयपर इस प्रकारका अधिकार कर लिया था कि इनके ऊपर पूर्ण विश्वास और भक्तिके बलसे ही बहुतसे असाध्य रोगियोंने इनके द्वारा पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की थी। संवत् १७३८, सन १६८२ ई० में राव भावसिंहने इसी औरंगाबादमें प्राण त्याग किये।

राव भावसिंहके कोई पुत्र नहीं था। इस कारण उनके भ्राता भीमसिंहके पुत्र अनिरुद्धसिंह बूँदीके सिंहासनपर विराजमान हुए। भीमसिंहको गुरोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था। उन्हीं भीमसिंहके पुत्र किसनसिंह थे। दुराचारी औरंगजेबने पहिले ही इन किसनसिंहका प्राण नाश किया था। उनकी मृत्युसे उनके स्थलाभिषिक्त राव अनिरुद्धसिंहको राजसम्मान दिखानेके लिये अभिषेकके समय मूल्यवान ही उपहार और अपना एक अति उत्तम हाथी सजाकर उनके पास भेजा। राव अनिरुद्धसिंहने बूँदीके सिंहासनपर अभिषेकके कुछ ही समय पीछे दिल्लीमें जाकर बादशाहके प्रति सन्मान दिखाया, कुछ दिन पीछे बादशाह औरंगजेबने जब सेनासहित दक्षिणमें युद्ध करनेके लिये गमन किया तो राव अनिरुद्धसिंह भी सेनासहित उनके साथ गये। दाक्षिणके एक प्रबल युद्धमें एक समय शत्रुपक्षकी सेनाने, बादशाह औरंगजेबके महलकी बेगमें जिन डेरोंमें निवास करती थीं, उन डेरोंपर आक्रमण किया तब राव अनिरुद्धसिंहने विषम वीरता प्रकाश करके उन शत्रुओंको विताडित कर राजरानियोंका उद्धार किया। इससे औरंगजेबने उनके प्रति अत्यन्त संतुष्ट होकर उनसे पूछा, "कि आप क्या पुरस्कार चाहते हैं?"

वीरश्रेष्ठ अनिरुद्धने कहा, " मैं अन्य कोई पुरस्कार नहीं चाहता, मैं इस समय आपके पीछे चलनेवाले सेनादलके अधिनायक पदपर नियुक्त हुआ हूँ, आप उसके बदलेमें मुझे सबके आगे सेनादलके नेताका पद दीजिये। औरंगजेबने तुरन्त ही उस वीरकी यह प्रार्थना पूर्ण की। बादशाह औरंगजेब बीजापुरके जीतनेमें नियुक्त हुए, राव अनिरुद्धने उस समय भी अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश कर बडे साहसके साथ बादशाहको संतुष्ट किया था।

बूँदीके इतिहासमें फिर लिखा गया है कि बूँदीके प्रधान सामन्त दुर्जनसिंहके साथ विवाद होनेसे राव अनिरुद्धसिंह विपत्तिके मुखमें पडे। विवादके पीछे दुर्जनसिंहने शीघ्रतासे दक्षिणके डेरोंको छोड अपने अधिकारी देशमें आकर स्वजातीय सेनाको सजाकर बूँदीकी राजधानीमें आय बलवन्तसिंहके मस्तकपर बूँदीका राजतिलक दिया। बादशाह औरंगजेबने यह समाचार पाकर शीघ्र ही राव अनिरुद्धसिंहके अधीनमें एक शिक्षित सेनाको भेजकर दुर्जनसिंहको भगाने और उनके अधिकारी देशोंको बूँदीराजके अधिकारमें करनेके लिये भेजा। अनिरुद्धसिंहने सेनासहित बूँदीमें आकर दुर्जनसिंहको उचित दंड दे तथा बलवन्तको सिंहासनसे भ्रष्ट करके उनके अधिकारी देशोंको राज्यके अधिकारमें कर लिया, इसके पीछे राव अनिरुद्धसिंहने राज्यशासनकी सुव्यवस्था की। बादशाहके पुत्र शाहआलम भारतसाम्राज्यके उत्तरविभागके शासनकर्तारूपसे नियुक्त होकर लाहोरको गये। राव अनिरुद्धसिंह वहाँ शान्ति स्थापन करनेके लिये गये। आमेरके महाराज विष्णुसिंह भी उसी कार्यके लिये वहाँ भेजे गये थे। राव अनिरुद्धसिंहने वहाँ कुछ काल निवास करके पीछे प्राण त्याग किये।

उक्त इतिहासलेखकने लिखा है कि " राव अनिरुद्धसिंहने बुधसिंह और जोधसिंह नामवाले दो पुत्र छोडे, बडे पुत्र बुधसिंह थे, इन्हींको पिताका राज्यसिंहासन प्राप्त हुआ। बादशाह औरंगजेब बुधसिंहके अभिषेक होनेके कुछ ही दिन पीछे औरंगाबाद नामक जिस स्थानमें रहते थे, वहाँ घोररूपसे पीडित हुए, यहाँतक कि उस रोगसे इनके जीवनमें भी सन्देह हुआ। इनकी मृत्युकी सम्भावना जानकर राज्यके सभी सामन्त राजपुरुष तथा अमीर उमराओंने बादशाहसे विशेष आग्रहके साथ कहा कि आपके सिंहासनपर उत्तराधिकारीस्वरूपसे कौन बैठेगा, उसको आप इसी समय नियत कर दीजिये। मृत्युके मुखमें पडे हुए बादशाह औरंगजेबने कहा, कि किसके मस्तकपर राजमुकुट शोभायमान होगा, यह जगदीश्वरकी इच्छा है! मैं जगदीश्वरकी इच्छानुसार ही इच्छा करता हूँ कि मेरा पुत्र बहादुरशाह आलम मेरे सिंहासनका उत्तराधिकारी हो, परन्तु मुझे ऐसा अनुमान होता है कि कुमार आजिम भी अपने शस्त्रबलसे भारतके सिंहासनपर बैठनेकी चेष्टा करैगा। वास्तवमें बादशाहने जो बात कही थी अन्तमें वही हुआ। आजिमशाह दक्षिणी सेनादलकी सहायतासे अपने बलको प्रबल जानकर सिंहासन लेनेके लिये अपने बडे भ्राताके साथ सामना करनेके

लिये तैयार हुआ। इसने अपने बडे भाईको रणभूमिमें राजमुकुट लेकर भाग्यकी परीक्षाके लिये धौलपुरमें बुला भेजा। जो हिन्दूराजा बहादुरशाहकी ओर थे उन सभी राजाओंको बुलाकर राजनैतिक व्यवस्थाको सुना दिया। उन आये हुए राजाओंमें बूँदीके राव बुधसिंह भी थे। उस समय बुधसिंहकी अवस्था बहुत थोडी थी, परन्तु उस समय यह अपने अनुज जोधसिंहकी मृत्युसे अत्यन्त शोकित थे। जोधसिंहकी मृत्युका समाचार पाते ही बादशाह बहादुरशाह आलमने बुधसिंहको अपनी राजधानी बूँदीमें जाकर श्राद्ध करनेकी आज्ञा दी, राव बुधसिंहने कहा, "बादशाहकी ऐसी अवस्थाके समय मुझे बूँदीमें जाना किसी प्रकार भी उचित नहीं है; धौलपुरके रणक्षेत्रमें—कि: जहाँ बहुतसे युद्धोंमें अनेक वीरोंने अपना बलविक्रम प्रकाश करके प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जिस रणभूमिमें मेरे पूर्वपुरुष शत्रु-शालने जीवन त्याग किया था, उसी पवित्र रणभूमिमें जाकर बादशाहकी विजय-प्राप्तिके लिये मैं अस्त्र धारण करके अपने पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिकी रक्षा करूँगा, इस समय मैं अपना यही कर्तव्य समझता हूँ।"

"शाह आलम सेनाके साथ लाहौरसे और आजिम अपने पुत्र वेदारवक्तके साथ युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। दोनों ओरकी सेना शीघ्र ही धौलपुरके समीप जाजौ नामक स्थानमें सम्मुख हुईं; तत्काल भयंकर युद्धकी आग भडक उठी, भारतवर्षके इतिहासमें इस प्रकारका लोमहर्षण घोर युद्ध और कभी नहीं हुआ था। यदि केवल एक-मात्र बादशाहके कुमार ही सिंहासनप्राप्तिके लिये मुसलमानोंकी सेनाकी सहायतासे रणभूमिमें उपस्थित होते तो ऐसे युद्धका अंतिम फल जैसा होना उचित था वैसा ही हो जाता, अर्थात् प्रबल युद्धके पीछे एक ओरकी सेनाका दल विश्वासघातकताका कार्य करके युद्धको विध्वंस कर देता, परन्तु इस युद्धमें ऐसा नहीं हुआ। राजपूतानेके प्रत्येक राजा ही अपनी २ सेनाके साथ शाहआलम और आजिम इन दोनोंके सिंहासन प्राप्तिमें एक एककी सहायता करके परस्पर स्वजातीय सेनादलके साथ युद्ध करनेमें नियुक्त हुए। दोनों मुसल्मानोंको सिंहासन पानेकी आज्ञाको पूर्ण करनेके लिये राजपूत राजाओंने आपसमें ही युद्ध करके अपना नाश करनेमें कुछ भी कसर न की। दतिया और कोटा राज्यके दोनों राजा दीर्घकालतक कुमार आजिमके अधीनमें दक्षिणके युद्धमें नियुक्त थे। कुमार आजिम इनके ऊपर विशेष संतुष्ट रहते थे, इस कारण उक्त दोनों राजाओंने बादशाह और-गजेबकी अन्तिम इच्छाकी ओर दृष्टि न रखकर अन्यायके साथ छोटे कुमारको सिंहासनपर बैठालनेके लिये आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूँदीके महाराजके साथ दतियाके अधीश्वरकी विशेष मित्रता थी, और दोनोंने ही दक्षिणके युद्धमें विशेष वीरता प्रकाश करके प्रशंसा प्राप्त की थी, परन्तु इस समय दतियाके महाराज अपने प्यारे मित्र अनिरुद्धके पुत्र बुधसिंहके विरुद्धमें खडे होते हुए कुछ भी लज्जित न हुए। कोटेके

(१) जोधसिंहकी मृत्युका वृत्तांत कर्नल टाड साहबके दूसरी बारके भ्रमण वृत्तान्तमें वर्णन किया जायगा।

(२) मित्रके पुत्रके सम्मुख शस्त्र धारण करनेमें लज्जा कैसी? राजपूत जिस पक्षका अव-लम्बन करते हैं उसके लिये सगे पिता पुत्र भी एक दूसरेके सम्मुख शस्त्र धारण करते हैं आलो—

महाराज रामसिंहने एक गुप्रकार्यके वशीभूत होकर शाहआलमके विरुद्ध आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूंदीके महाराजने चिरकालसे हाडाजातिके सबमें प्रधान नेतारूपसे बादशाहकी सभा तथा सभी स्थानोंमें सबसे ऊंचा संमान प्राप्त किया था। उसी कारणसे कोटेके महाराजके हृदयमें भयंकर विद्वेषने आश्रय लिया था। कोटेके महाराज रामसिंहने हाडाजातिके शिरस्थानीय पदको प्राप्त करने तथा सम्मान पानेकी आशासे ही आजिमका साथ दिया। बुधसिंह शाह आलमके पक्षमें नियुक्त थे,इस कारण आजिमकी विजय होते ही बुधसिंहको दंड दिया जायगा, और उनको अपना प्रार्थित फल मिल-जायगा, इसी कारणसे उनके हृदयमें अनेक शंकाएँ उदय होती थीं। वास्तवमें जय-प्राप्तिके पहिले ही आजिमने कोटेके महाराज रामसिंहको हाडाजातिका शिरमौर कह-कर उनको पद और सम्मान दिया था। युद्ध होनेके पहिले कोटेके महाराज रामसिंहने बुधसिंहके निकट इस मर्मका एक पत्र लिखा कि जिससे वह शाहआलमका पक्ष छोडकर आजिमकी ओर आ मिले, उस पत्रको पाते ही राव बुधसिंहने अत्यन्त क्रोधित होकर यह उत्तर दिया, कि हमारे पूर्वपुरुषोंने रणक्षेत्रमें असीम वीरता प्रकाश करके प्राण त्याग किये हैं, उसी युद्धभूमिमें मैं अपने न्यायके अनुसार बादशाह शाह आलमका पक्ष छोडकर अपने वंशमें कलंकका टीका लगाना नहीं चाहता। इसीसे जाजौके रणक्षेत्रमें दोनों बादशाह कुमारोंके समान राजपूत राजाओंने भी एक २ के पक्षका आश्रय ले भविष्यमें अपने भाग्यकी उन्नति करनेके लिये नंगी तलवारें हाथमें ले महासंग्रामकी अग्निको प्रज्वलित कर दिया"।

"राव बुधसिंहने रणभूमिमें बादशाह शाहआलमके द्वारा एक प्रधान सेनाके नेता पदपर नियुक्त हो इस प्रकारका अतुलनीय साहस और शूरवीरता प्रकाश की कि उसीसे बादशाह बहादुरशाह आलम रणमें विजय पाय शत्रुओंसे शून्य होकर भारतके राज्यसिंहासनपर शोभायमान हुए। दोनों ओरकी राजपूत सेनाओंने इस युद्धमें विशेष आघातोंको सहन किया। कोटेके हाडाजातिके अधिराज रामसिंह और बुन्देलोंके अधिपति दतियाके दलीप यह दोनों ही उस रणभूमिमें आजिमके स्वार्थकी रक्षाके कारण मारे गये। आजिम और वेदारबक्त इन दोनोंने भी मृत्युके साथ ही साथ सिंहासनकी आशाको छोड दिया"।

"जाजौके युद्धमें हाडावीर बुधसिंहने विशेष वीरता प्रकाश की थी, इसी कारणसे बादशाह बहादुरशाह आलमने उनको राव राजाकी उपाधि दी, और उनको अपना परममित्र बना लिया। बादशाह जितने दिनोंतक जीवित रहे उतने दिनों-तक उनकी वह मित्रता अचल रही। बादशाह बहादुरशाहकी मृत्युके पीछे सिंहासन लेनेके लिये राज्यमें फिर हलचल पड गई। उसी कारणसे औरंगजेबके सभी पोते मारे गये। पीछे फर्रुखसियरके दिल्लीके सिंहासनपर बैठते ही बाराके

—चक्र महाशयने आलोचना अच्छी की पर खेद है कि उन्होंने फिर भी राजपूत जातिके धर्म और स्वभावके मर्मको न जाना।

सैयद दोनों भ्राताओंने उनके अधीनमें असीम शासनसामर्थ्य प्राप्त करके राज्यमें घोर अत्याचार कर धन आदिको लूटकर राज्यको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। सैयदके दोनों भ्राताओंने जिस समय बादशाह फर्रुखसियरको सिंहासनसे उतारकर उनको मार डालनेके लिये जिस षड्यन्त्रजालका विस्तार किया था उस समयमें स्वयं बूंदीके महाराज यथार्थ राजभक्तके समान बादशाह फर्रुखका उन नराधम दोनों सैयदोंके हाथसे उद्धार करनेके लिये आगे बढे। इस उद्धार करनेवाली सेनाके जाते ही हाडा सेनादलके साथ दोनों सैयदोंकी सेनाने दिल्लीकी राजधानीमें घोर युद्ध किया। और उस घोर युद्धमें बुधसिंहके चचा जयतसिंह तथा और भी बहुतसे सामन्तोंने अपने जीवनका बलिदान किया।"

"जाजौकी युद्धभूमिमें कोटा और बूंदीके दोनों देशोंके राजाओंमें जो शत्रुता उत्पन्न हुई, और जिस संग्राममें कोटेके महाराज रामसिंह मारे गये; उसी युद्धके समयसे दोनों राजवंशोंमें वही शत्रुता प्रबल हो गई थी। विशेष करके कोटेके महाराज भीमसिंह पिताका बदला लेनेके लिये अपने मनही मनमें बहुत दिनोंसे उपाय सोच रहे थे। इस समय सैयदके दोनों भ्राताओंको क्रोधित होता हुआ देखकर भीमसिंह दोनों सैयदोंको संतुष्ट करनेके साथ बदला देनेके लिये राजपूत जातिके जातीय धर्मको भूलकर अत्यन्त कापुरुषोंके समान अभिनय करनेको तय्यार हुए। राव राजा बुधसिंह इस समय दिल्लीकी राजधानीके बहिर्देशमें स्थित अपने घोडोंको शिक्षा दे रहे थे। उस समय कोटेके महाराज भीमसिंह ठीक समय विचार कर अपने अनुचरोंके साथ वहां जाय राव राजा बुधसिंहको पकडकर उन्हें दोनों सैयदोंके हाथमें देनेके लिये तैयार हुए। यद्यपि उस समय बुधसिंहके साथ बहुत थोडे सेवक थे तथापि उन्होंने बुधसिंहको घिरा देख कोटाके महाराजके साथ युद्ध करते २ निर्विघ्नतासे उनकी रक्षा की थी। राव बुधसिंहने देखा कि इस समय दोनों सैयद अत्यन्त बलवान् हो गये हैं, बादशाह फर्रुखसियरके उद्धारका अब कोई उपाय दृष्टि नहीं आता, तब अन्तमें वह अपनी रक्षा करनेके लिये राजधानी छोडकर भाग गये। बहुत थोडे दिनोंके पीछे ही बादशाह फर्रुखसियरको दोनों सैयदोंने मार डाला, राज्यके चारों ओर अशान्तिका राज्य हो गया, इस समय उन पिशाचबुद्धि दोनों सैयदोंका यह लोमहर्षण कार्य देखकर अपने २ प्राणकी रक्षा करनेके लिये एक २ करके सभी देशीय राजा अपने २ राज्योंको चले गये।"

उक्त इतिहासमें वर्णन किया गया है कि "इस समय आमेरके महाराज जयसिंहने बूंदीके महाराज बुधसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये चेष्टा की। राव बुधसिंह इस समय आमेरके महाराजके यहां आतिथ्यता स्वीकार कर उनके यहां स्थिति कर रहे थे। आमेरके महाराजके साथ बुधसिंहके झगडेका कारण यह था कि राव बुधसिंहने जयसिंहकी एक भगिनीके साथ विवाह किया था। और पहिले यह बात स्थिर हो चुकी थी कि जयसिंहकी उसी भगिनीके साथ बादशाह बहादुरशाह आलमका विवाह होगा। परन्तु जाजौके युद्धमें बुधसिंहके अतुलबल प्रकाश करनेसे

बादशाह शाहआलम अपने मित्र बुधसिंहसे अत्यन्त ही संतुष्ट हुए, और अपने साथ उस सुन्दरी राजकुमारीका विवाह न करके बुधसिंहके साथ उसका विवाह करनेके लिये कहा। जयसिंहने शीघ्र ही बादशाहकी आज्ञानुसार बुधसिंहके साथ अपनी बहिनका विवाह कर दिया। दुर्भाग्यसे जयसिंहकी भगिनीके कोई पुत्र नहीं हुआ। पहिले बुधसिंहने मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें बेगूंके काला मेघकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। उस रानीके गर्भसे बुधसिंहके दो सन्तान उत्पन्न हुई थीं उन छोटे २ सौतेले लडकोंको देखकर जयसिंहकी भगिनीके मनमें ईर्षाकी आग भडक उठी। बुधसिंहके परदेश चले जानेपर जयसिंहकी उस भगिनीने अपनेको गर्भवती कहकर प्रकाशित किया। और एक छोटेस लडकेको गुप्तभावसे लेकर, मेरे गर्भसे यह कुमार जन्मा है, यह सबमें प्रगट कर दिया। जब राव बुधसिंह अपनी राजधानीमें आये तब तुरन्त ही उनको वह पुत्र खिलानेके लिये दिया। बुधसिंह यह समस्त वृत्तान्त जान गये और रानीके इस आचरणसे महा क्रोधित हुए। अपने उन दोनों पुत्रोंके इससे अनिष्ट होनेकी संभावना विचार कर उन्होंने यह समस्त समाचार जयसिंहको लिख भेजा। महाराज जयसिंह यह समाचार सुनकर महा क्रोधित हो अपनी सौतेली बहिनका तिरस्कार करने लगे परन्तु उनकी बहिन उनके इस तिरस्कारसे कुछ भी लज्जित न हुई, वरन उसने समझा कि स्वामी महाराज बुधसिंह और भ्राता जयसिंहने मेरे सतीत्वमें सन्देह किया है अथवा इसने छल करके दूसरेके पुत्रको अपना पुत्र बनाया है उनको यह दृढ विश्वास हो गया है, यह अनुमान करके वह उसी समय अपने भाई जयसिंहकी कमरसे तलवार निकालकर उन्हींका संहार करनेके लिये तैयार हुई। तब जयसिंहने तुरन्त ही वहाँसे भागकर अपने प्राणोंको बचाया''।

बूँदीके इतिहासमें आगे लिखा है कि बुधसिंह तथा उक्त भगिनीके द्वारा अपमानित होकर आमेरके महाराज जयसिंहने राव बुधसिंहको बूँदीके सिंहासनसे उतारनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा की। जयसिंहने सबसे पहिले बूँदीके प्रधान सामन्त इन्द्रगढके अधीश्वर देवसिंहको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। इसमें राजभक्त देवसिंहने सब प्रकारसे अपनी असम्मति प्रगट की। पीछे जयसिंहने करवरके सामन्त सालिमसिंहको बूँदीका राजपद देना चाहा। उन्होंने उसके ग्रहण करनेमें कुछ भी असम्मति प्रगट न की। सालिमसिंह बूँदीके राव बुधसिंहके अधीन सामन्त तथा तारागढके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "महाराज जयसिंह अपने बहिनोई बूँदीराज राव बुधसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये तैयार हुए थे, यह उनका और भी एक चिर-अभिलाषित राजनैतिक षड्यंत्रका अंशमात्र था; इस समय महाराज जयसिंह मुगल-बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे मालवा अजमेर और आगरेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे। उन्होंने उस महान् ऊँचे पदपर स्थित होकर आसपासके निवासी अन्यान्य

राजाओंके ऊपर अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार कर उनको अपने अधीनमें करनेकी अभिलाषा की, विशेष करके दिल्लीका सिंहासन लेनेसे इस समय मुगल सम्राट् वंशमें आत्मविग्रह उपस्थित होनेके कारण महाराज जयसिंहने इस सुअवसरमें अपनी बहुत दिनोंकी इस अभिलाषाको पूर्ण करनेका विचार किया । शीघ्र ही बादशाह फर्रुखसियरके सिंहासनसे रहित होते ही महाराज जयसिंहने अपन उस आशयको सफल करनेका यथार्थ अवसर जानकर दिल्लीसे अपने राज्यमें आकर कार्य करना प्रारंभ किया "।

इस समय आमेरराज्यकी भूमिका परिमाण बहुत थोडा था, सबसे पहिले महाराज जयसिंहने अपने राज्यकी सीमाके जितने भी देश थे उन सबको अपने अधिकारमें करनेका विचार किया। और दूसरी ओर जिन छोटे२ राजाओंकी सेना मुगल बादशाहकी आज्ञानुसार महाराज जयसिंहके अधीनमें नियुक्त थी, जयसिंहने उनको अपने अधीन पदपर वरण कर लिया ।

पूर्व वर्णित युद्धमें आमेरराजकी सीमामें लालसोढके पचवाना चौहान, गोरा, नीमराणा इत्यादि अनेक अनधीन सामन्त थे। वह जयपुरके महाराजको न तो कर देते थे और न उनके अधीनमें कोई कार्य करते थे, परन्तु आवश्यकतानुसार उस प्रत्येक सम्प्रदायमें अपनी २ सेनाके साथ आमेरके अधीनमें मिलकर रणभूमिमें जाते थे, परन्तु शेखावाटीके सामन्त उस प्रकारसे सेनाके साथ आमेरके महाराजके साथ नहीं मिलते थे। राजौरके बडगूजर और बियानाके जादौ इत्यादि प्राचीनकालके सामन्त गण भी पहिलेक समान स्वाधीनभावसे रहते थे, परन्तु मुगलोंके शासनके पतनसमयमें उन्होंने शत्रुओंके कराल ग्राससे रक्षा करनेमें अपनेको असमर्थ जानकर अन्तमें अपने २ उन प्राचीन स्वाधीन देशोंको आमेर राजके अधीनमें स्वीकार कर उनकी आज्ञा पालन और आवश्यकतानुसार सेनाकी सहायता करना स्वीकार किया था। यद्यपि महाराजने उक्त अधीश्वरोंको अपने हस्तगत कर लिया था, परन्तु उन्होंने उसी प्रकार सरलतासे बूँदीके महाराजको हस्तगत कर अपनी अनभिज्ञताका परिचय दिया।बिना रुधिर बहाये बूँदीके महाराज राव बुधसिंहको अपने अधीनताकी जंजीरमें बांधना कठिन जानकर महाराज जयसिंह बुधसिंहको सिंहासनसे उतारकर उनके पदपर अपने अभिलाषित मनुष्यको अभिषिक्त करनेम प्रवृत्त हुए ।

जिस समय महाराज बुधसिंह अपने साले जयसिंहकी राजधानी आमेरमें उनकी आतिथ्यता स्वीकार करते थे, उस समय जयसिंह गुप्त षड्यंत्रजालका विस्तार करके बुधसिंहके सर्वनाश करनेकी चेष्टा कर रहे थे । सबसे पहिले जयसिंहने बुधसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया, "कि आप जो आमेरराज्यमें निवास करते रहैं, तो मैं प्रतिदिन आपको तथा आपक सेवकोंके लिये पाँचसौ रुपया देता रहूँगा । " बुधसिंहके चचा जयसिंह जो आगरेके चौकमें सैयदोंकी सेनाके साथ संग्राममें मारे गये थे, और जिन्होंने अपना जीवन देकर बुधसिंहके प्राणोंकी रक्षा की थी, उनके

एक भ्राता इस समय बुधसिंहके साथ जैपुरमें निवास करते थे। जयसिंहने जो यह प्रस्ताव उपस्थित किया; उसका गुप्त उद्देश क्या था इसको वह भलीभाँतिसे समझ गये। उन्होंने शीघ्र ही इस भावका एक पत्र बूँदीको भेजा, कि वेगूवाली रानी (बुधसिंहने वेगूके जिस सामन्तकी कन्याके साथ विवाह किया था) शीघ्र ही अपने पुत्रोंके साथ अपने पिताके यहाँको चली जायँ। कुछ दिनोंके पीछे उन्होंने बुधसिंहके समस्त अनुचरोंको अत्यन्त गुप्तभावसे जैपुरके बाहर इकट्ठा करके बुधसिंहकी समस्त विपत्तियोंका समाचार कह सुनाया। राव राजा बुधसिंह जयसिंहकी विश्वासघातकता और मारनेकी चेष्टा जानकर शीघ्र ही तीनसौ हाडा सेनाको साथ ले जैपुरके बाहर हुए। यद्यपि उनके साथ उस समय केवल तीनसौ सानिक थे तथापि उस वीरके हृदयमें इस समय इस प्रकारकी प्रबल आशा विराजमान थी कि इस तीनसौ सेनाकी सहायतासे ही मैं इस महाविपत्तिसे अपना उद्धार कर सकूंगा। राव राजा बुधसिंहने उन तीनसौ अनुचरोंके साथ अपनी राजधानी बूंदीकी ओरको यात्रा प्रारंभ कर दी। परन्तु उनके पंजोला स्थानमें जाते ही आमेरराज जयसिंहकी पूर्व आज्ञानुसार जैयपुरके प्रधान पाँच सामन्तोंने सेनासहित राव राजा बुधसिंहपर आक्रमण किया। वह तीनसौ सैनिक शीघ्र ही शत्रुओंकी सेनाके द्वारा घर लिये गये। राव बुधसिंह उस विपत्तिसे कुछ भी भयभीत न हुए। उस बहुत थोडी सेनाके साथ उन्होंने युद्ध करना प्रारंभ किया। उन राजपूतोंने युद्धमें अपनी २ वीरताकी पराकाष्ठा दिखानेमें किसी भाँतिकी कसर न की, परन्तु राव राजा बुधसिंह असीम साहसी केवल तीनसौ हाडासेना साथ लेकर इस प्रकार महापराक्रमके साथ युद्ध करने लगे। जैपुरके उक्त ईशरदा, सेबाड और भावर इत्यादि स्थानोंके पाँच सामन्त और उनके अधीनकी नीची श्रेणीके बहुतेस सरदार मारे गये। आजतक सामन्तोंके समाधिमंदिर उस स्थानमें विराजमान होकर बुधसिंहकी प्रतिहिंसाकी साक्षी दे रहे हैं। परन्तु उपरोक्त युद्धमें राव बुधसिंहके उक्त चचा भी मारे गये। इस समय बुधसिंहकी सेनाकी संख्या बहुत घट गई थी, इससे वह उस थोडासा सेनाकी सहायतासे शत्रुओंकी सेनामेंसे निकल बूँदीमें न जा सके, इसीसे वह निर्विघ्नतासे पहाडी रास्तेसे चले गये। जयसिंहने इस प्रकारसे राव बुधसिंहको भगाकर कारडके सामन्त दलेलसिंहके साथ अपनी कन्याका विवाह करके उनको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त कर दिया।

"इसका वर्णन तो पहिले ही कर चुके हैं कि कोटाराजवंशके साथ बूँदीके राजवंशकी घोर शत्रुता हो गई थी। यद्यपि दोनों राजवंशोंका जन्म एक ही मूलसे हुआ था, और बूँदीका राजवंश श्रेष्ठ तथा कोटेका राजवंश छोटा था, यद्यपि दोनों राजाओंकी नाडियोंमें एक ही रुधिर बहता था, परन्तु जातिमें वैरभावके कारण एक दूसरेका विनाश करनेमें विशेष तत्पर थे। राव बुधसिंहको महाविपत्तिग्रस्त देखकर कोटेके महाराज भीमसिंह इस समय अत्यन्त आनन्दित हो मारवाडके अधीश्वर महाराज अजितसिंह और दिल्लीके बादशहाके दोनों सैयदमन्त्रियोंके साथ दृढ मित्रता करके उनकी सहायतासे भरवार, हाडोती इत्यादि देशोंमें अपनी प्रधानता विस्तार करनेमें लगे। उन्होंने इस

समय निर्भय हो सम्बलनदीको अपने राज्यकी सीमामें निर्देश करके उक्त नदीके पूर्व तीरवर्ती बूँदी राज्यके खास अधिकारी देशके पृथ्वीके भागोंको शीघ्रतासे कोटेके राज्यके अधिकारमें कर लिया "।

राव बुधसिंहको इस प्रकारसे चारों ओरसे शत्रुओंने घेर लिया, यह महाविपत्तिके समुद्रमें मग्न होकर राजपूत जातिके स्वाभाविक पराक्रमके साथ अपने पिताकी राजधानी-पर फिर अधिकार करनेके लिये बारम्बार चेष्टा करने लगे। अधिक क्या, इसी कारणसे बारम्बार युद्ध हुआ और उन युद्धोंमें बहुतसी हाडा सेना मारी गई। परन्तु अभागे बुध-सिंहका किसी प्रकार भी मनोरथ सिद्ध न हुआ। अन्तमें मनके दुःखको मनमें ही रख-कर ससुरालमें ही निवास करनेके पीछे उन्होंने प्राण त्याग दिये। राव बुधसिंहने दो पुत्र छोडे, बडेका नाम उमेदसिंह और छोटेका नाम दीपसिंह था।

राव बुधसिंहके परलोक जानेके पीछे उनके दोनों कुमार भी महाविपत्तिके मुखमें पडे। उनके वंशके शत्रु आमेरके महाराज जयसिंहकी आज्ञानुसार मेवाडके महाराणाने बेगूदेशको अपने अधिकारमें करके उमेदसिंह और दीपसिंहको मामाके यहांसे निकाल दिया। निःसहाय आश्रयहीन विपत्तिमें पडे हुए राजकुमार दोनों बालक उमेदसिंह और दीपसिंह एकमात्र साहसमें भरकर निर्भय हो अपने पिताके कितने ही विश्वासी सेवकोंको लेकर पुचैल नामक गहन देशको चले गये। कुछ दिनोंके उपरान्त कोटेके महाराज भीमसिंहके प्राण त्याग करते ही राजा दुर्जनशाल कोटेके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए। अनाथ उमेदसिंह और दीपसिंहने उस विपत्तिमें पडकर कहीं भी सहायताकी आशा न जान अन्तमें अपनी जातिके उक्त दुर्जनशालके निकट अपनी वह शोचनीय अवस्था सुनाकर उनसे सहायताकी प्रार्थना की। कोटेके महाराज दुर्जनशाल अत्यन्त उदार और दयालु-हृदय थे इन्होंने जातिके वैरभावको भूलकर उमेदसिंह और दीपसिंहका उद्धार किया वरन् वह इतना करके भी शान्त न हुए जिससे इनको फिर बूँदीका राज्य मिल जाय, इसमें भी उनकी सहायता करनेमें तत्पर हुए।

चतुर्थ अध्याय ४.



उमेदसिंहका जयपुरकी सेनाको परास्त करना--डबलाना नामक स्थानमें युद्ध--उमेदकी पराजय और भागना--उनके घोडेकी मृत्यु--चम्बलके ध्वंसस्तूपमें उमेदका आश्रय लेना- उमेदका बूँदीको जय करना-फिर बूँदीसे उमेदका भागना--उनकी विमाताका उमेदके साक्षात होना--उक्त विमाताका हुलकरसे सहायता मांगना--हुलकरका उमेदको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेकी प्रतिज्ञा करना--युद्धके लिये तैयार होना--जयपुरके महाराजका उमेदको बूँदीका महाराज कहकर स्वीकार करना- उमेदको बूँदीके राज्यकी प्राप्ति होना--महाराष्ट्रोंका अत्याचार करना -इन्द्रगढके अकृतज्ञ सामन्तोंका प्राण नाश-उमेदका राज त्याग करना-अजितसिंहका अभिषेक-पितामह

उमेदसिंहके प्रतिपोते विष्णुसिंहका अविश्वास प्रकाश करना--फिर परस्परमें मिलन होना—हाडोती राज्यको छोडकर अंग्रेजी सेनाका भागजाना- उमेदका उस सेनाकी सहायता करना—उमेदसिंहकी मृत्यु-बूँदीके महाराजके साथ गवर्नमेण्टका संधिबंधन-संधिपत्र--विष्णुसिंहके प्रति गवर्नमेण्टका अनुग्रह प्रकाश करना—विष्णुसिंहकी मृत्यु—उनके चरित्रोंकी समालोचना करना—राव राजा रामसिंहका अभिषेक।

संवत् १८९० सन् १७४४ ईस्वीमें जिस समय उमेदके पिताके शत्रु महाराज जयसिंहने प्राण त्याग किये थे, उस समय उमेदसिंहकी अवस्था केवल तेरह वर्षकी थी—जब उमेदसिंहने जयसिंहकी मृत्युका समाचार पाया तब उस बालावस्थामें ही उन्होंने असीम साहसके साथ अपनी जातिके बहुत थोडे अनुचरोंके साथ बाहर जाकर सबसे पहिले पाटन और गेनोली दोनो देशोंपर आक्रमण करके अपना अधिकार कर लिया। जब इस बातका सर्वत्र हाडोती देशमें प्रचार हो गया कि बूँदीके मृतक महाराज बुधसिंहके बालक पुत्र उमेदसिंह अपने पिताके अधिकारको संग्रह करनेके लिये बाहर हुए हैं, तब प्राचीन हाडाजातिके दलके दल चारों ओरसे आकर उमेदकी विजय-पताकाके नीचे इकट्ठे होने लगे। कोटेके उदारचित्त अधीश्वर दुर्जनशालको जब यह समाचार ज्ञात हुआ कि एक तेरह वर्षका बालक उमेदसिंह राजपूतवीरके समान राजनैतिक रंगभूमिमें आकर वीरता दिखा रहा है, तब उन्होंने तुरन्त ही महा आनंदित होकर उमेदकी सहायताके लिये अपनी सेनाको भेज दिया।

जयसिंहकी मृत्युके पीछे महाराज ईश्वरीसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान होकर पिताकी निर्दिष्ट राजनैतिक नीतिको चलानेमें प्रवृत्त हुए। उन्होंने विचार किया कि हाडाजातिकी श्रेष्ठ शाखा बूँदीके राजवंशके समान छोटीशाखावाले कोटेके राजवंशको भी अवश्य ही जैपुरकी अधीनता स्वीकार करनी होगी। कोटेके महाराज दुर्जनशाल जयपुरके महाराज ईश्वरीसिंहकी उस अन्यायकारी ऊँची अभिलाषाके प्रति घृणा दिखाकर उमेदकी सहायता करनेमें प्रवृत्त हुए, ईश्वरीसिंहने शीघ्र ही कोटेके महाराजके विरुद्ध युद्ध करनेका विचार कर कोटेराज्यपर आक्रमण किया। इस कोटेके आक्रमणका शेष फल क्या हुआ; वह इस बूँदीके इतिहासमें प्रकाशित नहीं किया गया, वह हमारे पाठकोंको कोटेके इतिहासमें मिलेगा।

ईश्वरीसिंहने कोटेसे भागनेके समय एक दलवृद्ध लोहारी नामक पन्थी सेनाका नायक जिस स्थानमें उमेदसिंह जा रहे थे वहाँ उनपर आक्रमण करनेके लिये भेजा उस लोहारी नामक स्थानक मीनाजाति उक्त पहाडी देशके आदिम निवासी थे, यद्यपि हाडाजातिने उनकी स्वाधीनता हरण कर ली थी तथापि उन मीनागणोंने हाडाराजके अनेक समयपर बहुतसे उपकार किये थे तथा वे उनके साथ युद्धोंमें भी गये थे। बालक उमेदसिंहकी विषम वीरता और साहसको देखकर तथा उनकी शोचनीय दुर्दशा देखकर उस मीना जातिका हृदय भी इनकी ओरको खिच गया। पाँच हजार धनुषधारी मीना उमेदसिंहका पक्ष समर्थन कर उनकी सहायता करनेके निमित्त इकट्ठे होकर उमेदसिंहके अधीनमें युद्ध-

भूमिमें जानेके लिये विशेष आग्रह प्रकाश करने लगे। वीरबालक उमेदसिंहने उस मीना सेनाकी सहायतासे महा पराक्रमके साथ अग्रसर विचोरीनामक स्थानमें शत्रुओंके साथ समरानल प्रज्वलित कर दी। मीनाजाति अपने प्रबल पराक्रमसे शत्रुओंके ऊपर जाकर जिस समय उनके डेरोंको लूटने लगी उस समय उमेदसिंह नंगी तलवार हाथमें लेकर हाडासेनाकी सहायतासे जयपुरकी सेनादलपर आक्रमण करके उसका संहार करने लगे। उस समय अगणित शत्रुओंकी सेना मारी गई। उमेदसिंहने रणडंके और राजपताकापर अधिकार कर लिया। अंतमें जयपुरका सेनादल उस बालक वीरसे परास्त होकर अपने प्राणोंके भयसे भाग गया।

जैपुरके महाराजने उस वीरबालक उमेदसिंहकी वीरताका समाचार सुनकर तथा अपनी सेनाकी पराजय सुनकर उमेदसिंहको एकबार ही परास्त करनेके लिये नारायणदास खतरीके अधीनमें फिर अठारह हजार सेनाको भेजा। विचोरी नामक स्थानके युद्धमें जय प्राप्त करके उमेदसिंह भविष्य आशाको अलक्ष्यमें देखने लगे। जिस हाडाजातिके सामन्त वीरोंने अबतक सहायता नहीं की थी उमेदसिंहकी जयप्राप्तिसे वही इस समय महा आनंदित होकर दलके दल उनके साथ आकर मिलने लगे। उमेदसिंह इस समय पिताके सिंहासनको पानेके लिये इतने उत्तेजित हुए थे कि उन्होंने उस महायुद्धमें प्राणतक भी उत्सर्ग कर देनेकी प्रतिज्ञा की थी। इस समय जयपुरके महाराजकी भेजी हुई अठारह हजार सेना डबलाना नामक स्थानमें आकर इकट्ठी हुई। युद्ध करनेके पहिले उमेदसिंह कुलदेवी आशापूरा माताके मंदिरमें गये और भलीभांतिसे पूजा तथा प्रार्थना करके लौट आये, परन्तु मंदिरसे लौटते समय यह प्रतिज्ञा की कि क्या तो बूंदीपर ही अपना अधिकार होगा और नहीं तो मैं रणभूमिमें अपने प्राण खो दूँगा।

असीम साहसी हाडादलने भी उमेदके समान प्रतिज्ञा की कि क्या तो विजय ही होगी नहीं तो युद्धक्षेत्रमें प्राण त्याग करेंगे। दिल्लीके बादशाह जहाँगीरने बूँदीके अधीश्वर राव रतनको जो राजपताका दी थी; उमेदसिंह इस समयके युद्धमें उस पताकाको ले आये थे, हाडा सेनादल बूँदीकी उस प्राचीन राजपताकाके अधीनमें शीघ्र ही इकट्ठा हुआ; सम्मिलित हाडादलने संहारमूर्तिसे डबलाना सीमाको लांघते ही देखा कि प्रबल शत्रुओंकी सेनाको आक्रमण करनेके लिये आगे आ रही है। वीरश्रेष्ठ उमेदसिंह शत्रुओंकी सेना उनको अधिक देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, वरन् अपनी सेनाको चक्राकारसे सजाकर भाला हाथमें लेकर शत्रुओंके व्यूहको भेदनेके लिये आगे बढ़े। शीघ्र ही दोनों सनाओंका परस्पर मुकाबला हो गया। परन्तु हाडादलने इस प्रकार

उक्त विमाताका हुेलसाथ अपना अंतिम बल प्रकाश करके शत्रुओंके व्यूहपर आक्रमण

करनेकी प्रतिज्ञा करना--युद्धके ंकी सेना दृढ दल बाँधकर भी इस समय छिन्न भिन्न

कहकर स्वीकार करना- उमेदकं ळके पीछे शत्रुओंकी सेनाने फिर एक दल बाँधा, और उमेद-

अकृतज्ञ सामन्तोंका प्राण नाश· गोले वर्षाने लगी, परन्तु उमेदने उन गोलोंकी वर्षापर

कुछ भी ध्यान न दिया। फिर नंगी तलवार हाथमें लेकर शत्रुओंके व्यूहको भेद डाला। हाडासेनाने केवल तलवारसे ही शत्रुओंकी सेनाका संहार किया। परन्तु हाडादलने जितनी बार जयपुरकी सेनापर आक्रमण किया, उतनी ही बार उसकी अधिक हानि हुई। प्रथम आक्रमणमें उमेदसिंहके मामा पृथ्वीसिंह मारे गये। इसके पीछे मोटराके महाराज मर्जादसिंह नामक हाडाजातिके अधीश्वरके जिस समय जयपुरके सेनापति नारायणदास खतरीके मस्तकको काटनेके लिये चक्रमें भेजा था, उन्होंने भी उसी समय रणभूमिमें जाकर शयन किया। सारनके सामन्त प्रागसिंह तथा अन्यान्य नीचीश्रेणीके वीर भी धीरे २ प्राण त्याग करने लगे। अपने प्रधान २ वीरोंके मारे जानेपर भी वह अल्पवयस बालक वीर उमेदसिंह कुछ भी भयभीत न हुए। वरन् अपना अतुल बल विक्रम प्रकाश करते हुए शत्रुओंका संहार करने लगे। परन्तु अन्तमें अपने दुर्भाग्यसे उमेदसिंहका घोडा गोलोंके आघातसे घोररूपसे घायल हुआ, उसकी देहसे रुधिरकी धारा बहने लगी। बून्दीके इतिहासलेखकने लिखा है कि यद्यपि उमेदसिंह तथा उनकी सेनाने घोररूपसे बलविक्रम प्रकाश किया था परन्तु अन्तमें शत्रुओंकी सेनाके अधिक होनेसे शीघ्र ही इनकी पराजय हो गई। वीर सामन्तोंने उमेदको शत्रुओंके मुखमें पडा हुआ देखकर कहा, कि "यदि आपका प्राण रहेगा तो किसी न किसी समय अवश्य ही बूंदीपर अपना अधिकार हो जायगा, और यदि अपने ही इस रणभूमिमें अपने प्राणोंका बलिदान किया तो सभी आशाएँ लोप हो जायंगी, इसलिये आप युद्ध करना छोड दीजिये।

इतिहासलेखकने लिखा है कि "वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने महाशोकित और दुःखित होकर शीघ्र ही युद्धभूमिको छोड दिया। उमेदसिंह हताश होकरअपनी बचीबचाई सेनाको साथ लेकर सवाली नामक घाटी मार्गसे आये, इन्द्रगढको बहुत पास जानकर उस घायल हुई घोडीको विश्राम करानेके लिय आप उसपरसे उतर पडे। परन्तु जैसे ही इन्होंने उसका साज खोला कि वैसे ही उसेन प्राण त्याग दिये। वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहका हृदय शोकक आघातसे चलायमान हुआ; विचारे उमेद उस घोडीके सिरहाने बैठकर रुदन करने लगे। उस घोडीका नाम हुंजा था, वास्तवमें वह घोडी अधिक सम्मानके योग्य थी। यह घोडी ईरान देशकी थी, दिल्लीके बादशाहने उमेदके पिता बुधसिंहको वह घोडी उपहारमें दी थी और बुधसिंहने उसपर चढकर बहुतसे युद्धोंमें विजय प्राप्त की थी"। फिर जो घोडीका शोक हाडाराज उमेदसिंहने इस प्रकारसे किया तो इसमें कुछ आश्चर्य नहीं! कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "भविष्यत्में उमेदसिंहने बून्दीके सिंहासनको प्राप्त कर सबसे पहिले इस घोडीकी एक सुन्दर पत्थरकी मूर्ति बनवाकर बून्दीकी राजधानीके चौकमें स्थापित की। प्रत्येक हाडाजातिके वीरने ही उस मूर्तिका महान् ऊँचा सम्मान किया था।

(१) कर्नल टाड साहबने अपनी टीकामें लिखा है कि "मैंने हुंजाकी मूर्तिको देखकर उसको सलाम किया था। यदि मैं हाड़ाजातिमें निवास करता तो राजपूतोंके प्रत्येक युद्धके उत्सवके समयमें हाडाजातिके समान मैं भी उस मूर्तिके गलेमें माला पहराता।"

महा दुःखित हो उमेदसिंह इन्द्रगढ़में आये । यह इन्द्रगढ बूँदीके प्रधान सामन्तों-के अधिकारमें था । इन्द्रगढ़पति उमेदके पिताके आज्ञावाहक अधीन सामन्त थे, इन्होंने राजभक्तिके मस्तकपर कुठाराघात करके विश्वासहन्तास्वरूपसे आमेरके महाराजकी अधीनता स्वीकार की थी । उमेदसिंह इनके पास गये, इन्द्रगढके महाराजका सम्मान दिखाना तो दूर रहा वरन् उन्होंने अत्यन्त नराधमके समान उमेदसिंहकी प्रार्थनानुसार उनको एक घोडा भी नहीं दिया, वरन् उनको शीघ्र ही इन्द्रगढ छोड देनेके लिये कहा। उमेदसिंह इन्द्रगढके अधिपतिके इस व्यवहारसे अत्यन्त दुःखित और क्रोधित हो मनका क्रोध मनमें ही रखकर इन्द्रगढमें जलतकको भी ग्रहण न करके करवान देशकी ओरको चले गये । उस देशके अधीश्वर इन्द्रगढके महाराजके समान अराजभक्त विश्वासहन्ता नहीं थे । वह उमेदसिंहके आनेका समाचार सुनते ही बडी प्रसन्नतासे आगे बढ उनको बडे सम्मानके साथ ग्रहण करके अपने यहां लिवा लाये, और एक घोडा देकर वह अपनी सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करनेके लिये भी तैय्यार हुए । उमेदसिंहने उस समय देखा कि इस समय शीघ्र ही जयपुरकी सेनाके साथ युद्ध करना असंभव है तो जितने विश्वासी हाडाजातीय वीर इनके पास थ उन सबको यह कहकर विदा दी कि " इस समय अपने२स्थानको जाओ फिर सुअवसर आनेपर आपकी सहायता ग्रहण करूंगा ।" उमेदसिंह इस प्रकारसे सबको बिदा करके चम्बलके किनारे रामपुरा नामक स्थानके प्राचीन विध्वस्त महलमें जाकर रहने लगे ।

परन्तु वीरतेजस्वी उमेदसिंहको उस भावसे अधिक दिनतक रहना नहीं हुआ । कोटेके महाराज उदारहृदय दुर्जनशालने कि जिन्होंने अपने प्रबल पराक्रमसे आमेरके महाराज ईश्वरीसिंह और उनके सहयोगी महाराष्ट्रनेता आपाजी सेंधियाके करालग्राससे कोटेराज्यकी रक्षा तथा अंतमें ईश्वरीसिंह और आपासिंधियाको परास्त कर भगा दिया था, इस समय उन्होंने सबसे अधिक उमेदसिंहकी सहायता की । इधर हाडा-वतीके एक ऊंची श्रेणीके कविने उस बालक उमेदसिंहका पराक्रम और साहस देखकर अत्यन्त मोहित हो जिससे वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहको उनके पिताका सिंहासन मिल जाय इसमें विशेष यत्न किया । राजपूतकविके हाथमें केवल लेखनी ही शोभा नहीं पाती थी वरन् तलवार भी भलीभाँतिसे उसके करकमलमें शोभायमान होती थी । लेखनीके समान तलवारके चलानेमें भी राजपूत कवियोंको अभ्यास था। वह राजपूतकवि एक ओर तो लेखनीके बलसे इस प्रकार हृदयको उत्तेजित करनेवाली वीर गाथावलीमें उमेदकी वीरताका अभिनयरूपी काव्य बनाकर हाडाजातिको उत्तेजित करने लगे, और दूसरी ओर वह उसी प्रकारसे स्वयं अपनी तलवारके बलसे उमेदके सौभाग्यके सूर्यको उदित करनेके लिये आग्रहके साथ कार्यक्षेत्रमें चले । उन कविकी प्रार्थनापर कोटेके महाराज दुर्जनशालने शीघ्र ही अपनी सेनाको उन कविश्रेष्ठके अधीनमें बूँदीको जीतनेके लिये भेजा । वीरतेजस्वी उमेदसिंहने फिर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये अपने कुटुम्बी जनोंके साथ कोटेकी सेनाका योग देकर नवीन अवस्थामें संहार-मूर्तिसे शत्रुओंका पीछा किया ।

निरन्तर घोरयुद्ध होनेके कारण बूँदीके नगरकी दीवारें एक प्रकारसे विध्वंस होगई थीं। विश्वासघाती अराजभक्त दलेलसिंह जिनको जयसिंहने बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त किया था, वह उमेदसिंहके आनेका समाचार सुनकर नगरकी रक्षा करनेके लिये बाहर हुए तो थे परन्तु किसी प्रकारसे भी सफल मनोरथ न हुए, वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने बडी सरलतासे नगर पर अधिकार करलिया। अंतमें दलेलसिंह अपनी रक्षा करनेके लिये बूँदीके प्रधान किले तारागढमें चले गये। उमेदसिंहने तारागढके घेरनेमें किंचित् भी विलंब नहीं किया, जिस वीरकविके कल्याणसे उमेदसिंहने इस भाग्यकी परीक्षा की थी अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि, जिस समय सेनादल तारागढपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुआ, उस समय उक्त कविश्रेष्ठ अपने जातिके एक विश्वासघाती मनुष्यके द्वारा मारे गये। उनकी मृत्युका समाचार गुप्त रक्खा गया, इनके शिरके ऊपर एक सफेद चादर उढादी जिससे कोई जान न सके। अन्तमें उमेदसिंह घोर पराक्रमके साथ किलेपर अधिकार करनेके लिये तत्पर हुए, दलेलसिंह महा भयभीत होकर किलेको छोडकर भाग गये और उमेदसिंह किलेके जीतनेके पीछे पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए।

दलेलसिंहने भागकर शीघ्रतासे जयपुरमें जा ईश्वरीसिंहको अपनी पराजयका समाचार सुनाया। जयपुरके महाराज उस समाचारको सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुए; और शीघ्र ही विख्यात वीरश्रेष्ठ खत्री केशवदासके साथ एक सेनाको फिर बूँदीपर अधिकार करनेके लिये भेजा। उमेदसिंहने उस विध्वंस हुए नगरकी दीवारों तथा किलेकी मरम्मत करानेका अवसर न पाकर आमेरकी सेनाके आनेका समाचार पाकर महायुद्ध आरंभ किया। यद्यपि उमेदसिंह बडे कष्टसे बूँदीको जयकर पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए थे परन्तु वह समयके न मिलनेपर उचित तैयारी न कर सके, इसी कारण सरलतासे आमेरकी शिक्षित सेनाने उस युद्धमें जय प्राप्त की। यद्यपि आमेरकी राजपताका फिर बूँदीके किलेके सिखरपर उडी परन्तु आमेरके महाराजकी ओरसे जब दलेलसिंहको फिर बूँदीके सिंहासनपर बैठानेका प्रस्ताव उपस्थित हुआ, तब दलेलसिंह पहिले कलंकको स्मरण करके फिर राजसिंहासनपर बैठनेके लिए किसी प्रकार भी राजी न हुए।

उमेदसिंह फिर दुर्भाग्यरूपी अगाध समुद्रके जलमें निमग्न हुए। इन्होंने पिताके सिंहासनपर अधिकार करनेके लिये मारवाड और मेवाडके महाराजसे सहायता मांगी परन्तु किसीने भी इनको सहायता न दी, जिन विश्वासी सेवकोंने इस समयतक उमेदसिंहका साथ नहीं छोडा था, उमेदसिंह उन्हींका दल बांधकर निरन्तर गतिसे बूँदीके सिंहासनपर अन्यायसे बैठे हुए मनुष्यका अनिष्ट साधन करने लगे। ग्रामोंको लांघते हुए अंतमें अपने पिताके राज्यमें जा पहुँचे। जिस समय यह उस कार्यमें दत्तचित्त हो विनोदियानामक ग्राममें आये, इसी ग्राममें इनके पिता तथा इनकी सम्पूर्ण विपत्तियोंको पहुंचानेवाली सौतेली माता जयसिंहकी भागिनी निवास करती थी। उक्त कष्ट-

वाही रानीने अपने दोषसे अपने स्वामी और सौतेले पुत्रका सर्वनाश किया, इस दुःखसे महादुःखित होकर मनके दुःखको मनमें ही रखकर समय व्यतीत करती थी। उमेदसिंहने माताका वहाँ निवास सुनकर शीघ्र ही उनके साथ साक्षात् कर चरणवंदना की। उमेदको देखते ही महारानीके मनमें अनुतापकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित हो गई। उमेदकी ऐसी शोचनीय अवस्था तथा ऐसा कष्ट देखकर रानीके हृदयमें स्वभावसे ही दुःख और सहानुभूति उत्पन्न होने लगी। रानीने इतने दिनोंके पीछे परितापानलसे विदग्ध हुए हृदयमें चिन्ता करनेके पीछे स्थिर किया कि एकमात्र उसीके व्यवहारसे जिस प्रकार बूँदीके राजवंशका सर्वनाश हुआ है उसी प्रकार अपनी सामर्थ्यके अनुसार बूँदीके राजवंशकी अवस्थाका परिवर्तन करना उनके पक्षमें एकान्त कर्त्तव्य है। रानीने उमेदसिंहके साथ बहुतसी बातचीत करनेके पीछे निश्चय किया कि तुम स्वयं दक्षिणमें जाकर महाराष्ट्रनेतासे सहायता मांगो। और जिससे उमेदसिंहको महाराष्ट्रोंकी सहायतासे पिताका सिंहासन प्राप्त हो, इसके लिये यथेष्ट चेष्टा करनी होगी। रानी शीघ्र ही उक्त प्रस्तावके अनुसार दक्षिणकी ओर चली, थोडे दिनोंके पीछे ही रानी अपने पुत्रके साथ दक्षिणके महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकरके डेरोंमें जा पहुँची। निकाले हुए उमेदसिंहके भाग्यको बदलनेके लिये जयसिंहकी भगिनी उक्त बुधसिंहकी रानीने मेषपाल जातिके हुलकरकी शरणमें जाकर उनसे सहायता मांगी और जिससे हुलकर बूँदीका उद्धार कर दें रानीने इसीके लिये हुलकरके साथ भाई बहिनका सम्बन्ध स्थापित किया।

यद्यपि मल्हारराव हुलकरने नीच वंशमें जन्म लिया था परन्तु ऊँचे वंशमें उत्पन्न हुए मनुष्यके समान उसमें अनेक गुण थे, इस कारण वह रानीकी इच्छानुसार बूँदीपर अधिकार करनेके लिये तय्यार हुए। बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि पहिले वृद्धारानी हुलकरके साथ सेनासहित बूँदीका उद्धार किये बिना ही पहिले उसको जयपुरमें ले गई। आमेरके महाराज ईश्वरीसिंहको युद्धमें परास्त किया जायगा तो वह स्वयं अपने वंशधर तथा प्रतिनिधियोंके पक्षसे बूँदीका अधिकार एकबार ही छोडकर संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर देंगे। इसी लिये रानी सबसे पहिले महाराष्ट्र नेताको जयपुरमें ले गई। आमेरके महाराज ईश्वरीसिंह महाराष्ट्रोंके आनेका समाचार पाकर युद्ध करनेके लिये सेनासहित राजधानीको छोडकर आगे बढे। ईश्वरीसिंहने इससे पहिले अपने मंत्री केशवदासकी हत्या की थी। केशवदासके दो पुत्र हरसहाय और गुरुसहाय थे। अंतमें यही दोनों भ्राता पिताके हत्या करनेवाले ईश्वरीसिंहको उचित दंड देनेके लिये इस समय गुप्त षड्यंत्रमें लिप्त होकर, ईश्वरीसिंह जिससे प्रबल महाराष्ट्रोंके साथ युद्धमें प्रवृत्त हों उसकी चेष्टा करते थे। दोनों भ्राताओंने ईश्वरीसिंहसे कहा कि महाराष्ट्रोंकी सेनाकी संख्या अत्यन्त सामान्य है इस कारण आप युद्धभूमिमें जाकर उनको परास्त करिये। परन्तु वास्तवमें महाराष्ट्रोंके सेनाकी संख्या सामान्य नहीं थी उन दोनों भ्रताओंने केवल ईश्वरीसिंहको विपत्तिमें डालनेके लिये ही उनसे शत्रुओंकी सेना-संख्याको सामान्य बताया था। बिचारे ईश्वरीसिंह उक्त दोनों

भ्राताओंकी बातपर विश्वास करके आमेरके अधीनमें बगरू नामक स्थानतक गये तब जाना कि हम धोखेमें आ गये हैं, हरसहाय और गुरुसहायके प्रति उन्हें जो विश्वास हो गया था, उसके उचित फलको निकटवर्ती हाडाजातिके एक कविने इस स्थानपर लिखा है,–

मंत्री मोटो मारियो, खतरी केशोदास ।
जबहीं छोडी ईशरी, राज करनकी आस ।।

इसका अर्थ यह है कि ईश्वरीसिंहने जिस दिन मंत्री केशवदासका प्राण नाश किया उसी दिनसे उन्होंने राज करनेकी संपूण आशा छोड दी थी ।

ईश्वरीसिंह बहुत थोडी सेना लेकर युद्ध करनेके लिये गये थे; इस कारण शत्रु-पक्षकी सेनाकी संख्या अधिक देखकर उनके साथ युद्ध करना असंभव जान आमेर-राजने उक्त बगरूदेशके सामन्तके अधिकारी किलेका आश्रय लिया । महाराष्ट्रनेता मल्हा-रराव हुलकरने शीघ्र ही बगरूके किलेको जा घेरा, ईश्वरीसिंह दश दिनतक किलेमें रहे, अन्तमें अपनीरक्षाअसंभव जानकर शत्रुके साथ संधिकरनेकोराजीहुए।मल्हाररावकेप्रस्ताव-के अनुसार ईश्वरीसिंहने अपनी और भविष्यके उत्तराधिकारियोंकी ओरसे बूँदी राज्यपर अपना सब प्रकारसे अधिकार छोडकर बूँदीके संपूर्ण अधिकार उमेदसिंहको दे दिये। उन्होंने केवल उसी त्याग स्वीकारपत्रको देकर छुटकारा नहीं पाया वरन् उस स्थानपर उन्होंने उम्मेदसिंहको बूँदीका महाराजा भी स्वीकार किया। हुलकर उक्त त्याग स्वीकार-पत्र और कोटेकी सेनादलके साथ शीघ्र ही उमेदको साथ लेकर बूँदीमें आ पहुँचे । जो विश्वासघाती बूँदीके सिंहासनपर विराजमान था उस मनुष्यको भगानेमें किंचित्मात्र का भी विलंब नहीं किया । थोडे ही दिनोंके पीछे बूँदीकी राजधानीमें बडी धूमधामके साथ उमेदसिंहका अभिषेक किया गया । इस अभिषेकके समयमें राव राजा उमेदसिंहने समाचार पाया कि उनके शत्रु आमेरके महाराज ईश्वरीसिंहने महा अपमानके कारण आत्मघृणासे विष पान कर प्राण त्याग किये हैं ।

इस प्रकारसे संवत् १८७५ सन् १७४९ ईसवीमें उमेदसिंह क्रमानुसार चौदह वर्ष-तक वन वन पर्वत २ पर भ्रमण कर अनेक कष्टोंको सहन करनेके पीछे पिताके सिंहासन-पर विराजमान हुए । मल्हारराव हुलकर जिसने बुधसिंहकी विधवा रानीकी प्रार्थनासे उम्मेदसिंहके इस सौभाग्यरूपी सूर्यको चमकाया, उसने इसके पुरस्कारमें उम्मेदसिंहसे चम्बलनदीके किनारेवाले पाटन देश और उसके अधीनके समस्त ग्रामोंको मांगा, उमेद-सिंहने तुरन्त ही रीतिके अनुसार दानपत्र लिखकर वह ग्राम उसको दे दिये ।

---

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि सन् १८१७ ईसवीमें अंग्रेजी गवर्नमेण्टने महाराष्ट्रोंसे यह देश लेकर फिर बूँदीके महाराज (उमेदके पौत्र) को दे दिये, बूँदीके महाराज इससे अत्यन्त सन्तुष्ट हुए । कर्नल टाड साहबने बडे यत्न और घोर परिश्रम करके यह कार्य किया था ।

बूँदीका राज्य जो चौदह वर्षसे दूसरेके हस्तगत था, उस दीर्घ समयमें निरन्तर युद्ध होनेसे तथा अनेक कारणोंसे श्रीभ्रष्ट हो गया था। दलेलसिंहने उस दीर्घ युद्धमें केवल राजमहलमें और तारागढ नामक किलेके चारों ओर दीवारें बनवा दी थीं, वही उस दीर्घकालमें एकमात्र उन्नतिका कारण हुई। उमेदसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान होकर सबसे पहिले राज्यकी श्रीवृद्धि और सर्वसाधारण प्रजाका कल्याण करनेके लिये नियुक्त हुए, परन्तु जो कि वह महाराष्ट्रजातिकी सहायतासे पिताके सिंहासनपर बैठनेमें समर्थ हुए थे, इस समय समस्त रजवाडेमें उस महाराष्ट्रदलके प्रबल प्रादुर्भाव होनेसे उमेदसिंहके समस्त उद्योग उद्दीपना, तथा मंगल आशामें भयंकर आघात लगने लगा। राजपूतजाति इस समय विचारने लगी कि बीच २ में जो पंगुपालके समान महाराष्ट्रदल इनके राज्यमें आकर अत्याचार और लूटमार करते हैं चिरकालतक यह व्यवहार नहीं रहैगा। उन्होंने इस महाभ्रान्तिरूपी कुँएमें पडकर अपना सर्वनाश किया। विशेष करके राजपूत जाति आत्मविग्रहके समय उस महाराष्ट्रदलका आश्रय लेनेसे और भी बलहीनताको प्राप्त हुई, और उन्होंने सरलतासे अपने प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार कर लिया। समस्त राजपूतजातिमें बूँदीकी हाडाजातिकी महाराष्ट्रोंके प्रादुर्भावसे अधिक हानि हुई थी। यदि वीरश्रेष्ठ उमेदसिंह जन्मभरतक अपने स्वाभाविक साहस और पराक्रमके साथ बूँदी राज्यका शासन करते, यदि वह असमयमें अपनी इच्छासे राज्यशासनका भार न छोड देते तो कभी भी महाराष्ट्रगण हाडाजातिके प्रति इस प्रकारकी प्रबलताका विस्तार नहीं कर सकते थे।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "उमेदसिंह स्वभावसे ही धार्मिक थे, परन्तु एक प्रतिहिंसाके करनेसे उनके निर्मल चरित्रोंमें कलंक लग गया था, यदि उनमें कलंक न होता तो हम राजपूतजातिके इतिहासमें उनको अत्यन्त साहसी ज्ञानी और निर्मल चरित्रोंवाला लिख सकते थे।" "परन्तु हम टाड साहबके उक्त मन्तव्यको सब प्रकारसे समर्थन नहीं कर सकते। इसको हमारे पाठक पहिले ही पढ चुके हैं, उमेदसिंह डबलानाके अधीश्वर देवसिंहके पास गये, देवसिंहने इनके साथ किस प्रकारका घृणित व्यवहार और कैसा अराजपूत-उचित कायर पुरुषोंके समान व्यवहार किया। उमेदसिंह बूँदीके सिंहासनपर बैठकर विचार करते तो बडी सरलतासे उस कायरपुरुष देवसिंहको उचित दंड दे सकते थे। परन्तु उन्होंने आठ वर्ष तक उस हिंसाकी बातको भूलकर भी मनमें न आने दिया। इससे सरलतासे जाना जा सकता है कि उमेदसिंहने सामर्थ्यवान् होकर भी जब आठ वर्ष बदला न लिया तब तो वह अवश्य ही एक ऊँच हृदयवाले पुरुष थे, परन्तु अन्य पक्षसे यह भी जाना जाता है कि जिन इन्द्रगढपति देवसिंहने अपने अधीश्वर प्रभुको महाविपत्तिमें भी आश्रय नहीं दिया, अथवा उनको एक घोडा भी नहीं दिया और आत्मघृणा तथा अनुताप प्रकाशके बदलेमें अत्यन्त कायर पुरुषोंके समान व्यवहार करता रहा, उमेदसिंहने अपने अभ्युदयमें उस देवसिंहको क्षमा करके

उससे बदला नहीं लिया, इसीको स्मरण करके वह मनुष्य अपने मनही मनमें उमेदकी ओर घृणा करता था। वह इतना करके ही शान्त न हुआ, वरन् किस प्रकारसे उमेदसिंहका अनिष्ट साधन करूं इसी चिन्तामें नित्य लिप्त रहता था। इतिहाससे जाना जाता है कि उमेदसिंहने सिंहासनपर बैठनेके आठ वर्ष पीछे जयपुरके महाराज माधोसिंहके साथ अपनी भगिनीके विवाहका सम्बन्ध स्थिर करनेके लिये अपनी जातीय रीतिके अनुसार नारियल भेजा। माधोसिंहने राजसभामें अपने सामन्त और कुटुम्बियोंके साथ बडे सम्मानसे उस नारियलको ग्रहण किया। दैवयोगसे उस समय उक्त इन्द्रगढपति देवसिंह आमेरमें जा पहुंचे। आमेरराज माधोसिंहने उनसे पूछा कि बुधसिंहकी कन्या किस प्रकारकी सुन्दरी है और उसके गुणोंकी प्रशंसा किस प्रकार है?'' नीचबुद्धि देवसिंहने उचित सुअवसर पाकर उमेदसिंहके अनिष्ट साधनकी इच्छासे ऐसा घृणित अनृतपूर्ण उत्तर दिया कि वह केवल एकमात्र उनके समान कायर पुरुषोंके पक्षमें ही शोभा पाता है। देवसिंहने कहा कि वह कन्या बुधसिंहके औरससे उत्पन्न नहीं हुई है। जो राजपूत राजा विवाहका प्रस्ताव स्वीकार कर फिर उस नारियलको कन्याके पक्षवालोंके पास फेरकर भेज दें तो राजपूतोंके लिये इससे अधिक अपमान दूसरा नहीं है। माधोसिंहने देवसिंहके मिथ्या वचनोंपर विश्वास करके बूंदीमें नारियल फिरवा भेजा, उस समय उमेदसिंहके हृदयमें कैसा बाण लगा था, उसका अनुमान सरलतासे हो सकता है, परन्तु अत्यन्त संतोषका विषय है कि मारवाडके अधिश्वर महाराज विजयसिंहने शीघ्र ही उमेदसिंहकी उस भगिनीका विवाह करके देवसिंहकी उक्तिको असत्य कर दिया।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि ''संवत् १८१३, सन् १७५७ ई०में उमेदसिंह करवरके समीप विजयसेनी माताके मंदिरमें पूजा करनेके लिये गये। यह स्थान इन्द्रगढके समीप था। इस कारण उमेदसिंहने आकर इन्द्रगढपति देवसिंहको पुत्रों सहित इकट्ठे हुए सामन्तोंसे मिलनेकी आज्ञा दी। औरोंके निषेध करनेपर भी देवसिंहने उमेदकी आज्ञानुसार अपने पुत्र और पोतेके साथ उपस्थित होनेमें किंचित्मात्रका भी विलम्ब नहीं किया। वहां उन्होंने प्रत्येकका संहार करके देवसिंहके वंशको लोप कर दिया, उनके चिताके धुएँसे जिससे आकाश कलंकित न हो इस कारण उदयसिंहकी आज्ञासे उनके शव नदीमें डाल दिये गये। उमेदसिंहने इन्द्रगढ देवसिंहके भाईको दे दिया।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने उक्त घटनाओंको ही उमेदसिंहके चरित्रोंमें महाकलंक बताकर वर्णन किया है। परन्तु जब हम विचार करते हैं कि प्रतिहिंसा दान: वीर तेजस्वी राजपूत जातिका स्वाभाविक धर्म है, बिना प्रतिहिंसा दान किये वे कायर पुरुष समझे जाते हैं तब उमेदसिंहका प्रतिहिंसा दान महा कलंकदायक नहीं समझा जाता।

''देवसिंहने प्रथमसे ही उमेदके साथ जैसा व्यवहार किया संसारमें इनके समान सामर्थ्यवान् राजा बहुत कम पाये जायँगे कि जो उमेदके समान आठ वर्षतक प्रतिहिंसा देनेमें शान्त रह सके। दूसरी बात यह है कि जो राजपूती स्त्री सती नामसे

गिनी जानेके लिये प्रज्वलित चितानलमें प्राण त्याग करती थी " उस राजपूत स्त्रीके सती-त्वकी दोषारोपकी अपेक्षा महापापका विषय और क्या हो सकता है? देवासिंहने जब सबके सम्मुख सभामें कहा कि उमेदसिंहकी भगिनी वास्तवमें बुधसिंहकी औरस–जात कन्या नहीं है तब उमेदसिंहकी माताके सतीत्वके ऊपर भयंकर वज्रपात हुआ। संसारमें ऐसे कितने राजा हैं जो अपने अधीनके सामन्तोंको अपनी माताके सतीत्वपर कलंक लगाते हुए देखकर चुप रह सकते हैं। उमेदसिंहने जो उसे प्रतिहिंसा दान की तो उन्होंने अवश्य ही वह वीर राजपूतोंके उचित कार्य किया। वह कभी कलंकदायक नहीं हो सकता। तब यह बात अवश्य ही कही जा सकती है कि देवसिंहके अपराधके कारण उनके पुत्र और पोतेके प्राणोंका नाश करना उचित नहीं हुआ। परन्तु उक्त कारणसे उमेदसिंहने अन्तमें जिस मार्गका अवलम्बन किया उसीसे उनके समस्त पापोंका प्रायश्चित्त होकर उनके यशकी चंद्रिकाको निर्मल कर उनके चरित्रोंको संसारमें प्रकाशित कर दिया।

एक एक करके अनन्तकालके समुद्रमें पंद्रह वर्षरूपी उपद्रवकी धारा बही। वीर तेजस्वी उमेदसिंह उस पंद्रह वर्षतक राज्यके अविश्रान्त संघटित नानाप्रकारसे राजनैतिक उपद्रवोंको निवारण तथा सुशासनमें लिप्त रहकर वर्षोंको लांघने लगे। परन्तु वह राजनैतिक विप्लव वह शासनके गोलयोग, उस विभिन्न विभ्राटमें उमेदसिंहके हृदयमें वह एक घटना, उस देवसिंहके प्राण नाश करनेका विचार दिन २ जागरित रहकर उनके हृदयको वेधने लगा। यद्यपि सभीने उस घटनाको विस्मृतिके जालमें डाल दिया था, यद्यपि किसीने भी उस घटनाके विरुद्धमें किसी प्रकारका असंतोष प्रकाश नहीं किया, यद्यपि उमेदसिंह जानते थे कि दुराचारी देवसिंहने जो अपराध किया था उससे उनको प्राणदण्ड देना ठीक ही हुआ था, परन्तु तो भी उनका उदार और साहस पूर्ण हृदय उस हत्याकांडके लिये अत्यन्त व्यथित होता था। उन्होंने अपनेको उस हत्याकांडके सम्बन्धमें महा अपराधी जानकर उस पापनाशके लिये पन्द्रह वर्षके पीछे इच्छानुसार पाये हुए पिताके राज्यके छोडनेकी अभिलाषा की। उमेदसिंहने सिंहासन छोडकर तीर्थयात्राके लिये भारतवर्षके प्रत्येक तीर्थोंमें जाकर जीवनके शेष कई एक वर्षोंको केवल धर्माचरण और अनुतापसे उक्त पापके प्रायश्चित्त करनेका संकल्प किया।

संवत् १८२७ सन् १७७१ ई० में उमेदसिंहका राजनैतिक अस्तित्व लुप्त हो गया। राजपूत राज्यकी चिरप्रचलित रीतिके अनुसार शीघ्र ही समस्त अनुष्ठान होने लगे। उमेदसिंहके पुत्र अजितसिंहने अपने पिताकी एक मूर्ति बनाकर जिस नियमसे चितामें दाह किया जाता है उसी नियमसे उस मूर्तिको अग्निपर रखकर प्रज्वलित चितानलमें भस्मकर दिया, और पिताके वियोगमें जिस प्रकार अशौचकी व्यवस्था है उसी प्रकार अशौचको ग्रहण किया। राजाके अन्तःपुरमें हाहाकार मच गया, सभी जगह रोनेका शब्द सुनाई आने लगा। नियत हुए अशौचकालके बीतनेपर अजितसिंहने क्षौरकर्मके पीछे पिताकी

श्राद्धक्रिया समाप्त की। सारांश यह है कि यथार्थ मृत्युके होनेसे जैसा कार्य किया जाता है, वह सभी किया गया, श्राद्धके हो जानेके पीछे अजितसिंह बडी धूमधामके साथ बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

उमेदसिंह राज्यभारको छोडकर एकमात्र श्रीजी (वह जितने दिनोंतक जीवित रहे उतने दिनोंतक श्रीजी नामसे पुकारे गये) उपाधि धारण कर उक्त अनुष्ठानके पहिले ही बूँदीकी राजधानीको छोडकर, पठारके आदिम प्रधान अधीश्वरने जिस तीर्थमें विचित्ररूपसे आरोग्यता प्राप्त की थी, उसी केदारनाथ तीर्थमें जाकर वहां वास करने लगे। उन्होंने राज्य छोडनेके समय विचारा था कि एकमात्र योगीभेषसे तीर्थोंमें भ्रमण करने और इष्टदेवताके ध्यानसे सब प्रकारसे शांति प्राप्त होगी, और जो हमने हत्या करके पापसंग्रह किया है उस अपराधसे भी छुटकारा मिल जायगा। उमेदसिंहने वीर राजपूत वेशको त्याग कर तीर्थयात्रीका वेश धारण किया था, यह जिस महान् ऊंचे वंशमें जन्म लेकर महा ऊंचे पदपर प्रतिष्ठित थे उस वंशका गौरव और पदोचित महा ऊंचा मानसिक भाव उनके हृदयसे दूर नहीं हुआ। उन्होंने धर्मकी खोजमें भारतके जिस २ प्रान्तके जिस २तीर्थमें संन्यासी, योगी, यति, ब्रह्मचारी इत्यादि पवित्रचेता साधुओंके साथ मिलकर शास्त्रकथा और धर्मोपदेश सुने थे, उन्हीं२ साधु भक्तवृन्दोंके सन्मुख यह परम विज्ञानी पूर्वचेता साधु और महात्मारूपसे माने गये और उन्होंने इनका महान् सन्मान किया था। उमेदसिंहने स्वदेशी और विदेशी राज्यके इतिहासको पढा था कि "राज ऐश्वर्य और आडम्बर सम्मान केवल आत्माके विनाशका कारणस्वरूप है। जो राजा सुअवसरमें ऐश्वर्य आडम्बरको छोडकर देवाराधना और पुण्य संचय करनेमें नियुक्त होते हैं वही यथार्थ सुखी हैं" बुद्धिमानी और सामाजिक रीतिके वशीभूत होकर उमेदसिंह भलीभाँतिसे जान गये थे कि केवल श्रीकृष्णजीके मंदिरमें वा गंगाजीके किनारे रहनेकी अपेक्षा समस्त भारतवर्षमें भ्रमण करके भगवान्‌की अनन्त महिमा और सृष्टिका चूडान्त निदर्शनके साथ ज्ञानका संचय करना श्रेष्ठ है इस कारण जातीय शास्त्र पुराण और महा काव्योंमें भारतके जिन पुण्यतीर्थ और पवित्र स्थानोंका वर्णन पढा था उन्होंने उन सबको अपने नेत्रोंसे देखनेका दृढ़ संकल्प किया। परन्तु उमेदसिंहका अतीत जीवन केवल वीररसके सोतेसे ही आजतक सींचा गया था, इसी कारण वह महाभारतके तीर्थयात्री व्रतको ग्रहण करके भी सम्पूर्णरूपसे संन्यासीवेश करके बाहर नहीं गये। वह उस तीर्थयात्री वेशसे ही वीरोंके समान अस्त्रोंके आभूषणोंसे सुसज्जित होकर बाहर गये थे। उस समय तीर्थ करनेवाले मनुष्योंको मार्गमें अनेक प्रकारके विघ्न होते थे। इस कारण उमेदसिंहने अस्त्र लेकर अपने बाहुबलसे उन विघ्नोंको दूर करके अपने मनोरथको सिद्ध करना कर्तव्य विचारा। तीर्थोंमें भ्रमण करनेके समय अनेक प्रकारके शारीरिक कष्टोंको भोग करना अधिक पुण्यदायक विचारा। तीर्थयात्रामें उमेदसिंहने जो बडे २ भारी अस्त्र शस्त्र धारण किये थे, दो राजपूतवीर उन अस्त्रोंको बडे कष्टसे धारण कर सकते थे। इन्होंने सबसे पहिले अस्त्राघातको रोकनेके लिये रुईपूर्ण अंगरखेसे शरीर ढका उसके

पीछे बडी भारी ढाल, बन्दूक, एक भाला, एक तलवार एक छोटी तलवार और उस समयके उपयोगी एक बडी भारी छुरी, और छोटी २ युद्धके उपयोगी पूर्ण खलीते बारूद पूर्ण बंड शृंग रण कुठार, बर्छा, कटारी, तीक्ष्ण धारवाले लोहेके चक्र धनु और बाण तूणसे अपने शरीरको शोभायमान किया। इस समय ऐसा देखा गया कि सत्तर वर्षकी अवस्थावाले वीर उमेदसिंहने इन बडे २ भारी अस्त्रोंको ढालमें रखकर खेल करते हुए उसको एक हाथसे उठा लिया हो, यही नहीं वरन वह कितनी ही देरतक उसको अपने हाथमें लिये रहे थे।

वीर तीर्थयात्री उमेदसिंह बहुत थोडे विश्वासी सेवक साथ लेकर कई वर्षतक तो उत्तरमें गंगोत्तरी स्थान, दक्षिणमें सेतुबन्ध रामेश्वर और अराकानमें गरम सीताकुण्ड तथा उडीसासे भारतकी शेष सीमा द्वारकातक घूमते रहे। यही नहीं कि वह केवल हिन्दुओंके ही तीर्थमें गये हों वरन प्राकृतिक सौंदर्यपूर्ण प्रत्येक प्रसिद्ध स्थान और पंडितोंके रहनेके स्थानमें भी वह गये। बीच २ में एक २ देशमें भ्रमण करनेके पीछे वह अपने पैतृक राज्यकी सीमामें आ पहुँचे, उस समय उनके स्वजातीय नहीं वरन प्रत्येक राजा, तथा रजवाडेके प्रत्येक राजपूतोंने उनको बडे सम्मानके साथ अभिनंदन किया था। वीर तीर्थयात्री उमेदसिंह भ्रमण करते हुए जिस राजाके राज्यमें जाते, वही राजा इनके आनेसे अपनेको पुण्यवान् मानता था, और उमेदके आनेसे ही राजमहलको पवित्र मानता था। इस समय संसार और राज्यसे विरागी हुए उमेदसिंहको रजवाडेके सभी मनुष्य भविष्यद्वक्ता देवताके समान जानते थे, तथा उमेदके ज्ञानशिक्षा और अभिज्ञताको अतुलनीय जानकर सभी उनके उपदेशके अनुसार कार्य करते थे। उमेदसिंह जिसको जिस विषयमें उपदेश करते थे वह प्राणपणसे उसको अभ्रान्त जानकर पालन करता था। उमेदके प्रत्येक उपदेशके वचनोंको सभी वर्णबद्ध करके रखते थे। उमेदसिंहकी जीवित अवस्थामें उनके साथ हाडाजातिके प्रत्येक राजपूतने जिस प्रकारका ऊँचा सम्मान दिखाया और उनकी देवताके समान भावसे पूजा की उनके वियोगमें भी हाडा जातिने उसी प्रकारसे उनके प्रति महान् ऊंचा सम्मान दिखाया। उमेदसिंह जिस समय जो बात कहते थे हाडाजाति उसको धर्मविधानके समान पालन करती थी, और उनके स्मृतिचिह्नस्वरूपमें हाडाजातिने जो कुछ पाया था उसको देवताके द्रव्य स्वरूपसे भक्तिसहित रखती आई थी, उमेदसिंह सबसे पीछे भारतवर्षकी सीमाके बाहरे मकरानके तीरवर्ती हिंगलाजनामक स्थानमें गये, और अग्नि देवके तीर्थमें जाकर फिर द्वारकाको गये, जब यह वहांसे लौट रहे थे तब रास्तेमें एक कावा नामक चोरोंके दलने इनको घेर लिया। परन्तु वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने उन चोरोंके दलके साथ अपना बाहुबल दिखाकर उनको एकबार ही परास्त करके चोरोंके सरदारको बन्दी कर लिया। चोरोंके सरदारने अपनेको छुडानेके लिये सौगन्ध की कि मैं आजसे कभी भी द्वारकाके यात्रियोंपर आक्रमण नहीं करूंगा।

यद्यपि वीरवेषधारी उमेदसिंहने उपरोक्त प्रकारसे दीर्घकालतक तीर्थोंमें भ्रमण करके पुण्यके साथ ही साथ ज्ञानको भी संचय किया था, यद्यपि उन्होंने अपने मनमें इस

बातका निश्चय कर राजसिंहासनको त्याग किया था कि हम अब कभी राजसिंहासनको ग्रहण नहीं करेंगे। परन्तु एक वियोगान्त घटनासे वह उस तीर्थ भ्रमणसे कुछ कालके लिये वंचित हुए। वह घटना यह थी कि उनके इकलौते पुत्र रावराजा अजितसिंहकी मृत्यु हो गई, तब उमेदसिंह अपने अज्ञानी पोतेको शिक्षा देने और प्रतिनिधि रूपसे राज्य चलानेको बाध्य हुए। हमने जो शोचनीय वियोगान्त घटनाकी बात कही वह मेवाड और हाड़ाजातिके इतिहासमें लिखी गई है। और बहुत शताब्दीके पहिले बम्बावदाकी सती रानीने प्रज्वलित चिताकी अग्निमें प्राण त्याग करनेके समय जो निषेध वाक्य कहे थे वह इस प्रकार थे कि "यदि राव और राणा कभी भी वसन्ती उत्सव (अहेरके) होनेके पहिले परस्परमें एकसाथ मिलेंगे तौ अवश्य ही दोनोंकी मृत्यु होगी।" उपरोक्त घटना उस सती साध्वीकी उक्तिका समर्थन करती है। वह घटना अवश्य पढ़नेके योग्य है।

वीलहठा नामक ग्राममें एक मीनाओंकी सम्प्रदाय रहती थी और वहाँ आमके वृक्षोंमें बहुतसे उत्तम आम लगते थे, वही इस झगडेका मूलकारण हुए। बूँदीके महाराज अजितसिंहने उस विलहठा नामक ग्रामको अपने राज्यभुक्त जानकर अथवा राज्यमें भुक्त करनेके लिये उसके चारों ओर किला बनवा दिया। मेवाडके बहुतसे सामन्तोंक भडकानेसे एक चोरोंका दल उस ग्रामपर आक्रमण करनेके लिये तय्यार हुआ। अजितसिंहने उनको भय दिखानेके लिये उस किलेमें एक सेना रख दी। राणाने यह समाचार पाकर महाक्रोधित हो अपने समस्त सामन्त और वेतनभोगी सैन्धवी सेनाके साथ उक्त विवादके स्थानमें जाकर बूँदीके महाराज अजितसिंहको अपने डेरोंमें बुला भेजा। अजितने आते ही अपने व्यवहार और मधुरवचनोंसे तथा सच्चरित्रता और उदारतासे राणाको ऐसा मोहित किया कि राणा विलालाइताकी बातको एकबार ही भूल गये। सम्मुख ही वसन्तकाल उपस्थित था; मधुर फाल्गुनीके महीनेमें राजपूत वीर गौरीदेवीके आशयसे वराहका शिकार करते थे। युवक हाडाराज अजितने राणाके निकटसे सदय व्यवहार पाकर उसके बदलेमें राणाको यह कहकर बुला भेजा कि बूँदीके रक्षित राजभवनमें जो उत्सव होगा उसमें आप अवश्य ही आवैं। राणाने उसी समय उस आमंत्रणको स्वीकार किया। सीसोदियोंके अधीश्वर राणा प्रचलितरीतिके अनुसार दूसरे दिन सामन्तोंको हरे वर्णके वेशसे सजाकर बूँदीके अधीनमें स्थित नन्दता नामक पहाडी देशमें आमंत्रणकी रक्षा करनेके लिये जा पहुँचे।

इस समय उमेदसिंह बदरीनाथसे लौटे हुए आ रहे थे, जब उन्होंने यह सुना कि राणाके साथ उनके पुत्र अजितसिंहने शूकरके शिकार करनेका विचार किया है, तब इन्होंने तुरन्त ही पुत्रके पास एक मनुष्य भेजकर उस सती स्त्रीकी उक्तिको स्मरण कराकर राणाके साथ मिलनेको मना करा भेजा। अजितसिंहने उसके उत्तरमें कहला भेजा कि इस समय मैं कायर पुरुषोंके समान आचरण कभी नहीं कर सकता। क्रमानुसार निश्चित उत्सवके दिन प्रभाकर भगवन्‌ने पूर्वकी ओरको दर्शन दिया। राणा युवक राव अजितके साथ मित्रभावको प्रकाश कर एकसाथ शिकार खेलनेके लिये चले। परन्तु इसके पहिले दिन तीसरे पहरके समयमें मेवाडके राजमंत्रीने रात्र अजितके सम्मुख जाकर अत्यन्त

अपमानकारक वचनोंमें राव अजितसे कहा कि "बीलहठा राणाको लौटा देना होगा और यदि ऐसा न करोगे तो मैं एक सिन्धी सेनाको भेजकर आपको बंदी करूँगा।" मंत्रीने अजितसे यह भी कहा कि मैंने राणाकी आज्ञानुसार तुमसे समस्त समाचार कहा है, राव अजितने मेवाडके मंत्रीके उन अपमानकारक बचनोंको सुनकर उसके इस व्यवहारसे मनही मनमें समस्त रात्रिमें घोर क्रोध संचय किया था। दूसरे दिन उक्त मृगयाका कार्य समाप्त होते ही राणाने अजितको बिदा किया कि इसी अवसरमें अचानक अजितके मनमें राणाके मंत्रीका वह अपमान याद आया, यद्यपि वह राणासे बिदा होकर कुछ दूरतक चले गये थे, परन्तु हमैं राणा बंदी करैंगे यह विचार कर वह फिर राणाके सम्मुख गये। अजितको फिर आया हुआ देखकर राणा किसी प्रकार भी स्थिर न रह सके उन्होंने हँसते हुए फिर अजितको बिदा कर दिया। दोनोंने फिर परस्परमें साक्षात् किया। अजित उस समय भी क्या करैं इसका कुछ भी स्थिर न करके राणाके दयालु व्यवहारसे मोहित हो फिर राणाके सम्मुखसे चले आये, परन्तु अजितके फिर कुछ दूर आते ही उनके हृदयमें प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित हो गई अजितने उसी समय तीक्ष्ण भालेको हाथमें लेकर बडे वेगसे बलपूर्वक राणाके ऊपर भाला चलाया। उस भालेने राणाकी देहको भेदकर उनके घोडेको भी जा भेदा; दारुणरूपसे घायल हुए राणा जिस अजितको अपना परमप्यारा मित्र जानते थे उसको प्राणघाती देखकर केवल इतना ही कहकर प्राण त्याग किये, "ओह हाडा! क्या किया?" घायल हुए राणाके घोडेपरसे गिरते ही इन्द्रगढके सामन्त तलवारके आघातसे राणाका जीवन एकबार ही समाप्त कर दिया। हाडाराज अजित् इस कार्यसे अपना महान् गौरव जानकर मेवाडके महाराजकी "छत्रझांगी" अर्थात् गोलाकार मोरकी पूँछके चक्रमें सुवर्णके सूर्याङ्कित राजचिह्नोंको लेकर अपनी राजधानी बूँदीमें चले आये। वह मेवाडके राजचिह्न बूँदीके महलमें रक्खे गये। उमेदसिंहने जो देवसिंहके प्राण नाश करनेके लिये राजसुखको छोडकर संन्यासीके समान अनेक देशोंमें भ्रमण कर अपने पापोंका नाश किया था उन्होंने जब यह समाचर सुना कि हमारे पुत्र अजितने मेवाडके महाराजके प्राण नाश किये हैं तब उनके हृदयमें प्रबल आवेग उछलने लगा। उन्होंने अपने वंशमें फिर महापाप संचय होता हुआ देखकर अत्यन्त दुःख प्रकाश किया, उन्होंने उसी समय यह प्रतिज्ञा की कि अब जन्मभर पुत्रका मुख नहीं देखूंगा।

बूँदीके जातीय इतिहासमें लिखा जा चुका है कि कृष्णगढ़के राजाओंकी दो कन्याओंके साथ राणा और बूँदीराज अजितका विवाह हुआ था, इसीसे दोनों दृढ सांसारिक सम्बन्धबन्धनमें बंध रहे थे, बूँदीराज अजितसे उनका कुछ अमंगल होगा राणाके हृदयमें यह विचार भूलसे भी उदय नहीं हुआ। परन्तु राणाकी स्त्रीने अपने स्वामीको यह कहकर पहिलेसे ही सावधान कर दिया कि जिससे वह किसी प्रकारसे भी अजितके ऊपर विश्वास न करैं। कई पीढी पहिले मेवाड और बूँदी दोनों राज्यके राजा जो परस्परमें आक्रमण करके इस मृगयाक्षेत्रमें मारे गये थे, उस वृत्तान्तको

हमारे पाठक पहिले ही पढ़ चुके हैं परन्तु इस घटनाके हो चुकनेपर दोनों राजवंशोंमें प्राचीन शत्रुताका एकबार ही लोप हो गया था। जिस दिन अजितसिंहने राणाके प्राणनाश किये, उसके पहिले दिन मेवाडके राजमंत्रीने एक भोजदान किया था। उस भोजसभामें दोनों राजा और उनके सामन्तोंने उपस्थित होकर अकपट मित्रताके साथ परस्परमें साक्षात् किया था। परन्तु इतिहाससे जाना जाता है कि मेवाडके सामन्त अपने अत्याचारी अधीश्वर राणाके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। उनके सिखानेसे ही यह शोचनीय वियोगान्त अभिनय हुआ था, ऐसे बहुतसे प्रमाण विराजमान हैं। मेवाडके राजमंत्रीने भी अजितको महाभय दिखाकर अपमान करनेवाले बहुतसे कटु वचन कहे थे, इसका वर्णन भी पहिले हो चुका है। जिस समय अजितसिंहने भालेके आघातसे राणाका प्राण नाश किया उस समय एकमात्र नीचे पदवाले अनुचरके अतिरिक्त मेवाडके किसी सामन्तने भी राणाके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये चेष्टा नहीं की थी, मेवाडके सामन्तोंने राणाके जीवनकी रक्षा न की, न अजितको पकडा, और राणाके घायल होते ही सभी अपने २ प्राणोंके भयसे राणाके मृतक शरीरको छोडकर अपने २ डेरोंमें भाग गये। इससे यह जाना जाता है कि राणाके प्राणनाशके सम्बन्धमें मेवाडके सामन्तोंकी भी गुप्तभावसे सम्मति थी।

राणाके मृतक होते ही केवल राणाकी एक मात्र उपपत्नी राणाकी और्द्धदैहिक क्रिया करनेके लिये उस समय वहां विद्यमान थी। वह बहुतसा धन खर्च करके चिता सजानेकी आज्ञा दे स्वयं राणाके शवके साथ भस्म होनेके लिये स्वर्गमार्गमें जानेको तैयार हुई। प्रज्वलित चिताकी आग्रम राणाका शव आलिंगन करके उस स्त्रीने यह शाप दिया कि "अजितसिंहने यदि अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये षड्यंत्र करके राणाका प्राण नाश किया है तो उस हत्या करनेवालेको दो महीनेके भीतर उचित फल मिल जायगा, और यदि प्राचीन वंशसे परस्परमें चली आई हुई शत्रुताका बदला लेनेके लिये यह कार्य किया है तो मेरा शाप उसको नहीं लगेगा"। बूँदीके हाडाजातीय इतिहासवेत्ताने लिखा है कि "उस स्त्रीके इस प्रकार शाप देते ही उसके वचनको समर्थन करनेके लिये उसके पासके वृक्षकी सहसा एक शाखा टूटकर पृथ्वीपर गिर पडी, तथा राणा और सतीकी चिताभस्मसे बिलाइंता सफेद वर्णका हो गया"।

हाडाकविने लिखा है कि सती स्त्रीके शापके अनुसार दो महीनेमें ही उसकी भविष्यद्वाणी पूर्ण हो गई। बूँदीराज अजितके शरीरसे आपसे आप मांसके टुकडे २ होकर गिरने लगे, इस प्रकारसे महान् कष्टको भोगकर सबमें घृणाके योग्य हो उन्होंने अंतमें प्राण त्याग किये।

अजितसिंहके एकमात्र पुत्र विशनसिंह इस समय अज्ञान बालक थे। उमेदसिंहको अन्तम राज्यमें सुशासन स्थापन करनेको बाध्य होना पड़ा। उमेदसिंहने बूँदीकी राजधानीसे चिरकालके लिये विदा ग्रहण की थी। सारांश यह है कि उन्होंने राजधानीमें बिना गये ही दूर ही रहकर एक बुद्धिमान् धाभाई अर्थात् धात्रीपुत्रको राज्यके प्रधान तत्त्वविधायक

(१) चिताभूमिका नाम।

पदपर नियुक्त करके यह बता दिया कि किस रीतिसे राज्यशासन होना चाहिये। सुशासन स्थापन हो जानेके पीछे उमेदसिंह फिर तीर्थ करनेके लिये चले गये। एक२ समय में इन्होंने बराबर चार वर्षतक बूँदीमें न जाकर अनेक तीर्थोंमें भ्रमण करना प्रारंभ किया। अंतमें उनका शरीर वृद्धताके आनेसे अत्यन्त क्षीण हो गया, मृत्युके कई वर्ष पहिले यह केदारनाथ तीर्थमें निवास करनेको बाध्य हुए।

अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि उक्त घटनाके कई वर्ष पीछे उमेदसिंह जिस समय अत्यन्त वृद्ध होकर संसारसे जानेकी वाट देख रहे थे, उस समयमें उनके पोते विशनसिंहने उनको राज्यका लोभी और विश्वासघाती जानकर उनके साथ अत्यन्त ही शोचनीय व्यवहार किया। उमेदसिंहके पीछे ही विशनसिंह युवा अवस्थापर पहूँचे तब उस समय राज्यके कितने ही दुश्चरित लोभी मूर्ख सामन्त और राजकर्मचारियोंने उमेदके विरुद्धमें षड्यंत्रजालका विस्तार किया। वह भलीभाँतिसे जान गये थे कि उमेदसिंहके समान नीतिज्ञ और शासनज्ञाता तथा बुद्धिमान् मनुष्यकी यदि विशन-सिंहके ऊपर दृष्टि रही तो अवश्य ही यह उमेदसिंहकी परामर्शके अनुसार चलेंगे, तब हमारा मनोरथ किसी प्रकार सिद्ध नहीं हो सकेगा, इस कारण वह सभी इकट्ठे होकर उमेद की ओर जिससे विशनसिंहको अविश्वास और अभक्ति उत्पन्न हो जाय विशनसिंह जिससे उमेदको बूँदीसे निकाल दें। वह यही उपाय करने लगे। नवयुवक विशनसिंह ऐसे बुद्धिमान् वा शिक्षित नहीं थे वह उन पापियोंके वचनोंपर विश्वास करके अपने पितामह उमेदसिंहके साथ घृणित व्यवहार करनक लिये आगे बढ़े। विशनसिंहने अपने एक सेवकके हाथ दादासे यह कहला भेजा "कि आप बूँदीको छोडकर वाराणसीमें जाकर रहिये"। जो सेवक उस पत्रको लेकर गया था उसने उमेदसिंहको नये शहर जानेमें तत्पर देखकर कहा कि "आपकी शवभस्म आपके पूर्व पुरुषोंकी शवभस्मके साथ नहीं रक्खी जायगी"। परन्तु उमेदसिंहका रजवाडेमें वडा सम्मान था तथा इनकी देवताके समान पूजा होती थी, कारण कि इन्होंने बहुत समयतक तीर्थोंमें भ्रमण किया था इसी कारणसे सर्वसाधारण मनुष्य इनको साधु मानकर सम्मान करते थे। विशनसिंहकी इस आज्ञाके प्रचार होते ही रजवाडेके प्रायः सभी राजा वडे आग्रहके साथ उमेदसिंहको अपनी २ राजधानीमें सम्मानके साथ लानेके लिये तैयार हुए। उमेदके युवा अवस्थाकी वीरताने बुढ़ापेके पुण्यपवित्रताने आमेरराज प्रतापसिंहके हृदयपर महा ऊँचा सम्मानसूचक भाव प्रकाश किया था। महाराज प्रतापसिंहने श्रीजी उमेदसिंहके समीप पुत्र और सेवकरूपसे अपना परिचय देकर उनके चरणदर्शन करनेके लिये कछवाहोंकी राजधानी जयपुरमें ले जानेके निमित्त प्रार्थना की श्रीजी (उमेदसिंह) तुरन्त ही आमेरमें जानेके लिये राजी हो गये; परन्तु प्रतापसिंहने जो उनको वडे सम्मानके साथ ग्रहण करना चाहा था वह उस सम्मानके ग्रहण करनेमें राजी न हुए।

उमेदसिंहके आमेरराज्यमें जाते ही महावीर प्रतापसिंहने वडे आदरभावके साथ इनको ग्रहण किया। उमेदसिंहके साथ विशनसिंहने जो कुव्यवहार किया था उससे

प्रतापसिंहके हृदयमें ऐसा क्रोध उदय हुआ कि उन्होंने उमेदसिंहसे कहा कि "यदि आपके हृदयमें इस समय भी कोई संसारकी वासना वा राज्यकी कामना हो तो कहिये, मैं अपने बाहुबलसे इसी समय आमेरकी समस्त सेना दलके साथ आगे बढकर बूँदी और कोटेको जीतकर आपके करकमलमें अर्पण कर सकता हूँ।" बुद्धिमान् श्रीजीने कहा "यह दोनों राज्य तो हमारे ही हैं, एकमें मेरे पोते और दूसरेमें भतीजे राज्य करते हैं।" पवित्रचित्त श्रीजीके यह बचन सुनकर मुक्तकंठसे सभी इनको धन्य-बाद देने लगे।

उमेदसिंहने अपने अबोध पोतेके द्वारा इस प्रकारसे अपमानित होकर आमेरराज्यमें जानेके समय कोटेके प्रसिद्ध नितिज्ञ राजमंत्री जालिमसिंहने मध्यस्थ स्वरूपसे कार्यक्षेत्र में दर्शन दिया। उसने बूँदीमें आकर विशनसिंहने जो उमेदसिंहसे अपने स्वार्थनाशका भय किया था उसको उनकी भूल बताकर खंडन किया। जालिमसिंहकी उक्तिसे विशनसिंह सब प्रकारसे समझ गये कि स्वार्थपरायण अबोध सामन्त और राजपुरुषोंके कहनेसे उन्होंने अपने पितामहकी ओर अविश्वास कर उनका तिरस्कार करके महा कलंक संचय किया है। जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार उन्होंने अपने दादाके चरणोंमें क्षमा प्रार्थना की। जालिमसिंहने विशनसिंहको अनुतापित और क्षमा प्रार्थना करते हुए देखकर शीघ्र ही बृद्ध उमेदसिंहको आमेरसे बुलानेके लिये लाल-जी पंडितको भेजा।

उदारहृदय उमेदसिंह स्नेहाधार पोतेके समस्त अपराधोंको विस्मृतिके जलमें डाल कर तुरन्त ही बूँदीमें चले आये। शीघ्र ही परस्पर दोनोंका मिलन हो गया उस मिलन से जैसे दृश्य देखनेकी संभावना हुई थी वैसा ही हुआ। सभीका हृदय उफन उठा, सभीके नेत्रोंसे झर २ आँसुओंकी धारा बहने लगी। प्राणप्यारे पोते विशनसिंहको आलिंगन करके बृद्ध उमेदसिंहने सजल नेत्रोंसे उसके हाथमें तलवार देकर कहा कि "यह तलवार लो; मैं तुम्हारा अनिष्ट करनेवाला नहीं हूँ, यदि तुमको विश्वास है कि तुम्हारा अशुभचिन्तक हूँ तो तुम अपने हाथसे इसी तलवारसे बृद्धके निर्वाणोन्मुख जीवनको समाप्त कर दो, मुझे वृथा कलंकित न करना।" युवक विशनसिंह ऊँचे स्वरसे रोते २ नेत्रोंमें जल भरकर पितामहके चरणोंको पकडकर क्षमा प्रार्थना करने लगे। उमेदसिंहने क्षमा करनेमें किंचित् मात्रका भी विलम्ब न किया, विशनसिंहने वारम्बार उनसे बूँदीके राजमहलमें रहनेके लिये प्रार्थना की, पर उमेदसिंह इसमें किसी प्रकार भी राजी नहीं हुए। इस प्रकारसे पितामह और पोतेमें फिर सद्भाव स्थापित हो गया, षड्यंत्रियोंके पापकी आशा व्यर्थ हुई यह देखकर मध्यस्थ जालिम-सिंह अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। उक्त घटनाके पीछे आठ वर्ष तक उमेदसिंह जीवित रहे, उनकी मृत्युका समय सन्मुख आते ही विशनसिंहने विनयपूर्वक उनके चरणोंमें यह प्रार्थना की कि "आप बूँदीके महलमें चालिये, उसी स्थानपर आपके पूर्व पुरुषोंकी शैय्या बिछी हुई है उसी पर शयन करके आप स्वर्गको जाँय"। उमेदसिंहने स्नेहके वशीभूत होकर विशनसिंहकी प्रार्थनाको पूर्ण किया, सुखपालपर चढकर उमेदसिंह

बूँदीके महलमें चले गये। और उसी रात्रिमें महावीर महाज्ञानी महापुण्यवान् पवित्र चित्त उमेदसिंहका शरीर बूँदीके राजमहलमें छूट गया। संवत् १८६० (सन् १८०४) इसवीमें उमेदसिंहके जीवनका सूर्य सर्वदाके लिये अस्त हो गया। बूँदीराजके भाग्यका आकाश घनघोर मेघजालसे ढक गया। उमेदसिंहने तेरह वर्षकी अवस्थाके समयमें जिस दिन प्रज्वलित उत्साहसे सामान्य संख्यक अनुचरोंके साथ अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश करके पिताके हरे हुए राज्यको उद्धार करनेके लिए पाटन और गेनोलीको अपने अधिकारमें किया, उस समयसे वह साठ वर्ष तक इस संसारमें रहे थे उमेदसिंहके समान वीर नीतिज्ञ और साधु राजा इस संसारमें बहुत थोडे उत्पन्न हुए हैं, इस बातको हम मुक्तकंठसे स्वीकार करते हैं।

जिस समय उमेदसिंह इस संसारसे विदा हो गये उस समयके हाडाजातिके इतिहासको एक घटनापूर्ण युग कहना होगा। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "इसी समयमें एक दल अंग्रेजी सेनाका मानसनके अधीनम इस देशमें पहिले गया था, समस्त राजपूत जातिके और विशेष करके बूँदीके प्रधान शत्रु हुलकरको परास्त और निर्मूल करनेके लिए गया था, परन्तु उस समयमें वृद्ध उमेदसिंह जीवित थे या नहीं, अथवा उन्हींकी परामर्शके अनुसार यह कार्य हुआ था या नहीं इस बातको हम नहीं कह सकते। परन्तु हमने बूँदीके लिए कुछ किया या नहीं बूँदीराजने भी तो सेनाकी सहायता करनेमें कसर नहीं की थी। जिस समय हमारी सेना जयकी इच्छासे उत्साहित होकर बृटिश पताकाको उडाती हुई आगे बढ रही थी, उसी समयमें नहीं, वरन् जिस समय हमारी सेना प्राणोंके भयसे भागनेको बाध्य हुई उस समय बूँदीके महाराजने केवल हमारी सेनाको अपने राज्यमें होकर जानेकी आज्ञा दी हो, इतना ही नहीं, वरन् उन्होंने अपनी भविष्य विपत्ति और अनिष्टकी संभावना जानकर यथाशक्ति हमारी सेनाको सहायता दी थी। वास्तवमें बूँदीके महाराज हमारी सहायता करनेके कारण ही महाराष्ट्रनेता हुलकरसे आक्रान्त हो घोर विपत्तिमें पडे थे, परन्तु अपनी उस समयकी संकीर्ण राजनीतिके कारण हमको उसका कुछ भी पता न मिला, और न उसकी ओर कुछ ध्यान दिया"। कर्नल टाड साहबने लिखा है कि कर्नल मानसन जिस समय हुलकरके आक्रमण करनेसे प्राणोंके भयसे सेनासहित भागे उस समय उमेदसिंहने उनकी और उस भागी हुई सेनाकी सहायता की थी या नहीं, यह उन्हें ज्ञात नहीं हुआ। परन्तु हमने आचिसन साहबके ग्रन्थमें इसके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन हुआ है इस स्थान पर उसका अनुवाद करते हैं पाठक उसको पढकर उसके यथार्थ मर्मको जान सकेंगे। आचिसन साहबने लिखा है कि "बूँदीमें पहिले जिस राजाके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका प्रथम संबन्ध स्थापित हुआ उसका नाम उमेदसिंह है। सन् १८०४ ईसवीमें कर्नल मानसनके अधीनकी सेना जिस समय हुलकरसे परास्त होकर भागी थी, उस समय उमेदसिंहने अपनी सामर्थ्यके अनुसार हमारी सहायता की, और इसी कारणसे हुलकर उनके ऊपर महाक्रोधित हुआ था। उन्होंने पचास वर्षसे अधिक समय तक राज्यशासन

करनेके पीछे सन् १८०४ ईसवीमें प्राण त्याग किये ।" * आचिसन साहबकी उपरोक्त उक्तिसे यह भलीभाँति प्रमाणित होता है कि उमेदसिंहने बृटिश गवर्नमेंटकी उस महाविपत्तिके समयमें यथेष्ट सहायता की थी । परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि बूँदीके महाराज जो अंग्रेजोंकी सहायता करनेके लिये गये इसी कारणसे उस समय महाराष्ट्र नेता हुलकर और सेन्धियाके महाकोपमें पतित हुए, जिस समय महाराष्ट्रोंने बूँदीराज्यमें जाकर सर्वस्व लूटकर राज्यके समस्त करोंको अपने हस्तगत किया था, जिस समय बूँदीके किलेकी चोटीपर महाराष्ट्रोंकी पताका उडी थी, और बूँदीके महाराजको उन्होंने अत्यन्त हीन दशामें डाला था, बृटिश गवर्नमेंटने उस समय बूँदीके महाराज विशनसिंहकी सहायता करनेके लिये एक पग भी नहीं बढाया ।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि, "इतना ही कहना बहुत होगा कि सन् १८१७ ईसवीमें जिस समय अत्याचार और उपद्रवोंको दूर करनेके लिये समस्त राजपूत जातिको सेनासहित अंग्रेजोंने मिलनेको बुलाया था, उस समय सबसे पहिले बूँदीके महाराजने ही आगे बढकर हमारे साथ मित्रताकी डोरी बांधी थी । ऐसा होना भी उनके पक्षमें उचित ही था, कारण कि इस समय महाराष्ट्रोंकी विजयपताका बूँदीकी राजपताकाके साथ मिलकर किलेकी चोटीपर उड रही थी, तथा दूसरी ओर बूँदीके महाराज प्रजासे इस समय जितना कर लेनेके अधिकारी थे, वह उनकी आत्मरक्षाके किसी प्रकार भी उपयुक्त नहीं था । सन् १८०४ ईसवीमें जिस समय बूँदीके महाराजने यथाशक्ति हमारी सहायता की, इस समय महाराष्ट्रोंने उस सहायता देनेवाले बूँदीके महाराजपर आक्रमण किया। पर हमने बूँदीके महाराजकी कुछ भी सहायता न की इसीसे बूँदीके अधीश्वरकी यह शोचनीय दुर्गति हुई थी । सन् १८११ ईसवीके युद्धके समयमें बूँदीके महाराज सब प्रकारसे हमारी आज्ञा और इच्छानुसार कार्य करते थे, बूँदीके महाराज और उनके अधीनके सभी अस्त्रधारी वीर हमारी आज्ञाको पालन करते थे, और जिस समय सब ओरसे हमने विजय की उसके पीछे शांति स्थापित होते ही हम राव राजा विशनसिंहको नहीं भूले। महाराष्ट्र नेता हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोंको बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर लिया था, जो देश प्रायः आधी शताब्दीसे अधिकतक उनके हस्तगत रहे थे, हमने उसी हुलकरको युद्धमें जीतकर उन सब देशोंको अपने हस्तगत कर लिया, और वह समस्त देश एकबार ही बूँदीके महाराज विशनसिंहको दे दिये । और भी महाराष्ट्रदलके अन्यतर नेता सेन्धियाने बलपूर्वक जो देश बूँदीसे छीन लिये थे, हमने मध्यस्त होकर वह सब देश भी बूँदीके महाराजको फिर दिलवा दिये, परन्तु उन सब देशोंके लिये बूँदीके महाराजने हमारे द्वारा वार्षिक निर्द्धारित किये हुए रुपये जो पिछले दश वर्षोंकी आमदनीके थे, सेंधियाको दिये, इसके निमित्त महाराज विशनसिंहजीने पवित्र हृदयसे असीम कृतज्ञता प्रकाश की । उन्होंने कहा मैंने एकबार ही जो प्रतिज्ञा की है वह प्रतिज्ञा किसी समय भी भंग नहीं होगी । आप

* Aitchison's Treatits & Vol IV

जब आज्ञा देंगे तभी उस आज्ञाको पालन करनेके लिये मैं अपना मस्तक दे दूँगा। यह बात अर्थशून्य कृतज्ञताकी प्रकाश करनेवाली उक्ति नहीं थी, वास्तवमें यदि हम उनके विश्वासकी परीक्षा लेते तो निसन्देह वह और उनके अनुगत सामन्त सभी हमारी आज्ञा पालन करनेनेके लिये अपने प्राण दे देते। यद्यपि बूँदीके महाराजके ऊपर बहुतसे उपकारोंकी वर्षा की गई थी; यद्यपि उनके लिये बूँदीके महाराजने गंभीर कृतज्ञता प्रकाश की थी, तथापि उनमेंसे एक विषयका भी सुविचार नहीं किया गया। कोटेके वृद्ध राजमंत्री जालिमसिंहने राजा विशनसिंहके पहिले अपनेको अंग्रेजी सरकारके क्रीतदास नामसे परिचित इन्द्रगढ बलवान आनरदा और खातोली इत्यादि बूँदीके प्रधान २ सामन्त शासित देशोंको कोटाराज्यके अधीनमें करनेका विचार किया।

वास्तवमें जालिमसिंहके बूँदीके अधीनवाले उक्त देशोंको अधिकारमें करनेसे राव राजा विशनसिंह अत्यन्त ही संतापित हुए। कर्नल टाड साहबने इसके संबन्धमें लिखा है कि "गवर्नमेंटने जालिमसिंहके करकमलमें उक्त कई देशोंको अर्पण करनेकी जो व्यवस्था की, इससे साहसी और सरलचित्त राव राजा विशनसिंहने अत्यन्त व्यथित होकर निष्कपट भावसे कहा कि "इस व्यवस्थाके द्वारा हमको पक्षहीन किया गया"। वास्तमें ही यह व्यवस्था ठीक नहीं हुई, न्यायविचार और राजनैतिक मंगलसाधन करनेके लिये इस व्यवस्थाका परिवर्तन करना श्रेष्ठ था। गवर्नमेंटके पक्षमें उक्त अनुगत छोटे राज्यके प्राप्त उक्त देशोंको लौटा देना ही उचित है"।

आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें इसके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है, हम यहाँ-पर उसका प्रकाश करना उचित जानते हैं; उन्होंने लिखा है, कि "बूँदीराज्य जिस स्थानमें स्थापित था उससे सन् १८१७ ईसवीके युद्धमें पिंडारोंके पलायन निवारणके लिये वह बूँदीराज्य विशेष प्रयोजनीय स्थान विचारा गया है, और यथेष्ट उपकारी दृष्टि आता है, बूँदीके महाराव राजा विशनसिंहने सबसे पहिले बृटिश गवर्नमेंटके साथ मित्रता की और सन् १८१८ ईसवीकी १० दशमी फर्वरीको दोनोंका सन्धिबंधन हुआ। यद्यपि बूँदीके महाराजकी सेना–संख्या अधिक नहीं थी परन्तु उन्होंने अंतः-करणसे उक्त समरके समयमें बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता की थी। महाराष्ट्रोंने बूँदीके महाराजको जो अत्यन्त ही शोचनीय दशामें डाला था बृटिश गवर्नमेंटके साथ संधिबंधन होते ही गवर्नमेण्टने बूँदीराजको उस शोचनीय दशासे उद्धार कर दिया।" कर्नल टाड साहबके समान आचिसन साहबने भी जिस भावसे मुक्तकंठसे बूँदीराज विशनसिंहके द्वारा बृटिशसिंहकी सहायता करनी स्वीकार की थी, उससे अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि बूँदीराज सब प्रकारसे गवर्नमेण्टके अनुग्रहका अधिकारी हुआ था।

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ बूँदीके महाराज महाराव राजा विशनसिंहका जो संधिबंधन हुआ था हमने इस स्थानपर उस संधिपत्रको प्रकाशित किया है। उदार

हृदय कर्नल टाड साहबने (उस समय कप्तान थे) अंग्रेजोंकी ओरसे यह संधिपत्र तैयार कराया ।

संधिपत्र ।

महामहिमवर मार्किस आफ हेष्टिंस के० जी० गवर्नर जनरल बहादुरकी दी हुई सम्पूर्ण सामर्थ्यके अनुसारमें कप्तान जेम्स टाड माननीय अंग्रेजी कम्पनीकी ओरसे और बूंदीके महाराजकी दी हुई पूर्ण सामर्थ्यके अनुसार उक्त राजाकी ओरसे बोहरे तुलारामके द्वारा माननीय अंग्रेज ईस्ट इंडिया कम्पनी और बूंदीके राजा महाराव राजा विशनसिंहकी संधि हुई ।

प्रथम धारा–एक ओर बृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर बूंदीके महाराजा और उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोंमें चिरस्थाई मित्रता समस्वार्थता और आत्मीयता बिराजमान की जाय ।

दूसरी धारा–बृटिश गवर्नमेण्ट बूंदीके राजाके अधीनमें स्थित समस्त राज्यको शत्रुओंके द्वारा आक्रमणसे रक्षा करनेका भार लेगी ।

तीसरी धारा–बूंदीके महाराजाने चिरकालके लिये बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार की है, और बृटिशगवर्नमेण्टकी चिरकालके लिये सहकारिता मानी है, बृटिश गवर्नमेंटकी अनुमतिके अतिरिक्त बूंदीके अधीश्वरका और किसीके साथ किसी प्रकारका संधि बंधन नहीं होगा । यदि दैवात् अन्य किसी राजाके साथ विवाद अथवा मतान्तर उपस्थित होगा तो उसकी मध्यस्थताका भार अथवा दंड देनेका भार बृटिश गवर्नमेंटपर होगा राजा अपने राज्यके सब प्रकारसे अधीश्वर रहेंगे, और उक्त राज्यमें बृटिश गवर्नमेंटके शासनकी सामर्थ्यका विस्तार नहीं हो सकैगा ।

चौथी धारा–राजा, महाराज हुलकरको जो कर देते आये हैं, महाराज हुलकरने बृटिश गवर्नमेंटको उस करके लेनेका अधिकार एकबार ही दे दिया है। बृटिश गवर्नमेंटने अपनी इच्छानुसार राजा और उनके उत्तराधिकारियोंको उस करके देनेसे छुटकारा दिया महाराजहुलकरने बूंदीराज्यके जिन देशोंको अपने अधिकारमें किया था; उनसे मिले हुए प्रथम सूचीके अनुसार उन सब देशोंको बृटिश गवर्नमेंटने बूंदीके महाराजको दे दिया ।

पांचवीं धारा-बूंदीके राजा इतने दिनोंतक महाराज सेंधियाको जो कर और राजस्व देते आये हैं उन सबके साथ दूसरी सूचीके अनुसार वह कर और राजस्व बृटिश गवर्नमेंटको देनेके लिये बूंदीके महाराज स्वीकार करते हैं ।

छठवीं धारा–बृटिश गवर्नमेंटके अनुरोधसे बूंदीके महाराज अपनी सामर्थ्यके अनुसार बृटिश गवर्नमेंटका सेनाद्वारा सहायता करैंगे ।

सातवीं धारा–यह सात धाराओं युक्त संधिपत्र बूंदीमें निर्द्धारित हुआ और कप्तान जेमस टाड और बोहरा तुलारामके हस्ताक्षरसहित तथा मोहरांकित होकर महामान्यवर गवर्नर जनरल और बूँदीके महाराव राजा आजकी तारीखसे लेकर एक महीनेके बीचमें इसको निर्द्धारित करके परस्परमें परिवर्तन कर लेंगे ।

बूंदी, आजकी तारीख १०वीं फर्वरी, सन् १११८, चौथी रविउलसानी हि० सन् १२२३, ५ माघ, संवत् १८७४।

यह संधिपत्र महामान्यवर गवर्नर जनरलके आदेशसे कानपुरके निकट डेरोंमें आज १८१८ईसवीकी मार्च महीनेकी पहिली तारीखको स्वीकार किया गया।

गवर्नर जनरलकी मोहर	हस्ताक्षर "हेष्टिंग्स"।

प्रथम सूची।

संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार जो देश बृटिश गवर्नमेण्टने राव राजा विशनसिंहजीको दिये थे उनकी सूची इस प्रकार है।

परगना	बामणगांव
,,	लाखेरी।
,,	कारवरका अर्द्धांश
,,	बरोंधनका अर्द्धांश
,,	पाटणका अर्द्धांश

बूंदीका चौथ अर्थात् राजस्वके चार अंशोंमेंका एक अंश।

दूसरी सूची।

महाराज सेंधिया अबतक बूंदीके राज्यसे जो राजस्व और कर लेते हैं, बूंदीके संधिपत्रकी पांचवीं धाराके अनुसार इसके पीछे वह सब बूँदीके महाराज बृटिश गवर्नमेंटको देंगे उसकी सूची इस प्रकार है,—

दिल्लीके सिक्केका ... ... ८०००० रुपया

परगने पाटनके तीन अंशोंमेंका दो अंश राजस्व ... ४०००० ,,

परगना ढर्सिला।

ऐ. समेदी।

ऐ. करबरका अर्द्धांश।

ऐ. बरूंधनके तीन अंशोंमें एक अंश।

बूंदी और अन्यान्य स्थानोंका चौथ ... ... ४०००० रुपया।

राजाकी मोहर	जेमूस टाड "बाहरा तुलाराम।"

उदारहृदय कर्नल टाड साहबने अंग्रेजी गवर्नमेंटकी ओरसे बूंदीके महाराज राजा विशनसिंहके साथ उस संधिपत्रको तैयार कर लिया, उन्होंने अपने आप इसके

सम्बधमें अपने ग्रंथमें एक स्थानमें लिखा है कि सन् १८१८ ईसवीके फर्वरी मासमें बूँदीके साथ संधिबंधन समाप्त करके ग्रन्थकारने (टाड साहबने) अत्यन्त आनंद अनुभव किया।"

आचिसन साहबने उक्त संधिबंधनके सम्बंधमें अपने ग्रन्थमें लिखा है कि "बूँदीके महारावराजाने इतने दिनोंतक हुलकरको जो कर दिया था, तथा हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया था, सन् १८१८ ई०के संधिपत्रके अनुसार महाराजको उस कर देनेसे छुटकारा मिला, और हुलकरके अधिकारी समस्त देश भी महाराजको लौटा दिये गये। इधर महाराज इतने दिनोंसे सेंधियाको जो कर देते थे वह कर बृटिश गवर्नमेण्टके देनेको राजी हुए। वह देय करका ८०००० रुपया निश्चय किया गया। इसमें सेन्धिया पाटन देशके जो तीन अंशोंमेंसे दो अंशोंके अधिकारी थे, उन देशोंके कारण उन रुपयोंमेंसे आधे रुपये निश्चित हुए; अथवा पाटन देशके बचेबचाये तीन अंशोंमेंसे जो एक अंश हुलकरके अधिकारमें था वह संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार बूँदीके महाराजको लौटा दिया। बृटिश गवर्नमेण्टकी ऐसी इच्छा थी कि सेन्धिया और हुलकरने बलपूर्वक बूँदीके जिन समस्त देशोंपर अधिकार कर लिया था वह सभी महाराजको लौटा दिये जायँ और सेंधियाने पाटन देशके तीन अंशोंमेंके जो दो अंश बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर लिये हैं वह गवर्नमेण्टकी धारणाके अनुसार संधिपत्रकी संलग्न सूचीमें सन्निवेशित किये जायँ। उस समय गवर्नमेण्ट नहीं जानती थी कि नाना फडनवीस जिस समय व्यवहारोंको नहीं जानते थे, उस समय अन्य जिस मनुष्यने बून्दीके सिंहासनपर अधिकार किया था, उसको भगाकर बून्दीके यथार्थ अधीश्वर (उमदेसिंह) को बून्दीके सिंहासनपर बैठाल दिया। बून्दीके महाराजने समस्त पाटन देश पेशवाको दे दिया, और पेशवाने उस पाटन देशके तीन अंशोंमेंसे दो अंश सेंधियाको और बचे हुए अंश हुलकरको दे दिये। अंतमें यह यथार्थ विवरण प्रकाशित हो गया; और पाटन देशके तीन अंशोंके दो अंशोंका कारण जो ४०००० रुपया कर ठहरा था वह बूँदीके महाराजसे कभी नहीं लिया गया। पाटनदेशके जो अंश हुलकरके अधिकारमें थे, उनके उस अधिकारका नाश हो गया और बृटिश गवर्नमेण्टके द्वारा उन्हें वार्षिक ३०००० रुपया कर मिलना निश्चय हो गया।"

इतिहासलेखक टाड साहबने लिखा है कि बून्दी राज्यका कल्याण करनेके लिये हमने जिस आग्रहके साथ यत्न किया है वह सम्पूर्ण सफल हो गया। अन्य राज्य जिस प्रकार किसी न किसी कारणको उपस्थित करके गवर्नमेण्टको क्रोधित कर कष्ट उत्पन्न कर लेते हैं। परन्तु बूँदीके महाराजने अन्य किसी राज्यके साथ किसी प्रकारका उपद्रव न करके चुपचाप उपयुक्त उन्नतिकी ओर दौडकर अपनी स्वाधीनताका सुख भोग किया था। राव राजा विशनसिंह फिर अपनी लुप्त हुई स्वाधीनताकी प्राप्तिके पीछे बहुत थोडे समय अर्थात् चार वर्षतक जीवित रहे। उस कुछ समयके पीछे ही विशनसिंहने कालरामार्बस (chalera morbus) गोला रोगसे जर्जर

होकर प्राण त्याग किये। इस भयंकर रोगके नामसे दृढ़ बली और असीम साहसी मनुष्य भी कम्पित और भयभीत हो जाते हैं, यह बहुत शीघ्र मनुष्यको हीनवीर्य करदेता है इसी रोगसे आक्रान्त होकर विशनसिंहने परलोक यात्रा की, और अपनी स्त्रीसे सती होनेका निषेध कर अपने अजानबालकपुत्रके अभिभावक पदपर बृटिश गवर्नमेण्टको प्रतिनिधि करनल टाडको नियुक्त किया। विशनसिंहने युवावस्थामें ही प्राण त्याग न किये, उन्होंने सत्रह वर्षतक राज्य किया। सन् १८२१ ईसवी १४ जोलाईको इनका स्वर्गवास हुआ।

कर्नल टाड साहबने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ महाराव राजा विशनसिंहके शासन इतिहासका उपसंहार किया है, दो चार बातोंसे विशनसिंहके चरित्रोंकी समालोचना हो सकती है, वह एक अकपटचित्त और अंशोंमें यथार्थ राजपूतोंके समान मनुष्य थे। यद्यपि इनका राज्यशासन उज्ज्वल नहीं था, तथापि इनका हृदय उदारतापूर्ण और चित्त उद्यमशील था। उनकी अभिज्ञतासे शक्तिका अभाव दृष्टि नहीं आता था और उनका शुभाशुभ वा हिताहित ज्ञान विलक्षण था। जिस समय महाराष्ट्रोंने धीरे २ उनके राज्यका समस्त राजस्व ग्रास कर उनकी शासनसामर्थ्य और सुखस्वच्छन्दताको घटा दिया था, उस महाविपत्तिके समयमें भी उन्होंने भलीभाँतिसे प्रमाणित करदिया कि उन्होंने किस प्रकार सरलतासे अपनी सुखस्वच्छन्दता और स्वार्थके प्रति उपेक्षा दिखाई थी। उस समय इन्होंने एकमात्र वीर राजपूतोंके समान मृगया करके अपने चित्तमें संतोष प्राप्त किया था। वह अत्यन्त मृगयाप्रिय थे, और क्या कहैं वह सिंहकी खोजमें बाहर जाकर बराबर तीन चार दिनतक सिंहके विवरके पास पडे रहते थे और जबतक उस सिंहका वध न करलेते तबतक स्थानको नहीं छोडते थे। वह प्रधानता पशुराजसिंहको ही अपने शिकारका उपयुक्त पात्र जानते थे अन्य पशुकी ओर उनकी दृष्टि नहीं थी; उन्होंने इकले ही समस्त जीवनमें अपने हाथसे सहस्रों सिंहोंका शिकार किया था, इसके अतिरिक्त अगणित हिंस्र व्याघ्रोंको भी अपने बर्छेके आघातसे मारा। इस वीरश्रेष्ठके संकटापन्न तथा आनन्ददायक मृगयामें लिप्त रहनेके कारण इनका एक पैर टूट गया था उसीसे चिराकालतक वह लँगडे रहे थे, और छोटे दिखाई पडते थे। जब घोडेपर सवार होकर वीरमूर्तिसे अपने मस्तकके ऊपर भाला घुमाया करते थे, उस समय बलविक्रम और शूरवीरता पूर्णरूपसे उनके मुखपर दिखाई पडती थी। उस दृश्यको देखकर सरलतासे जाना जाता है कि विशनसिंहके महावीर पूर्वपुरुषोंने जिस प्रकार एक समय जहाँगीर और शाह आलमके लिये रणक्षेत्रमें महावीरता प्रकाश की थी, उसी प्रकारसे बिशनसिंह भी हमारे लिये तलवार धारणकी सामर्थ्य रखते थे। वह इसी कारणसे अपन इस छोटेसे राज्यमें अधिकतासे इच्छानुसार विचरण करते थे, कारण कि वह इस बातको जानते थ कि शासित होनेवालोंके निकटसे और विशेष करके राजकर्मचारियोंसे सम्मान संग्रह करनेमें स्वेच्छाचारिताका प्रयोजन है।"

साधु टाड साहबने यहांपर महाराव राजा विशनसिंहजीके चरित्रके सम्बन्धमें एक प्रवाद कथा लिखी है कि राजाके यहाँ एक स्वतंत्र धनसंग्रहका भंडार था। बूँदीके राजमंत्रीको प्रतिदिन उस भंडारमें १०० मुद्रा डालनी होती थी। मंत्री यदि अन्य किसी कार्यमें अवहेला कर जाते तो राजा चाहै उस अवहेलाके कारणकी साधारण पूछपाछ करते, पर यदि भंडारमें सौ मुद्रा न पडती तो मंत्रीको इन्द्रजितका भय दिखाकर अपमानित किया जाता। यह इन्द्रजित किसी देवताकी मूर्ति नहीं थी वरन् एक बडे आकारके काष्ठकी पादत्रानके समान था, भंडारके स्थानमें एक लोहेकी कीलके ऊपर यह इन्द्रजित टँगा रहता था, अन्य राजाके वहाँ आनेपर उस स्थानमें राजदंड रक्खा जाता था, विशनसिंहने मंत्रीको डरानेके लिये ही यह रख छोडा था, यह प्रवाद कहाँतक सत्य है हम सरलतासे इसका विश्वास नहीं कर सकते, राजमंत्रीके लिये पादुका प्रहारके भयकी अपेक्षा और अपमान क्या हो सकता है।

साधु टाड साहबने फिर लिखा है कि दूसरे राजपूत राज्योंके समान विशेष कर बूँदी राज्यके राजपुरुषोंकी संख्या भी बहुत सामान्य है नीचे लिखे चार पुरुषोंके हाथमें शासनकी सामर्थ्य रहती है (१) दीवान वा मुसाहिब, (२) फौजदार वा किलेदार, (३) वख्शी, (४) रिसाले वा हिसाब विभागके तत्त्व विवेचक। दिल्लीके बादशाहके साथ जो बूँदीके महाराजोंका संमिलन हुआ था, जैसे जयपुर नरेशने बादशाहके दरबारके समान अपने यहाँ कितने ही नियम चलाये थे इसी प्रकार बूँदी नरेशने भी अपने यहां वैसे ही नियम चलाये। प्रधान मंत्री दीवान वा मुसाहिबके नामसे पुकारे जाते थे, उनके हाथमें ही राज्यका समस्त शासन और राजधनका भार था। फौजदार वा किलेदार बूँदीके किलेका अध्यक्ष था, इस पदपर कोई और राजपूत नियुक्त नहीं होता, बूँदीके राजाका कोई दृढ़ सम्बन्धी वा धाई भाई इस पदपर नियुक्त होता है, वह राजसेना, वेतनभोगी सेना और सामन्तोंकी सैन्य समूहका सेनापति होता है, वख्शी साधारणतः सब विभागोंकी जांच करता है हिसाब देखता है, रिसाले और राजदरबारके हिसाबकी जांच करता है। मृतराजा विशनसिंह अपने धनागारको केवल जमा न करके उस धनसे व्यापार करते थे, उस वाणिज्यसे जितनी आमदनी होती राजा उसका अंश ग्रहण करते। यद्यपि मंत्री उसका हिसाब करके सैकडे पीछे पन्द्रह रुपयेकी बढती दिखाते थे, पर वास्तवमें तीस रुपये सैकडा आमदनी होती थी, इस वाणिज्यकी आमदनीसे सेना तथा राजअनुचरोंको वेतनके हिसाबसे अन्न तथा दूसरे पदार्थ मिलते थे। राजा स्वयं इस वाणिज्यके अंशभागी थे इस कारण मंत्रीने जिस पदार्थका जो मूल्य निश्चय कर दिया वह चाहै ठीक न हो पर वहीं निश्चित रहता, यदि सेना वा सेवक उसपर विनयपत्र देते तो राजाके स्वयं अंशभागी होनेके कारण उसका कोई फल नहीं होता और इसीसे मंत्री सब प्रजाके प्रियपात्र न हो सके।

कर्नल टाड साहबने निम्नलिखित उक्तिसे बूँदीराजके इतिहासका उपसंहार किया है, " विशनसिंह दो पुत्र छोड गये, इनमें सबसे बडे राव राजा रामसिंह थे, यह

सन् १८२१ ईसवी अगस्त मासमें ग्यारह वर्षकी अवस्थामें पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए। छोटे महाराज गोपालसिंह राव राजा रामसिंहकी अपेक्षा कई महीने छोटे थे। राव राजा रामसिंह अपने पिताके समान मृगयामें रत रहते थे, अधिक क्या कहैं इस छोटी अवस्थामें ही इन्होंने सबसे पहिले बनैले वराहका शिकार किया, उसके लिये उनके सामन्तोंने महा प्रसन्नता प्रकाश करके उनको नजरैं दी थीं। इसके पहिले यह छोटीसी तलवार लेकर बकरे और भेडोंका वध करते थे। इनकी माता कृष्णगढकी राजकुमारी थी, यह जिस भांति बुद्धिमानी और सुलक्षणा थी उसी प्रकारसे पुत्रके मंगलकी कामना करती रहती थी।यह विशेष आशा होती है कि जिस गवर्नमेण्टने इस बूंदी राज्यका शोचनीय दशासे उद्धार किया था उसी गवर्नमेंटके आश्रयसे यह बूंदीराज पूर्वकालके समान श्रीवृद्धियुक्त होगा। हम शुद्ध अंतःकरणसे हाडाजातिके मंगल और उन्नतिकी कामना करते हैं"।

पञ्चम अध्याय ५.



महाराव राजा रामसिंह-कर्नल टाड साहबका महारावके अविभावक पदको ग्रहण करना राज्यके सुशासनकी व्यवस्था करना मंत्री कृष्णराम-रानीके साथ महाराजके अन्यान्य व्यवहारोंको निवारण करनेके लिये जोधपुरसे सामन्तोंका आना-कृष्णरामकी शोचनीय मृत्यु-खंडसमर-हत्याकारियोंका प्राण नाश करना-जोधपुरके महाराजके साथ समरकी सूचना करना-वृटिश गवर्नमेण्टकी मध्यस्थतासे उसका निवारण करना-महाराव राजा रामसिंहका अपने हाथमें राज्यभार ग्रहण करना-पाटनदेशके सम्बन्धमें नवीन व्यवस्था-सन् १८५७ ईसवीमें सिपाही विद्रोहके समय महाराव राजा रामसिंहका वृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता करनेमें असम्मति देना-वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव राजा रामसिंहका राजनैतिक सम्बन्ध छेदन होना-फिर सद्भाव स्थापन-वृटिश गवर्नमेण्टका महारावको दत्तकपुत्र ग्रहण करनेकी अनुमति देना-दिल्लीके दरवारमें महाराव राजा रामसिंहका जाना-प्रथम श्रेणीके भारतनक्षत्र और भारतेश्वरीके भारत साम्राज्यमंत्री की उपाधि प्राप्त करना-सलामीकी तोपोंकी संख्या वृद्धि-बूँदीका शासन समाज-प्रजाके जलकष्टको निवारण करनेके लिये अनुष्ठान करना-बूँदीके राजकुमारोंका विवाह-विवाहमें व्यय-यौतुक-राजकुमारोंके शिक्षाकी अवस्था-महाराव राजा रामसिंहके चौथे पुत्रका जन्म-बूँदीराज्यकी आमदनी और खर्चकी सूची-शासनविभागकी उन्नति-शान्तिरक्षाका विभाग-वाणिज्य शुल्कसंस्कार-बूँदीराजका प्रजाकी शिक्षाकी व्यवस्था करना।

---

(१) विशनसिंहने मृत्युके समय कर्नल टाड साहबको अपने पुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त किया। कर्नल टाड साहब जितने दिन रजवाडेमें थे उतने दिनोंतक इन्होंने अपने कर्त्तव्यको संतोषसे पालन किया। साधु टाड साहबने राव राजा रामसिंहको भतीजा कहकर पुकारा था, और इसी प्रकारसे चचा भतीजेका सम्बन्ध स्थापित किया। साधु टाड साहबने राव राजा रामसिंहको भतीजा कहकर पुकारा तथा इसी प्रकारसे स्नेह दिखानेमें भी कसर न की। उक्त प्रथम मृगया—

महात्मा टाड साहबने जहां तक बूंदीराज्यके इतिहासको अपने ग्रन्थमें संग्रह किया था, उसको चौथे अध्यायतकोंमें लिखकर इस समय उसके पिछले समयके इतिहासको हम विश्वासी प्रमाणोंसे संकलन करके पाठकोंको आदरपूर्वक बेड सम्मानके साथ उपहार देनेके लिये अग्रसर होते हैं।

जो महाराव रामसिंह जी० सी० एस० आई० सी० आई०ई० बहादुर इस समय बूंदीके सिंहासनको उज्वल कर रहे हैं वह अपने पिता महाराव विशनसिंहकी मृत्युके समय केवल ग्यारह वर्षके थे। महाराव विशनसिंह बहादुरने उदारहृदय महाशय कर्नल टाड साहबको अपने अप्राप्त व्यवहार कुमारके शिक्षातत्त्वविधायक और उनके अविभावक पदपर नियुक्त किया था, उनकी मृत्युके समय कर्नल टाड साहब मेवाडकी राजधानी उदयपुरको गये थे। वह महाराव विशनसिंहकी मृत्युका समाचार पाकर और विशनसिंहकी विधवा रानीके बुलानेका पत्र पाते ही शीघ्रतासे बूंदीराज्यकी ओर को चले गये। कर्नल टाड साहबने बूंदीमें जाकर विधवा रानीके साथ भाई बहनका सम्बन्ध स्थापन करके बालक रामसिंहकी शिक्षा और तत्त्वावधानका भार और बूंदी राज्यमें सुशासन स्थापनका भार अपने हाथमें लिया। राजपूतजातिके परममित्र कर्नल टाड साहबने अपनी स्वाभाविक दयाके वश होकर विधवा रानीको बहन कहकर रामसिंहको अपना भानजा माना मृतक महाराज रामसिंहकी अन्तिम आज्ञा पालन करनेमें किंचित् मात्र भी विलम्ब न किया। इन्होंने शीघ्र ही अपने भानजे महाराव रामसिंहके मंगलकी इच्छासे बूंदीकी राजधानीमें सर्वत्र सुशासन स्थापन करनेके लिए अच्छा प्रबंध कर दिया और कुछ समय तक आपने स्वयं बूंदीमें रहकर सब विषयोंपर ध्यान दिया और उन सब विषयोंको स्थिर सिद्धान्त करनेमें किंचित् मात्रका भी विलम्ब न किया। कर्नल टाड साहब जब तक भारतवर्षमें रहे तबतक बराबर महाराव रामसिंहका कल्याण साधन करते रहे। और यह अपने देशमें जाकरभी अपने भानजे महाराव रामसिंहके कल्याणकारी विचारोंमें लगे रहे।

महाराव बिशनसिंहके स्वर्ग चले जानेके पीछे उच्च आशय विद्वान् बुद्धिमान् कृष्णराम नामके एक मनुष्य बूंदीके प्रधान मंत्री पद पर नियुक्त हुए। जब तक कर्नल टाड साहब रजवाडेके बृटिश एजेण्ट पद पर नियुक्त थे, कृष्णराम उतने दिनों तक उनके परामर्शके अनुसार समस्त भारी प्रश्नोंकी मीमांसा कर लेते थ। साधु टाड साहबके अपने देशको जात ही मंत्री श्रेष्ठ कृष्णरामने अपनी चतुराई और नीतिज्ञताके बलसे बालक महाराव रामसिंहका स्वार्थ साधन किया। कर्नलम्यालिसन अपने ग्रंथमें लिखते हैं कि "जब साढे छः वर्षतक कृष्णराम शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे उस समय बूँदीके राज्यका समस्त बाकी ऋण चुका दिया गया, उन्होंने नियमपूर्वक

—के उपलक्षमें सन्तोंके समान साधु टाड साहबने भी राजा रामसिंहको सम्मान सूचक उपहार दिया था।

(१) इसका विवरण कर्नल टाड साहबके दूसरे भ्रमण वृत्तान्तमें देखो।

हिसाब किताब रक्खा, और राजस्वका एक रुपयातक वसूल कर कोशागारमें दे दिया। उन्होंने राजस्वके हिसाबसे तीन लाखसे पाँच लाख रुपया बढा दिया, उनके शासनमें खर्च करके दो लाख रुपया बचता था, उन्होंने राजकार्यके प्रत्येक विभागकी अवस्था संतोषदायक कर दी, और वह सेनाको नियमसहित बराबर वेतन देते गये "।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह सर्वगुणसंपन्न मंत्री कृष्णराम अधिक दिनतक बूँदीराज्यका कल्याण न कर सके। उनके शासनभारको ग्रहण करनेके साढे छः वर्ष पीछे एक घोर घटनाके होनेसे वह अत्यन्त शोचनीयरूपसे मारे गये, इनके वियोगसे समस्त राज्यको जो कष्ट हुआ उसका लिखना लेखनीकी शक्तिसे बाहर है।

कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि "महाराव रामसिंहका कोई नौ वर्ष राजसिंहासन पर बैठे हुए होंगे कि इसी बीचमें एक ऐसी घटना हुई कि यदि बृटिश गवर्नमेण्ट मध्यस्थ होकर अपनी शक्तिका प्रयोग न करती तो बूंदीके साथ जोधपुर राज्यका युद्ध उपस्थित हो जाता। राव (रामसिंहने) जोधपुरकी राजनंदिनीके साथ विवाह किया था, बीचमें ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने उस स्त्रीके साथ अत्यन्त निठुर व्यवहार किया था, जिससे वह जोधपुरकी राजकुमारीके साथ इस प्रकारसे व्यवहार न कर सकें, उसका उत्तम प्रबंध करनेके लिये सन् १८३० के पहिले महीनेमें जोधपुरसे बहुतसे सामन्त सेवकोंको साथ लेकर बूँदीकी राजधानीके पास आ पहुँचे। उनके आनेके तीसरे दिन उन आयेहुए जोधपुरियोंमेंसे एक सामन्तके द्वारा अत्यन्त बुद्धिमान निष्कलंकचरित्र बूँदीके राजमंत्री कृष्णराम मारे गये, युवकराव रामसिंहने इससे महा क्रोधित होकर हत्या करनेवालोंको उचित दंड देनेका दृढरूपसे विचार किया। जोधपुरके जो मनुष्य किलेके भीतर बंदीभावसे रहते थे उस स्थानपर क्रमानुसार गोलोंकी वर्षा होने लगी, और जिससे उनको पानी न मिल सकै ऐसे उपाय भी किये गये। उस जोधपुरकी सेनाके दो नेता और जिन मनुष्योंके कुपरामर्शसे हत्याकाण्ड हुआ था वह लोग भागनेके समय पकडे गये। रावराजाकी आज्ञानुसार उनको प्राणदंडकी आज्ञा दी गई। अंतमें नीचे पदपर स्थित मनुष्योंके क्रमसे आत्मसमर्पण करते ही उनको बूँदीराज्यकी सीमासे निकाल दिया गया। छः दिनमें जोधपुरके एक सामन्त बभूतसिंह जिसने बूँदीके मंत्रीको मार डाला था वह भी युद्धमें मारा गया। उस बभूतसिंहके और दो नेताओंके प्राण नष्ट होते ही बूँदीके अधीश्वरने अपने मंत्री श्रेष्ठके प्राणनाशका उचित बदला हो गया, यह मानलिया।

"उपरोक्त कारणसे ही जोधपुरके साथ युद्ध होनेकी सम्पूर्णतः संभावना थी, परन्तु गवर्नमेंटने वहाँ अपने एजेण्टको भेजकर युद्धमें असम्मति प्रकाश कर सरलतासे शांति स्थापित की" आचिसन साहबने लिखा है कि "महाराज रामसिंहके सुदीर्घ अप्राप्त व्यवहारके समयमें बृटिश गवर्नमेण्टको एक साथ ही अधिकतर बूँदीराज्यके आभ्यन्तरी शासनके विषयमें हस्ताक्षेप करना पडा था।

(१) गांव बाजोली मारवाडके मेडतिया राठोड था।

मंत्रिश्रेष्ठ कृष्णरामके वियोग होनेके कुछ ही दिन पीछे महाराव रामसिंहने अपने हाथमें बूँदीका राज्य लिया, और आजतक बराबर उसको शासन करते रहे "।

आचिसन साहबके ग्रंथमें लिखा है कि " गवर्नमेण्टकी रक्खी हुई सेनाका खर्चा देनेके लिये सन् १८४४ ईसवीमें महाराज सेन्धियाने पाटनदेशके तीन अंशोंमेंसे यह जिन अंशोंके अधिकारी थे वह अंश गवर्नमेण्टको दे दिय, उसी कारणसे बूँदीके महाराजने उक्त देशके अंशोंकी प्राप्तिके लिये प्रश्न उपस्थित किया। सेंधिया उक्त देशके अधिकार देनेके लिये राजी न हुआ, परन्तु सन् १८४७ ईसवीमें ग्वालियरके महाराज सेन्धियाकी सम्मतिके अनुसार जो नवीन संधि की हुई उसके अनुसार बूँदीके महाराजने ग्वालियरके महाराजको वार्षिक ८०००० रुपया कर देना स्वीकार किया था, इसी कारणसे उक्त देश चिरकालके लिये बूँदीके महाराजका समझा गया, सन् १८६० ईसवीमें सेंधियाके साथ जो संधि हुई थी उसीके अनुसार पाटनदेशका राजस्व भी गवर्नमेण्टको मिलता था। इस प्रकार बूँदीके महाराजने उस पाटन देशको गवर्नमेण्टके अधीनमें भोग किया था, बूँदीके महाराज सन् १८१८ ईसवीकी संधिके अनुसार बूँदी और अन्यान्य देशका चौथस्वरूप गवर्नमेण्टको जो वार्षिक ४०००० रुपया करका देते थे, उक्त देशके कारण उसके सिवाय और भी ८०००० रुपया करस्वरूपमें दिया करते थे।

इस बातको हमारे पाठक पहिले ही जान चुके हैं कि भारतवर्षके देशीय राजाओंमें बूँदीके महाराज उमेदसिंहने सबसे पहिले गवर्नमेण्टकी मित्रभावसे सहायता की थी और सन् १८१८ ईसवीमें महाराव विशनसिंहने गवर्नमेंटके साथ संधिबन्धन करके मित्रभावका चूडान्त परिचय दिया था। परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि सन् १८५७ ईसवीमें जिस समय भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तसे विद्रोहकी आग भडक उठी थी उस समय विपत्तिका समुद्र अपनी तरंगमालाको विस्तार करता हुआ भारतसे अंग्रेजी राज्यको लुप्त करनेके लिये तैय्यार हुआ, उस महाविपत्तिके समयमें बूँदीके महाराज रामसिंह बहादुरने सन् १८१८ ई० के संधिपत्रके अनुसार गवर्नमेंटको सेनाकी सहायता नहीं दी। जो राजवंश गवर्नमेंटका परम मित्ररूपसे प्रसिद्ध था, महाराव रामसिंहने उसीके वंशधर होकर उस वंशके गौरवकी रक्षा न की। इससे गवर्नमेण्ट अत्यन्त दुःखित हुई, और तुरन्त ही गवर्नमेण्टने क्रोधित होकर बूँदीके महाराजके साथ समस्त सम्बन्ध तोड दिये। परन्तु संतोषका विषय है कि बूँदीके महाराजको इस भावसे अधिक दिनतक बृटिश गवर्नमेंटका अप्रियपात्र होकर न रहना पडा। सन् १८६० ईसवीमें फिर बूँदीके अधीश्वर महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेण्टका राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित हुआ और उसी समयसे वर्तमान समयतक महारावके साथ गवर्नमेंटकी पूर्ण प्रीति रही है।

यद्यपि वर्तमान समयके महाराव रामसिंह बहादुरने सिपाहियोंके विद्रोहके समय गवर्नमेंटकी सहायता नहीं की थी, परन्तु विद्रोह वासनाके पीछे बृटिश गवर्नमेंटने अन्य राजाओंके समान महारावको वंशानुक्रमसे दत्तकरूपसे पुत्र ग्रहण करनेकी सनद दी थी।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीको ग्रेट ब्रिटेन और आयलैंण्डकी अधिराज्ञी विक्टोरियाने दिल्लीके प्रकाश महान् दरबारमें जो भारतकी राजराजेश्वरीकी

उपाधि धारण की, महाराव रामसिंह बहादुरने उस दरबारमें आमंत्रित होकर वहां जाकर राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनके द्वारा अन्यान्य राजाओंके समान स्वयं सम्मान ग्रहण किया। अन्यान्य भूपालोंके समान महारावको उक्त उपाधि धारण करनेकी स्मारक पताका और स्मारक पदक भी मिला था, महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेंट की जो इस समय महामित्रता हुई है उसका दूसरा प्रमाण यह है कि बृटिश गवर्नमेण्टने "ग्रान्ड कमान्डार स्टार आफ इण्डिया" नामकी जो ऊंची श्रेणीकी भारत नक्षत्र उपाधिकी सृष्टि करके देशीय राजाओंको उस उपाधिका पदक दिया था, बूँदीपति महाराव रामसिंह बहादुरको भी गवर्नमेंटने उक्त दरबारमें उस प्रथम श्रेणीके भारत-नक्षत्रकी उपाधि और 'कौन्सिलर आफ दि एम्प्रेस' नामक भारतेश्वरीके मंत्री नामकी नवीन उपाधिके भूषणसे विभूषित किया, और महारावका सम्मान बढाकर तोपोंकी सलामीकी संख्या भी बढा दी थी। महारावको इस समय बृटिश शासित देशमें जाने आनेके लिये सत्रह तोपोंकी सलामी होती थी। वृद्ध महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेंटका यह प्रीतिपूर्ण सम्बन्ध अवश्य ही आनंददायक हुआ।

आजकल भारतवर्षके प्रत्येक देशीय राज्यमें गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि रेसिडेंटकी उपाधि धारण करनेवाले अंग्रेज निवास करते हैं। बृटिश शासनकी राजनीतिके अनुसार वह रेसिडेंट ही इस समय देशीय राज्योंके यथार्थ शासनकर्तारूपसे विदित हैं। राजालोग स्वाधीन होकर भी उन्हींके अधीन हैं और उन रेसिडेण्टोंके द्वारा उनकी स्वाधीनता बहुतायतसे घट गई है, वह रेसिडेण्ट प्रत्येक वर्षमें देशीय राजाओंका एक शासन विवरण तय्यार कर गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजते हैं। एजेण्ट एक २ विस्तारित देशके राजाओंके ऊपर राजनैतिक कर्मचारी होते हैं। वह उन समाचारोंको पाकर उसमें अपना मन्तव्य मिलाकर राजप्रतिनिधिके यहाँ उसको भेजते हैं। भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके विदेशिक मंत्री उसे पुस्तकाकार छपाकर सर्वसाधारणमें उसका प्रचार कर देते हैं। राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्टने सन् १८८१—८२ ईसवीमें बूँदीके इतिहासमें जो कुछ लिखा है उसकी समालोचना सन् १८८३ ईसवीकी १८ मईके इण्डियन मिरर नामक अंग्रेजी दैनिक पत्रमें निम्नलिखित प्रकारसे प्रकाशित हुई थी।

गतवर्ष बूँदीके महाराव राजा अत्यन्त रोगी हो गये थे, अधिक पीडाके होनेसे महाराव राजाने राज्यका समधिक शासनभार कामदार पंडित गंगासहायके हाथमें सौंप दिया था। महारावने राज्यशासन करनेके लिये एक मंत्रीसमाज तय्यार किया। उसमें छः सदस्य नियुक्त थे। उक्त पंडितजी उस समाजके सभापति हुए। एक पुरुष समरविभागमें, एक मनुष्य साधारणविभागमें, एक एजेन्सीविभागमें, एक शान्तिरक्षाविभागमें और एक अपीली मुकदमोंके विभागमें नियुक्त हुआ। महाराव राजाने अपने राज्यकी प्रजाके जलकष्टको दूर करनेके लिये यथेष्ट तय्यारी की और महारानीने भी हिन्दूस्त्रियोंके समान प्रजाको जल देनेके लिये एक

बडा अनुष्ठान किया है । उनके व्ययसे दो कुण्ड तैयार हुए महाराव राजा भारतवर्षके अन्य राजाओंमें अत्यन्त रक्षणशील मतके हैं । निज राज्यमें अंग्रेजी शिक्षाके विस्तारकी ओर उनका ध्यान नहीं गया उन्होंने एक छोटासा विद्यालय स्थापित किया, उसमें १२० विद्यार्थी पढते हैं।परन्तु हमैं ऐसा विश्वास है कि महाराजने संस्कृत शिक्षाका प्रचार करनेके लिये बहुत यत्न किया है,इस कारण इस प्रकारक राजा हमारे अधिक सन्मान योग्य हैं ।

बृटिश पोलिटिकल एजेण्टन सन् १८८३ इसवीकी३तीसरी मईको बूँदीके शासन सम्बन्धी विवरणमें जिस मन्तव्यको राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजा था । और जो भारतवर्षीय गवर्नमेण्टके द्वारा सन् १८८२–८३ ईसवीमें रजवाडेकी शासन वृत्तान्त पुस्तकमें प्रकाशित हुआ है, हमने उन सबके अंशोंका भाषान्तर किया है पाठक इसको पढकर बूँदीराजके वर्तमान शासनका आय व्यय और शिक्षा उन्नतिकी विशेष अवस्थाको जान सकैंगे ।

एजेण्टने लिखा है, कि "हम बडे आनंदके सहित कहते हैं कि महामान्य महाराव राजाने विशेष स्वस्थता प्राप्त की है । मारवाडकी राजवंशीय तीन स्त्रियोंके साथ महाराव राजाके तीनों पुत्रोंका विवाह करनेके लिये गत वर्षमें अधिक तैयारी करनेमें मन लगाया गया, गत वर्षके विज्ञापनमें लिखा गया है कि यह विवाहका कार्य शीतकालमें होगा । यह निश्चय हो गया है । महामान्य महाराव अपने पुत्रोंसे इतना स्नेह करते हैं कि दिसम्बर महीनेके पहिले जब मैंने उनसे साक्षात् किया तब यह जाना गया कि विशेष वृद्धावस्था और अस्वस्थ शरीर होकर भी वह स्वयं पुष्करजीतक पुत्रोंके साथ जाकर वहाँ उनके लिये अपेक्षा करते रहे और जो व्यवस्था वहाँ रहनेकी स्थिर की उस व्यवस्थासे उनके दो उद्देश सिद्ध हुए ।

प्रथम पुत्रका साथ बहुत थोडे समयमें विच्छिन्न हो जायगा दूसरे तीर्थस्थानमें जाकर कुटुम्बके मंगलकी इच्छासे देवताकी पूजा भी कर सकैंगे । परन्तु मारवाडके महाराजके दृढरूपसे बारम्बार अनुरोध करनेपर महाराव राजा रामसिंह बहादुर अंतमें कुटुम्बसहित छठी जनवरीको बूँदी छोडकर २५ जनवरीको जोधपुर पहुँचे, पिछले दो दिनोंमें बडे उत्सवके साथ विवाहकार्य किया गया । महारावके बडे पुत्रके साथ मारवाडपतिकी एक भगिनीका और मध्यम तथा तीसरे पुत्रसे मारवाडके महाराजकी दो भतीजियोंका विवाह हुआ, इसके अतिरिक्त महाराव राजा रामसिंहने अपने मृतपुत्र भीमसिंहके पुत्रके साथ महाराज बख्तसिंहकी पोतीका विवाह कियाँ । मारवाडके महाराजने जिस प्रकार बडे आदरभावके साथ महाराव राजा रामसिंहकी संवर्द्धना और

---

*Report of the poletecal Adminition of the Rajpootana states for the 1882–83.

(१) यह बात बिलकुल गलत लिखी गई है क्यों कि न तो भीमसिंहके कोई बेटा था और न महाराजा बख्तसिंहकी पोती थी, न कोई ऐसा विवाह उस समय हुआ था ।

अभिनंदन किया उससे वह अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु उस समय मारवाडके महाराज अस्वस्थ थे, इसीसे उन्होंने असुख माना। ठीक५८वर्ष बीते कि महाराव रामसिंह बहादुरने चौदह वर्षकी अवस्थामें जोधपुरमें जाकर अपनी मृत पहली रानी जोधपुरके मृत महाराज मानसिंहकी कन्यासे विवाह किया था, उसी रानीके गर्भसे कुमार भीमसिंहने जन्म लिया, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि सन् १८६८ ईसवीमें कुमार भीमसिंहकी मृत्यु अकालमें हो गई, सारा बूँदीका राज्य शोकके समुद्रमें डूब गया था। महाराव राजाके जोधपुरमें जाते ही उसी समयमें महाराजको "द्वारकानाथ" नामक बागके महलमें उतारा गया। महाराव राजाने कृष्णगढके राजाके साथ इस समय साक्षात् किया। विवाह हो जानेके पीछे वह ११ फर्वरीको जोधपुर छोडकर कुटुम्बसहित अजमेरको चले गये और वहाँ राजपूतानेके स्थित गवर्नर जनरल एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डके साथ साक्षात् कर पुष्कर तीर्थका दर्शन करनेके पीछे पहिली मार्चको अपनी राजधानी बूँदीमें चले आये"।

"इस विवाहमें और आने जानेमें बूँदीके महाराजका ढाई लाख रुपया खर्च हुआ था, और विवाहके कौतुकमें अनेक प्रकारके द्रव्य और अश्वादि सब मिलाकर डेढ लाख रुपया मिला था"।

राजकुमारोंकी शिक्षाके सम्बन्धमें उक्त विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है कि "महामान्य महाराव राजा रामसिंहके तीनों कुमारोंकी अवस्था क्रमसे इस समय साढे तेरह वर्ष ग्यारह वर्ष और नौ वर्षकी है।प्राचीन कालकी हिन्दूरीतिके अनुसार बडे यत्नसे राजकुमारोंको शिक्षा दी गई है,ऐसी आशा की जाती है कि बडे राजकुमार इस समय संस्कृत विद्यामें इतने विद्वान् हो गये हैं कि इसके दो वर्षके पीछे उन्होंने संस्कृतको समाप्त कर उर्दूभाषा का पढना प्रारंभ किया। परन्तु इसी अवसरमें उनको राजकार्यके शासनकी शिक्षा करनी पडी है। तीनों राजकुमारोंने शारीरिक व्यायाम और युद्धकी शिक्षा भी प्राप्त की है, एक समय हमने महारावके साथ साक्षात् करनेके लिये महलमें जाकर देखा कि महाराव स्वयं महलके एक कमरेमें बैठे हुए पिस्तौल चलानेकी शिक्षा राजकुमारोंको दे रहे हैं। मध्यम और तीसरे राजकुमारोंके कारण इतिहासमें बूँदीराज्यकी प्रचलित रीतिके अनुसार वार्षिक २०००० हजार रुपयेकी आमदनीकी भूमि नियत कर दी है, और उन दो जनोंके लिये जो दो महल बनाये जानेका विचार हुआ था उनमेंसे एक तो बनकर तैयार हो गया है और दूसरेके बनानेकी समस्त सामग्री तैय्यार धरी है"।

"गत जौलाई मासकी चौथी तारीखको महाराव राजा रामसिंहके और एक पुत्रने जन्म लिया, इनका नाम रघुवरसिंह रक्खा गया।" यह महाराजके चौथे पुत्र हैं।

बूँदीराज्यके वर्तमान आय व्ययके संबन्धमें अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि "महारावने जो राज्यके आय व्ययकी सूची हमें दी है। प्रकाशमें तो यह संवत्

(१) यह भी गलत लिखा है चौथा पुत्र कोई नहीं हुआ रघुवीरसिंह नाम बडे पुत्रका है जिसकी शादी जोधपुरमें हुई थी वही अब बूंदीके रावराजा हैं।

१९३८ (जो गत १ पहिली जौलाईको समाप्त हुआ है) की अभ्रान्त अनुमान की हुई सूची है यथार्थ आय व्ययकी सची और भी कई एक महीने बीतनेपर तैयार होगी। महाराव राजाके पुत्रोंके विवाहमें बहुतसा धन खर्च हुआ है, महारावने ऐसा अनुरोध प्रकाशित किया है कि गवर्नमेण्टको जो नियमित वार्षिक कर दिया जाता है वह रुक गया है। उन्होंने उस करको कईबार करके दो तीन वर्षके भीतर ही बिना सूद चुकानेको कहा है । उनका यह प्रस्ताव विचारके आधीनमें ग्रहण किया गया है। " संवत् १९३८ अर्थात् (१८८२-१८८३ ईसवीमें) बूंदीराज्यके आय व्ययकी सूची नीचे दी गई है।

आमदनी।

भूराजस्व और अनेक छोटी २ तहसीलोंकी आमदनी	४७५००० रुपया।
कापरेन और अन्यान्य देशोंके जागीरदारोंके समीपसे आया हुआ कर	२८००० "
जेला, विल्ला अर्थात् वाणिज्य शुल्क, बन विभाग, उद्यान, कोटपाला, टकसाल इत्यादिकी आमदनी	९०००० "
नाना प्रकारकी छोटी २ आमदनी	३५००० "
सब	६२८००० रुपया।

खर्च।

महाराव राजका स्वकीय और कुटुम्बका खर्च ...	४५०९० रुपया।
पुण्य वा दातव्य व्यय	२२००० "
सेनादलका खर्चा	८८००० "
राजकर्मचारी और— परिवारिक कुटुम्बियोंके नौकरोंका वेतन	७२००० "
रथ-घोडे खाना तथा राज्यके— अन्यान्य कार्यालयोंका व्यय	७२००० "
हवाला और तहसील खर्च	५५००० "
और भी अनेक प्रकारका खर्च	७८००० "
अंग्रेज गवर्नमेंटको देयकर-तथा पूर्तकार्य विभाग विचारालयमें पुरस्कारादि देना इत्यादि	१२८००० "
फुटकर	३८००० "
	५९८००० "
उद्वृत	३०००० "
सब जोड	६२८००० रु०

बृटिश एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "महारावने परिवारके अनेक विषयोंमें भलीभांतिसे मन लगाया है। इससे महामहिमवरके राज्यके आभ्यन्तरीय शासनके सम्बन्धमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ"।

"खालसा भूमिसमूहकी जमाबन्दीके विषयमें विशेष उन्नति नहीं हुई। गतवर्षमें केवल पचास ग्राम जमाबंदी किये गये हैं। पहिले वर्षके साथ मिलान करनेसे इनकी संख्या केवल १५० हुई है। इसका फल अधिक असंतोषदायक नहीं हुआ"।

"प्रकाशमें कहा गया है कि शांतिरक्षाविभागकी अवस्था पहिलेके समान असंतोषदायक रही है परन्तु संतोषका विषय यह है कि महामान्यवर महारावने १०० मीनोंको विशेष शांतिरक्षक पदपर एक जमादार और दो उपजमादारोंके अधीनमें नियुक्त करके डकैती निवारण करनेपर ध्यान दिया है"।

गत वर्षके विज्ञापनमें बूंदीके शुल्कविभागके साधनका जो उल्लेख हुआ है इस वर्षमें उसका फल यह हुआ है, कि इससे राज्यकी आय ८०००० रुपया बढी है। यह एक जानने योग्य बात है, राज्यके वाणिज्य शुल्कके संस्कारसे, प्रजा और राजा दोनोंकी ही सुभीतेके साथ आमदनी बढी है।

बूँदीराज्यकी पृथ्वीका परिमाण २३०० मील है, प्रजाकी संख्या२२४०००,सेनामें पैदलोंकी संख्या १३७५, अश्वारोहियोंकी संख्या १०० और तोपोंकी संख्या ८८ है।

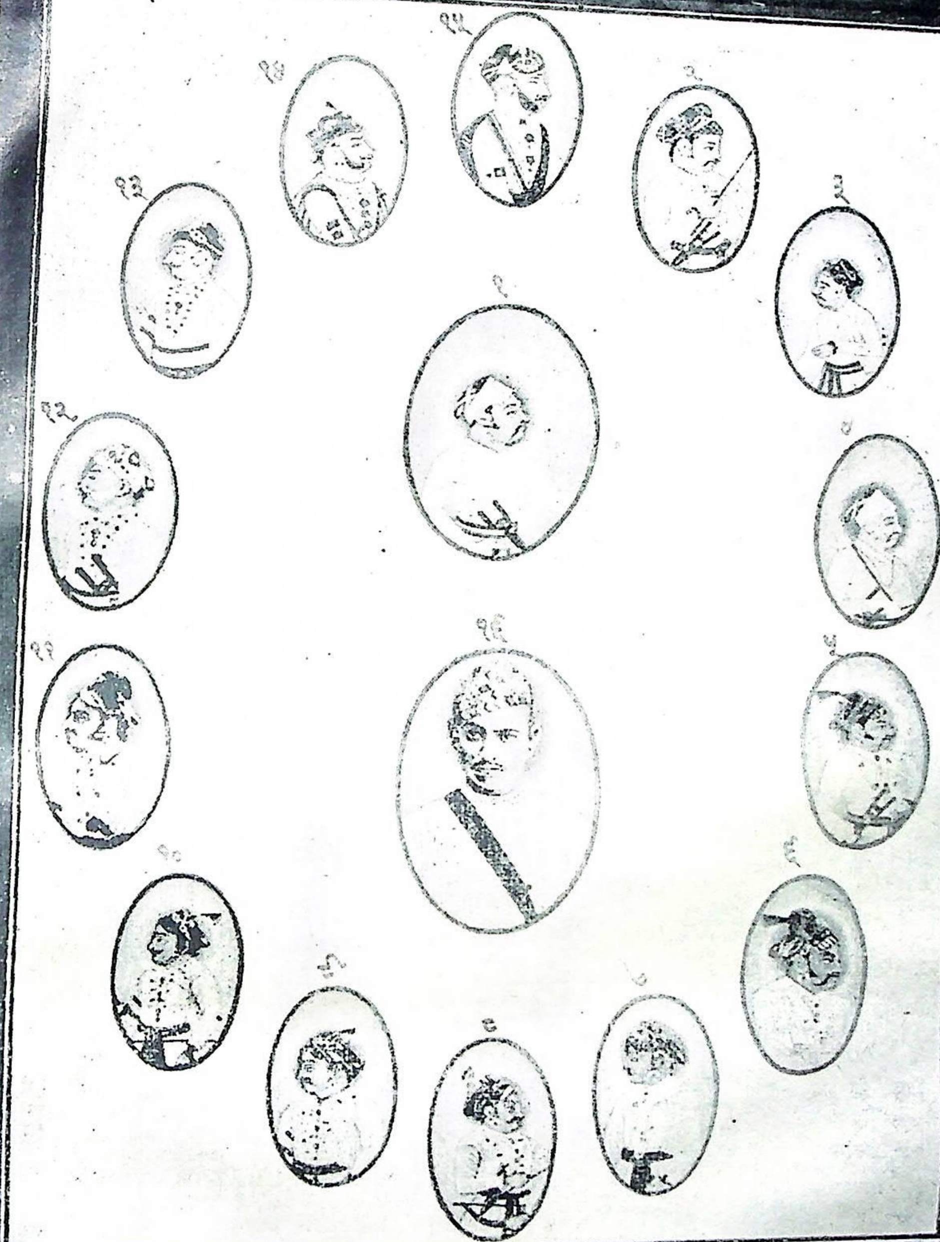
बूँदीराज्यकी सर्वसाधारण प्रजामें शिक्षा विस्तारके संबन्धमें बूँदीमें स्थित पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि "राजधानीमें जो राजविद्यालय स्थापित हैं; मैं दुःखित होता हूँ कि मैं उन विद्यालयोंके सम्बन्धमें उन्नतिमूलक विवरणको प्रकाश करनेमें असमर्थ हूँ, उन विद्यालयके विद्यार्थियोंकी संख्या उपयुक्त नहीं है। प्रायः १२० विद्यार्थी पढा करते हैं। जो बारह हिन्दू-विद्यालय विभिन्न ग्रामोंमें स्थापित हैं उन सबमेंके विद्यार्थियोंकी संख्या ४२९ है।" सारांश यह है कि रजवाडेके अन्यान्य राजाओंकी प्रजामें जिस भांति शिक्षाका विस्तार हुआ है, अत्यन्त दुःखका विषय है कि बूँदीराज्यमें आजतक शिक्षाके विस्तारके विषयमें ऐसा यत्न नहीं किया गया। कर्नल ब्राडफोर्ड लिखते हैं कि बूँदीराज्यकी शिक्षा इस समय शैशव अवस्थामें है, परन्तु जब शिक्षा विस्तारकी सूचना हुई है तब ऐसी आशा की जाती है कि किसी समय इसके द्वारा अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी।

बूंदी राज्यका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बम्बई.



Lt. Col. H. H. Maharao Sir Umed Singhji Bahadur,
G.C.S.I., G.C.I.E.—Kotao-Rajputana.



कोटा।

(१) माधोसिंह, १६२५.
(२) मुकुंदसिंह, १६३१.
(३) जगतसिंह, १६५८.
प्रेमसिंह, १६७०, (तसवीर नहीं है)
(४) किशोरसिंह, १६७०.

(५) रामसिंह, १६९६.
(६) भीमसिंह, १७०७.
(७) अरजुनसिंह, १७२०.
(८) दरजनसाल १७२४,
(९) अजीतसिंह, १७४७,
(१०) चतरसाल, १७४३.

(११) गुमानसिंह, १७६६,
(१२) उम्मेदसिंह, १७७१.
(१३) किशोरसिंह, १८२०.
(१४) रामसिंह, १८२८.
(१५) चतरसिंह, १८६६,
(१६) महाराव उम्मेदसिंह १८८९.

श्रीः ।

राजस्थानका इतिहास ।

दूसरा भाग २.

कोटाराज्यका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

बूँदीसे कोटाराज्यका भिन्न होना–कोटिया भील–भील जाति–कोटेके प्रथम राजा माधोसिंह–कोटाराज्यमें सामन्त मंडलीका स्थापित होना–माधानी–राजा–मुकुन्द–रणभूमिमें चारों भाइयोंका सम्राट्के लिये प्राण देना–जगत्सिंह–प्रेमसिंह–उनका सिंहासनसे उतरना–किशोरसिंह–अरकाटमें उनका मारा जाना–रामसिंह–जाजवमें उनकी मृत्यु–भीलोंका अधिपति चक्रसेन–ऊमटवंश–भीमसिंह–भीमसिंहका निजामुलमुल्कपर आक्रमण–भीमसिंहका मारा जाना–भीमकी सचित्र समालोचना–बूँदीके राजाके साथ उनकी शत्रुता–राव अर्जुनका सिंहासनपर बैठकर कुटुम्बियोंसे कलह–श्यामसिंहका मारा जाना–महाराव अर्जुनशाल–महाराष्ट्रोंका प्रथम अभ्युदय–कोटेपर आक्रमण–हिम्मतसिंह झालासे कोटेकी रक्षा–जालिमसिंहका जन्म–महाराष्ट्रोंको कर देना–दुर्जनशालका मारा जाना–उनके चरित्रकी समालोचना–उनकी शिकार–उनकी रानियोंकी शिकार–हिम्मतसिंहकी व्याघ्रकी शिकार–महाराव अजित–राव छत्रशाल–जयपुरके राजा माधोसिंहका कोटेपर आक्रमण–भटवाडेका समर–जालिमसिंह झाला–हाडाजातिका जय पाना–आमेरकी सेनाका भागना–कोटेका स्वाधीन होना–छत्रशालका मारा जाना।

कोटेका हाडा राजवंश बूँदीराज वंशधरोंकी छोटी शाखा है अतएव कोटेकी हाडा जातिका पहिला इतिहास बूँदी राज्यके इतिहासके साथ मिला हुआ है । बादशाह शाहजहाँ जिस समय भारतवर्षके सिंहासनपर बैठा था उस समयमें बुरहानपुरके समरमें बूँदीके रावराजा रत्नसिंहके दूसरे पुत्र माधोसिंहने अपने प्रबल पराक्रमसे बादशाहकी ओरसे जय प्राप्त की, तब बादशाह शहाजहाँने प्रसन्न होकर उक्त कोटा प्रदेश और उसके अधीनवाले सब गांव नगर उनको द दिये । उसी समयसे माधोसिंह पिताके बूँदीराज्यको छोडकर स्वाधनिभावसे कोटेराज्यका शासन करने लगे । तबसे कोटा और बूँदी दो पृथक २ राज्य गिने गये । हाडाजातिके इतिहासमें लिखा है कि माधोसिंहका जन्म संवत् १६२१ सन् १५६५ ई० में हुआ था, चौदह वर्षकी अवस्थामें माधोसिंहने बुरहानपुरकी लडाईमें अपने साहस और पराक्रमसे ऐसी विजय पाई कि जिससे प्रसन्न हो बादशाह शाहजहाँने उनको तीनसौ साठ नगर और

गांवोंसे पूर्ण कोटाराज्य पुरस्कारमें दे दिया । पहिले यह कोटाराज्य बूँदीराज्यके प्रधान सामन्तोंके अधीनमें था और उसका राजकर दो लाख रुपये मिलते थे । माधोसिंहने बादशाहसे "राजा" की उपाधि प्राप्त की और वह उक्त कोटेराज्यका स्वाधीनभावसे शासन करने लगे ।

बूँदीराज्यके इतिहासमें पाठक पढ़ चुके हैं कि अमिश्र आदिम कोटिया भीलका सबसे पहिले इस प्रदेशपर आधिकार था । उन प्रथम निवासी भीलोंके हाथका जलतक राजपूत नहीं छूते थे । जिस समय कोटेपर अधिकार किया गया उस समय उस प्रदेशके स्थान २ में केवल कुटी ही थी । कोटाके राजा कोटेसे पाँच कोश दक्षिणमें इकेलगढ़ नामक बडे पुराने किलेमें रहते थे । किन्तु जिस समय माधोसिंहने दिल्लीके बादशाहसे कोटाप्रदेशकी शासनसनद प्राप्त की उस समय कोटाराज्यकी सीमा चारों ओरसे बढाई गयी । उस समय कोटेके दक्षिणमें गागरौन और घाटौली प्रदेश था । खीची जातीयगण उस प्रदेशके स्वामी थे । पूर्वीय सीमामें गोंडजातिके अधीनमें मांगरोल और राठौर राजपूतोंके स्वामीके अधिकारमें नाहरगढ़ था । नाहरगढ़के अधिपति राजपूत होनेपर भी वह अपने अधिकारी प्रदेशकी रक्षा करनेके लिये मुसलमानी धर्मका अवलम्बन कर नव्वाबकी उपाधिसे भूषित थे । उत्तरमें कोटेकी सीमा चम्बल नदीके किनारे किनारे सुलतानपुरतक थी, चंबल नदीके पारमें नाशता नामक एक स्वतंत्र छोटा राज्य विराजमान था । इस चारों ओरकी सीमामें बँधे प्रदेशके बीचमें ३६० नगर और गाँव थे और बहुत सी नदियोंके द्वारा पृथ्वीकी उपजाऊ शक्ति भी बडी थी ।

कोटेके राजा माधोसिंहने बादशाहके बलसे बलवान् होकर थोडे ही दिनोंमें कोटेकी राज्यसीमा बहुत बढ़ा ली । माधोसिंहके मरनेके समय मालवा और हाडौतीकी सीमातक उनकी शासनशक्तिका विस्तार था । माधोसिंह संवत् १६८० में पांच योग्य पुत्रोंको छोड परलोक सिधारे । उनके चार पुत्र कोटाराज्यके चार प्रधान सामन्त पदोंपर नियुक्त थे । बूँदीके प्रधान हाडा शाखाके साथ उक्त माधोसिंहके उत्तराधिकारी गणोंकी पृथक्ता दिखानेके लिये दोनों राजवंशोंके आदि पुरुषोंके नामसे दोनों वंश प्रसिद्ध होते हैं । माधोसिंहके वंशधरगण माधानी नामसे परिचित हैं ।

माधोसिंहके पांच पुत्रोंके नाम ।

१ मुकुन्दसिंह; कोटेके अधीश्वर हुए ।

२ मोहनसिंह, इन्होंने पलायता प्रदेशको प्राप्त किया ।

३ जुझारसिंह इन्होंने कोठडा और उसके पीछे रामगढ़ रेलावन प्राप्त किया ।

४ कनीराम इन्होंने कोयलाप्रदेशको प्राप्त किया । इसके सिवाय दिल्लीके बादशाहसे स्वतंत्र शासनपत्र प्राप्त देह और जोरा प्रदेश प्राप्त किया ।

५ किशोरसिंह इन्होंने सांगोप्रदेश प्राप्त किये ।

माधोसिंहके मरनेके पीछे उनके बडे बेटे मुकुन्दसिंहके मस्तकपर राज्यमुकुट शोभित हुआ । इतिहास कहता है कि जिस सीमाके अन्तमें स्थित पहाडी मार्ग

हाडोतीसे मालवेको अलग करता है वहीं इन मुकुन्दसिंहने एक घाटा बनाया और इन्हींके नामानुसार इसका नाम "मुकुन्ददर्रा" वा "मुकुन्दद्वार" हुआ है । इसी मार्गसे सन् १८०४ ईसवीमें ब्रिगेडियर मानसूनकी आज्ञाकारी बृटिश सेना रणमेंसे मुँह छिपाकर प्राणोंके भयसे भागी थी कोटेके जातीय इतिहासमें मुकुन्दसिंहकी कीर्तिकी प्रशंसा पाई जाती है । उन्होंने अपने राज्यके अनेक स्थानोंपर अनेक अभेद्य किले और सर्वसाधारणके उपकारी तालाब बनवाये हैं । आणता नामक स्थानकी मनोहर दीवारें और "पेट्टा" उन्हींने बनवाई हैं ।

राजा मुकुन्दसिंह अपने पिताके समान ही प्रबल पराक्रमी और असाधारण साहसी थे । रजवाडेकी राजपूत जाति पहिलेसे ही दिल्लीके मुसलमान बादशाहोंके बीच न्यायसे सिंहासनके अधिकारियोंके अधिकारके लिये जिस भांति अनेक बार सेनाके साथ जीवन दान करके राजभक्तिकी पराकाष्ठाको दिखा गयी है मुकुन्दसिंह भी उसी भाँति इतिहासमें पूर्वजोंके समान राजभक्तिकी प्रज्वलित ज्योति दिखा गये हैं । जिस समयमें पापात्मा औरंगजेबने अपने जन्म देनेवाले पिताको कैद किया और राजसिंहासनसे हटानेके लिये पिशाचकी मूर्ति धारण कर सेनाके साथ आगे बढ़कर अपने षड्यन्त्रके जालको फैलाया उस समय प्रायः प्रत्येक राजपूत राजाओंने अपनी २ सेनाके साथ बुड्ढे बादशाह शाहजहांके अधिकारकी रक्षा करनेके लिये तलवार पकडी थी । उनमें राठौर जाति,बूँदी और कोटेकी हाडा जाति सबमें आगे हुई थी । कोटेके स्वामी माधोसिंहके पुत्रोंने बादशाह शाहजहांको उस महाविपत्तिके समयमें विलक्षणतासे स्मरण किया, कि अब बादशाह शाहजहांके पक्षको लेना चाहिये, केवल राजभक्तिसे ही नहीं बरन् बादशाह शाहजहांके अनुग्रहसे ही पिता माधोसिंहने कोटेका राज्य स्वाधीन भावसे पाया है। अतएव माधोसिंहके पांचों पुत्र बादशाह शाहजहांके सिंहासनकी रक्षाके लिये जीवन देनेमें विमुख नहीं हैं । संवत् १७१४ में उज्जयनीके समीपवाले प्रदेशमें नर पिशाच औरंगजेबके साथ राजपूत गणोंने बादशाह शाहजहांकी सेनामें मिलकर भीषण समरकी आगको प्रज्वलित कर दिया उस संग्राममें औरंगजेबने जय पाई, और उस स्थानका नाम फतेहाबाद रक्खा गया । इतिहास बतलाता है कि राजपूत वीरगण यातो समरमें जय प्राप्त करेंगे; नहीं तो अपना जीवन देंगे,-परन्तु किसी भाँति कोई राजपूत युद्धसे भागेगा नहीं,ऐसी प्रतिज्ञा करके युद्ध क्षेत्रमें जाते समय प्रत्येक राजपूतने अपने शिरपर विवाह समयका मौर धारण कर वरके भेषमें गमन किया; माधोसिंहके उक्त पांचों पुत्र उसी प्रकार अपने शिरपर मौर धरकर नंगी तलवारें हाथमें ले सेनासहित युद्धक्षेत्रमें उतरे । किन्तु चतुरोंमें श्रेष्ठ राठौर सेनापतिके दोषसे उक्त पाँचों भाई यद्यपि समरमें जय न पा सके किन्तु रणक्षेत्रमें जीवन विसर्जन करके उन्होंने असीम वीरताके साथ अपने प्रणको रक्खा । युद्धके अन्तमें सबसे छोटे किशोरसिंहको उस समरभूमिसे लौटना पडा, यद्यपि उनके समस्त शरीरमें सांघातिक क्षत अनेक थे, किन्तु विशेष यत्नसे चिकित्सा होनेपर वह पुनः जीवित हुए । इन किशोरसिंहने ही अन्तमें दक्षिणके समरमें विशेष कर बीजापुरको अधिकारमें करते समय राजपूतोंके बीच सबसे बढ़कर वीरता प्रकाश कर युद्ध

कौशलमें प्रतिष्ठा और सम्मान पाया । किन्तु दुर्भाग्यसे किशोरसिंहके समान सिंह बिक्रमी वीरोंसे किस भाँति आचरण करना चाहिये उसको बादशाहके कुमार नहीं जान सके अतएव अन्तमें बडा शोचनीय दृश्य उपस्थित हुआ ।

राजा मुकुन्दसिंह रणक्षेत्रमें मारे गये । उनके पुत्र जगत्सिंह कोटेके राज-सिंहासन पर बैठे और दिल्लीके बादशाहकी अधीनतामें दो हजार सेनाके "मनसबदार" अर्थात् सेनापतिके पदपर नियुक्त हुए । संवत् १७२६ तक जगत्सिंह दक्षिणके समरमें नियुक्त थे । उक्त संवत्में ही वह अपुत्रावस्थामें स्वर्गवासी हुए, तब माधोसिंहके चौथे पुत्र कनीराम जिन्होंने कोइला प्रदेशका अधिकार पाया था, उन्हींके पुत्र प्रेमसिंह कोटाके राजसिंहासन पर शोभित हुए। किन्तु छः महीने भी उन्होंने राज्यकार्यको नहीं चलाया था कि इतनेहीमें प्रेमसिंह अपने निन्दनीय कार्यसे प्रजाकी दृष्टिमें घृणित हुए । कोटाके पंचायत समाजने उनको सिंहासनसे उतार कर फिर पिताके प्रदेश कोइलामें भेज दिया । उनके वंशधर अभीलों उसी प्रदेशमें विराजमान हैं । माधोसिंहके पंचम पुत्र किशोरसिंह जो रणक्षेत्रमें बडे घायल होकर दैवयोगसे बच गये थे, सामन्त समाजने उन्हींको कोटाके राजसिंहासन पर बैठाया । जिस समय औरंगजेबने दिल्लीके सिंहासन पर अधिकार कर लिया, उसी समय कोटेके राजा किशोरसिंह औरंगजेबकी सेनाके साथ अपनी सेना लेकर दाक्षिणात्यमें मरहठोंको दमन करनेके लिये नियुक्त हुए । मरहटोंके साथ युद्धमें उनके बलकी और साहसकी सभीने मुक्तकंठसे प्रशंसा की थी । अन्तमें संवत् १७४२ में अरकाटगढ किलेके अधिकारके समय किशोरसिंह मारे गये। किशोर-सिंह हाडाजातिके आदर्श वीरपुरुषस्वरूप थे; कहा गया है कि अनेक समरोंमें उनके शरीरमें पचास घावोंके चिह्न अङ्कित होगये थे। वह मरते समय तीन पुत्रोंको छोड गये । (१) विशनसिंह, (२) रामसिंह (३) हरनाथसिंह ।

राजपूतोंकी रीतिके अनुसार बडे पुत्र विशनसिंहको कोटेका राज्यसिंहासन प्राप्त होना चाहिये था किन्तु किशोरसिंह जिस समय दक्षिणात्यमें सेना लेकर गये थे उस समय विशनसिंहको पीछेसे आनेको कहा था, परन्तु विशनसिंहने उनकी आज्ञा नहीं मानी, वह न गये तब किशोरसिंहने क्रोधित होकर उनको भविष्यमें राज्य पानेसे हटा दिया । विशनसिंहने उत्तराधिकारीके अधिकारसे हीन होकर केवल आणता नामक स्थानको पाया । विशनसिंहके औरससे पृथ्वीसिंहने जन्म लिया । वही पीछे आणता प्रदेशके सामन्त हुए । उनके पुत्रका नाम अजीत हुआ, अजीतसिंहके तीन पुत्र हुए (१) छत्र-साल, (२) गुमानसिंह (३) राजसिंह ।

किशोरसिंहके दूसरे पुत्र रामसिंहने अपने पिताके साथ दाक्षिणात्यमें जाकर मरहठों-के प्रत्येक युद्धमें लिप्त रहकर अपने पिताके समान प्रशंसा पाई थी । पिताके मरजाने पर वही पिताके पद सम्मानको प्राप्त हुए। औरंगजेबके मरने पर जिस समय दिल्लीके सिंहासन-के लिये उसके उत्तराधिकारियोंमें झगडा हुआ उस समय कोटेके स्वामी रामसिंहने बडे शाहजादे मोआजिमके विरुद्ध दाक्षिणात्यके राजप्रतिनिधि कुमार आजिमका पक्ष अवलम्बन

किया और संवत् १७६४ में जाजव नामक स्थानके समरमें इन्होंने प्राण गँवाये। उक्त समरमें बूँदीके राजाने कुमार मोआजिमके पक्षको लिया था, पाठकगण बूँदीके इतिहासमें उसको पढ चुके हैं। उस समय उसी युद्धमें रामसिंहने अपनी ज्ञातिवाले बूँदीके राजाके साथ युद्ध किया। रामसिंहके हृदयमें ऐसी प्रबल कामना उदय हुई थी कि बूँदीके राजाको परास्त करनेमें प्रतिष्ठा पाई और उसीसे उन्होंने बूँदीके राजाके अनिष्ट साधनमें त्रुटि नहीं की, किन्तु दुर्भाग्यसे जाजव नामक स्थानके समरमें ही गोलोंके आघातसे वह मारेगये।

रामसिंहके मरनेके उपरान्त भीमसिंह कोटेके राजा हुए। हाडाजातिके इतिहासमें लिखा है कि भीमसिंहके शासन समयसे ही कोटाराज्य धन, सम्मान, सामर्थ्य और प्रभुतामें भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राज्यकी योग्यताको प्राप्त हो गया था। अभीतक कोटा तीसरी श्रेणीके राज्योंमें गिना जाता था। किन्तु चतुर बुद्धिमान् भीमसिंहके अभ्युदयके साथ ही साथ कोटा राज्यकी भी उन्नति हो गई। बादशाह बहादुरशाहके मरने पर फर्रुखसियरके दिल्लीके सिंहासन पर बैठते हुए जिस समय दोनों सय्यद भाई प्रबल शक्तिसे भारतका शासन करते थे, कोटेके राजा भीमसिंहने उन दोनों सय्यदोंके पक्षका अवलम्बन किया और उनकी ही नीतिका पालन करते हुए अपनी उन्नतिके दरवाजेको खोल लिया। माधोसिंहके समयसे कोटेके राजा तीसरी श्रेणीके राजाओं-में दिल्लीके बादशाहके अधीनमें दो हजार सेनाके मनसबदार होते आये थे। किन्तु उक्त दोनों सय्यद भीमसिंह पर ऐसे प्रसन्न हुए कि उन्होंने भीमसिंहको भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राजाओंको प्राप्त सम्मान सूचक "पाँच हजारी" अर्थात् पाँच हजार सेनाके मनसबदारका पद देदिया। हाडाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीके राजा बादशाह फर्रुखसियरके पक्षका अवलम्बन करके उक्त अत्याचारी दोनों लडकोंकी सर्वसंहारिणी नीतिके विरुद्धमें खडे हुए, अतएव छोटी शाखासे उत्पन्न कोटेके राजा भीमसिंह उक्त दोनों मन्त्रियोंके पक्षको लेकर जाजवके समरमें दोनों राजवंशोंके बीच शत्रुताकी आगमें जलने लगे। बूँदीके इतिहासमें पाठक भलीभाँतिसे पढ चुके हैं कि कोटेक राजा भीमसिंहने किस प्रकार कायरपुरुषोंके समान घृणित उपायसे बूँदीके राजा बुधसिंहका जीवनरूपी दीपक बुझानेकी चेष्टा की थी। राजा भीमसिंहने उक्त सय्यद मंत्री और आमेरके राजा जयसिंहसे मिलकर सभी निन्दित कामोंमें सलाह दी थी, अतएव जयसिंहने जिस समय बूँदीके राजा बुधसिंहका सर्वनाश किया उस समयमें भीमसिंहने उनकी सब प्रकारसे सहायता की, इसका भी वृत्तान्त पाठक पढ चुके हैं। दोनों सय्यदोंके प्रियपात्र होकर भीमसिंहने उनके अनुग्रहसे पश्चिममें कोटेसे और पूर्वमें अहीरवाडेसे पठारकी समस्त पृथ्वीका सनदपत्र पा लिया। उस बडे भूखण्डके बीचमें खीची जातिकी और बूँदी राज्यकी बहुतसी भूमि थी। उन्होंने उक्त उपायसे हाडौती प्रदेशके बीच सबसे श्रेष्ठ गागरोनका किला प्राप्त किया; और अलाउद्दीनके आक्रमणके विरुद्धमें बडे साहस और बलसे उस किलेकी रक्षा कर उसकी कीर्तिको बढा लिया। मऊ, मेदाना, शेरगढ, बारां, माङ्गरौल और बडोदा आदि चम्बलके पूर्ववाले किले भी अपने अधिकारमें कर लिये।

हाडौती राज्यकी दाहनी सीमामें विराजमान कुछ एक गिरिसंकट प्रदेशोंपर, अमिश्र आदिम भीलोंने अपनी पैतृक सम्पत्तिस्वरूप मानकर, अपना अधिकार प्राप्त कर लिया। इन सब देशोंके बीचमें मनोहर थाना अब भी कोटेराज्यके शेष दक्षिण सीमास्वरूप है, उसमें भीलोंने अपनी राजधानी बनाई और भीलोंके राजा चक्रसेन वहाँपर रहकर राज चलाते थे। भीलोंके राजाके अधिकारमें पाँचसौ घुडसवार और आठसौ धनुषधारी सेना थी, मेवाडसे लेकर शेष सीमातक सभी स्थानोंके भील उनको अपना स्वामी मानते थे। यह आदिम अधिवासी भील धारके राजा भोजके समयसे कोटेके राजा भीमसिंहके समय तक राजनैतिक विप्लवोंमें अपनी जातीय स्वाधीनताकी रक्षा करते आये थे, किन्तु कोटेके राजा भीमसिंहने उनके अधिकारी देशोंपर चढाई कर भीलवंशको ध्वंसकर उनके सब देशोंको अपने कोटेराज्यमें मिला लिया। नरसिंहगढ पाटनको भी ले लिया। राजा भीमसिंह यदि और कुछ दिन जीवित रहते तो कोट राज्यकी सीमा पर्वत मालाके बाहरतक निःसंदेह बढा लेते। अनारसी डिग पडावा और चंद्रावतोंके अधिकारी प्रदेश भी कोटाराज्यमें मिलाये, किन्तु भीमसिंहके परलोकवासी होनेपर वह सब प्रदेश कोटाराज्यसे निकल गये।

कोटेके इतिहाससे जाना जाता है कि प्रसिद्ध कुलीचखाँ जिसने पीछे इतिहासमें निजामुलमुल्क नामसे प्रगट होकर दाक्षिणमें स्वाधीनभावसे हैदराबाद राज्य स्थापन किया। उसने दिल्लीके बादशाहकी अधीनता न मान जिस समय अपनी सेनाके बलसे बादशाहके विरुद्धमें खडे हो स्वाधीनभावसे दिल्लीके अधिकारी देशोंको लूटकर पलायन किया उस समय दिल्लीके बादशाहने अपने प्रतिनिधि स्वरूपमें आमेरके राजा जयसिंह, कोटेके राजा भीमसिंह और नरवरके राजा गजसिंहको यह आज्ञा दी कि तुम सब भागे हुए कुलीचखाँको कैद करके लाओ। उक्त निजामुलमुल्कके साथ भीमसिंहने आपसमें पगडी बदलकर भाईका सम्बन्ध स्थापित किया था, कुलीचखाँने जयसिंहसे पूर्वोक्त बात सुनकर भीमसिंहको मित्रभावसे एक पत्र लिखा दिया कि मैंने बादशाहका किसी प्रकारसे धन रत्नादि नहीं लूटा है, अतएव मेरे विरुद्धमें जो सब अन्याय और अपवादकी बातें उठ रही हैं आप उन सबको मिथ्या जानो, यही मेरा अनुरोध है, जयसिंह एक षड्यन्त्री हैं, वह हमारे नाश करनेकी निरन्तर चेष्टा करते हैं। इस लिये आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप उनकी बातका विश्वास न करना और मेरी दक्षिण यात्रामें रोक टोक नहीं करना। निजामुलमुल्कका यह पत्र पाकर हाडाराज भीमसिंहने यह उत्तर लिख भेजा कि "स्वामीकी आज्ञाका पालन और मित्रताकी रक्षाके बीचमें एक रेखा है वह मैं जानता हूँ, आपके मार्ग रोकनेको मुझे आज्ञा मिली है और उसीसे मैं इतनी दूर सेना लेकर आया हूँ, इसको बादशाहकी आज्ञा जानो, आपके साथ हमको अवश्य युद्ध करना होगा और कल प्रातःकाल मैं आपपर आक्रमण करूँगा"।

"कल आपपर आक्रमण करेंगे" यह बात वीर तेजस्वी भीमसिंहने लिखकर मित्रको सावधान कर दिया और अपने वीरभावको भी प्रकाश कर दिया, चतुर मुसलमान कुलीचखां स्वामिभक्त राजपूतको राजभक्तिसे मित्रताका बलिदान करते देखकर छलबल

और कौशलसे अपनी रक्षाके लिये युद्ध करनेको तैयार हुआ। निजामने सिंध--नदी प्रदेशके कुरवाई औरासा नामक नगरके समीपवाले गिरिसंकटके मार्गमें अपना डेरा डाला। यदि इस समय कुलीचखां पर आक्रमण किया जाय तो उसी एक पहाडी मार्गसे होकर जाना होगा नहीं तो राजपूत लोग ढूंढकर चले जाँयगे और पता नहीं लगेगा, वह अवश्य ही इसी मार्गसे आवैंगे, इस बातको निश्चय जान निजामने उस गिरि-संकटके सामने तोपें लगाकर उन्हें वृक्षोंकी लताओंसे इस तरह छिपा दिया कि सम्मुखसे कोई तोपोंका अनुमान भी न कर सके और भीतरसे तोपका गोला सीधा चला जाय।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही वीरवर भीमसिंह अपने अधिकारकी सब सेनाका कच्छवाही सेनादलके साथ मिलाकर अफीसखानेके पीछे निजाम पर आक्रमण करनेके लिये एक दल बांधकर भालेको हाथमें ले बाहर निकले। वह निजामकी सेनाके साथ भिडनेवाले थे, यदि और कुछ आगे बढ जाते तो राजपूतोंका नाम भी न रहता। राजपूतोंको अपनी सेनाके पास आते हुए देख निजामने तोपोंमें बत्ती लगवा दी, गोलोंकी ऐसी वृष्टि हुई कि उसके द्वारा हाथी सहित राजा भीमसिंह और राजा गजसिंह दोनों ही मारे गये। दोनोंके मारेजानेसे सब पैदल और घुड सवार इधर उधर भाग निकले। कुलीचखांने इस भांति जय पाकर दक्षिणकी ओर कूच किया और निसन्देह स्वाधीन भावसे जाकर हैदराबादमें राजकार्य करने लगा। हैदराबाद आजतक कुलीचखाँके वंशधरोंके शासनमें चला आता है।

इतिहासमें लिखा है कि उस समयमें कोटेकी हाडाजातिपर दो विपत्तियां पडीं; एक तो राजा भीमसिंहका मरना दूसरे कोटेके राजवंशियोंके पूज्य विग्रह वृजनाथका अन्तर्धान होना। प्रत्येक राजपूत राजा ही सदासे प्रत्येक समरक्षेत्रमें अपने इष्टदेवकी मूर्ति ले जाते हैं, यह मूर्ति तर्कसमें रक्षित रहती है। युद्धके आदिमें राजासे लेकर सामान्य दरजेके सैनिकतक उसी देवविग्रहके नामसे जयध्वनि करके शत्रु पर आक्रमण करते हैं। कोटेराजवंशके उक्त वृजनाथजीकी मूर्ति स्वर्णनिर्मित और छोटे आकारकी थी और उस विग्रह (मूर्ति) ने अनेक युद्धोंमें जय लाभ और असंख्य मनुष्योंका विनाश देखा था। कोटाराज्यकी सेनाने "जय वृजनाथ!" की इस शब्दसे चारों दिशाओंमें गुंजारकर शत्रुकी सेनापर आक्रमण किया था; परन्तु उस समय वृजनाथ जाने कहाँ अदृश्य हो गये उनका कुछ पता नहीं चला। इतिहासमें लिखा है बहुत समय तक खोजनेके पीछे उस मूर्तिके समान और एक मूर्ति प्राप्त हुई उनको महासमारोहके साथ कोटेकी राजधानीमें लाये। कोटाबासियोंने वह मूर्ति पाकर बडी खुशी मनाई। जो हो भीमसिंह १५ वर्ष तक राज्य करके संवत् १७७६ में (सन् १७२० इसवीमें) उक्तरीतिसे मारे गये। किन्तु उन १४ वर्षोंमें भीमसिंहने जिस रीतिसे राज्यके कार्यको चलाया उसीसे उसकी अवस्था बदली थी, यह निश्चय उनकी वीरता और राजनीतिज्ञता मानी गई।

दोनोंके एक वंशमें उत्पन्न होनेपर भी बूँदीके राजा बुधसिंहके साथ कोटेके राजा रामसिंहकी जो लडाई हुई सो धौलपुरके रणक्षेत्रमें हाडा जातीय दोनों राजाओंने एक दूसरे पर आक्रमण करके जातिकी विद्वेषताको चरितार्थ कर दिया। कोटेके राजा भीमसिंहने समय पाकर बूँदीके राजाका सर्वनाश करनेमें त्रुटि नहीं की थी। राजा भीमसिंहने बादशाह फर्रुखसियरकी ओरसे राजा बुधसिंहके मारनके लिये जो कायरपुरुषोंके समान उनपर आक्रमण किया था पाठकमंडली उसको पहिले ही जान चुकी है। उसी लडाईके कारण हाडाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीका राजवंश निधन होकर महाविपत्तिमें पडा। राजा भीमसिंहने दोनों सय्यदोंकी सहायतासे बलवान् होकर अपने कुटुम्बी बुधसिंहको मारनेमें कोई त्रुटि नहीं की थी, आमेरके राजा जयसिंहसे जिस समय बुधसिंह सिंहासनच्युत और विताडित हुए, ऐसे शुभ योगको पाकर राजा भीमसिंहने बूँदीपर आक्रमण किया और वहाँपर छिपे हुए राजाचिह्न, बूँदीराज्यका नगाडा और प्राचीन समयका संचित प्रसिद्ध रण शंख प्रभृति लूटकर कोटे राज्यमें ले आये। बादशाह जहाँगीरने बूँदीके राजा रत्नसिंहको जो पीली राजपताका दी थी जिस पताकाके मूलदेशमें हाडासेनाके अनेक वार समरमें बडे पराक्रम प्रकाश के चित्र अंकित थे; भीमसिंहने उस राजपताका तकको बूँदीके राजमहलोंमेंसे लाकर अपने यहाँ उसका व्यवहार किया। बूँदीके इतिहासमें लिखा है कि कोटेसे बूँदीराज्यके उक्त समस्त राजचिह्न फिर प्राप्त करनेके लिये बूँदीके राजाने बारम्बार चेष्टा की किन्तु किसी प्रकारसे भी वह नहीं पासके, बूँदीके राजाने कोटेके प्रधान दरवाजे और किलेमें प्रवेश होनेवाले दरवाजेकी भी ताली बनवाकर पहरेदारको लालच देकर गुप्तभावसे उन चीजोंके लानेकी चेष्टा की, किन्तु प्रकाश हो जानेसे उनकी चेष्टा निष्फल हुई। कर्नल टाडने लिखा है कि "उस समयसे आजतक प्रतिदिन सायंकालके उपरान्त कोटेका नगरद्वार बंद हो जाता है और यहाँ तक कि स्वयं कोटेके राजा यदि संध्याके उपरान्त आना चाहै तो उनके लिये भी दरवाजा नहीं खुलता। इसके सम्बन्धमें कोटाके हाडा जातीय कविने लिखा है कि एक दिन कोटेके राजा दुर्जनशाल युद्धमें परास्त होकर थोडेसे सेवकोंके साथ आधीरातके समय नगरके दरवाजेपर आये और द्वाररक्षक पहरेदारसे बोले कि दरवाजा खोलो, परन्तु पहिले उन्होंने ही आज्ञा दे रक्खी थी कि किसी प्रकारसे भी किसीको रात्रिके समयमें दरवाजा नहीं खोलना, अतएव पहरेवालेने उनकी आज्ञाका पालन किया, तब राजा दुर्जनशालने स्वयं दरवाजेपर आकर अपना परिचय दे पहरेदारसे द्वार खोलनेको कहा उस समय पहरेदारने समझा कि कोई दूसरा राजा आकर द्वार खुलाना चाहता है, अतएव पहरेदारने द्वारके भीतरसे कहा कि राजाको इस रात्रिके समय दूसरे स्थान पर रहना चाहिये, यह सुनकर राजाने फिर कहा तब पहरेदारने बन्दूक दिखाकर कहा चले जावो हम नहीं खोलेंगे यदि आप नहीं मानोगे तब हमैं विवश हो गोली चलानी पडेगी। दुर्जनशालने अपनी प्रथमकी आज्ञाके अनुसार पहरेदारको बन्दूक चलानेमें उद्यत देखकर दरवाजेसे हटकर दूसरे स्थानपर जाय शेष रात्रि बिताई। दूसरे दिन प्रातःकाल दरवाजा खोला गया; जो पहरेदार रात्रिमें द्वार रक्षक था वह

रात्रिका समाचार अपने जोडीदारसे कह ही रहा था कि सामनेसे राजा दुर्जनशाल आते हुए दृष्टि पडे। राजाको देख वह पहरेदार विस्मयके साथ डरने लगा और धीरे २ चलकर अपने हाथकी बन्दूकको राजाके चरणोंके आगे धरकर दोनों हाथ जोड घुटने झुकाय पृथ्वीपर मस्तक रख दंड पानेके लिये उसने निवेदन किया। तब राजा दुर्जनशालने उसका हाथ पकड कर उठाया और अपनी पूर्व आज्ञाके पालन करनेसे उसकी विशेष प्रशंसा करते हुए स्वयं जो कुछ उत्कृष्ट वस्त्रादि पहरे हुए थे वे सब उतार पुरस्कार स्वरूपमें उसे दे दिये।

हाडा इतिहासके जाननेवालेका लेख है कि राजा भीमसिंहके समस्त शरीरमें शस्त्रोंके आघातके चिह्न थे, उनके शरीरको देख मनुष्य कुरूपी कहेंगे इस कारण वह किसीके सामने अपने शरीरपरसे वस्त्रोंको नहीं उतारते थे। कुरवाईके युद्धक्षेत्रमें जिस समय कुलीचखाँके गोलेसे घायल हुए थे केवल उसी समयमें उनके शरीरमें अगणित शस्त्रोंके चिह्न देख एक नौकरने उनसे पूछा, तो भीमसिंहने उस अवस्थामें उसको उत्तर दिया " जो हाडाजातिके शासनके लिये जन्मा है और जो पैतृक राज्यकी रक्षा करनेके अभिलाषी हैं उनको इसी प्रकारसे अस्त्रशस्त्रोंके चिह्न धारण करने पडेंगे। कोटेके राजाओंमें राजा भीमसिंहने सबसे पहिले दिल्लीके बादशाहसे बडे सम्मान सूचक " पञ्चहजारी मनसबदार " अर्थात् पाँच हजार सेनाके नायकके पदको धारण किया। उसी प्रकार उन्होंने सबसे पहिले " महाराव " की उपाधि पाई। उक्त उपाधि यद्यपि दिल्लीके बादशाहने उनको नहीं दी थी किन्तु राजपूत जातिके मुकुटमणि हिन्दुकुलपति मेवाडके महाराणाने दी थी। और दिल्लीके सम्राट्ने भी उस पदवीको स्वीकार किया। बूँदीके गोपीनाथके वंशवाले हाडौतीके प्रधान सामन्तोंमें गिने जाते थे; उनके सम्मान सूचक " आपजी " शब्दका व्योहार होता था, किन्तु जिस समयमें इंद्रशाल उदयपुरमें गये उस समय उनको महाराणाकी ओरसे अपने भाइयोंमें सम्मानके लिये " महाराज " की पदवी व्यवहारमें लानेकी आज्ञा हुई। उस समयसे उक्त सम्मान सूचक आपजी शब्द केवल कोटेके दूसरी श्रेणीके माधानी सामन्तोंके सम्मानके अर्थ व्यवहारमें चला आता है। राजा भीमसिंह अपने तीन पुत्रोंको छोड परलोक सिधारे, उनके पुत्रोंके नाम इस भाँति हैं (१) अर्जुनसिंह (२) श्यामसिंह और (३) दुर्जनशाल।

महाराव अर्जुनसिंहका विवाह कोटाराज्यके भविष्यमें होनेवाले मंत्री जालमसिंह झालाके पूर्वपुरुष माधोसिंहकी बहिनके साथ हुआ। किन्तु अर्जुनसिंह चार वर्षतक कोटेका राज्य करके निःसन्तान अवस्थामें ही परलोक सिधारे। अर्जुनसिंहके मरनेके पीछे कोटेके राजसिंहासनके लिये श्यामसिंह और दुर्जनशाल दोनों भाइयोंमें युद्धरूपी अग्नि प्रज्वलित हुई। उस जातीय विवादमें कोटेकी सामन्त मंडली भी दोनों पक्षकी ओर होनेसे महा दुःखी हुई। उदयपुरके रणक्षेत्रमें दोनों राजभाइयोंने अपने २ पक्षकी सेना और सामन्तोंके साथ आपसमें राजसिंहासनके लिये रुधिरकी नदी बहा दी। हाडा जातीय भयानक युद्धके पीछे श्यामसिंहके मारे जानेसे लडाई शांत हुई। हाडा जातीय

कविने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि श्यामसिंहके मरनेपर दुर्जनशाल भ्रातृ वियोगके शोकमें मग्न हो रोताहुआ हाहाकार करने लगा। मैं बुरे मुहूर्तमें अनुचित आशाके वश होकर सिंहासनके लिये भाईके साथ युद्ध कर उसकी मृत्युका कारण हुआ, ऐसा हृदयसे अनुताप करने लगा। जिस समय कोटेराज्यमें यह दुर्घटना हुई इसी समय कोटेके राज्यमें एक और हानि हुई। दिल्लीके बादशाहने जो भीमसिंह पर प्रसन्न होकर पुरस्कारस्वरूपमें रामपुरा, भानपुरा और कलापति नामक तीन धनशाली प्रदेश वहाँके आदिम राजाओंसे छीन कर दिये थे सो कोटेमें आपसकी लडाईके समय उन ३ प्रदेशोंके स्वामियोंने अपने २ देशोंको अपने राज्यमें मिला लिया।

दुर्जनशाल संवत् १७८० (सन् १७२४ इसवी) में कोटेके राजा हुए। इस समयमें तैमूरवंशके शेष सम्राट् मोहम्मदशाह दिल्लीके सिंहासन पर विराजमान थे। दुर्जनशालको उन्होंने सम्मानके साथ दिल्लीमें बुलाया और खिलत दी। दुर्जनशालकी प्रार्थनासे बादशाह मोहम्मदशाहने उस आज्ञाका प्रचार किया कि हाडा जाति यमुनाके तीर २ जिन २ स्थानों पर बसती है उन स्थानों पर गो हत्या न होने पावे। दुर्जनशाल अपनी जातिके इतिहासकी अनेक घटनाओंके समयमें राजसिंहासन पर विराजमान थे। उन्हींके शासन समयमें सबसे पहिले बाजीरावने अपनी मरहटोंकी सेनाके साथ उत्तर भारतवर्ष पर अधिकार करनेके लिये चढाई की। उस स्मरणीय घटनाके समयमें बाजीरावने हाडौती देशकी पूर्वीय सीमाके अन्तमें तारज पास नामक पर्वती मार्गमें जाते समय नाहरगढके किलेको जीतकर दुर्जनसिंहको दे दिया। उक्त किला और उसके अधिकारी प्रदेश एक यवनके पास थे। संवत् १७७५ (सन् १७२९ इसवी) में यही प्रथम मरहठोंके साथ हाडा जातिका पहिला सम्मिलन हुआ। हाडाराज दुर्जनशालने उक्त किलेको पाकर उसके बदलेमें पेशवा बाजीरावकी सहायताके लिये तथा उनके पक्षमें उस समय विशेष प्रयोजनीय सामरिक द्रव्यावली और सेनाके लिये भोज उपहारस्वरूपमें दिया। महाराष्ट्रपति बाजीरावके साथ दुर्जनशालकी वह जो मित्रता हुई, दुःखका विषय है कि कई वर्षके पीछे वह मित्रता महाराष्ट्रपतिने एक साथ विस्मृतिके जलमें बहा दी।

बूँदीराज्यके इतिहासमें पाठक पढचुके हैं कि आमेरके राजा जयसिंह दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे असीम शासनशक्तिको पाकर अपने राज्यकी सीमा बढाने और शासनशक्तिको प्रबल करनेके लिये बूँदी आदि नरेशोंको राज्यसे हीन बल बनाकर सामन्त पदपर नियुक्त करनेका विचार करने लगे। उनके उत्तराधिकारियोंने भी उसी ऊंची आशाके वश होकर बूँदीके राजा बुधसिंहको सिंहासनच्युत करके निकाल दिया। बुधसिंहने वृद्धावस्थामें राज्यके शोकमें अपने प्राण छोड दिये। किन्तु आमेरनरेशने अन्तमें महाराष्ट्रोंके दलसे परास्त होकर अपनेको धिक्कारकी अग्निमें जलाकर

(१) कर्नल टाडने टिप्पणीमें लिखा है कि " इस वर्षमें जिस समय बाजीराव हाडौती प्रदेशमें होते हुए हिन्दुस्तान पर अधिकार करनेको आये उस समय हिम्मतसिंह झाला कोटाराज्यके फौजदार थे। इस वर्षमें शिवसिंह और अगले वर्षमें जालिमसिंहका जन्म हुआ "।

आत्महत्या की। यह भी पाठकोंको स्मरण होगा। उस आमेर नरेशने बुधसिंहको बूंदी से निकाल कर अपने एक सामन्तको बूँदीके सिंहासन पर बैठाया था और उसे कर देनेको कहा। उसी समय वह विजय पानेके गर्वसे कोटाराज्यमें अधिकार बढानके लिये आगे बढे। इस समय दुर्जनशाल कोटेके सिंहासन पर बठे थे। संवत् १८०० में आमेर नरेश ईश्वरीसिंहने कोटेको जीतनेकी इच्छासे तीन महाराष्ट्र वीर नेता और जाटपति सूर्य्यमल्लको सेनासहित बुलाकर अपनी २ सेनाके साथ कोटेपर अधिकार करनेकी तय्यारी की। कोटडी नामक स्थानमें महा समरके पीछे जयपुरके राजाने सेनाके साथ कोटेकी राजधानी घेर ली। क्रमानुसार तीन महीने तक राजधानी घिरी रहने पर उसके जीतनेके लिये अनेक उपायोंको अवलम्बन करनेपर भी वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने उनकी उस अभिलाषाको पूर्ण न होने दिया। अन्तमें निराश होकर आमेर नरेश ईश्वरीसिंह उस नगरके वृक्षोंको और राज्यके उद्यानको ध्वंस करके अपने राज्यको लौट गये। इसी समय महाराष्ट्रदलके दूसरे नेता जयआपा सेंधियाका एक हाथ गोलेसे उड गया।

शत्रुदलने जिस समय कोटेको घेरा था उस समय झाला जातिके राजपूत हिम्मतसिंह जो कोटेके फौजदार अर्थात् प्रधान सेनापतिके पदपर नियुक्त थे, उन्होंने अपनी वीरता और युद्धकौशलसे कोटके राजा दुर्जनशालके साथ स्वामिभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई। उनके ही परामर्शसे और मध्यस्थ होनेस दुर्जनशालको बाजीरावसे नाहरगढका किला मिला था। संवत् १७९५ से १८०० के बीचमें पूर्वोक्त दोनों घटनाओंके समय जालिमसिंहका जन्म हुआ। जालिमसिंहने इतनी कीर्ति प्राप्त की कि उनके साथ कोटे राज्यके इतिहासका इतना घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ कि कर्नल टाडने कोटाराज्यके इतिहासमें उनकी बडी प्रशंसा की है।

जयपुरनरेश ईश्वरीसिंहके कोटक जीतनेमें समर्थ होकर लौटाते समय वीर तेजस्वी दुर्ज्जनशालने पैतृक लडाईकी शत्रुताको विस्मृत कर बुधसिंहके पुत्र उमेद-सिंहको उसके पैतृकराज्य बूँदीके सिंहासन पर बैठानेके लिये बडी सहायता की। महाराष्ट्रनेता हुलकरकी सहायताके बिना ईश्वरीसिंहको परास्त करके बूंदीक अधिकारको न पाते देख दुर्जनशालने उमेदको हुलकरका आश्रय लेनेकी सलाह दी। संवत् १८०५ सन् १७४९ में जिस समय उमेदसिंहने हुलकरकी सहायतासे बूँदीका राज्यसिंहासन पाया तब पाटणप्रभृति प्रदेश महाराष्ट्रनेता हुलकरको दिय, उस समय उन्हीं हुलकरने कोटेक राजा दुर्जनशालसे भी कर लेना आरम्भ कर दिया। उमेदसिंहका उपकार करनेको गये हुए दुर्जनशाल स्वयं बलशाली हुलकरको कर देनेके लिये बाध्य हो गये।

वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने अपनी भुजाओंके बलसे अनेक प्रदेशोंको जीतकर कोटाराज्यमें मिला लिया, खीचीजातिके अधिकारी फूलबरोद नामक प्रदेशको भी उन्होंने अपने राज्यमें मिला लिया था। गूगोर नामक किलेको जीत कर हाडाजातिके साथ खीची जातिका भयानक युद्ध आरम्भ हुआ। गूगोरके स्वामी बलभद्रने

असीम साहससे उस किलेकी रक्षा की, इतिहासमें लिखा है कि वलभद्रपुरा रामपुरा और शिवपुर प्रभृतिके सामन्तोंको अपने दलमें मिलाकर हाडाजातिके विरोधमें खडे हुए थे। संवत् १८१० में चौहानवंशसे उत्पन्न हाडा और खीची यह दोनों जाति उस समररूपी अग्निमें जलने लगीं। बूँदीके राजा महावीर उमेदसिंहने इस समय कोटेके राजा दुर्जनशालके पक्षमें बडी वीरता प्रकाश की। एकमात्र उमेदसिंहकी ही वीरतासे कोटेकी राजपताकाका उस रणक्षेत्रमें विपक्षी खीची गणोंके हाथसे उद्धार हुआ। उससे तीन वर्ष पीछे दुर्जनशालकी प्राणवायु पंचभूतमें लय हो गई। कर्नल टाडने लिखा है कि वह एक साहसी राजा थे, और जिन गुणोंकी राजपूतोंमें आवश्यकता होती है वह सभी गुणोंमें विराजमान थे। अमायिकता उदारता और साहस आदि किसीकी भी उनमें कमी नहीं थी। वह शिकार बडे चावसे खेलते थे, अधिक करके शेर और वाघकी शिकार उनको प्यारी लगती थी। उनके राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें शिकार खेलनेके लिये सिंह व्याघ्रादि भयानक जानवरोंसे वन परिपूर्ण रहता, और उन सभी वनोंमें शिकार खेलनेका स्थापन पडाव, वना हुआ था।

जिस समय दुर्जनशाल शिकार खेलनेको निकलते थे इतिहास कहता है कि उस समय वह अपनी रानियोंको भी साथमें ले जाते थे। वह राजपूत वीराङ्गनाएँ भी उत्तम रीतिसे बन्दूक चलानेकी शिक्षा पाये हुए रहती थीं। शिकार खेलनेके मञ्चपर सबसे ऊपरके दरजे पर गोली भरी हुई बन्दूक हाथमें लेकर वह बैठती थीं। जिस समय शिकार खेलनेवाले वनमेंसे सिंह व्याघ्रादिकोंको घेरकर उस मंचपर लाते तभी वह वीराङ्गना बन्दूककी गोलीसे इस सिंह व्याघ्रादिका वध करती थीं।

कोटेके इतिहासमें लिखा है कि एक दिन शिकार खेलते समय फौजदार हिम्मतसिंह झाला शिकार खेलनेके मंचके नीचे पृथ्वीपर खडे थे; उसी समय एक व्याघ्र सेनादलसे और शिकारी लोगोंसे महाक्रोधित होकर मुँह फैलाये वहाँ आकर खडा हुआ, किन्तु राजा दुर्जनशालने तब भी उसको गोलीसे मारनेकी आज्ञा नहीं दी, किसीने विना राजाकी आज्ञा उसके मारनेका साहस भी नहीं किया। अवसर पाकर विकट आकारवाले वाघने बडी तेजीसे हिम्मतसिंहपर आक्रमण किया। तब उन्होंने ढालसे अपनी रक्षा की और तुरन्त ही तडप कर वाघके समीप जाय अपनी तलवारसे उसके मस्तकके दो खण्ड कर दिये। ऐसे असीम साहस और वीरताको देख दुर्जनशाल और सामन्त मण्डलीने हिम्मतसिंहकी बडी प्रशंसा की।

दुर्जनशालने अपुत्रकावस्थामें प्राण त्यागे। उन्होंने मेवाडके राणाकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। दुर्भाग्यसे अपने कोई पुत्र न होता हुआ देख हताश होकर मरनेके तीन वर्ष पहिले वह रानीसे बोले कि "देखो भगवानकी इच्छासे जो मेरा औरसजात कोई पुत्र कोटेके सिंहासन पर नहीं बैठेगा, तो इस समय एक पुत्रको गोद लेना चाहिये।" पाठकोंको स्मरण होगा कि कोटेके भूतपूर्व राजा महाराव राम-

सिंहके बडे पुत्र विशनसिंह अपनी माताकी आज्ञासे दाक्षिणकी लडाईमें न जानेके कारण कोटेके राजसिंहासनसे च्युत होकर केवल चम्बलके किनारेवाले आणता नामक प्रदेशमें शासन करते थे। जिस समय दुर्जनशालने दत्तक पुत्रके लेनेकी इच्छा प्रकट की, उस समयमें उक्त आणता प्रदेशमें उपरोक्त विशनसिंहके पौत्र वृद्ध अजीतसिंह विद्यमान थे। अजीतसिंहके तीन पुत्र थे। उनमें सबसे बडे छत्रसालको दुर्जनशालने दत्तक स्वरूपमें लेकर महारानीकी गोदमें बैठा दिया। इतिहासमें लिखा है कि यद्यपि दुर्जनशालने छत्रशालको अपने पुत्र और भविष्यमें उत्तराधिकारी स्वरूपमें राज्यमें प्रकाशित कर दिया, यद्यपि सामन्त मण्डली और समस्त प्रजाने छत्रसालको भविष्यमें अपने राजा स्वरूपसे मान लिया किन्तु दुर्जनशालके मरनेपर फौजदार हिम्मतसिंह झालाने अपनी प्रबल शक्तिसे उस व्यवस्थाको व्यर्थ कर दिया, उस समय आणताके वृद्ध राजा अजीतसिंह जीते थे। हिम्मतसिंह उनके पक्षको लेकर सबके सामने बोले कि "पुत्रको राजसिंहासनपर तिलक हो और पिता अधीन प्रजाके समान आज्ञा पालन करे, यह कभी नहीं हो सकता है। यह प्रकृतिके विपरीत बात है।" जो कुछ हो झाला हिम्मतसिंह अपने किसी गुप्त स्वार्थसाधनसे हो अथवा छत्रसालके प्राप्त व्यवहारकी अवस्थामें राज्यकी कोई होनहार नैतिक अनिष्टकी आशंकासे हो; उन्होंने उन अजीतसिंहको ही राजसिंहासनपर बैठालनेका उद्योग किया। किसीने उनकी बातके विपरीत खडे होकर कुछ न कहा। उन्होंने उन वृद्ध अजीतसिंहको कोटेके राजसिंहासनपर शोभित कर दिया। ढाई वर्ष तक राज्यको चलाकर अजीतसिंह स्वर्गको सिधारे। उनके तीन पुत्रोंके नाम यह हैं (१) छत्रसाल (२) गुमानसिंह (३) राजसिंह।

अजीतसिंहके स्वर्ग पधारनेपर सबसे बडे पुत्र छत्रसालको कोटेका राजसिंहासन मिला। विख्यात हिम्मतसिंह झाला इसके प्रथम ही मर चुके थे, अतएव फौजदारके पदपर उनके भतीजे जालिमसिंह नियुक्त हुए।

इसी समय अपने सौतेले भाई ईश्वरीसिंहकी आत्महत्या करके माधोसिंह जयपुरके सिंहासनपर बैठे। किन्तु ईश्वरीसिंहने ऊँची आशाके अनुसार हाडा जातिपर प्रताप और अधिकार एवं बूँदी और कोटा राज्यको जय करनेके लिए जो चढाई की थी उसका फल यह हुआ कि स्वयं युद्धमें परास्त और अपमानित होकर उनको आत्महत्या करनी पडी, इसको देखकर भी माधोसिंहके नेत्र नहीं खुले वह फिर कोटाराज्यपर आधिकार करनेके लिए तैयार हुए। राजपूत राजपूतोंके साथ युद्ध, तथा एक ओरसे दूसरे पर अधिकार करने और दूसरी ओरसे अपनी रक्षा करनेके लिए तैयार हुए। माधोसिंह बोले कि आमेरनरेश जिस समय दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपसे शासनकर्ताके पदपर नियुक्त हैं तब बूँदी और कोटेके राजाओंको हमारी स्वाधीनता माननी होगी। किन्तु हाडाजातिने इस बातसे घृणा दिखाई और जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिए दूने उत्साहके साथ आपसमें बाहुबल दिखानेके लिए उन्होंने बडी शीघ्रतासे तैयारी की।

आमेरके राजा माधोसिंह संवत् १८१७ सन् १७६१ ई०में अपनी संपूर्ण सेनाको सजाकर हाडाजातिपर अधिकार करनेके लिए उद्यत हुए। इस समय अबदालीके आक्रमणसे महाराष्ट्र वीर एक साथ तेजहीन और उत्साहरहित हो गये थे, अतएव कछवाहे और हाडाजाति निर्भय होकर जातीयसंग्रामके लिए प्रबल बलके साथ आगे बढी। माधोसिंहने हाड़ौती प्रदेशपर सेना सहित चढनेके लिए यात्रा करनेके समय सबसे पहिले उनियारा प्रदेशपर आक्रमण और अधिकार कर उसे अपने राज्यमें मिला लिया। उसके पीछे उन्होंने लाखेरी प्रदेशमें जाकर हतबल मरहटोंको भगाकर उसको भी अपने राज्यमें कर लिया। इस भाँति विजय पाकर हृदयमें प्रसन्न हो पार और चम्बल नदीके बीचमें पालीघाटपर उतरे। सुलतानपुरके हाडाजातिके सामन्तपर उक्त नदीके प्रदेशकी शत्रुओंसे रक्षा करनेका भार समर्पित था, किन्तु माधोसिंहने शीघ्रतासे उन पर आक्रमण कर अपना अधिकार कर लिया। सुलतानपुरके रक्षकने बडी वीरतासे किलेके बाहर निकलकर अपने कुटुम्बियोंके सहित प्रबल समररूपी अग्निमें जल जीवनरूपी आहुति को दे पराजयके कलंकसे छुटकारा पाया। जिस समय सुलतानपुरके स्वामी युद्धक्षेत्रमें गिरे उस समय उन्होंने अपने दोनों हाथोंसे पृथ्वीको पकडा, विजेताओंमेंसे कोई २ इसको देखकर हँसे किन्तु विचारवानोंका कथन है कि राजपूत मरते समय भी जन्मभूमिका आलिंगन करते हैं।

फिर जय प्राप्त करके महा दर्पित और उत्साहित होकर विजयी कछवाहादल कोटाराज्यके बीच माधोसिंहकी जयशब्दसे आकाशको गुंजारता आगे बढा। अन्तमें भटवाडे नामक स्थानमें जाकर देखा कि एक वंशमें उत्पन्न पाँच हजार हाडा जातीय सेना उनकी गति रोकनेके लिए संहारमूर्तिको धारे खडी हुई है। कोटाराज्यकी सेनाकी संख्या माधोसिंहकी सेना—संख्यासे यद्यपि कमती थी, परन्तु वह वीर पुरुष राजपूत राजपूतजातीकी परम प्रिय स्वाधीनताकी और जन्मभूमिकी रक्षा करनेके लिए जीवन उत्सर्ग करनेको ही खडे हुए थे,। सबसे पहिले कछवाहेराजकी अगणित घुडसवार सेनाने हाडाजातिकी सेनापर आक्रमण किया। कोटाराज्यकी घुडसवार सेना अवश्य कमती थी कछवाही सेनाके सम्पूर्ण घोडे पहिलेसे ही थके हुए थे, तिस पर भी उन्होंने समरमें निश्चय जीतेंगे यह विचारकर बिना विश्राम लिए ही आक्रमण किया। थोडी संख्यावाली हाडासेनाने उनके उस प्रबल आक्रमणको अनायास ही सह लिया और किसी भाँति भी अपने व्यूहको भंग नहीं होने दिया। तुरन्त ही माधोसिंहने रणभूमिमें नई सेना खडी की। तब घुडसवारोंके साथ पैदल भिडजानेसे रणक्षेत्रमें रक्तकी नदी बह निकली। ठीक इसी समयमें कोटेके फौजदार जालिमसिंहने चतुराईसे राजनैतिक जाल फैलाया उस समय जालिमसिंहकी अवस्था इक्कीस वर्ष की थी, हिम्मतसिंहने उनको पोष्य पुत्रके रूपसे ग्रहण किया था, अतएव जालिमसिंह इस समय हिम्मतसिंहके पदपर विराजमान हो कोटेके फौजदार हो रणक्षेत्रमें उपस्थित हुए थे। जिस समय क्रमानुसार युद्ध प्रबल हो गया उस समय

वीरश्रेष्ठ जालिमसिंह घोडेसे उतर पैदल ही अपनी सेनाके साथ असीम साहस और वीरताके साथ शत्रुओंपर आक्रमण करने लगे । जालिमसिंहका जिस बुद्धिमानीके कारण जीवन प्रसिद्ध हुआ था, इन्होंने सबमें पहिले महासंकटके समय उसी चतुराई-को दिखाया ।

महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकर इस समय उक्त रणक्षेत्रके समीप ही थे, किन्तु पानीपतके समरके पीछे वह ऐसे बलहीन हो गये थे कि किसी प्रकारसे दोनों ओरमें किसीकी ओर भी नहीं हो सकते थे । जिस समय माधोसिंहकी सब प्रकारसे जीत होनेकी सम्भावना हुई उसी समय चतुर जालिमसिंहने अपने घोडे पर चढ़; बडी शीघ्रतासे हुल-करके डेरोंमें जाय यह प्रार्थना की कि आप यदि युद्ध करनेको राजी नहीं हैं तो एकबार अपनी सेनाको लेकर इस सुयोग पर माधोसिंहके डेरोंको लूट लीजिये । हुलकरने यह बात बडे प्रेमसे मान ली ।

डेरोंपर आक्रमण होते ही कछवाही सेनाका दल मारे भयके रणभूमिको छोड भाग निकला । हाडाजातीय कविने लिखा है कि "हाडाजातिकी सेनाने अपनी नंगी तलवारको शत्रुओंके रुधिरमें स्नान कराकर संग्रामरूपी तीर्थकी क्रियाको समाप्त किया।

माचेडी ईशरदा,बातका, वारोल, अचरोल प्रभृति जयपुरके अधिकारी प्रदेशोंके समस्त सामन्त उस पांच हजार हाडाजातीय सेनासे परास्त होकर भाग गये । बूँदीकी सेनाका दल कोटेकी सेनाके साथ मिलनेको आया था किन्तु इस समय तक उसने, आमेर नरेशने जो बूँदीके प्रदेशोंको जीत लिया था, उनका उद्धार नहीं करने पाया था । जो हो उक्त संग्राममें कछवाही जातिकी पंचरंगी पताका कोटेकी सेनाके हाथमें आगई कोटेके कविने उक्त हाडाजातिकी सेनाकी जीतमें और जालिमसिंहकी वीरतामूलक कविता मालाके गूथनेमें विलम्ब नहीं किया ।हाडाजाति आजतक गौरवके साथ उस कविताका गान करती है । कवितामें एक स्थान पर लिखा है—

"जङ्गभटवाडारोजीत । नारोजालिमझाला ।
रङ्ग एक रङ्ग चढ़ा । रङ्ग पँचरंगका ।।

इसका अर्थ यह है कि भटवाडाके युद्धमें जालिमसिंहका सौभाग्यरूपी सितारा उदय हुआ । उस रणक्षेत्रमें (रङ्ग)एक रंगा रहा, पंचरंग पताकाको दाब दिया अर्थात् आमेरकी राजपताका रुधिरसे रंग गई ।

उक्त भटवाडेकी लडाईसे ही आमेरनरेशकी प्रभुता जाती रही । इतने दिनोंसे बादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपमें कछवाहे नरेश जिस प्रभुताको पाये चले आये थे, इस समय वह प्रभुता एकसाथ जाती रही । इस लढ़ाईके पीछे आजतक आमेर नरेशोंमें हाडाजातिके ऊपर अपना अधिकार करनेका साहस नहीं हुआ, कर्नल टाडने लिखा है

(१) कर्नल टाडने टिप्पणीमें लिखा है कि " यह विचित्रता है कि जिस वर्षमें नादिर-शाहने भारतपर आक्रमण किया, जालिमसिंह उसी वर्षमें जन्मे और अबदालीके आक्रमणके समय उन्होंने राजनैतिक रंगभूमिमें प्रथम प्रवेश किया ।

कि जातीय स्वाधीनता और जन्मभूमिकी रक्षाके लिये हाडाजातिने भटवाडेके रणक्षेत्र-में जिस असीम वीरतासे जय प्राप्त की प्रतिवर्षमें उसके स्मरणार्थ एक सामरिक महोत्सव होता है, हाडाजाति एकत्रित होकर एक कृत्रिम आमेरका किला बनाय जय जय करके उस किलेपर अधिकार करके उसको ध्वंस करती है "। उपरोक्त लडाईके पीछे छत्रशाल बहुत दिन नहीं जिये। उनके कोई पुत्र न होनेसे उनके भाई कोटेके राजसिंहासन पर बैठे।

द्वितीय अध्याय २.



महाराव गुमानसिंह–जालिमसिंह–उनका जन्म और वंशविवरण–जालिमसिंहका पद–उनका सम्मान पाना–झालावंशके फौजदार पदको वंश परम्परासे पाना–जालिमसिंहके अन्यायसे प्रभुता करने पर महाराव गुमानसिंहको असंतोष होना--जालिमसिंहका पदसे च्युत करना--महारावका जालिमसिंहकी सब सम्पत्तिका हरलेना--जालिमसिंहका कोटेको छोडदेना--मेवाडमें जाना--राणाकी आधीनतामें रहना–राणासे उनको " राजराणा " उपाधि और भूसंपत्ति मिलना--मरहठोंके विरोधमें युद्ध--रणभूमिमें जालिमसिंहका घायल होकर बंदी होना--उनका फिर कोटेमें आना–मरहठोंका कोटे राज्यपर आक्रमण करनेकी चेष्टा–बुकायनीका युद्ध–प्रशंसनीय वीरताका प्रकाश–जालिमसिंहपर फिर गुमानसिंहका दयालु होना–जालिमसिंहके द्वारा महारावकी ओरसे मरहठोंके साथ संधि करना–जालिमसिंहका मनोरथ सफल होना–मृत्युशय्यामें पडे हुए गुमानसिंहका जालिमसिंहके द्वारा अपने पुत्र उमेदसिंहके लिये राज्यसिंहासन देनेको कहना–महाराव गुमानसिंहकी मृत्यु–उमेदसिंहका राज्यतिलक होना–टीका दोडकेलवाडे पर अधिकार–जालिमसिंहके विरोधमें षड्यंत्र–षड्यंत्रभेद–हाडाजातिके सामन्तोंका निकालना–मोसेनके सामन्तका षड्यंत्र–षड्यंत्र भेद–बहादुरसिंहकी मृत्यु–राजभाइयोंका कारागार भोगना–जालिमसिंहके विरोधमें बहुतसे षड्यंत्र–वीरांगनाओंका वीरभेषसे जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा करना–जालिमसिंहका उद्धार पाना–जालिमसिंहकी सावधानता।

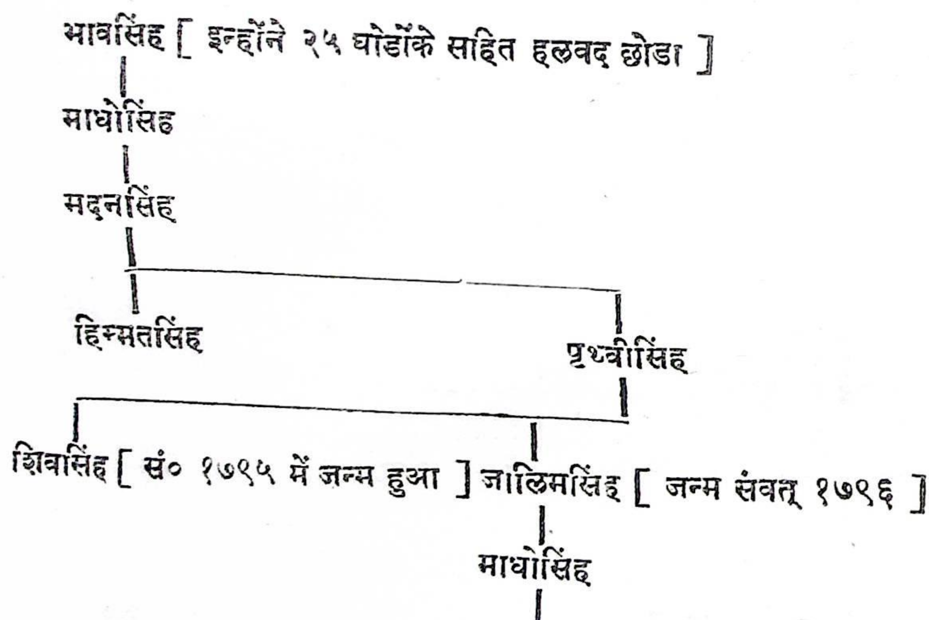
संवत् १८२२ सन् १७६६ ईसवीमें गुमानसिंह पिताके सिंहासनपर बैठे। गुमानसिंहके मस्तकपर जिस समय कोटेका राजछत्र शोभित हुआ; उस समय वह पूर्ण युवक बडे साहसी और बुद्धिमान थे। इसी समयमें दक्षिणके महाराष्ट्रदलने पङ्गपालके समान राजपूतानेमें आकर राजपूतजातिके जो सर्वनाश करनेका उद्योग किया था, गुमानसिंह उनके उस आक्रमणसे अपने राज्यकी रक्षा करनेमें सब भाँति समर्थ थे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि थोडे ही दिनतक राज्यका सुख भोगने पर उनको एक बालकके हाथमें राज्यका भार देना पडा। गुमानसिंहकी उस शासनप्रणालीको वर्णन करनेके प्रथम हम और चिरस्मरणीय महानीतिज्ञ मनुष्यको उपस्थित करना चाहते हैं। वह राजपूत नीति-शास्त्रके जाननेवालोंमें प्रधान जालिमसिंहकी जीवनी ही कोटेके भविष्य इतिहासका

स्वरूप है; जालिमसिंहको लेकर ही कोटा है, और कोटेके इतिहासके प्रत्येक पत्रेमें हरएक राजनैतिक घटनाके साथ ही नहीं वरन् आधी शताब्दीतक समस्त राजपूतानेके इतिहासके साथ जालिमसिंहका पवित्र नाम मिला है। "माननीय टाडने लिखा है कि जालिमसिंह भारतके जिस स्थान पर रहे वह उस स्थानकी श्रेष्ठनीतिको जानते थे, उनकी उस नीतिकी प्रतिभाके प्रकाशके लिये वह सीमा बद्ध प्रदेश कभी योग्य नहीं था, सुभीता और अवसर पानेसे वह किसी एक महादेशकी महान् जातिका शासन निःसन्देह कर सकते थे।" वास्तवमें कर्नल टाडका यह कथन आगेके इतिहासको विलक्षणतासे प्रमाणित करता है।

जालिमसिंह झालाजातिके राजपूत थे। संवत् १७९६ सन् १७४० ईसवीमें भारतवर्षकी एक चिरस्मरणीय घटनाके समय जब विजयी नादिरशाहने अपनी प्रबलसेना दलके साथ भारतमें आकर दिल्लीके सिंहासन पर बैठे हुए तैमूरके वंशधरोंके शासनके विरोधमें अन्तिम युद्ध किया था, उस समयमें जालिमसिंहका जन्म हुआ। यद्यपि उस समय तैमूरके वंशधरोंकी शासनशक्ति प्रबल प्रतापसे बढनी असम्भव थी, यद्यपि दुरात्मा औरंगजेबके कठोर शासनकी नीतिसे यवन बादशाहीकी जड उखाडनेका बीज बोया जा चुका था; किन्तु इस समयमें नादिरशाहके भारतपर अधिकार करनेके लिये न आने पर दिल्लीके बादशाहकी शासनशक्ति और भी कुछ दिनतक प्रबल रहसकती थी। नादिरशाह जिस समय भारतविजय करनेको आया, उस समयमें मोहम्मदशाह दिल्लीके सिंहासनपर और महावीर दुर्जनशाल कोटेकेराजसिंहासन पर बैठे हुए थे। जालिमसिंहके जन्म लेनेके समयसे क्रमानुसार पाँच राजा कोटेका राज्य करके परलोक सिधारे और छठवें राजाके सिंहासनपर बैठने तक जालिमसिंह जीवित थे। उक्त राजाओंके बीचमें एक महाराव किशोरसिंहने अवश्य ५० वर्ष तक राज्य किया था। यद्यपि जालिमसिंह एक नेत्रसे हीन थे किन्तु भटवाडेके रणक्षेत्रमें उन्होंने सबसे पहिले जैसी असीम नीतिज्ञता और वीरता दिखाई थी उनकी राजनैतिक दृष्टि चिरकाल तक वैसी ही बनी रही।

जालिमसिंहके पूर्व पुरुष सौराष्ट्र देशके अन्तर्गत झाला प्रदेशके बीच हलवद नामक स्थानके सामान्य शक्तिवाले सामन्त थे। भावसिंह नामक उस परिवारके छोटे पुत्रने कुछ विश्वासी सेवकोंके साथ अपने सौभाग्यकी परीक्षा करनेके लिये पिताकी भूमिको छोड विदेश यात्रा की। इस समय औरंगजेबके वंशधरोंमें दिल्लीके सिंहासन पानेके लिये लडाईकी आग प्रज्वलित हो रही थी, उस समय अनेक स्थानोंसे अनेक वीर आ आकर दोनोंकी ही ओर हो हो कर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेमें लगे हुए थे। भावसिंहने भी उनमें से एकका पक्ष लिया। जिस समय महाराज भीमसिंह कोटेके सिंहासनपर बैठे हुए दोनों सय्यद मंत्रियोंकी सहायतासे बडे पराक्रमसे शक्तिको बढा रहे थे, उस समय उक्त भावसिंहके पुत्र माधोसिंह कोटेमें आये। यद्यपि उस समय माधोसिंहके साथ केवल पचीस घुडसवार थे, किन्तु महाराज भीमसिंहने उनको माननीय

झाला वंशी जान बडे आदरसे ग्रहण किया और पीछे मित्रता ही नहीं जोडी वरन् अपने पुत्र अर्ज्जुनके साथ माधोसिंहकी भगिनीका विवाह करके उन्हें अपना सम्बंधी बना लिया। थोडे ही दिन पीछे कोटाराज्यके भीमसिंहने माधोसिंहके रहनेके लिये नाणता प्रदेश दे दिया और उन्हें कोटेकी समस्त सेनाका प्रधान सेनापति बनाया एवं कोटानरेश जिस किलेके महलोंमें रहते थे, उसी किलेके अध्यक्ष पदपर उनको सुशोभित किया। माधोसिंहने कोटाराज्यमें बडी शक्ति और सम्मान पाया, उनके मरनेपर मदनसिंह नामक उनके पुत्रने अपने पिताके पदानुसार कोटेके फौजदारका पद पाया। उनके दो पुत्र हुए (१) हिम्मतसिंह और (२) पृथ्वीसिंह। हम यहाँ भावसिंहके वंशकी कारिका लिखते हैं।



(२) नाना लाले [आयु २१ वर्ष]

राजपूतोंके राज्योंमें प्रधानमन्त्री, दीवान, प्रधानसेनापति आदिके प्रत्येक पदको उनकी सन्तान क्रमानुसार पाती है, अतएव मदनसिंहके मरनेपर हिम्मतसिंह झाला कोटाराज्यके फौजदार हुए। हिम्मतसिंह जस महावीर नीतिमें कुशल और शक्ति सम्पन्न मनुष्य थे पठाकोंको वह पहिले ही ज्ञात हो चुका है। जिस समय जयपुरके राजाने महाराष्ट्र दलके साथ मिलकर कोटेपर आक्रमण किया, उस समय इन्हीं हिम्मतसिंहने अपनी वीरताको दिखाकर कोटेके किलेकी रक्षा की, किन्तु चारों ओरसे विषमविपत्तियोंको देख इन्होंने पहिले ही मरहटोंसे संधि करके उनको कर देना स्वीकार करलिया। महाराज दुर्जनशालके मरनेके पीछे इन्हीं हिम्मतसिंहने अपनी शक्तिसे अजीतसिंहको कोटेके सिंहासनपर बैठा दिया। हिम्मतसिंहके कोई पुत्र नहीं था, इस कारण उन्होंने अपने भतीजे जालिमसिंहको गोद ले लिया था। हिम्मतसिंहके परलोक सिधारने पर

(१) यह वर्तमान झालावाड राज्यके प्रथम राजा हुये।

जालिमसिंह कोटेके फौजदार हुए। जालिमसिंहने युवा अवस्थामें भटवाडेके रणक्षेत्रमें जिस वीरता और साहससे कोटाराज्यको आमेर नरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिये छुटा लिया। राजनैतिक रंगभूमिमें वही उनका सबसे प्रथम प्रशंसनीय अभिनय हुआ। किन्तु परितापका विषय है कि उक्त घटनाके थोडे ही दिन पीछे जालिमसिंहका प्रकाशित यशरूपी सूर्य हठसे घोर बादलोंसे छिप गया।

गुमानसिंहके राजसिंहानपर बैठनेके कुछ दिन पीछे जालिमसिंह कुछ अधिक शक्ति और प्रभुता दिखानेके कारण उनकी आखोंमें खटके। महाराज गुमानसिंह उसीसे जालिमसिंहपर इतने क्रुद्ध हुए कि नान्दता प्रदेश जो महाराज भीमसिंहने जालिमसिंहके प्रपितामह माधोसिंहको दिया था, उनसे वह प्रदेश छीन लिया। उक्त नान्दता प्रदेश चम्बल नदीके किनारे है और अब भी वह झाला परिवारके अधीन है। उस समय कोटेका राजवंश बूँदीके अधीन सामन्तोंसे शासित देशके रूपमें गिना जाता था। महाराज गुमानसिंहने उक्त फौजदारका पद और नान्दता प्रदेश जालिमसिंहके मामा वागडोत[1] जातीय भूपतसिंहको दे दिया।

अपने स्वामी गुमानसिंहके अधीनमें फिर अपना पूर्वपद और नान्दता प्रदेश जाता देख जालिमसिंहने अपने उस अपमान स्थान कोटाराज्यको छोड अन्यत्र भाग्योदयकी कामना की। वह किस मार्गका अनुसरण करें, अधिक दिनतक उनको विचार करना नहीं पडा। आमेरराज्यमें उनका प्रवेश द्वार भटवाडाकी लडाईसे पहिले ही बंद होगया था, दूसरे मारवाडराज्य उनको स्वयं उपयुक्त नहीं जान पडा। इस समय जालिमसिंहके जाति और वर्णका एक प्रधाननेता मेवाडके राजा महाराणाकी सभामें विराजमान था। मेवाडके सामन्त दो दलोंमें बँटकर एक दल महाराना अडसी और दूसरा दल एक अन्य मनुष्यके सिंहासनकी अभिलाषासे पक्षको लेकर अडसीको सिंहासनपर नहीं बैठने देता था। मेवाडके पहिली श्रेणीके सोलह सामन्तोंके बीचमें जालिमसिंहके उक्त स्वजातीय डेलवाडाके झाला सामन्तने अडसीके पक्षको लेकर उनको मेवाडके सिंहासनपर बिठा दिया। अडसीने उन सामन्तोंकी सहायतासे पिताके सिंहासनको पाय उन सामन्तोंके प्रताप और प्रबलशक्तिके विरोधमें कुछ बाधा नहीं दी। झाला सामन्तोंने राणाके ऊपर इतना प्रभाव डाल लिया कि उन्होंने वेतनभोगी विजातीय सेनाके दलको राणाकी शरीररक्षाके लिये नियुक्त किया। दूसरी ओरसे जो सब शक्तिसम्पन्न मनुष्य थे वे भी उनकी ओरसे नीतिका समर्थन करते थे। झाला सामन्त राणाके मतको न ले कर अपनी ही इच्छानुसार उन सब मनुष्योंको जागीरें देते थे, सो राणाने अपनी खास भूमि और जो सामन्त अपने विरोधी थे वा अपने विपरीत करनेवाले थे उनके अधिकारी प्रदेशोंको छीन कर अपने राज्यमें मिला लिया। इस कारण राज्यकी आमदनी बहुत बढ गई, और कोई साहससे उन झाला सामन्तोंकी उस इच्छाके विरोधमें किसी भांतिकी आपत्ति भी नहीं कर सका।

१ उर्दू तरजुमेमें बालावत्।

जिस समय झाला सामन्तोंने मेवाडके महाराणाकी सभामें उक्त प्रकारसे अपने प्रबल प्रतापको बढाया था उस समय कोटेके पदसे गिरे हुए फौजदार युवक जालिमसिंह अपने सौभाग्यकी परीक्षाके लिये मेवाडमें आये। जालिमसिंहकी प्रबलवीरताकी सूचना पहिले ही महाराणा अडसी पा चुके थे। इस कारण जालिमसिंहके आते ही महाराणाने उनको सम्मानपूर्वक ग्रहण किया। साहस, नीतिज्ञता, वीरता और प्रतिभासे जालिमसिंह शीघ्र ही महाराणाके प्रियपात्र आर विश्वासभाजन हो गये। महाराणा झाला सामन्तोंके खिलौने बन रहे थे, किन्तु किसी प्रकारसे वह उनके हाथसे अपना उद्धार न पाते देख मनही मनमें विषम वेदनाका अनुभव भी करते रहते थे। इस समय युवक जालिमसिंहको पा कर उनको भलीभांतिसे योग्यपात्र जान महाराणाने उनके हाथमें अपने उद्धारका भार दिया, जालिमसिंहने अपनी चतुरता, साहस, नीतिज्ञता और वीरतासे शीघ्र ही सामन्तोंपर आक्रमण कर महाराणा अडसीको उस विपत्तिके मुखसे निकाल दिया। झाला सामन्तोंने उस युद्धमें अपने प्राण त्याग दिये। महाराणाने जालिमसिंहकी सहायतासे पूर्ण स्वाधीनता पा ली, और अधीन सामन्तोंके अन्यायको अपनी प्रभुतासे दूर करके संतोषित हो जालिमसिंहको "राजराणा" की उपाधि और मेवाडके दक्षिणसीमावाला चित्र खाडियों नामक प्रदेश पुरस्कारस्वरूपमें दिया। उस समयसे जालिमसिंह मेवाडके दूसरी श्रेणीके सामन्त हुए। यद्यपि झाला सामन्तोंके मरजानेसे महाराणा अनेक प्रकारसे निष्कण्टक हो गये थे किन्तु उनके प्रधान शत्रु जो वंशधर सिंहासनके अभिलाषी थे वह कुछ सामन्तोंके साथ उनका वध करनेके लिये यत्न करते थे। उन्होंने इस समय पूर्वके समान विद्रोह उपस्थित कर शेषमें मरहठोंकी सहायतासे सिंहासनपर अधिकार करनेका उद्योग किया। जालिमसिंहकी संमतिसे महाराणाने शीघ्र ही एक दल प्रबल सेनाका एकत्रितकर उन्हीं मिले हुए विद्रोही और मरहठोंके साथ समररूपी अग्निको प्रज्वलित कर दिया, उस समरका हाल पाठकोंको विदित ही है। जिस समय जय लाभकी संपूर्ण आशा हुई उसी समय दुर्भाग्यसे शत्रुओंके जीतजानेसे जालिम घायल होकर मरहठोंके द्वारा कैद हो गये। सुविख्यात महाराष्ट्र सेनानी अम्बाजी इंगलियाके पिता त्र्यंबकरावने जालिमसिंहको कैद कर लिया। अन्तमें दोनोंने परस्पर मित्रता कर ली और उस मित्रतासे अन्तमें जालिमकी राजनैतिक अभिनयके अनेक उपकार हुए।

उपरोक्त संग्राममें पराजय पानेसे महाराणा अडसी आर संपूर्ण मेवाडराज्य विजेताओंकी दयाके अधीनतामें आये। विजेताओंके उदयपुर घेरनेपर राजपूतोंने अपनी वीरता दिखाकर आत्मसमर्पण करनेकी मनमें ठानी। अन्तमें संधिके होजानेसे वह गोलयोग जाता रहा। घायल जालिमसिंहने आरोग्यता प्राप्तकर विशेष विचार करके यह निश्चय किया कि लुप्तप्रताप हीनबल महाराणाके अधीनमें रहकर भाग्योदयकी

(१) उर्दू तरजुमेमें जनेरखेडा—
(२) मेवाडके इतिहासमें अडसीकी शासन प्रणाली देखो।

इच्छा नहीं करनी चाहिए, अतएव वह उदयपुरमें अधिक दिन न रहकर अपने भावी सौभाग्य सहचर पण्डित लालाजीवल्लालके साथ फिर कोटेमें आये। बुकाचनीकी लडाईमें बहुत सी महाराष्ट्र सेनाके मारे जानेसे महाराष्ट्र नेता मल्हारराव हुलकर अत्यन्त साहसहीन हो गये थे। किन्तु और भी एक लडाईमें समस्तरूपसे जीतनेको समर्थ होकर वह महादर्पके साथ कोटेपर अधिकार करनेके लिए आगे बढे। विपत्तिको शीघ्र ऊपर आते देख कोटानरेश गुमानसिंहने अपने पक्षको निर्बल जानकर हुलकरसे सन्धिकर विपत्तिरूपी समुद्रसे पार होनेका एक यही उपाय निश्चय किया। राजा गुमानसिंहने शीघ्र ही वाङ्कडोत फौजदारको सन्धि करनेके लिए मरहटोंके डेरोंमें भेजा। किन्तु वह निष्फल मनोरथ होकर लौट आये।

जालिमसिंहके कोटेमें आने और आगे होनेवाली घटनाके सम्बन्धमें इतिहास कहता है कि नीतिके जाननेवाले जालिमसिंहने जिस समय देखा कि कोटाराज्यके भाग्यरूपी आकाशमें घनघोर राजनैतिक बादल छाए हुए हैं। इस कारण कोटेके क्षेत्रमें राजनैतिक अभिनयका वास्तवमें समय उपस्थित है, जालिमसिंह अपनी नीति, वीरता और साहससे कोटेके इस दुर्दिनको हटावेंगे इसी आशासे वह कोटे राज्यमें आये हैं।

जालिमसिंह यद्यपि कोटेमें आ तो गये किन्तु महाराज राजा गुमानसिंह उस समयतक जालिमसिंहसे इतने क्रुद्ध थे कि वह जालिमसिंहके अपराध क्षमाकर राजसभामें आनेके लिये राजी नहीं हुए। उन्होंने भाग्यसे एकबार किसी भाँतिसे हो गुमानसिंहसे मिलनेकी मनमें ठानली। सौभाग्यसे इसी अवसरपर यह घटना हुई कि जिस कारणसे कोटा नरेश गुमानसिंहने क्षमा ही नहीं किया वरन् उनको अपने अधीनमें नियुक्त कर लिया।

इस समय महाराष्ट्रदलने कोटाराज्यकी दक्षिण सीमामें आकर बुकायनी प्रदेशके किलेको घेर लिया। सामन्त हाडा सम्प्रदायके नेता माधोसिंह चारसौ असीम साहसी हाडासेनाके साथ उस किलेकी रक्षा करनेमें नियुक्त थे। मरहठोंने किलेको घेरकर उसे जय करनेकी बारम्बार चेष्टा की परन्तु किसी भाँतिसे भी वह किलेकी दीवारको लांघकर भीतर नहीं जा सके। किलेको तोडनेके लिये जिन २ वस्तुओंकी आवश्यकता होती है मरहठोंके पास इस समय वह कुछ भी नहीं थी। तब एक बडे हाथीके द्वारा किलेकी दीवारको तोड मरहठोंने किलेको ध्वंसकर अपना अधिकार कर लिया। बुकायनीके किलेके दरवाजेको तोडनेके लिए मरहठोंने अन्तमें यही उपाय किया। हाडासेनानायक माधोसिंहने जब देखा कि अब किलेकी रक्षा करना असंभव है, और शीघ्र ही हाथीके विषम आघातसे दरवाजा टूट जायगा तब वह अमानुषिक वीरता दिखानेको उद्यत हुए। जिस समय शत्रुका हाथी किलेके दरवाजेपर प्रबल वेगसे अपने मस्तककी टक्कर लगाकर फाटक तोडने लगा। उस समय माधोसिंह नंगी तलवार लेकर किले परसे हाथीकी पीठपर कूद पडे और तुरन्त ही पीलवानको मार गिराया। पीछे हाथीके टुकडे २ कर डाले। माधोसिंह इकले जिस समय शत्रुओंमें किलेपरसे कूदे निश्चय ही उनके

जीवनकी आशा नहीं थी, किन्तु किलेकी हाडासेनाने अपने नायकको ऐसी वीरता दिखाते देख फिर विलम्ब नहीं किया। हाडासेना उस समय किलेका दरवाजा खोल प्रबलसागरके तरंगोंके समान महावेगसे शत्रुसेनाके संहार करनेको प्रवृत्त हुई। किन्तु शत्रुसेनाके अधिक और प्रबल होनेसे शीघ्र ही हाडासेनाने प्रशंसनीय वीरताको दिखाय अपने जीवनको विसर्जन किया, किन्तु हाडासेनाने बिना शत्रुसेनाको संहार किये अपने जीवनको नहीं छोडा। जो हो, मरहठोंने अन्तमें विजय लक्ष्मीको पाकर कोटा राज्यकी सीमामें अत्याचार करते पीडा देते और लूटते हुए सुकेत नामक किलेको घेर लिया। कोटानरेश गुमानसिंहने उक्त संबादको पाकर सुकेत किलके रक्षकको लिख भेजा कि "सेनाके साथ अपनी रक्षा करनी चाहिए। मातृभूमिकी रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करते हुए जीवन विसर्जन करना ही श्रेष्ठ है; बुकायनीके समरमें हाडाजातिकी सेनाने विलक्षणरूपसे वीरता दिखाई है, कोटेकी रक्षा करना ही परमधर्म और प्रयोजनीय है।" राजाकी इस आज्ञासे किलेके रक्षकने कोटा राजधानीमें जानेके लिए आधीरातके समय गुप्तरीतिसे समस्त सेनाके साथ किलेमेंसे निकलकर यात्रा की। किन्तु दुर्घटनासे हो वा षड्यंत्रसे हो जिस मार्गसे यह सब चले उस मार्गके दोनों ओर सूखे तिनकोंमें आग बल रही थी तिस पर महाराष्ट्रसेनाने जागकर उनपर आक्रमण किया। अगणित शत्रुसेनाको भेद करते हुए जो बहुतसी हाडासेना गई उसका कहना बाहुल्यमात्र है।

राजा गुमानसिंहके इस महाविपत्तिके समय जालिमसिंह अपने नष्टभाग्यके उद्धारके लिए गुमानसिंहके पास बिना बुलाये ही पहुँचे। जालिमसिंहने जाकर इस समय गुमानसिंहको निश्चय कर दिया कि इकले जालिमसिंहके ही भुजबलसे और राजनीतिसे भटवाडेकी लडाईमें हाडाजातिकी सेनाने जय पाई थी और उनकी ही राजनीतिके द्वारा कोटाराज्य आमेर नरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिए बचा था एवं जो हुलकर मल्हारराव आजदिन कोटेपर अपना अधिकार करनेके लिए वीररूपसे आगे बढे हैं उन्हीं हुलकरकी सहायतासे वह कोटेराज्यकी रक्षा कर चुके हैं। राजा गुमानसिंहने समझ लिया कि इस विपत्तिरूपी सागरसे उद्धार पानेका उपाय एक जालिमसिंह ही मल्लाहस्वरूप है। अतएव उन्होंने जालिमसिंहके सब अपराधोंको क्षमाकर उन्हींके हाथमें परस्पर सन्धि स्थापन करानेका भार अर्पण करके इन्हें मरहठाके डेरोंमें भेजा। चतुरनीति शास्त्रके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ जालिमसिंहने शीघ्र ही मल्हाररावके पास सन्धिका प्रस्ताव उपस्थितकर संतोषजनक फलको प्राप्त कर लिया अर्थात् कोटा नरेश गुमानसिंहके छः लाख रुपये देनेपर हुलकर मल्हारराव अपनी सेना सहित लौट जाँयगे। इस सन्धिको होता हुआ देख जालिमसिंहके द्वारा कोटेकी रक्षा हुई, यह जान गुमानसिंहने प्रसन्न होकर उनके जो अधिकारी प्रदेश छीन लिए थे वह शीघ्र ही उनको दे दिये और वांकडोतके सामन्त सन्धि स्थापन करनेमें असमर्थ हुए थे, इस कारण उनको पदसे हटाकर जालिमसिंहको ही उनके पैतृक कोटाके फौजदारका पद दे दिया किन्तु जालिमसिंहने जिस समय अपने पैतृक पदको पाया उससे कुछ काल पीछे कोटानरेश गुमान-

सिंह रोगसे ग्रसित हुए और सब जनोंने उनके जीवनकी आशा छोड दी । मृत्युकी शय्यापर पडे हुए गुमानसिंहको यह चिन्ता हुई कि इस समय अपने पुत्रोंका भार किसके हाथमें दिया जाय परन्तु इस चिन्तासे उनको कष्ट नहीं हुआ, उन्होंने तुरन्त ही यह विचारा कि दो बार जालिमसिंहके हाथसे कोटाराज्यकी रक्षा हुई है, इस कारण गुमानसिंहने उनको एक विश्वासी और योग्यपात्र जान अपने सब सामन्तोंको बुलाय दशवर्षके कुमार उमेदसिंहको जालिमसिंहकी गोदमें बैठा दिया । और सबके सम्मुख जालिमसिंहको ही अपने पुत्रके अभिभावकके पदपर नियुक्त कर दिया ।

राजागुमानके मरनेसे संवत् १८२७, सन् १७७१ इसवीमें उमेदसिंह कोटेके राजासिंहासनपर बैठे । सदासे राजपूत जातिमें यह रीति चली आती है कि कोई नवीन राजा यदि राज्यसिंहासनपर बैठे तो उसको शीघ्र ही दिग्विजयके लिय जाना पडता है और वह समरमें जय पाकर अभिषेककी क्रियाको समाप्त करता है । उसी पुरानी रीतिके अनुसार उमेदसिंहने राजतिलकके पीछे अपनी सेनादलके साथ नरवर राजवंशीय कैलवाडेके स्वामीके साथ युद्ध करके उक्त प्रदेशको कोटाराज्यमें मिला लिया । जालिमसिंहने उमेदसिंहके अभिभावक रूपमें जो सबसे पहिले यह प्रशंसनीय काम किया; उसके आगेके शासनमें इसी भांति उनकी ऊंची प्रतिभाका पूर्ण परिचय पाया जाता है । जालिमसिंह अप्राप्त व्यवहार कोटाराज्यके अभिभावक पदको ग्रहण करनेके कुछ समय पीछे भयानक विपत्तिके जालमें पड गये । जालिमसिंह एक ऊंचे दरजेके कूट राजनीतिके जाननेवाले थे; उसी कूटनीतिके बलसे उन्होंने अपनी प्रबल शक्तिको जीवनपर्यन्त बनाये रक्खा । जालिमसिंह मृत महाराज गुमानसिंहके बडे विश्वासी मित्र स्वरूपमें गिने जाने पर भी कोटके सम्पूर्ण सामन्तोंके प्रियपात्र नहीं थे । उनका अभ्युदय और प्रताप प्रतिपत्ति अनेक सामन्त एवं राजपुरुषोंके नेत्रोंमें खटकती थी । इस कारण जालिमसिंह महाराजके अभिभावक पदको पाकर जिस भाँति धीरे २ सबके ऊपर अपने प्रतापको फैलानेमें प्रवृत्त हुए इसी प्रकारसे सामन्त समाज उनकी उस शक्ति और प्रतिपत्ति संचयके विरोधमें अनेक विघ्न और बाधाओंको डाल शत्रुता करने लगे । जालिमसिंह जो पहिले कोटेके फौजदार थे, वह केवल सामरिक शक्ति मूलक पद था । उस पदसे यद्यपि जालिमसिंह किलेके महलोंके अध्यक्ष थे और उसमें उमेदसिंह रहा करते थे, किन्तु कुछ दिन पीछे जालिमसिंहके साथ दीवानीविभाग अर्थात् राज्यके शासनविभागके मन्त्री समाजके साथ उनका किसी २ विषयमें एक ही कार्य हो जाता था, परन्तु ऐसा होने पर भी जालिमसिंहको प्रचलित व्यवस्थाके अनुसार किसी प्रकारसे भी शासनविभागमें हस्तक्षेप वा बाधा डालनेका अधिकार नहीं था । दीवानीविभागमें राय अखैराम नामक एक मनुष्य सब भाँतिसे योग्य और ऊंचे दरजेकी शासननीतिको जाननेवाला नियुक्त था । अतएव जालिमसिंह जिस समय फौजदारके पदपर नियत हुए, उस समयमें भी अखैराम प्रधानमन्त्री थे । इतिहासमें लिखा है कि धीर अखैरामके सुपरामर्शसे और सुशासनके गुणोंसे कोटाराज्यने बड़ी क्षमता, प्रताप, शान्ति और उन्नति पाई ।

किन्तु परितापका विषय है कि अखैरामसे राज्यकी उन्नति होने पर भी वह गुमानसिंहके मरनेके उपरान्त थोडे ही दिनोंमें अन्यायसे मारे गये। जालिमसिंहकी सलाहसे अखैराम मारे गये वा नहीं इसका निश्चय नहीं हुआ। इन अखैरामके मरनेके उपरान्त जालिमसिंह कोटाराज्यके सामरिक और शासन विभागमें सबके ऊपर अधिकार करनेको जब उद्यत हुए तब उनके विरोधी बहुत ही कम थे। किन्तु तब भी जालिमसिंह विषम विपत्तियोंको बिना दूर किये अपनी अभिलाषाको पूर्ण नहीं कर सके।

जालिमसिंहने गुमानसिंहके मरनेके पीछे ही अपनेको राजप्रतिनिधिरूपसे प्रकाशित किया, और समय तथा शासनविभागके सब अधिकारोंको स्वाधीन करनेको वह उद्यत हो गये। इसपर जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे, वह बोले कि स्वर्गवासी गुमानसिंहने जालिमसिंहके हाथमें इतने अधिकार नहीं दिये हैं। उन सामन्तोंमें महाराज स्वरूपसिंह और वाङ्कडोतके सामन्त भी थे। पाठकोंको स्मरण होगा कि इन वाङ्कडोतके सामन्तको पदच्युत करके जालिमको फौजदारका पद मिला था। इन दोनों मनुष्योंको छोड राजा उमेदसिंहके धाभाई जशकर्ण भी जालिमसिंहके विपक्षमें थे। जशकर्ण चतुर और नीतिके जाननेवाले थे। वह बालक महाराजके समीप रहते थे और उसी कामके लिये नियुक्त थे। जो सब मनुष्य जालिमसिंहके विरोधी हुए उनको उस धाभाईकी सहायतासे अपने मनोरथके पूर्ण होनेमें विशेष सफलता प्राप्त हुई। जालिमसिंहने अभिभावक पद पाकर पूर्णशक्तिसे कार्य चलाना आरंभ किया, तो वह सबसे पहिले उक्त विरोधियोंके मुखमें पतित हुए। किन्तु विपाक्षियोंके षड्यन्त्र बिना बढे ही जालिमसिंहने अपनी चतुराई और कूटराजनीतिके बलसे उस षड्यन्त्रको छिन्न भिन्न कर दिया। धाभाई जशकर्णके द्वारा ही महाराज स्वरूपसिंह मारे गये, वाङ्कडोतके सामन्त अपने प्राण बचाकर भाग गये और बाकी हत्या करनेवालोंको धाभाई अपने साथ ले गये। जालिमसिंहने इस भाँति शीघ्रतासे इस अभिनयको कर डाला कि उसको देख राज्यके चारोंओरके मनुष्य डर गये। जालिमसिंहने कांटेसे ही काँटेको उखाड डाला। महाराज स्वरूपसिंह धाभाई पोकर्ण और वाङ्कडोतके सामन्त यह तीनों ही जालिमसिंहके प्रधान शत्रु थे। जालिमसिंहने सबसे पहिले धाभाईको हस्तगत कर उन्हींसे अपने उद्देशको पूरा कराया और पीछेसे उसे भी निकाल देनेपर सभी विस्मित हुए और जालिमसिंहके असीम साहस और चतुराईको देख महाव्याकुल हो अन्य शत्रुगण अपने महा अनिष्टकी सम्भावना कर डर गये।

महाराज स्वरूपसिंहके साथ धाभाईके विवादका ऐसा कोइ भी कारण नहीं था जिसके लिये धाभाई उनका प्राणले, किन्तु जालिमसिंहकी कूटनीतिसे युद्ध होकर धाभाईने एकदिन वृजविलास नामक राज उद्यानमें महाराज स्वरूपसिंहपर आक्रमण किया, और अपनी तलवारसे उनका शिर काट डाला। जालिमसिंहने धाभाईपर

स्वरूपसिंहको मारडालनेके अपराधमें बडा क्रोध प्रकाश किया और उसी अपराधमें उसको कैदकर अन्तमें हाडौतीसे एक साथ ही निकाल दिया। जालिमसिंहने इस भाँति अपने मनका भाव प्रगट किया कि जिससे यह जाना गया कि वह इस हत्याकाण्डमें सम्मिलित नहीं थे, यही नहीं वरन् उनकी सलाह भी नहीं थी, किन्तु पापकर्म किसी प्रकारसे भी छिप नहीं सकता अतएव शीघ्र ही यथार्थ बात प्रकाशित हो गई। धाभाई जशकर्णने निकल कर अपमानके होनेसे जयपुरमें प्राण त्यागे। अन्तमें प्रगट हुआ कि जालिमसिंहने ही धाभाईसे कहा था कि महाराज स्वरूपसिंह राजसिंहासनपर अपना अधिकार किया चाहते हैं इसीसे वह विरोध करते हैं और अप्राप्त व्यवहार महाराज उमेदसिंहके मारडालनेका उनका मुख्य उद्देश है। धाभाईने इसकी विशेष खोज न करके जालिमसिंहकी उसी बातको सत्य मान महाराज स्वरूपसिंहको राज्यका अभिलाषी जान उनका वध कर डाला। इस विषयमें कुछ भी हो जालिमसिंहने जिस नियतसे वह वियोगान्त अभिनय किया शीघ्र उनका वह उद्देश पूरा हुआ। उक्त हत्याकाण्डके पीछे ही कोटेके जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे उन सबने विरोधको छोड दिया उसी समय कोटेके बहुतसे सामन्त और धनियोंने अपने प्राणभयसे जन्मभूमि एवं अपने २ अधिकारी प्रदेशोंको छोडकर दूसरे राज्योंमें जाकर वास किया। जालिमसिंहने उन सामन्तोंके भाग जानेमें कोई बाधा नहीं दी, वरन् भागनेके समय यह कह-गये कि इसका दंड हम जालिमसिंहको अवश्य देंगे। वह भागे हुए सामन्त जयपुर और जोधपुरमें जाकर वहाँके अधीश्वरोंका आश्रय लेने लगे, और जाकर उन्होंने रज-वाडेके अन्य राजाओंसे मिलकर जालिमसिंहके अन्याय और अत्याचारोंको रोकनेके लिये तथा जालिमसिंहकी सामर्थ्यको रोकनेके लिये विशेष चेष्टा की, परन्तु उसी समयमें महा-राष्ट्रोंके दलने रजवाडेके समस्त राज्योंमें जाकर जिस प्रकारके उपद्रव करने प्रारंभ किये थे, उससे कोई राजा किसी प्रकार भी अपनी इच्छानुसार जालिमसिंहके विरुद्धमें जानेके लिये तैयार न हुए। इधर चतुर जालिमसिंहने सुअवसर पाकर जयपुर और जोधपुर इत्यादि जिन राजाओंके यहाँ जाकर कोटके सामन्तोंने आश्रय लिया था उनसे कहला भेजा कि यह सामन्त कोटेराज्यके विपक्षी विद्रोही हैं इस कारण विद्रोहियोंको आश्रय देना किसी प्रकार उचित नहीं है। ऐसा होते ही वह भागे हुए सामन्त सब निराश हो गये। किसी २ सामन्तने तो विदेशमें जाकर अत्यन्त दुःखित हो प्राण त्याग कर दिये और किसी २ ने विदेशी राजाओंके आश्रयमें रहकर उनके अन्नसे जीवन धारण करनेकी अपेक्षा अपने देशमें चला आना अच्छा माना। तब उन्होंने जालिमसिंहसे कहला भेजा कि हम लोगोंको जन्मभूमिमें आनेका अधिकार दीजिये। जालिमसिंहने उनकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करनेमें असम्मति प्रगट न की, परन्तु उनके कोटे राज्यमें आते ही अपने अधीश्वर और जन्मभूमिके छोडनेसे उनकी गणना विद्रोहियोंमें की गई, जिस समय सामन्त भाग गये थे उस समय उनके समस्त अधिकारी देश जालिमसिंहने अपने अधि-कारमें कर लिये थे, इसीसे इस समय उनको वह समस्त देश नहीं दिये, और दयाके वशीभूत हो उनके जीवन धारण करनेके लिये सामान्य भूखंड दिये गये। इस प्रकारसे

किन्तु परितापका विषय है कि अखैरामसे राज्यकी उन्नति होने पर भी वह गुमानसिंहके मरनेके उपरान्त थोडे ही दिनोंमें अन्यायसे मारे गये । जालिमसिंहकी सलाहसे अखैराम मारे गये वा नहीं इसका निश्चय नहीं हुआ । इन अखैरामके मरनेके उपरान्त जालिमसिंह कोटाराज्यके सामरिक और शासन विभागमें सबके ऊपर अधिकार करनेको जब उद्यत हुए तब उनके विरोधी बहुत ही कम थे । किन्तु तब भी जालिमसिंह विषम विपत्तियोंको बिना दूर किये अपनी अभिलाषाको पूर्ण नहीं कर सके ।

जालिमसिंहने गुमानसिंहके मरनेके पीछे ही अपनेको राजप्रतिनिधिरूपसे प्रकाशित किया, और समय तथा शासनविभागके सब अधिकारोंको स्वाधीन करनेको वह उद्यत हो गये । इसपर जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे, वह बोले कि स्वर्गवासी गुमानसिंहने जालिमसिंहके हाथमें इतने अधिकार नहीं दिये हैं । उन सामन्तोंमें महाराज स्वरूपसिंह और वाङ्कडोतके सामन्त भी थे । पाठकोंको स्मरण होगा कि इन वाङ्कडोतके सामन्तको पदच्युत करके जालिमको फौजदारका पद मिला था । इन दोनों मनुष्योंको छोड राजा उमेदसिंहके धाभाई जशकर्ण भी जालिमसिंहके विपक्षमें थे । जशकर्ण चतुर और नीतिके जाननेवाले थे । वह बालक महाराजके समीप रहते थे और उसी कामके लिये नियुक्त थे । जो सब मनुष्य जालिमसिंहके विरोधी हुए उनको उस धाभाईकी सहायतासे अपने मनोरथके पूर्ण होनेमें विशेष सफलता प्राप्त हुई । जालिमसिंहने अभिभावक पद पाकर पूर्णशक्तिसे कार्य चलाना आरंभ किया, तो वह सबसे पहिले उक्त विरोधियोंके मुखमें पतित हुए । किन्तु विपाक्षियोंके षड्यन्त्र बिना बढे ही जालिमसिंहने अपनी चतुराई और कूटराजनीतिके बलसे उस षड्यन्त्रको छिन्न भिन्न कर दिया । धाभाई जशकर्णके द्वारा ही महाराज स्वरूपसिंह मारे गये, वाङ्कडोतके सामन्त अपने प्राण बचाकर भाग गये और बाकी हत्या करनेवालोंको धाभाई अपने साथ ले गये । जालिमसिंहने इस भाँति शीघ्रतासे इस अभिनयको कर डाला कि उसको देख राज्यके चारोंओरके मनुष्य डर गये । जालिमसिंहने कांटेसे ही काँटेको उखाड डाला । महाराज स्वरूपसिंह धाभाई पोकर्ण और वाङ्कडोतके सामन्त यह तीनों ही जालिमसिंहके प्रधान शत्रु थे । जालिमसिंहने सबसे पहिले धाभाईको हस्तगत कर उन्हींसे अपने उद्देशको पूरा कराया और पीछेसे उसे भी निकाल देनेपर सभी विस्मित हुए और जालिमसिंहके असीम साहस और चतुराईको देख महाव्याकुल हो अन्य शत्रुगण अपने महा अनिष्टकी सम्भावना कर डर गये ।

महाराज स्वरूपसिंहके साथ धाभाईके विवादका ऐसा कोइ भी कारण नहीं था जिसके लिये धाभाई उनका प्राणले, किन्तु जालिमसिंहकी कूटनीतिसे युद्ध होकर धाभाईने एकदिन वृजविलास नामक राज उद्यानमें महाराज स्वरूपसिंहपर आक्रमण किया, और अपनी तलवारसे उनका शिर काट डाला । जालिमसिंहने धाभाईपर

स्वरूपसिंहको मारडालनेके अपराधमें बडा क्रोध प्रकाश किया और उसी अपराधमें उसको कैदकर अन्तमें हाडौतीसे एक साथ ही निकाल दिया । जालिमसिंहने इस भाँति अपने मनका भाव प्रगट किया कि जिससे यह जाना गया कि वह इस हत्याकाण्डमें सम्मिलित नहीं थे, यही नहीं वरन् उनकी सलाह भी नहीं थी, किन्तु पापकर्म किसी प्रकारसे भी छिप नहीं सकता अतएव शीघ्र ही यथार्थ बात प्रकाशित हो गई । धाभाई जशकर्णने निकल कर अपमानके होनेसे जयपुरमें प्राण त्यागे । अन्तमें प्रगट हुआ कि जालिमसिंहने ही धाभाईसे कहा था कि महाराज स्वरूपसिंह राजसिंहासनपर अपना अधिकार किया चाहते हैं इसीसे वह विरोध करते हैं और अप्राप्त व्यवहार महाराज उमेदसिंहके मारडालनेका उनका मुख्य उद्देश है । धाभाईने इसकी विशेष खोज न करके जालिमसिंहकी उसी बातको सत्य मान महाराज स्वरूपसिंहको राज्यका अभिलाषी जान उनका वध कर डाला । इस विषयमें कुछ भी हो जालिमसिंहने जिस नियतसे वह वियोगान्त अभिनय किया शीघ्र उनका वह उद्देश पूरा हुआ । उक्त हत्याकाण्डके पीछे ही कोटेके जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे उन सबने विरोधको छोड दिया उसी समय कोटेके बहुतसे सामन्त और धनियोंने अपने प्राणभयसे जन्मभूमि एवं अपने २ अधिकारी प्रदेशोंको छोडकर दूसरे राज्योंमें जाकर वास किया । जालिमसिंहने उन सामन्तोंके भाग जानेमें कोई बाधा नहीं दी, वरन् भागनेके समय यह कह-गये कि इसका दंड हम जालिमसिंहको अवश्य देंगे । वह भागे हुए सामन्त जयपुर और जोधपुरमें जाकर वहाँके अधीश्वरोंका आश्रय लेने लगे, और जाकर उन्होंने रज-बाडेके अन्य राजाओंसे मिलकर जालिमसिंहके अन्याय और अत्याचारोंको रोकनेके लिये तथा जालिमसिंहकी सामर्थ्यको रोकनेके लिये विशेष चेष्टा की, परन्तु उसी समयमें महा-राष्ट्रोंके दलने रजवाडेके समस्त राज्योंमें जाकर जिस प्रकारके उपद्रव करने प्रारंभ किये थे, उससे कोई राजा किसी प्रकार भी अपनी इच्छानुसार जालिमसिंहके विरुद्धमें जानेके लिये तैयार न हुए । इधर चतुर जालिमसिंहने सुअवसर पाकर जयपुर और जोधपुर इत्यादि जिन राजाओंके यहाँ जाकर कोटके सामन्तोंने आश्रय लिया था उनसे कहला भेजा कि यह सामन्त कोटेराज्यके विपक्षी विद्रोही हैं इस कारण विद्रोहियोंको आश्रय देना किसी प्रकार उचित नहीं है । ऐसा होते ही वह भागे हुए सामन्त सब निराश हो गये । किसी २ सामन्तने तो विदेशमें जाकर अत्यन्त दुःखित हो प्राण त्याग कर दिये और किसी २ ने विदेशा राजाओंके आश्रयमें रहकर उनके अन्नसे जीवन धारण करनेकी अपेक्षा अपने देशमें चला आना अच्छा माना । तब उन्होंने जालिमसिंहसे कहला भेजा कि हम लोगोंको जन्मभूमिमें आनेका अधिकार दीजिये । जालिमसिंहने उनकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करनेमें असम्मति प्रगट न की, परन्तु उनके कोटे राज्यमें आते ही अपने अधीश्वर और जन्मभूमिके छोडनेसे उनकी गणना विद्रोहियोंमें की गई, जिस समय सामन्त भाग गये थे उस समय उनके समस्त अधिकारी देश जालिमसिंहने अपने अधि-कारमें कर लिये थे, इसीसे इस समय उनको वह समस्त देश नहीं दिये, और दयाके वशीभूत हो उनके जीवन धारण करनेके लिये सामान्य भूखंड दिये गये । इस प्रकारसे

जालिमसिंहने कोटेराज्यके सर्वमय कर्तापदपर अधिकार कर सबसे पहिले इस प्रकारसे असीम साहस कर कूटनीति और चातुरी जालका विस्तार कर शत्रुओंके चक्रको भेदन कर अपनी प्रबलताका विस्तार कर लिया, परन्तु उनके इस राजनैतिक अभिनयसे कोटेका उद्धत सामन्त सामाज किसी प्रकार भी नम्र नहीं हुआ वरन यह सब उपद्रव जालिमसिंहके ही हैं यह जानकर वह सर्वदा शंकित भावसे रहने लगे । परन्तु शीघ्र ही फिर उनके मनका भाव बदल गया ।

जालिमसिंहके विरुद्धमें जा दूसरी बार षड्यन्त्रजालका विस्तार हुआ वह पहिलेकी अपेक्षा अत्यन्त प्रबल और दुर्भेद्य था । आथून देशके सामन्त देवसिंहने उस षड्यंत्रीदलके प्रधाननेतापदको ग्रहण किया । वह सामन्त छः हेजार रुपयेकी आमदनीवाले देशके अधीश्वर थे । देवसिंह जालिमसिंहकी सामर्थ्यको देखकर उनके विरुद्धमें शीघ्र ही शत्रु होकर खडे हुए । इन्होंने अपना बहुतसा रुपया खर्च करके किलेको भलीभाँतिसे सजाया था जो कि समस्त सामन्त जालिमसिंहके ऊपर महा विरक्त हुए थे, वह शीघ्र ही आकर देवसिंहके साथ मिले। चतुर जालिमसिंहने सब सामन्तोंको एक स्थानपर खडा देखकर जाना कि केवल राजकी सेनासे उनको परास्त करना सहज बात नहीं है, अतएव दूसरे उपायसे इस विपत्तिको हटाना चाहिये। इस समय दिल्लीके बादशाहका प्रभाव लोप हो जानेसे चारों ओर अशान्ति फैली हुई थी । मरहठोंके दल अपने अभ्युदयके साथ ही साथ फरासीसी पठानजातिका एक वीर एक सेनाका दल लेकर राज्यके किसी प्रदेशपर आक्रमण कर सर्वस्व लूट लेते और कभी किसी दो राज्योंमें झगडा होनेसे एकके पक्षको लेकर द्रव्यसंग्रह कर लेते थे । मोसेज नामक एक श्रेणीके एक मनुष्य नेताको जालिमसिंहने बुलाकर उसको आथूनके किलेपर अधिकार करनेके लिय और विद्रोही सामन्तोंके दमन करनेको नियुक्त किया । मोसेजने द्रव्यके लोभसे शीघ्र ही आथूनके किलेको घेर लिया । वहाँके सामन्त गणोंने किलेमेंसे निकलकर शत्रुओंपर आक्रमण किया, परन्तु जय लाभ नहीं कर सके । इसी प्रकारसे कई महीने तक मोसेजके प्रबल पराक्रमसे किलेके घिरे रहनेके कारण किलेमें जितना भोजनका सामान था वह सब चुक गया तब सब सामन्त मिलकर प्राण बचानेक लिये चेष्टा करने लगे । जालिमसिंहकी सम्मतिसे मोसेजने घिरे हुए सामन्तोंकी प्रार्थनासे उनको किलेमेंसे सुखपूर्वक बाहर निकलजाने दिया । उन सामन्तोंने हताश होकर अपनी सेनाके साथ कोटा राज्यको छोड दूसरे राज्यमें प्रवेश किया । इस भांति चतुर जालिमसिंहने इस दूसरे षड्यन्त्रको भी छिन्न भिन्न कर दिया । कोटेके सब सामन्तोंके चल जाने पर जालिमसिंहने उनके अधिकारी प्रदेशोंको कोटेराज्यमें मिला लिया । विरोधियोंके प्रधान नेता देवसिंहने विदेशमें जाकर दुःखसे प्राण छोड दिये । देवसिंहके पुत्रने कइ वर्षोंक पीछे विदेशसे आकर अन्तमें जालिमसिंहसे अपनेको निरपराधी बता आश्रय पानेकी प्रार्थना करी, तब जालिमसिंहने उसपर दया

१ उर्दू तर्जुमेमें ६० हजार ।

प्रकाशकर उसको पैतृक सब प्रदेश तो नहीं दिये परन्तु वार्षिक पन्द्रह हजार रुपयेकी आमदनीवाला नामोलिया प्रदेश दे दिया। बीचके और नीचे दरजेके जो सामन्त विद्रोही हुए थे, जालिमसिंहने उनके प्रति क्षमा प्रकाश की। और कोटे राज्यमें उन्हें पुन: बसनेकी आज्ञा तो दी; परन्तु उनकी शक्ति इतनी घटा दी कि जिसमें वह फिर किसी प्रकारका अनिष्ट न कर सकें, इन दोनों घटनाओंसे जान पडता है कि जालिमसिंह कैसे चतुर और राजनीतिके जाननेवाले थे,और किस प्रकारसे उन्होंने कोटे राज्यमें अपना अखंड प्रताप फैलाया था।

उपरोक्त प्रकारसे उभरे हुए शत्रुदलके विरोधमें समर और उनके षड्यन्त्रके भेदन करनेमें एवं अपनी शक्तिके फैलानेमें जालिमसिंहको अधिक समय लगा। जालिमसिंहने मेवाडके महाराणाके बंशकी दूरवाली एक शाखाकी कन्यासे विवाह किया था। उस कन्याके गर्भसे जालिमसिंहके पुत्र एवं उत्तराधिकारी माधोसिंह उत्पन्न हुए। जालिमसिंहने कोटके शासन करते समय चारोंओरकी विपत्तियोंसे घिरे रहनेपर भी मेवाडके दु:समयमें दृष्टि रखते हुए मेवाडकी मंगलकामनाका सदा ध्यान रक्खा था। संवत् १८४७ सन्(१७९१ ई०) में जिस उद्देशसे जालिमसिंहने कोटेकी अपेक्षा मेवाडके स्वार्थसाधन और उन्नतिका विशेष व्रत किया था, वह पाठक मेवाडके इतिहासमें पढ चुके हैं। जालिमसिंहने अपने राजनैतिक स्वार्थके लिये कोटेकी सेना सामन्त और राजभण्डारको जिस मेवाडके लिये वृथा नियुक्त करके कोटेक अलक्षमें अनिष्ट साधन किया, पाठक उसको भी पढ चुके हैं। सम्वत् १८४७ से १८५६ तक जालिमसिंहने जो राजनैतिक अभिनय किया वह मेवाडके उक्त इतिहासमें लिखा जा चुका है, इस कारण हम यहाँपर उसको फिर लिखना उचित नहीं समझते।

संवत् १८५६ में कोटेक सामन्तगणोंने जालिमसिंहके उस शासन और स्वेच्छाचारको न सहकर फिर उनके मारनेके लिये षड्यन्त्र किया। जालिमसिंहके जीवनरूपी दीपकके बुझानेके लिये अनेक समयपर गुप्तरीतिसे बहुतसी चेष्टाएँ हुईं किन्तु जालिमसिंहके सदा सतर्क रहनेके कारण मारनेवालोंकी आशा किसी समय भी पूरी न हुई। संवत् १८३३ में आथूनक सामन्त जालिमसिंहके विरोधमें हुए, अन्तमें उनको देशसे निकाल देनेके पीछे फिर २० वर्षतक किसीने जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा नहीं की। बीस वर्षके पीछे संवत् १८५६ में दस सहस्रकी आयुवाले मोसेन देशके सामन्त बहादुरसिंहने जालिमसिंहके विरोधमें षड्यन्त्र रचा। जालिमसिंहके प्रबल प्रतापसे कोटेके जिन सामन्तोंकी सब सम्पत्ति छीनी गई थी अब वह सब सामन्त बहादुरसिंहके साथ मिल गये। उन्होंने बडे गुप्तभावसे षड्यन्त्रको चलाया, कि जिससे उसकी पवनको भी कोई स्पर्श न कर सकै,जिस दिन उन्होंने अपने उस षड्यंत्रके कार्यको पूरा करनेका संकल्प किया, उस दिन दोपहरक समय कवल जालिमसिंहको उसकी खबर मिल गई। षड्यन्त्र रचनेवाले किस २ को मारेंगे,अति गुप्तभावसे उनक नामोंकी एक सूची बनाली उसमें सपरिवार जालिमसिंहको,उनके मित्र और उपदेष्टा पंडित लालाजीको मारडालनेके

सम्बन्धमें लिखा था। षड्यन्त्री गणोंका विचार था कि जिस समय जालिमसिंह दरबारमें बैठे हों उसी समय सबके सामने यह हत्याकाण्ड हो। कहा जाता है कि जिस समय जालिमसिंह दरबारमें बैठे थे उसी समय उन्होंने षड्यन्त्र रचनेवालोंके गुप्तभेदको पाकर क्षणमात्रमें ही अपनी रक्षाके लिये उपाय कर लिया। जो पहरेदार उनके शरीरके रक्षक थे उन सबोंको हटाकर उन्होंने "पायेगा" नामक प्रबल पराक्रमी अश्वारोही सेनाको बुलाकर अपनी रक्षाके लिये नियुक्त किया। अतएव हत्याकी अभिलाषासे षड्यन्त्र रचनेवालोंने जिस समय दरबारपर आक्रमण किया उसी समय वह दरबारमें शस्त्रधारी घुडसवार-सेना देखकर हताश हो गये। तब घुडसवारोंने शीघ्र ही उनपर आक्रमण किया, और वह भाग निकले, तिसपर भी बहुतोंको पकड लिया और बहुत भाग गये। षड्यन्त्रके नेता बहादुरसिंहने भागकर चम्बल नदीके किनारे पाटननामक स्थानके बीच हाडा-जातिके कुलदेव केशवरायके मंदिरमें शरण ली। उन्होंने विचारा कि पुरानी रीतिके अनुसार जब केशवरायके मंदिरमें आश्रय लेता हूँ तब जालिमसिंह कभी बूँदीराजके बीच इस मंदिरमें बलपूर्वक आकर मुझे नहीं पकडेगा। किन्तु उनकी वह आशा शीघ्र ही भ्राँतिके रूपमें बदल गई। उग्र प्रतापी जालिमने सरलतासे मंदिरकी पवित्र प्रथाको नष्ट कर उसमेंसे बहादुरसिंहको पकडवाकर मरवा डाला।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंहके अनुकूल पक्षको लेनेवालोंका कथन है कि जालिमसिंहने अपनी रक्षा वा अपने स्वार्थके लिये बहादुरसिंहको नहीं मारा, उनके हाथमें जो गुरुभार अर्पित था उस गुरुभारको पालन करने अर्थात् कोटाके महाराव उमेदसिंहके स्वार्थ और जीवनकी रक्षाके लिये ही उन्होंने इस कठोर व्यवहारको किया था। षड्यंत्र करने-वालोंका यह आशय था कि हत्याकाण्डका अभिनय करके महाराव उमेदसिंहको सिंहासनसे हटाकर महाराजके एक छोटे भाईको कोटेके राजासिंहासनपर बैठा दें। यह बात कहाँ लों सत्य है, इसका विशेष प्रमाण नहीं मिलता। किन्तु जालिमसिंहने जैसे कठोर शासनके दंडको चलाकर सामन्तोंके हृदयको चूर्ण किया था और महाराव उमेदसिंहको जैसे अपना खिलौना बनाया था उससे यह बात सत्य कही जा सकती है। इस समय कोटाके राजपरिवारके बीच महाराव उमेदसिंहके चचा राजसिंह और दोनों भाई गोवर्द्धन सिंह एवं गोपालसिंह जीते थे। आथूनके सामन्तगण जिस समय महा षड्यन्त्रके जालको फैलाकर जालिमसिंहके विरोधमें खडे हुए थे, उसी समय गोवर्धन और गोपालसिंह सिंहासन पानेकी इच्छासे उस षड्यन्त्रमें लिप्त थे, इस बातके प्रकाश होनेसे जालिमसिंहने तुरन्त ही उन दोनों भाइयोंको भी कैद कर लिया। बडे गोवर्धन दशवर्षतक कैदमें रहकर परलोक सिधारे, और छोटे गोपाल भी बहुत दिनोंतक कैदमें रहकर परलोकवासी हुए। महारावके चचा राजसिंह वृद्ध होकर बहुत दिनोंतक जीते रहे किन्तु राजनैतिक किसी षड्यन्त्रमें, किसी गोलयोगमें युक्त नहीं होते थे, इसीसे जालिमसिंह उनकी ओर नेत्र उठाकर नहीं देख सकते थे। राजसिंह नगरके बीच देव-मन्दिरकी श्रेणीके बाहर कभी नहीं जाते थे।

कर्नल टाड लिखते हैं कि "जालिमसिंहकी शक्तिको हटाने और उनके जीवनको नष्ट करनेके लिये अनेक प्रकारके उपाय उनके विरोधियोंने किये। सब मिलाकर अठारह बार उनके मारनेके लिये षड्यन्त्र रचे गये, किन्तु प्रत्येक बारमें जालिमसिंहके बुद्धिबलने विरोधियोंके उद्देश्यको व्यर्थ कर दिया। कहा जाता है कि प्रकाशमें और गुप्त रीतिसे बलसे, विषसे और अस्त्र शस्त्र आदिसे उनके मारनेके उपाय रचे गये। किन्तु राजमहलोंमें राजपूतोंकी स्त्रियोंने जो जालिमसिंहके वध करनेकी अभिलाषा की थीं, वह षड्यन्त्र बडा भयानक था। जालिमसिंहके रूप सौन्दर्य्यपर मोहित राजमहलमें रहनेवाली एक रमणी यदि अपनी चतुराईसे सहायता न करती तो जालिमसिंह अपनी रक्षा उस समय नहीं कर सकते थे। एक समयकी बात है,—छोटे राजकुमारकी माताने जालिमसिंहको राजमहलमें बुलाया। जालिमसिंह राजमाताके बुलानेसे उनके महलके समीपवाले घरमें पहुँचे, इस समय बहुतसी राजपूत रमणीगणोंने नंगीतलवार लिये अनेक अस्त्र शस्त्रोंसे सजी हुई अवस्थामें जालिमसिंहपर आक्रमण किया। और शीघ्रही जालिमसिंहको बांधकर कैद कर लिया। राजपूत रमणी कैसी वीर नारी हैं, अस्त्र चलानेमें कैसी चतुर हैं, कैसे साहस और बलशालिनी हैं, जालिमसिंह इसको भली भांति जानते थे। अतएव उन शस्त्रधारिणी महाशक्तियोंसे जालिमसिंह बँध गये और उन्होंने जाना कि अब किसी भांतिसे भी यहांसे छुटकारा नहीं मिल सकता। सौभाग्यसे जालिमसिंहको एक साथ न मारा और जालिमसिंहसे उनके प्रधान २ जीवनचरित्रोंको पूँछने लगीं। उनकी यही इच्छा थी कि जालिमको प्रश्नोंके उत्तर देते समय अचानक मारडालेंगी। वीरबालागण जालिमसे एक २ करके पूँछती थीं, इसी समय प्रधानरानीकी अत्यन्त बलशालिनी प्रधानदासीने महाकालभैरवीकी मूर्तिसे आकर जालिमसिंहको अनेक तिरस्कार और कटुवचनोंसे धिक्कार कर बलके साथ उन सब वीरनारियोंको क्रमसे निकाल दिया। जालिमसिंहने उस महा विपत्तिसे उद्धार पाया और जाना कि प्रधानदासी यदि इस चतुराईसे मेरी सहायता न करती तो अवश्य ही आज प्राण त्यागने पडते।

इतिहास जाननेवाले टाड साहबने लिखा है कि जालिमसिंहके विरोधमें जैसे क्रमानुसार षड्यन्त्र रचे गये उसमें शत्रुओंको विफलमनोरथ कर यदि अन्य मनुष्य होता तो निश्चय ही उन्मत्त होकर प्रत्येक शत्रुसे बदला लेता, किन्तु जालिमसिंहने कभी किसीके साथ अपने बदला लेनेकी इच्छा नहीं की। यद्यपि वह रात्रिके समय एक बडे मंदिरमें शयन करते थे परंतु कभी अप्रयोजनीय भयजालमें नहीं फंसे, अपनेको वह सभी प्रकारसे छोटा मानते थे एवं सरलतासे इस बातको जान लेते थे कि कौन उनका स्वार्थ नष्ट करनेकी इच्छा रखता है, अतएव वह पहिले ही सावधान हो जाते थे। उनके अधिकारमें पुलिस अर्थात् शान्तिरक्षाविभाग इतना चतुर था कि अनेक स्थानोंमें वैसी पुलिस नहीं थी। वह कर्म्मचारियोंको उचित तनख्वाह देते और काम करनेवालोंको बडा पुरस्कार देते थे। वह अपने सब विभागोंके ऊपर बडी दृष्टि रखते थे। किसी पर भी वह पूर्ण विश्वास नहीं करते थे। वह अपनी चतुरता,

नीतिज्ञता और विलक्षणताके साथ राज्यके सब विभागोंमें दृष्टि रखते थे, इसीसे चारों ओर अत्याचार, उपद्रव, राजनैतिक गोलयोग, षड्यन्त्र और बडे २ युद्ध होनेपर भी उन्होंने आधी सदीतक अपने प्रबल प्रतापसे और अतुल शक्तिसे राजकार्यको चलाया । " कर्नल टाडकी यह युक्ति सत्य पूर्ण इतिहासको प्रमाणित करती है ।

तीसरा अध्याय ३.

जालिमसिंहकी शासननीति–मेवाडके सम्बंधमें जालिमसिंहके राजनैतिक गुप्त उद्देश--मेवाड़के कल्याणके लिये जालिमसिंहसे कोटेका स्वार्थ नाश होना--जालिमसिंहके अत्याचार--जालिमसिंहका राजमहलोंको छोड़ राज्यमें घूमना--वस्त्रावासमें रहना--नवीन शिक्षित सेनाको तैयार करना--सेनाके दलको विलायती अस्त्र देना, और शिक्षा देना–कोटेकी राजप्रणालीका संस्कार -पटैलकी रीति--करलेनेकी रीतिको बदलना--पटैलोंको पुनः पद मिलना--पटैल समिति--उनके शासनकी शक्ति--बोहरागण--नूतन पटैलोंसे किसानोंको कष्ट पहुँचना–पटैलोंको कैद करके उनको अर्थ दंड देना एवं पदसे हटाकर पटैलकी रीतिको तोड देना ।

हम कोटाराज्यके जिस समयके इतिहासको वर्णन करते हैं वास्तवमें महाराज राणा जालिमसिंह ही उस समय कोटेके स्वामी थे, और महाराव उमेदसिंह उनके खेलके खिलौनेस्वरूप सिंहासनपर विराजमान थे । जालिमसिंहके राजनैतिक अभिनयका कुछ विवरण हम पहिले अध्यायमें लिख आये हैं, उन्होंने शासनकर्त्ता एवं विधानकर्त्ताके रूपसे किस प्रकार अभिनय किया, अब उसका ही वर्णन करते हैं । जालिमसिंहने कोटाराज्यके ऊपर अपनी महान् राजनैतिक ऊंची अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये कोटाराज्यकी धन-सम्पत्ति और सेनाकी शान्ति सभीको नष्ट किया । संवत् १८२१ में जिस समय मेवाडके महाराणाके साथ जालिमसिंहकी बातचीत हुई उसी समयसे संवत् १८५६ तक राज-राणा जालिमसिंहने कोटाराज्यपर जिस भाँति अपना प्रताप फैला रक्खा था, मेवाड-राज्यके ऊपर भी उसी प्रकारसे अपना प्रबल प्रताप और अधिकार बढानेके लिये वह दृढ चेष्टा करते थे । उन्होंने उस महान् नैतिक आशाको पूरा करनेके लिये कोटाराज्यका सर्वनाश कर किसानोंको खरीदे हुए दासके समान कर डाला । संवत् १८४० में अत्याचार और पीडा भयङ्कर रूपसे बढ गई, सब कुछ लेकर भी किसानोंपर जालिमसिंहने उनकी आमदनीके ऊपर जो कर बांध रक्खा था उसके देनेमें स्वभावसे ही किसान असमर्थ थे । तिसपर जालिमसिंहके नौकर जब कर वसूल करने जाते और किसानोंसे न पाते तो उनके हल, गऊ आदि उस करके नामसे ले आते थे, इस कारण किसान लोग एक साथ अपने जीवनकी आशा छोड चुके थे । बहुतसे किसान

भूखों मरने लगे, कोई २ भागगये किन्तु उस समय रजवाडेके चारोंओर विपत्तियोंका स्रोता बहनेमें वह किसका आश्रय लें? राजराणा जालिमसिंहने उन किसानोंके जो पिताके क्षेत्र थे, उनको और हल इत्यादि खेती करनेकी सामग्री और बैल आदि पशुओंको छीन लिया था, इससे बहुतसे किसान दूसरा उपाय न देखकर कुछ सामान्य वेतन लेकर दासस्वरूपसे अपने पासके पहिले ही खेतोंमें उन हल आदिसे खेती करनेमें सम्मत हुए! कोटेके प्राय: सभी किसानोंके भाग्यमें इस प्रकारका शोचनीय व्यापार हुआ, इस कारण राजराणा जालिमसिंहने महाराव राजा उमेदसिंहकी ओरसे कोटेराज्यके समस्त कृषि क्षेत्रोंके अधीश्वर होकर जो पृथ्वी अबतक परित्यक्त भावसे पडी थी उस सबमें कृषिकार्य करना प्रारंभ कर दिया और आप स्वयं कृषकपति पदपर प्रतिष्ठित हुए।

यद्यपि जालिमसिंह मेवाडराज्य पर आधिपत्य विस्तार करनेके लिये बराबर कई वर्षसे चेष्टा करते आये थे, और उसी उद्देशको पूर्ण करनेमें उन्होंने कोटेका सर्वनाश किया था, परन्तु अंतमें एक भयंकर घटनाके होनेसे उनकी उस ऊंची अभिलाषाकी जडमें भयंकर आघात लगा। महाराष्ट्र नेता इंगिलया परिवारके साथ जालिमसिंहकी अधिक मित्रता थी। उसी इंगिलियाके वंशधर बालाराव मेवाडके महाराणाके द्वारा बंदी होकर उदयपुरके कारागारमें रक्खे गये, जालिमसिंह उन्हीं झालारावका उद्धार करनेके लिये गये, उसीसे महाराणाका कोप इनके ऊपर हुआ इस कारणसे उन्होंने महाराणाको अपने हस्तगत करके मेवाडमें अपनी प्रबलता विस्तार करनेके अपने हृदयरूपी बगीचेमें जिस आशाके वृक्षको यत्नरूपी जल सींचकर बढाया था, वह एकबार ही चिरकालके लिये जडसे उखड गया। तब तो जालिमसिंहको चैतन्यता हुई, वह यह समझ गये कि अपने स्वार्थसाधन करनेके लिय काल्पनिक भ्रान्त आशाको पूर्ण करनेके लिये उन्होंने अन्याय और अकारणसे कोटेकी प्रजा और कोटेके अधीश्वरका सर्वनाश किया है। चतुर राजनीतिज्ञ जालिमसिंह सावधान हो पूर्वोक्त हानिको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही नवीन अनुष्ठान करनेमें प्रवृत्त हुए।

संवत् १८५६ में मोसेनके सामन्तके द्वारा षड्यन्त्र जालका विस्तार होनेके पूर्वतक जालिमसिंहने किलेके महलमें निवास किया था, परन्तु संवत् १८६० सन् (१८०३-४ ई०) में उन्होंने झाला रावको छोडकर मेवाडसे लौटते ही उस महलमें निवास न कर अन्यत्र वास करनेकी इच्छा की। उस समय बृटिश सेनाने सम्मिलित महाराष्ट्र दलके विक्रम और प्रतापकी जडमें विषम आघात किया और महाराष्ट्रोंके अधिकारी बहुतसे देशोंको छीन लिया, तब महाराष्ट्र शीघ्र ही दल भंग करके भारतवर्षके अनेक प्रान्तोंमें जाकर लूटमार और अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगे। जालिमसिंह अपनी तीक्ष्णबुद्धिके बलसे समझ गये कि महाराष्ट्रोंके इस प्रकारके अत्याचारके समयमें राजधानीके महलोंमें न रहकर जिस स्थान पर उनके द्वारा आक्रमण होनेकी संभावना है उसके ही निकट रहना इस समय उचित है। उनके उस महलके छोडनेमें दो प्रधान उद्देश थे-पहिला तो कोटेकी राजस्वरीतिका संस्कार साधन, दूसरा महारा-

ष्ट्रोंका दल कोटराज्यके जिस प्रान्तमें जाकर पडेगा उसी: प्रान्तमें जाना। यद्यपि हमारा यह विश्वास था कि बुद्धिमान् जालिमसिंहने उन दोनों उद्देशोंके वशवर्ती होकर महलको छोडनेका आग्रह किया था, परन्तु कोटेके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि एक समय रात्रिमें महलके ऊपर बैठकर एक (पेचक) उल्लूने विकट स्वरसे चीत्कार किया था, जालिमसिंहने राजधानीके समस्त गणक और ज्योतीषियोंको बुलाकर पूछा, उन्होंने गणना करके कहा कि "इस महलमें निवास करना अब किसी प्रकार भी उचित नहीं, अब इसमें निवास करनेसे आपके भविष्यत्में अमंगल और अनिष्ट होनेकी पूरी संभावना है।" जालिमसिंहने ज्योतिषियोंके उस उपदेशसे महलको छोड दिया, हाडाजातिके इतिहास लेखककी यही उक्ति है, परन्तु हमारा यह विश्वास नहीं है कि जालिमसिंहने महलके ऊपर कुलक्षण युक्त पेचकके चीत्कार करनेसे ही महलको छोड दिया था।

गणकाचार्योंने महलकी अपवित्रताके विषयमें एक वाक्य प्रकाशित किया था इससे राजराणा जालिमसिंह शीघ्र ही महलको छोडकर अनुचरोंको साथले कोटेराज्यमें भ्रमण करने और इतने दिनोंके पीछे उस राज्यमें अपनी राजनैतिक ऊंची अभिलाषाको बांध रखनेमें प्रवृत्त हुए। जालिमसिंह भ्रमण करनेके समय भलीभांतिसे जान गये और उन्होंने स्वयं अपने नेत्रोंसे देख लिया। अपने स्वार्थसाधनके लिये मेवाडके निमित्त जो कुछ अनुष्टान किया था उससे कोटेराज्यका किस प्रकारका अनिष्ट साधन हुआ और प्रजा किस प्रकारकी शोचनयिदशामें पडी है, वह और भी जान गये कि उनकी कठोर राजनीतिके दापसे कोटेराज्यके तीन अंशोंमेंसे एक एक अंशकी बराबर किसान एकबार ही सर्वस्वात हो गये हैं, तथा और भी दो अंश एकबार ही भरोसाहीन और घोररूपसे असंतुष्ट हुए हैं। इस समय कोटेके राजस्वकी अवस्था भी जैसी शोचनीय हो गई है उससे भी उनको अपने पूर्वानुष्ठित नीतिके कुफलका भलभांतिसे परिचय मिल गया। इस समय वैश्य और महाजन समाजमें उसकी प्रतिपात्ति कुछ भी नहीं थी, कोई वैश्य वा महाजन उनकी बात अथवा उनके हस्ताक्षरकी हुँडीपर विश्वास नहीं करता था। इतने दिन कोटेकी सर्वसाधारण प्रजा किसी विषयपर कुछ अभियोग उपस्थित करती थी, कारण यही था कि वह उसपर कुछ भी ध्यान नहीं देते थे, जिस उपायसे हो धनका संग्रह करना ही उनका मुख्य उद्देश्य था, इस कारण वह किसीकी कुछ सुनते न थे, प्रजाके अतिरिक्त कर देनेमें असमर्थ होते ही यह उनका सर्वस्व छीन लेते थे। परन्तु शीघ्र ही प्रकाशित हो गया कि कठोर और अन्याय राजनीतिकी प्रबलतरंगके निवारण न करनेपर समयपर राज्यकी विपात्तिके समयमें प्रजासे सहायता प्राप्त करना अत्यन्त कठिन हो गया है, इस कारण ऊंची प्रतिभाशाली जालिमसिंह शीघ्र ही उस प्रबल राजनैतिक रोगका प्रतिकार साधन करनेके लिये अनेक प्रकारकी औषधियोंका अविष्कार करनेमें प्रवृत्त हुए। वह सबसे पहिले गागरौलके अभेद्य किलेके निकट एक स्थायी डेरा स्थापन करके वहाँ रहने लगे; किसी महलमें न रहकर उन्होंने केवल उसी डेरेके ऊपर एक सामान्य शामियाना

बना लिया। इनको इस भांति सामान्य भावसे रहता हुआ देखकर अन्यान्य सम्भ्रान्त सामन्त और राजपुरुष भी उसी भावसे रहने लगे। उन्हीं सामान्य डेरोंमें समस्त राज-कार्य भी होने लगे।

चतुर जालिमसिंहने जिस स्थानपर डेरे स्थापन किये थे वह स्थान भी उनके राजनैतिक उद्देश साधनके लिये सम्पूर्ण रूपसे उपयुक्त था। दक्षिणाञ्चलसे कोटेराज्यमें जानेके लिये जो प्रधानमार्ग हैं उन स्थानोंके वह ठीक बीचमें था, और दूसरी ओर कोटेके अधीनके जिन देशोंमें कठिन भील जाति वास करती थी वह स्थान भी निकट ही थे, शेरगढ और गागरौल नामक दो प्रबल किलोंके कुछ ही दूर होनेसे उनको अपनी रक्षा करनेका विशेष सुभीता हो गया था। जालिमसिंहने अपनी समस्त धनसंपत्ति और सामरिक उपकरण शेषोक्त किलेमें रख लिये और अपनी सामर्थ्यके अनुसार दोनों किलोंको अभेद्य करनेमें भी कसर नहीं की। इन्होंने शीघ्र ही एक नवीन सेनाकी सृष्टि करके अंग्रेजी रीतिके अनुसार उनको शिक्षादान और अस्त्रदान करके एक२ सेनादलको एक २ जन "कप्तान की उपाधिकारी सैनिक पुरुषोंके अधीन रक्खा"। अन्य पक्षमें "राजपल्टन" नामक राजकीय सेनाको भी उन्होंने इस प्रकारसे शिक्षा दी कि उसने अनेक युद्धोंमें विशेष वीरता और असीम साहस प्रकाश किया। जालिमसिंहने सेनादलको इस भावसे शिक्षित और सजाकर रक्खा कि वह दल आज्ञा पाते ही एक मुहूर्त्तमें जिस प्रान्तमें शत्रु आते, उसी प्रान्तमें जाकर युद्ध उपस्थित कर सकता था, इस भावसे सेना तैयार रहती थी। राजधानीमें राजमहलोंके भीतर रहनेसे इसके सम्बन्धमें अधिक विलम्ब होनेकी जो संभावना थी, इस स्थानपर वह सब विलंबके कारण भी दूर हो गये।

जालिमसिंहको अपने जीवनके इस समयतक राजनैतिक षड्यन्त्ररूपी समुद्रकी प्रबल तरंगोंमें निमज्जित होनेसे भूमिकी अवस्थाके संबन्धमें और राजस्वके संबन्धमें कोई विशेष अभिज्ञता प्राप्त करनेका अवसर नहीं मिला था। वह अबतक चिरकालसे प्रचलितरीतिके अनुसार राजस्वके बदलेमें क्षेत्रोत्पन्न द्रव्य निर्द्धारित परिमाणके अनुसार ग्रहण करते आये थे। परन्तु वह इस समय भली भाँतिसे जान गये कि यह रीति सभी अंशोंमें असुविधाजनक थी; एक ओर इस रीतिसे राजस्व संग्रह करनेवालोंने जिस प्रकार प्रजाके ऊपर अत्याचार और उपद्रव किये थे, अधिकतासे द्रव्यको ग्रहण करके अपने उदरको पूरण किया था, दूसरी ओर किसी २ प्रजाने भी इसी कारणसे राज-प्राप्य राजस्वदानके समयमें भी बंचना की थी, इसी रीतिको राजाके पक्षमें संपूर्ण अहितकारी जानकर उसे केवल कर संग्रहकरनेवाले पटेलोंके उदर पूर्णका उपायस्वरूप देखकर वह शीघ्र ही उस प्रजाकी अनिष्ट मूलक तथा राजकी क्षतिमूलक रीतिको एकबार ही दूर करनेमें प्रवृत्त हुए।

राजमन्त्री जालिमसिंहने सबसे पहिले बटाई अर्थात् राजस्व कर शुल्कके बदलेमें क्षेत्रमें उत्पन्न हुए द्रव्य ग्रहणका समस्त तथ्य, एवं विवरण संग्रह किया और किस उपायसे पटेलोंने प्रजाके ऊपर अत्याचार करके अपना पेट भरा था, उसको अत्यन्त गुप्तभावसे

जानकर कोटेराज्यके समस्त देशके पटेलोंको अपने यहां बुला भेजा। पटेलोंके आते ही उन्होंने प्रत्येक पटेलको उनके अधीनमें कितनी भूमि है? कितने किसान कर आदि देते हैं, किस प्रकारके उपायसे कर लिया जाता है, और उनकी निजकी अवस्था कैसी है? आमदनी कितनी है? सगत कहांतक है? इसको लिखकर सरलतासे जान लिया कि समस्त राज्यमें कितने किसान और कृषिक्षेत्र हैं, और कितना राजस्व संग्रह होता है, जालिमसिंह समस्त ज्ञातव्य विवरणको संग्रह करके देशमें भ्रमण करनेके लिये बाहर हुए। भ्रमणकरनेके समयमें प्रत्येक ग्राम चकबन्दी अर्थात् भूमिका परिमाण निर्द्धारण करके उस भूमिमें किस २ नदीसे खेती होती है, और किस २ भूमिकी खेती वर्षाके ऊपर निर्भर करती है, किस २ भूमिमें खेती सरलतासे होती है, किस २ भूमिमें खेती कठिनतासे होती है, और कौन २ भूमि पहाडी है तथा किस २ भूमिमें पशु आदि चराये जाते हैं, उसको वह स्वतन्त्र २ रूपसे विभक्त करने लगे। उन्होंने पिछले कई वर्षोंका हिसाब देखकर भूमिकी सब आमदनी कितनी होती थी उसका अनुमानसे एक २ का हिसाब कर दिया। उसके पीछे पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार और राजस्वके बदलेमें प्रजासे धान्यादि उत्पन्न अनाज नहीं लिया जायगा सभीको उसके बदलेमें नगद रुपया देना होगा यह निर्धारण किया।

नीतिविशारद जालिमसिंहने इस प्रकारसे समस्त भूमिका कर नियत करके अन्तमें करसंग्राहक पटैलगणोंको परिश्रम स्वरूपसे प्रत्येक पटेलके अधीनमें जितने वीघे जमीन होगी, पटेलको उस जमीनके प्रत्येक वीघेके ऊपर डेढ आना कर देना होगा इस प्रकारका नियम निश्चय कर दिया, परन्तु पटेलोंको यह भी विदित कर दिया कि उनसे अपनी अधिकारी भूमिका साधारण प्रजाके कर देनेकी अपेक्षा बहुत कम कर लिया गया है। तब जो कोई पटेल प्रजासे प्राप्त उस डेढ आनेके अतिरिक्त और कुछ ग्रहण करेगा तो उसके अधिकारकी भूमि राजा अपने अधिकारमें कर लेगा। इस नवीन व्यवस्थाके अनुसार किसी पटेलको वार्षिक ५रुपये १५ रु०सहस्र मुद्रा कर संग्रह करनेके परिश्रम स्वरूपसे मिलेगी। यह जाना जाता है कि पहिले पटेलोंने फिर अपने२ पदपर अभिषिक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की और एक २ जनने जालिमसिंहको नजरमें दश२ बीस २ इस प्रकार करके पचास हजार रुपये दिये, इस उपायसे जालिमसिंहने नजरानामें दश लाख रुपया पाया और उसको अपने शून्यराजभण्डारमें मिला लिया।

उक्त प्रकारसे नवीन व्यवस्थाको देखकर किसान लोग आशा करने लगे और इतने दिनोंके पीछे समझा कि उनके सुखका सूर्य उदय हो गया, कारण कि जो कर दिया जाता था उसके बढनेसे यह जान गये कि पटैलोंके अत्याचार उत्पीडन और अन्याय कर दानके हाथसे अब एकबार ही छुटकारा मिलेगा। परन्तु उनकी उस आशाके साथ ही साथ और एक भयंकर कारण दिखाई दिया। जालिमसिंहने यह आज्ञा प्रचार कर दी, कि पहिले जिस भाँति किसी २ जमीनपर वर्षाके न होनेसे प्रायः और किसी नैसर्गिक कारणसे फसलके न होनेसे उसका कर घटाया जाता

था; इस समय वह नहीं होगा, और जिस जमीनको किसानोंने आबाद नहीं किया पटैल उस जमीनको अन्य मनुष्यको नवीन व्यवस्थाके अनुसार खेती करनेके लिए दे दें। यदि कोई उस जमीनको न ले तो वह जमीन जालिमसिंहकी खास जमीनरूपसे परिणत होगी और दूसरी ओर जालिमसिंहने राजस्वके लेने न लेनेका समस्त भार एकमात्र पटैलोंके ऊपर ही अर्पण किया ।

इतने समय तक पटैल लोग किसानोंके ऊपर इच्छानुसार व्यवहार करते, और केवल वार्षिक वा त्रिवार्षिक पटैलवराके नामसे कर देते थे, इस समय जालिमसिंहने उस करको दूर करनेकी आज्ञा दे दी, यदि पटैल प्रजाके ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करके कर देते हों तो राजदरबारसे इनको आश्रय देकर सम्मानित किया जायगा । इस प्रकारसे पटैल लोग ग्राम समारोहके प्रतिनिधि और प्रजाके रक्षकरूपसे राजकीय कर्मचारीरूपमें गिने गये । इन पटैलोंको सन्तुष्ट करके राज्यके आभ्यन्तरिक उत्कर्षसाधनमें उनको उत्साहित करना जालिमसिंहका आभ्यन्तरिक उद्देश था इस कारण इस नवीन व्यवस्थासे उस उद्देशके पूर्ण होनेके विशेष लक्षण प्रकाशित होने लगे । जालिमसिंहने नव नियोजित पटैलोंको सम्मानस्वरूपमें सुवर्णके कंगन और पगडी देकर सबको यथास्थानपर भेज दिया ।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंहने उन बहुतसे पटैलोंमेंसे चार बुद्धिमान् चतुर पटैलोंको एक समितिके सदस्य पदपर नियुक्त करके अपने यहां रक्खा था । सबसे पहिले वह चारों पटैल एकमात्र राजकीय विषयक कार्य्योंमें नियुक्त हुए, शीघ्र ही शान्तिरक्षा अर्थात् पुलिसविभागके कार्य भी उनके हाथमें सौंपे गये, सबसे पीछे जालिमसिंह राज्यके भीतरी विषयमें भी उनका परामर्श लेकर कार्य करते थे । ग्रामसमाहार नगरसमूह और राजधानीके पंचोंसे जिन विषयोंकी मीमांसा होती थी, जो सब विचार निष्पन्न होते थे, उन सबके पुनर्विचार होनेका भार तक उसी समितिके हाथमें अर्पण किया गया ।

इस प्रकारसे कुछ ही समयमें उस समितिका राजस्व, विचार और शान्तिरक्षा तीन विभागोंपर अधिकार हो गया। कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "समस्त जगत्में जालिमसिंहके शान्तिरक्षा विभागके समान अन्य किसी राज्यमें शान्तिरक्षाका विभाग किसी समय भी नहीं था, कोटेराज्यमें सभी जगह गुप्त चारित्ररूपी जाल विस्तारित था, और उस जालके बाहर कोई नहीं भाग सकता था ।

यथार्थपक्षमें उक्त नवनियोजित पटैलोंने सर्व साधारण प्रजाके स्थानीयप्रभु होकर भली भाँतिसे जान लिया कि प्रजाके ऊपर अर्थ दंड वा बलपूर्वक प्रजासे जो कुछ लेते थे वह सरलतासे प्रकाशित हो जायगा । फिर प्रजाके ऊपर उत्पीडन कैसे करें इस कारण वह अर्थ पिशाची पटैलगण अन्य उपायसे अपने उदर पूर्ण करनेके लिए उद्यत हुए, और विचारने लगे कि इस उपायके करनेसे उनके अत्याचार और उपद्रव शान्त नहीं होंगे और कार्य सिद्ध हो जायगा । रजवाडोंमें बोहरानामक एक श्रेणीके बनिये हैं,

वही दीन दुःखी किसान और प्रजाको समय समय रुपया कर्ज देकर उनकी सहायता करते हैं, पटैलोंने अनेक चिन्ता करनेके पीछे इन्हीं महाजनोंसे कार्य कराना प्रारम्भ किया।

रजवाडेके बोहरोंके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहबने लिखा है कि " बोहरागण किसानोंके कृषी कार्यको समाधान करनेके लिये जिस किसी प्रयोजनीय द्रव्य अर्थात् गोकर्षण यन्त्र बीज आदि देते थे, और जब तक धान्य न उत्पन्न हो और वह न कटै तब तक सहायता देते रहते थे। परन्तु इस प्रकारसे सहायता करनेके पहिले किसानोंके साथ बोहरोंका नियम निश्चय होता था कि धान्यके उत्पन्न होते ही बोहराने जो कुछ धनकी सहायता की है उसको सूद सहित रुपया मिलैगा। इन्हीं बोहरोंसे किसानोंको विशेष सहायता मिलती थी इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। विशेष करके बोहरागण किसी समय भी अपने प्राप्त धनके अतिरिक्त ग्रहण वा किसानोंके प्रति किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करतेथे, और किसान भी बोहरोंकी असंतुष्टिके लिए चेष्टा नहीं करते थे, कारण कि बोहरा इस बातको भली भाँतिसे जानते थे कि अत्याचार और उत्पीडन करनेसे कोई किसान भी फिर उनसे सहायता नहीं लेगा, और इस बातको किसान भी जानते थे कि एक बोहराको ठगनेसे फिर और कोई बोहरा उनकी सहायता नहीं करेगा। इस कारण दोनों ही सावधानीके साथ कार्य करते थे, अधिक क्या कहैं एक २ ग्रामका बोहरा सदा एक२ किसानको सहायता देता आया था, किसान भी ग्रामके बोहरोंको छोडकर अन्य किसी ग्रामके बोहरोंका आश्रय नहीं लेता था "।

राजराणा जालिमसिंहके कोटाराज्यसे पूर्वरीतिके अनुसार किसानोंसे कर स्वरूप उत्पन्न हुए धान्यका अंश ग्रहण करनेकी रीति एक बार ही दूर करके उसके वदलेमें नगद रुपया ग्रहण करनेकी रीति प्रचलित करनेके पूर्व तक किसान उसी उपायसे खेतीका कार्य करते थे। नवीन नियोजित पटैलोंने इस समय देखा कि एक मात्र नियमित कर ग्रहण करनेके अतिरिक्त अन्य किसी उपायसे कुछ धन किसानोंसे ग्रहण करने पर प्रधान मंत्री जालिमसिंह सर्वनाश साधन करेंगे, इस कारण वह सब लोग षड्यंत्र करके उक्त बोहरोंका नाश करके आप स्वयं महाजनोंका कार्य करनेके लिए तैयार हुए। प्रकाश्यरूपसे बोहरोंके कार्यमें बाधा देनेसे राजराणा जालिमसिंह महाक्रोधित होंगे यह जानकर उन्होंने एक मध्यवर्ती उपायका अवलम्बन किया। क्षेत्रमें धान्यके पकजाने पर जिस समय किसानोंने धान्यको काटनेके लिए पटैलोंके समीप अनुमतिकी प्रार्थना करनी आरंभ की उसी समय पटैलोंने कहा, " पहिले पहल राजाका कर दे दो, पीछे धान्य काटना। " दीन किसान धान्य काटकर विना बेचे हुए कहाँसे रुपया दें ? इसी कारण वह महा विपत्तिमें पडे और उन्होंने जाकर बोहरोंका आश्रय लिया। परन्तु चतुर पटैलोंने बोहरोंसे जता दिया कि " जिन किसानों पर राजाका प्राप्त कर बाकी है तब तक वह किसानोंको किसी प्रकार भी ऋण न दे सकेंगे। " बोहरागणने पटैलोंके इस निषेध वचनोंसे भयभीत होकर किसानोंको आगे ऋणदान नहीं किया,

इस कारण किसान अन्य उपाय न देखकर अंतमें उन पटैलोंके शरणागत हुए, किसानोंने अपने २ उत्पन्न हुए धान्यके कितने ही अंश पटैलोंके समीप बाँधकर रक्खे। पटैलोंका उद्देश भी यही था, वह अपनी २ इच्छानुसार उत्पन्न हुए धान्यका मूल्य निर्णय करके उनको राज्य प्राप्य कर मिल गया है इसकी रसीद देने लगे। दूसरी ओर किसानोंने पटैलोंके प्रस्तावके अनुसार इस मर्मके एक पत्रमें हस्ताक्षर कर दिये कि, "राजप्राप्य कर देनेके लिये यथेच्छ द्रव्य न होनेसे और उस अर्थके अन्यत्र संग्रह करनेका कुछ सुभीता न होनेसे मैं अपनी इच्छानुसार धान्यका उपयुक्त मूल्य निश्चय करके धान्यके कितने अंश अमुक पटैलके समीप रहन रखकर रुपया लेता हूँ"।

किसानोंसे इस प्रकारके भावसे लिखवा लेनेका कारण यह है कि जालिमसिंह उक्त पत्रको देखकर समझ लेंगे कि किसानोंने अपनी २ इच्छानुसार पटैलोंकी सहायता ग्रहण की है, पटैलोंने अपनी इच्छानुसार किसी प्रकारका अत्याचार वा बलप्रयोग नहीं किया है? इस भांति पटैल उक्त उपायसे बोहरोंके कार्यका नाश करके बहुतसा धान्य प्रतिवर्षमें संचय करने लगे। रजवाडोंमें कोटाराज्य ही धान्यका प्रधान स्थान गिना गया है, पटैल उस समस्त धान्यको बेंचकर बहुतसा धन उपार्जन करने लगे। इधर किसानोंकी अवस्था दिन २ शोचनीय होने लगी। यद्यपि थोडे ही समयमें पटैलोंका यह अत्याचार संवाद राजराणा जालिमसिंहके कानतक पहुँचा, तथापि चतुर पटैलने यथासमय पर्याप्त करको संग्रह करके राजभंडारको पूर्ण कर दिया, और बहुतसे खेतोंको जप्त करके जालिमसिंहके अधिकारमें करा दिया; जालिमसिंहने पहिले इन अत्याचार और उपद्रवोंकी ओर ध्यान न दिया था। संवत् १८६७ (सन् १८११ ई०) तक इस भाँति कार्य चलता रहा। इसके पीछे सहसा बिना मेघके वज्र पातके समान जालिमसिंहने कोटेराज्यके प्रत्येक पटैलको बंदी करनेकी आज्ञा दी और प्रत्येक पटैल बंदी होकर इनके समीप आये। जितने पटैलोंने इतने दिनोंतक असत् उपायसे बलपूर्वक प्रजाका सर्वनाश करनेके साथ बहुतसा धन उपार्जन किया था उन सबको जालिमसिंहने खजानेमें मिला लिया। विचार होजानेके पीछे बहुत रुपया जुर्माना किया गया। केवल एकमात्र पटैलने अपना उपार्जित सात लाख रुपया अन्यराज्यमें भेज दिया। इस एक मनुष्यके दृष्टान्तसे ही हमारे पाठक इतना अनुमान कर सकते हैं, कि पटैलोने इतने दिनोंमें किस भावसे किसानोंका सर्व नाश किया था।

जालिमसिंहने नवीन प्रचलित पटैलरीतिसे अनिष्ट कारक फल उत्पन्न होता हुआ देखकर फिर कोटे राज्यमें पूर्वकालकी प्रचलितरीतिका अवलम्बन किया, और उसके साथ ही साथ वह अपने कृषिकार्य करनेमें लगे। इस बाहुल्य जनक कृषिकार्यसे उनको निजकी जो बहुतसी आमदनी हुई थी उसका वर्णन पिछले अध्यायमें किया गया है।

चतुर्थ अध्याय ४.

जालिमसिंहकी कृषिप्रणाली-कृषिकार्यका विस्तार-कृषिविभागकी उन्नति-उसका विवरण-कोटेका कृषिक्षेत्र-उत्पन्न धान्यका परिमाण-मूल्य-खलिहान-सुभिक्ष और दुर्भिक्ष-समयके धान्यका मूल्य-जालिमसिंहका एक वर्षके बीचमें एक करोड रुपयेका धान्य वेचना-खानगी धान्यके ऊपर शुल्क स्थापन-शुल्कसंग्राहक-उस शुल्कके प्रचार होनेसे अत्याचार और उपद्रवोंका होना-कोटेराज्यकी सब आमदनी-जालिमसिंहका अफीमका एक चेटिया व्यवसाय-विधवा विवाहके ऊपर कर स्थापन-संन्यासियोंके ऊपर कर स्थापन-संमार्जनीके ऊपर करका प्रचार करना-जालिमसिंह और कवि-जालिमसिंहके शासनमें कोटेकी अवस्थाकी समालोचना।

जालिमसिंहके आभ्यन्तरी शासनकी रीतिको उनके एक चेटिया कृषि व्यसायको वर्तमान अध्यायमें वर्णन किया है। एक मात्र एक चेटिया कृषि कार्यसे जालिम सिंहने समस्त प्रसिद्ध प्राप्त की। जिस समय जालिमसिंहने कृषिकार्य करके कोटेके क्षेत्रोंकी अवस्थाको बदल लिया उस समय किसी पर्यटन करनेवालेने कोटे राज्यमें जाकर सर्वत्र श्यामल शस्य पूर्ण क्षेत्रोंको देखकर विचारा कि कोटेकी प्रजाकी अवस्था अवश्य ही प्रीतिपूर्ण है। परन्तु किसी कारणसे ही कोटेके कृषि विभागके इस प्रकारके रूपका रूपान्तर हुआ, तथा उस कृषिकार्यका प्रधान फलभोगी कौन था इसका यथार्थ तथ्य जाननेसे अवश्य ही उसके मनका भाव बदल जाता। सबसे पहले जालिमसिंहने मेवाडका मंगल साधन किया और मेवाडमें अपनी प्रबलता विस्तार करके कोटेका सर्वनाश किया, इसीसे उन्होंने कोटेके किसानोंके ऊपर अत्याचार और उपद्रव करके उनके ऊपर कर स्थापन करके किसानोंके रुधिरको सुखा दिया था, इसीसे किसानोंके कुलका नाश हो गया, कृषिक्षेत्र सब बेजुते बोये छोड दिये गये और अन्तमें समस्त प्रजाने दूसरे देशोंमें जाकर आश्रय लिया। जालिमसिंहने जब देखा कि प्रजाका नाश करनेके लिये उन्होंने भयानक अमंगल किये हैं, जब यह जान लिया कि उनकी अवलम्बित अर्थशोषक नीतिने राजभण्डारके भविष्यका अनिष्ट किया है तब उन्होंने करस्वरूप जो किसानोंके हल और अन्यान्य कर्षणके यंत्र तथा किसानोंकी पैतृक भूमिपर अधिकार कर लिया था, उस समस्त उपकरणसे आप स्वयं उन क्षेत्रोंमें कर्षण करनेके लिये प्रवृत्त हुए, उसीसे कोटेराज्यका कृषिकार्य इतना अधिकतासे साधित हुआ कि पहिलेके समान किसी समय भी दिखाई नहीं आया, जालिमसिंहने कोटे राज्यके प्रत्येक प्रान्तकी जिस किसी भूमिमें खेती होना सम्भव था उसी प्रत्येक भूमिमें ही अधिक क्या गहनवनको भी कृषिक्षेत्र कर दिया, और जिस पथरीले देशमें हल चलाना असम्भव था उस कठोर पहाडी भूमिमें भी कुदालके द्वारा खेती करना प्रारम्भ कर दिया, इस कारण बहुत थोडे समयमें समस्त कोटाराज्यमें बहुतायतसे धान्य उत्पन्न हुए थे।

संवत् १८४०, सन् १७८४ ई० में जालिमसिंहके निजके तीन वा चार सौ हल थे, परन्तु कई वर्षोंसे उनकी संख्या आठसौ थी, जालिमसिंहने जिस समय प्रचलित रीतिको रहित करके नवीन पटैलोंकी रीतिको चलाकर उत्पन्न हुए द्रव्यके बदलेमें नगद रुपया राजस्व स्वरूपसे ग्रहण करना आरम्भ किया, उस समय उक्त हलोंकी संख्या एक हजार छः सौ थी, और कर्नल टाड साहबने लिखा है कि सन् १८२१ ईसवी में जालिमसिंहके निजके व्यक्तिगत सम्पत्ति स्वरूप क्षेत्रोंमें चार हजार हल चलते थे और उनमें सोलह हजार बैल नियुक्त थे इससे हमारे पाठक समझ सकते हैं कि जालिमसिंहने कृषि विभागमें किस प्रकारका श्रेष्ठ उपाय किया था। जालिमसिंहके निजके उक्त संख्यक हल और बैलोंके अतिरिक्त कोटके अधीश्वरोंके निजके और राजवंशके निकट आत्मीयोंकी स्वतंत्रताके सब मिलाकर एक हजार हल और चार हजार बैल कृषिकार्यमें नियुक्त थे।

राजराणा जालिमसिंहने जिस रजवाडेमें यश प्राप्त किया वह केवल एकमात्र विस्तारित कृषिकार्यके कारण ही इतने यशस्वी हुए थे और उन्होंने इसी उपायसे कृषिक्षेत्रसे बहुतसा धन उपार्ज्जन किया था, जिस समय रजवाडेमें प्रधान २ राज्य महाराष्ट्रोंके अभ्युदय और उत्पीडनसे एकबार ही उन्नतिके ऊँचे शिखरसे अवनतिके अगाध जलमें गिरे थे, उस समय एकमात्र जालिमसिंहके कल्याणसे ही यह अवश्य संभव था कि कोटाराज्य उस ध्वंसताके हाथसे अवश्य छुटकारा पालेता परन्तु जालिमसिंहके प्रवल-शासनसे यद्यपि कोटेमें धनधान्यकी रक्षा भली भाँतिसे हुईथी परन्तु उसके अतीव कठोर शासनसे राज्यके सम्भ्रान्त सामन्तोंसे दीन किसानतक सभी उत्पीडित होकर उनके ऊपर अत्यन्त विरक्त होगये थे, और उनके शासनके विनाशकी कामना स्वभावसे ही सब श्रेणीके मनुष्यके हृदयमें प्रवल हो गई। वीर विक्रमी हाडासामन्तोंकी अधिकारी भूमिको अपने अधिकारमें कर कठोर शासन और रक्तशोषक कररूप रुधिरके ग्रहण करनेसे किसानोंकी श्रेणान अन्य उपाय न देखकर सर्वस्वान्त हो अपने पैतृक कृषि क्षेत्रोंको छोड दिया, और उनपर जालिमसिंहने अपना अधिकार करके स्वयं कृषिकार्यका विस्तार किया था, जो किसान चिरकालसे चिर प्रचलित रीति नियम और विधानके अनुसार पैतृक भूमिपर अधिकार और उसमें खेती करते आये थे, जिन खेतोंमें कृषक कुलका अविनाशी अधिकार था वह समस्त किसान उन सब क्षेत्रोंके कारण जालिमसिंहके विधा-नके अनुसार महान् उंचा कर देनेमें असमर्थ थे, जालिमसिंहने वह प्राचीन रीति, नियम और विधान भंग करके इच्छानुसार उस सब भूमिपर अधिकार कर लिया।

इतिहाससे जाना जाता है कि वह जिस क्षेत्रको अत्यन्त उपजाऊ जानते थे उन्हींको छल बल और चतुरतासे उसके यथार्थ अधिकारीके अविनाशी स्वत्वाधिकारको लोपकर उसपर अपना अधिकार कर लेते थे। यद्यपि कोटेके कृषिकार्यकी उन्नति एक पक्षमें प्रीतिदायक थी, परन्तु जब हम विचारते हैं कि दीन किसानोंकी मंडलीका सर्व-नाश करके जालिमसिंहने उन किसानोंके पैतृक अविनाशी स्वत्वको अन्यायसे नाश

करके उस क्षेत्रपर अपना अधिकार कर लिया तब उन किसानोंको पैतृक अधिकारको खोकर क्रीतदासके समान जालिमसिंहके अधीनमें रहकर उन क्षेत्रोंमें कृषिकार्य करके सामान्य परिश्रमिक धान्य मिलने लगा, तब हम इस उन्नतिको कभी मंगलकारक नहीं,कह सकते ।

समस्त राजस्थानमें जो स्वदेशानुराग और भूमिके ऊपर विशेष अनुरक्ति चिरकालसे अत्यन्त प्रबल थी । इसीसे किसानोंने क्रीत दासस्वरूपसे पैतृक भूमिमें खेती करना स्वीकार किया, परन्तु अन्यत्र जाकर सुख भोग करनेकी इच्छा नहीं की । जालिमसिंहने अत्याचार और उपद्रव करने प्रारंभ कर दिये, समस्त प्रजा अनेक कष्ट जानकर यद्यपि अन्य देशको चली गई थी परन्तु इस समय राजस्थानके चारोंओर महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंका स्रोता अत्यन्त प्रबल हो गया कहीं भी उनको आश्रय ग्रहण करनेकी आशा नहीं रही, इस कारण बहुतोंने जालिमसिंहके उपद्रवोंको सहन करके स्वदेशमें ही अपनी पैतृक क्षेत्रमें क्रीतदासस्वरूसे कृषिकार्य करने आरंभ किये थे । और महाराष्ट्रों इत्यादिके उपद्रवसे अन्य निकटके स्थानोंमें बहुतस किसान जो प्राणोंके भयसे भाग गये थे, वे फिर कोटेमें आकर जालिमसिंहके अधीनमें नियुक्त हो कृषिकार्य करने लगे ।

इतिहास लेखक टाड साहबने अपने नेत्रोंसे जालिमसिंहके कृषिकार्यको देखकर जो वृत्तान्त लिखा है हमने इस स्थान पर उसीको ग्रहण किया है । वह लिखते हैं, कि " कोटेके कृषिक्षेत्रकी मट्टी निम्न मालवेकी मट्टीके समान उर्वर और कठोर है, एकमात्र हलसे उस क्षेत्रकी पीठको विदर्णि करना बडा कष्ट साध्य है इस कारण जालिमसिंहने कोकनदेशमें प्रचलितरीतिके अनुसार दो हलोंको एक साथ व्यवहार किया था । उनके बैल आदि पशु प्रथम श्रेणिके समान श्रेष्ठ और उनके हलके समान तोपैं चलाने में भी समान उपयुक्त थे । उन्होंने पासके बाजारोंसे प्रधानता अपने राज्यमेंसे इन सब पशुओंको मोल लिया था,और उनके प्रियस्थान झालरापाटन पर जो वार्षिक मेला होता-है उसमेंसे अनेक पशु खरीदे थे । मारवाड और अन्यान्य स्थानोंके मरुक्षेत्रके स्थानोंमें जो सब बल श्रेष्ठ जातिके माने जोत थे, जालिमसिंहने उनको भी मोल लेकर कृषि

(१) बूँदीराज्यमें किसानोंका भूस्वत्व अविनाशी था । किसी कारणसे भी राजा वा अन्य कोई मनुष्य भी किसानोंके उस अधिकारको नाश न कर सके । किसानलोग अपनी २ इच्छानुसार अपने २ क्षेत्रको गिरवी रख सकते अथवा बेच सकते थे । ऐसा भी सुना जाता है कि पूर्वकालमें बूँदीके एक अधीश्वरने समस्त भूस्वत्वको बेचकर एक मात्र कर ग्रहण करके अपने स्वत्वकी रक्षा की थी उसीसे भूमिके ऊपर किसानोंका अविनाशी अधिकार उत्पन्न हुआ । यदि बूँदीमें कोई किसान नियमित कर देनेमें असमर्थ होता तो राजा उस भूमिपर अपना अधिकार नहीं कर सकता था, किसान दूसरेको वह भूमि दे देता था । यदि कोई किसान किसी अपराधसे निकाल दिया जाता तो भी भूमिके ऊपर उसका जो अधिकार था वह विनष्ट नहीं होता, और दूसरा उस पर अधिकार कर लेता था ।

कार्यमें नियुक्त किया था, परन्तु वह समस्त पशु बालुमय क्षेत्रके उपयोगी होने पर भी कोटेके क्षेत्रोंके उपयुक्त नहीं थे। इसीसे उनको त्याग दिया था "।

पीछे टाड महोदय लिखते हैं कि "प्रत्येक वर्षमें दो बार करके खेती होती थी प्रत्येक हलसे एक सौ बीघेकी भूमिमें खेती होती थी, इस कारण ४००० हलोंसे प्रत्येक बारमें ४००००० बीघा खेती होनेपर प्रतिवर्ष दो बारमें ८००००० बीघा जमीन अर्थात् अंग्रेजी प्रायः ३००००० एकड जमीन जोती जाती थी, जिस जमीनमें प्रत्येक बीघेके प्रति सातसे दशमन तक गेहूँ और पांचसे सातमन तक बाजरा उत्पन्न न हो तो उस जमीनकी मिट्टी अच्छी नहीं मानी जाती। इस कारण अत्यन्त कम करनेसे यदि हम प्रत्येक बीघे प्रति चारमन गेहूँके उत्पन्न होनेका हिसाब करें तो इसका दुगुना हिसाब करनेपर भी अतिरिक्त नहीं होगा "। तब ३२००००० मन गेहूँ और बाजरा उत्पन्न होना यह ठीक होगा। इसका मूल्य उस समय कितना था उसका निश्चय करना होगा। जिस वर्षमें अधिकतासे धान्य उत्पन्न हुआ है उस वर्षमें एक मानी गेहूँका मूल्य बारह रुपया होता है।

अन्य वर्षमें १८ रुपया करके एक २ मानी बेंची जाती है, यदि हम गढमें सभी समयमें धान्यका मूल्य १२ रुपया करते तो इससे वार्षिक ३२ लाख रुपयेकी आमदनी होती है"।

कर्नल टाड साहब कहते हैं कि कृषिकार्यमें जालिमसिंहका निम्न लिखित खर्चा होता था;-

गौ आदि पशुओंका आहार, किसानोंका वेतन क्षेत्रकी सफाई हलआदिके संस्कारमें व्यय	४००००० रुपया।
बीजके खरीदनेमें	६००००० "
गौ आदिके अव्यवहार्यहोनेपर नवीन गौ आदिके मोल लेनेमें	८०००० "
फुटकर खर्च	२०००० "
कुल	११००००० रुपया।

ऊपर लिखी हुई सूचीसे जाना जाता है कि कृषिकार्यसे जालिमसिंहको जितनी आमदनी होती थी, खर्चा उसका सब मिलाकर उसके कुल तीन अंशोंमेंका एक अंश भी दिखाई नहीं पडता।

हमारे देशमें जिस प्रकार खलिहान (खत्ते) में धान्यादिकी रक्षा होती है कोटेमें भी उसी प्रकारसे धान्यादिके रक्षा करनेकी रीति प्रचलित है, परन्तु वहांका खत्ता अन्य प्रकारसे बनता है। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि प्रधानतः ऊंची और सूखी भूमिके ऊपर खत्ता अनेक आकारसे बनाया जाता है। वेष्टनीके नीचेके भागमें एक प्रकारसे घास पत्ते वहां जलाकर फिर इसके पीछे भूखा लगाया जाता है, तब इसके

(१) राज पूतानेमें ४३ सेरका एक मन, १२ बारह मनकी एकमानी, १०० मानीका एक मनासा होता है।

ऊपर धान्य रखकर उसके ऊपर भूसा रखकर चारों ओर बन्द कर दिया जाता है। उसके ऊपर एक इञ्च चौडी मट्टीका लहेसन देकर उसको मट्टी और गोबरसे लीपकर वह खत्ता ऐसा दृढ हो जाता है कि प्रबल वर्षा भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं कर सकती; और कई वर्ष तक रखने पर भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं होता । जालिमसिंहने प्रायः इसप्रकारसे राज्यके अनेक स्थानोंमें ५० लाख मनका अनल्प धान्य संचित रक्खा रहता है, और जिस वर्षमें अन्न अधिक उत्पन्न नहीं होता उस वर्षमें आवश्यकतानुसार यह सब धान्य बाहर किये जाते हैं, उस समय एक २ मानी परिमित मूल्य ४० रुपया था और दुर्भिक्षके समयमें वह ६० रुपयेको बेचा जाता है। यह सब खत्ते उस समय स्वर्णखानकी तुल्य गिने जाते थे । जालिमसिंह प्रायः प्रत्येक वर्षमें ६० लाख मन धान्य बेचा करते थे। संवत् १८६०, सन् १८०४ ई० में जिस समय हुलकर भरतपुरराज्यमें आया और सर्वस्व लुन्ठनकारी महाराष्ट्रदल रजवाडेके प्रत्येक प्रान्तमें विस्तीर्ण हो गया, और उसीसे समर और दुर्भिक्षने एक साथ मिलकर रजवाडेको विध्वंस किया था, उस समय एकमात्र कोटेराज्यके ही उत्पन्न हुए अन्नसे समस्त रजवाडों और उक्तदलने जीवधारण किया था, उस समय धान्यका मूल्य मानी प्रति ५५ रुपये था। जालिमसिंहने धान्यको वेचकर एक करोड रुपया प्राप्त किया"।

राजराणा जालिमसिंहने कोटेराज्यमें जो अनेक प्रकारके बडे २ कर प्रचलित करके प्रजाका रुधिर सुखा दिया था, उसके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहबने अपने इतिहासमें लिखा है, कि "एकमात्र जमाके कागद पत्रोंको देखनेसे जाना जाता है, कि कोटेराज्यमें राजाको कर स्वरूपमें जो समस्त उत्पन्न हुआ द्रव्य मिलता है, उसका परिमाण केवल २५ लाख रुपया है । जालिमसिंहने कहा है कि एकमात्र किसानोंको उन्होंने अपने व्यक्तिगत सम्पत्तिस्वरूपसे जो सब जमीन दे दी थी उससे उनको उक्त परिमित रुपया मिलता था"।

"संवत् १८६५ में जालिमसिंहने कोटेराज्यसे जितने धान्य रवाना होते थे, उसके ऊपर एक नवीन कर प्रचलित किया, प्रत्येक मानी धान्यके ऊपर डेढ रुपया कर नियत हुआ । इसी करसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रबल हो गये। पहिले पहल यह शस्योत्पादनकारियोंके ऊपर ही स्थापित हुआ था, परन्तु अप्रत्यक्षमें यह मोल लेनेवालोंके ऊपर भी जाकर पडा। शुल्कसंग्राहकोंके प्रधान अध्यक्षने इस करके प्रचलित होनेसे महासंतुष्ट हो जालिमसिंहको यह परामर्श दिया कि किसान और क्रेता दोनोंके ऊपर ही यह कर स्थापित करना कर्त्तव्य है, तथा जालिमसिंहने शीघ्र ही उस प्रस्तावके अनुसार कार्य करना प्रारम्भ किया । इससे एक साथ ही दश लाख रुपयेकी प्राप्ति हुई। उस नवीन करके प्रचलित होनेसे एक अनाजके ऊपर अनेक स्थानोंमें तीन चार पांच बार तक कर लिया जाता था और तब वह क्रेताके घर लाया जाता था। यद्यपि कोटेराज्यमें अधिकतासे धान्य उत्पन्न होता था तथापि इस करकी अधिकतासे ही प्रजा बड कष्टसे अपना समय व्यतीत करती थी, कोटेराज्यके

सामन्त उनके अधीनके मनुष्य वा किसान किसीको भी कर देनेसे छुटकारा नहीं मिला था प्रधान शुल्कसंग्राहकोंने अपनी २ इच्छानुसार प्रत्येकके ऊपर ही वह कर नियत कर दिया, और उस करके नियमके विरुद्धमें किसीकी कुछ भी आपत्तिको न सुना। जिस समय बृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेराज्यके मैत्री बन्धनकी सूचना हुई थी उसी समय इस करके ग्रहण करनेसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रबल हो गये थ, उन कर संग्राहकोंने जालिमसिंहकी आज्ञा उल्लंघन करके लोगोंको इतना उत्पीडित किया था कि जालिमसिंह यदि किसी समय भी कहते कि "एक लाख रुपया चाहिये" करसंग्राहक उसी समय कहते जो आज्ञा और तुरन्त ही उसे संग्रह कर देते। करसंग्राहक उक्त आज्ञाको पाते ही उसी समय बाकी करकी एक सूची बनाकर शीघ्र ही क्या मित्र, क्या शत्रु, क्या राजकर्मचारी, क्या महाजन, क्या वैश्य, क्या व्यवसायी, क्या किसान प्रत्येकके समीप ही एक आज्ञापत्र भेज देते थे। कोई भी उस आज्ञाके विरुद्धमें आपत्ति नहीं करता था, कारण कि आपत्ति करनेपर यही नहीं कि वह ग्राह्य नहीं होता वरन् उनका विशेष अनिष्ट होता था। किसीको भी उस करके देनेसे छुटकारा नहीं मिलता था, अधिक क्या कहैं जालिमसिंहके प्राचीन मित्र पंडित बेलालने उस सूचीके अनुसार एक समयमें २५ लाख रुपया, एक विश्वासी सामन्तके अधीनवाले एक मनुष्यने पाँच हजार रुपया, उनके वैदेशिक मन्त्रीने पांच हजार रुपया और नगरके महाजनोंमेंसे बहुतोंने प्रत्येकको चार पांच और दश लाख रुपया दिया था, इसी करके ग्रहण करनेसे इस प्रकारके उपद्रव और अत्याचार प्रबल होगये, प्रत्येक मनुष्य ही जालिमसिंहके ऊपर इतने विरक्त हुए कि जिससे जालिमसिंहके शासनके लोप हानेकी संभावना हो गई; कारण कि सर्वसाधारण प्रजाके असंतोष प्रकाश करते ही कोटेके महाराज अत्यन्त विरक्त होकर जालिमसिंहके अधीनमें अपनी रक्षा न करके स्वाधीनता उपार्जन करनेके लिये व्याकुल होगये"।

इतिहास वेत्ता टाड साहबने लिखा है कि "जिस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ रजवाडेका राजनैतिक सम्बन्ध बंधन उपस्थित हुआ था उस समय गवर्नमेण्टके मूलशासनकी नीतिके उद्देशके अनुसार जब मत प्रचलित हुआ तब क्या प्रजा, क्या शासक सभीको अंग्रेज गवर्नमेण्टने समान दृष्टिसे देखा था। उस समय बुद्धिमान् जालिमसिंह भलीभांतिसे समझ गये कि अब प्रजाके ऊपर अत्याचार न करके प्रजाकी अवस्थाको सुधारना कर्त्तव्य है, यदि ऐसा न किया जायगा तो अंग्रेज गवर्नमेण्ट विरक्त हो जायगी इस कारण उन्होंने उस रक्तशोषक करको एकबार ही घटाकर किसान विक्रेता और क्रेताओंके ऊपर उचित कर लेनेकी व्यवस्था करदी, परन्तु तब भी उक्त करसे पांच लाख रुपये संग्रह होते थ"।

"इस प्रकार जालिमसिंहकी कठोर रीतिसे क्षेत्रोंसे सबमें पन्द्रह लाख रुपया लिया जाता था इसके अतिरिक्त उसके कुटुम्बी स्वजन और कोटेराज्यके क्षेत्रोंसे और भी पांच लाख रुपयेकी आमदनी होती थी, और उसीसे उनके घरका खर्चा चलता था"।

सत्यप्रिय टाड साहब इस स्थानपर स्वदेशी किसानोंको सम्बोधन कर कहते हैं- "विलायतके बहुतसी सामर्थ्यवाले एवं अभिज्ञ किसानोंने जालिमसिंहके चौवालीस वर्ष-तक इस कठोर और राजनैतिक उपद्रवोंके समयमें कृषिकार्यको सावधानीसे करते हुए देखकर क्या विचार किया होगा? जालिमसिंहकी प्रबल मानसिक शक्तिके सम्बन्धमें कि जिस जालिमने अस्सी वर्षकी अवस्थामें भी एकाक्ष और गति शक्ति हीन होकर उक्तरीतिसे सावधानता की थी उसके सम्बन्धमें वे क्या मन्तव्य प्रकाश करेंगे? कि जालिमसिंहकी स्मरणशक्ति प्रस्तरांकितके समान उनके चित्तपर अंकित है जिसने राज्यके प्रत्येक प्रान्तके प्रत्येक कृषिक्षेत्र, प्रत्येक शस्याधार गोलेकी अवस्था स्मृति दर्पणमें नियत प्रतिबिम्बित कर रक्खी थी, जिसको किसी विषयमें भी भ्रम नहीं होता था। और जो उस वृद्ध अवस्थामें भी नेत्र हीन होकर राज्यके जिस प्रान्तके जिस क्षेत्रमें जिस प्रकारका धान्य उत्पन्न होता है उसे अनायास ही स्थिर कर सकता था, उसी जालिमसिंहके सम्बन्धमें उन्होंने क्या कहा"?

"यही नहीं कि एकमात्र कोटेराज्यके कृषिकार्यमें ही जालिमसिंहका समस्त समय व्यतीत होता हो, वरन् उनके कार्योंमेंसे यह उनका एक अंशमात्र था। उन्होंने जिस भावसे राज्यशासन किया उसमें प्रबल शक्ति और विशेष सावधानताका प्रयोजन था, बीस हजार सेनाकी सृष्टि, उसका पालन और शिक्षादान तथा किलोंकी सावधानी अस्त्रादिका संग्रह एवं निर्माण और समर विभागके प्रत्येक विषयमें दृष्टि रखना इसमें शासनकर्ताका समस्त समय लगता था, राज्यके कई सौ पुलिस कर्मचारियोंके निकटसे प्रतिदिन प्रयोजनीय गुप्त और सत्य सम्वाद संग्रह करना एवं राज्यके प्रत्येक जिलेके एक शासनकर्ताके निकटसे आये हुए वृत्तान्तको सुनना और उसके सम्बन्धमें आज्ञा देना, इस विचारमें अन्य किसी शासनकर्ताके विचारकी शक्ति अवश्य विकृत होजाती। परन्तु इस समय जाना जाता है कि उक्त कठोर श्रमसाध्य कार्य करनेके अतिरिक्त जालिम-सिंह वाणिज्यकार्य भी करते थे, महाजनी कार्यमें लिप्त थे और शिल्प कौशलका उत्साह दिलाते थे, विदेशी वैद्योंको भी उत्साह देते थे, और क्या कहैं अनेक प्रकारके फलवान वृक्षोंकी भी खेती करते थे। तब उनके साथ किसकी तुलना की जा सकती है? साहित्य, न्याय, दर्शन और ऐतिहासिक पुराणोंके सुननेमें वह अपना समय व्यतीत करते थे। उन्होंने जिस राज्यके अन्नका भाव जैसा देखा अपने यहाँके अनुसार निकटके बाजारोंका भी कर लिया उससे केवल कोटेके धान्यका मूल्य उनके द्वारा घटता बढता था, यह नहीं वरन् समापक राज्योंमें धान्यका मूल्य भी इसी कारणसे घट बढ जाता था। गवर्नमेण्टने जिस समय समस्त मालवादेशमें अफीमकी खेतीकी सब पैदावारको अपने अधीन कर लिया उस समय जालिमसिंहने भी उस अफीमके क्रय विक्रय कार्यमें लिप्त होकर अपनी इच्छानुसार इसका मूल्य घटा बढा दिया था। कोटेराज्यके अनेक स्थानोंमें उन्होंने बहुतसे बाग बनाये थे, और उन बगीचोंके अनेक भाँतिके फल मूल कोटेके अनेक स्थानोंके बाजारोंमें बेचे जाते थे

और उनके रक्षित वनसे काष्ठ संग्रह होता था, उसको सर्वसाधारण प्रजाके ईंधनके लिये बेचा जाता था "।

साधु टाड साहबने जालिमसिंहके द्वारा स्थापित अन्यान्य करके संम्बन्धमें लिखा है कि " जालिमसिंहने इस भावसे कर स्थापन किया था कि किसी विषयमें भी कोई छुटकारा नहीं पा सकता था, जो कोई विधवा पुनर्विवाह करेगी उसको कर देना होगा। जो संन्यासी भिक्षा वृत्तिसे जीवन व्यतीत करते हैं जालिमसिंहने उनको भी अपने कर लेनेसे न छोडा। गिरि कन्दरामें अथवा जिस २ स्थानमें संन्यासी बास करते थे, जालिमसिंहके मनुष्य प्रत्येक वर्षमें वहाँ जाकर उनसे यह पूछा करते कि भिक्षावृत्ति करनेसे तुम्हें कितना धन प्राप्त हुआ है, उसका यथार्थ पता लगाकर उस पर कर स्थापित कर आते। एक वर्ष तक संन्यासियोंके ऊपर कर प्रचलित रहा, अंतमें मित्रोंके कहने सुननेसे जालिमसिंहने उस करको उठा दिया, जालिमसिंहने " झाडूबराके " अर्थात् सम्मार्जनीके ऊपर भी कर स्थापित करनेमें लाज न मानी थी। कोटेके भाटोंने जालिमसिंहके ऊपर व्यङ्ग व्यञ्जक अनेक गीत बनाये, जालिमसिंहके पुत्र माधोसिंहने अंतमें इस घृणित करको उठा दिया "।

रजवाडेके प्रत्येक राजा, प्रत्येक सामन्त अधिक क्या प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक मनुष्य ही भाट चारण और कवियोंका विशेष सम्मान करते थे। और विवाह श्राद्ध इत्यादिके समयमें उनको यथाशक्ति धन देते थे। वे उस धनको पाकर मनमोहनी कविता बनाकर दाताका यश गान करते थे, वह सब गीत वंशानुक्रमसे रजवाडेके अनेक स्थानोंमें गाये जाते थे। टाड साहबने कहा कि जालिमसिंह भाट चारण वा कवि श्रेणीके प्रियपात्र नहीं थे। कवि भी जालिमसिंहकी प्रशंसा कीर्तन नहीं करते थे। टाड साहबने एक उदाहरण दिया है कि "एक दिन एक प्रसिद्ध कविने जालिमसिंहके सामने प्रशंसा व्यंजक गीत गाया। परन्तु जालिमसिंहने उससे सन्तोष न प्रकाश करके आग्रहके साथ कहा कि कविलोग केवल मिथ्या वर्णन करते हैं, यदि सत्य वर्णन करते तो मैं आनन्दके साथ उसको सुननेकी इच्छा करता। " कविने यह सुनकर उसी समय उत्तर दिया कि " बाजारमें सत्यका आदर बहुत थोडा है, मैं कितनी ही सत्य विवरण पूर्ण कविता जानता हूँ, उसको भी सुनाता हूँ। " कविने अन्तमें जालिमसिंहके समीप अभय और क्षमाकी प्रार्थना करके जालिमसिंहके चरित्रोंके सम्बन्धमें इस प्रकार सत्य पूर्ण विषमय तूलिका चित्रित कविताकी आवृत्ति की कि जालिमसिंहने इससे महाक्रोधित हो उस कविके समस्त पैतृक भूसम्प्रदायको जप्त कर लिया, और उसी दिनसे किसी कविको फिर अपने यहां न आने दिया "।

राजस्थानके राजा और शासनकर्तागण हिन्दूधर्मके अनुसार ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति अधिक दया दिखाना और ब्राह्मणके किसी अपराधसे अपराधी होनेपर उसको अनेक परिमाणसे बहुत थोडा दंड देते थे। परन्तु साधु टाड साहब लिखते हैं, " यद्यपि जालिमसिंह हिन्दूधर्मानुमोदित प्रत्येक कार्य और

प्रत्येक अनुष्ठान करते और प्रत्येक कर्म विधानको ग्राह्य करके चलते परन्तु तौ भी उन्होंने ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति राजनैतिक व्यापारमें कभी भी दया प्रकाश नहीं किया। जो कोई मनुष्य ब्राह्मण हो अथवा अन्य वर्णका मनुष्य हो राजाके विरुद्धमें यदि अपराध करै तो किसी प्रकारसे भी उसको छुटकारा नहीं मिल सकता था, एवं वह ब्राह्मण क्षत्रिय वाणिज्य व्यवसायमें नियुक्त होता तो ब्राह्मण बताकर उसके ऊपर सर्वसाधारणके समान शुल्क स्थापनसे क्षमा नहीं होता था"।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ वर्तमान अध्याय का उपसंहार किया है, "राजप्रतिनिधि जालिमसिंहके कोटे राज्यके आभ्यन्तरिक शासन कि व्यवस्था ही इसका संक्षिप्त चित्र थी। जिस समय जालिमसिंहको कोटेके शासनका भार मिला था, उस समय कोटेराज्यकी सीमा पूर्वप्रान्तसे कैलवाडे तक विस्तारित थी, परन्तु उन्होंने पीछे उसी सीमाको पहाडी उपत्यका तक विस्तीर्ण कर लिया, और जो दुर्ग श्रेणी उस सीमान्तसे रक्षित थी उसको महाराष्ट्रोंके बलसे उद्धार करके कोटेमें मिला लिया था। उन्होंने राज्यभार पाते ही देखा कि राज्यका खजाना शून्य है और राज्यपर ३२ लाख रुपया ऋण है दूसरी ओर उन्होंने देखा कि बैदेशिक आक्रमणसे राजरक्षाके पक्षमें केवल कितने ही टूटे हुए किले और सामन्तोंके अधीनमें बेकावू वीर सेना है। तब बहुतसा रुपया लगाकर टूट हुए किलोंका फिरसे संस्कार करके कितनी ही तोपोंसे उसको सजा दिया। उन्होंने चार हजार अश्वारोही सेनाके स्थानमें बीस हजार सेना संग्रह करके उसको शिक्षित किया था; और १०० तोपें संग्रह की थीं। इसके अतिरिक्त सामन्तोंके अधीनमें बहुतसी सेना थी"।

यद्यपि जालिमसिंह हाडाजातीमें एक विख्यात पुरुष हैं, परन्तु जैसा अन्न कोटेमें पैदा होता है जो उनकी आराजीमें है उससे कोई सूरत उत्तमताकी दृष्टि नहीं आती और न सेना ही वैसी सजधजकी गिनी जाती है, कारण कि उनके हृदयके भावमें विकार उत्पन्न हो गया है। हिस्सेवालोंका भाग नहीं मिलता है। जबतक यथायोग्य विभाग उन भागवालोंको न दिया जायगा तबतक जो यह सब प्रबन्ध दृष्टि गोचर होता है यह सब एस मूलपर नियत हुआ है कि जिससे आगेके विशेषमें विपत्तिकी आशंका है।

पञ्चम अध्याय ५.

जालिमसिंहकी राजनैतिक प्रणाली–उनकी वैदेशिक राजनीति–रजवाडेमें उनकी प्रबलता–अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ उनका पहिला सम्बन्ध–मानसनका भागना–कोयेलाके सामंतोंकी महावीरता दिखाना–उनका प्राण त्यागना–जालिमसिंहका अंगरेज गवर्नमेण्टकी सहायता करना–हुलकरका क्रोध--हुलकरका कोटेमें आना–राजधानीपर आक्रमण का उद्योग–जालिमसिंहके साथ हुलकरकी मुलाकात होना–दोनोंमें संधि होना–जालिमसिंहका विदेशीय राजाओंकी सभामें दूत नियुक्त करना–अमीरखां और पिण्डारे नेताओंके साथ जालिमसिंहका सद्भाव–जालिमसिंहकी गुप्तराजनीति–महाराव राजा उमेदसिंहका चरित्र–महारावके साथ जालिमसिंहका आचरण–पठान दलेलखां–झालरा पाटन नगरका स्थापन–मेहराबखां।

इतिहासको जाननेवाले टाडने कहा कि जालिमसिंह बडे चतुर और परम राजनीतिके जाननेवाले थे। यदि जालिमसिंह विलायतमें पैदा होते तो अपनी राजनैतिक कार्यावलीसे अक्षय कीर्ति पाते । वास्तवमें टाड साहबकी यह कहावत ठीक है क्योंकि, टाड साहब जालिमसिंहकी राजनैतिक ऐतिहासिक घटनाओंको लिख गये हैं । वह इतिहास दो हिस्सोंमें बटा हुआ है,पहिला वैदेशिक और दूसरा आभ्यन्तरिक । राजनीतिके सुभीतेके लिये ही टाड साहबने जालिमसिंहके राजनैतिक अभिनयको दो भागोंमें बांटा है।

जालिमसिंहकी शासन–प्रणाली प्रायः भेदनीति पर स्थिर थी, वह अपने अधीनस्थ दरबारियों या राज कर्मचारियोंको इस बातका अवसर नहीं देते थे कि वे एक दूसरेसे मिलकर किसी प्रकार शक्तिसम्पन्न हो सकें । जालिमसिंह इस तरहसे स्वयं प्रत्येक कर्मचारी पर अपना ही प्रभुत्व रखते थे और इसीसे उनमें यह सामर्थ्य थी कि यावत् अनुगत लोगोंको अपने पक्षमें रखते और लकडीके बल बन्दर नचाते थे।

कोटाराज्य भारतके ठीक हृदय स्थानमें स्थापित है । कई वर्षसे जबतक इस कोटेके चारोंओर राज्यमें अत्याचार उत्पीडन, विद्रोह, राजशक्तिका नाश एवं प्रजाशक्तिका विप्लव होता था। यद्यपि उन सब देशोंके समान इस कोटेराज्यकी धनसम्पत्तिसे आकृष्ट होकर महाराष्ट्र एवं पिंडारे इत्यादि लूटनेवाले व्यवसायी अत्याचारी दलोंने कोटेको लूटनेका उद्योग किया । परन्तु जालिमसिंहने अपने विरोधित उग्र तेजसे इस प्रकार शासनदण्ड चलाया कि उन्होंने उसीसे अर्द्धशताब्दीतक सबको भय उत्पन्न करनेवाली उन मरहठोंकी उस आशाको व्यर्थ कर दिया । इस कारण उस अर्द्धशताब्दीमें कोटेराज्यमें कोई डांकू चोर लूटनेवाला साहसके साथ प्रवेश न कर सका । यद्यपि दीर्घकालसे अबतक राजपूतानेके समस्त राज्योंमें राजनैतिक विप्लव, राजनैतिक परिवर्त्तन, सेना विनाश, क्रमानुसार शासनशक्तिका लोप, दुर्भिक्ष, महामारी और नैतिक बल क्षयके

साथ शोचनीयकाण्ड उपस्थित हुए और रजवाडा विध्वंस हुआ, परन्तु उस दीर्घ-कालमें ही एकमात्र जालिमसिंहने पचीस वर्षकी अवस्थासे प्रायः नव्वे वर्षकी अवस्थातक अपनी विज्ञता, वीरता, उद्यम और विवेचना शक्तिसे अपने हाथमें समर्पित हुई राज्यनौकाको इस भयंकर विपद संकुल घोर राजनैतिक तरंगावर्तमें जरा भी न डग मगाने दिया ।

साधु टाड महोदय लिखते हैं " कि रजवाडेमें ऐसा कोई भी राजा नहीं था, अधिक क्या लुटेरोंमें भी इस प्रकारका नेता नहीं था जिसने कि किसी न किसी प्रकारसे जालिमसिंहके परामर्शके अनुसार और मन्तव्यके अनुसार कार्य न किया हो । प्रत्येक राजाकी सभामें इनका एक २ दूत रहता था । जहां इनके किसी प्रकारके स्वार्थ साधन की सम्भावना होती, उसी स्थानपर वह किसी न किसी प्रकारसे उस स्वार्थको सिद्धकर लेते । दुर्बल शून्य सम्मानकी अभिलाषा करनेवाला जो कोई मनुष्य भी होता उसको यह तुरन्त ही अपने पक्षमें मिला लेते, इन्होंने राजसिंहासन पर बैठ हुए मनुष्यसे लेकर पिंडारी दलके नेतातक सभीके साथ पिता, चचा वा भ्राताका कोई न कोई सम्बन्ध बन्धन आबद्ध कर लिया था । सारांश यह है कि अपने राजनैतिक उद्देशको साधन करनेके लिये इन्होंने अनेक उपाय किये थे "

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिंह एक क्रूर स्वभाव अत्यन्त क्रोधी और अहंकारी थे, परन्तु एक २ समयमें कार्यगतिसे इन्होंने यथेष्ट अवनत भाव भी प्रकाश किया था । वह जहां देखते कि विनीतभावके विना प्रकाश हुए कार्यके उद्धार होनेका उपाय नहीं है उसी स्थान पर अपनी पदमर्यादा और सामर्थ्यके विस्तारित होनेसे वह उसमें विनीतभाव प्रकाश करते और क्या कहें सामान्य पिंडारी इत्यादिके नेताके निकट भी समय २ पर वह अत्यन्त विनीतभावसे पत्र लिखकर नम्रताके साथ बातचीत करके कार्य कर लेते और यह जहां देखते कि यहां युद्ध होनेके अतिरिक्त इस विवादके विचार होनेका उपाय नहीं है, उस स्थान पर जो वीर अथवा जो कोई सामर्थ्यवान् राजा होता उसीके साथ युद्ध करनेको आगे बढते थे । रजवाडेके चारोंओर जब अशान्ति और समर इत्यादि होते रहते थे उस समय यह कोटेराज्यके शासन करनेमें नियुक्त हुए, इस कारण उनको उस समय अन्यान्य विवाद मान राजाओंके साथ शीघ्र ही राजनैतिक चातुरीमूलक व्यवहार करना होता था । सन् १८०६ एवं १८०७ ईसवीमें जिस समय जोधपुरके साथ समरानल प्रज्वलित हुआ उस समय तीन अन्य राजाओंने इनसे सहायता मांगी, इसी कारण तीनोंको सन्तुष्ट करना एकबार ही असम्भव हो गया । इन्होंने तीनोके पास दूत भेजकर तीनों जनोंकी ओरसे विवादकी मीमांसा होनेकी चेष्टा की, और किसीको भी किसी प्रकारसे सेनाकी सहायता न दी, यह सामान्य नीतिज्ञताका परिचय नहीं है ।

जालिमसिंहके वैदेशिक राजनीतिके इतिहासके संग्रहको सब भांति निष्फल जानकर साधु टाडने उससे एकबार ही शान्त हो, सन् १८०३ । ४ ईसवीमें बृटिश

गवर्नमेण्टके साथ उनको जो पहिला साक्षात् सम्बन्ध स्थापित हुआ था, उसीको वर्णन किया है। इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि "हुलकरको आक्रमण करनेके लिये जिस समय जनरल मानसन एक बृटिश सेनादलको साथ लेकर मध्य भारतवर्षकी ओरको गये, उस समय जालिमसिंह अंग्रेजोंकी सामर्थ्यको अजेय जानकर उस सेनाके कोटेराज्यमें आते ही इन्होंने उस सेनादलके आहार्य सरवराह और अनुचरोंको संग्रह करनेमें कुछ भी विलम्ब नहीं किया। परन्तु जिस समय वह बृटिश सेनादल दुर्भाग्य-वश समरमें परास्त होकर भाग गया, उस समय बृटिश सेनापति जनरल मानसनने पूर्वमतसे कोटेराज्यमें होकर जानेके लिये प्रार्थना की, जालिमसिंहने निम्नलिखित उक्तिसे एकबार ही असम्मति प्रकाश की। उन्होंने कहा कि "हमारे शान्तिपूर्णराज्यमें शांति संभोगकारी प्रजामें आप अपनी छिन्नभिन्न सेनाको लावेंगे तो अराजकता उपस्थित हो जायगी। आप अपनी सेनाको हमारे राज्यकी सीमामें ठहराइये, मैं सब रसद संग्रह कर दूंगा और मेरी जितनी सेना है, सब सेनाको लेकर आपको आपके शत्रुदलमेंसे ले जाऊँगा और आपका शत्रुदल यदि मेरे ऊपर आक्रमण करेगा तो मैं इकला ही उस आक्र-मणको सहलूंगा।" मानसनने जालिमसिंहके कथनानुसार कार्य नहीं किया, वह बून्दी और जयपुरराज्यमें होकर चले गये, किन्तु अन्तमें उस समस्त सेनामें एकमात्र इकले ही बचकर जनरल लेकके पास गये, और अपनी शोचनीय पराजयका समाचार कहा। अपमानित, निगृहीत, पराजित और पलायित जनरल मानसनने अपने उपरितन प्रभुके निकट उस घोर कलंकदायक पराजयका समाचार देनेके समय अपने अपराधको थोडा करनेके लिये अन्य मनुष्योंको भी उसी अपराधसे अपराधी और उस भागनेका कारण स्वरूप बताकर घोषणा की। यह कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। जनरल मानसनने जालिमसिंहके विरुद्धमें दृढ़ अनुयोग उपस्थित करके उनके शिरपर भारी कलंक लगानेकी चेष्टा करके कहा कि जालिमसिंहने शत्रुदलके साथ षड्यंत्र करके हमारे भागनेके समयमें कुछ भी सहायता न की? दुःखका विषय है कि बृटिश कर्तृपक्ष गणने दीर्घकालतक मानसनकी इस उक्तिको सत्य मात्र माना था। परन्तु जालिमसिंह तो सम्पूर्ण निर्दोषी थे, उन्होंने जनरल मानसनकी प्राण रक्षाके लिये विशेष चेष्टा की थी। उनकी ही आज्ञा-नुसार मुकुन्दराकी घाटीसे कोयेलाके सामन्त लखन महाराष्ट्र दलकी गतिको रोकनेके लिये जाकर सेनासहित मारे गये, उनका प्रत्यक्ष उदाहरण आजतक विराजमान है"।

साधु टाड साहबने पीछे लिखा है कि "जनरल मानसनके भागनेकी सुविधाके लिये जो हाडा सेनाने महाराष्ट्रदलके साथ युद्ध किया, कोयेलाके सामन्तके अतिरिक्त अन्य अनेक सेनाने भी उस समरमें निहत होकर बखशी अर्थात् प्रधान सेनानायक उस युद्धमें विपक्षी महाराष्ट्रोंके द्वारा बंदी हो गये, जालिमसिंहके अधीनकी उस सेनाने बृटिश गवर्नमेण्टकी उक्त प्रकारसे सहायता की थी, इसीसे महाराष्ट्रनेता हुलकरने उस बखसीके निकटसे दश लाख रुपयेका एक खत लिखकर बखशीको मुक्ति देकर कहा कि शीघ्र ही दश लाख रुपया न देनेसे समस्त कोटे देशको तलवार और तोपोंके मुखसे विध्वंस कर दूंगा। पराजित बखशीने जालिमसिंहके समीप जाकर जब

उक्त दश लाख रुपयेके खतका उल्लेख किया तब उन्होंने उसको सामनेसे हटाकर कहा, कि "तुम जो दश लाख रुपयेका खत लिखकर दे आये हो, उसके हम देनदार नहीं हैं।" जालिमसिंहने उसके पीछे वखशीको फिर हुलकरके समीप भेजनेके लिये कहा वह जिस प्रकारसे कर सके उस प्रकारसे वखशीके पाससे दश लाख रुपया लेकर उनको छोड दे। हुलकर जालिमसिंहके उस व्यवहारसे उस समय केवल भय दिखाकर ही शान्त न हुआ वरन्, पीछे सुभीता होनेपर कोटराज्यमें जाकर उसने राजधानीके बहुत पास ही डेरे डाल दिये"।

वीर तेजस्वी जालिमसिंह हुलकरको उपस्थित देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, उन्होंने नगरकी दीवारोंके ऊपर समस्त तोपें सजाकर सेनाको सजानेकी आज्ञा दी। उन तोपोंकी श्रेणीके इस भावसे सजते ही गोलोंकी वर्षा होनी आरंभ हो गई, नगरके वाहर स्थित समतलक्षेत्रके समस्त आवास ही एकबार समभूमि हो जाते। उधर जालिमसिंहकी गुप्त आज्ञाके अनुसार पहाडी भी हुलकरके डेरोंके पिछले भागपर आक्रमण करने और समस्त द्रव्य लूटने तथा रसद प्राप्तिमें व्याघात देनेके लिये तैयार हुए। हुलकरने डेरोंको स्थापित करके वखशीके द्वारा हस्ताक्षर युक्त उस दश लाख रुपयक खतको फिर जालिमसिंहके पास भेज दिया, जालिमसिंहने शीघ्र ही उस खतके लेखानुसार रुपया देनेमें असम्मति प्रगट की। तब समरका होना अनिवार्य विचारा गया, उस समय दोनों ओरके मंत्रियोंने यत्नवान होकर परस्परमें साक्षात् करनेके लिये प्रस्ताव उपस्थित किया। परन्तु जालिमसिंह महाराष्ट्रनेता हुलकरका सब प्रकारसे अविश्वास करते थे, इस कारण उन्होंने कहला भेजा कि अपनी अभिलाषित व्यवस्थाके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे वह साक्षात् करनेके लिये तैयार नहीं हैं। जालिमसिंहकी वह मनोगत व्यवस्था अत्यन्त विचित्र थी। उन्होंने कहला भेजा कि युद्ध वा संधि सम्बधी प्रस्ताव चम्बलनदीके ऊपर नौकाके वक्षमें उपस्थित करने होंगे, हुलकर इसीमें सम्मत हुए। जालिमसिंह उक्त उद्देशसे दो नौका सजाकर प्रत्येक खानेमें २० अस्त्रधारी सैनिक रखकर आप स्वयं एक छोटी नौकामें चढ़कर चम्बलनदीके मध्यस्थलमें जा पहुँचे। हुलकर भी शीघ्र ही अपनी कितनी ही शरीर रक्षक सेनाके साथ नदीके किनारे आकर एक नौका पर चढ़कर उस नदीके मध्यस्थानमें जालिमसिंहके समीप जा पहुँचा। शीघतासे नदीके ऊपर सुन्दर गलीचा बिछाया गया, वह दोनों अद्भुत पुरुष जिनमें केवल एक आँख थी असीम सामर्थ्यवान् राजनीतिज्ञ शान्तिस्थापन करनेके लिये प्रस्तावका आन्दोलन करने लगे। हुलकरने जालिमसिंहको 'काका' और जालिमने हुलकरको 'भ्रातृपुत्र' कहकर पुकारा। परन्तु दोनोंके पक्षमें तटस्थ सेनाका दल इस प्रकारके भावसे तैयार था कि जो कोई एक ओरसे विश्वासघातकताका

(१) कर्नल टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि इस अभागे वखशीने अपमानसे अत्यन्त दुःखी होकर विषपान करके आत्महत्या की, ऐसा अनुमान होता है।

(२) टाड साहबने यहां जालिमसिंहको अंधा और हुलकरको एकाक्ष समझकर दोनोंमें एक आंखवाला कहा है।

लक्षण देखता तो तुरन्त ही आक्रमण करनेके लिये उद्यत होता। हुलकर इस समयमें जितनी जल्दी कोटेको त्याग देगा उसके लिये उतना ही सुभीता होगा, इस कारण जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार शेषमें हुलकरको तीन लाख रुपया लेकर जाना पडा। बुद्धिमान् जालिमसिंहने इस प्रकारसे तीन लाख रुपया देकर हुलकरके आक्रमणके हाथ से राज्यकी रक्षा कर ली।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि जालिमसिंहका समस्त समय कोटेके शासन कार्यमें व्यतीत होता था, उनको प्रतिवासी राजाओंके राज्यकी ओर दृष्टि रखनेका अवसर नहीं मिलता था, यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है, परन्तु उन्होंने कोटेराज्यके प्रत्यक्ष स्वार्थ साधनके लिये हुलकर और सेन्धियाके अधिकारी देश जो कोटेकी दक्षिण सीमाके साथ लगे हुए थे, उन देशोंमें कृषिकार्यसे विशेष प्रतियोगिता दिखाई थी। जालिमसिंहने सेन्धियासे पाँच महल नामक देश और हुलकरके निकटसे डिग पिडावा इत्यादि चार जिले जमामें ग्रहण किये। जिस समय बृटिश गवर्नमेण्टने हुलकर और सेन्धियाके साथ युद्धमें जय प्राप्त की उस समय बृटिश गवर्नमेण्टने उक्त देशको एकबार ही कोटेके अधीश्वरको दे दिया। जालिमसिंह उक्त दोनों जने महाराष्ट्र नेताओंके साथ सद्भाव स्थापन और स्वार्थ सम्बन्ध स्थापन करके ही शान्त न हुए, वरन् उन दोनों महाराष्ट्र नेताओंके विश्वासी मंत्रियोंके प्रति गुप्तभावसे तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उन्होंने एक दूत नियुक्त कर दिया था। उस दूतने मंत्रियोंके प्रत्येक कार्यको गुप्तभावसे देखकर जालिमसिंहसे कह दिया। इधर जालिमसिंहने भी कितने ही प्रथम श्रेणीके नीतिज्ञ महाराष्ट्र पंडितोंको अपने यहाँ नियुक्त कर रक्खा था, और उनके द्वारा ही महाराष्ट्र जातिके जिस किसी राजनैतिक अनुष्ठानको वह जान सकते थे। जो जैसा मनुष्य होता, जालिमसिंह उसके साथ उसी प्रकारका व्यवहार करते थे। विख्यात अमीरखांके साथ जालिमसिंहने विशेष सद्भाव स्थापित करके उसको अपने हस्तगत कर रक्खा था। लुटेरा अमीरखाँ भी आवश्यकतानुसार जालिमसिंहके पाससे समरके उपकरण ले लेता था, विशेष करके अमीरखाँके रहनेके लिये जालिमसिंहने शेरगढ नामक किला दे दिया था। अमीरखाँ सन्तुष्ट चित्त होकर जालिमसिंहका शुभ साधन करता था, जालिमसिंह समझ गये थे कि अमीरखाँको बिना हस्तगत किये उससे विशेष अनिष्ट होनेकी संभावना थी, इस कारण उन्होंने उसको हस्तगत किया था, जालिमसिंहके हस्तगत हुआ मनुष्य कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्ट नहीं कर सका।

पिंडारी नामक लुटेरोंका दल भी चतुर जालिमसिंहकी ओर विशेष सद्भाव प्रकाशित करता था। प्रधान २ पिंडारे नेताओंके प्रति सम्मान दिखानेसे वे कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्टसाधन नहीं करते थे। पिंडारियोंके अनेक नेता जालिमसिंहसे भूवृत्ति पाकर कोटेमें निवास करते थे, इन पिंडारियोंके साथ जालिमसिंहका यहांतक सद्भाव स्थापित हुआ था, कि सन् १८०७ ईसवीमें जिस समय सेंधियाने विख्यात पिंडारी नेता करीमखाँको बंदी करके ग्वालियरके किलेकी रक्षा की, उस समय जालिमसिंह उस करीमखाँकी

मुक्तिके लिये केवल बहुतसे रुपये देकर ही शांत नहीं हुए थे, वरन् करीमखाँके भविष्यत् सच्चरित्रताके लिये वह उसके साक्षी भी हुए। यद्यपि उनके साक्षी होनेके समयमें उनकी अविवेचकताने प्रकाश पाया परन्तु उसीसे सेंन्धियाने जो यथेच्छाचार किये थे उसका फल उसने पाया।

शरणागतका प्रतिपालन करना राजपूत जातिका परम धर्म है। अधिक क्या शत्रुके भी शरण आनेपर राजपूत जाति तन मन धनसे उसको आश्रय देकर उसकी रक्षा करती थी। अन्यान्य राज्योंके प्रधान २ सामन्त अथवा माननीय मनुष्य भी विपत्तिमें पडकर कोटेमें आय जालिमसिंहके शरणागत होकर आश्रय लेते थे। जालिमसिंह किसी प्रकारसे भी आश्रय देकर शान्त नहीं होते थे। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंह अपनी सामर्थ्यसे भी परे शरणागतका प्रतिपालन कर उसको आश्रय देते थे। मारवाड और मेवाडके बहुतसे सामन्त उसी राज्यके राजकोटमें पडकर जालिमके शरणागत हुए, जालिमसिंहने उनको इस प्रकारसे भूवृत्ति दान की कि वह सामन्त अपने २ देशमें जितनी भूवृत्तिको भोग करते थे, वह उसकी अपेक्षा समधिक थी। जिस जातिमें शरणगतका प्रतिपालन करना तथा आश्रय देना महान् धर्म और पुण्यदायक विचारा जाता था, उस जातिमें जालिमसिंहके इस व्यवहारसे वह जितने अधिक प्रशंसित होंगे, इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। यही नहीं था कि जालिमसिंह उन शरणागततोंको केवल अभय देकर ही ग्रहण करते हों वरन् वह अभयप्रार्थियोंके साथ उनके राज्यके विवाद विसम्वादोंको भी मिटादेते थे। इसी कारणसे वह रजवाडेके सर्वसाधारण मनुष्योंमें "मध्यस्थ" और "शान्ति स्थापक" नामसे विख्यात हुए थे। सद् उपदेशके वशसे हो या किसी राजनैतिक उद्देशके अनुवर्ती होनेसे हो जालिमसिंहने उस मध्यस्थताको करके विशेष यश प्राप्त किया था। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंह कहते हैं कि "सभी मनुष्य वृद्ध जालिमसिंहके समीप विपत्तिमें पडकर गये, उनका यह विचार था कि जालिमसिंह इस सामान्य भूखंड कोटेसे सरलतापूर्वक सबकी पालना करनेमें समर्थ हैं।

इस समय जालिमसिंहके अभ्यंतरीय राजनीतिके सम्बन्धमें कुछ कहना है। जालिमसिंहके आभ्यन्तरिक शासनकी नीतिको यथास्थानमें वर्णन किया गया है, उसी शासन नीतिको पढकर हमारे पाठक अनेक प्रकारसे उनकी आभ्यन्तरीय राजनीतिका परिचय पा चुके हैं। हम यहाँतक जालिमसिंहके दीर्घ शासनके इतिहासको वर्णन करते आये हैं, उसमें एकवार भी कोटेके अधिराज महाराव उमेदसिंहके नामका उल्लेख करनेका अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इसका प्रधान कारण यह था कि यद्यपि महाराव राजा उमेदसिंह कोटेके सिंहासनपर विराजमान थे, परन्तु मूलतः जालिमसिंह सर्वमय कर्तास्वरूपसे अतीत दीर्घकालतक कोटेको शासन करते आये थे। कहा गया है कि राजा उमेदसिंह कोटेके नाममात्रके अधीश्वर थे। वह जालिमसिंहके खिलौने या साक्षी गोपालस्वरूप थे, और चतुर चूडामणि जालिमसिंह ही कोटेके अधीश्वर थे। जालिमसिंहकी आभ्यन्तरीय

राजनीतिका उल्लेख करते हुए यहांपर फिर महाराव राजा उमेदसिंहको उपस्थित करनेकी आवश्यकता होती है।

पाठक गण ! महाराव राजा गुमानसिंहने मृत्युके समय अप्राप्त व्यवहार उमेद-सिंहको कोटेके सिंहासनपर बैठाल कर जालिमसिंहको उनके अभिभावक स्वरूपसे स्थापित किया था, हम जिस समयके इतिहासको इस समय लिखते हैं, वह इसके परवर्ती अर्द्ध शताब्दीके अधिक कालकी कथा है। इस दीर्घकालके पीछे भी हम उसी महाराव राजा उमेदको उस अप्राप्त व्यवहारके समान उन जालिमसिंहके रक्षणावेक्षणपर स्थित देखते हैं। जिस दिन मृत्युशय्यापर शायित गुमानसिंहने जालिमसिंहकी गोदीमें उमेदको स्थापन कर उनको उमेदका अभिभावक पद दान किया। उसी दिनसे चतुर चूडामणि जालिमसिंह उमेदकी ओर जैसा व्यवहार करते आये थे, और उमेदसिंहके चरित्रोंकी प्रकृति जैसी थी उससे वह एक दिनके लिये भी जालिमसिंहके उस प्रभुत्वको लुप्त करनेके अभिलाषी नहीं हुए। सारांश यह है कि जालिमसिंह जैसी प्रकृतिके मनुष्य थे उसी उच्च क्षमता और स्वाधीनताके साथ राज्यशासन करनेके अभिलाषी थे। उमेद सिंह भी उनके ठीक उसी प्रकार मनोगत पात्र हुए थे। यद्यपि जालिमसिंह राजकीय प्रत्येक विषयपर महाराव उमेदसिंहका मत ग्रहण करते और उनसे परामर्श करते थे। परन्तु ऐसा होनेपर भी जालिमसिंह अपनी इच्छानुसार ही समस्त कार्य करते थे। साधु टाड साहब लिखते हैं कि महाराव उमेदसिंह एक ऊंचीश्रेणीके चिन्ताशील मनुष्य और राजपूत स्वभाव सुलभ अनेक गुणोंसे विभूषित थे। इनको शिकार खेलनेका अधिक शौक था और श्रेष्ठ घोडेपर चढकर बंदूक चलानेमें अच्छी सामर्थ्य रखते थे। जालिमसिंहने इनके प्रति यहांतक आधिपत्यका विस्तार किया और उनको यहांतक अपने हस्तगत किया कि वह कभी भी जालिमसिंहके हाथसे अपने उद्धार करनेके अभिलाषी हुए थे या नहीं, इतना सन्देह है। जालिमसिंह किसी प्रकारसे भी किसी विषयमें महाराव उमेदसिंहके ऊपर कभी बलप्रकाश नहीं करते थे;इधर उमेदसिंहकी भी जितनी अवस्था बढती जाती थी उतने ही वह धर्मके अनुशीलनमें लिप्त होते जाते थे, इस कारण उन्होंने कठोर राजकार्यसे छुटकारेकी अधिक चेष्टा की। बुद्धिमान् महाराव उमेदसिंह इस बातको भलीभांतिसे जान गये कि सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्यशासन करनेमें ऐसा विशेष प्रयोजन नहीं है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही उस आशाको छोड दिया। उमेदसिंह जितना ही राज्यशासनसे वैराग्य दिखाते थे इतना ही जालिमसिंहकी अनुगतता स्वीकार करते जाते थे, जालिमसिंहकी क्षमता तथा प्रतापका आधिपत्य उतनी ही अधिकतासे बढता गया"।

बुद्धिमान् जालिमसिंह महाराव उमेदसिंहके साथ कैसा व्यवहार करते थे उसके सम्बन्धमें इतिहाससे जाना जाता है कि यदि किसी भिन्नराज्यसे कोई राजदूत कोटेमें चला आवे तो सबसे पहिले उसको महाराव उमेदसिंहके समीप जाना पडता था। दूत उमेदसिंहको अपना परिचय देकर उन्हींसे उत्तर पाता था, परन्तु वह उत्तर उमेदसिंह

अपनी इच्छानुसार नहीं देते थे। मन्त्री जालिमसिंह जो कुछ लिख देते थे वही दिया जाता था। रजवाडे वा अन्य किसी स्थानका कोई उच्च सामन्त निकाली हुई अवस्थामें यदि कोटेमें आकर आश्रय अथवा सहायता मांगता तो महाराव उमेदसिंह ही उसको आश्रय वा सहायता देते थे, परन्तु सहायताका परिमाण जितना जालिमसिंह नियत कर देते थे उमेदसिंह उसको नहीं बढा सकते थे। इधर जालिमसिंहका पुत्र अपनी भूवृत्तिको बढानेके लिये प्रार्थना करता तो महाराव उमेदसिंहके विशेष अनुरोध न करनेपर जालिमसिंह उसे नहीं दे सकते थे। बुद्धिमान् जालिमसिंह सभी विषयोंमें महाराव उमेदका मत यहांतक ग्रहण करते कि वह अपने निजका व्यय बढाने पर भी महाराव उमेदसिंहके बारम्बर अनुरोध प्रकाश करने पर भी वह उस व्ययको पूरा करनेके लिये अपनी आमदनीको बढाते थे। यदि परदेशसे कोटेकी राजधानीमें व्यापारीगण वेचनेके लिये घोडे लाते तो जालिमसिंह सबसे पहिले सर्वोत्तम घोडेको खरीद कर महाराजा और उनके पुत्रको दे देते। चिरप्रचलित रीतिके अनुसार राजकीय समस्त कागज पत्र पुस्तक मोहर और सब प्रकारके राजचिह्न महलके भीतर महारावके निजके सेवकोंकी सावधानीमें रक्खे जाते थे, परन्तु जालिमसिंहकी अनुमतिके विना कोई भी उनका प्रयोग वा व्यवहार नहीं कर सकता था। एक दिन महाराव उमेदसिंहके पुत्र कुमारकिशोरसिंह जालिमसिंहके एकमात्र पुत्र माधोसिंहके साथ एक क्षेत्रमें जिस समय अपने अपने घोडोंको शिक्षा दे रहे थे उस समय किशोरसिंहके प्रति माधोसिंहने अनादर दिखाया, जालिमसिंहने दण्डस्वरूपमें अपने पैतृक देश नाणतामें माधोसिंहको भेज दिया। जालिमसिंहके इस व्यवहारसे अवश्य ही उनके सुविचार और राजभक्तिने प्रकाश पाया। महाराव उमेदसिंहके बारम्बार अनुरोध करने पर उन्होंने पुत्रको क्षमा नहीं किया।

जालिमसिंहने महाराव उमेदसिंहके साथ प्रकाशमें जिस राजभक्तिको प्रकट किया था उसके सम्बन्धमें बहुतसे प्रवाद प्रचलित हैं। एक समय जालिमसिंह महलमें बैठे हुए राजकीय देवमंदिरमें पूजा कर रहे थे। इसी समयमें महाराव उमेदसिंहके पुत्र वहां गये। वह यह नहीं जानते थे कि जालिमसिंह वहां पूजा कर रहे हैं। उस समय शीतकाल था मन्दिरकी जमीन कुछ एक भीग रही थी। जालिमसिंह जिस रजाईको कन्धेके ऊपर रक्खे हुए पूजा कर रहे थे उसी रजाईको पृथ्वीपर आसनकी जगह उन्होंने विछा दिया, और राजकुमारको उसपर बैठकर पूजा करनेके लिये कहा। जब पूजा समाप्त हो गई तब राजकुमार चले गये। जालिमसिंहका जो सेवक उस स्थानपर था उसने विचारा कि जब राजकुमार इस रजाईके ऊपर बैठे गये हैं तो हमारे स्वामी इसको अपने व्यवहारमें नहीं लावेंगे। इस कारण वह उस रजाईको निकम्मी जानकर एक कोनेमें फेंक देनेके लिये उद्यत हुआ, परन्तु जालिमसिंहने उसके मनके भावको जानकर उसी समय उस रजाईको उसके हाथसे ले लिया, और अपने शरीरपर डालकर "राजकुमारके चरणोंसे यह पवित्र हो गई" भक्तिके साथ यह बात कही। इसका सरलतासे अनुमान हो सकता है कि अत्यन्त सामर्थ्यवान् मनुष्य यदि ऐसा आचारण

करे तो अत्यन्त विचित्रता है। जालिमसिंहने जिस प्रकार विनय और नम्रता प्रकाश करके अपने प्रबल आधिपत्यका विस्तार किया, ऐसा अन्यत्र दृष्टिमें नहीं आता। सारांश यह है कि चतुरता और नीतिज्ञता ही इसका मूल है।

जालिमसिंह जैसे परम ज्ञानी विख्यात थे अपने यहाँ सेवक और कर्मचारियोंके रखनेमें भी उसी प्रकारसे विशेष प्राज्ञता दिखाते थे। उनमें इस प्रकारकी एक शक्ति थी जिससे उन्होंने अपने कर्मचारी और सेवकोंको अपने वशीभूत कर रक्खा था। और वह कर्मचारी और सेवकोंके ऊपर विशेष दया प्रकाश करते थे, और उनके साथ मित्रता हो जानेसे कोई भी इनका किसी प्रकारका अनिष्ट नहीं कर सकता था, यद्यपि जालिम उन कर्मचारी और सेवकोंके प्रति प्रयोजनीय समस्त अभावको पूरण कर देते थे, और न्यायके साथ उनको प्रत्येक विषयमें सीमाबद्ध स्वाधीनता देते थे। परन्तु उनको किसी प्रकार भी स्वेच्छाचारी नहीं होने देते थे। वह उन कर्मचारियोंको उनके आत्मीय स्वजनोंके प्रतिपालन करनेके समस्त अनुष्ठान कर देते थे, पर्वोत्सवमें, विवाहमें, जन्म और मृत्युके समयमें मुक्तहाथसे उनको रुपया देते थे, परन्तु कभी भी उनको इच्छानुसार बलसे वा अन्यायसे धन उपार्जन नहीं करने देते थे। इतिहाससे जाना जाता है कि पठान और महाराष्ट्र पंडित ही उनके यहां सबसे अधिक विश्वासी कर्मचारी थे। इन्होंने पठानोंको सामरिक पदपर नियुक्त किया और मरहठोंको राजनैतिक कार्यपर नियुक्त किया। यह अपने स्वजातीय मनुष्यको किसी कार्यमें नियुक्त नहीं करते थे। उनके शासनके शेष समयमें एकमात्र शक्तावत् सम्प्रदायके विशनसिंह कोटेकी फौजदारी पदपर नियुक्त थे। दलेलखां और महरावखां नामक दो मनुष्य जालिमके अत्यन्त विश्वासी कर्मचारी और मित्र थे। कोटेका विराट् किला आगरेके किलेके अतिरिक्त भारतवर्षमें जिसकी बराबर दूसरा नहीं है वही किला दलेलखाँने बनवाया था। उसी दलेलखांने झालरापाटन नामका अत्यन्त रमणीक नगर बनवाया। कोटेके अन्यान्य समस्त किलोंका भी संस्कार इसी दलेलखांने करवाया था, जालिमसिंह दलेलखांको इतना प्यार करते थे। वह कहा करते थे कि "दलेलखांकी मृत्युके पहिले मानो हमारी मृत्यु हो जायगी"। महराबखां कोटेके पैदल दलके नेता थे। इन्होंने अपनी सुशिक्षासे उस सेनाको अत्यन्त ही रणनिपुण कर दिया था। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "वह सेनादल प्रत्येक मासमें बीसरोज अर्थात् बीस दिनका वेतन पाता था, और दो वर्षके शेष होनेपर बाकी सब वेतन मिल जाता था"।

---

(१) कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर टीकामें लिखा है कि हमारे अधीनमें जालिमसिंहने एक सेनादल इस महारावखांके अधिनायकत्वमें दिया, उस सेनादलने आठ दिनमें हाडौतीसे लगेहुए हुलकरके अधिकारी समस्त देशोंपर अधिकार कर लिया था। उस सेनादलने जनरल सरजान मालकामके अधीनमें स्थित सेनादलके साथ मिलकर "सौंदी" किलेकी दीवारको लांघकर विशेष वीरता दिखाई थी।

छठवां अध्याय ६.

कोटेराज्यकी नवीन राजनैतिक अवस्थाका परिवर्तन–बृटिश गवर्नमेंटके साथ कोटेराज्यकी संधिका–सूत्रपात–संधि स्थापनमें जालिमसिंहका अभिमत–पिंडारियोंको दमन करनेके लिये संधिका प्रस्ताव–संधिबन्धन–संधिपत्र–महाराष्ट्रनेता कोटेराज्यसे जो कर लेते थे, अंग्रेजी गवर्नमेंटका वह ग्रहण करना–करकी सूची–पिंडारियोंका युद्ध–उस युद्धमें जालिमसिंहको सहायता करना–उसके पुरस्कारमें कोटेराज्यको बृटिश गवर्नमेंटका कईएक देश देना–जालिमसिंहके वंशानुक्रमसे कोटेके शासनकर्ता पदपर नियोगपत्रमें गवर्नमेण्टकी सम्मति देना और उसपर हस्ताक्षर करना–उसके सम्बन्धके नियोगपत्र–गवर्नमेंटके द्वारा कोटेराजको प्रदत्त देशकी राजसनद–दानपत्र–कोटाराज्यके महाराव राजा उमेदसिंह–कोटाराज्यका परिवार–किशोरसिंह–विशुनसिंह–पृथ्वीसिंह–राजकुमारोंके स्वभाव और चरित्र–जालिमसिंहके दो पुत्र माधोसिंह और गोवर्धनदास–दोनोंके स्वभाव और चरित्र–भ्रातृविच्छेद–पिताकी सामर्थ्य घटानेके लिये गोवर्धनदासकी चेष्टा करना–किशोरसिंहके साथ पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदासका मिलन–षड्यन्त्र–माधोसिंहको फौजदारपदकी प्राप्ति–महाराव उमेदसिंहकी मृत्यु–कर्नल टाडका कोटेमें आगमन–कर्नल टाडका राजदरबारमें षड्यन्त्रका समाचार पाना–जालिमसिंहको भयंकर पीडा होना–आरोग्यप्राप्ति–कर्नल टाडके द्वारा जालिमसिंहको षड्यंत्रका सम्वाद ज्ञात होना–राजनैतिक विभ्राट्–कर्नल टाडका रजनैतिक आचरण–जालिमसिंहकी सामर्थ्यको लोप करनेके लिये प्रकाशरूपसे चेष्टा करना–कोटेके राजा किशोरसिंहको कर्नल टाड और जालिमसिंहके प्रास्तावके अनुसार सेनाके द्वारा महलमें बन्दकरना–किशोरसिंहका महलको छोडकर बाहर जाना–कर्नल टाडका महाराव किशोरसिंहको फिर महलमें लाना–गोवर्धनदासको कोटेसे निकलवाना–कर्नल टाडके उद्योगसे महाराव किशोरसिंहके साथ जालिमसिंहका फिर संमिलन–महाराव किशोरसिंहका अभिषेक–जालिमसिंहका कोटेसे दंड नामक कर को रहित करना।

इस समय हम कोटेराज्यके इतिहासका एक नवीन अध्याय अंकित करनेके लिये आगे वढे हैं। यवनशासनके पीछे मरहठे पिंडारी इत्यादि अत्याचारी लुटेरे भारतवर्षके शांति—नाशकोंके प्रबल प्रतापके समय चतुर नीतिज्ञ जालिमसिंह कोटेराज्यकी किस भावसे रक्षा करते आये हैं, पहिले अध्यायमें उसका वर्णन भलीभांतिसे किया गया है। जिस समय सामान्य वाणीकीवेशी ईस्ट इण्डिया कम्पनीने जगदीश्वरकी कृपासे समस्त भारतमें अपने प्रबल प्रभुत्वका विस्तारकर शासनशक्तिको दृढ कर लिया, और देशीय राजाओंकी अवस्थामें अन्तर उपस्थित कर दिया, इस समय हम उसी समयके इतिहासको वर्णन करनेमें प्रवृत्त हुए हैं। जिस कार्यसे रजवाडोंके राजा एक समय प्रबलप्रतापसे राज्यशासन कर अक्षयकीर्ति संचय कर गये हैं, जिन राजपूत राजाओंने अप्रमेय वीरता, असीम साहस, अनुपम शूर–वीरता और प्रबल पराक्रम प्रकाश करके अफगानिस्थानतकको जीत लिया था, जिन राजपूतराजाओंने एक समय एक २ पराक्रमी यवन बादशाहकी शासनशक्तिको विचालित किया था, जिन राजपूतराजाओंकी सहायतासे अकबर, शाहजहां, आरंगजेब इत्यादि वादशाहोंने भारतके प्रत्येक प्रान्तमें अपनी शासनशक्तिको फैला

दिया था, जिन राजपूत राजाओंसे यवन बादशाह मनही मनमें अधिक भय करते थे, जिन राजपूत राजाओंके प्रचंड बाहुबलसे भारतवर्षकी अन्य सभी जातियां थर २ कांपती थीं वही राजपूतराजा, वही राजपूतजाति, बिना युद्ध और बिना रुधिर बहाये तथा विना आपत्ति किये किस प्रकारसे बृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञा पालनके लिये तैयार हुई, हमारे बुद्धिमान् पाठक कर्नल टाड साहबकी उक्तिको पढ़ कर इसका अनुमान सरलतासे कर सकेंगे "।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "सन् १८१७ईसवीमें जब कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल मार्किस आफ हेष्टिंगसने पिंडारियोंके साथ युद्ध करनेकी घोषणा की, उस समय घोषणापत्रमें लिखा था कि, पिंडारी लुटेरे दस्युदलके नेता तथा लूटमारकी प्रथा चलानेवालोंका यह उदय हुआ है, यह प्रकाश किया जाता है कि कोई भी इस युद्धके समयमें निरपेक्षभावसे नहीं रह सकेगा" और यह भी घोषणा की गयी कि "भारतवर्षके समस्त देशीय राज्योंके सर्वसाधारणकी मंगल कामनाके लिये जब उन लुटेरे पिंडारियोंके नाश करनेकी आवश्यकता हुई है, तब जो कोई अंग्रेजोंको सहायता न देगा उसे अंग्रेजोंका शत्रु समझा जायगा। राजपूत राजा हमारे समान शांति और सुशासन स्थापन करनेके विशेष अभिलाषी थे, इस कारण उनको हमारे साथ रक्षण, पीडन संधि स्थापन करनेके लिये इस प्रकारसे बुलाया गया। और इस संधिबंधनसे वह चिरकालके लिये लूटनेवाले तस्करोंके हाथके छुटकारा पा सकेंगे, यह भी उनको सूचना दी गई, और इसी उपकारके बदलेमें वे हमारी शासनशक्तिकी अधीनता स्वीकार करें, और हम उनके राज्यकी रक्षाका भार ग्रहण करते हैं, इस कारणसे उनको राज्यकी आमदनीके कितने ही अंश कर स्वरूपमें देने होंगे, यह भी कहा गया"।

कर्नल टाड साहबकी उक्त उक्ति भलीभाँति प्रकाश कर रही है कि राजपूत राजाओंकी अवस्था शोचनीय हो गई थी, इसीसे राजपूत जातिका वह जगत्विख्यात साहस, शूरता, वीरता, पराक्रम एकबार ही लुप्त हो गया था। उन्हीं राजपूतोंके सिंहासनों-पर राजपूत राजाकी वीरतापर दोष लगानेवाले बैठे थे। गवर्नमेण्टने विना युद्ध किये इसीसे उन सबको बडी सरलतासे अपनी अधीनतामें बाँध लिया। राणा प्रताप, महाराज जशवन्त, महाराज जयसिंह इत्यादिके समान चिरस्मरणीय राजपूत राजा यदि उस समय जीवित होते तो पिंडारियोंके भयसे ऐसी अधीनताको न स्वीकार करते।

सरकारके बुलानेसे राजपूत राजाओंने एक एक करके बृटिश गवर्नमेंण्टके साथ संधिबंधनमें आबद्ध होकर करदपदको ग्रहण किया। राजस्थानके अन्य राज्यके इतिहासमें पाठक उसको पढ़ चुके हैं। उक्त आवाहन पत्रको पाकर जालिमसिंहने किस प्रकारका व्यवहार किया, उसके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "सूक्ष्म दृष्टि जालिमसिंह शीघ्र ही समझ गये थे कि बृटिश गवर्नमेण्ट उस प्रस्तावको पूर्ण करनेमें यथेष्ट उपकार दिखावेगी, और उस प्रस्तावके पूर्ण करनेमें सम्मान भी अधिक प्राप्त होगा। उसीके अनुसार उनके दूतने सबसे पहिले अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन स्थापित कर लिया। शीघ्र ही समस्त रजवाडे भी बृटिश गवर्नमेण्टके साथ मिल गये।

"उस संधिबंधनके सम्बन्धमें आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें लिखा है कि, सन् १८१७ ईसवीमें पिंडारियोंका नाश करनेके लिये जिन समस्त राजपूत राजाओंने बृटिश गवर्नमेण्टकी सहयोगिता की थी। जालिमसिंहके द्वारा सन् १८१७ ईसवीके दिसम्बर मासमें कोटेके अधीश्वरके साथ एक संधिबंधन तय्यार हुआ। उस संधिमें बृटिश गवर्नमेण्टने बाहरी शत्रुओंके आक्रमणसे कोटे की रक्षाका भार ग्रहण किया, कोटेसे मरहठोंको जो कर पहिले मिला करता था, अब वह कर बृटिश गवर्नमेण्टको मिला करेगा, यह नियत किया गया। सेंधियाको कोटेसे जो करांश मिलता था बृटिश गवर्नमेण्टने उसके सम्बन्धमें उसके साथ स्वतंत्र व्यवस्था की, और महाराव आवश्यकतानुसार अंग्रेजगवर्नमेण्टको सेनाकी सहायता देंगे, यह भी निश्चय हुआ"। *

हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे इस संधिपत्रको नीचे प्रकाशित किया है।

संधिपत्र।

पहली धारा–एक ओर बृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर महाराव उमेदसिंह बहादुर और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोंमें चिरस्थायिनी मित्रता संधि सबन्ध और समस्वार्थ विराजमान किया जायगा।

दूसरी धारा–इस संधिपत्रमें हस्ताक्षर करनेवालोंके शत्रु मित्र एक दूसरेके शत्रु-मित्ररूपसे गिने जांयगे।

तीसरी धारा–बृटिश गवर्नमेण्ट कोटाराज्य और उनके अधीनके देशोंसे अपने अधीनमें रक्षण वे क्षणका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुई है।

चौथी धारा–महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त चिरकालतक बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार करेंगे और इससे पहिले कोटाराज्यका जो अन्य सब राज्योंके साथ सम्बन्धबन्धन था वह सब राजा अथवा राज्य इसके पीछे कोई सम्बन्ध नहीं रख सकेंगे।

पांचवीं धारा–बृटिश गवर्नमेण्टकी सम्मतिके अतिरिक्त महाराव और उनके उत्त-राधिकारीगण तथा स्थलभिषिक्तगण अन्य किसी राजा वा राज्यके साथ किसी प्रकारका संधिबंधन स्थापन नहीं कर सकेंगे। परन्तु वह अपने मित्र और कुटुम्बी राजाओंके साथ सांसारिक पत्रव्यवहार कर सकेंगे।

छठवीं धारा–महाराव और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तगण किसी राज्यपर अत्याचार वा आक्रमण नहीं कर सकेंगे, और यदि दैवात् किसीके साथ कुछ झगडा उपस्थित हो जाय तो वह झगडा चाहै महारावकी ओरसे हो चाहै अन्य किसी राजाकी ओरसे, उस विवादकी मध्यस्थताका भार बृटिश गवर्नमेण्टको ही रहेगा।

सातवीं धारा–कोटेराज्यसे इतने दिनोंतक जो कर महाराष्ट्र राजाओंको अर्थात् पेशवा, सेंधिया, हुलकर और पँवारोंको देते थे, इसके पीछे चिरकालके लिये वह समस्त कर दिल्लीमें बृटिश गवर्नमेण्टके उसके साथ लगी हुई सूचीके अनुसार देने होंगे।

* Aitchisonr's Teaties

आठवीं धारा-अन्य कोई राजा कोटेराज्यसे और किसी प्रकारके करका दावा नहीं कर सकेगा, और यदि अन्य कोई राजा उस प्रकारके करके लिये दावा करेगा तो बृटिश गवर्नमेण्ट उस दावीका उत्तर देगी, ऐसा निश्चय हो चुका है।

नववीं धारा-बृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधके अनुसार कोटेको यथाशक्ति सेनाकी सहायता करनी होगी।

दशवीं धारा-महाराव, उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तगण उनके राज्यमें पूर्ण शासक क्षमता युक्त अधीश्वररूपसे रहेंगे, और बृटिश गवर्नमेण्ट अपनी दीवानी और फौजदारीकी शासनशक्ति कोटेराज्यपर नहीं फैला सकेगी।

ग्यारहवीं धारा-ग्यारह धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र दिल्लीमें लिखा गया और एक ओर मिष्टर चार्लस थियोफिलास मेटकाफ और दूसरी ओर महाराज शिवदानसिंह, शाह जीवनराम और लाला फूलचंदके हस्ताक्षर सहित यह मोहरांकित हुआ। और यह महामहिमवर गवर्नर जनरल और महाराव उमेदसिंह और उनके शासनकर्ता राजराणा जालिमसिंहके स्वीकार करने पर आजकी तारीखसे एक महीनेमें लिया जायगा।

दिल्ली
२६ दिसम्बर सन् १८१७

(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ।
रेजिडेण्ट।

महाराज शिवदानसिंह।
फूलचँद।
रावराजा उमेदसिंहबहादुर।
राजराणा जालिमसिंह।
(हस्ताक्षर) हेष्टिंगस्।

सन् १८१८ ईसवीकी २६ जनवरीको ऊचरनामक स्थानके डेरोंमें महामान्यवर गवर्नर जनरलसे यह संधिपत्र स्वीकृत हुआ।

(हस्ताक्षर) जे०आडाम।
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी।

ऊपर लिखा हुआ संधिपत्र प्रकाशित करता है कि सन् १८१८ ईसवीकी २६ वीं जनवरीसे कोटेराज्यने उमेदसिंहके वंशानुक्रमसे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी अधीनता स्वीकार कर ली, और इतने दिनसे जो महाराष्ट्रदल बलपूर्वक उनके राज्यपर अत्याचार और उपद्रव करता था, और उनसे कर लेता था, इतने दिनोंमें उसकी शान्ति होगई, सेन्धिया हुलकर पँवार और पेशवा यही चार प्रधान नेता कोटेराज्यसे जो कर ग्रहण करते थे कोटाराज उस करको नवीन प्रभु अंग्रेज गवर्नमेण्टको देनेके लिये तैयार होगा। महाराष्ट्रगण कोटेराज्यसे कितना कर लेते थे, हम आचिसन साहबके ग्रन्थसे उसकी सूची नीचे प्रकाश करते हैं।

(महाराष्ट्रोंको इससे पहिले जो कर दिया जाता था—उसकी सूची ।)

(१) कोटा, (२) ७ काटडियों और (३) शाहाबाद इन तीन परगनोंके लिये स्वतंत्र करदेना होता था ।

कोटेका कर ।

नगद मुद्रा	२००००० रुपया ।
द्रव्यादि	१००००० ”
जोड	३००००० ”
द्रव्यके हिसाबसे घटाकर मूल्य	२०००० ”
नगद बचत	२८०००० रुपया ।

दो लाख अस्सी हजार, चांदोडी उज्जयनी, एवं इन्दोरी रुपयेके कारण प्रतिसैकडा ८ रुपया बट्टेके हिसाबसे घटत २२४०० रुपया ।

शेष बचा २५७६०० रुपया ।

दो लाख सत्तावन हजार छः सौ गुमानशाही रुपया, दिल्लीका दो लाख चौवालीस हजार सात सौ रुपयेके समान ।

उक्त रुपया निम्नलिखित प्रकारसे विभक्त होता था ।

सेन्धियाका अंश ।

नगद	७७००० रुपया ।
द्रव्य	३८५०० ”
जोड	११५५०० ”
द्रव्यके हिसाबसे रुपये करनेमें कमी	७७०० ”
नगद	१०७८०० ”

एक लाख सात हजार और आठसौ उज्जयनी चांदोडी एवं इन्दौरी रुपया। उक्त रुपया आठ रुपया सैकडे बट्टे पर बना ... ... ८६२४ ”

बाकी गुमानशाही रुपया ९९१७६ रुपया ।

हुलकरका प्राप्त कर उक्त प्रकारसे सेंधियाके समान था ।

पंवारका अंश ।

नगद	४६००० ”
द्रव्य	२३००० ”
	६९००० ”
द्रव्यहिसाबसे रुपया बनानेमें घटी	४६०० ”
नगद	६८४०० ”
प्रतिसैकडा आठ रुपया घटीसे देशी रुपया बनानेमें घटी ।	५१५२ ”

शेष गुमानशाही ५९२४८ रुपया ।

सातोंकोटडियोंका देय कर।

नगद	बूँदीका	२२१५८ रुपया।
घटी सैकडा ५ के हिसाबसे		११०८ "
		२१०५० रुपया।
	गुमानशाही	२११०५० "
	दिल्लीके सम तुल्य	१९९९७॥० रुपये।

विशेष बिवरण।

प्रथम कोटरि

आंतरदाका कर ... ...बूँदीका	३८०० रुपया।
घटी (५ सैकडा हि०)	१९० "
बाकी गुमानशाही रुपया	३६१० "

उक्त रुपया निम्न लिखित दो बराबर अंशोंमें विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	१८०५ रुपया।
हुलकरका अंश	१८०५ "
	३६१० "

दूसरी कोटरि

बलवानका कर ... ... बूँदीका	१००० रुपया।
घटी	५० "
गुमानशाही	९५० "

उपरोक्त रुपया निम्नलिखित तीनभागोंमें विभक्त होता था;

सेन्धियाका अंश	४०० रुपया।
हुलकरका अंश	४०० "
पंवारका अंश...	१५० "
	९५० "

३,४, एवं पांचवीं कोटरि

करवर गैंता और पीपलादाका कर ... बूँदीका	३५६० रुपया।
घटी ५ सैकडा हिसाबसे...	१७८ "
गुमानशाही रुपया	३३८२ "

उक्त रुपया निम्नलिखित अंशोंमें विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	१५२० रुपया।
हुलकरका अंश	१५२० "
पँवारका अंश	३४२ "
	३३८२ रुपया।

छठवीं और सातवीं कोटरि

इन्द्रगढ और खातोलीका कर	...	...	... १३७९८ रुपया।
५ सैकडा हिसाबसे वट्टा	...	...	... ६९० "
		गुमानशाही	१३१०८ "

सेंधिया और हुलकर उक्त रुपया बराबर दो अंशोंमें विभाग कर लेते थे।

शाहाबाद देशका कर।

पेशवाको उक्त परगनेसे ठीक कितना रुपया कर मिलता था इसका निश्चय नहीं जाना जाता, परन्तु ऐसा अनुमान है कि वे २५००० रुपये लेते थे, उसका आधा अंश नगद और अपरार्द्धांश द्रव्य लिया जाता था।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ।
राव राजा उमेदसिंह।
राजराणा जालिमसिंह।
महाराज शिवदानसिंह।
फूलचँद।

ऊपर लिखे हुए संधिपत्रको पढकर पाठक भलीभांतिसे जानगये होंगे कि सन् १८१८ ईसवीके शेष भागमें रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके समान कोटेके भाग्यका चक्र भी बदल गया था।

मरहठे, पठान और पिंडारियोंकी अधीनताकी जंजीरको तोडकर जालिमसिंह वृटिश गवर्नमेंटके अधीन हुए। यद्यपि सरकारने देशीय राजाओंको मरहठे और पिंडारियोंके हाथसे उद्धार कर लिया था परन्तु इतिहास इसको प्रमाणित करता है कि गवर्नमेंटने अपनी सेनाके द्वारा ही नहीं वरन् अपनी राजनीतिके बलसे देशीय राजाओंकी सहायता लेकर पिंडारियोंका नाश करके अपना प्रताप प्रबल कर लिया था। जो राजपूत राजा गवर्नमेण्टके साथ संधि करके उनकी आधीनताके पाशमें बँध गये, और चिरकालतक उनकी अधीनतामें रहना स्वीकार किया, उनकी अवस्था शोचनीय होनेपर भी वह यदि एकताका अवलम्बन करके महाराष्ट्र और पिंडारियोंपर आक्रमण करते तो सरलतासे महाराष्ट्र और पिंडारियोंका प्रताप और प्रभुत्व लुप्त कर सकते थे, पर इनके लिये एकता होना असम्भव था। जैसे भी हो इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा।

कर्नल टाड साहबने उक्त संधिबन्धनका उल्लेख करके लिखा है कि इस समय अवसर पाकर समस्त भारतवर्ष हाथमें अस्त्र लेकर उठा। दो लाख मनुष्य एक उद्देशसे एकसाथ मिलकर भारतवर्षके लुटेरे अत्याचारी और पीडित करनेवालोंकी रीतिको जडसे उखाडनेकी लिये धावमान हुए। हाडौती देशकी सीमामें ही सबसे पहिले पहिल समर होनेकी सम्भावना थी, इस हेतु जालिमसिंहके समीप एक अंग्रेज एजेण्टका भेजना अत्यन्त आवश्यक हुआ, कोटे राज्यसे सेना सामन्त और रसद आदि जहांतक मिल

सके उसको संग्रह करके शत्रुके साथ उन सबका प्रयोग कर शत्रुओंको कोटे वा उसके आसपासके देशोंसे भगानेके लिये उक्त एजेण्ट तैयार हुआ; कोटेसे उक्त एजेण्टको इतनी सहायता मिली कि उसने जालिमसिंहके डेरोंमें पहूँचते ही पांच दिनमें कोटेराज्यके प्रत्येक घाट वा प्रधान २ मार्गके मुखपर सेनाके डेरे स्थापित किये, इसी समयमें जनरल सर जान मालकम नर्मदाके पार होकर दक्षिणसे बहुत थोडी सेना ले अगणित शत्रुओंसे घिर-कर भी उत्तरकी ओरको जा रहे थे, कोटेसे पांच सौ पैदल अश्वारोही और चार तोपें उक्त जनरलकी सहायताके लिये गई थीं, बृटिश भारतके शासन इतिहासमें इस उज्वल और घटनापूर्ण समयमें जब गंगाजीके किनारेसे समुद्रतकके विस्तारित देश रणमदसे उन्मत्त हो गये थे, उस समय एकमात्र जालिमसिंहके डेरोंमें ही समर चलानेका प्रधान केन्द्रस्थल हो गया, उस समय जालिमसिंहने अंग्रेज गवर्नमेण्टकी यथाशक्ति सहायता करनेमें कसर नहीं की। "सेनासे घोडोंसे और रसद आदिके द्वारा उन्होंने उस समय पिंडारियोंका नाश करनेके लिये सब प्रकारसे सरकारकी सहायता की" ।

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिंहने प्रतापशाली बृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेका भाग्य विजाडित किया था परन्तु उनके अधीनमें जो मरहठे मंत्री और कर्मचारी नियुक्त थे उन सभीने एक मुखसे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रताके न करनेका अनुरोध किया। परन्तु जालिमसिंह भलीभांतिसे जान गये थे कि अंग्रेजोंकी शासनशक्ति क्रमशः जिस भावसे प्रबल हो गई है उससे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रता किये बिना अन्तमें अनिष्ट होनेकी सम्भावना है । इसी लिये अपनी तीक्ष्णबुद्धिसे भारतवर्षकी राजनैतिक अवस्था परिवर्तनोन्मुख देखकर ही उन्होंने पिंडारियोंके नाश करनेमें सम्पूर्ण सहायता की । पिंडारियोंके नाश करनेके पीछे गवर्नमेण्टने जिन देशोंपर आपना अधिकार कर लिया था उनमें हुलकरके अधिकारी चार देश जो जालिमसिंहने हुलकरसे जमामें लिये थे, उन चारों देशोंका राजस्वत्व जालिमसिंहको गवर्नमेण्टने दे दिया। परन्तु नीतिज्ञ जालिमसिंहने अपने पुरस्कार स्वरूप उन चारों देशोंको किसी प्रकारसे भी न लेकर अपने प्रभु कोटापति महाराव राजा उमेदसिंहके नामसे उनको देनेके लिये कहा । गवर्नमेण्टने जालिमसिंहके इस विश्वासी व्यवहारको देखकर अत्यन्त संतुष्ट हो शीघ्र ही उनकी कामनाको पूर्ण कर दिया ।

सन् १८२७ ईसवीके २६ दिसम्बरको गवर्नमेण्टके साथ जिस समय कोटेराजका संधिबंधन समाप्त हो गया । उस समय जालिमसिंहके मंत्रित्व पक्षमें गवर्नमेण्टने

---

(१) महात्मा टाड साहब ही अंग्रेजोंके एजेण्ट होकर कोटेमें भेज गये थे,वह इस स्थानपर अपनी टीकामें लिखते हैं कि "इस इतिहासके लेखक उस समय सेन्धियाकी सभामें एसिस्टैण्ट रेजिडेण्ट पदपर नियुक्त थे, लार्ड हेष्टिंगसने उनको राजराणा जालिमसिंहके निकट भेजा। वह (टाड) सन् १८१७ ईसवीकी १२ वीं नवम्बरको ग्वालियर छोडकर २३ तारीखको कोटेसे बाहर कोश दक्षिणके पूर्वमें रेउता नामक स्थानमें जालिमसिंहके डेरोंमें गये" ।

किसी प्रकारका भी हस्ताक्षेप नहीं किया। ऐसी विधि, वा संधिमें ऐसी कोई धारा नहीं रक्खी गई परन्तु जालिमसिंहके द्वारा गवर्नमेण्टने विशेष सहायता पाकर सन् १८१८ ईसवीकी २६ फरवरीको उक्त संधिपत्रमें निम्नलिखित धाराको और भी नियुक्त किया।

"संधि बंधनमें आबद्ध होकर दोनों पक्ष इस बातको स्वीकार करते हैं कि कोटेराज्यके अधीश्वर महाराव उमेदसिंहके परलोक जानेके पीछे कोटाराज्य उनके बडे पुत्र और उत्तराधिकारी महाराज किशोरसिंहके वर्तमानमें और अवर्तमानमें उनके वंशधर उत्तराधिक्रमसे चिरकालतक उस राज्यको भोगते रहेंगे, और कोटेराज्यके समस्त विभागकी शासन सामर्थ्य राजराणा जालिमसिंहके ही हाथमें रहेगी, और उनके परलोक जानेके पीछे उनके बडे पुत्र कुमार माधोसिंह और उनके पीछे उनके वंशधर उत्तराधिकारी क्रमसे उक्त शासन सामर्थ्यको पावेंगे।

दिल्ली,
२० फरवरी सन् १८१८ ई०

(हस्ताक्षर) सी. टी, मेटकाफ।
महाराव राजा उमेदसिंह बहादुर।
राजराणा जालिमसिंह।
महाराज शिवदानसिंह।
फूलचंद।
गोविन्दराम।

मन्तव्य—यह अतिरिक्त धारा महामहिमवर गवर्नर जनरलसे सन्१८१८ईसवीकी १ मार्चको लखनऊमें स्वीकृत हुई।

(हस्ताक्षर) जे. आडाम.
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी.*

इस अतिरिक्त धाराने जितनी अधिकतासे कोटेराजका महान् अनिष्ट किया, पाठकगण उसको यथास्थान पढेंगे।

पिंडारियोंके नाश करनेके सम्बन्धमें विशेष सहायता करनेसे गवर्नमेण्ट जालिमसिंहको चार परगनोंका राजस्वत्व एक बार ही देनेके लिये तय्यार हुई थी, उसे हमारे पाठक पहिले ही पढ चुके हैं।

परन्तु जालिमसिंहके स्वयं उस पुरस्कारको ग्रहण करनेमें असम्मत होनेसे उनकी कामनाके अनुसार कोटेराज उमेदसिंहको वह पुरस्कार दिया गया, हमने यहांपर उसकी सनद प्रकाश की है।

सनद।

"जिस कारणसे गवर्नमेण्ट और कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिंहमें मित्रता स्थापित हुई है, और उक्त महारावने अंग्रेज गवर्नमेण्टसे जो विशेष सहयोगिता की है वह सर्वसाधारणमें विशेषरूपसे विदित है। उस मित्रताके चिह्न स्वरूप महामहिमवर मार्किस आव हेष्टिंगस् सकौन्सिल गवर्नर जनरल बहादुरने कप्तान टाडके द्वारा निम्नलिखित

* Aitchison's treaties Vo IV.

परगनोंका राजस्वत्व ऊपर लिखे हुए महारावको दिया है और उसके साथ सन् १८१८ ईसवी २६ दिसम्बरको दिल्लीमें जो संधिबन्धन होगया है उसीके अनुसार महारावके समीपसे शाहाबाद परगनाका जो कर मिलता है उस करके देनेसे उनको छुटकारा मिलगया है; वह और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गण उसे वंशानुक्रमसे भोग करें।

इसके पीछे महाराव उक्त स्थानोंके प्रभुस्वरूपसे अपनेको विचारेंगे, और दयालुताके व्यवहारसे वहांकी प्रजाके अनुराग भाजन होकर उनको अपने शासनके अधीनमें रक्खेंगे। अन्य कोई भी उसमें हस्ताक्षेप नहीं कर सकेगा।

परगना	डीग।
,,	पचपाड।
,,	अहवार।
,,	गंगरा।

सन् १८१९ ईसवीकी २५ वीं सितम्बरको सकौन्सिल गवर्नर जनरलके द्वारा दस्ताक्षर सहित और मोहरांकित हुआ''।

यद्यपि गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेके पहिले राजराणा जालिमसिंह कोटेकेराजकी समस्त राजशक्तिको अपने हाथमें रखकर एकाधिपत्य करते आये थे, परन्तु ऐसा होनेपर भी महाराव उमेदसिंह बहादुर अपनेको जालिमसिंहका खिलौना नहीं जानते थे, परन्तु वृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधिबन्धन समाप्त होनेपर जिस दिन महाराज उमेदसिंहको कोटेका नाममात्रका अधीश्वर और जालिमसिंह तथा उनके वंशधरोंका कोटेकी समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर कहकर स्वीकार कर लिया उसी दिनसे महाराव उमेदसिंह मानों प्रकृत क्रीडामें विघोषित हुए, वृद्ध महाराव उमेदसिंहने यद्यपि उसी कारणसे किसी प्रकारका उपद्रव वा आपत्ति उपस्थित नहीं की, तथा अपना तिरस्कार जानकर किसी प्रकारसे भी असंतोष प्रकाश नहीं किया, और अपने भविष्यके उत्तराधिकारियोंपर महा अनिष्टकारक बीज बोता हुआ देखकर किसी प्रकारका प्रतिवाद भी नहीं किया, परन्तु अन्तमें उसी सूत्रसे कोटेराज्यमें महा विभ्राट उपस्थित हुआ।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "सन् १८१९ ईसवीके नवम्बर मासतक सम्पूर्ण शांति विराजमान रही, परन्तु उसके पीछे महाराव उमेदसिंहकी मृत्यु होनेपर सिंहासनके अधिकारियोंके हृदयमें नवीन भावका उदय होनेसे राजराणा जालिमसिंह ऐसी शोचनीय अवस्थामें पडे कि वह ठीक समयमें अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सहायता न पाकर एकमात्र अपनी चतुरबुद्धिके बलसे किसी प्रकार भी उस विपत्तिसे उद्धार प्राप्त न कर सके।" महाराव उमेदसिंहकी मृत्युके समयमें कोटेराज्यके परिवारकी अवस्थाके सम्बन्धमें साधु टाड साहब लिखते हैं-"इस समय महाराव उमेदसिंहके तीन कुमार (१) किशोरसिंह (२) विशनसिंह और (३) पृथ्वीसिंह जीवित थे। युवराज किशोरसिंहकी अवस्था इस समय चौवालीस वर्षकी हो गई थी। उनके स्वभाव चरित्र

मृदु और नम्र थे, यद्यपि उन्होंने बाल्यावस्थासे ही उत्तम शिक्षा पाकर मनुष्य समाज से पृथक् हो सरलतासे स्वजातीय धर्म कर्म पद्धतिके सम्बन्धमें अद्वितीय ज्ञान प्राप्त किया, परन्तु मनुष्य समाजके सम्बन्धमें वैसी अभिज्ञता प्राप्त करनेमें समर्थ न हुए। वह अपने एक महोच्च पैतृक वीरवंशके इतिहासके एक गाढ पंडित थे, और जातीय गौरव और जातीय महोच्चभाव उनके हृदयमें इस प्रकारसे भर रहा था कि वह सरलतासे अपने वंशके पूर्व गौरवको स्मरण कर गर्व कर सकते थे, परन्तु वह स्वभावसे ही नम्रतादि गुणों और शिक्षासे विभूषित हो अपने धीरस्वभाव पिताके समान शान्त बुद्धि हो गये थे, इस कारण उन्होंने गौरवगरिमाकी सामर्थ्य और प्रभुत्वकी ओर ध्यान न देकर कोटा राजको जालिमसिंहके द्वारा शासित होनेमें कोई आपत्ति न की।

दूसरे राजकुमार विशनसिंह किशोरसिंहकी अपेक्षा तीन वर्ष छोटे थे, और वह भी बडे भाईके समान नम्र प्रकृति विद्वान् और सीधे थे। वह भी जालिमसिंहकी भाँति सरल और श्रद्धालु थे पर तीसरे राजकुमार पृथ्वीसिंह जिनकी अवस्था तीस वर्ष से कम थी; वह वीर तेजा हाडाजातिके आदर्शस्वरूप और राजपूतस्वभाव सुलभ शस्त्र भक्त थे।

महाराव उमेदसिंहके तीनों कुमारोंमें एकमात्र पृथ्वीसिंह ही जालिमसिंहको राज्य का सर्वमय कर्ता हर्ता देख कर और पिता उमेदसिंहको क्रीडनस्वरूपसे जालिमसिंह की आज्ञापालनमें नित्य तत्पर देखकर मन ही मनमें महा असंतुष्ट हुए, और वह अपने नेत्रोंमें उनको तुच्छ देखने लगे। इस लिये उन्होंने जालिमसिंहके हाथसे अपना और अपने वंशका उद्धारसाधन करने वा उनके लिये जीवनतक देनेका संकल्प किया। तीनों राजकुमार परस्पर परम शोभाकी शृंखलामें बँधकर प्रीति और स्नेहसे अपना समय व्यतीत करते थे। परन्तु दूसरे राजकुमार विशनसिंह जालिमसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारियोंके प्रति अधिक सद्व्यवहार करते थे, बहुतोंके मनमें इस प्रकारके संदेह उपस्थित होते थे कि इनमें अवश्य ही कोई भीतरी भेद है। प्रत्येक राजकुमारको वार्षिक पचीस हजार रुपय आमदनीवाली भूमिका अधिकार मिला था, वह अपने २ कर्मचारियोंको उन देशोंमें सावधानीसे रखते थे।

राजराणा जालिमसिंहके दो पुत्र थे। माधोसिंह और गोवर्धनदास। बडे माधोसिंह उनकी विवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे और गोवर्धनदास एक जार स्त्रीसे थे। परन्तु गोवर्धनदाससे जालिमसिंह अधिक स्नेह करते थे, और उन्होंने अपने भविष्य उत्तराधिकारी माधोसिंहके समान उनको भी अधिक सामर्थ्य दी था। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते हैं उस समय माधोसिंहकी अवस्था ४६ वर्षकी थी। माधोसिंहकी मूर्तिको देखकर उनको प्रतापशाली कहनेका बोध नहीं होता था वरन् आलसी और गर्वित कहना ठीक होता था। विशेष करके महाराव उमेदसिंह माधोसिंहको बालकपनसे ही अधिक श्रेष्ठ जानते थे, और माधोसिंहकी प्रत्येक प्रार्थना बिना बाधा दिये पूर्ण करते थे, इसीसे उनके चरित्र इस प्रकारके हुए, विशेष करके

थोडी अवस्थामें ही माधोसिंह शासनशक्तिको प्राप्त होकर अर्थात् जिस समय जालिमसिंह मेवाडसे चलकर महलको छोड कोटेराज्यमें भ्रमण करनेके लिये गये उस समय माधोसिंहको कोटेका फौजदार पद दिया गया था, इससे वह अधिक गर्वित हो गये। उनके उस फौजदार पदपर नियुक्त होते ही समस्त सेनाके वेतन आदि देनेका भार उनके हाथमें सौंपा गया। उसी कारणसे बहुतसा धन उन्होंने अपने हाथमें रक्खा परन्तु राज्यके अन्यान्य कर्मचारियोंके ऊपर जैसी शासन-दृष्टि थी माधोसिंहके ऊपर वैसी दृष्टि नहीं थी। कोई भी साहस करके माधोसिंहके विरुद्ध कुछ कह नहीं सकता था। इधर माधोसिंहने बहुतसा धन अपने हस्तगत देख उस साधारण धनका जिस भांति अपव्यय किया उस कारणसे इनके ऊपर बहुतोंको संदेह हुआ। इन्होंने उस धनसे अत्यन्त सुन्दर रमणीक बगीचा बनवाया, उत्तम घोडे मोल लिये, जल बिहार करनेके लिये सजी हुई नौकाएँ बनवाईं। राजकुमार यह देखकर अपनी उन सब विषयोंमें हीनता मानते थे। इधर माधोसिंह जैसे महा मूल्यवान् वस्त्रोंका व्यवहार करते थे, महाराव उमेदसिंह भी उस प्रकारके वस्त्र नहीं पहरते थे। ऐसा जाना जाता है कि माधोसिंहके पिता जालिमसिंह अपने पुत्रको इस प्रकार विलासी और अधिक खर्चालू देखकर नित्य उपदेश देते थे परन्तु उनके इस उपदेशका कुछ भी फल नहीं हुआ।

उस समय गोवर्द्धनदासकी अवस्था सत्ताईस वर्षकी हो गई थी। गोवर्द्धनदास एक चतुर, साहसी, बुद्धिमान् और चंचल पुरुष थे। माधोसिंह राजपरिवारके साथ जैसा असद्व्यवहार करते थे उसी भांति गोवर्द्धनदास राजपरिवारके प्रति भक्ति, प्रीति और स्नेहपूर्ण व्यवहार करते थे, उसीसे गोवर्द्धनदासके साथ राजकुमारोंकी विशेष मित्रता हो गई। विशेष करके वीर तेजस्वी पृथ्वीसिंहके चरित्रोंके साथ गोवर्द्धन-दासके चरित्रोंकी ऐक्यता होनेसे दोनोंमें विशेष मित्रता उत्पन्न हुई। गोवर्द्धनदास जालिमसिंहकी वृद्ध अवस्थाके पुत्र थे, इस कारण जालिमसिंह स्वभावसे ही माधो-सिंहकी अपेक्षा गोवर्धनदाससे अधिक स्नेह करते थे। इसी कारणसे उन्होंने गोवर्द्धनदासको "प्रधान" पदपर नियुक्त किया और गोवर्द्धनदास राज्यके कृषि-विभागके कर्ता हुए। गोवर्द्धनदासके उस पदपर प्रतिष्ठित होते ही राज्यका समधिक धन उनके हाथमें प्राप्त हुआ। अधिक क्या कहैं माधोसिंह और गोवर्द्धनदासमें परस्पर कुछ भी सद्भाव नहीं था। वरन् वे सदा परस्परमें शत्रुता और झगडा करते रहते थे। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि जालिमसिंहने चतुर और राजनीतिज्ञ होकर भी दोनों पुत्रोंको रीतिके अनुसार शिक्षा न दी इसीसे अंतमें उनको बहुत दुःख उठाना पडा था।

हमने ऊपर जिस समयके राजपरिवार और जालिमसिंहके परिवारका वृत्तान्त वर्णन किया है, उस समय अर्थात् सन् १८१७ ईसवीके नवम्बर मासमें कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिंह बहादुरने प्राण त्याग किये। उनके स्वर्ग चले जानेके पहिलेसे राजप-रिवारमें अति गुप्तभावसे जो राजनैतिक षड्यन्त्रका बीज बोया जाकर अंकुरित हुआ था

वह इस समय प्रकाशित हो गया, और इसीसे अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक घटना हुई। महाराव उमेदसिंह जिस समय इस संसारसे बिदा हुए उस समय राजराणा जालिमसिंह गागरौनके डेरोंमें थे, इन्होंने मृत्युका समाचार पाते ही जिससे महारावकी प्रेतक्रिया यथा रीतिसे हो जाय और युवराज किशोरसिंह कोटेके राजपदपर अभिषिक्त हों, उनकी सुव्यवस्था करनेके लिये शीघ्र ही राजधानीको कूच किया।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "जिस समय पोलिटिकल एजेण्ट (कर्नल टाड) मेवाडसे मारवाडमें गये थे उस समय उन्होंने उक्त मृत्युसंवाद पाकर इस सम्बन्धमें क्या करना कर्तव्य है इसको जाननेके लिये गवर्नमेण्टके निकट एक प्रार्थनापत्र भेजा। इसी अवसरमें इन्होंने कई दिनतक उदयपुरमें विश्राम कर कोटेके राजपरिवारकी आभ्यन्तरिक अवस्था और राजकुमारोंके मन ही मनमें जो गुप्त राजनैतिक उद्देश बदल गये थे, और जिस उद्देशको अनिष्टकारक विचारा था, उसका विशेष तत्त्व जाननेके लिये वह कोटेकी राजधानीको गये। टाड महोदयने कोटेमें जाकर देखा कि वृद्ध जालिमसिंह उस समयतक महलके निवास सुखको छोडकर राजधानीसे आध कोश दूरीपर अपने विश्वासी सेवकोंके साथ डेरोंमें जा रहे हैं, उनके पुत्र और उत्तराधिकारी माधोसिंह रात्रिके समय अपने महलमें रहते हैं। उन्होंने और भी देखा कि कोटेके नवीन महाराव और उनके दोनों छोटे भ्राता पहिलेके समान किलेके महलमें निवास करते हैं, और गोवर्धनदास तथा पृथ्वीसिंह नवीन अधीश्वरको अपनी इच्छानुसार सलाह देकर अपने हस्तगत कर रहे हैं, और कुमार विजनसिंहको उस चक्रसे बाहर कर दिया है। यदि महाराव उमेदसिंहके प्राण त्याग करनेसे पहिले जालिमसिंहके दोनों पुत्रोंमें बहुत दिनोंसे ठना हुआ झगडा प्रकाशित हो जाता और उससे महलमें ही दोनोंके साथ समर होना संभव था; परन्तु जालिमसिंह उस समय तक उस झगडेको अंशमात्र भी न जान सके।

---

(१) सन् १८१९ ईसवीकी २१ वीं नवम्बरको राजराणा जालिमसिंहने जिस पत्रमें अपने स्वामी की मृत्युका समाचार कर्नल टाड साहबको भेजा था उसी पत्रका अनुवाद इस स्थानपर दिया गया है।

"रविवारके दिन अपराह्न समयतक महाराव उमेदसिंहका स्वास्थ्य सब प्रकारसे उत्तम था। सूर्यास्तकी एक घडीके पीछे वह श्रीव्रजनाथजीके दर्शन करनेके लिये गये। महाराव मूर्तिके समीप छः वार साष्टांग प्रणाम करके सातवीं वार जैसे प्रणाम करनेके लिये चले कि वैसे ही मूर्छित होकर अचेत हो गये, उस अवस्थामें उनको महलमें लाकर शय्यापर लिटा दिया। उस समय यथाशक्ति चिकित्सा करनेमें भी कसर न की गई परन्तु सभी चेष्टाएँ विफल हो गईं;रात्रि दो घडी जानेपर महाराव स्वर्गवासी हुए।

शत्रुको भी ऐसा महाशोक प्राप्त न हो, परन्तु भगवान्की इच्छाके विरुद्धमें क्या हो सकता है? आप हमारे बंधु हैं, महाराव जिन राजकुमारोंको छोड़ गये हैं उनका सम्मान और मंगल भार आपके हाथमें अर्पित है, मृत महारावके बडे पुत्र महाराव किशोरसिंह सिंहासनपर अभिषिक्त हुए हैं। मित्रकी अवगतिका कारण प्रकाश किया"।

जिस समय महाराव उमेदसिंह परलोकवासी हुए उसके कुछ ही दिनों पीछे जालिमसिंह भयंकर रोगसे पीडित हुए। राजदरबारमें जो जालिमसिंहकी शासनशक्ति को लुप्त कर महाराव किशोरसिंहके हाथमें राज्यका समस्त भार अर्पण करनेके लिये गुप्तरूपसे तैयारियाँ कर रहे थे, वह लोग जालिमसिंहकी उस कठोर पीडासे मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए, और अपनी आशाको सरलतासे पूर्ण हुआ जानकर बहुत प्रसन्न हो रहे थे, परन्तु कुछ दिनके पीछे जालिमसिंहने सम्पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की। तब वह परम दुःखित हो शोकसागरमें निमग्न हुए, परन्तु उस पीडाके अवसरमें उन्होंने अपनी अभिलाषित कार्यसिद्धिके समस्त अनुष्ठान तैयार कर लिये। उनकी वह कामना उनके वह अनुष्ठान सर्वसाधारणमें विदित होनेपर भी वृद्ध जालिमसिंह उस समयतक उसको बिन्दुमात्र भी नहीं जान सकते थे। बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाड साहबने सबसे पहिले यह समाचार वृद्ध जालिमसिंहसे कहा उन्होंने कहा "कि आपके दोनों पुत्र परस्परमें अनिष्ट साधन करनेके लिये समरकी तैयारी कर रहे हैं और महाराव किशोरसिंहकी अभिलाषा है कि भगवानकी इच्छानुसार आपकी मृत्यु होते ही आपका शासन दण्ड भी आपकी चिताके साथ भस्मीभूत हो जाय।"

शीघ्र ही कोटेमें भयंकर राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित हुआ। राजराणा जालिमसिंह साठ वर्षतक अपने कठिन प्रतापसे कोटेको शासन कर अतुलसामर्थ्यवान् होकर रहे थे, परन्तु इस समय उनके उस प्रताप और उस सामर्थ्यकी जडमें विषम आघात लगना आरंभ हुआ। बृटिश गवर्नमेण्टने राजराणा जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर जिस अतिरिक्त सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये उसका विषमय फल इस समयसे प्रारंभ होने लगा। गवर्नमेण्टने उस नवीन संधिकी धारापर हस्ताक्षर कर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे सर्वमय कर्तापद भोग करनेकी सामर्थ्य दान की। यह किस प्रकार अविवेकता और कैसी अविचारिता दिखाई गई। इसी समयसे यह प्रमाणित होने लगा।

"कर्नल टाड साहबने जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पददान सम्बन्धी अतिरिक्त संधिपत्रको दृढतासे समर्थन किया है। उनके मतसे गवर्नमेण्टकी ओरसे यह कर्त्तव्य कर्म हुआ है, उन्होंने इस कार्यसे केवल इतना ही कारण दिखाया कि पिंडारियोंके युद्धके समयमें जालिमसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टके अनेक उपकार किये थे, इस कारण उन कार्योंके पुरस्कारमें उक्त वंशानुक्रमसे उपभोग्य पद देना अन्यायकारक नहीं है। अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम कर्नल टाड साहबके इस मतको पोषण नहीं कर सकते। हम पूछते हैं कि भिन्न स्वाधीन राज्यके राजमंत्री वा प्रधान शासनकर्तापदको एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये सनद देनेकी क्या बृटिश गवर्नमेण्टको सामर्थ्य थी? कभी नहीं। महाराव उमेदसिंह यदि उस समय अपने भविष्य उत्तराधिकारियोंके मंगलकी ओर दृष्टि रखते, यदि वह यथार्थ राजपूतोंके समान वीर तेजस्वी और नीतिज्ञ होते तो क्या गवर्नमेण्ट जालिमसिंहको उक्त अधिकार दे सकती थी?

उमेदसिंहके आपत्ति करने पर क्या बृटिश गवर्नमेण्ट फिर भी बलपूर्वक जालिमसिंहको न्यायके अनुसार वंशानुक्रमसे कोटेका हर्ता कर्ता विधाता पद देनेमें समर्थ होती ? गवर्नमेंट विलायतके किसी राज्यके किसी अमात्यको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद दे सकती थी ? विलायतकी बात तो दूर जाने दो इस भारतवर्षमें हैदराबाद, हुलकर, सेन्धिया इत्यादि राज्यके किसी प्रधानमंत्रीको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद देनेमें समर्थ होती ? हम इसको कह सकते हैं कि जालिमसिंहको उस भावसे उक्त पद देनेकी सरकारको कोई सामर्थ्य नहीं थी, केवल महाराव उमेदसिंहको अत्यन्त निरीह देखकर कौशलतासे पूर्ण उस प्रकार कार्य हुआ था। मानते हैं कि जालिमसिंहने गवर्नमेण्टकी विपत्तिके समयमें विशेष सहायता की थी परन्तु इन्होंने जो सेना सामन्त रसद धनादि दिया था वह किसका था ? क्या वह महाराव उमेदसिंहका नहीं था ? अवश्य ही मानना होगा कि कोटेके अधीश्वरकी सेना सामन्त लेकर जालिमसिंहने गवर्नमेण्टकी सहायता की थी। चतुर राजनीतिज्ञताके बलसे जालिमसिंह कोटेके प्रबल सामर्थ्यवान् प्रधानमन्त्री होकर भी उस समय महाराव उमेदसिंहके वेतनभोगी सेवक थे, उस अवस्थामें भविष्यत्की ओर दृष्टि न करके गवर्नमेण्टने जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर पद देकर महाराव उमेदसिंहको वंशानुक्रमसे नाममात्रका राजपद रहने देकर अत्यन्त ही अज्ञताका कार्य किया था। इसके फलस्वरूपमें थोडे दिनोंमें ही कोटे-राज्यमें जो अत्यन्त शोचनीय काण्ड संघटित हुआ। पाठक पीछे उसको भली-भाँतिसे पढ चुके हैं।

उपस्थित राजनैतिक विभ्राट्में कर्नल टाडने जिस राजनीतिके अनुवर्ती होकर जिस भावसे कार्य किया उससे हम अत्यन्त प्रसन्न नहीं, उन्होंने पहिलेसे ही जालिमसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये प्राणपणासे चेष्टा की। उन्होंने उस संधिपत्रकी अतिरिक्त धाराको सम्पूर्ण प्रबल करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोंका प्रयोग किया था; परन्तु उन्होंने इसके सम्बन्धमें जो एक बात कही है वह अवश्य ही विचारने योग्य है। वह लिखते हैं कि बृटिश गवर्नमेण्टने जब जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका सर्व शक्तियुक्त शासनकर्ता पद देकर दानपत्रपर हस्ताक्षर किये थे। तब किसी प्रकारसे उसे प्रबल रखना गवर्नमेण्टका प्रधान कर्म था। यदि ऐसा न करती तो राजपूत राजा कभी गवर्नमेण्टके उक्ति और प्रतिज्ञा पर विश्वास नहीं करते। सारांश यह है कि इससे गवर्नमेंटकी गौरवकी हानि होनेकी सम्पूर्ण संभावना थी। इस लिये जालिमसिंहका यह पक्ष समर्थन करना अवश्य कर्तव्य हो गया। कर्नल टाड साहबने अवश्य ही सरलभावसे इस कथाको लिखा है। बृटिश गवर्नमेंटको प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये ऐसा करना अवश्य ही प्रशंसनीय और प्रार्थनीय था, परन्तु कर्नल टाड यदि आजतक जीवित रहते, वह यदि भारतेश्वरीके सन् १८५७ ईसवीके विख्यात घोषणापत्रकी प्रत्येक प्रतिज्ञाको देखते तो वह कभी भी उस प्रतिज्ञाकी रक्षाकी दुहाई देकर अज्ञानता मूलक पक्षका समर्थन नहीं कर सकते थे।

इस समय यथार्थ घटनाका ही अनुसरण करना ठीक होगा। राजकुमार पृथ्वीसिंह और मंत्रीपुत्र गोवर्द्धनदास दोनों ही क्षत्रियस्वभाव सुलभ वीरता बल विक्रममें बलवान दोनों ही साहसी और दोनों ही राजनीति विद्यामें पारदर्शी थे। उन्होंने नवीन महाराव किशोरसिंहको भलीभांतिसे समझा दिया कि वृद्ध जालिमसिंहने अन्यायसे राजनैतिक स्वाधीनताको संग्रह करके राज्यके यथार्थ अधीश्वर पदको ग्रहण किया है और इसी प्रकार अन्याय बृटिश गवर्नमेंटकी सहयोगिता कर एक अतिरिक्त सन्धिधारापर हस्ताक्षर करके बडे पुत्र माधोसिंहको वंशानुक्रमसे सर्वशक्तिसम्पन्न शासनकर्तापद दिया है। अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ महाराव उमेदसिंहका पहिला जो संधिपत्र नियत हुआ था, उन्होंने उसी संधिपत्रको उपस्थित करके महारावको उसका समस्त अर्थ व्याख्या करके समझा दिया, और उसी कारणसे भलीभांतिसे उनके हृदयपर इस भावको अंकित कर दिया। मूलसंधिपत्रके अनुसार राजराणा जालिमसिंह किसी प्रकार भी कोटेके सर्व शक्ति सम्पन्न शासनकर्ता पद वंशानुसार भोग नहीं कर सकते थे। उन्होंने महाराव किशोरसिंहसे कहा कि आप गवर्नमेंटके समीप यह प्रस्ताव करिये कि जिससे गवर्नमेंट मूल संधिपत्रके अनुसार कार्य करनेको तैयार हो। उन्होंने मूलसन्धिपत्रकी दशमी धाराका उल्लेख करके कहा कि इस धारामें लिख रहा है कि "महाराव और उनके उत्तराधिकारिगण तथा स्थलाभिषिक्त अपने राज्यके पूर्ण शासन क्षमतापन्न अधीश्वररूपसे रहेंगे। इस कारण गवर्नमेंट मूलसंधिपत्रमें इस प्रकार लिखकर उसके पीछे किस प्रकारसे अतिरिक्त धारासे जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके पूर्ण शासनशक्ति सम्पन्न मंत्रीका पद दे सकती? उन्होंने और भी कहा कि मूलसंधिपत्रमें महाराव उमेदसिंह और गवर्नमेंट सभीके हस्ताक्षर और मोहर लगी है, परन्तु अतिरिक्त धारामें यह नहीं है और महाराव उमेदसिंह उस अतिरिक्त धाराके आस्तित्व तकको नहीं मानते।

नवीन महाराव किशोरसिंहके साथ राजराणा जालिमसिंह और उनके बडे कुमार माधोसिंहके शीघ्र ही साक्षात् होनेसे रहित मित्रताकी जंजीर छिन्न भिन्न हो जायगी। कर्नल टाड साहबने बृटिश गवर्नमेंटके पोलिटिकल एजेण्टरूपसे इस समय विचित्र अभिनय आरम्भ किया। उन्होंने इस समयसे जालिमसिंहके अनुकूल पक्षका अवलम्बन करके, जिससे जालिमसिंह वंशानुक्रमसे उक्त सामर्थ्यको संभोग कर सकें और जिससे किशोरसिंह और उनके उत्तराधिकारीगण चिरकाल तक नाममात्रके कोटेके अधीश्वर पदपर स्थित रहें, वह इसलिये अपनी समस्त शक्तिको प्रयोग करने लगे। उन्होंने दोनों पक्षोंमें राजनैतिक विवादानलको प्रज्वलित देखकर प्रकाशरूपसे महाराव किशोरसिंहसे कह दिया कि "जब कि हमने जालिमसिंहके समीप प्रतिज्ञा की है तब हम नाममात्रके राजाकी उपाधि धारण करनेवाले कोटेके अधीश्वरकी कोई भी ऊँची अभिलाषाका पक्ष समर्थन नहीं कर सकते। एक मात्र जालिमसिंह ही कोटे राज्यके यथार्थ अधीश्वररूपसे गिने जाते हैं आप केवल नाममात्रके राजा हैं। कोटेके शासनकर्त्ता नहीं हैं।" यह सरलतासे जाना जा सकता है कि कर्नल टाडने केवल अपने प्रभु बृटिश गवर्नमेंटकी अवलम्बित नीतिका पक्ष समर्थन करनेके लिये कहा था

परन्तु महाराव किशोरसिंहने टाड साहबकी उस उक्तिकी ओर इस समय तक ध्यान नहीं दिया। कर्नल टाडने जालिमसिंहके प्रति महाराव किशोरसिंहको उस भावसे दृढ प्रतिज्ञ होते देखकर अंतमें स्थिर किया कि पृथ्वीसिंह और गोबर्द्धनदासकी परामर्शके अनुसार महारावने यह राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित किया है; उन दोनोंको अन्य स्थानपर बिना भेजे हुए किसी प्रकार भी शान्त प्रकृति महाराव किशोरीसिंहको हस्तगत नहीं कर सकते, इस कारण उन्होंने पहिले उस उद्देशको सिद्ध करनेका यत्न किया।

कर्नल टाड और जालिमसिंहने उस अत्यन्त निन्दनीय और अप्रयोजनीय उद्देशको साधन करनेके लिये सबसे पहिले स्थिर किया। जिस किलेमें पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिंहके साथ रहते हैं, उस किलेकी दीवारको लांघकर दोनोंको बंदी किया जाय। परन्तु वह उसी समय समझ गये कि ऐसा करनेसे महा गडबड होगी, और अन्तमें युद्ध होनेसे महाराव किशोरसिंह तक मारे जायँगे, इस कारण उन्होंने इस प्रस्तावको छोडकर अन्तमें यही निश्चय किया कि सेनासे किलेकी दीवारोंको चारों ओरसे घेर रक्खो और जिससे किलेमें भोजनकी सामग्री न पहुँच सके ऐसा उपाय करो ऐसा होनेसे जब भोजनके अभावसे महाकष्ट होगा तब महाराव किशोरसिंह अवश्य ही आत्मसमर्पण करेंगे। वास्तवमें कर्नल टाड और जालिमसिंहके उक्त परामर्शके अनुसार शीघ्र ही वह उपाय किया गया। कोटेके न्यायसंगत अधीश्वर किशोरसिंह बृटिश गवर्नमेंटकी राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये अपनी राजधानीमें अपने महलमें अपनी ही सेनाके द्वारा परिवेष्टित हुए। बृटिश राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है। परन्तु कर्नल टाड और जालिमसिंहकी आशा पूर्ण न हुई, भोजनके अभावसे आत्मसमर्पण न करके महाराव किशोरसिंह प्रजाके ऊपर विश्वास स्थापित कर अपने पैतृक राजकी पूर्ण शासन सामर्थ्यको प्राप्त करनेकी आशासे पांच सौ अश्वारोही हाडासेनके साथ अपने कुलदेवताको तूगमें रखकर विजयपताका उडाय रणबाजेके शब्दसे चारों दिशाओंको कम्पायमान करते हुए साहसमें भरकर किलेसे बाहर हुए। जिस सेनाने कर्नल टाड और जालिमसिंहकी आज्ञासे किलेको घेर रक्खा था उसने किसी प्रकारकी भी बाधा न देकर भयभीत हो मार्ग छोड दिया, और महाराव किशोरसिंह विना बाधा दिये किलेको छोडकर उस पांचसौ सेनाके साथ दक्षिणकी ओरको चले गये।

कर्नल टाड साहबने अपने परवर्ती घटनाके सम्बन्धमें लिखा है "कि महाराव किशोरसिंहके बाहर जानेकी वार्ता सुनते ही एजण्टने शीघ्रतासे जालिमसिंहके डेरोंमें जाकर देखा कि महा गोलमाल उपस्थित हो रहा है, तब उन्होंने वृद्ध जालिमसिंहसे पूछा कि राज्यमें अशान्तिके विस्तारको रोकनेके लिये तुमने किस उपायका अवलम्बन किया है अथवा क्या करनेकी इच्छा करते हो? इस समय जालिमसिंहने जैसा व्यवहार किया वह अत्यन्त ही कष्टदायक था। सत्य हो वा काल्पनिक हो सन्देहसे चलायमान जालिमसिंहके मुखसे एजंण्टने इस समय कृत्रिम

न होकर असामयिक राजभक्तिको प्रकाश करनेवाली उक्तिको श्रवण किया । जालिमसिंहने कहा, "मैं महारावके अधीनमें रहकर राजकर्म करूँगा, नाथद्वारेके मंदिरमें जाकर जीवनके शेष दिनोंको व्यतीत करूँगा, तथापि अपने प्रभुका विश्वासहन्ता होकर कलंकका टीका नहीं लगाऊँगा।" एजेण्टने जालिमसिंहके यह वचन सुनकर विचारा कि इससे हमारे राजनैतिक उद्देशमें कोई विघ्न नहीं होगा, इस कारण उन्होंने बडे आग्रहके साथ कहा कि "आपका उद्देश साधनके विरुद्धमें इस राज्यमें कोई बाधा नहीं है"। परन्तु उपस्थित राजनैतिक विभ्राट्के समय दो भावसे कार्य करनेपर महा अनिष्ट होनेकी संभावना है, यह उन्होंने जालिमसिंहसे कह दिया। महाराव किशोरसिंहके साथ जो पाँच सौ अश्वारोही सेना गई थी, वह जिससे राज्यमें सर्वत्र विस्तार कर महा विभ्राट् उपस्थित न कर सके, इसके लिये जालिमसिंहसे विदा लेकर घोडेपर सवार हो टाड साहब महाराव किशोरसिंहका पीछा करनेके लिये बाहर चले। इन्होंने राजधानीसे तीन कोश दक्षिणमें "रंगवाडी" नामक ग्रामके महलमें जाकर देखा कि महारावके अनुचर और सवार श्रेणीदलके दलमें विभक्त होकर बागकी दीवारके बाहरको जारहे हैं, और महाराव किशोरसिंह, अपनी सामन्तमंडली और उपदेष्टा महलमें भविष्यत्में क्या करना कर्त्तव्य है इसके सम्बन्धमें परामर्श कर रहे हैं यथारीतिसे पहिलेसे समाचार देनेका अब समय नहीं था, इस कारण वह शीघ्र ही सभास्थानमें जा पहुँचे। उस सम्भावित विवादमें मान्य दिखाकर आभिवादन की रीतिको भंग नहीं किया; यद्यपि बहुत थोडी देर सम्मानके साथ वार्तालाप हुई; परन्तु टाड साहबने बडे आग्रहसे महाराव किशोरसिंह और सामन्तोंको बुलाकर उपस्थित अवस्थाको समझा दिया। उन्होंने सामन्तोंसे कहा कि "आपने जिस पक्षका अवलम्बन किया है उससे आप प्रकाशमें गवर्नमेण्टके शत्रु हुए हैं, और इससे आपके अधीश्वरका कोई मंगल नहीं होगा वरन् इससे आपके विध्वंस होनेकी संभावना है"। सामन्तोंने प्रीति और संतोषके बदलेमें यह अत्यन्त कष्टदायक तिरस्कार पाया और एजेण्टने गोवर्धनदासकी ओर आगे बढकर कहा कि "आप ही अपने पिताके विश्वासहन्ता शत्रु हैं, और आपसे महारावका किसी प्रकारका अमंगल प्राप्त नहीं होगा, आपने केवल स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये इस विभ्राट्को उपस्थित किया है, इस कारण इसके फलमें आपको यथेष्ट दंड मिलैगा"। तुरन्त ही गोवर्द्धनदासने अपनी तलवार निकाल कर हाथमें ले ली, परन्तु एजेण्टने कुछ एक हँसते हुए उनकी ओर अवज्ञा दिखाकर गोवर्द्धनदासके गर्वित उत्तरकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर महाराव किशोरसिंहके समीप आगे बढकर उनसे कहा कि "महाराव! इस समय भी समय है। इस समय भी विशेष करके भविष्यत्की चिन्ता करनेका समय है, आप जिस मार्गपर अग्रसर हुए हैं वह किसी प्रकार भी मंगलकारक नहीं है, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि न्यायसंगत और आपके पदोचित जिस किसी प्रार्थनाको पूर्ण कर दूँगा, परन्तु केवल जालिमसिंहकी सामर्थ्यको लोप नहीं कर सकता, कारण कि सर्वसाधारणके विश्वासकी रक्षाके लिये हम उनकी उस शासनसामर्थ्यको अक्षत रखनेमें

बाध्य हैं, परन्तु आपके पद सम्मान और सुखस्वच्छन्दताकी ओर हम सम्पूर्ण दृष्टि रखते हैं, । एजेण्टके यह वचन सुनकर महाराव जिस समय इधर उधर कर रहे थे, उस समय एजेण्टने ऊँचे स्वरसे "महारावका घोडा ले आओ" यह कहकर महाराव किशोर सिंहकी बाहु पकडी और दोनों सभाके कमरेसे बाहर हुए । महाराव किशोरसिंहने कुछ भी आपत्ति नहीं की । अंतमें उन्होंने घोडोंकी पीठपर चढकर एजेण्टसे केवल इतना कहा, कि "मैं आपकी ही मित्रताके ऊपर सब प्रकारसे निर्भर हूँ । महारावके भ्राता पृथ्वीसिंहने भी उस समय अपने मनके भावको प्रकाशित किया था, परन्तु सामन्त मंडली मौन रही, गोवर्द्धनदास और उनके दो एक राजपारिषदोंने उस समय जो एक बात कही एजेण्टने उसपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया । एजण्ट (टाड) अपने परिषदोंसे युक्त होकर महाराव किशोरसिंहके साथ घोडेपर चढकर चले । सभी चुपचाप थे, कोई कुछ न बोल सका, इस प्रकारसे उन सबने किलेमें प्रवेश किया । एजेण्टने महाराव किशोरसिंहको राजसिंहासनपर बैठाकर पूर्व प्रतिज्ञाकी पुनरावृत्ति करके कहा कि " वर्तमान संकटावस्थामें महाराव विशेष सुविचारके साथ कार्य करें, उन्होंने और भी महारावसे कह दिया कि "महारावके भ्राता पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदास दोनों ही महारावके पाससे अलग रहेंगे । गोवर्द्धनदासको हाडौतीसे एक वार ही वाहर करना होगा । इसी निश्चयके अनुसार जून मासमें गोवर्द्धनदास राज्यविद्रोहके अपराधमें दोषी ठहराकर निर्वासितरूपसे दिल्लीमें रख दिये गये । और सपरिवार उसके भरण पोषणका प्रबंध रियासतसे कर दिया गया । उसी समयसे महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमें फिर पूर्ववत् सद्भाव स्थापित हो गया।

" महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमें फिर सद्भाव स्थापन करनेके लिये महामहोत्सवकी तैयारी की गई । उसके उपलक्षमें सर्वसाधारण प्रजा स्वतः प्रवृत्त होकर महा आनन्द ध्वनि करती थी । महलमें गन्तव्य मार्गसे सब दलके दल इकट्ठे होकर जालिमसिंह और उनके पुत्रको अभिवादन करते थे । पूजनीय जालिमसिंह इस संमिलन स्थानमें पितृस्थानीय रूपसे गये, और राजकुमार अपराधी सन्तानके समान क्षमा मांगनेके लिये अग्रसर हुए । उन्होंने आगे बढकर जालिमसिंहकी जानु आलिंगन करनेके लिये चेष्टा की, जालिमसिंहने उस सन्मान प्रदर्शनको रहित करनेमें वृथा चेष्टा की । और उस प्रकार नम्रभावसे अपने अधीश्वरके प्रति सम्मान दिखानेमें कसर न की । पीछे परस्परके प्रति विश्वास विज्ञापन और सद्भाव प्रकाशक वार्तालाप होने लगी ।

एकमात्र कर्नल टाडके राजनैतिक कौशल यत्न और उद्योगसे महाराव राजा किशोरसिंह, पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदासके न्यायसंगत उद्योगके व्यर्थ होजानेपर निरीह स्वभाव महाराव किशोरसिंह फिर साक्षी गोपालस्वरूपसे राजसिंहासनपर विराजमान होनेके लिये तैयार हुए । वीर तेजस्वी गोवर्द्धनदासके निकाले जाने पर कर्नल टाडने जालिमसिंहके साथ महाराव किशोरसिंहका सद्भाव स्थापित करा दिया, ऐश्वर्य आडम्बर

और राजसम्मान दिखाकर किशोरसिंहको जालिमसिंहने हस्तगत करनेका उद्योग किया। सत्यप्रिय साधु टाडने एकमात्र बृटिश राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये कोटेके क्षेत्रमें यह विचित्र अभिनय किया। उन्होंने आत्मविवेक बुद्धिका अपमान करके, कूट राजनैतिक कौशल जालका विस्तार कर महाराव किशोरसिंहकी संमान स्वत्व स्वाधीनता और क्षमताको लोप कर जालिमसिंहका पक्ष समर्थन किया। जो हो कर्नल टाडने किशोरसिंह और जालिमसिंहमें सद्भाव स्थापित कराके प्रकाशरूपसे महाराव राजा किशोरसिंहके राज्याभिषेककी तैयारी की। सन् १८२० इसवी अगस्त मासकी सत्रह तारीखको बडी धूमधामके साथ वह अभिषेक कार्य किया गया। राजपुरोहितने सबसे पहिले महाराव किशोरसिंहके मस्तकपर राजतिलक दिया, राजटीका देते ही कर्नल टाड साहबने सबसे आगे बढकर राजाके मस्तकपर राजतिलक देकर महाराज किशोरसिंहको अनेक भांतिके हीरोंका अलंकार पहारकर उनकी कमरमें राजदंडस्वरूपसे तलवार बांधे दी। महारावने भेंटमें गवर्नमेण्टको एकसौ सुवर्णकी मोहर उपहारमें दी। इस समय भारतवर्षके गवर्नर जनरलके नामसे कर्नल टाडने राजराणा जालिमसिंहको महामूल्यवान् राजवेश खिलत दिया। जालिमसिंहने उस वेशको पाकर उपयुक्त उक्तिसे कृतज्ञता प्रकाशके साथ नजरमें गवर्नमेण्टको पचीस सुवर्णकी मोहरें और भी दान कीं।

इस प्रकाश्य अभिषेकके उत्सव अनुष्ठानका एक गुप्त उद्देश था। कर्नल टाडने इस समय उस उद्देशको सिद्ध कर लिया। पहिले प्रस्तावके अनुसार माधोसिंहने आगे बढकर कोटेके फौजदाररूपसे महाराव किशोरसिंहके मस्तकपर राजतिलक देकर कमरमें तलवार बांध दी. और नजर दी; प्रचलित रीतिके अनुसार महारावने उस भेंटको लौटा कर माधोसिंहको खिलत देनेके साथ उनको वंशानुक्रमसे कोटेके फौजदारी पदकी सनद दान की। इस सनदके लिये ही इतनी तैयारी और उद्योग था। वह उद्योग इतने दिनोंमें सफल हुआ। कर्नल टाड साहबने लिखा है "कि सबमें जो सद्भाव पुन: स्थापनका सूत्रपात हुआ, उसको बढानेके लिये एजेण्ट (टाड) उक्त अभिषेकके उत्सवके पीछे और एक महिने तक कोटे राज्यमें रहे। उन्होंने इस समय महाराजको समझा दिया कि वह जैसी अवस्थामें पडे हैं उसीके अनुसार कार्य करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है, और उधर उन्होंने माधोसिंहको समझा दिया, कि पवित्र संधिपत्रसे उनके ऊपर जो भारी दायित्व अर्पित हुआ है वह जिससे दुर्व्यवहार और निर्बुद्धिता वा असावधानतासे उस संधिको भंग न करें। कोटेको छोडनेके पहिले ४ सितम्बरको एजेण्टने फिर सबको एक समितिमें इकट्ठा किया, और उसीमें सबने अकृत्रिम सद्भाव स्थापित किया। जालिमसिंह महाराव और माधोसिंह परस्परमें अतीत घटनाके लिये परस्पर एक दूसरेको क्षमा करके भविष्यत्में मित्रभावसे रहैं ऐसी प्रतिज्ञा की"।

(१) कर्नल टाड साहबने अपने दूसरी बारके भ्रमणवृत्तान्तमें इस अभिषेकके उत्सवको वर्णन किया है। वह भ्रमणवृत्तान्तमें देखो।

"सत्यकी जय अवश्य ही होगी। यद्यपि कर्नल टाड साहबने प्रबल बृटिश शक्तिकी सहायतासे कोटेके न्यायमत अधीश्वर महाराव किशोरसिंहकी सामर्थ्यको लोप कर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे राजशक्ति दी परन्तु भविष्यत्में उस अन्याय और असत्यकी पराजय भली भाँतिसे हो गई।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "उपरोक्त साक्षात् शेष होनेके समय राजराणा जालिमसिंहने अपने राजनैतिक जीवनके शेष अभिनय स्वरूप दो उपयुक्त कार्य किये, उन कार्योंसे उनके अधीश्वर प्रभु और कोटेकी प्रजाके प्रति उनकी विलक्षण सज्जनताने प्रकाश पाया। अपनी मृत्युके पीछे अपने प्राचीन विश्वासी सेवकोंके लिये उन्होंने एक प्रतिभूपत्र तैयार करके महाराव किशोरसिंह, पुत्र माधोसिंह और एजेण्टसे यह कहकर उनको हस्ताक्षर करनेका अनुरोध किया कि "यदि हमारे उत्तराधिकारी प्राचीन कर्मचारियोंको कार्यमें नियुक्त करनेमें असम्मत हों तो उनको सम्पूर्ण स्वाधीनता देनी होगी, और उसके अतीत किसी कार्यके लिये भी उनसे जवाबदेही नहीं ली जायगी; और वह अपनी इच्छानुसार निवास कर सकेंगे।" महाराव और माधोसिंहने उस पत्रपर हस्ताक्षर करके जालिमसिंहकी अभिलाषाके अनुसार बृटिश एजेण्टने भी उस पत्रके मतसे जिससे भविष्यत्में कार्य हो उसके प्रतिभू स्वरूप हों स्वयं उसपर हस्ताक्षर कर दिया"।

जालिमसिंहके और शेष कार्योंके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहबने लिखा है, "कोटे राज्यमें जालिमसिंहने जिस अत्यन्त कष्टदायक दंड नामक करका प्रचार किया था उस करको एक बार ही दूर कर दिया।" इस रक्तशोषक करके रहित होनेसे जालिमसिंह एक ओर जैसे कोटेकी सर्व साधारण प्रजासे वृद्धावस्थामें प्रशंसाको प्राप्त हुए, उधर गवर्नमेण्ट भी उसी प्रकारसे इस कार्य द्वारा जालिमसिंहसे अत्यन्त संतुष्ट हुई। जालिमसिंहने अपनी कीर्तिकी रक्षाके लिये "दंडकर" रहितके स्मरण करनेके अर्थ कोटे-राज्यके प्रत्येक प्रधान २ नगरमें पत्थरका स्तंभ स्थापित करके उसपर कर रहितकी आज्ञा लिखवा दी।

सप्तम अध्याय ७.



राजनैतिक विभ्राटमें कर्नल टाडका व्यवहार—बृटिश गवर्नमेंटका जालिमसिंहका पक्ष समर्थन-गोवर्धनदासको निर्वासन दंड–मालवादेशमें गोवर्धनकी उपस्थिति–कोटेमें फिर राजनैतिक महा विभ्राट्—महाराव किशोरसिंहके साथ सेनाका योगदान–जालिमसिंहका महलके ऊपर गोले व-र्षाना–महाराव किशोरसिंहका किलेको छोडकर बाहर जाना–महारावका बूँदीमें जाना—राजभ्रातः विशनसिंहका जालिमसिंहके साथ योगदान—गोवर्धनदासका महारावके साथ योगदेनेकी चेष्टा करना–उसका व्यर्थ होना—महारावका बूँदीको छोड़ना–महारावके प्रति हाडाजातिका सहानुभूति प्रकाश करना—महारावका वृन्दावनमें आगमन—गोवर्धनदास और बृटिश गवर्नमेंटके अधीनमें स्थित राजपुरुषोंका षड्यन्त्र—महारावका सेना सहित कोटेकी ओरको जाना–महारावका घोषणापत्र प्रचार करके हाडाजातिको अपने पक्षमें योग देनेके लिये बुलाना–महारावका बृटिश गवर्नमेंटके निकट अपना प्रस्ताव भेजना–जालिमसिंहका आचरण–महारावके विरुद्ध जालिमसिंहकी सेनाके साथ बृटिश सेनाका अग्रसर होना–सम्मिलित सेनाका महारावपर आक्रमण करना–महारावकी सेनाका जालि-मसिंहके व्यूहको भेदन करना-अंग्रेजी सेनाका उस कार्यमें बाधा देना—अंग्रेजोंके विरुद्ध समर करनेकी अनिच्छासे महारावका सेनासहित रणक्षेत्र त्याग करना – अंग्रेजी सेनाका फिर महारावकी सेनापर आक्रमण करना–महारावकी सेनाका उस आक्रमणको व्यर्थ करना–महारावका सेनासहित प्रस्थान–अं-ग्रेजी सेनाका महारावके पैदलदलका नाश करना–कुमार पृथ्वीसिंहकी मृत्यु–दो वीरोंकी वीरता दिखाना–कर्नल टाडका महारावके साथ और संयुक्त सामन्तोंके साथ क्षमाप्रदर्शनमूलक घोषणापत्रका प्रचार करना–सामन्तोंका अपने २ स्थानको चले जाना–समरका फल–अनुसंगिक घटनावली–महारावके साथ फिर संधिबन्धनकी चेष्टा करना–नूतन संधिपत्र- महारावके लिये निर्द्धारित वृत्तिकी सूची–कर्नल टाडकी व्यवस्था—व्यवस्थापत्र–महारावके कोटेमें आनेके समय व्याघातमूलक घटना—महारावका फिर अपने राज्यमें चलेजाना--विशनसिंहका राजधानीसे दूसरे स्थानको भेजना--जालिमसिंहके साथ महाराव किशो-रसिंहका संमिलन--माधोसिंहके साथ महारावकी प्रीति स्थापन--जालिमसिंहकी मृत्यु--उनकी जीव-नीकी समालोचना।

कर्नल टाडके समान राजपूत बान्धव अंग्रेज यहाँतक भारतमें कोई भी नहीं आया। यह पाठकोंको मुक्तकंठसे स्वीकार करना होगा। राजपूत जातिके प्रति साधू टाडका यहाँतक अनुराग, प्रीति और स्नेह था कि उन्होंने सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये समय २ पर एकमात्र उस अनुराग, प्रीति और स्नेहसे परिचालित होकर अपने प्रभु गवर्नमेण्टके द्वारा अनुष्ठित राजपूत जातिके अपकारमूलक कार्यका प्रतिवाद, निन्दा और कठोर समालोचना करनेमें भी कसर न की। देशियोंके पक्षका अवलम्बन करनेसे किसी अंग्रेज कर्मचारीको भी आजतक उस भावसे सत्यके सम्मानकी रक्षा करनेका साहस नहीं देखा। हम प्रत्येक पगपर इस इतिहासमें यथास्थान कर्नल टाड साहबके साधु व्यवहार, उदार आचरण और निरपेक्ष न्याय विचार और श्रेष्ठ अनुष्ठानकी मुक्त कंठसे ऊँची प्रशंसा करते आये हैं। परन्तु अत्यन्त दुःखित हृदयसे वर्तमान प्रबन्धमें उनके एक मात्र राजनैतिक अभिनयका विषमय फल देखकर हम यहां दुःखी हुए हैं।

यद्यपि हम भलीभाँतिसे जान गये हैं, कि कर्नल टाड अपने उपरितन प्रभू भारतवर्षके गवर्नर जनरलकी आज्ञासे अंग्रेज गवर्नमेण्टके राजनीतिकी आज्ञा पालन करनेके लिये यह शोचनीय अभिनय करनेके लिये बाध्य हुए, तथापि हमारा ऐसा विचार है कि वह स्वयं जिस कार्यमें मध्यस्थ थे और स्वयं ही जिस कार्यके एक प्रधान नेता थे वह चाहते तो अवश्य ही उस शोचनीय अभिनयको अन्य प्रकारसे रहित कर सकते थे।

महाराव राजा उमेदसिंहके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका संधिबंधन जिस समय हुआ था; उस समय राजराणा जालिमसिंहने कोटेके सर्वमय प्रभु स्वरूपसे असीम सामर्थ्य चलाई थी, इसको कौन नहीं मानेगा? परन्तु तब उन जालिमसिंहको कोटेमें सर्वमयं प्रभु स्वरूपसे वंशानुक्रमसे रहनेका अधिकार देनेमें बृटिश गवर्नमेण्ट किसी प्रकार भी सामर्थ्यवान् न हुई, इस बादको कौन नहीं मानैगा? जालिमसिंहने पिंडारियोंके युद्धके समयमें और उससे पहिले अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सम्पूर्णरूपसे सहायता की थी, परन्तु कोटेके प्रकृति राजशक्तिसम्पन्न उमेदसिंहको वंशानुक्रमसे साक्षी गोपाल स्वरूपमें रखकर उनकी वंशानुक्रमसे समस्त शासनशक्तिको हरण कर जालिमसिंहको उस शासनशक्तिका देना कौन राजनीतिक संगत था? कौन धर्मशास्त्र संगत था? कौन सभ्यता-विधि संगत था? जालिमसिंह तो महाराव उमेदसिंहके वेतनभोगी भृत्यमात्र थे उन्होंने जो सेनाकी सहायता, रसदकी सहायता और जो आर्थिक सहायता की थी, वह सभी उमेदसिंहकी थी, जालिमसिंहकी निजकी कुछ भी नहीं थी, इस अवस्थामें उन जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेण्टने पुरस्कार स्वरूपमें किस प्रकार यथार्थ नरपतिकी शक्तिको हरण करके उनको उसे वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये दिया था? किसी राज्यके इतिहासमें हमने ऐसी घटनाका दूसरा प्रमाण नहीं पाया! एक राज्यके प्रधान मंत्रीद्वारा अन्य राजाको उपकार प्राप्त हुआ है इसीसे क्या उस अन्य अन्य नरपतिके न्यायके वक्षस्थलपर, धर्मकी छातीपर, सत्यके वक्षस्थलपर पदाघात करके उस प्रधानमंत्रीको एक राज्यकी शासन सामर्थ्य वंशानुक्रमसे उपभोग करनेके लिये दी जा सकती है, जालिमसिंहके द्वारा कोटेराज्यके बहुतसे उपकार हुए थे यह उन्होंने वेतनभोगी कर्मचारी स्वरूपसे अपने कर्तव्यको पालन किया था, उसके लिये वह कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे भोग करनेके अधिकारी नहीं हो सके, गवर्नमेण्टने न्याय न करके बलपूर्वक महाराव उमेदसिंहको अत्यन्त निरीह और नम्र देखकर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका प्रकृत अधीश्वरपद प्रदान किया, इसको कौन नहीं मानेगा। यदि एकमात्र जालिमसिंहको ही जन्मभर तक उक्त शासनशक्ति चलानेकी सामर्थ्य देते तो इतनी हानि नहीं होती, वंशानुक्रमसे उस शासनशक्तिका देना किस प्रकार युक्तिसंगत हो सकता था? जालिमसिंह बुद्धिमान् नीतिज्ञ और शासनकार्यमें सुदक्ष थे, इससे उनके उत्तराधिकारी भी इनके समान होंगे यह गवर्नमेण्टने किस प्रकार स्थिर किया था? और जालिमसिंहके समान उनके उत्तराधिकारी भी केवल शासनशक्तिको पाकर संतुष्ट होंगे, कोटेके यथार्थ अधीश्वरके कभी भी अनिष्ट कामना नहीं करेंगे, यह किस प्रकारसे विचार हुआ था? राजनीतिज्ञ कर्नल टाड साहबने अवश्य ही जालिमसिंहको

उक्त अधिकार देनेके समय यह विचार लिया था। परन्तु उन्होंने ऐसा विचार करके भी न्यायसंगत कार्य नहीं किया। वरन् बृटिश गवर्नमेण्टके उस विचारहीन अनुष्ठानके कार्यको परिणत करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोंको प्रयोग कर इतिहासमें अपनी एकमात्र पक्षपातकी रेखाको अंकित किया है।

जालिमसिंहको अन्यायरूपसे कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे उपभोग कर-
नेका अधिकार देकर जो विषैला फल फला था वंशानुक्रमसे उसीसे कोटेकी शोचनीय
अवस्था हुई। वह हमारे पाठकोंको परवर्ती इतिहाससे विदित हो सकैगा। उस शोचनीय
अभिनयके लिये हम इतने दुःखित नहीं हैं, परन्तु इसी एकमात्र अनुष्ठानसे
अंतमें कोटाराज दो भागोंमें विभक्त हो जायगा, कोटेके मूलराजकी शक्ति एकबार ही
हीन हो जायगी, जालिमसिंहके उत्तराधिकारी कोटेके प्रायः आधे अंशके अधीश्वर होंगे!
बृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिको फलस्वरूप हाडावती देशके सामान्य झालापरिवार भी
महान् ऊँचे राजपदपर प्रतिष्ठित होंगे यह कौन जानता था।

पूर्व अध्यायमें वर्णन कर आये हैं कि बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाडने
मध्यवर्ती होकर बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये महाराव किशोरसिंहको
सम्मत कराकर उनको साक्षी गोपालस्वरूपसे कोटेके सिंहासनपर बैठाल कर जालिम-
सिंहको कोटेके हर्ता कर्ता पदपर दृढरूपसे नियुक्त कर दोनोंमें प्रीति स्थापन करके
कोटेराज्यको छोड दिया। कर्नल टाड साहबने विचारा था कि बृटिश गवर्नमेण्टने इस
कार्यको जब न्यायमूलक कहकर उसे प्रबल रखनेमें यत्न करना चाहा है तब महाराव
किशोरसिंह भी अवश्य ही उस कार्यको न्यायमूलक विचार कर अपने समस्त स्वार्थके
नष्ट होनेपर भी जालिमसिंहके साथ चिरकाल तक सद्भावसे रहेंगे; परन्तु शीघ्र
ही उनका वह अनुमान व्यर्थ हो गया। शीघ्र ही फिर किशोरसिंहके न्यायसंगत
स्वार्थके साथ जालिमसिंहके अन्यायमूलक स्वार्थका भयंकर संघर्षण हुआ।

जालिमसिंहके पुत्र गोवर्द्धनदासको समस्त षड्यन्त्रका मूल और उसके द्वारा
परिचालित होकर महाराव किशोरसिंहको जालिमसिंहकी शक्ति लोप करनेके लिये
उद्यत जानकर कर्नल टाड और जालिमसिंहने उस गोवर्द्धनदासको कोटेराज्यसे एक
बार ही निकाल दिया। गोवर्द्धनदासने राजनैतिक बंदीस्वरूपसे दिल्ली और इलाहाबाद
इन दोनों नगरोंमेंसे दिल्लीमें रहनेकी इच्छा की इस कारण उसकी प्रार्थनाके अनुसार उसको
दिल्लीमें ही बंदीभावसे रक्खा गया। कर्नल टाड साहबने लिखा है "कि दिल्लीमें
वह अपने कुटुम्बसहित रहे थे, और उनका भरण पोषण करनेके लिये उचित वृत्ति
नियत कर दी गई थी, वह जिस स्थानपर रहें वहाँ उनके भ्रमण और व्यायाम करने-
के लिये विस्तारित स्थान दिया गया। और उस स्थानपर अंग्रेजोंने उनकी ओर दृष्टि
रखनेके लिये कितनी ही अश्वारोही सेनाको नियुक्त रक्खा था"।

इसके पीछे कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "जाबुआके महाराजकी एक
जारज कन्याके साथ विवाह करनेके लिये निकाले हुए गोवर्द्धनदासको सन् १८२१

ईसवीमें मालवादेशमें जानेकी आज्ञा देकर अत्यन्त अज्ञानताका कार्य किया गया। गोवर्द्धनदासके उस नगरमें पहुंचते पहुंचते सब प्रकारसे शांतिके बदलेमें कोटेराज्यमें उत्तेजनाके लक्षण प्रकाशित हो गये। कोटे और बूँदीराज्यमें षड्यंत्रमूलक पत्रादिके प्रकाशित न होते २ जालिमसिंहके प्राचीन विश्वासी वीरोंमें विद्रोह और उत्तेजना दिखाई दी। सैफअली नामक तीस वर्षके पुरातन सेनानायक जो "राजपलटन" अर्थात् नरपतिके खास सेनादलके नेता थे, और जो विश्वासी वीरता और दक्षताके लिये विशेष विख्यात थे ऐसा जाना जाता है कि पहिले उन्होंने अपने नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिंह) का पक्ष अवलम्बन किया था। पहिले इस संवादको मिथ्या अनुमान किया गया, परन्तु ज्ञानी जालिमसिंहने इसमें विश्वास न करके वह असंतुष्ट सेनादल जिससे महलमें स्थित महारावके साथ न मिल सके, इस कारण दोनोंके मध्यस्थलमें एक सेनाको रक्खा। शीघ्र ही महाराव जलमार्गसे जाकर सैफअली और उनके अधीनमें स्थित कितनी ही सेनाको महलमें ले आये, इस समाचारके प्रचारित होते ही एक नेत्रहीन जालिमसिंहने तामदानपर चढकर अपनी सेनाके साथ सैफअलीकी शेष सेनापर आक्रमण किया, और दो बडी २ तोपोंको ऊँचे स्थानपर इस भावसे रखकर गोलोंका चलाना प्रारंभ किया कि उससे एकमात्र राजधानी ही नहीं वरन् चम्बल नदीके दोनों किनारोंके देश और मकानोंके ऊपर गोलोंकी वर्षा होने लगी। इस गोलोंकी वर्षासे महाराव, उनके भ्राता पृथ्वीसिंह और उनके अनुचर नौकापर चढ कर नदीके पार हो बूँदीको चले गये। इस और बचीबचाई सेनाने अस्त्र छोडकर आत्मसमर्पण किया। प्रबल उद्योगके साथ इस अनुष्ठानको करके जालिमसिंहने, महारावके द्वारा अपने प्रभुत्वके नाशकी चेष्टा व्यर्थ कर दी, और हाडाजातिका राजसिंहासन शून्य हो गया। उस युद्धके समय विशनसिंहने दोनों भ्राताओंसे अलग होकर जालिमसिंहके साथ मेल किया, जालिमसिंहने इस समय विशनसिंहके साथ गुप्तभावसे जैसा सम्मान करते हुए व्यवहार किया उसी प्रकारका मन्तव्य प्रकाश किया, वह सरलतासे जाना जाता है"।

कर्नल टाड साहबकी उक्त उक्तिसे पाठक भलीभांतिसे जान गये होंगे कि चतुर चूडामणि जालिमसिंह कैसे पुरुष थे और उन्होंने विश्वासघातीके समान कैसा कार्य किया था। जो किशोरसिंह न्यायके अनुसार धर्मके मतसे जालिमसिंहके अधीश्वर थे जालिमसिंहने उन्हीं अधीश्वर किशोरसिंहके विरुद्धमें "तोपें चलानेमें एक मुहुर्त्तमात्रका भी विलम्ब नहीं किया। जिस कोटेराज्यमें सूचीके अग्रभागमात्र भूमिमें जालिमसिंहका न्यायके अनुसार कोई भी अधिकार नहीं था, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरकी करुणा दयासे जालिमसिंहने कोटेमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त कर फौजदार पदको प्राप्त किया, जिस कोटे राज्यसे जालिमसिंह एक समय सर्वस्वान्त हो गये थे, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरने फिर उनको क्षमाकर उनको ग्रहण किया और अपने पुत्रको अभिभावक पदका प्रदान किया था, वही जालिमसिंह उन नरपतिके पोतेके विरुद्धमें तोपें चलाकर अपने स्वार्थ साधन करनेके लिये अग्रसर हुए। यह क्या विचित्र राजनीति नहीं कही जायगी, यह

बात क्या अत्यन्त अन्याय अत्यन्त अधर्ममूलक नहीं समझी जायगी। जालिमसिंहने जो आचरण किया वह सरकारके बलपर ही किया। जालिमसिंह किशोरसिंहको कोटेसे निकाल कर ही शान्त न हुए, वरन् उन्होंने महारावके भ्राता विशनसिंहको कि जिन्होंने राजसिंहासन प्राप्तिकी इच्छासे जालिमसिंहका पक्ष अवलम्बन किया था, धर्मके मस्तक-पर पदाघात करके बृटिश एजेण्ट कर्नल टाड महोदयके सम्मुख उन विशनसिंहको कोटेके अधीश्वरपदपर अभिषेक करनेके लिये प्रस्ताव किया। परन्तु साधु टाड साहबने किसी प्रकारसे भी जालिमसिंहके उस घृणित प्रस्तावमें अपनी सम्मति नहीं दी। कर्नल टाडके विषयमें अवश्य ही यह प्रशंसाकी बात कहनी होगी। परन्तु महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको प्राप्त करनेके लिये यह दूसरी बार उद्योग किया। यद्यपि जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये इससे पीछे कर्नल टाडने जो राजनैतिक अभिनय किया उस अनुष्ठानसे जालिमसिंहका मत अन्याय क्षमताके लोभसे विश्वासहन्ता हो सकता था, परन्तु उदारहृदय सत्यप्रिय टाडके पक्षमें यह कभी शोभा नहीं देता।

महाराव किशोरसिंह बृटिश गवर्नमेण्टके हस्ताक्षर सहित पहिले संधिपत्रके मतसे कोटेकी सम्पूर्ण शासनशक्तिसम्पन्न राजशक्तिको पानेके लिये वीरतेजा हाडा-जातिके समीप प्रतिवासी राजाओंसे सहायता लेनेको गये। इसके पीछे जालिम-सिंहके परामर्शके अनुसार कर्नल टाड और गवर्नमेण्टने उस महाराजके विरुद्धमें जैसा अनुष्ठान किया उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेके पहिले कर्नल टाडने अपने हाथसे इतिहासमें जो वर्णन किया है हम इस स्थानपर सबसे पहिले उसको प्रकाश करना उचित जानते हैं। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "उपस्थित उपद्रवोंके निवारणके पक्षमें एकमात्र संधिकी धारासे कार्य परिणत कर सर्व साधारणमें दृढरूपसे शांति रखनेका उपाय था। बूँदीके अधीश्वरके निकट यह कहकर पत्र लिखा गया कि भागे हुए किशोर-सिंहको अतिथि स्वरूपसे ग्रहण कर उनके साथ कुटुम्बियोंके समान व्यवहार करनेका कुछ निषेध नहीं है, परन्तु यदि जालिमसिंहके विरुद्धमें किशोरसिंह समर करनेके अभिप्रायसे सेना इकट्ठी करें तो बूँदीराजको उसके लिये सम्पूर्ण दायी होना होगा, उस समय नीमच नामक स्थानपर जो बृटिशसेनादल रहता था उस सेनादलके अंग्रेज सेनापतिको यह आज्ञा दी गई, कि जावुआ और बूँदीराज्यके मध्यस्थ मार्गमें एक सेना स्थापित करो। गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिंहके साथ मिलनेकी चेष्टा करें तो वह दल गोवर्द्धनदासको मृत वा जीवित अवस्थामें बंदीकर ले। उसको पकडनेके लिये जो उत्तम अनुष्ठान किया गया, गोवर्द्धनदासने गिरिसंकटसे गुप्त पन्थद्वारा भागकर उस अनुष्ठानको व्यर्थ करदिया। किन्तु बूँदीराजको उस समय भयभीत और इधर उधर करते हुए देखकर वह बराबर मारवाड राज्यमें भाग गये। किन्तु मारवाडपति गोवर्द्धन-दासको किसी प्रकार भी आश्रय देनेमें सम्मत न हुए, तब वह शीघ्र ही दिल्लीमें आनेको बाध्य हुए, गोवर्द्धनदास दिल्लीमें गये तब उनको दृढरूपसे बंदीभावसे रक्खा गया। परन्तु ऐसा जाना जाता है कि पहिले गुप्त षड्यन्त्रके मतसे ही

गोवर्द्धनदासने दिल्लीमें आकर आत्मसमर्पण किया था; कारण कि शीघ्र ही महाराव किशोरसिंह बूँदीको छोडकर वृन्दावनकी ओरको तीर्थयात्रा करनेके लिये गये और उस समय ऐसी आशा की थी कि हमको अपने पैतृक कुलदेवता व्रजनाथजीके मंदिरमें अवश्य शांति और संतोष प्राप्त होगा, इसीसे उन्होंने जीवनके शेष समयको धर्मकी आलोचनामें व्यतीत करनेकी अभिलाषा की थी। वह जितने दिनोंतक बूँदीमें रहे थे उतने दिनोंतक सर्व साधारणमें किसी प्रकारके राजनैतिक उपद्रव होनेकी सम्भावनाका अनुमान नहीं था। कोटसे बूँदी बहुत पास थी, इस कारण सबने विचारा कि महाराव क्रोधके वश यद्यपि बूँदीमें गये हैं पर फिर शीघ्र ही लौट आवेंगे। परन्तु महाराव किशोरसिंहके बूँदीको छोडकर उत्तरकी ओरको जाते ही सरलतासे प्रकाशित हो गया कि बूँदीसे न सही वह अन्य देशसे अपने स्वार्थसाधनके लिये सम्पूर्ण रूपसे सहायता पालेंगे। रजवाडोंके प्रत्येक राजा प्रत्येक प्रधान २ सामन्तने महारावको उस विपत्तिके समयमें सहानुभूति प्रकाश करनेवाला पत्र लिखकर धीरज दिया था, और वह जिस जिस राज्यमें होकर गये थे उसी राज्यके अधीश्वरने महाराव किशोरसिंहको कोटेके अधीश्वर रूपसे महा आदरसे ग्रहण करके उनके प्रति यथेष्ट सम्मान दिखाया था, "केवल जो भरतपुरराज्य कोटे राज्यके अत्यन्त समीप था, उस राज्यके अधीश्वरने ऐसा ऊंचा सम्मान नहीं दिखाया। विख्यात भरतपुरके अधीश्वरने कितने ही प्रतिनिधियोंको महाराव किशोरसिंहके समीप भेजकर क्षमा प्रार्थना की, उन्होंने कहा कि वह अत्यन्त वृद्ध और दृष्टिशक्ति हीन होनेसे महारावके निकट स्वयं नहीं आ सके हैं। जाट जमीदारने सौभाग्यबलसे ऊंचा पद पाया है, इस कारण उनके निकट जिस प्रकारका सम्मान प्रकाश करना उचित था जाटपतिको उसे न करते देखकर महाराव किशोरसिंहने अवज्ञाके साथ उनके प्रतिनिधिको विदा देकर उपहार द्रव्य फेर दिये। महारावके इस गर्वित आचरणके कारण जाटपतिने शीघ्र ही महारावको भरतपुर राज्यकी सीमा छोडनेकी आज्ञा दी। महाराव किशोरसिंहने कुछ समय तक वृन्दावनधाममें "व्रजकुंजमें" निवास किया। उस समय भलीभांतिसे प्रकाशित होने लगा कि जयदेवकी मधुर पदावलीने महारावके हृदयमें सामान्य राजमुकुटकी असारताको प्रतिपादित किया है और राधाकृष्णकी विचित्र लीलाके स्थानमें वीर कविचंदकी उत्तेजक वीरगाथा और चौहानकुलकी वीरताकी कहानी और गौरवगरिमा स्मृति महारावके हृदयसे एकबार ही निकल रही है, इस कारण महारावने इस समय इच्छानुसार ठहरनेकी इच्छा प्रगट की। सर्व साधारणके पहिले अनुमानके मतसे महाराव शीघ्र ही अपने जीवनकी अतीत और वर्त्तमान अवस्थाको समझ गये, उन्होंने अपनेको विदेश भूमिमें केवल धनके लोभियोंके द्वारा घिरा हुआ देखा। परन्तु महाराव अप्रैल मासमें वृन्दावनसे कोटेको जानेके लिये फिर तैयार हुए। उनको शैतान स्वरूप गोवर्द्धनदासने स्थिर कर दिया कि महाराव यहां इस भावसे नहीं रह सकेंगे। गोवर्द्धनदासके प्रति तीक्ष्ण दृष्टि रक्खी गई थी यह सत्य है, पर उन्होंने अपराधीके समान कारागारमें बन्द होकर भी महोच्चपदपर स्थित देशीय कर्मचारियोंद्वारा महारावके समीप अत्यन्त गुप्तरीतिसे पत्रव्यवहार किया था। यह बात पीछे प्रकाश हुई"।

क्रमशः राजनैतिक विभ्राट् प्रबल हो गया । कर्नल टाड इसके पीछे लिखते हैं कि "क्रमानुसार षडयन्त्रजालका विस्तार और महारावके दुष्टचारित्र चरोंके द्वारा वृथा आश्वास, वृद्धिको प्राप्त होने लगे । महारावने अतिरिक्त सेना और अनुचरोंको इकट्ठा करके हाडौतीकी ओरको यात्रा की । वह जिस २ राज्यमें जाने लगे उसी २ राज्यके अधिपतिसे कहने लगे कि गवर्नमेण्टकी इच्छाके अनुसार अपनी राजशक्तिको फिर ग्रहण करनेके लिये जाता हूँ । ऊँचे पदवाले कितने ही देशीय राजकर्मचारियोंके कितने ही चिह्नित अनुचर और दिल्लीके कोषागारमें देशीय धनरक्षक जिन्होंने महारावको धनकी सहायता दी थी, उनका एक एजेण्ट इस समय महारावके साथ गया । सर्व साधारणने इसका अनुमान सरलतासे कर लिया कि, महाराव निश्चय ही गवर्नमेण्टकी इच्छानुसार जा रहे हैं, इस कारण सर्वसाधारणने इस समय महारावकी जिससे आशा पूर्ण हो, ऐसी कामना प्रकाश की । महाराव जितने आगे बढने लगे उतने ही उनकी सेनाकी संख्या भी बढने लगी । सन् १८२२ ईसवीकी वर्षाऋतुके शेष भागमें प्रायः तीन हजार सेना साथ लेकर चम्बल नदीके किनारे महाराव किशोरसिंह जा पहुँचे । नदीके पार होकर महाराव किशोरसिंहने इस प्रकारकी स्वजाति भाषासे अपनी प्रजामें घोषणा प्रचार कर दी कि राजपूत सरलतासे उसका अर्थ समझलें और कोई महारावके उस आह्वानपत्रके अग्राह्य करने और महरावके पक्षका अवलम्बन करनेमें असम्मत न हो । महाराव किशोरसिंह संधिपत्रके अनुसार न्याय विचारकी आशा करनेके लिये उतारू हैं, इसीसे सबको उसमें योग देनेके लिये बुलाया है, प्रत्येक हाडा-राजपूत आमन्त्रणके अनुसार आने लगे । राजपूतजाति कैसी विश्वासी राजभक्त थी, महाराव किशोरसिंहकी वर्तमान अवस्थामें उसका प्रबल प्रमाण दिखाई दिया । जालिमसिंहके साथ जो मनुष्य समरक्त सम्बन्ध बन्धनमें बँधे थे, जिन्होंने जालिमसिंहके द्वारा बहुतसे उपकार प्राप्त किये थे, उनतकने इस समय जालिमसिंहको छोडकर न्यायके अनुसार अपने अधीश्वर महाराव किशोरसिंहके साथ योग देनेको गमन किया । उनमेंसे बहुतोंने तो महाराव किशोरसिंहको नेत्रोंसे भी नहीं देखा था और बहुतसे मनुष्य उनके विषयमें कुछ भी नहीं जानते थे ।" यहांपर हमारा यह प्रश्न है कि एकमात्र जाटराजके अतिरिक्त समस्त रजवाडेके प्रत्येक राजा प्रत्येक सामन्त प्रत्येक राजपूतने किस कारणसे महाराव किशोरसिंहके प्रति सहानुभूति दिखाई थी ? किस कारणसे प्रत्येक हाडाजातीय वीरने महारावका साथ देकर उनका पक्ष समर्थन किया था ? किस कारणसे जालिमसिंहके आत्मीय अनुगत मनुष्योंने भी उनको छोड कर किशोरसिंहका साथ दिया था ? किस कारणसे बृटिश गवर्नमेण्टके अधीनस्थ देशीय उच्चपदवाले कर्मचारियोंतकने महारावका साथ दिया था ? कर्नल टाडने स्वयं इस बातको स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिंहको कोटेको न्यायके अनुसार शासनशक्ति युक्त अधीश्वर जानकर ही सबने महारावका पक्ष अवलम्बन किया । तभी यह प्रश्न उठता है कि रजवाडेंके प्रत्येक मनुष्यने जब कि किशोरसिंहको न्यायके अनुसार अधीश्वर जानकर उनका पक्ष

अवलम्बन किया था, तब गवर्नमेण्टने उस न्यायके अनुसार अधिकारकी शासनशक्तिको एक वाहिस्थ मनुष्यको देकर क्या उस न्यायके वक्षस्थलपर पदाघात नहीं किया ?।

महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको पानेके लिये स्वजातिसे सहायता मांगी, सभी उचित आशाकी संभावनासे सहायता करने लगे। महाराव किशोरसिंहको कुछ भी इच्छा नहीं थी कि, गवर्नमेण्टके साथ विवाद विसम्बाद करके अपने पूर्व अधिकारपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया जाय। गवर्नमेण्टने जिस भ्रममें पडकर अत्यन्त अविचारसे उनके पैतृक अधिकारको लोप करनेके लिये एक मनुष्यको वह अधिकार दे दिया और उस दानको प्रबल रखनेके लिये पक्षपातसे उस मनुष्यका पक्ष समर्थन किया है। उस गवर्नमेंटको समझानेके लिये किसी प्रकारसे कसर न की। महारावने सरलतासे उन उपद्रवोंका विचार करानेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की। पर गवर्नमेण्टके साथ समस्त सद्भावकी रक्षाके लिये महाराव किशोरसिंह यथाशक्ति यत्न करके भी कृतकार्य न हो सके। सन् १८२२ ईसवीकी १६ वीं सितम्बरको महाराव किशोरसिंहने बृटिश एजेण्ट कर्नल टाडके पास एक पत्र भेजकर सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित किया। उसे पढकर महरावके मनका भाव भलीभांतिसे जाना जाता है। उस पत्रको हम इस स्थानपर प्रकाशित करते हैं।

"हमारे मनका भाव क्या था, उसको प्रकाश करनेके लिये कवि चांदखांने बारम्बार जाननेकी इच्छा की। अपने दो वकील-मिरजा मुहम्मद अलीबेग और लाला शालिग्रामके द्वारा मैंने अपनेको परिज्ञात कराया है। मैंने फिर आपके पास संधिके धाराको भेजा है। आप उसीके अनुसार कार्य कीजिये, यही हमारी इच्छा है। गवर्नमेंटके प्रतिनिधिस्वरूप होकर आप हमारे प्रति न्याय विचार करिये। प्रभु, प्रभुके समान, सेवक सेवकके समान रहे, सर्वत्र ही ऐसा हुआ है, और यह आपसे कुछ छिपा नहीं है"।

महाराव उमेदसिंहके समयमें दिल्लीमें जो संधिवन्धन हुआ है, मैं उस संधिपत्रके मतसे समस्त कार्य करूँगा।

---

(१) महाराव किशोरसिंहके उक्त पत्रसे क्या प्रकाशित होता है ? गवर्नमेण्टके साथ सम्पूर्ण सद्भावकी रक्षा करके उस गवर्नमेण्टके निकट उन्होंने जिस न्याय विचारकी प्रार्थनाकी, वह क्या न्याय संगत नहीं थी ? "प्रभु, प्रभुके समान और सेवक सेवकके समान रहे, यह सर्वदा ही सम्मत उक्ति कौनसी सरकार अग्राह्य कर सकती है। सब जगत् महारावके इस न्याय और धर्मयुक्त कथनको समर्थन कर सकता है। महाराव किशोरसिंहने न्याय विचारकी प्रार्थना करके कर्नल टाडके निकट जो संधियोंकी धाराओंको भेजा था, उसके प्रति दृष्टि रखनेसे महारावके उदार हृदयका चूडान्त प्रमाण पाया जाता है। महाराव संधि धाराको प्रबल रखनेके लिये अपनी अनेक स्वार्थोंमें हानि स्वीकार करके भी राजराणा जालिमसिंहको पूर्णपद पर रखनेके लिये सम्मत हुए। उद्धत स्वभाव गर्वित और दुर्विनीत माधोसिंहको लेकर यह राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित हुआ है, इसी लिये महाराव उक्त माधोसिंहको उपयुक्त जमीन देकर उनको दूसरे स्थानपर भेजना चाहते हैं, और उनके पुत्रको अपने यहां रखकर वंशानुक्रमसे रक्षा करनेके लिये संमत हैं। सभ्य बृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिने उसे ग्राह्य नहीं किया। महारावने जो संधिपत्रकी धारा भेजी थी वह आगे लिखी है।

२-नानाजी जालिमसिंहके ऊपर हमें सम्पूर्ण विश्वास है। वह महाराज उमेद-सिंहके अधीनमें जिस भावसे कार्यकरते थे,हमारे अधीनमें भी उसी भावसे कार्य करेंगे। उनके हाथमें राज्यशासनका भार अर्पण करनेके लिये मैं सम्मत हूं,परन्तु मुझे माधो-सिंहपर संदेह और संशय उपस्ति हुआ है हम किसी समय भी एक मत नहीं हो सकते, इस कारण मैंने उनको एक जागीर दी है, वह वहां रहेंगे। उनके पुत्र बाप्पालाल मेरे निकट रहेंगे, और अन्यान्य मंत्री जिस प्रकार राजाके समीप रहकर राजकार्य करेंगे वह भी उसी प्रकार मेरे निकट काम काज करेंगे। मैं उनका प्रभु हूं और वह मेरे भृत्य स्वरूप रहेंगे, और यदि वह भृत्यके समान कार्य करेंगे तो यही वंशानुक्रम उसी भावसे चलता रहेगा।

३-अँग्रेज गवर्नमेंट अथवा अन्यान्य राजाओंके समीप जो पत्रादि भेजने होंगे वह हमारी सम्मति और उपदेशके अनुसार लिखने होंगे।

४-अंग्रेज गवर्नमेंट हमारे और उनके जीवनके लिये अवश्य ही प्रतिभू रहेगी।

५-पृथ्वीसिंहको मैंने एक जागीर दी है और वह वहां निवास करेंगे, उनके साथ और मेरे अन्य भ्राता विशनसिंहके साथ जो मनुष्य नियुक्त रहेंगे मैं उनको मनोनीत कर दूँगा,इसके अतिरिक्त मेरे स्वजाति और कुटुम्बियोंको उनकी पद मर्यादाके अनुसार जागीर दान की जायगी, और चिर प्रचलित प्राचीन रीतिके अनुसार वह मेरे समीप रहेंगे।

६-मेरे शरीर रक्षक खास तीन हजार सेनाके साथ बाप्पालाल (जालिमके पोते) मेरे समीप उपस्थित रहेंगे।

७-राज्यका समस्तराजस्व प्रथमतः साधारणकोषागारमें जमा करना होगा, इसके पीछे वहाँसे समस्त खर्चा किया जायगा।

८-समस्त किलेदार अर्थात् दुर्गरक्षक मेरे द्वारा नियुक्त होंगे और सारी सेना मेरी आज्ञामें रहेगी। वह राजकर्मचारियोंको उनकी आज्ञा पालनके लिये अनुमति देते रहेंगे परन्तु उसमें मेरे उपदेश और सम्मतिका प्रयोजन होगा।

मैं इन धाराओंका प्रस्ताव करता हूं और इसी राजनीतिका अनुयायी हूं। आसोज पंचमी संवत् १८७८ सन् १८२२ ई०।

महाराव किशोरसिंहने सरकारके निकट जो ऊपर लिखा हुआ प्रस्ताव भेजा था, कोई साधारण पुरुष भी इसको अनुचित नहीं कह सकता, परन्तु उनका प्रस्ताव सरकारने स्वीकार नहीं किया, एक महीना इस प्रस्तावकी प्रतिज्ञाके बीचें गया, परन्तु बृटिश सरकारने एकमात्र जालिमसिंहके स्वार्थकी रक्षामें दृष्टि देकर मंत्रीके प्रस्तावके अनुसार शोचनीय राजनैतिक दृश्य आरम्भ कर दिया। उदारचित्त सत्यप्रिय टाड साहबने भी अपने प्रभुकी आज्ञानुसार उस कार्यमें सब प्रकारसे योगदान करनेमें कसर न की। कर्नल टाडने अपनी परिवर्ती घटनाका जो वृतान्त वर्णन किया है, हम यहांपर उसीको प्रकाश करना उचित जानते हैं। कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि

"जालिमसिंहको उनकी विश्वासी सेनाके ऊपर भी निर्भर नहीं किया जाता, उन्होंने स्वयं ही कहा है कि सेनाके ऊपर उनका सम्पूर्ण विश्वास नहीं है। उनका शासनकार्य किस प्रकार कठोरताके साथ होता था इस समय उसका बिलक्षण साक्षी मिला है। जिस जालिमसिंहने स्वदेशी और विदेशी प्रत्येक सेनाका अपने हाथसे पालन किया था, उसी सेनादलके प्रत्येक पुरुष उनके विरुद्धमें न्यायके अनुसार अधिकारियोंका पक्ष अवलम्बन करनेके लिये तैयार होते देखा। इस राजनैतिक उपद्रवोंके समयमें सभीको उन्होंने यहांतक अविश्वासका आविर्भाव दिखाया कि, उन्होंने विपत्तिसे मुक्त होकर कहा कि "मेरे शरीरपर पहिरे हुए वस्त्रोंतकमें मानो षड्यन्त्रकी गंध आ गई है"। जालिमसिंह चारों ओर उस अविश्वासताको देखकर विरक्त हुए, और सहज ही ऊंची सामर्थ्य प्राप्तिकी आशाको छोडनेके लिये उद्यत होते, तो उससे बृटिश गवर्नमेंट भी अत्यन्त कष्टदायक विपत्तिग्रस्त अवस्थासे उद्धार पानेमें समर्थ होती। जालिमसिंहके समीप इस राजनैतिक कठोर ग्रंथिको छेदन करनेके लिये यथेष्ट सुअवसर दिये थे, और इशारोंसे यह विदित किया था कि यदि वह विचारेंगे तो इस ग्रंथिको काट सकेंगे, नहीं तो तलवारसे अवश्य ही यह राजनैतिक बिभ्राट् ग्रंथि छेदन की जायगी। परन्तु सभी चेष्टाएँ निष्फल होगईं; जालिमसिंहने सन्धिपत्रके मतसे कार्य करने और स्वयं शासनकी सामर्थ्यको जिस प्रकारसे ग्रहण करनेकी प्रतिज्ञा की, जालिमसिंहके नाममात्रके प्रभु महाराव किशोरसिंह भी उसी प्रकारकी भित्तिपर खडे हुए और अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ निर्द्धारित पूर्व सन्धिपत्रकी एक लिपिको एजेण्टके निकट भेजकर पूँछा कि वह सन्धिपत्र स्वीकार होगा या नहीं ? जालिम सिंहको वंशानुक्रमसे शासनशक्तिको देनके लिये जो अतिरिक्त सन्धिधारा नियुक्त हुई थी वही धारा यदि मूलसन्धिपत्रमें नियुक्त की जाती तो यह समस्त उपद्रव सरलतासे दूर हो सकते थे। ऐसा होने से सन्धिपत्रका मूल मर्म और अर्थ कभी भी दो भावोंसे ग्रहण नहीं किये जाते, और गवर्नमेंटने अविचारका कार्य किया है, इसकी कोई विवेचना नहीं कर सकता। वास्तवमें कोई भी उस विश्वासघातके दोषसे कलंकित नहीं होता कारण कि जिन्होंने आदि संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये हैं, अतिरिक्त संधिपत्रपर भी उन्हींके हस्ताक्षर थे। एक राज्यमें एक मनुष्यको नाममात्रके राजा और दूसरेको समस्त शासनशक्ति युक्त राजा कह कर हमने जिस बातको स्वीकार किया है, उसके बदलेमें जालिमसिंहके द्वारा उपकृत होकर हमारे उस उपकारके लिये किसी प्रकारका पुरस्कार देना उत्तम नहीं हो सकता, इस विवादसे यह प्रश्न उपस्थित हुआ है। बडे सौभाग्यकी बात है कि नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिंह) ने इस समय जिस प्रश्नको उपस्थित किया है वह गवर्नमेंटके प्रस्तावमें सम्पूर्ण विपरीत दिखाई पडा और वह आदि और अतिरिक्त सन्धिपत्रके मूल उद्देशके मतसे काम करनेमें प्रायः प्रकृत पक्षमें असम्मत हुए। महाराव किशोरसिंहने प्रस्ताव किया कि उनके स्वजातीय तीन हजार शरीर रक्षक उनके पास नियत रहें, और वह अपनी इच्छानुसार सामन्तोंको जागीरें देंगे, और सेनादलके नेता पदपर स्वयं नियुक्त रहेंगे। यह सब प्रस्ताव

मित्रतामूलक सन्धिके प्रत्येक मौलिक नियमके विपरीत हुए; और अन्य पक्षमें जालिमसिंहके उत्तराधिकारियोंके राज्यकी शासनशक्तिकी प्राप्तिकी आशा केवल उनकी दयाके ऊपर निर्भर रहेगी''।

शीघ्र ही रणभेरी बाजा बजा! बृटिश गवर्नमेंटने जालिमसिंहके द्वारा उपकार पाकर उस उपकारका पुरस्कार देनेके लिये भारतवर्षके एक प्राचीन उच्च राजपूत राजदरबारकी शासनशक्तिको लोप करके वह शक्ति जालिमसिंहको देनेकी इच्छा की और महारावके विरुद्धमें शीघ्र ही सेनाको चलाया। महाराव किशोरसिंहके पितामह महाराव गुमानसिंहके द्वारा प्रतिपालित आश्रयप्राप्त अनुग्रहीत जालिमसिंह भी अपनी राजभक्तिका चूडान्त परिचय देनेके लिये सेनासहित महाराव किशोरसिंहके साथ युद्ध करनेके लिये चले। कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "हतबुद्धि महाराव किशोरसिंहको कुचक्री और कुमंत्रणदाताओंके हाथसे उद्धार करनेके लिये, एवं प्रतिदिन उनकी पताकाके नीचे जो समुत्तेजित राजपूत वृन्द इकट्ठे होते थे, उनके हाथसे उनका उद्धार करनेके लिये उनकी समस्त चेष्टाएं व्यर्थ और निराश करनेके जो अंग्रेजी सेनाका दल संधिको प्रबल रखनेके लिये बुलाया गया था, वह जालिमसिंहकी सेनाके साथ मिलकर आगे बढने लगा। सेनादल कालीसिन्धुनामक स्थानमें इकट्ठा हुआ, वह स्थान दोनों रणोन्मत्त सेनादलके मध्यवर्ती था। सेनादलके वहां पहुँचते ही कई दिन-तक बराबर घोर वर्षा होनेसे जलके द्वारा समस्त स्थान प्लावित हो गये, सेनाको उस नदीके पार होना असम्भव था, इस कारण कई दिनका विलम्ब होनेसे महारावको उपस्थित सर्वनाशसे उद्धार करनेके लिये मित्रता और सुमंत्रणसे यथेष्ट सुभीता मिलनेका अवसर मिला भी परन्तु वह सभी व्यर्थ हो गया। सामने घोर विपत्तिको देखा, पर निराशाके साथ उस विपत्तिके आगमकी प्रार्थना करने लगे, और उन्होंने बृटिश गवर्नमेण्टके सम्मुख अत्यन्त अनुगत्य घोषणा करके गवर्नमेण्टके प्रतिनिधिकी मित्रता और श्रेष्ठ उपदेशके ऊपर अपना पूर्ण विश्वास स्थापित किया, परन्तु प्रत्यक प्रतिवादके समय वह यह उत्तर देते जाते थे कि संमानशून्य जीवनका क्या प्रयोजन है? शासनशक्तिहीन राज्यका क्या फल है? क्या तो मत्यु ही हो जाय और या पूर्णतया पैतृक राजशक्ति मिल जाय''।

इसके पीछे कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "जालिमसिंहके आचरण भी इस समय महारावके आचरणोंकी अपेक्षा कुछ अल्प विरक्तिके नहीं थे, कारण कि एक ओर तो वह प्रगटमें यद्यपि महारावके प्रति राजभक्ति प्रकाश करते थे, और अपने सफेद वालोंपर कलंक लगानेकी उनकी अभिलाषा नहीं थी, परन्तु आत्मस्वार्थसाधन करनेके लिये संधिपत्रके धारा स्वरूपको भी अपने सामने रक्खा था, उन्होंने आशा की कि संधिपत्रकी धारा पालन करनेके लिये उनको स्वयं किसी विशेष दायित्वका भार ग्रहण करके कोई प्रबल तैयारी नहीं करनी होगी। इस समय उस प्रकारसे दायित्वविहीन होनेकी चेष्टा किसी प्रकार भी सहन नहीं हो सकती।

उन्होंने प्रकाश किया कि उनको सेनादलके ऊपर विश्वास नहीं है, सेनादल समरके समयमें अवश्य हमारे विरुद्ध अस्त्र चलावेगा। इससे हम उससे कहे देते हैं कि हम उस विपत्तिको सहन करनेके लिये तैयार हैं। उसने और भी कहा कि हमको वंशानुक्रमसे जो अधिकार भोगनेके लिये दिया गया है, उस अधिकारकी किसी प्रकारसे रक्षा करनी ही होगी। इससे उसको रक्षण पीडन दोनों प्रकारके कार्योंमें योगदान करना होगा कि जिससे किशोरसिंहके प्रति राजभक्ति प्रकाशके साथ शांतिके सहित अपनी सामर्थ्यकी रक्षा प्राप्त रहे। चतुर जालिमसिंहने उस समय कहा कि हम गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेसे जो कुछ सहायताकी आशा करते है, हमारी उस शासन सामर्थ्यको अक्षत रखनेके लिये सहायता करनी होगी। एजेण्ट (टाड) ने शेष मुहूर्त्ततक आशा की थी कि जालिमसिंह जो सब मनुष्योंके रक्षकस्वरूप हैं वे उनको रणके मुखमें डालनेसे जगत्‌में कलंक और तिरस्कारका संचय और सद्धर्मके नाशसे अपमानका संचय न करेंगे, परन्तु वह पृष्टपद होकर अपनी शक्तिकी खर्वता साधन करनेके लिये अग्रसर हुए, उनके क्रमशः इधर उधर करनेसे और मनमें एकभाव तथा प्रकाश्यमें अन्यभाव प्रकाश करनेसे उसमें केवल विपत्ति की ही वृद्धि होती थी, इस कारण एजेण्टकी वह आशा शीघ्र ही लुप्त हो गई,यद्यपि उस समय जालिमसिंहके भीतर ही भीतर विषम संशय विराजमान था परन्तु राज्यप्राप्तिकी इच्छासे अंतमें उन्होंने सभीको दूर कर दिया"। कर्नल टाड साहबकी उक्त उक्तिसे भलीभांति जाना जाता है कि केवल जालिमसिंहको संतुष्ट करनेके लिये इसके पीछे यह शोचनीय राजनैतिक अभिनय प्रारंभ हुआ। कर्नल टाड यदि इस समय सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये जालिमसिंहको समझाकर महाराज किशोरसिंहके पक्षका अवलम्बन करते तो जालिम-सिंह कभी सुअवसर पाकर संधिकी धाराका उल्लेख करके वृटिश गवर्नमेण्टको उसके पालन करनेके लिये उन्हें अन्यायके युद्धमें लिप्त नहीं कर सकते थे।

इतिहासलेखकने फिर लिखा है कि "जालिमसिंह और उनकी सेना आगे और अंग्रेजसेना उनकी सेनादलके पीछे होकर युद्धके सम्मिलनका प्रस्ताव उपस्थित किया गया और जिससे दोनों सेना एकभावसे कार्य कर सकें उसके लिये जालिमसिंहके अनुरोधसे अंगेजी सेनापतिको उनकी सेनादलपर नियुक्त किया गया। अक्टूबर मासकी १ तारीखको सेनादल आक्रमण करनेके लिये अग्रसर हुआ। जालिमसिंहकी सेनामें ८ दल पैदल ३२ तोपें और चौदह रिसाले प्रबल अश्वारोही सेनाके थे, उस सेनादलमें पाँच दल पैदल, १४ तोपें और दश दल अश्वारोही दल सबसे आगे चलो। और बाकी समस्त सेनाके साथ जालिमसिंह उसके पीछे हजार हाथ दूरी-पर चलने लगे, वृटिश सेनामें दो दल पैदल और छः दल अश्वारोही और एक दल अश्ववाहित (गोलन्दाज) महारावकी सेनादलके निकटवर्ती होकर जालिमसिंहके

(१ पांच रजिमेंट देशी पदाति दलके मालिक लेफटिनेण्ट मि० मिलन थे और उन साहसी वीरसे जैसे कार्यकी आशा थी वैसाही उन्होंने किया।

दक्षिण ओर जाने लगा। सेनादल सबसे पहिले एक विस्तारित क्षेत्रमें जाकर शेषमें एक छोटी नदीके किनारे ऊँची भूमिपर जा पहुँचा। महाराव किशोरसिंहकी सेनाका दल नदीके दूसरे पारसे कुछ दूर एक ऊँचीसी भूमिपर इकट्ठा हुआ था। शत्रुओंकी सेनाके आनेसे महारावने नदीके पारसे अपने डेरोंको पूर्वमतसे रक्षित रखकर अपनी सेनाको नदीके इस पार लाकर इकट्ठा किया था। "राज पलटन" नामक सेनाको उसके नेता सैफअली कि जिसने अपने प्राचीन प्रभु जालिमसिंहको छोडकर महारावके साथ योग किया था, उसकी सेनाको बाँई ओर रखकर महराव किशोरसिंह स्वयं सामन्तोंके साथ पांच सौ हाडा अश्वारोही लेकर दक्षिण भागको गये, और मध्यभागमें समरमें अशिक्षित अस्त्रधारी राजपूत रक्खे गये। युद्ध वा भागनेका बिन्दुमात्र भी चिह्न न दिखाकर अंग्रेजी सेना और जालिमसिंहकी सेना शत्रुओंसे चार सौ हाथके समीप अपने २ डेरोंसे निकलकर स्थित हुई। इस समय एजेण्टने कुछ ही समय पाकर हतबुद्धि महराव और उनके अनुरक्त अनुचरोंको सम्मुख विपत्तिसे उद्धार करनेके लिये आन्तिम चेष्टा करनेकी कामनासे बृटिश सेनापतिको अनुरोध किया कि समस्त सेनादलको विश्राम करनेकी आज्ञा दी जाय। एजेण्टने दोनों ओरकी सेनाके मध्यस्थान तक जाकर पहिले जिस सन्धिका प्रस्ताव किया था उसी प्रकारके प्रस्तावसे सबको क्षमा करेंगे, यह मत प्रकाशित किया और महाराव किशोरसिंहको फिर राजधानीमें लेजाकर उनको पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त करेंगे, यह भी कह दिया। परन्तु महाराव अपने नेत्रोंके सम्मुख केवल भावी सर्व नाशको देख रहे थे, तथापि उन्होंने अपने पहिले जो सन्धिका प्रस्ताव किया था उसकी एक धाराको भी त्यागन करना नहीं चाहा, वह अपने प्रस्तावेंके ऊपर ही अधिक हठ करने लगे और तीन हजार स्वजातीय हाडा राजपूतोंके साथ यदि कोटेमें प्रवेश कर सकें तो वह कोटेमें चलेंगे, नहीं तो नहीं जायँगे, यह बात प्रगट कर दी। सुविचारके लिये उनको आधे घण्टेका समय देने पर पीछे दोनों ओरकी सेना युद्धके लिये आगे बढने लगी। महारावकी निर्वाचित सेना दहिनी ओरको इकट्ठी होकर जालिमसिंहके आगे जानेके मार्गमें खडी हुई, दूसरी ओर बृटिश सेनादल उनका दल भंग करनेके लिये उसी भावसे उस ओर इकट्ठा हुआ"।

"पूर्वोक्त आधे घण्टेका समय बीतने पर और महारावके अन्यायकी आकांक्षाकी कुछ भी निवृत्ति न होनेसे पूर्व प्रस्तावके मतसे संकेत करते ही जालिमसिंहके अधीनकी सेनाके अस्त्र चलाकर तोपोंके द्वारा गोलोंकी वर्षा करनी प्रारम्भ कर दी, और उसके पीछे अश्वारोही सेनाका दल आक्रमण करनेके लिये आगे बढा। फतेहाबाद और धौलपुरके विख्यात समरमें हाडाजातीय सेनाने जैसी विषम वीरता दिखा कर यश संग्रह किया था, महारावकी सेनादलने उसी प्रकारके बल विक्रमसे जालिमसिंहकी सेनापर प्रबल वेगसे आक्रमण किया, और उसी कारणसे कितनी ही हाडासेना तोपोंके मुखमें पडी, परन्तु उस समय यदि तीन दल बृटिश सेनाके आगे बढकर महारावकी उस सेनापर आक्रमण न करते तो अवश्य ही महारावकी वह सेना जालिमके वाम भागकी सेनाको

भगाकर जालिमसिंह स्वयं जिस स्थानपर सेनादलके साथ ठहरे थे, वहां आ पहुँचती। परन्तु अंग्रेजी सेनादलके आनेसे उनकी वह चेष्टा व्यर्थ हो गई और अंग्रेजी सेनादलके साथ समर करना असम्भव जानकर वह शीघ्र ही भागनेके लिये तैयार हुई। और महाराव किशोरसिंह स्वजातीय चार सौ अश्वारोही वीरोंके साथ नदीके पार होकर आध कोश दूर उस ऊँची भूमिपर स्थित हुए। इस ओर उस युद्धमें उनके पैदल सेनादल भंग करके चारोंओरको फैल गया, बृटिश सेनादल शीघ्रतासे नदीके पार हो गया, और पैदल सेनाने जिस समय महारावकी सेनादलके दहिनी ओरके भागनेका मार्ग घेरा था उस समय अन्य और दो सेनादलोंने महारावपर आक्रमण किया। इस समय भी महाराव बृटिशसेनापर आक्रमण नहीं करेंगे, यह स्थिर कर इस महा विपत्तिके समयमें भी वह अपनी पूर्व प्रतिज्ञाको दृढ रखनेके लिये खडे रहे, और बृटिश सेनादल शीघ्रतासे प्रबल वेगसे आक्रमण करनेके लिये आगे बढ रहा है, यह देखकर भी महारावकी सेनाके दलने भागने वा आत्म समर्पणके कुछ भी चिह्न न दिखाये, और सब इकट्ठे होकर अचल पर्वतके समान खडे रहे। एक बृटिश सेनापति प्रत्येक सेनाको चलाकर आक्रमण करनेके लिये आगे बढने लगा, उन सेनापति और बृटिश सेनादलने भारतके अनेक स्थानोंके युद्धोंमें शत्रु पक्षको नित्य बृटिशके आक्रमणसे भागता हुआ देखा था; परन्तु राजपूत नहीं भागे बरन् पिंडारी ही भाग गये थे। राजपूत अभेद्य विराट् पर्वतके समान खडे रहे, और हमारी सेना उस हाडासेनादलपर आक्रमण करनेके लिये जाकर प्रत्येक संघातसे पीछेको हठ गई, और दोनों साहसी अंग्रेज सेनानायक उसी कारणसे रणभूमिमें मारे गये। उसी सेनादलके साहसी प्रधान अंग्रेज सेनापति संघातके समयमें अत्यन्त आश्चर्य रूपसे जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। शत्रुपक्षके एक वीरके भयंकर अस्त्रके आघातसे जिस समय उन प्रधान सेनापतिका शिरस्त्राण [illegible] खरी वार अस्त्रका आघात करनेके लिये उद्यत हुए, उसी समय प्रधान सेनापतिके एक परिषदने पिस्तौलके आघातसे उन आक्रमणकारियोंका प्राण विनाश कर दिया। एक मुहूर्त्तके बीचमें ही यह कार्य हुआ था, महाराव किशोरसिंहने विचारा था कि बृटिश सेनाके विरुद्धमें अस्त्र नहीं चलावेंगे, उन्होंने उसी विचारसे केवल बृटिश सेनादलके आक्रमणको व्यर्थ करके सन्तोष चित्तसे रणक्षेत्रसे धीरतापूर्वक अपनी सेनाको चलाया। परन्तु बहुत थोडी देरके पीछे घुडसवारी गोलन्दाज दलने फिर महारावकी सेनाके समीप जाकर उनकी

(१) टाड साहबने अपनी टीकामें लिखा है कि "जालिमसिंहकी सेनाके दो भाव प्रकाशित थे। या तो समर करेगी या भाग जायगी, इस चिन्तासे इधर उधर करते हुए देखकर जिससे वह भाग न सके उसके लिये टाड साहब स्वयं जालिमकी वाहिनीके सबसे पीछे खडे थे। मेजरकेनेडिके इस समय अग्रसर होते ही महारावकी सेनाका वह आक्रमण व्यर्थ हो गया"।

(२) यह लेफ्टिनेण्ट क्लार्क और रीड ४ चौथे अश्वारोही दलके नेता थे।

(३) मेजर लेफ्टिनेण्ट करनल जे.रिज. सी, बी.।

सेनाके ऊपर गोलोंकी वर्षा प्रारंभ कर दी, महारावकी सेना शीघ्रतासे चलने लगा, और कुछ ही समयके पीछे नूतन बृटिश सेनादल फिर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुआ कि महारावकी सेना मक्काके दीर्घाकार शस्यपूर्ण क्षेत्रमें जाकर अदृश्य हो गई।

कर्नल टाड साहबकी लेखनीने इसके पीछे निम्नलिखित हृदयभेदी घटनाको वर्णन किया है। महाराव किशोरसिंहके कनिष्ठ भ्राता पृथ्वीसिंहने हाडाजातिके स्वभाव-सिद्ध बल विक्रमकी उत्तेजनासे उत्तेजित होकर और अब जीवित दशामें हाडौतीके डेरोंमें निवास नहीं कर सकेंगे, यह जानकर उस मातृभूमिमें जीवन त्याग करनेका विचार किया। पृथ्वीसिंह केवल पचीस जन सेनाके साथ मृत्युके मुखमें निश्चिंत पतित होनेके लिये फिर लौट कर बृटिश सेनापर आक्रमण करनेको चले। बृटिशसेना जिस समय आगे बढ़ रही थी उस समय एक बाजरेके खेतमें पृथ्वीसिंहको घायल अवस्थामें पडे हुए देखा। उनको एक नरयानमें स्थापन कर अश्वारोही सेनादलके कितने ही सैनिकोंके द्वारा डेरोंमें भेज दिया। बृटिश डेरोंमें ले जाकर इनकी भलीभांतिसे शुश्रूषा की गई परन्तु उनकी रक्षा किसी प्रकार भी न हो सकी, उन्होंने दूसरे दिन प्राण त्याग दिये। उस अंतिम समयमें उन्होंने यथार्थ वीरके समान आचरण किया, और उन्होंने अपने भाग्यके ही ऊपर समस्त दोष रक्खा, अपने जीवनके लिये एकवार भी आशाको प्रकाश नहीं किया और डेरोंके समीप एक वृक्ष देखकर कहा कि हमारी प्रेतात्मा इस वृक्षका आश्रय पाकर अपने पैतृक राज्य को देखकर ही संतुष्ट रहेगी। एक सैनिकने इनकी तलवार और अंगूठी ले ली, किन्तु उनकी छुरी, मोतियोंकी माला और अन्यान्य मूल्यवान् अलंकार उन्होंने एजेण्टके हाथमें सौंप दिये, और उनके हाथमें ही पृथ्वीसिंहने अपने पुत्रकी रक्षाका भार दिया, एकमात्र उन्हीं पृथ्वीसिंहके पुत्र कोटेराजासिंहासनके क्षमता शून्य नाममात्रको नरपति पद पानेके भावी अधिकारी थे"।

वीर तेजस्वी पृथ्वीसिंहकी मृत्युके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहब लिखते हैं कि "अंग्रेजी सेनाके किसी सैनिकके हाथसे पृथ्वीसिंहके वह संघातिक अस्त्रका आघात नहीं लगा, किन्तु भालोंकी वर्षाके द्वारा ही वह आघात लगा था, और वह आघात पीछेसे इस भावसे बडे वेगसे लगाया गया था कि जिससे पृथ्वीसिंहकी पीठ भेदकर वक्षस्थलपर्यन्त विदीर्ण हो गया था। पृथ्वीसिंहने कहा कि किसी शत्रुने प्रतिहिंसा सफल करनेके ही लिये यह अंतिम आघात लगाया था, कारण कि उन्होंने कहा कि बर्छा हमारे शरीरको भेदकर इस भावसे चलाया गया है और वह बर्छा हमारे शरीर-में इस प्रकार घुमाया गया है कि जिससे हमारे जीवनकी कोई आशा नहीं है। यद्यपि जालिमसिंहकी सेनाने अंग्रेजी सेनाके साथ मिलकर महारावकी सेनादलका पीछा किया था, परन्तु उन जालिमकी सेनादलमें एक भी महारावकी सेनाके समीप जानेका साहस न कर सकता था, इसी कारणसे अनुमान किया जाता है कि किसी विश्वासहन्ता मनुष्यने महारावकी सेनाके साथ मिलकर पृथ्वीसिंहको उस भावसे सांघातिक अस्त्राघात कर जालिमसिंहके पुत्र और उनके उत्तराधिकारियोंको आगेके

लिये निश्चिन्त कर दिया।" यद्यपि हम इस बातको मानते हैं कि किसी अंग्रेजी सैनिकने पृथ्वीसिंहका प्राण नाश नहीं किया तथापि टाडकी उक्तिसे अवश्य ही अनुमान कर सकते हैं कि जालिमसिंहकी ओरके किसी विश्वासहन्ताने ही इस वीरके जीवनका नाश करके जालिमका स्वार्थ साधन किया था, इस हत्याकारीके समान जालिमसिंह भी अपने प्रभु भाईका प्राण नाश करके उस पापके भागी हुए थे, इसमें किञ्चिन्मात्र भी संदेह नहीं है।

सत्य और न्यायकी जय अवश्य होगी। पाशविक बलके द्वारा चाहे कितना ही धर्मके वक्षस्थलपर न्यायकी छातीपर पदाघात क्यों न हो, कितना ही न्यायको और धर्मको पाप पदसे विदलित क्यों न किया जाय, परन्तु समयपर उस धर्म और न्याय की जय अवश्य ही होगी। लोभी विश्वासहन्ता जालिमसिंह चिर दिनसे जिस प्रभुके अन्नसे प्रतिपालित हुए थे, उन ही प्रभुवंशीय और प्रभुस्थानीय किशोरसिंहके साथ उन्होंने यह संग्राम उपस्थित कर दिया, परन्तु टाडकी उक्तिसे जाना जाता है कि यदि विक्रान्त बृटिश गवर्नमेण्ट न्याय और धर्मकी परवाह न करके जालिमके अन्याय पक्षको समर्थन करनेके लिये सेनाके द्वारा सहायता न करती तो इस समरक्षेत्रमें भला जालिमसिंहको स्ववंश सहित विध्वंस होकर धर्मके समीप उचित दंड मिलता, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। परन्तु हम यह भी कहते हैं कि महाबलशाली बृटिश वाहिनी जो जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये गई थी, इसीसे उस प्रकार केवल चार सौ हाडाजातीय सेनाके द्वारा परास्त होकर पीछा दिखा गई यह घटना जिस प्रकार उस सेनाको कलंककारक हुई उसी प्रकारसे किशोरसिंहको न्यायसंगत कामनाका समर्थन करती है। और एक बात हम बडे दुःखके साथ कहते हैं कि इसमें संलिप्त होकर कर्नल टाड साहबने जो अभिनय किया कि जिससे जालिमसिंहकी सेना न भाग जाय, उस अभिप्रायसे उसके समीप रहकर अत्यन्त ही अन्याय पक्षका समर्थन किया। उन्होंने जो बारम्बार कहा था कि दोनों पक्षमें संधिबंधन स्थापन करनेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की गई, हम इस बातको कह सकते हैं कि वह भी निर्मूल थी। उन्होंने महारावके प्रस्तावोंमेंसे एक बातको भी नहीं सुना। जब जालिमकी प्रार्थनाके अनुसार बृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे अतिरिक्त संधिकी धाराको प्रबल रखनेकी चेष्टा की थी, तब हम किस प्रकारसे मान लें कि वास्तवमें ही उन्होंने प्रकृत मध्यस्थके समान दोनों ओरके स्वार्थकी ओर दृष्टि रक्खी थी। इसी लिये हम कह सकते हैं कि राजपूत-जातिके अकृत्रिम बांधव कर्नल टाडके जीवनमें यह जालिमसिंहके सम्बन्धका एकमात्र अभिनय ही अनुचित कार्य है"।

इस समय पिछली घटनाका ही अनुसरण करते हैं। कर्नल टाड लिखते हैं कि महाराव किशोरसिंहने एकमात्र घनघोर मकईसे परिपूर्ण क्षेत्रमें आश्रय लेकर इस विपत्तिके हाथसे छुटकारा पाया। वह मकईके वृक्ष इतने घने और बडे थे कि उनमें महारावका हाथीतक नहीं दिखाई देता था। पांच मील तक यह खेतों खेत बराबर चले गये थे। महाराव

कोटेराज्यके बाहरी भागमें भाग गये हैं उनका पीछा न करना ही उचित है कारण कि एकमात्र कोटेमें ही उनका जाना विपत्तिकारक गिना गया था। महारावका पैदल और अन्य देशका सेनादल भंग करके चारोंओरको भाग गया, और हमारी अश्वारोही सेनाके द्वारा उनमेंसे बहुतसे मारे गये"

कर्नल टाड साहबने इस बातको स्वयं ही स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिंहने पहिलेसे ही बृटिश सेनाके विरुद्धमें अस्त्र नहीं चलाया था, वह ऐसा विचारते थे और अंततक अपनी उस प्रतिज्ञाका पालन भी किया था। इस कारण हम सरलतासे अनुमान कर सकते हैं कि केवल चार सौ हाडा सेनाने बृटिश गोलन्दाज पैदल अश्वारोहियोंको जब प्रथम संघातमें ही विताडित कर दिया था, तब उनके वीर विक्रमसे रणभूमिमें उस वाहिनीके विरुद्धमें राजपूत स्वभाव सुलभ तेजसे समर करने पर बृटिश वाहिनीके भाग्यमें अवश्य ही शोचनीय घटना हो सकती थी। महात्मा टाड साहबने इस स्थानपर महारावकी वीरताके सम्बन्धमें लिखा है कि "महाराव और उनके स्वजातियोंकी धीरता और निर्भीकता और वीरता देखकर इनके शत्रुओंकी ओरके वीरोंने भी ऊँची प्रशंसा की थी, और उस दिन महारावके विपक्षमें जो सब सेना नियुक्त हुई थी उनमेंसे बहुत थोडी सेनाने जाना था कि महाराव और उनके अधीनकी सेना किस प्रकार नैतिक बलसे बलवान हुई थी। उस नैतिक बलने किस प्रकारसे उनको अभेद्य जंजीरमें बाँध रक्खा था।

कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर दो राजभक्त वीरोंकी विचित्र वीरताकी कहानी प्रकाश की है। उन्होंने लिखा है कि "हाडा जातिके इतिहासमें जो समस्त बल विक्रम की कहानी वर्णन की गई है, और एकमात्र जो बल विक्रम ही हाडाजातिकी पैतृक सम्पत्ति इस समय गिना गया था, महाराव किशोरसिंह और उनके स्वजातियोंने इस समय पूर्वपुरुषोंके मतसे उस प्रकार बल विक्रमको प्रकाश किया, परन्तु इस समरमें दो राजपूतोंने राजभक्तिकी जो पराकाष्ठा दिखाई, हम इस स्थानपर उसका उल्लेख किये विना नहीं रह सकते। वह राजभक्ति ग्रीस और रोमके प्राचीन वीरोंकी वीरताकी कहानीकी अपेक्षा हीन नहीं है। जिस स्थानपर उक्त युद्ध हुआ था उस स्थानका भौगोलिक विवरण इसके पहिले प्रगट हो चुका है। वह स्थान समतलक्षेत्र है परन्तु शेषमें जिस स्थानमें नदीके किनारे वह स्थान शेष हुआ है, वह स्थान संकीर्ण और नदीके पारस्थ भूमि और क्रमशः ऊँचा होकर भूधराकार दृष्टि आता है। जालिमसिंहकी सेना उस संकीर्ण स्थानसे होकर जिस समय जा रही थी उस समय नदीके परपारवर्ती ऊँची भूमिसे अचानक कितनी ही गोलियां आकर उनके ऊपर गिरीं। विना अनुमतिके समस्त सेना अचानक उन गोलियोंके शब्दसे चलनेसे रुककर खडी हो गई, और देखा कि दो मनुष्य उस ऊँचीं भूमिके ऊपर बंदूक हाथमें लिये हुए गोली चला रहे हैं। सभी दो मिनटतक चुपचाप विस्मयाचित्त होकर खडे रहे फिर सेनाको आगे बढ़नेके लिये आज्ञा दी परन्तु उस आज्ञाके न देते २ अग्रवर्ती सेनाके कई जने उस गोलीके आघातसे घायल

होकर पिछले भागमें भाग आये। और उस समय वह दोनों मनुष्य विना श्रमके धम २ गोली चला रहे थे। हमारी सेना एकबार भी जितने समयमें गोली न चला सकी उतने समयमें वह वीस वार गोलियोंकी वर्षा करने लगे। उन दोनों वीरोंकी बडी २ बंदूकोंसे धम २ गोलियाँ निकलकर हमारी विस्तारित सेनादलके ऊपर गिरने लगीं, परन्तु वह मानो इन्द्रजालके बलसे शरलतासे अपने शरीरकी रक्षामें समर्थ हुए। हमारी गोलियाँ भी उनके चारों ओरसे विस्तीर्ण होकर गिरने लगीं; उनके शरीरमें वह स्पर्श तक भी न कर सकीं, इन दोनों वीरोंमें एक मनुष्य बंदूकको फिर भरने लगा और अव्यर्थ निशानेसे छोडने लगा। अन्तमें हमारी दोनों तोपोंसे उन दोनों वीरोंको लक्ष्य करके गोलोंकी वर्षा की गयी। समस्त गोले उनके धोरे होकर निकल गये, वह दोनों जने उस ऊँचे स्थानपर खडे होकर व्यंगभावसे हमें सलामी करके शेषमें अपने पूर्वमतसे सेनादलके ऊपर गोलियोंकी वर्षा करने लगे। हमारी समस्त सेना उसी कारण उन दोनों व्यक्तियोंद्वारा अविरुद्धगातिसे जाने लगी। यद्यपि उक्त दोनों वीरोंद्वारा हमारी अनेक सेना घायल हुई तथापि उनके बल विक्रमको देखकर उनके प्राणोंकी रक्षा करनेकी अभिलाषा उत्पन्न हुई। सेनाको गोलियां वर्षानेका निषेध किया गया, और आज्ञा दी कि आगे बढ़ो और सेनादलके बीचमें यदि कोई दो साहसी वीर अग्रसर होकर उन दोनों वीरोंपर आक्रमण करना चाहि तो आक्रमण करसकेंगे, इस शेष आज्ञाको पाते ही दो रुहेल नंगी तलवारें हाथमें लेकर दोनों वीरोंके सम्मुख होनेके लिये आगे बढ़े। सभी कौतुहल चित्तसे प्रतीक्षा करने लगे। उन दोनों वीरोंका शारीरिक बल बहुत थोडा था। यह समझा कि वह गोलोंके आघातसे पहिले ही हततेज हो गये थे या वह जिस स्थानपर स्थित थे वह द्वन्द्वयुद्धके योग्य नहा था, वह अंतमें दोनों रुहेलों के हाथसे मारे गये। बडे आश्चर्यकी बात है कि केवल इन्हीं दोनों हाडा वीरोंने जालिमसिंहके दश दल पैदल और बीस तोपोंके साथ गोलन्दाजकी गतिको रोक लिया था। यह दोनों हाडावीर जालिमसिंहके द्वारा सौभाग्यलक्ष्मीकी गोदीसे रहित होकर प्रतिहिंसा देनेके लिये इस प्रकारकी वीरता प्रकाश करके परलोकगामी हुए थे"।

साधु टाड साहबने इस स्थानपर लिखा है कि हाडौतीके समस्त सामन्त और समस्त निवासियोंने महाराव किशोरसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये जो सम्पूर्ण योगदान किया उसीके द्वारा राजपूत जातिके प्रधान गुण और सम धर्मकी रक्षाका चूडान्त प्रमाण पाया जाता है, और उसके साथ ही साथ यह भी जाना जाता है कि जालिमसिंहका शासन कहाँतक कठोर था, और वह सर्व साधारणको कितने अप्रिय थे। जिस सामन्तने संधिकार्यकी मध्यस्थता की थी और जालिमके अनुग्रहसे भूवृत्ति भी पाई थी, जिसका एक पुत्र उस युद्धमें घोररूपसे घायल हुआ, जालिमसिंहके साथ वैवाहिक सम्बन्धबन्धनमें बंधकर भी उसने महारावका पक्ष समर्थन किया। "कर्नल टाड साहबने कोटेके सैकडों स्थानोंमें स्वीकार किया है कि जालिमसिंहके कठोर शासनसे समस्त कोटेके प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक मनुष्य ही महाविरक्त और असन्तुष्ट थे, तथापि उन्होंने बृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे उन जालिमसिंहको अन्याय

रूपसे वंशानुक्रमसे शासनकी सामर्थ्य देनेके लिये महाराव किशोरसिंहके साथ युद्ध किया। राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है"।

टाड साहब लिखते हैं कि–"महाराव किशोरसिंह पर्वत नदीके किनारे जाकर सन्तरणसे उस नदीके पार हो गये, उनके घोडेने नदीके पार जाते ही पहिली गोलीके आघातसे प्राण त्याग दिये।" (इससे समझा जाता है कि महाराव किशोरसिंहका जीवननाश करनेके लिये सेनाने गोली चलाई थी। उधर इन महारावने यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं अंग्रेजी सेनाके विरुद्धमें तलवार नहीं चलाऊंगा, इसी लिये यह रणभूमिसे चले आये) टाड फिर लिखते हैं कि "प्रायः तीन सौ अश्वारोही सेनाके साथ महाराव किशोरसिंह बडोदाको चले गये, हमारी प्रतिहिंसा देनेका और कोई प्रयोजन नहीं था, इसी कारणसे जिन सब साहसी वीरोंने राजभक्ति प्रकाश कर समधर्म पालन करनेके लिये अपनी वासभूमि अपना आवास और अपने परिवार तकको त्याग कर महारावके पक्षका अवलम्बन किया था।

हमने अपने प्रबल शत्रु महाराष्ट्रोंके समान उन हाडावीरोंके पीछे धावमान होकर उनका विनाश करना कर्त्तव्य न जाना, यह बात सत्य है कि वह रणभूमिमें हमारे सम्मुख हुए थे, परन्तु आक्रमणके लिये नहीं वरन् अपनी रक्षाके लिये सम्मुख हुए थे, और उनका वह कार्य अवश्य ही सम्पूर्ण नीतिसंगत है।" कर्नल टाडका यह मंतव्य अवश्य ही प्रीतिदायक है। अन्य अंग्रेजके होनेसे उन सामन्तोंके विनाशमें कुछ भी विलम्ब नहीं होता।

कोटेराज्यके न्यायसंगत अधीश्वर महाराव किशोरसिंहको भगा कर कर्नल टाडन साहब लिखते हैं कि "मूलसंधिपत्रके विरुद्धमें इतने दिनोंसे जो अन्यायरूपसे उत्तेजना प्रकाश की गई थी, उसने एकबार ही दूर होकर ऊँची आकांक्षाको विध्वंसकर दिया। इस विद्रोहके प्रधान षड्यंत्री दो मेंसे एक पृथ्वीसिंह मारे गये, और दूसरे गोवर्धनदास निकाल दिये गये। उधर जालिमसिंहका शिक्षित नियमित सेनामें जिन्होंने जालिमसिंहका पक्ष त्याग कर महारावका पक्ष अवलम्बन किया था, उनको इस प्रकार दंड मिला कि जिससे जालीमके अधीनमें स्थित बची हुई सेनाके पक्षमें उस प्रकारसे जालिमसिंहका पक्ष त्यागनेकी कामना अवश्य ही विलुप्त हो गई। उस दिनके युद्धमें उस प्रकारकी पराजय होगी, सामन्तोंने पहिले इस प्रकारका अनुमान नहीं किया था, इसी कारण उन्होंने उसके लिये पहिले कोई तैयारी नहीं कर रक्खी थी। इस समय हमारी आज्ञा होनेपर समस्त रजवाडेमें उनको कहीं भी आश्रय नहीं मिलता, परन्तु उनकी समस्त धनसंपत्ति छीन कर उन सबका नाश करना हमने कर्तव्य नहीं जाना, कारण कि हम जानते हैं कि उन्होंने अनेक कारणोंसे महारावका साथ दिया था, इन सब कारणोंका निवारण करना उनकी सामर्थ्यसे बाहर था। महारावके डेरोंमें अरक्षितभावसे रहनेके कारण हमने

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि "कितने ही प्रधान २ सामंतोंने एजेण्टके द्वारा जालिमसिंहके पासको जो पत्र लिखे थे इसमें उन्होंने कहा है कि महारावके विश्वासी मंत्रीके उपदेशके अनुसार उन्होंने महारावकी आज्ञानुसार योगदान दिया था"

उनके समस्त गुप्त कागज पत्र अपने हस्तगत कर लिये । उन कागज प्रत्रोंके पढनेसे जाना जाता है कि, ऐसे प्रबल षड्यन्त्र जालका विस्तार कर ऐसी शठता मूलक तैयारी की थी, उसी कारणसे महाराव और उनके समस्त साहसी वीर उनकी ऊँची आकांक्षा॰को पूर्ण करनेमें सहायताके लिये जाकर पूर्ण हानि उठाने और वह प्रत्येक ही कठोर दंडके उपयोगी हुए "।

साधु टाड साहब भली भांतिसे जान गये थे कि एकमात्र संधिकी धाराको प्रबल रखनेके लिये यह जो राजनैतिक अभिनय किया गया है यह अत्यन्त ही अन्याय मूलक और शोचनीय है। टाड साहबने इस स्थानपर लिखा है कि, "इस विशद॰रूपसे वर्णित हुई घटनाओंमें ग्रंथकार (टाड) ने सोचनीय कर्तव्यको पालन किया वह हाडा जातिके अतित इतिहासको जानते थे, और विभिन्न घटनाओंके प्रकृत मूलकी अवस्थाको जानते थे, उनके उस कर्तव्य पालनके समय एक ओर जैसे उस अभिन्नताके बलसे सहायता प्राप्त थी, दूसरी ओर उसी कारणसे उसको विव्रत होना हुआ था। वास्तवमें उस अभिज्ञताका न होना ही अच्छा था–केवल मूल संधिपत्रकी धाराका मर्म जानकर दृढतापूर्वक उस धारासे कार्य परिणत करनेमें दृढ यत्नवान् होनेपर कोई उदद्रव नहीं होता। किसी पक्षके प्रति सहानुभूति वा न्याय विचार करना सर्व साधारणकी राजनीतिका उद्देश नहीं था, इस कारण यहाँपर अवस्थान अभिज्ञताके द्वारा अपने उपकार देखे जाते थे। परन्तु कठोर कर्तव्य पालनमें दृढ आज्ञाके प्रति दृष्टि रख कर भी उन्होंने विचार किया कि बृटिशके प्रभुत्वकी रक्षाके लिये जिससे अत्याचार और उपद्रव किसी प्रकार न हों, और हाडाजातिकी जो कुछ भी जातीय स्वाधीनता है, बृटिश राजनीति वा बृटिश गवर्नमेण्टके भयसे जालिमसिंह उस स्वाधीनताके भारपर हस्ताक्षेप नहीं कर सकें और वह स्वाधीनता भी जिससे नष्ट न हो। उन्होंने इसीसे उक्त समरके कुछ दिन पीछे अपने ऊपर समस्त दायित्वका भार लेकर समस्त सामन्तोंके ऊपर क्षमा दिखा कर उनको अपने २ स्थानोंपर जानेके लिये घोषणपत्रका प्रचार किया। उन्होंने जालिमसिंहसे कहा कि सामन्तोंके ऊपर यह जो साधारण क्षमा दिखाई है, यदि किसी प्रकारसे उस क्षमाके दिखानेमें कसर होगी तो गवर्नमेण्ट अत्यन्त असन्तुष्ट होगी। सामन्तमंडली इस घोशणपत्रको पाकर शीघ्रतापूर्वक अपने २ स्थानोंको लौट आई। इस प्रकार सब ओर उस क्षमाके प्रकार पर संतोषदायक फल उत्पन्न किया गया था। सर्व साधारणमें जो उस घोर विभ्राट्से महा संकटके कारण तथा राजनैतिक संघर्षणसे जो घाव पहुंचा था इस क्षमाको दिखानेसे घोषणारूप अव्यर्थ औषधीने उस घावको सब प्रकारसे भर दिया। टाड साहब जिस कठोर कार्यसाधनमें बाध्य हुए थे इसके मध्य भी अनेक स्थानोंमें वह अभिनंदित हुए।

---

(१) कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "दिल्लीके जो देशीय धन रक्षक इस षड्यंत्रमें लिप्त थे, बडी खोज करनेके पीछे उनको पदसे रहित किया गया। और गवर्नमेंटके प्रधान कार्य स्थानके फारसी भाषाके सेक्रेटरी मुनशीके भाग्यमें भी वह दंड प्राप्त हुआ था।

थे उसके सम्बन्धमें उन्होंने राजपूतोंके चरित्रोंको प्रकाश करनेवाली एक घटनाका इस स्थानपर उल्लेख किया है। सन् १८०७ ईसवीमें जिस समय ग्रंथकार (टाड साहब)ने राजनैतिक कार्यमें सबसे पहिले प्रवेश किया था, उस समय वह इकले ही इस कोटे-राज्यके अनेक स्थानोंमें भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर हाडौतीके भूवृत्त और इतिहासको संग्रह करनेमें प्रवृत्त हुए। वह (टाड) राहतगढसे सेंधियाके डेरोंको छोड अत्यन्त सामान्य अनुचरोंको साथले चन्देरीके गहन वनसे युक्त देशमें होते हुए समान पश्चिमकी ओरको आगे बढ कर वेतवां और चम्बल नदीके मध्यवर्ती समस्त नदियोंके उत्पत्ति स्थानको ढूंढते हुए गये। बारा नामक स्थानपर जाकर इन्होंने अपने डेरे डाल दिये। हाडौती देशसे साढ़े आठकोश दूर कालीसिन्धु नामक नदीके किनारे जाकर अपने सेवकोंकी इच्छानुसार विश्राम करके आनेके लिये कहा, और आप शीघ्रतासे घोडेपर सवार होकर लौटने लगे। वह वमोलिया नामक नगरसे होकर जिस समय जा रहे थे, उस समय एक मनुष्योंके दलने बडी शीघ्रतासे बाहर होकर उनको पकडा। इन्होंने कहा कि आपको अधीश्वरके निकट अवश्य ही जाना होगा। यद्यपि उस समय वह अत्यन्त क्लान्त हो गये थे, तथापि उस समय उनके उन वाक्योंकी रक्षा न करनेसे अत्यन्त ही अविवेचकताका कार्य होगा। इससे टाड साहब उनके वाक्यकी रक्षा करनेमें सम्मत होकर एक बगीचेमें गये। उस बगीचेके मध्यस्थलमें एक सघन पल्लव समाकीर्ण वृक्षोंकी छायासे ढके हुए स्थानमें एक ऊँचे मचानको देखा। उस मचानके ऊपर मनोहर गलीचे पर वमोलियाके अधीश्वर पारिषदोंके साथ बैठे थे। उन्होंने ग्रंथकार (टाड) को बडे सम्मानके साथ ग्रहण किया। सबसे पहिले ग्रंथकारने बूट (जूते) के खोलनेकी चेष्टा की, परन्तु उस समय वह अत्यन्त क्लान्त थे इससे उनकी वह चेष्टा सफल न हुई, इससे पीछे उनके सम्मुख खाद्यादि रक्खा गया, और उनके हाथ मुँह धोनेके लिये एक ब्राह्मण जल ले आया। यद्यपि वह उस समय राजपूत जातिके आभ्यंतरिक आचार व्यवहारको भली भाँतिसे नहीं जानते थे, वह उसके पालनमें वीतरागी थे, तथापि एक घडी तक वहाँ बडे आनन्दसे निवास किया, और उस समय वार्तालाप होनेमें एक बार भी विश्राम नहीं मिला। शीघ्र ही वह स्थान मनुष्योंसे भर गया और अनेक सुन्दरी कृष्णनयना रमणी निर्भय होकर मुस्कराती हुई उनकी ओरको देखने लगीं, टाड साहब यह देखकर अत्यन्त विस्मित हुए, कारण कि वह की जातिकी सामाजिक अवस्थाके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते थे। टाड साहब-की घोडी लंगडी हो गई थी। वमोलियाके अधीश्वरने उसे देखा और जिस समय टाट साहब जानेके लिये तैयार हुए उस समय उन्होंने देखा कि उनके लिये एक उत्तम घोड़ा सजा सजाया तैयार खडा है, परन्तु उन्होंने उस घोडेको ग्रहण नहीं किया। ग्रंथकारने अपने डेरोंमें आकर कितनेक ही छोटे २ द्रव्य सम्मानसे उपहार स्वरूपमें उन सामन्तोंके पास भेजे। उस घटनाके चौदह वर्ष पीछे मांगरोलमें जिस दिन महा-राव किशोरसिंहके विरुद्धमें युद्ध हुआ था उसके दूसरे दिन वमोलियाके सामन्तोंकी

माताके समीपसे इनको एक पत्र मिला। सामन्त जननीने उस पत्रपर उनको आशीर्वाद लिख कर पूर्व मित्रताको स्मरण कराकर उनसे यह प्रार्थना की थी कि हमारे पुत्रने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये महारावका साथ दिया था, हमारी सन्तानकी रक्षा करनी होगी। ग्रंथकारने बडे सन्तोषके साथ सामन्त माताके निकट उस पत्रका उत्तर भेजा। पत्रवाहकके तुह्मारे पास न पहुँचते२ आपका पुत्र आपके पास पहुँच जायगा। स्मरण होगा कि, जालिमसिंहको जब सबसे पहिले कोटेके शासनकर्ताका पद मिलता था उस समय आथूनके जो सामन्त जालिमसिंहके प्रधान शत्रुरूपसे उनके विरुद्धमें खडे हुए, यह बमोलियाके सामन्त इनके ही उत्तराधिकारी थे"।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "महाराव किशोरसिंह इसके पीछे मेवाडके अन्तर्गत नाथद्वारेमें गये, इससे प्रमाणित होता है कि ऊँची आकांक्षाके स्थानपर एकमात्र धर्म भाव ही अधिकार कर सकता है। जो मनुष्य अपने घृणित उद्देशको साधन करने के लिये कुसम्मति देकर महारावके भाग्यको विध्वंस करनेके लिये उद्यत हुए थे, इस समय वह इनको छोड़ कर चले गये, महारावके नेत्रोंसे आवरणके उतरते ही उन्होंने देखा कि, यह कैसी अवस्थामें पड कर किस भावसे जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मूल संधिपत्र और अतिरिक्त धाराके विरुद्धमें जो सब आपत्ति और उपद्रव हो रहे थे; थोडे ही समयमें उन सभीको महारावने छोड दिया। उस समय जालिमसिंहकी सम्मतिके अनुसार महारावके निकट एकपत्र भेजा गया, और कैसी व्यवस्थाके करनेसे वह फिर कोटेराज्यमें आ सकेंगे यह भी उस पत्रमें लिखा दिया गया। उस व्यवस्थामें महारावकी सम्मतिसे उत्तर भेजनेपर, एजेण्टने मूल संधिपत्रको तैयार कर दिया, उस संधिपत्रमें केवल महाराव और जालिमसिंहका प्रकृतपद निर्द्धारित हुआ हो यही नहीं—वरन् भविष्यत्‌में जिससे किसी प्रकारका संघर्षण न हो उसके लिये केवल नाममात्रके राजाके उत्ताधिकारी महारावके साथ जालिमसिंहकी क्षमता और सत्वाधिकार निर्देश कर दिया गया था। मूल प्रधान उद्देश महारावके पदकी मर्यादा शांति और आत्मरक्षाकी उपयुक्त व्यवस्था करनी थी, सो उसका अत्यन्त उदारभावसे निश्चय किया गया था। महारावके पिता वा कोटेके भूतपूर्व किसी राजाको वृत्ति प्राप्त नहीं हुई पर उनको वृत्ति देनी होगी। समस्त राजपूत जातिके प्रकृत शिरस्थानीय मेवाडके महाराणाके दरबारमें जो व्यय नियत हुआ है; महारावके लिये भी इसी प्रकारका व्यय नियत किया जायगा"।

(महात्मा टाडने अपने इतिहासमें महाराव किशोरसिंहके इस शेष, स्वाधीनता विनाशक संधिपत्रको प्रकाशित नहीं किया है, हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे संग्रह करके उसको यहांपर प्रकाशित किया है)।

सन्धिपत्र।

"मैं महाराव किशोरसिंह–गत दो वर्षतक विशेषतः सम्प्रति जो समस्त कांड उपस्थित हुआ है, उन सबका फल विशेषरूपसे अनुसंधान कर और उस प्रकारके आचरणसे अत्यन्त कुफल फला है, उसीसे बृटिश गवर्नमेण्ट असन्तुष्ट हुई है, कोटे राज्यका

अमंगल हुआ है और हमारे निजकी सुखशांतिमें आघात लगा है। इसको भलीभांतिसे जानकर मैंने आजकी तारीखसे निम्नलिखित धाराओंसे युक्त संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये और उसको मोहरांकित कर दिया। इस संधिपत्रके मतसे मैं भविष्यत्में सब कार्य करूँगा। मेरी मानसिक श्रेष्ठ इच्छाके श्रीनाथजी साक्षी रहेंगे। यदि मैं भविष्यत्में इस संधिपत्रकी किसी धाराको भंग करूँ तो मैं बृटिश गवर्नमेण्टके निकटसे भविष्यत्में किसी प्रकारका अनुग्रह नहीं पा सकूँगा।

पहिली धारा–बृटिश गवर्नमेण्ट जिस प्रकारकी आज्ञा देगी मैं आनंदित होकर उन सबका पालन करूँगा और मेरे भविष्यत्में सुख शान्ति स्वच्छन्दता तथा सांसारिक विषयके सम्बन्धमें आपकी (टाड) मध्यस्थतामें जो निर्द्धारित होगा, मैं उसके विरुद्धमें किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं करूँगा।

दूसरी धारा–मेरे पिता राजा उमेदसिंहकी जीवित दशामें नानाजी जालिमसिंह जिस प्रकार राज्यके समस्त राज्यकार्यको निर्वाह करते आये हैं, दिल्लीके संधिपत्रके मतसे हमारे नामसे तथा हमारी ओरसे और हमारे उत्तराधिकारीकी ओरसे नानाजी जालिमसिंह और उनके उत्तराधिकारियोंको उसी प्रकारसे शासनका भार प्राप्त होगा, अर्थात् राज्यशासन; राजस्व, सेनादल, दुर्गसमूह, कर्मचारीनियोग, कर्मचारियोंके पदच्युतिकी सामर्थ्य उन्हींके हाथमें रहैगी, सभी विषयोंमें उनकी सामर्थ्य चूडान्तरूपसे गिनी जायगी, उसके सम्बन्धमें हम हस्ताक्षेप नहीं करेंगे।

तीसरी धारा–शांति भंग करनेवालोंको उचित दंड प्राप्त होगा। मेरे सभी कुपरामर्श देनेवाले चले गये हैं, वा आपकी आज्ञानुसार मैंने उनको निकाल दिया है। गोवर्द्धनदास, सैफअली, महाराज बलवन्तसिंह, काजी मिरजामोहम्मद अली, सेखहवीब और अन्यान्य व्यक्तिगण, जिनकी कुपरामर्शसे मैं चला था। मैं उनके साथ भविष्यत्में अब किसी प्रकार सम्बन्ध वा उनके साथ पत्रव्यवहार नहीं करूँगा।

चौथी धारा–हमारे शरीरकी रक्षाके लिये जो सेना नियत होगी, उसके अतिरिक्त हम किसी समयमें भी अतिरिक्त सेनाके रखनेकी चेष्टा नहीं करेंगे। जो मनुष्य शासनकर्ताके विपक्षी वा अन्य सब मनुष्य उन सब मनुष्योंके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध रक्खेंगे, मैं अपने दरबारमें उनको नहीं आने दूँगा।

नाथद्वारा, २२–नवम्बर सन् १८२१ इसवी "।

(हस्ताक्षर) महाराव किशोरसिंह *।

जो महाराव किशोरसिंह प्रकृत राजपूत वीरके समान जालिमसिंहके विरुद्धमें खडे हुए थे। पैतृक शासन स्वत्वकी स्वाधीनता पानेके लिये समरमें अवतीर्ण हुए थे उन्हीं महाराज किशोरसिंहको इस समय संधिबंधनमें बँधा हुआ देखकर और उनको बृटिश गवर्नमेण्टके क्रीतदास स्वरूपसे वश्यता स्वीकार करते हुए देखकर किसीने उनको कायर पुरुष विचारा था। परन्तु हम कह सकते हैं कि जो महाराव

* Aitchison's treaties Vo IV.

किशोरसिंहको इस प्रकारकी उपाधि देनेमें अग्रसर हुए थे, वह इस समय भ्रान्त थे। महाराव यदि अपना पैतृक अधिकार और स्वाधीनता प्राप्तिके लिये वीर पुरुषोंके समान खडे न होते तो हम उनको यथार्थ कापुरुष कह सकते थे। वह गवर्नमेण्टको जालिमसिंहका सब प्रकारसे पृष्ठपोषण करते हुए देखकर जिस जातीय अभ्युत्थानको उपस्थित करके वह समरसागरमें कूदे थे, उसके लिये वह अवश्य ही प्रशंसाके पात्र हुए। कौन कह सकता है कि प्रबल बलशाली बृटिशसिंहको जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करते हुए देखकर और भावी फल क्या होगा; महारावने इसका अनुमान न किया था, तब युद्धका न करना ही उचित था। हम कह सकते हैं कि महाराव यद्यपि जानते थे कि गवर्नमेण्ट विपुल विक्रमशाली हैं तथापि उन्होंने नहीं विचारा था कि जगत्में सर्व प्रधान बृटिश गवर्नमेण्ट वास्तवमें ही उस भावसे न्यायके मस्तकपर धर्मके मस्तकपर राजनीतिके मस्तकपर पदाघात करके जालिमका पक्ष समर्थन करनेके लिये उनके विरुद्धमें सेनाको चलावैगी। उन्होंने विचारा था कि समस्त हाडा जाति तथा जालिमसिंहके कुटुम्बीतकको जालिमके विरुद्धमें खडे होते देख बृटिश गवर्नमेण्ट अवश्य ही अपना कार्य अनुचित जानकर हमारे पक्षको समर्थन करेगी। पर यह न हुआ बृटिश गवर्नमेण्टके साथ उनकी कोई शत्रुता नहीं थी, इसी लिये मांगरोलके समरमें बृटिश सेनादल उनको आक्रमण करनेके लिये धावमान हुआ, पर उन्होंने केवल अपनी रक्षाके लिये ही उस बृटिशसेनाके आघातको व्यर्थ करके रणक्षेत्रको छोड दिया। उक्त संधिपत्रसे भलीभाँति प्रमाणित होता है कि महारावने अत्यन्त अनिच्छासे उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये थे, उन्होंने उपस्थित अवस्थाको समझ कर बृटिश एजेण्टको अत्यन्त ही अविचार करते हुए देख कर भविष्यत्में अपना उद्देश साधनके लिये किसी उपायको न जान कर उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये। परन्तु बृटिश सरकारने एक राज्यमें एक नाममात्रके राजा और एक जनेको शासनशक्तिशाली राजाकी उपाधिसे हीन अधीश्वर नियुक्त रखकर अत्यन्त अविचारका कार्य किया, संधिके ऊपर संधि करके स्वपक्षके उस उनुचित कार्यको चिर दिनतक प्रबल रखनेके लिये जो चेष्टा की, समयपर वह सब प्रकारसे व्यर्थ हो गई, और उस अज्ञानताका चूडान्त प्रमाण प्रकाशित हो गया।

इस प्रकार महाराव किशोरसिंहको फिर शासनक्षमता हीन नरपति पदपर प्रतिष्ठित करके उनके लिये जो अर्थ नियत हुआ था कर्नल टाडने उसे प्रकाशित नहीं किया इतिहासके अंगको पूरण करनेके लिये हम उन सूचियोंको आचिसन साहबके ग्रंथसे लेकर यहाँ लिखते हैं।

पहिली संख्याकी सूची।

महाराव किशोरसिंहको उनके दरबार और कार्यकारक वर्गोंके लिये: निम्नलिखित वृत्ति सन् १८२२ की ८ वीं जनवरीसे आरंभ करके प्रत्येक महीनेमें समयपर कोटेके शासनकर्ताके द्वारा मिलैगी।

	वार्षिक ।	
१ श्रीव्रजराजजीकी सेवामें	४८००	रुपया ।
२ महारावका दान दातव्य	२२००	"
३ रसोई १५) रोजाना	५४००	"
४ राजमहलका व्यय...	९३०६॥–॥।	
५ रानियोंके अलंकार	१२,०००	
६ महाराव और महारानियोंकी पोशाक वेश और दातव्य वस्त्रक्रय	१८०००	"
७ हाथखर्च वा गुप्तव्यय	२४०००	"
८ राजसेवकादिका वेतनादि...	१२०००	"
९ तबेला	६७९६॥	"
१० फीलखाना (हस्तीशाला)	३२७६॥–	"
११ रथगाडी, नरयान इत्यादि	१४०३।–॥	"
१२ पालकीके कहार...	१२३९	"

प्रासादरक्षक सेनाका व्यय ।

१३–१०० अश्वारोही (प्रत्येकको २५) हिसाबसे...	३००००	रुपया ।
पैदल २०० (सूबेदार २ प्रत्येकको २० मासिकके हिसाबसे २ जमादारको मासिक १२) पताकाधारी मासिक ८) पदातिको ७ के हिसाबसे...	१७५८०	"
	३१७	"
१४ ऊंट ५	४८४ ≡।।।	"
१५ सांडनी ४	७२०	"
१६ ईंधनकी लकड़ी	८५०	"
१७ घास	१८००	"
१८ रोसनाई तेल बत्ती काली आदि	२००	"
१९ रंग	३०००	"
२० इमारत संस्कार	६०००	"
२१ घोडा गाय बैल ऊँटकी खरीददारीके वास्ते ...	१०००	"
२२ फराश रँगना अर्थात् पर्दा गलीचे डेरा वगैरा ...	४००	"
२३ चिकित्सालय औषधीकी खरीददारी	३००	"
२४ लंगरखाना		
	१६४८७७॥=)	

वार्षिक जोड
वा मासिक १३७३९।।।)॥

हस्ताक्षर माधोसिंह ।

दूसरी सूची ।

पृथ्वीसिंहके पुत्र नानालाल और उनके कुटुम्बके भरण पोषणके लिये कोटे-के शासनकर्ता द्वारा सन् १८२२ ईसवी आठ ८ जनवरीसे प्रत्येक महीनेमें निम्नलिखित वृत्ति दी जायगी।

वार्षिक कोटेशाही रुपया १८००० ”

वा मासिक १५०० ”

हस्ताक्षर माधोसिंह *

कर्नल टाड साहबने मध्यस्थ होकर किशोरसिंहकी वृत्ति नियत कर राज्यमें उनकी जो क्षमता और शक्ति निर्द्धारण करके उसे लिपिवद्ध कर कुमार माधोसिंह जिससे चिरकाल तक उसी नियमके अनुसार कार्य करैं, इसके लिये उनसे हस्ताक्षर करा लिये। उस पत्रको इतिहासमें प्रकाशित नहीं किया है हमने उसे भी विशेष प्रयोजनीय जान कर आचिसन साहबके ग्रंथसे इस स्थानपर प्रकाशित किया है।

“ पहिली धारा—कोटेकी राजधानी और उनके निकट प्रासाद विश्राम स्थान और उद्यान समूह यथा राजधानीके मध्यस्थ महल, उमेदगंजस्थ महल, रंगवाडी जगपुरा मुकुन्दरा व्रजराजजी नामक उद्यान, गोपालनिवास, और व्रजविलास नामक उद्यान महारावके अधिकारमें रहैंगे, महाराव उन सबके सम्बन्धमें जो कोई आज्ञादान वा कार्य करेंगे, शासनकर्ता उनपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं कर सकेंगे।

राजधानीके मध्यस्थ राजमहलके जिन अंशोंके कितने ही हर्म्य राजराणा जालिम-सिंहके परिवार और सेवकोंके निवास करनेके लिये नियत हैं, वह मूलमहलसे पृथक् कर दिये गये हैं, नव्यवजे किलेसे खेतर द्वार तक जो गली गई है उन दोनों मार्गोंमें सीमा चिह्न स्वरूप हो रही है। उस सीमाके बाहर कोई पक्ष भी नहीं जा सकेगा। शासनकर्ता उक्त हर्म्य और उससे लगे हुए स्थानोंकी रक्षाके लिये ५० जनोंसे अधिक चौकीदार नियुक्त नहीं कर सकेंगे।

दूसरी धारा। प्रथम संख्यक तालिकाके मतसे महाराव और उनके परिजनोंके भरण पोषणके लिये वार्षिक कोटाशाही एक लाख चौंसठ हजार आठसौ सत्तर रुपया दश आना तीन पाई वा मासिक १३७३९॥।)॥। १-१/५ देना होगा। राजराणा जिस महाजनको स्थिर कर देंगे, उनको उक्त प्रतिमासका रुपया मध्य समयमें मिलैगा, महा-राव उस रुपयेकी प्राप्तिपदपर हस्ताक्षर कर देंगे, और हिसाबकी रक्षाके लिये उनको एक अनुलिपि बृटिश गवर्नमेण्टके निकट भेजनी होगी।

प्रथम संख्याकी सूचीमें जो निर्देश किया गया है वह महारावके अंतःपुरका व्यय है राजदरबारके सेवकादिका वेतन और प्रासाद रक्षक सेनाके वेतनके सम्बन्धमें महाराव अपनी इच्छानुसार समस्त व्यय करेंगे।

---

* Aitchison's Treaties Vol IV.

तीसरी धारा-राजगृहमें विवाह और जन्म इत्यादि उत्सवके समयमें जो कुछ व्यय आवश्यक है, शासन कर्ताके द्वारा वह प्राचीनरीतिके अनुसार राजपदोचित रूपसे दिया जायगा। यदि महारावके कोई उत्तराधिकारी जन्म लेगा तो अवस्थानुयायी और प्राचीन रीतिके अनुसार भरण पोषणके लिये और भी अतिरिक्त वृत्ति नियत कर देनी होगी।

चौथी धारा-दशहरा, जन्माष्टमी इत्यादि साधारण उत्सवोंके समयमें महाराव और उनके परिवारको अबतक जिस भावसे सम्मान मिलता है उसी भावसे सम्मान मिलेगा, कर्तृत्व करेंगे, और दान पुण्य इत्यादि जो समस्त व्ययजनक कार्य सांसारिक गिने जाते हैं उन सबके ऊपर भी महाराव कर्तृत्व करेंगे और समस्त राजचिह्न इतने दिनोंतक जिस भावसे रहते आये हैं इसके पीछे भी उसी भावसे रक्खे जायँगे।

पाँचवीं धारा-जिस समय महाराव वायु सेवन करनेक लिये बाहर जायँगे उस समय पूर्वके समान राजचिह्न सभी उनके साथ भेजे जायँगे, और राज्यका एक सेनादल भी उनके साथ जायगा।

छठवीं धारा-प्रथम संख्यक सूचीके अनुसार १०० अश्वारोही एवं २०० पैदल जो उनके शरीररक्षक और प्रासादरक्षकरूपसे निर्दिष्ट हुए हैं वह सम्पूर्ण रूपसे महारावके अधीनमें रहेंगे। अन्य कोई भी उनके ऊपर किसी प्रकारका कर्तृत्व नहीं कर सकेगा। उक्त सेनादलके और राजदरबारके अन्य किसी प्रकारके भृत्य वा परिषद जो तालिकाके निर्दिष्ट अर्थमें प्रतिपालित और रक्षित होंगे महाराव उनके एकमात्र प्रभुस्वरूपसे रहेंगे।

सातवीं धारा-पृथ्वीसिंहके पुत्र नानालालजी और उनके कुटुम्बके तथा उनके पिताके और कुटुंबियोंके भरण पोषणके लिये वार्षिक १८००० रुपयेकी जो वृत्ति नियत हुई है, महारावकी वृत्ति जिस समय जिस नियमसे दी जाती और स्वीकृत होती है, वह भी उसी समय उसी नियमसे दी जायगी और स्वीकार की जायगी। उनके प्रथम विवाहके समयमें कोटके शासनकर्ता उनके पदके उपयोगी समस्त व्यय प्रदान करेंगे।

आठवीं धारा-कोटेके शासनकर्ता जो समस्त सिपाही और मुसद्दीको पदसे रहित करेंगे वा जो अपनी इच्छानुसार पद त्याग करेंगे, महाराव उनको अधीनमें नियुक्त अथवा आश्रय नहीं दे सकेंगे। दूसरी आर कोटेके शासनकर्ता उसी प्रकारसे महारावके निकाले हुए उन श्रेणीके किसी मनुष्यको अपने अधीनमें नियुक्त वा आश्रय नहीं दे सकेंगे।

नौमीं धारा-गवर्नर जनरलके एजेण्टकी ओरसे एक विश्वासी मनुष्य नित्य महारावके समीप हाजिर रहेगा और उसके द्वारा पत्रादि भेजकर कथोपकथन चलैगा।

दशवीं धारा-पिछले उपद्रवोंके समय महारावने जिस प्रकारका ऋण किया है

अथवा इसके पीछे जो कोई ऋण करेंगे उस ऋणके चुकानेको खजानेसे किसी भाँति भी रुपया नहीं दिया जायगा ।

(हस्ताक्षर) माधोसिंह ।

फाल्गुन संवत् १८७६।७ वीं फर्वरी सन् १८२२ ई०

"जो लिखा गया है उसमें कुछ भी व्यतिक्रम नहीं होगा* " ।

भविष्यत्में जिससे अब किसी प्रकारका उपद्रव न हो इसके लिये टाड साहबने यह व्यवस्था कर दी थी । परन्तु दुःखका विषय है कि उन्होंने एक ऊंची श्रेणीके राजनीतिज्ञ होकर भी इस स्थानपर परिणामकी चिन्ता नहीं की । एक राज्यमें एक नाममात्रका राजा, और एक पूर्ण शासन शक्तियुक्त व्यक्ति वंशानुक्रमसे व्यवस्था न करै यह व्यवस्था कभी भी चिर दिनतक नहीं चल सकती, इस बातका टाड साहबने विचार नहीं किया । कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "संधिकी पूर्व व्यवस्था संतोषदायक होनेपर भी जिस संधिपत्रकी धाराको भंग करके उनकी उससे अधिक दुर्दशा हुई है उस संधिपत्रकी रक्षाके लिये जिसमें दृढतासे मन लगाया जाय उसके मंगल और सुख शांति-के लिये उसी प्रकार विशेष मन लगाना होगा। कुपरामर्श पाये हुए महारावके हृदयमें उस विश्वासका प्रबल करना आवश्यक हो गया है, उन्होंने पहिले जो व्यवहार किया उसके अनेक कारणोंमें यह एक कारण दिखाया कि उन्होंने अपने जीवनके भयसे ही यह किया था, वास्तवमें यही उनके भयका कारण था, और इसी लिये उनके उस भयके दूर करने और मंगल साधन करनेके लिये चेष्टा कीगई है। अधिक क्या कहैं, जिस दिन उन्होंने समस्त पूर्व भीति और अविश्वासको दूर कर नाथद्वारेको छोडकर कोटेमें जानेका उद्योग किया उस दिन उनको फिर सिंहासनपर अभिषिक्त करनेकी इतनी चेष्टा और व्यवस्था की गई थी, उस चेष्टाको व्यर्थ करनेके लिये एक भयानक षड्यन्त्र प्रकाशित हुआ । एक दुश्चरित्र लँगडेने अपनेको महारावके भ्राता विशनसिंहके नामसे परिचय दिया और प्रकाशित किया था कि जालिमसिंहके पुत्रकी आज्ञासे मुझको लँगडा किया गया है" । वह दुराचारी महारावके वासस्थानके एक कोश निकट तक जानेका साहसी हुआ था, विशनसिंहकी आकृतिके साथ उसकी आकृतिका अत्यन्त सामान्य सादृश्य था इसीसे उसकी चातुरी सरलतासे प्रकाशित हो गयी और उसकी वह प्रतारणा शीघ्रतासे जानी गई, परन्तु जिस उद्देशसे वह मनुष्य इस कार्यको करता था उसके सफल होनेमें कुछ विलम्ब नहीं हुआ । महाराव माधोसिंहके द्वारा अपने प्राणनाशके भयसे भयभीत हो गये। अन्तमें बडे कष्टसे उनका वह भय दूर किया गया। उदयपुरके महाराणाने महाराव किशोरसिंहकी भगिनीके साथ विवाह किया था जिससे किशोरसिंहको फिर अपना सिंहासन मिल जाय इसके लिये उन्होंने विशेष यत्न किया। उन्होंने उक्त समाचारको पाकर समस्त चेष्टा और यत्न व्यर्थ होता हुआ देखकर शीघ्र ही उस प्रतारकको पकडवा कर उदयपुर राजधानीमें मंगवा लिया उस प्रतारकके उस व्यवहारसे सर्वत्र

* Aitchison's Treaties Yol IV.

महा उत्तेजना दृष्टि आई । किसलिये उस मनुष्यने ऐसा कार्य किया था, किसी प्रकार भी वह प्रकाशित न हुआ, इस षड्यन्त्रका मूल क्या था, वह चिर दिनके लिये गुप्त रक्खा गया, और शीघ्र ही उसको प्राण–दण्ड दिया गया । उसके सम्बन्धमें केवल इतना ही प्रकाशित हुआ है, कि वह मनुष्य जयपुर राज्यका निवासी था और किसी घोर अपराधके करनेसे उसको दंडमें लंगडा कर दिया गया था ।

" उक्त शेष अभिनयके समाप्त होते ही महाराव कन्हैयाजीके मंदिरको छोड कर अपने पिताके राज्यकी ओरको चले । वर्षके शेष दिनमें जालिमसिंह एजेण्ट (टाड) के साथ महारावको राजधानीमें बुलानेके लिये आगे बढे । महारावके जानेके समय सर्व साधारण प्रजाने महा आनन्द प्रकाश किया । यह देख कर जाना जाता है कि अन्य प्रकारसे कोई भी व्यवस्था करनेपर मंगल नहीं हो सकता था । दो बार जिस सिंहासनको छोड दिया था उस दिन महाराव फिर उसी सिंहासनपर बैठे, परन्तु अबकी बार उनके हृदयसे समस्त ऊँची आकांक्षाएँ या उपद्रवोंके बँधानेकी आशाएँ एकबार ही लोप हो गईं " ।

महारावको अपने व्ययके सम्बन्धमें जो सम्पूर्ण एकाधिपत्य मिला है, उसके अतिरिक्त राजभंडारके अर्थसे जो सब अनुष्ठान होते हैं, अर्थात् दानपर्वोत्सवमें उपहार-देने और सामरिक उत्सवोंके प्रति भी उनका कर्तृत्व हुआ । जिस प्रकार चिरकालसे राज-महल में समस्त राजचिह्न रहते थे, इस समय भी उसी प्रकारसे वहां रहेंगे, वाद्यकदल प्रधान तोरणके ऊपर रहेंगे यह नियत हो गया । महारावके भ्राता विशनसिंह जो अपने आचरणके दोषसे महारावके कोपमें पतित हुए थे महारावके सन्तोष साधनके लिये उनको राजधानीसे निकाल कर उनके परिवारके वासस्थान राजधानीसे दश कोश दूर अणता नामक स्थानमें रक्खा गया । उसी समयमें महारावने भी अपनी इच्छानुसार उनकी जागिर बढा दी " ।

किशोरसिंहके साथ जालिमसिंहका पहिली बार राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित होने-पर कर्नल टाडने जिस प्रकार कोटेराज्यमें एक महीने तक रहकर दोनोंके बीचमें मध्यता स्थापित की, इस दूसरी बार शोचनीय और कष्टदायक राजनैतिक अभिनयके पीछे वह उसी प्रकारसे चिरस्थायी सख्यता स्थापन करनेके लिये एक महीने तक कोटेकी राजधा-नीमें रहे । टाड साहब लिखते हैं कि " उन्होंने किशोरसिंह और माधवसिंहमें पुन-सद्भाव स्थापित किया था । उस संमिलनके समय महारावने विशेष बुद्धिके साथ अत्य-न्त शोचनीय घटनाओंके समस्त अपराध ग्रहण किये । दोनोंने दोनोंका करस्पर्श करके भविष्यमें मित्रताके लिये शपथ की, और महारावने जिन माधोसिंहको अपने दुर्भाग्यका एकमात्र कारण बता कर अनुयोग किया था, उन्हीं माधोसिंहको अयोचित रूपसे आलिंगन किया । इसी समय महारावकी सुख स्वच्छन्द और पद मर्यादाके प्रति और किसीको क्षमता चलानेका कुछ अधिकार नहीं था । जिससे महा-रावको किसी विषयपर कुछ भी कष्ट न हो, अथवा किसी प्रकारकी त्रुटि न हो इस निमित्त

ध्यान रखनेके लिये एक अभिभावकको नियुक्त किया। इस पुनः संमिलन और सख्यता स्थापनसे वृद्ध जालिमसिंह सन्तुष्ट हुए। अथवा इस प्रकारका सन्तोष प्रकाश करनेवाला भाव प्रकाशित किया। जालिमसिंहके आचरणसे जो नैतिक कलंक लगा था उसके लिये वह मन ही मनमें अत्यन्त दुःखित हुए और उन्होंने इसीके लिये माधोसिंहको बुलाकर कहा, "तुम्हारे पापसे हमें दंड भोगना होगा"।

साधु टाड साहबने इस स्थानपर लिखा है "कि ६० वर्ष पहिले भटवाडेके रणक्षेत्रमें जिन जालिमसिंहका प्रबल अभ्युदय हुआ, उसी रणक्षेत्रके निकट मांगरोलमें जालिमसिंहने अपने जीवनका यह शेष राजनैतिक अभिनय किया, यह अत्यन्त विचित्र घटना हुई। जालिमसिंहके मनमें अपने उस अभ्युदयके दिनकी घटनाको स्मरण कर इस शेष स्मरणीय घटनाका विषय विचारनेसे कैसे दो भिन्न भावोंका उदय हुआ था। अपनी जिस तलवारसे जालिमसिंहने आमेरराजकी अधीनताकी जंजीरको काट कर कोटेका उद्धार किया था, उसी कोटेराज्यके अधीश्वरने उनको पुरस्कारमें राज्यका सबसे श्रेष्ठ पद प्रदान किया, जालिमसिंहने उसी राजाके पोतेके ऊपर अपनी तलवार चलाई।" टाड साहबने उस भावसे उन बातोंको क्यों न कहा, हम कह सकते हैं कि सुसभ्य बृटिशगवर्नमेंट यदि जालिमसिंहका पक्ष समर्थन न करते तो जालिमसिंह कभी भी महाराव किशोरसिंहके विरुद्धमें खडे नहीं हो सकते थे। महाराव किशोरसिंहके विरुद्धमें तलवार चला कर जालिमसिंहने जो अन्याय किया इतिहासमें चिरकालतक पाठक उसे स्मरण करेंगे।

यह अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक अभिनय होनेके पीछे फिर शांति स्थापित हुई। टाड साहबने लिखा है कि "इस शोचनीय समाप्तिके कुछ ही समयके पीछे जालिमसिंह अपने निर्दिष्ट छावनीमें आकर राज्यके चारों ओर जो अशान्ति, उपद्रव, और शासन विशृंखला उपस्थित हुई थी उसके दूर करनेके लिये फिर एक बार राज्यमें भ्रमण करनेके लिये गये। वह शीघ्र ही प्रार्थनीय शांतिकी शृंखला स्थापित करनेमें समर्थ हुए और जो राजनैतिक विभ्राट् समाजको एक बार ही विध्वंस करने और राज्यमें रक्तकी नदी बहानेके लिये उद्यत हुआ था शीघ्र ही उसके चिह्न दूर हो गये। उक्त घटनाके पीछे जालिमसिंह और पांच वर्षतक जीवित रहे थे"।

कर्नल टाड साहबने पीछे जालिमसिंहकी जीवनीकी समालोचना करते हुए निम्नलिखित मन्तव्य प्रकाशित किये हैं "यदि इस असाधारण मनुष्यके चरित्रकी समालोचना वा वर्णना करनेको इतिहासमें तैयार होते तो हम उसको किस दृष्टिसे देखते? हमने उसके जीवनके जिन कार्योंको अंकित किया है उससे बहुतोंका कौतूहल निवृत्त हो सकता है परन्तु अपने चरित्रोंके समस्त चित्रोंको अंकित करनेका उन्होंने कुछ सुभीता दिया हो ऐसा नहीं हुआ। उनके हृदयका गुप्तभाव एकमात्र सर्वान्तर्यामी जगदीश्वरके अतिरिक्त और किसीको भी ज्ञात नहीं था। कोई मनुष्य किसी समय राजस्थानमें इनके समान विश्वासपात्र नहीं हो

सका। जालिमसिंह अपने राजनैतिक जीवनकी उषासे, उस राजनैतिक जीवनके विनाश तक अस्सी वर्षसे भी अधिक कालतक नित्य कहा करते थे कि हमारे हृदयकी कथा हमारे मनके भावके बल हमी जानते हैं। उनके चरित्रोंमें एकमात्र यही गुण उनके नाना विपदोंसे युक्त जीवनमें उनके चरित्रोंकी मौलिकता प्रमाणित कर रहा है। सुख विलासके आवेगसे, सफलता वा सहानुभूतिके उद्योगसे अत्यन्त कठोर स्वभावके मनुष्य भी बीच २ में अपने हृदयकी बात प्रकाशित कर देते हैं परन्तु जालिमसिंह ऐसा नहीं करते थे और हठात् मनके उल्लाससे, आनन्दसे, शोकसे आशा व प्रतिहिंसाके समयमें भी जालिमसिंहके मनकी बात बाहर नहीं होती थी। यदि उनकी कोई कल्पना निश्चय सिद्ध होगी तो भी उसकी प्रबल धारणा करते थे। यद्यपि वह अत्यन्त ही उग्रभाव युक्त थे, परन्तु उन्होंने अपने स्वाभाविक दोषको सरलतासे बंद कर रक्खा था, वह धीरचित्तसे अपने कल्पनाके फलकी प्रतीक्षा करते थे, अधिक क्या कहैं उन्होंने युवा अवस्थामें भी अपने जीवनको निजाधीन कर रक्खा था, उन्होंने पहिलेसे ही शिक्षा और सावधानतासे अनेक षड्यन्त्र जालोंसे अपने जीवनकी रक्षा की थी और उनकी विपत्तिकी राशि जिस भाँति क्रमशः बढ गई थी, उन्होंने उसी भाँति कार्यमें सफलता प्राप्त की। ऐसा कौन सा कार्य था, ऐसा कोई भी अवनत भावको प्रकाश करनेवाला कार्य नहीं था जिसे वह करनेके लिये कातर होते, वह बाहरी सरलता जो प्रकाशित करते उससे नम्र भावका ही प्रकाश होता था और आवश्यकतानुसार वह उस चातुरीसे सहाय लेते उधर वह अपने स्वजातीय धर्म-विधानके प्रत्येक अंगको पालन करते थे। वह जिस किसी विषयमें शपथ करते मनुष्य उस विषयमें संदेह नहीं कर सकते थे उनकी गंभीरता उनके मन्तव्य और विचार बहुतायतसे बढे हुए थे और सुशीलताके द्वारा वे सरलतासे अपने अधीनके कर्मचारियोंका सम्मान संग्रह कर सकते थे, और वह तोषामोदके कार्यमें भली भाँतिसे निपुण थे, इस कारण वह जिस प्रकारकी चतुरतासे तोषामोद करते इससे उनके ऊपरवाले मनुष्य मोहित हो जाते सारांश यह है कि उन्होंने गुप्त कितनी ही बातोंसे मनके भावको इस भाँति प्रकाशित किया कि बातचीतके समयमें भी श्रोता उनको धन्यवाद देते थे। सुमन्तव्य पुरस्कारके संग्रहके विषयमें इन्होंने विशेष चेष्टा की थी और उसको अत्यन्त प्रयोजनीय जानते थे। उपरोक्त घटनाके पूर्व समयतक उन्होंने अपने आचार उत्पीडन और प्रतिहिंसा मूलक कार्यके ऊपर चातुरीजालका आवरण फैला दिया था। जिस समय उन्होंने हाडा सामन्तोंके अधिकारी देशोंपर अधिकार किया, उस समय उन्होंने सभी पृथ्वीको धान्यसे परिपूर्ण कर दिया, अनेकता और परिश्रमका फल क्या होता है, उसके द्वारा प्रकाश कर अपनी प्रशंसाको संग्रह किया। जिस समय उन्होंने राजशक्ति तक पर अधिकार किया उस समय उन्होंने राजगौरवके सूर्यके कमनीय मंडलको प्रकाश कर उसकी सुन्दरताको प्रकाश कर दिया, जिस प्रकार उन्होंने अपने गौरवको प्राप्त किया था, इस प्रकार उनके पूर्व पुरुषोंको कभी प्राप्त नहीं हुआ, उनके प्रत्येक कार्यसे ही प्रमाणित हुआ है कि मनुष्य चरित्र और उनके लक्षण ज्ञानके सम्बन्धमें उनकी चूडान्त बुद्धि उत्पन्न हुई थी; वह धूर्त महाराष्ट्रियोंको धोका दे सकते थे, वीर तेजस्वी राजपूतोंको शान्त और

दमन कर सकते थे, और अंग्रेज एशियावासी जो किसीके गुणको स्वीकार नहीं करते उन्हीं अंग्रेजोंके निकटसे उन्होंने प्रशंसा संग्रह की थी। उन्होंने स्वजातीय सामाजिक और धर्म विषयोंको भलीभाँतिसे पालन किया था, इसीसे अपने समाजमें माननीय थे परन्तु विचित्रता यह है कि उन्होंने जिन विधानोंको भंग किया उनका ऐसे अलक्ष्यमें भंग किया था कि बहुत थोडे लोगोंने उनको जान पाया। एक ओर दाता दूसरी ओर कृपण एक ओर अत्याचारकारी और दूसरी ओर आश्रयदाता रूपसे वह खडे रहते थे। एक हाथसे यह सुवर्णके अलंकार दान करते, और दूसरे हाथसे संन्यासियोंके भिक्षा लब्ध धनका दशमा अंश ग्रहण करते थे; इधर वह कोटेके प्राचीन सामन्त वंशको निकाल कर उनके सर्वस्व पर अधिकार कर लेते दूसरी ओर यदि परदेशी कोई सामन्त आश्रयकी प्रार्थना करता तो उसका बडे आदर भावके साथ ग्रहण करके उसे यथाशक्ति सहायता देकर आश्रय देते थे"।

इसके पीछे कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "हम पहिले ही वर्णन कर आये हैं कि कवियोंके ऊपर उनका भलीभाँतिसे विराग था और रसायनिक वा जादूगरोंके ऊपर भी इनकी बडी शत्रुता थी, उन्होंने दोनों संप्रदायोंको ही कोटेराज्यमें अपना २ व्यवसाय नहीं करने दिया, परन्तु जालिमसिंहके शत्रुओंने कहा है जालिमसिंहने उक्त सम्प्रदायोंका कार्य अच्छा नहीं माना था, इसीसे उनके साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया गया, यह बात नहीं थी वरन् वह एक जादूगरके मन्त्रोंसे छलनामें आये थे, और दूसरी ओर कवियोंकी सत्यता पूर्ण गीतावलीके द्वारा निन्दित हुए थे, इसीसे उन्होंने ऐसी शत्रुता की। उन्होंने "डाँकन वा डायनोंके ऊपर जैसा अत्यन्त कठोर व्यवहार करके दंड दिया उसकी अपेक्षा प्राणदंड अच्छा था। तापित लोहेका गोला उनके हाथमें अर्पण किया गया, पर सर्वसाधारण जानते थे कि डाँकन ऐसे द्रव्यका व्यवहार करती थीं कि जिससे वह लोहेका गोला उनके हाथको दग्ध नहीं कर सकता था उनको जलमें डाल कर एक और प्रकारकी परीक्षा ली जाती थी; यदि वह जलमें डूब जाँय तौ निर्दोष गिनी जाती थीं अर्थात् उनको डाँकन नहीं कहा जाता था, और वह जो जलमेंसे ऊपरको उठ आती तो उनको डाँकन बता कर दंड दिया जाता। जिसको डाँकन बताया जाता तो उनकी परीक्षाके लिये चनोंके थैलेसे मुख बाँधा जाता, यदि उनका श्वाँस न रुका तौ उन्हें डाँकन गिना जाता। उधर सर्व साधारण मनुष्य उनके नेत्रोंमें सूखी मिर्च पीस कर डालते यदि उससे उनके नेत्रोंमेंसे जल न निकलता तौ उनको डाँकनरूपसे दंड मिलता, और ऐसा जाना जाता है कि यह डाँकन जब अपनी शक्तिको मनुष्योंके अस्त्रोंके ऊपर प्रयोग करती तो वह अपने जादूके मन्त्रोंसे धीरे २ उनके अस्त्रोंको क्षय कर देती थी। सर्वसाधारण मनुष्योंको यह विश्वास था कि डाँकनोंने यदि एक वार भी देख लिया तो अवश्य ही मृत्यु हो जायगी परन्तु कोटेराज्यमें ऐसी डाँकन कोई भी नहीं थी। किसी २ वृद्धने भी अपने

(१) डायनोंकी परीक्षा इसी प्रकार करते हैं।

दुर्भाग्यवशसे मनुष्योंके द्वारा ऐसी डाँकनोंकी उपाधि भी पाई।" अबुलफजलने इसको जिगरखोर लिखा है कि सुबहके समय यह बालकोंका कलेजा चाटती हैं।

"जिस समयतक जालिमसिंहकी अवस्था ८५ वर्षकी हो गई थी उस समय भी वह यह नहीं जानते थे कि आलस्य किसको कहते हैं, वह इस बातको जानते थे कि राजपूतोंको सिंहासनकी नित्य अपने घोडेके पीछे रक्षा करनी होती है। जिस समय उनकी दृष्टिशक्ति एकबार ही लुप्त हो गई, तब वह एक साथ अंधे हो गये और घोडेपर चढकर शिकार करनेम असमर्थ हो गये;तब वह पालकीपर सवार होकर मृगया करनेको जाते और उनके पीछे कई हजार सेना जाती। शिकारके समयेंम वह अपने अधीनके सामन्तोंकी लज्जा और भय सबको दूर कर देते थे, और उस आनन्दके समयमें वह बहुतसी बातें किया करते थे। उस शिकारके समयमें अनुचरोंके परस्परमें सम्भाषणके समय मनकी कथाको सुना करते, और जिस राजपूत जातिके पक्षमें मृगया एक प्रधान आनंददायक व्यापार गिना गया था, और जिस मृगयाके अतिरिक्त उनका जीवन विषाद-मय होता है, यह उसी मृगयाका अनुष्ठान करके उन राजपूतोंकी प्रीति संग्रह करनेमें समर्थ होते।मृगया करनेके पीछे वह उस सघन वनमें सैकडों सेवकोंके साथ बैठते थे, और मृगयाके समयकी अनेक घटनाओंका वर्णन कर हास्य परिहाससे सबको संतुष्ट करते थे; इस मृगयाके समयमें ऊँटोंपर बहुतसी मैंदा, घी, चीनी, तरकारी और अन्यान्य अनेक प्रकारके द्रव्य इस स्थानमें लाये जाते थे; और उन सबका भोजन बना कर परमानन्दसे भोजन करते थे; उस उत्सव और आनन्दमें भी जालिमसिंह अपने राजकार्यके अनेक विषयोंका आन्दोलन-वाणिज्य नीति-वैदेशिक नीतिकी आलोचना और कृषिविभाग, शांतिरक्षाविभाग और समरविभाग इत्यादि अनेक कार्य इस स्थानपर करते और हमारे एलफ्रेड्याफ्रैंकके एसटीछोयसके समान जिस समय मृगयाका प्रबल उत्साह उद्वेलित होता था, जिस समय चारों ओर बाणोंके ऊपर बाणोंकी प्रबल वर्षा होती थी, उस समय किसी एक पीपलके नीचे बैठकर जालिमसिंह विचार कार्य करके अपराधीको दंड देते थे। इसी तरह सारा दिन मृगयामें व्यतीत होता था। पुराणका पाठ वा धर्मसम्बन्धी गीत भी होते थे। पर वह सब कार्य कर-नेका अवसर पाते थे किसी समय भी किसी विषयमें शीघ्रता नहीं करते थे, उनकी दृष्टिशक्ति एकबार ही दूर हो गई थी वह उस समय अपने हाथसे अपना नाम नहीं लिख सकते थे, उस समय उन्होंने अपने हस्ताक्षरके अनुरूप अपने नामके अक्षर खुद-वा लिये थे। वह एक विश्वासी मनुष्यके निकट रहते थे, और वह जिस समय आज्ञा देते तौ वह किसी पत्रमें अंकित कर देते थे। परन्तु उनकी एक इन्द्रियके एक साथ नष्ट होनेसे उनकी इससे अधिक और कोई हानि नहीं हुई, और कोई भी उनको किसी प्रकारका धोखा नहीं दे सका, कारण कि जिस समय वह अन्धे हो गये तब उनको किसी प्रकारका दुशाला वा कपडा भले बुरेकी परीक्षाके लिय दिया जाता, तो वह हाथसे देखकर ही उसे अच्छा बुरा बता देते थे"।

कर्नल टाड साहबके सम्मुख जालिमसिंहने जो कार्य और गुण दिखाये गये थे वह उनके किसी भी उल्लेखको नहीं भूले । उन्होंने फिर लिखा है कि, देशके जिस स्थानपर कभी भी धान्य उत्पन्न नहीं हुआ, उस स्थानपर जो मनुष्य धान्यको उत्पन्न करनेमें समर्थ हों, वही देशके यथार्थ धन्यवादके पात्र हैं। यह कहना यदि सत्य है तो जालिमसिंहने कोटेराज्यके जिन २ स्थानोंमें कभी भी तृण उत्पन्न नहीं हुए थे उन्हीं २ स्थानोंतकमें बहुतसे अनेक प्रकारके स्वादिष्ट फल मूलोंसे पूर्ण वृक्ष लगाये थे, राजधानी-के चारों ओर कठोर पर्वतोंके ऊपर मट्टी डलवा करके सिंहल तथा पश्चिम महासागरके द्वीपोंसे अनेक प्रकारके फलवान् वृक्ष मँगा कर लगाये थे, और यह प्रमाणित कर दिया था कि, यह वृक्ष इन देशोंमें लगानेसे अवश्य ही फल उत्पन्न करेंगे, इस कारण उनकी प्रशंसा जिस प्रकार हो सकती है ? जालिमसिंहके बागमें काबुलके सेव मारवाडके विख्यात काँगेके बागके अनार और सिलहटकी सब प्रकारकी नारंगी, साँऊ गाँवके आम, और राजपूतानेके समस्त प्रधान २ फलोंके अतिरिक्त दक्षिणकी स्वर्णकदलीतक (चम्पा केला) पाई जाती थी । उन बागोंमें उन वृक्षोंमें जल देनेके लिये जो पर्वतोंके वक्षस्थलको विदीर्ण कर उन्होंने कूप खुदवाये थे, उन प्रत्येक कुएँको खुदवानेमें एक २ में तीस तीस हजार रुपये खर्च हुए थे, वह भी अपने मित्रोंको भी अपना अनुकरण करनेका परामर्श देते, वह भी कार्य करते रसायन विद्यामें भी वह भलीभाँतिसे प्रसिद्ध हो गये थे । वह स्वयं अतर, गुलाब जल, केतकी और केवडा तैयार करते थे। वह इतर सर्वसाधारणमें प्रचलित अतर इत्यादिकी अपेक्षा श्रेष्ठ होते थे । इन्होंने कश्मीरसे पशम बुननेके यन्त्र और बुनानेवालोंको कोटेराज्यमें लाकर श्रेष्ठ दुशाले तैयार कराये थे । अपने विचारसे तलवार और अन्यान्य अस्त्रोंके बनवानेमें भी उन्होंने विशेष प्रशंसा प्राप्त की थी " ।

" जेठी नामका जो एक दल व्यायाम क्रीडक वा पहलवानोंका उनके अधीनमें नियुक्त था उसके लिये उन्होंने एक और जैसी प्रशंसा की थी, दूसरी ओर उसी प्रकारसे कलंक भी संचय किया था, इसके लिये उनका वार्षिक पचास हजार रुपया खर्च होता था, परन्तु उनके अधीनमें स्थित उन पहलवानोंने रजवाडोंके समस्त राजदरबारोंके पहलवानोंको परास्त किया था । अन्यान्य राज्यके पहलवान कोटेमें आते ही इनके द्वारा परास्त हो जाते थे, जालिमसिंह जिस समय युवक थे, उस समय यह केवल अपने पहलवानोंको एकमात्र अपने बाहुबलसे परस्पर परास्त करके संतुष्ट नहीं होते थे । उन्होंने उस समय पहलवानोंके हाथमें बाघनख, नामक यथार्थ व्याघ्रनखके द्वारा बना एक प्रकारका अस्त्र विशेष दिया था और इसीसे युद्धमें उनके अंग क्षतविक्षत हो जाते थे, बूँदीके विख्यात वीर महाराज उमेदसिंह बहादुरने इस अत्यन्त लोमहर्षण करनेवाली रीतिको एकबार ही दूर कर दिया था । महाराज उमेदसिंह एक समय द्वारकाजीसे होकर लौटते समय कोटेराज्यमें आये उस समय जालिमसिंह अखाडेमें बैठे थे, और दो दीर्घाकार पहलवान उस " बाघनख " को हाथमें लेकर परस्पर युद्ध कर रहे थे, महावीर उमेदसिंहको हठात् उस स्थानपर आया हुआ देखकर वह

रक्ताक्त युद्ध कार्य निवारण हो गया। उमेदसिंहने क्रोधित होकर जालिमसिंहको विलक्षण भर्त्सना करके कहा कि इस रुपयेको ज्ञातिभाइयों वा दीन दरिद्रोंमें खर्च न करके इन लोगोंको देते हो फिर इस प्रकार इनका अकारण रक्तपात करना अत्यन्त अन्यायकी बात है, जालिमसिंहने उनकी बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, परन्तु उमेदसिंह ऐसे क्रोधित हो गये थे कि वह उसी समय अपनी ढालको पृथ्वीपर रख कर अपने शरीरमें जितने अस्त्र थे उन सबको एक २ करके ढालके ऊपर रख दिया, अर्थात् उन्होंने स्वभावसे तलवार, बंदूक, छुरी, रणकुठार इत्यादिका व्यवहार किया था, उन सबको स्थापन कर उन इकट्ठे हुए पहलवानोंको बुलाकर कहा, कि तुममेंसे किसमें इतना बल है जो एक हाथसे इस ढालको उठा ले. महाराज उमेदसिंहके बुलानेसे समस्त पहलवान एक २ करके आगे बढे, और उस ढालको पृथ्वीपरसे उठानेकी चेष्टा करने लगे, परन्तु कोई भी उठानेको समर्थ न हुआ, शेषमें साठ वर्षकी अवस्थाके महाराज उमेदसिंहने सबके सामने एक हाथसे उठा लिया और कितनी ही देरतक उसे लिये खडे रहे। सभी हाडा जाति उस वृद्ध स्वजातीय महावीरके उस कार्यसे महा आनंदित हुए, और पहलवानोंने लज्जासे नीचेको मुख कर लिया। जालिमसिंहने उसी दिनसे यह दृश्य देखकर उन पहलवानोंके प्रति फिर पूर्वके समान सदय दृष्टि नहीं की। परन्तु उनके यह सब दोष उनकी युवा अवस्थामें ही थे वृद्धावस्था तक नहीं रहे''।

कर्नल टाड साहबने यह कह कर, जालिमसिंहकी जीवनीके उपसंहारके साथ ही साथ कोटेराज्यके इतिहासका उपसंहार किया है जालिमसिंहने एक मात्र अपने सम्मानकी रक्षा और शासनशक्तिकी रक्षाके लिये उस वृद्धावस्थामें भी राजकार्यको नहीं छोडा। उन्होंने एकाधिक्रमसे एवं विदेशीय समस्त शत्रुओंका नाश किया था; और हाडौती राज्यके सम्बन्धमें उनके मनमें जो सब अभिलाषाएँ थीं वह सभी पूर्ण हो गई थीं। शासनशक्तिके त्याग करनेपर सर्व साधारणको यह विदित होगा कि वह निकाले गये हैं, यही विचार कर उन्होंने उस शक्तिको हाथसे अलग नहीं किया। वृद्धावस्थामें जिस समय उनका स्वास्थ्य एकबार ही नष्ट हो गया. उस समय भी विश्रामकी इच्छा और धर्मधनकी वासनाका उनके मनमें उदय न हुआ, उस समय वह अपनी शासनशक्तिको हाथसे अलग कर देते तो यथेष्ट सम्मान पा सकते थे।

अष्टम अध्याय ८.

माधोसिंहको कोटेके पूर्ण क्षमता युक्त शासनकर्त्ता पदकी प्राप्ति-उनके संबन्धमें महाराव किशोरसिंहका सुव्यवहार-महाराव किशोरसिंहकी मृत्यु-महाराव रामसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति-माधोसिंहकी मृत्यु-उनके पुत्र मदनसिंहका कोटेकी शासन क्षमताका ग्रहण करना-महाराव रामसिंहके साथ मदनसिंहका मतान्तर-मदनसिंहके व्यवहारमें कोटेकी सर्वसाधारण प्रजाका महाक्रोध-उनको निकालनेके लिये जातीय अभ्युत्थानका उद्योग-बृटिश गवर्नमेंटका कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीन कर झालावाड नामक नवीन राज्यकी सृष्टि करके उसे मदनसिंहको देना-महाराव रामसिंहकी उसमें अनिच्छासे सम्मति देना-नवीन संधिपत्र-सत्रह परगनोंकी सूची-बृटिश गवर्नमेण्टका व्यवहार-कोटेके महाराजके साथ बृटिशके अधीनमें सेनाकी रक्षा और उसके व्यय देनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टका प्रबल आदेश-अत्यन्त अनिच्छासे महाराव रामसिंहका उस व्यय देनेमें सम्मति देना-सन् १८५७ ईसवीके सिपाही विद्रोहके समय उस नवीन सृष्टिसेनादलका अभ्युत्थान-पोलिटिकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंका प्राण नाश-महारावके प्रति अंग्रेज गवर्नमेंटका असंतोष प्रकाश करना-अंग्रेज राजप्रतिनिधिका महारावको वंशानुक्रमसे पोष्य पुत्रके ग्रहण करनेकी सनद देना-महाराव रामसिंहकी मृत्यु-उनकी रानियोंका प्रज्वलित चितामें प्राण त्यागकी चेष्टा करना-पोलिटिकल एजेण्टका इस विषयमें व्याघात देना-महाराव छत्रशालसिंहका अभिषेक-सामन्तोंके ऊपर शासनभार डालना-बृटिश गवर्नमेंटका कोटेके शासन भारको ग्रहण करना ।

महात्मा टाड साहबने अपने विस्तारित ग्रन्थमें कोटेराज्यके जिस समय तकके इतिहासको प्रकाशित किया है हमने पहिले अध्यायमें उसका वर्णन किया है, इस समय इतिहासके अंगको सम्पूर्ण करनेके लिये हम परिवर्ती समयके इतिहासको संग्रह करनेमें प्रवृत्त हुए हैं ।

जिस जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेंटने कोटेके प्रकृत अधीश्वररूपसे स्वीकार किया । जिस जालिमसिंहके स्वार्थसाधनके लिये सब कुछ किया उन्हीं जालिमसिंहने सन् १८२२ ईसवीकी २५ वीं जूनको प्राण त्याग किया । महाराव किशोरसिंहने पहिलेसे ही वचन दे दिया था । उन्होंने माधोसिंहको पितृपद पानके विरुद्धमें किसी प्रकारका उपद्रव व बाधा उपस्थित न की, यद्यपि माधोसिंह पितृ पद पानेके लिये सम्पूर्ण अयोग्य थे, तथापि महाराव किशोरसिंहने इस समय किसी प्रकारकी आपत्ति उपस्थित न की । आचिसन साहबने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि "जालिमसिंहने सन् १८२४ ईसवीमें प्राण त्याग किये, और उनके पुत्र माधोसिंह उस पदपर विराजमान हुए । माधोसिंह उस पदकी अयोग्यतामें भलीभांतिसे विख्यात हो गये थे; तथापि उन्होंने सन्धिपत्रके अनुसार बिना किसी बाधाके शासनभारको प्राप्त किया * । कर्नल म्यालिसनने इसके सम्बन्धमें अपने ग्रन्थमें मन्तव्य प्रकाश किया है" । यह मनुष्य [माधोसिंह] शासनकर्तृत्व पदके अयोग्य है, यह भलीभाँतिसे विख्यात है ।

---

* Aitchison's Treaties Vo lV.

परन्तु संधिकी धारा अवश्य ही पालन करनी होगी, इसी कारणसे उनको उस पद पानेमें किसीने कुछ बाधा नहीं दी+" किसी राज्यके किसी एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे मंत्रित्व वा शासन कर्तृत्वका भार देना अत्यन्त अविचारका कर्म है इस व्यवस्थासे जैसा बुरा फल होता है यह जान कर भी किसप्रकारसे जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनकर्ताका भार दिया था, हम इस बिचारको भी स्थिर नहीं कर सकते। इस समय देखा जाता है कि माधोसिंह शासनकार्यके लिये सम्पूर्ण अयोग्य रूपसे सर्वसाधारणके निकट परिचित थे, तथापि उनके हाथमें कोटेका शासनभार अर्पण किया गया।

माधोसिंहके सब प्रकारसे अयोग्य होनेपर भी वह जानते थे कि बृटिश गवर्नमेंटने जब संधिबन्धनमें आबद्ध होकर उनको और उनके भविष्यत् वंशधरोंको सदा उस पदपर स्थित करनेका विचार किया है तब अब भय क्या है? इस कारण माधोसिंहने निर्भय होकर अपनी इच्छा–शासनके द्वारा अपनी अयोग्यताका चूडान्त परिचय देकर राज्यके अनिष्टसाधनमें कसर न की। बृटिश गवर्नमेण्ट भी उस स्वेच्छाचारसे कोटे राज्यका अनिष्ट होता हुआ देख मौनभाव किये रही। संधिपत्रमें माधोसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये बृटिश सरकार वचनबद्ध थी। इस कारण किसी बातके भी कहनेकी सामर्थ्य उसकी नहीं थी।

महाराव किशोरसिंहने देखा कि बृटिश गवर्नमेंटने माधोसिंहको सब प्रकारसे अयोग्य देख कर भी जब चुपचाप स्थिति की है, एवं कोई भी प्रतिविधान करनेके लिये तैयार नहीं है, और किसी प्रकारका अनुयोग उपस्थित करनेसे फिर संधिका उल्लेख करके भय प्राप्त होगा। तब मौन रहना ही कर्तव्य जाना, इस कारण वह हृदय-की ज्वालाको हृदयमें ही सहन करते थे, परन्तु उनको अब अधिक दिनतक अपने पैतृक राज्यकी ऐसी दुर्दशा नहीं देखनी पडी, महाराव किशोरसिंहने सन् १८२८ईसवीमें प्राणत्याग किये। उनकी जीवनीके सम्बन्धमें हम अधिक कुछ कहनेकी इच्छा नहीं करते। वह जैसे विद्वान् धीर और नम्र थे; उसी प्रकार प्रबल पराक्रमशाली बृटिश सरकारके भक्त थे। जालिमसिंहका दृढ पक्ष समर्थन करनेपर भी उन्होंने उसके विरुद्धमें सेनासहित खडे होकर अपने साहसका चूडान्त परिचय दिया था, और सामयिक अवस्थाको विचार कर अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ फिर संधिबन्धनमें आबद्ध हो राजनीतिज्ञताका भी अल्प परिचय नहीं दिया।

कोटेपति महाराव किशोरसिंहने अपुत्रावस्थामें प्राणत्याग किये थे; इस कारण कुमार पृथ्वीसिंहके एकमात्र पुत्र नानालाल, रामसिंहके नामसे पुकारे जाकर कोटेके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

महाराव रामसिंहकेअभिषेक कार्य होनेके कुछ ही दिन पीछे राजराणा माधोसिंहने प्राणत्याग किये। माधोसिंह जैसे विलासी, अयोग्य और अहंकारी थे उसी प्रकार उनकी स्वेच्छाचारिताके कारण कोटेके बहुतसे अनिष्ट हुए थे। एकमात्र

+ Maleson's Native states.

माधोसिंहकी उत्तेजनाके अनुरोधसे जालिमसिंहने अपने वंशानुक्रमसे फौजदार वा कोटेको समस्त राजशक्तिको अपने हाथसे ग्रहण करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की और उसीसे कोटेराज्यका सर्वनाश हुआ। इस स्थानपर उसके पुनर्वार उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है, माधोसिंहकी मृत्युके साथ ही साथ कोटे की सुख शान्तिका विषम कंटक उखड जायगा। पाठक गण ऐसा विचार न करें, माधोसिंहकी मृत्युके पीछे बृटिश गवर्नमेण्टके संधिपत्रके अनुसार उनके पुत्र मदनसिंह राजराणाकी उपाधिको पाकर पिताके पदपर प्रतिष्ठित हुए। जालिमसिंह और माधोसिंह यद्यपि कोटेराज्यकी केवल राजशक्तिको ही हरण करके संतुष्ट हुए थे, परन्तु मदनसिंहके शासन समयमें कोटेराज्यके चिरस्थायी महा अनिष्ट हुए, किन्तु एक ओर उस सर्वनाशके होनेसे कोटेके अधीश्वर चिरकालकेलिये उस हानिकारक संधिपत्रके हाथसे अपना उद्धार करनेमें समर्थ हुए। कर्नल म्यालिसनने लिखा है, कि इस प्रधानमंत्री और महाराव(रामसिंह)में किसी समय भी सद्भाव नहीं था, एवं सन्१८३४ ईसवीमें दोनोंके बीचमें ऐसा विवाद प्रबल हो गया कि प्रधान मंत्री पदके संबन्धमें फिर नवीन व्यवस्था करना कर्तव्य हो गया।" आचिसन साहबने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि सन् १८३४ईसवीमें रामसिंह और उनके मंत्री माधोसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारी मदनसिंहमें फिर विवाद उपस्थित हुआ मन्त्रीको निकालनेके लिये सर्वसाधारण प्रजाके अभ्युत्थान होनेसे महा विपत्ति होनेकी संभावना हो गई और इसी कारणसे कोटेके अधीश्वरकी सम्मतिके अनुसार कोटेराज्यको दो खण्डोंमें विभक्त करके जालिमसिंहके उत्तराधिकारियोंका भरण पोषण करनेके लिये झालावाड नामक एक स्वतन्त्र-नूतन राज्यकी सृष्टि करना उचित विचारा गया। वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनीवाले सत्रह परगने मदनसिंहको दिये जाँयगे। इस नवीन बन्दोबस्तके अनुसार कोटेराज्यके साथ फिर नवीन संधिबन्धन हुआ"।

एक राज्यमें एक भाव राजा और एक समस्त शासन शक्ति युक्त मनुष्यवंशानुक्रमसे नहीं रह सकता, अंग्रेज गवर्नमेंटने इसको भलीभांतिसे जानकर भी कोटेके शासन कर्ताका पद वंशानुक्रमसे उपभोग करनेको दिया इस कारणसे विषमयफल उत्पन्न होता हुआ देखकर भी गवर्नमेंटने अपनी समस्त शक्तियोंको प्रयोग करके अब तक उस बातको सिद्ध रक्खा; परन्तु इतने दिनोंके पीछे सरकारने कार्यद्वारा स्वीकार किया कि जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनशक्ति देकर भूलका कार्य किया है। उसके लिये इस समय गवर्नमेंटने फिर एक नवीन कार्य किया। कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीन कर जालिमके उत्तराधिकारी सब अंशोंमें अयोग्य सर्व साधारणके अप्रिय मदनसिंहको देकर नवीन झालावाड राजके सिंहासनपर उनको बैठाल दिया। जालिमसिंहने गवर्नमेंटके बहुतसे उपकार किये थे इस कारण वह उनके समीप कृतज्ञताके ऋणमें बँधी थी कोटेराजसे यह परगने लेकर उस कृतज्ञताका ऋण चुकाया गया।

जब कि शरीरके किसी अंगमें भाव हो जाय और उसकी चिकित्सा करनी कठिन हो जाय, और उससे समस्त शरीरके नाश होनेकी सम्भावना होजाय, तब शरीरकी

रक्षाके लिये उस अंगको कटवा देना ही उचित है। महाराव रामसिंहने जालिमके वंशधरोंके द्वारा कोटेरूपी कमलको भीतर ही भीतर अंतःसार शून्य होते हुए देखकर शीघ्र ही बृटिश गवर्नमेण्टके प्रस्तावके अनुसार अपने पैतृक राज्यके वह सत्रह परगने छोड दिये। शीघ्र ही सुसभ्य न्यायपरायण सरकारकी कृतज्ञताके ऋण चुकानेमें सहायताके लिये उस त्यागको स्वीकार किया। परन्तु उसके उपलक्षमें नवीन संधिबंधनके समान महाराव रामसिंहके मस्तकपर और एक भारी भार अर्पण किया गया।

बृटिश गवर्नमेण्ट और महाराव रामसिंहमें संस्थापित संधिपत्र।

१ दिल्लीके संधिपत्रकी अतिरिक्त धारासे राजराणा जालिमसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोंको कोटेराज्यकी जो शासनशक्ति दी गई है, राजराणा मदनसिंहने उसी शासनशक्तिको छोड कर महाराव रामसिंहकी उक्त अतिरिक्त धाराके रहित पक्षमें सम्मति दी है।

२–बृटिश गवर्नमेण्टकी सलाहसे महाराव सूचिके अनुसार समस्त परगने राजराणा मदनसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्त गणको प्रदान करनेमें सम्मत हुए हैं।

३–इस सूचीके अनुसार इन परगनोंके पृथक् करनेको हस्तान्तर करनेकी व्यवस्थामें जो धन व्यय होगा उसको महाराव और उनके उत्तराधिकारी गण तथा स्थलाभिषिक्त गण पूरा करेंगे।

४–राजधानी कोटेसे अभीतक जो कर दिया जाता था, महाराव अपने उत्तराधिकारी गणोंके साथ तथा स्थलाभिषिक्तोंके साथ सम्मत हुए हैं; कि उस करमेंसे वार्षिक ८०००० रुपये छोड कर शेष सब कर सरकारको हम देंगे, बृटिश गवर्नमेण्ट उक्त ८०००० रुपये करस्वरूपसे राजराणा मदनसिंह तथा उनके उत्तराधिकारियोंसे लेनेमें सम्मत है, राजराणाने संवत् १८९५ के पहिले उक्त कर देना, प्रथम आरम्भ किया। संवत् १८९४ के प्रथम वर्षके कारण वर्तमान देय कर १३२३६० रुपये कोटा राज्यसे दिये जाते थे।

५–महाराव अपनी ओरसे और उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोंकी ओरसे कहते हैं कि एक दल नवीन सेनाका रखना होगा और बृटिश गवर्नमेण्ट यदि कर्तव्यको विचार करेंगी तो वह सेनादल एक बृटिश सेनापतिके अधीनमें रक्षित होगा–, इस स्थानपर इसको स्पष्टरूपसे प्रकाशित करना उचित है कि इस प्रकार सेनाकी रक्षा होनेसे महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोंके कोटेराज्यमें आभ्यन्तरिक शासनशक्तिको चलानेके पक्षमें किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं होगा।

६–उस सेनादलका व्यय किसी समय भी वार्षिक तीन लाख रुपयेसे अधिक नहीं होगा।

७-यदि उस सेनादलकी सृष्टि हुई तो उस सेनादलका व्यय महाराव और उनके उत्तराधिकारी स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टको जो कर देते हैं उसके साथ प्रति छः मासके भीतर सरकारको देंगे। और किस समयसे प्रथम अर्थ दान आरंभ होगा वृटिश गवर्नमेण्ट उसे स्थिर कर देगी।

८-यह भी स्पष्टरूपसे प्रकाशित रहै कि सन् १८१७ ईसवीके २६ वीं दिसम्बरमें वृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव उमेदसिंह बहादुरका दिल्लीमें जो संधिपत्र नियत हुआ है वर्तमान संधिपत्रके द्वारा उस संधिपत्रकी जिन २ धाराओंसे कोई संश्रव नहीं रहा है वह २ धाराएँ प्रवल रहेंगी।

९-वृटिश गवर्नमेण्ट और कोटेके महाराव रामसिंहमें इस संधिपत्रकी उपरोक्त धाराओंका निर्णय होने पर इसमें एक ओर तो अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान जान लाडलो; एवं राजपूतानेमें स्थित गवर्नरजनरलके एजेण्ट लेफटिनेण्ट एल आलवीसके हस्ताक्षर और मोहर लगा कर महाराव रामसिंहके भी हस्ताक्षर सहित मोहर लगा दी गई; और आजकी तारीखसे दो महिनेमें महा महिमवर गवर्नरजनरल द्वारा प्रत्यर्पित होगा।

(हस्ताक्षर) जे. लाडलो।
कोटा, १० वीं अप्रैल, सन् १८३८ ईसवी।
अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट।

महाराव रामसिंहकी मोहर.

एन. अलवीस।
गवर्नर जनरलके एजेण्ट।

सूची।

राजराणा मदनसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोंके कारण संधिपत्रके मतसे झालावाड नामक जो नवीन स्वतंत्र राज्यकी सृष्टि होगी; उसके लिये निम्नलिखित परगने निर्धारित हुए।

१-चाँईहाट
२-सकेत
३-चोमहला
पचपाड
अवहोर
डिग
गंगराड
४-झालरा पाटन,
५-रमचवा
६-कोटडाभट्टा
७-सुरेरा।

८-रखाई ।
९-मनोहर थाना ।
१०-फूलबडोद
११-चाचुरणी ।
१२-कंकुरनी ।
१३-छीपाबडोद ।
१४-शेरगढके कुछ अंश पूर्वमें ।
१५-परवन. ।
१६-निवाजके पूर्वांश ।
१७-शाहाबाद ।

यह प्रकाशित रहे कि नरपतिसिंह झालावाड राज्यसे महारावके राज्यमें उठ आवेगा और उनकी समस्त भूमि राजराणाको प्राप्त रहेगी ।

कोटा, १० अप्रैल सन् १८३८ ईसवी ।
जे. लाडलो ।
अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट ।
एन अलबीस गवर्नर जनरलके एजेण्ट ।

राजराणा मदनसिंहकी मोहर ।

विदेशी विधर्मी यवन सम्राट् शहाजहाँने जिस कोटे राज्यकी सृष्टि करके हाडा राजपूत माधोसिंहको दिया था, सुसभ्य बृटिश गवर्नमेंटने अपनी कृतज्ञताका ऋण चुकानेके लिये उसी राज्यको दो खंडोंमें विभक्त कर दिया । जालिमसिंहके अयोग्य उत्तराधिकारीने वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनीका स्वतंत्र नवीन राज्य पाया, और कोटेके यथार्थ अधिकारीको केवल वह वार्षिक बारह लाख रुपया नहीं वरन् सरकारके अधीनमें रक्षणावेक्षणके लिये सेनाको रख कर वार्षिक तीन लाख रुपया और देना पडा । इससे वार्षिक पन्द्रह लाख रुपया चिरकालके लिये कोटेपतिका चला गया ।

बृटिश गवर्नमेंटके साथ कोटेके महाराज उमेदसिंहका जब प्रथम संधिबंधन हुआ था, तब उक्त प्रकारसे सेनाके व्यय दानका कोई उल्लेख नहीं था, परन्तु इस समय सुअवसर पाकर उक्त सेनाकी सृष्टिके विषयमें महारावको सम्मत कर लिया गया। सेनादलका व्यय महाराव देंगे, परन्तु वह महारावकी आज्ञा पालन नहीं करेगी । अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें अंग्रेज गवर्नमेंटकी सेनारूपसे रहेगी। यद्यपि महारावने इस नवीन संधिके समयमें वार्षिक ८०००० रुपया कर देनेसे छुटकारा पाया, परन्तु उस स्थानपर वार्षिक तीन लाख रुपया विशेष देनेको तैयार हुए। महाराव रामसिंह भलीभांतिसे जान गये थे कि विचार करानेसे अब कुछ न होगा विशेष चेष्टासे कदाचित् शेष अंशमें भी हानि पडे है, इस कारण वह उस प्रबल पक्षकी आज्ञा पालन करके पैतृक राज्यके नामकी रक्षा

करनेको बाध्य हुए। परन्तु थोडे ही समयमें महाराव जान गये कि अंग्रेज गवर्नमेंटको नियमित वार्षिक कर देनेके सिवाय सेनाके लिये वार्षिक तीन लाख रुपया देना सब प्रकारसे असम्भव है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही दीनभावसे अंग्रेज सरकारके समीप इसके सम्बन्धमें प्रार्थना की। कर्नल म्यालिसन लिखते हैं कि "पहिले भी अत्यन्त अनिच्छासे महाराव इस सेनासृष्टिके विषयमें असम्मत हुए थे और बारम्बार अनुयोग उपस्थित करनेके कारण सन् १८४४ ईसवीमें उक्त सेनादलके व्ययमेंसे लाख रुपया क्षमा करके दो लाख रुपया नियत किया गया। उसी समय यह विचार हुआ कि यदि इस रुपयेसे सेनादलके व्ययकी पूर्त्ति न हो सकैगी, तौ कोटेके करमेंसे वह रुपया दिया जायगा और उस समय महारावको सावधान करना होगा कि, यदि वह ठीक समयपर रुपया न दे सकेंगे, तो उक्त सेनाके लिये जो रुपया दिया गया है वह और करके निमित्त जो कितने ही ग्राम हैं उनको प्रतिभूस्वरूपसे रखना होगा।" * महाराव रामसिंहने इस शेष व्यवस्थासे अपनेको सौभाग्यवान जान लिया।

वृटिश गवर्नमेण्टने कोटेपतिके पाससे समस्त व्यय लेकर उपरोक्त सेनादलकी सृष्टि कर उसको अपने अधीनमें रक्खा। सन् १८५७ ईसवीके विख्यात सिपाही विद्रोहके समय उस सेनाने अंग्रेज गवर्नमेंटके विरुद्धमें खडे होकर पोलिटिकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंको मार डाला। अंग्रेज इतिहासवेत्ताने कहा है कि महाराव रामसिंहने उस विद्रोही सेनाको दमन करनेके लिये किसी प्रकार सहायता नहीं की परन्तु हम कह सकते हैं कि प्रभुताहीन महाराव रामसिंहमें उस प्रबल विद्रोहके निवारण करनेकी कुछ सामर्थ्य थी या नहीं? इस विषयमें हमें सन्देह है। वृटिश गवर्नमेण्टने उनसे असंतुष्ट होकर उनके संमानके लिये जो सत्रह तोपें नियत की थीं उनमेंसे चार घटा कर तेरह तोपोंकी सलामी नियत की। परन्तु उदार हृदय अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिंगने सिपाही विद्रोहके पीछे जिस समय भारतवर्षमें प्रत्येक देशीय राजाको वंशानुक्रमसे पुत्रके अभावमें दत्तक पुत्र ग्रहणका सामर्थ्य दी थी. उस समय महाराव रामसिंहको भी उस सनदके देनेमें त्रुटि न की।

महाराव रामसिंह बहादुरने सन् १८६६ ईसवी २७ मार्चको अपराह्न समयमें ६४वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये। कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि जब सर्वसाधारणमें प्रचार हो गया कि महारावकी मृत्यु निकट है, तब सर्वत्र यह जनरव उठा कि उनकी विधवा रानियोंमेंसे एक रानी महाराजके साथ सती होनेकी अभिलाषा करती हैं। जिससे ऐसी घटना न हो उसके लिये पोलिटिकल एजेण्टने उसी समय उपयुक्त व्यवस्था की, उन्होंने राजमहलका द्वार बंद करके ताला लगा दिया और उसकी रक्षाके लिये सेना नियुक्त कर दी, और यह आज्ञा दी कि जहाँतक सम्भव हो सके

* Malleson's Natve states.

(१) दत्तक पुत्रकी सनदप्राप्तिका वृत्तांत मेवाड और मारवाडके इतिहासमें देखो।

वहाँतक महारावकी मृत्युका समाचार रनिवासमें मत जाने दो। रानियां चार घंटे तक महारावकी मृत्युका समाचार न जान सकीं। इसके पीछे एक रानीने कहला भेजा कि मैं स्वामीके साथ चितामें जलूँगी और उन्होंने यहाँतक बल प्रकाश किया कि उस बंद दरवाजेको भी तोड डाला परन्तु उनको किसी प्रकारसे भी राजमहलसे बाहर न होने दिया। दूसरे दिन प्रभात होते ही निर्विघ्नतासे महारावका मृतक कार्य किया गया। समयकी कैसी विचित्र महिमा है, एक समय जो राजपूत रानियां स्वामीका अनुगमन कर अपने सतीत्वकी पराकाष्ठा दिखाती थीं, भारतके गौरवकी रक्षा करती थीं, आज उस सती कुलकी स्वर्गीय आशाकी जडमें दारुण कुठाराघात लगा।

महाराव रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र भीमसिंह छत्रसालसिंह नामसे कोटेके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर आजतक उस सिंहासनकी शोभाको उज्ज्वल कर-रहे हैं। महाराव छत्रसालसिंह सिंहासन आरूढ होनेके समयमें बहुत थोडी उमरके थे। बृटिश गवर्नमेण्टने महाराव रामसिंहसे असंतुष्ट होकर सन् १८५७ इसवीके पीछे उनकी जो तोपोंकी सलामी घटा दी थी इन नवीन महारावके सिंहासनपर आरूढ होनेके समय फिर संतुष्ट हो पहिलेके समान सत्रह तोपें नियत करदीं।

महाराव छत्रसालसिंह अप्राप्त व्यवहार थे, इससे महाराव रामसिंहकी मृत्युके पीछे राज्यका शासनभार प्रथमके समान कई एक उच्च सामन्त और राजकर्मचारियों-के ऊपर पडा, परन्तु अंग्रेज इतिहासवेत्ताने लिखा है कि उनके शासनमें राज्यमें अनेक शोचनीय घटनाएँ उपस्थित हुईं। राज्यकी आमदनीका घटना, ऋणवृद्धि इत्यादि होनेसे अन्तमें बृटिश गवर्नमेण्टको राज्यके आभ्यन्तरिक शासनकार्यमें हस्तक्षेप करना पडा। कोटाराज्य उस समय तक बृटिश गवर्नमेण्टकी सावधानतासे शासित होता रहा। सन् १८७४ ई० में जयपुर राज्यके भूतपूर्व प्रधानमंत्री नवाब, सर मुहम्मद फैजलअलिखाँ के, सी, एस, आई. कोटेके प्रधानमन्त्री और सर्वशक्ति सम्पन्न कर्ता पदपर नियुक्त हुए उन्होंने सभी विषयोंमें गवर्नरजनरलके एजेण्टके मतं और परामर्शके अनुसार कार्य किया।

अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सावधानीसे कोटेके आभ्यन्तरिक शासनमें विशेष परिवर्तन होगया है। सभी विभागोंमें अच्छे बंदोबस्त और न्याय विचारकी सुव्यवस्था की गई है। वर्तमान महाराव छत्रशालसिंह बहादुर इस समय केवल वार्षिक १५००० रुपया पाते हैं। उनको शीघ्र ही राजकाज जानने पर अपने राज्यके सम्पूर्ण शासनका भार मिल जायगा।

नवम अध्याय ९.



कोटेके वर्तमान शासनकी रीति-शासन समिति-आयव्ययकी व्यवस्था-आयव्ययकी सूची-राजऋण-राज समृद्धिके सम्बन्धमें नवीन बन्दोबस्त-विचारविभाग-फौजदारी अपराधकी सूची-उसके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टका मन्तव्य-कारागार विभाग-शिक्षाविभाग।

कोटाराज्य इस समय गवर्नमेण्टकी सावधानीसे अंग्रेजी रीति और अंग्रेजी व्यवस्थाके अनुसार अंग्रेजीभावसे शासित होता है, कोटेराज्यके हर्ता कर्ता विधाता असीम सामर्थ्यशाली इस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट हैं। महाराव छत्रसालसिंह इस समय अप्राप्त व्यवहार हैं, इसी कारण वह राज्यशासनके किसी विषयको भी अपनी इच्छानुसार पूर्ण सामर्थ्यसे नहीं चलाते हैं। महाराव सामर्थ्यको पाकर अवश्य ही पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करेंगे। अवश्य ही आभ्यन्तरिक शासनकार्यमें उस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट फिर हस्ताक्षेप नहीं करेंगे।

हम अवश्य ही इस बातको मानते हैं कि वर्तमान समयमें अंग्रेजोंके अधीनमें कोटेराज्यने शासित होकर अनेक विषयोंमें बहुतसे उपकार प्राप्त किये हैं। विचार विभाग-राजस्वविभाग-शांतिरक्षाविभाग-स्वास्थ्यविभाग इत्यादि इस समय सम्पूर्णरूपसे यथायोग्य व्यक्तियोंके तत्त्वावधानसे उत्तम रीतिसे परिचालित होते हैं।

कोटाराज्य प्रधानतः एक कौन्सिल वा समितिके द्वारा शासित होता है। कई जन उच्च मनुष्य राज्यके एक २ विभागका शासनभार लेकर उस समितिके सभासद पदपर नियुक्त रहते हैं। अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट उसी समितिके सभापति हैं, उन्हींकी परामर्श और सम्मतिके अनुसार कौन्सिलके सभ्यगण कार्य निर्वाह करते हैं। राजपूतानेके सन् १८८२। १८८३ ईसवीके शासनविज्ञापनमें राजपूतानेमें स्थित गवर्नरजनरलके एजेण्ट लेफटिनेण्ट कर्नल त्राडफोर्डने लिखा है कि "इस राज्यका शासनकार्य पूर्व कार्यके समान लेफटिनेण्ट कर्नल सी.ए, वेलीके सभापतित्वपर एक कौन्सिल द्वारा शासित होता है०"। उक्त विज्ञानपनमें पोलिटिकल एजेण्टने स्वयं लिखा है कि कौन्सिलके सभ्यगणोंके सम्बन्धमें किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं हुआ है, सभ्यगण अपने कार्यको सन्तोषके साथ पूरा करते हैं, और राज्यके शासन सम्बन्धमें परामर्श दाता स्वरूपसे हमारी यथेष्ट सहायता करते हैं"।

राज्यकी आयव्ययकी व्यवस्थाके जानते ही उस राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था भलीभांतिसे जानी जा सकती है। राजराणा जालिमसिंहके शासनसमयमें कोटेराज्यकी

* The rebort of tne Political Administration of the Rajputana states 1882- 83.

+ The report of the Political Administration of the Rajputana states 1882- 83.

आमदनी किस प्रकार थी-वह हमारे पाठकोंको यथास्थानमें ज्ञात हुई है । बृटिश राजनीतिसे कोटाराज्य दो भागोंमें विभक्त हुआ; इस कारण वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनी सरलतासे लुप्त हो गई. इस समय बृटिश सरकारकी सावधानतासे राज्यकी आमदनी और खर्चा किस प्रकारसे हो गया है सो परवर्ती सूचीमें उसे प्रकाशित करते हैं।

कोटेराज्यकी आयव्ययकी सूची ।

संवत् १९३८।

(आमदनी)

	प्रकृत आमदनी सन् १८८१-८२ ई० रु०	आनुमानिक आमदनी सन् ८२-८३ ई० रु०
भूराजस्वचलित	१७७३२१७॥-) ११ पा०	१८५००००
बकाया	५१४७८॥=) ११ पा०	५००००
लवणका शुल्क बृटिश गवर्नमेण्ट-के समीपसे प्राप्त क्षतिकी पूर्ति		१६०००
कोटाराज्य जागीरदारगण		३१७५
लूट	६१५५३।।।)	९००००
कानूनगो	९५४०॥-) ७ पा०	१००००
उद्यानविभाग	४२९०।≡) ५ पा०	३५००
(वनविभाग)		
तृण	८६५३॥≡) ९ पा०	६०००
काष्ठ	१४४४१≡) ९ पा०	१३०००
कर	५६४८०।=)	६००००
तलवाना	३३५८६४॥≡) ५ पा०	२७५०००
आबकारी	१२६२८।=)	१२०००
टकशाल	१३०५।=) ५ पा०	३०००
जुरमाना	१२१४५॥) ३ पा०	१५०००
फीस	७२३=) १० पा०	१०००
स्टाम्प	२०६४९।)	२००००
तकाबी	३७६॥≡) ६ पा०	१०००
नानाविध	४४५६४।।।-) ९ पा०	१०००
वार्तावह विभाग	४१९।-) ९ पा०	५००
काराविभाग	१९३३।।।) ८ पा०	१५००
वेतन बचा हिसाब	१८९२२।) ७ पा०	१५००

विनिमय एवं सूद	२०९२७॥≡) ५ पा०	२००००
विविध प्रकार	४६०९२॥=) ८ पा०	५०००
जोड साधारण आमदनी	२४९७१६६॥) ५ पा०	२५२७१७५

अतिरिक्त आमदनी ।

सन् १८७९ ईसवीकी पहिली अगस्तसे सन् १८८२ ईसवी ३१ जौलाई तक लवणका शुल्करहित करके उसके बदले-में बृटिश गवर्नमेंटके निकटसे क्षति पूर्ण प्राप्ति—	४८०००	
२० वर्षके कारण जागीरदारियोंको माफ करके उक्त गवर्नमेंटके निकट-से क्षति पूर्ण प्राप्ति— ...	१५९०५	
सन् १८८१ ईसवीकी पहिली अगस्तका जेर	४४४८०७—) ७ पा०	६३९०५
सब मिलाकर आमदनी	२९४१९७३॥=)	२५९१०८०

(व्यय)

	प्रकृत । ८१-८२ ईसवी	अनुमानिक ८२—८३
बृटिश गवर्नमेंटको देय कर	३८४७२०	३८४७२०
जयपुरके महाराजको देय कर	१४३९७॥—)	१४३९७॥—)
महारावकी निज वृत्ति और रनिवासका व्यय	१५७०००	१५७०००
पोलिटिकल एजेन्सी	३०२२२॥≡) ५ पा०	३०५९४
अश्वशाला	३३१६८) २ पा०	३९१००।—)
हस्तीशाला	१७३८९≡) १ पा०	१४९७७॥)
गोशाला	७६६०॥=) ३ पा०	९८९३।—)
उष्ट्रशाला	९०१२	१०३६०
फर्रास खाना	६६७८।—)	५२७९
खड, घास, काष्ठ	६१४॥=) ३ पा०	७८७॥)
अन्यान्य विभाग	६४५५॥) ३ पा०	८०२८=)
कौंसिलके—सभ्यगणोंका वेतन	१८०४८	१८०४८

आफिस खर्च और कर्मचारि-याोंका वेतन	४६२६=) ६ पा.	४८०५
(राजस्व विभाग)		
माल सरदार	१७२०९।।।) ९ पा.	१७६९।।≡
निजामत	१०११९२।≡	११९३०६
बनविभाग	४४९५।।।–) ६ पा.	६५५५=
छूट	७५३०५=)	९००००
कानूनगो हक्क	३१२४।।।) ५ पा.	४५००
शुल्कसंग्रह विभाग	१६७०१≡)९ पा.	१९८८४
वार्तावह विभाग	५११७≡	५२७३ ।।।)
हिसाब रक्षाविभाग	७०२६	७५९६
धनागार रक्षाविभाग	३९५८	५५२४
अम्बर	३५४४	३६०८।।)
टकशाल	८२१	१३२
अपील अदालत	६२१८	६५१६
दीवानी	४११५	४११९
फौजदारी	३९७६	४०८६
पुलिस विभाग	१३४०५।।।) १पा.	१३५२७।)
थानासमूह	१४७४७।।।≡	१०५२८
ष्टाम्प विभाग	५४३।=) १ पा.	७००
(समराविभाग)		
कार्यालयका विभाग	८०७१।–	८१६०
गोलन्दाज दल	६०२६६।–)९ पा.	६१८९९।।
दुर्गरक्षक सेनादल	३०८१६।) ६ पा.	२९१८९।।
नियमित अश्वारोहीदल	७३८९४।।।≡)९ पा.	७५४२०
अनियमित अश्वारोहीदल	३१०४९≡	३१०५६
नियमित पैदल	७८४८१।।=	६९०६७
अनियमित पैदल	१३६५१७) १ पा.	१४१९८०।
वृत्ति	५००५।–	५६७४।।।=
पूर्वकार्यविभाग	३३०२२	२९९१९६
काराविभाग	१४५६५।।)१ पा.	१५२२४।।
उद्यानविभाग	७२५४=	८००७=
बन्दोबस्ती विभाग	४९०२९	३९५२८।।

वकीलोंका वेतन	८१७५॥=)१० पा.	८७०९।
धर्मसम्बन्धी और दातव्य	१३१११७) ९ पा०	५५००
पर्वोत्सव	६३०९॥	६६०३।≡
विवाहका व्यय	५४१२।–)९ पा०	५५००
श्राद्धमें सहायता देना	३९५८।॥)	४००००
अतिथिसत्कार	१८३१≡)९ पा०	२०००
नानाविध	३४८५।≡)६ पा०	३५००
सरंजाम	८९८९)१ पा०	९३७६
तकावी	१०	५००
अन्यान्य खर्च	४८०॥)८ पा०	५००
शिक्षाविभाग	३९०४।≡	५४५५
चिकित्साविभाग	१०२३८॥≡)८ पा०	१०४६२
विनिमय शुल्क और सूद	८८२–)८ पा०	१०००
वकीयत	१२४८	१२४८
इजलाईका व्यय	१५७०	१९०८
जुरमाना प्रतिप्रदान	३३४६।≡)३ पा०	१५००
लवणका कर नहीं लेनेसे सामन्तोंकी क्षति पूर्ण	... ...	३१७५
भत्ता	६०००	७०००
अनेक प्रकारका व्यय	२५७५५=)९ पा०	३५०००
घरका संस्कार	१००००≡)	१००००
मेउ कालिजका बोर्डिंगहौस	२५०१४।॥)६ पा०	२५००
कुल साधारण व्ययका जोड	२०५५३२२।–)२ पा०	२०५०७०२।–)
अतिरिक्त व्यय अजमेरका कैसरबाग उद्यानके वृक्ष बावडीके बनानेका व्यय	६२२७॥–)९ पा०	
२० वर्षके कारण लवणणे माप रहित करनेमें जागीरदारोंकी क्षति पूर्ण– ऋणशोध	३३५११८)७ पा०	१५९०५)
कुल व्यय	२३९६६६६≡)६ पा०	२०६६६०७।–)
सन् १८८१ ईसवी ३१ जुलाई तक	५४५३०५।=) ६ पा०	
कुल	३९४१९७१॥=)	

जिस दिनसे बृटिश गवर्नमेण्टने कोटेराजधानीके दो भाग कर झालावाडकी राजधानी बनाई है, जिस दिनसे कोटेराजके वार्षिक पन्द्रह लाख रुपये आमदनीमेसे घट गये उसी दिनसे कोटेके राजा महाराव रामसिंहजी अपने पैतृक पदके सम्मानकी रक्षा करनेसे ऋणी हो गये। उनकी मृत्युके पीछे सामन्त मण्डलीने जिस समय कोटेके शासन भारको लेकर राज्य चलाया उस समयमें भी ऋण बढता गया। वर्तमान समयमें वह ऋण प्रायः जा चुका है, यह बडे सन्तोषकी बात है, । पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि " ऋण चुकानेमें जो रुपये दिये जाते हैं वह व्ययके बीचमें नहीं गिने जाते । सन् १८८० और १८८१ ईसवीमें ऋण देनेवालेको असल और सूदके हिसाबसे ३३५११८) रुपये दिये गये हैं । आगामी ३१ जुलाईमें वर्तमान वर्षका जो शेष होगा उसमें ऋणके हिसाबमें चार लाख रुपये दिये जांयगे । अतएव राज्यका ऋण चुकानेमें और प्रायः तीन लाख रुपये बाकी रहेंगे । राज्यको ऋणसे मुक्त करके अवश्य ही गवर्नमेण्ट धन्यवादकी पात्र होगी ।

राज्यकी आमदनी बढानेमें वर्तमान शासकोंकी दृष्टि हो रही है। राज्यकी भूमिका नाप मानचित्र बना कर उसके द्वारा पृथ्वीपर कर बढाया जाता है; पोलिटिकल एजेण्ट लेफटिनेण्ट कर्नल वेली साहब उक्त विषयके सम्बन्धमें लिखते हैं, कि " इस विषयका यथोचित उत्कर्ष साधित होता है, यह मैं खुशीके साथ सूचित करता हूँ; दश निजामत वा परगनोंका नवीन राजकर निर्द्धारित हो चुका है, एवं उनमें नौ परगनोंसे नवीन राजकर वसूल होता है, दूसरे दो निजामत् वा परगनोंका राजकर निर्द्धारित करनेका काम चल रहा है उसके समाप्त होनेपर और ३ परगनोंका नूतन कर निर्द्धारित करना शेष रहेगा । उपरोक्त नौ परगनोंके नूतन बन्दोबस्तसे वार्षिक ६४१६०) रुपयेका राजकर अर्थात् ५॥ रुपये सैकडा बढाया हुआ आता है ।" पंडित शिवबक्स इस बन्दोबस्ती विभागके अध्यक्ष हैं; उनके निरीक्षणमें पोलिटिलल एजेण्टको बडा सन्तोष है, इस नये बन्दोबस्ती विभागके व्ययके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, कि "गतके मार्चके अखीर तक इस बन्दोबस्ती कार्यमें कुल ३२७४१५) रुपये खर्च हुए हैं इसमेंसे जरीफ कार्यमें ९३४८८) रुपये उठे हैं, जरीफका काम समाप्त हो गया है" ।

समस्त प्रजाके साथ न्यायका विचार हो इस बातपर बडा ध्यान रक्खा गया है सैयद जांफरहुसने कोटेके सबसे प्रधान विचारपति हैं । उनके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, " पहिली रिपोर्टमें मैंने सैय्यद जाफरहुसेनके सम्बन्धमें जो मन्तव्य प्रकाश किया था वर्तमान रिपोर्टमें भी उसी प्रकार सन्तोषके साथ प्रीतिजनक मन्तव्य प्रकट करता हूँ ।

+ The Report of the political Administration of the Rajputana states 1882—83

(१) वर्तमान अध्यायमें उद्धृत समस्त अंश सन् १८८२–८३ ईसवीके राजपूतानेकी शासन रिपोर्टसे लिये हैं।

"वह बडी सावधानी और न्यायसे कोटेके सामन्तोंके अभियोगकी मीमांसा करते हैं। वह कोटेकी अपील अदालतके जजका काम भी करते हैं"।

पुलिसविभागकी रिपोर्ट देखनेसे राज्यके भीतरी शासनका यथार्थ हाल जाना जाता है। हम इसी स्थलपर काटेराज्यके फौजदारी अपराधोंकी सूची प्रकाशित करते हैं।

कोटा राज्यके फौजदारी अपराधोंकी सूची।

सन् १८८२।८३ ईसवी.

अपराध	संख्या	अभियोग उपस्थित	पकड़े गये	दंड	मुक्ति	हरणकीहुई संपत्तिका मूल्य	आदाय		
							पशु	रुपये.	पशु.
हत्याकांड	२	१	६	१	५	...			
हत्याचेष्टा	४	३	३	१	२	...	३५	२१५)	०
अन्यभांति	२७	८	२१	७	१४	१५३१।=)।	१६	१७३॥।-)॥	१
पशुचोरी	७६	५२	३०२	७६	२६	...	४७४	०	३३५
अन्य विधचोरी	२६२	१५२	३०४	१८२	१२३	२१७५४।≡॥	०	१९५०॥≡॥।	०
आत्महत्या	४७	२६	४७	३१	१६	...	...	...	...
विष प्रयोग	५	५	५	३	२	...	...	...	...
विशेष आघात	१७	११	१३	९	४	...	...	...	...
मनुष्यविक्रय	२	२	६	५	१	...	...	...	...
मनुष्य चोरी	२८	२१	५२	३०	२२	४५९)	...	...	...
भ्रूणहत्या	६	५	११	४	७	...	...	...	...
शिशुकन्या हत्या	१	१	१	१	०	...	...	...	...
जेलसे भागना	५	४	५	५	०	...	...	...	...
चोरीका माल लेना	१४	८	९	४	५	...	...	६२।-)॥	...
घरमें आग लगाना	३	२	३	२	१	...	...	...	...
अन्य अपराध	६२४	३११	५२७	३८४	१४३	१०२४।)	१७	२५८॥)	१०
डकती	७	१	१	१	०	२४३०।)	...	...	...
	११३१	६१३	११९६	७४५	३७१	२७२५९।=	५४२	२६६९।=)।	३४६

लेफटिनेण्ट कर्नल बेलीने लिखा है, सन् " १८८२।८३ ईसवीमें जो अपराध हुए हैं उन सबकी संख्या ११३१ है, अतएव पहिले वर्षके सब अपराधोंकी संख्या १००७के साथ मिलाई जाय तो इस सालकी कुछ अधिक जान पडती है। विशेषकर पशु और सामान्य चोरीके अपराध अधिक हुए हैं। पहिले वर्षोंकी अपेक्षा इस वर्षमें अनाज कम हुआ, इसीसे ऐसा हुआ, कारण लुटेरोंके दलने उक्त दशामें अधिक अपराध किये, इस राज्यकी सीमाके अन्तमें जैसे घोर भयानक और बडे जंगल हैं उसमें ऐसे अपराधोंका एक साथ दूर करना कठिन है "।

"गत वर्षमें डकैती हुई। पहिले वर्षमें नौं डाके पडे, यदि इसके कई वर्ष पाहिलेके डांकोंकी संख्याके साथ तुलना की जाय: तौ यह फल अवश्य ही संतोषजनक होगा, कारण कि पूर्व वर्षोंमें हिसाबसे ५० से भी अधिक डाँके पडे हैं "।

" ८ डाँकोमेंसे ५ तो सामान्य हैं कारण कि उनमें अति सामान्य मूल्यकी सम्पात्ति नष्ट हुई है "

हम इस बातको मुक्तकंठसे कहते हैं कि कोटेराज्यकी डकेतीके दमन करनेमें पुलिसने बडी प्रशंसाका काम किया है। पहिले धनवान् प्रजा शंकित रहती थी अब पुलिसके कठोर शासनसे सब प्रजा निर्भय रहती हैं।

वर्तमान शासन समितिके तत्त्वावधानमें अन्य विभागोंके समान कोटेके जेलखानेकी अवस्था बहुत सुधर गई है। पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, " नया जेलखाना बडा सन्तोषदायक बना है और आगरेके सेंट्रलजेलके तत्त्वावधायकसे जो एक दारोगा प्राप्त हुआ है उसके द्वारा जेलखानेके समस्त कार्य बडी उत्तमताके साथ चलते हैं। कैदियोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

सन् १८८१ ईसवीमें इस नये जेलमें कैदियोंके आनेपर उनका स्वास्थ्य जो अच्छा हुआ है वह नीचे लिखी सूचीसे जाना जा सकता है।

सन्	१००० पर मृत्यु संख्या।
	९१
७९–८० ईसवी	६२
८०–८१	२९–९६
८१–८२	१०
८२–८३	

प्रतिदिन जेलमें औसतसे निम्न लिखित कैदी थे.

दण्ड प्राप्त कैदी--	२८४
विचाराधीन–	२१

शिक्षाविभाग सम्बन्धमें उक्त रिपोर्टमें लिखा है कि बाबू यदुनाथ घोषके प्रबंधसे कोटेके विद्यालयने क्रमशः उन्नति पाई है। प्रतिदिन औसत२४६विद्यार्थी उपस्थित होते हैं पहिले वर्षोंसे इनकी संख्या बढी है, इससे राज्यसे मिले हुए गवर्नमेण्टके अधिकारी

प्रदेशोंके रहनेवाले मनुष्य शिक्षाविषयमें जितना मन लगाते हैं वैसा कोटेके रहनेवाले मन लगाकर नहीं पढते।

" कोटेराज्यके बीच एक प्रधान नगर बारनमें एक नया विद्यालय खुला है और साधारण मनुष्योंके लिये इसी भांति जिलास्कूल बनाये जा रहे हैं "।

"कोटेके विद्यालयके विद्यार्थी और शिक्षकोंकी संख्या नीचे लिखी जाती है "।

	अंगरेजी विभाग	फारसी विभाग	संस्कृत विभाग	हिन्दी विभाग	कुल
विद्यार्थी	३८	१५२	२६	२०२	४१८
शिक्षक	२	४	१	४	११

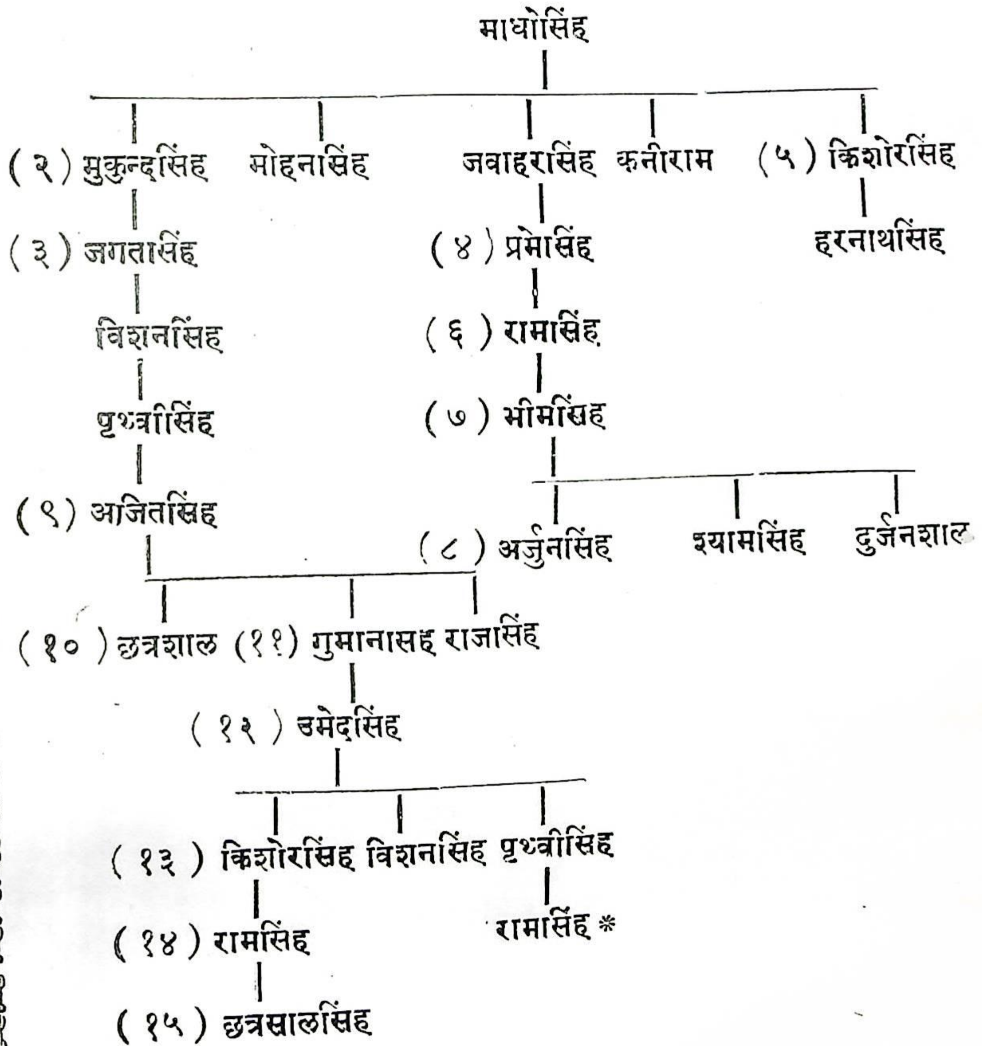
कोटेके पोलिटिकल एजेंटकी यह बात यद्यपि हम मानते हैं कि कोटेके रहनेवाले मनुष्योंका विद्योपार्जनमें बडा अनुराग नहीं है तो भी हम कह सकते हैं कि वर्तमान शासन समिति राज्यके भिन्न विभागके लिये जैसा व्यय निर्देश करती है, उसके साथ मिलान करनेसे जान पडता है शिक्षाविभागका व्यय बहुत ही कम है। जातिकी उन्नति शिक्षापर ही निर्भर है। उस स्थायी यथार्थ उन्नतिका साधन करना यदि वर्तमान शासनसमितिका वास्तवमें उद्देश हो तो शिक्षाविभागका व्यय शीघ्र ही बढा देना चाहिये।

कोटेराज्यका परिमाण पाँच हजार वर्ग मील है, अधिवासियोंकी संख्या कुछ कम पाँच लाख है। सेनामें ४६०० पैदल, ७७०० घुड़सवार और ११९ तोपें हैं। सम्पूर्ण सेना आजकल महारावके तत्त्वावधानमें है।

(कोटेराज्यका इतिहास समाप्त)

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बंबई.

कोटेका राजवंश ।



* महाराज किशोरसिंहके बाद गद्दी पर बैठे ।

राजस्थान।

दूसरा भाग.

कर्नल टाडका भ्रमणवृत्तान्त.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसरा भाग २.

कर्नल टाडका भ्रमणवृत्तान्त ।

प्रथम अध्याय १.

उदयपुरसे यात्रा–खैरोदाका सर–मानदेश्वरका प्राचीन मंदिर–भारतीवार–वहांके जैन मंदिर–खैरोदा–मेवाड़के आत्मविद्रोह सम्बन्धकी कहानी–संग्रामसिंहकी वीरता–उनका खैरोदा लाभ–संग्राममें दत्तकपुत्र जयसिंह–विलायतमें राजनैतिक संधिबंधनके समय दोनों ओर धीरता प्रकाश करना–खैरोदाके कृषिवाणिज्यका विवरण–हिन्ता–धर्मके आशयसे बहुत विस्तारित पृथ्वीका देना–देवताके निमित्त अर्पित पृथ्वीमें हिता और दूदियाका स्थापन–राजा मांधाता–उनके संबंधी प्रवाद–अश्वमेधयज्ञ–उनके द्वारा ऋषियोंको माइनाद देश मिलना–महाराष्ट्रोंके विरुद्धमें राजसिंहकी वीरता प्रकाश करना–मेवाडके राज्यकी सीमा–मसत्न–कर्नल टाड साहबके हृदयकी कथा ।

कर्नल टाड साहबने राजस्थानके समस्त इतिहासको वर्णन करनेके पीछे स्वयं अपने भ्रमण वृत्तान्तको भी वर्णन किया है, और उसी भ्रमण वृत्तान्तके समाप्तिके साथ यह बडाभारी इतिहास भी समाप्त किया गया है । दयालु पाठकगण धीरे २ हमारा अनुसरण करके इस समय इस विशाल इतिहासके शिखरकी अंतिम चूडापर पहुँच गये हैं । इस अंतिम स्थानमें हमारा अंतिम अनुरोध यही है कि पाठकगण किञ्चित् धैर्य धारण करके इतिहासरूपी कल्पवृक्षके शिखरपर पहुँच कर अमृतमय संतोषरूपी फलको प्राप्त करनेमें समर्थ होंगे और इसके साथ ही साथ हमारा भी परिश्रम सफल होगा, और पाठक भी अपने समयको सफल हुआ जानेंगे—हमारा यही आन्तरिक अनुमान है ।

राजस्थानके प्रथम कांडमें कर्नल टाड साहबने तथा मारवाडमें जाकर वहांसे लौट कर रजवाडेके अनेक देशोंकी प्राकृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक और शासन सम्बन्धी कहानी पाठकोंको विदित कराई थीं। इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहब उक्त भ्रमण समाप्त करनेके पीछे सन् १८२० ईसवीकी २९ जनवरी तक उदयपुरकी राजधानीमें रह कर विशेष राजनैतिक घटनाओंके होनेसे बूँदी और कोटेराज्यको चले गये । बूँदी और कोटा इन दोनों राज्याक राजनैतिक विषयोंके देखनेका भार गवर्नमेण्टने

इनके हाथमें सौंप दिया था। कोटा और बूँदीराज्यमें कर्नल टाड साहबके पहले और कोई अंग्रेज नहीं गया था। इस स्थानसे हम कर्नल टाड साहबके अनुगामी हुए।

"उदयपुर—२९ जनवरी सन् १८२० ईसवीमें यद्यपि हम उदयपुरमें जाकर वहाँ एक महीने भी विश्राम न करसके, तथापि शीतऋतुके आते ही भारतवर्षकी प्रकृतिने अत्यन्त आनन्ददायक मूर्ति धारण की, हमारे हृदयमें उसी समय भ्रमण करनेकी अभिलाषा हुई। अंग्रेज लोग भारतके प्रचंड ग्रीष्ममें तथा कष्टदायक वर्षाऋतुके विशेष क्लेश भोगनेके पीछे, शीतऋतुको स्वास्थ्यके लिये उपयोगी और सुखदायक मानते हैं।

खैरोदा—२९ जनवरीको हमने तूष शिखरसे चलकर छः कोशपर जाय खैरोदाके विस्तारित हृदके किनारे डेरे डाल दिये, हम जिस मार्गसे हो कर आये थे वहांकी भूमि उत्कृष्ट और भलीभांतिसे जलयुक्त थी। परन्तु बहुत समयसे वहां खेती नहीं हुई। दुबाके नामक स्थानसे डेढ मील दूरीपर हम बैरस नदीके पार हुए, दोरौली नामक ग्राममें उस नदीसे एक स्रोता निकल कर एक झील अथवा तालाबके आकारके समान हो गया है। उस नदीके किनारे मानदेश्वर नामक महादेवका एक अत्यन्त प्राचीन मन्दिर विराजमान है। उस मन्दिरके गठनकी रीति देखनेसे उसकी प्राचीनताका अनुभव किया जा सकता है। यह आबूके शिखरके समीप चन्द्रावतीके प्रसिद्ध मन्दिरके सामने बना हुआ है, और इससे यह प्रवाद वाक्य प्रमाणित होता है कि पूर्वकालमें सर्वत्र ही मन्दिर एकभावसे बना करते थे और यह रीति अचल थी।

हम दक्षिणसे आध कोश दूर सूरजपुराकी सरायको लांघकर भारतीवारके दल-दलमें फँस गये, यह नगर चारों ओर जलभूमि पूर्ण है, मेवाडके सोलह जनोंमें सबमें प्रधान क़नोराके सामन्त इस नगरके अधीश्वर हैं; और यह नगर अत्यन्त प्राचीन कह कर विख्यात है। ऐसा प्रगट है कि राजा विक्रमाजीतके बडे भाई भर्तृहरिने इस नगर-की प्रतिष्ठा की थी। यहाँ ऐसा प्रवाद प्रचलित है कि एक समय इस नगरमें सातसौ पचास (७५०) जैन मन्दिर थे, और एक साथ ही सबमें घंटा बजता था। मन्दिरोंमेंसे टूटे फूटे कुछेक मन्दिर पाये जाते हैं और उनको देखनेसे उनकी प्राचीनताका सरलता से अनुभव होता है, परन्तु साबित मन्दिर कोई भी नहीं है। खैरोदाके आधकोश पीछे हम खैरसना नामक ग्राममें गये, वह ग्राम ब्राह्मणोंके अधिकारमें था इसीसे यह ब्रह्मोत्तर कहाता है।

खैरोदा एक समृद्धिशाली स्थान है; चारों ओर गढ किला है, तथा उस गढ़के बाहर दो खंदक हैं, उन दोनों खातोंमें इच्छानुसार नदीका जल भरा जा सकता है। मेवाडकी प्राचीन राजधानी चीतौड और नवीन राजधानी उदयपुर इन दोनोंके सम-मध्य स्थानके ऊपर यह खैरोदा और किला स्थापित है, मेवाडके आत्मविद्रोहके समय इसी स्थानपर विवाद विसंवाद हुआ करता था। सन् १७४८ईसवीमें जिस समय मेवाडमें भयंकर आत्मविद्रोहकी आग भडक उठी थी, उस समय शक्तावत् संग्रामसिंहके पोष्य पुत्र और लावाके रावत जयसिंह जो उस विद्रोहके एक प्रधान नेता थे, उन्हींके अधीनमें

यह देश था। इस देशको विशेष आय मूलक जान कर और विशेष प्रयोजनीय स्थानमें स्थापित होनेके कारण इस देशको किसी सामन्तके हाथमें विश्वासपूर्वक अर्पण करना उचित न विचार कर अब यह महाराणाके ही अधीनमें है। परन्तु लावाके सामन्तने ४ मईके संधिपत्रमें * बहुतसी आपत्तियोंके पीछे हस्ताक्षर करके यह खैरोदाका किला जो उनके कुटुम्बियोंके रक्तपातसे उनके हस्तगत हो गया था वह महाराणाको अत्यन्त अनिच्छासे लौटा दिया।

खैरोदाके इतिहासमें मेवाडके आत्मविवादका उत्कृष्ट चित्र अंकित पाया जाता है। उस आत्मविवादमें मेवाडकी श्रेष्ठ सम्प्रदायके शक्तावत् संग्रामसिंह और चन्द्रावत सैरोंसिंहकी ओरके बहुतसे वीर मारे गये। सन् १७३३ ईसवीमें संग्रामसिंह जिस समय अल्पवयस्क युवक थे उनके पिता श्योगढके रावतलालजी उस समय जीवित थे, उस समय उन्होंने अपने अधीश्वर राणाके अधिकारसे खैरोदाको छीन लिया और क्रमानुसार ६ वर्ष तक अपने शासनके अधीनमें रक्खा सन् १७४० ईसवीमें देवगढ आमोत कोरावर, इत्यादि शत्रुपक्षकी सम्प्रदाय सामन्त अपने नेता सालुंबरके सामन्तोंके अधीनमें जाकर महाराणाके दीपरा मन्त्रीके साथ शक्तावत्को उक्त खैरोदासे भगानेके लिये इकट्ठे हुए। शक्तावत् नेताने चार महीनेतक उन आक्रमणकारियोंके हाथसे किलेकी रक्षा कर अन्तमें एक समय किलेकी चोटीपर एक संधि प्रार्थनाकी सूचना देनेवाली सफेद पताका उडा दी, इस प्रकारसे वह किलेको समर्पण करनेके लिये तैयार हुए। वह अपने सेवक और कुटुम्ब तथा धन सम्पत्तिको लेकर शक्तावतोंकी राजधानी भींदर नामक स्थानको चले गये। शत्रु उनका कुछ भी अनिष्ट न कर सके, अवरोधकारियोंके उक्त प्रस्तावमें सम्मत होते ही श्योगढके उत्तराधिकारी संग्रामसिंह भींदरमें जा पहुँचे। इन्होंने वहाँ जाकर अपने शत्रुओंका नाश करनेके लिये संहारमूर्तिसे चारों ओर महा उपद्रव और अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। उसके सम्बन्धमें मेवाडमें बहुतसे प्रवाद और गल्प आजतक प्रचलित हैं। इन्होंने एक समय गुरलीनामक स्थानमें जाकर वहांके समस्त पशु और निवासियोंको बन्दी कर लिया। कोरावरके सामन्तके पुत्र जालिमसिंह उक्त स्थानकी निवासियोंके सहायताके लिये गये। परन्तु संग्राममें भयंकर भालोंके आघातसे उनके प्राण नष्ट हो गए। उनकी इस मृत्युका बदला लेनेके लिये उस देशके प्रत्येक चाँदावत सालुंबरके सामन्तोंकी पताकाके नीचे इकट्ठे होने लगे। महाराणाने स्वयं उन चन्दावतोंके पक्षका अवलम्बन कर अपनी वेतनभोगी सेन्धवी सेनाको शीघ्र ही भेजा और उसने तुरन्त ही भींदरको जा घेरा। जिस समय भींदरपर आक्रमण किया था, उस समय कोरावरके सामन्त अर्जुनसिंहने अपने पुत्रनाशका बदला लेनेके लिये अचानक वहाँसे श्यौगढमें जाकर वहाँ अधिकार कर किलेमें रहनेवाले प्रत्येक स्त्री पुरुषका प्राण नाश किया। खैरोदा कई वर्षतक महाराणाके खास अधीनमें था, अन्तमें उन्होंने परिणामको न विचार कर झगडेका मूलकारणस्वरूप वह किला भेदसरके चंदावत सामन्त सरदारसिंहको दे दिया।

* प्रथम कांडमें यथास्थान प्रकाशित हो चुका है।

संवत् १७४६ में चन्दावत् सरदार महाराणाके विरुद्धमें विद्रोही होनेसे उनकी कोपदृष्टिमें पडकर पग २ पर अपमानित हुए। उनके चिरशत्रु शक्तावत् उस अवसरमें भींदरके सामन्तोंके नेताके अधीनमें अपनी २ सेनाके साथ हो जो सैन्धवीसेना उस किलेमें रक्खी थी उसके निकालनेके लिये इकट्ठे हुए। कोरावरके सामन्त अर्जुनसिंह, उस समय सैन्धवीदलके नायक कुलीखांके साथ किलेमेंकी सेनाकी सहायता करनेके लिये गये। किलेके समीप ही प्रबल समरानल प्रज्वलित हो गई। उस संग्राममें अपने हाथसे कोरावरके दो अधीन सामन्त सीकरवाल गोमान और राणावत भीमजीका प्राण नाश किया गया। परन्तु अंतमें चांदावतोंने ही रणक्षेत्रमें जयलक्ष्मीका आलिंगन किया, शक्तावत् शीघ्र ही भींदरसे चले गये। इस समय कोटेके जालिमसिंह जिन्होंने इन दोनों सम्प्रदायोंमें वैरभावको भलीभांतिसे प्रज्वलित कर दिया था, जिन्होंने इस विवाद करती हुई दोनों सम्प्रदायोंके हाथसे अन्तमें स्वयं उस किलेको अपने हस्तगत करनेका विचार किया था, उन्होंने इस समय शक्तावतोंकी सहायता करनेके लिये एक दल अरब सेनाका भेज दिया। शक्तावत् उनके साथ मिलकर फिर चांदावतोंपर आक्रमण करनेके लिये धावमान हुए। चांदावत् इस समय अकोलाके समतलक्षेत्रमें स्थिर थे, वह शीघ्र ही रणक्षेत्रमें जा पहुँचे, परन्तु अंतमें परास्त हो गये। उस समय सैन्धवी सेनाके नायकके मरते ही सेना छत्रभंग होकर भाग गई। संग्रामसिंह शत्रुओंके विरुद्ध-में उस समर तथा अन्यान्य युद्धोंमें नायक बने इसीसे उनके शरीरमें तीन स्थानोंमें भयंकर आघात लगे। परन्तु वह उस भयंकर आघातोंसे किञ्चित् भी दुःखित न हुए, वरन् उन्होंने राणाके समीपसे अधिक सम्मान पाया, और शत्रु चांदावतोंको भगा दिया। इस प्रकारसे उस युद्धके पीछे खैरादोका किला संवत् १७५८ सन् (१८०२ ई.) तक महाराणाके अधीनमें था, इसके पीछे संग्रामसिंहने दशहजार रुपया महाराणाको भेटमें देकर उस किलेको अपने अधिकारमें कर लिया। सन् १८१८ ईसवीमें जिस समय हम (गवर्नमेण्ट) महाराणा और उनके सामन्तोंमें संधि स्थापन और मध्यस्थता करनेमें नियुक्त हुए उस समय तक उक्त खैरोदाका किला शक्तावतोंके असीम साहस, वीरता और जयचिह्नस्वरूपसे उनके अधीनमें था। संग्रामसिंहके पोष्य पुत्र लावाके रावत जयसिंहने उस समय खैरोदाके किलेको महाराणाको देनेमें असम्मति प्रकाश की, यह कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। वह यहाँतक आगे बढे कि उन्होंने किलेकी दीवारके नीचे सेनाको इकट्ठा करनेकी आज्ञा दी। और जिससे उनमें का कोई भी मनुष्य किलेके बाहर महाराणाकी ओरके किसी मनुष्यके साथ बात चीत न करे, ऐसा भी प्रबन्ध किया गया। अत्यन्त सूक्ष्म कारणके उपस्थित होनेपर दुर्गके घेरने और अधिकारके उद्योगसे उस समय मेवाडके समस्त चांदावत् आनन्दित हो इनके समीप सहायक हो आये थे। और जिस समय महाराष्ट्रोंके अत्याचार उत्पीडन तथा राज्यग्रासके मुखसे मेवाडका उद्धार किया था उस समय फिर प्राचीन शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित हो गई थी।

परन्तु जिस समय यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया था, उस समय खैरोदोके अधीश्वर जयसिंह आप उदयपुरकी राजधानीमें महाराणाके यहाँ उनके अनुचर स्वरूप

से रहते थे। यदि जयसिंहका कोई सेवक किलेके बाहर जाकर महाराणाकी ओरके मनुष्यके साथ साक्षात् करता तो जयसिंहकी सेना अवश्य ही उसकी हत्या कर देती। यद्यपि हमारे विचारसे जयसिंह उस समय महाराणा और बृटिश गवर्नमेंटके समीप विद्रोही रूपसे गिने जाते थे परन्तु उस समय कोई कार्य भी विद्रोहकी सूचना करनेवाला नहीं हुआ तथा राणा और रावत दयालु अधीश्वर एवं राजभक्त सामन्त भावसे रहते थे, अन्य किसी प्रकारका विरुद्धभाव दिखाई नहीं देता था। उक्त खैरोदाके किलेको हस्तगत करनेका कार्य सरलतासे हो जाय, इस प्रस्तावसे मीमांसाका भार राणा और रावतके पक्षके कामदार वा प्रतिनिधियोंके हाथमें सौंपा गया। उन प्रतिनिधियोंमेंसे किसी प्रकारका विरुद्धज्ञापक व असंतोषदायक आचरणदृष्टि नहीं आया, वरन् सरलतासे मीमांसा होनेकी आशा दृष्टि पडी थी। एशियाके निवासी सूचना और उसकी परिणतिमें समयको विवादवाला नहीं जानते, परन्तु शीत प्रधान देशके मनुष्य उसे वैसा जानते हैं। किसी प्रकारके विवाद विसंवादकी मीमांसाके समय एशियावासी अधिक धीरता प्रकाश करके अपनी मर्यादाकी रक्षा करनेमें खूब शिक्षित हैं।

खैरोदादेश मेवाडकी प्रथम श्रेणीके खालिसा विभागका एक पट्टा वा उपविभाग है। छोटे २ ग्रामोंके अतिरिक्त इसमें १४ शहर भी हैं इन सबके उप विभागका वार्षिक १४५०० रुपया राजकर है, एकमात्र खैरोदाका वार्षिक राजस्व ३५०० रुपया है।

यहांकी भूमि साधारण तीन श्रेणियोंमें विभक्त है (१) पेविल भूमि, कूपोदकसे इसका कृषिकार्य होता है, (२) गुरसाभूमि, इसमें भी जल सींचा जाता है (३) मार वा मालभूमि, इसमें खेती वर्षाके जलके बिना नहीं होती। यहां केवल दो ऋतुओंमें धान्य उत्पन्न होते हैं। पहिले उनालू, अर्थात् ग्रीष्म कालीन धान्य, दूसरे शीयालू वा शीतकालीन धान्य। प्राचीन हिन्दूशासनके समान महाराणा यहांका भी कर स्वरूपमें उस उत्पन्न हुए धान्यमेंसे अपना भाग लेते हैं। ग्रीष्मकालमें गेहूं, जौ, चना उत्पन्न होते हैं। सौ २ मन करके रीति अनुसार उसका भाग कर खालिहानमें जमा होता है पीछे उसे २५ मनसे चार भागोंमें विभक्त किया जाता है, उन चारों भागोंमेंसे प्रथम ग्रामके समस्त मनुष्योंको जो मिलता है वह उनसे मनके ऊपर एक २ सेर करके लते हैं। (१) पटेल वा ग्रामाध्यक्ष (२) पटवारी वा हिसाबरक्षक (३) साना वा प्रहरी (४) बुलाई वा संवादवाहक एवं साधारणतः पशु पालक[1], (५) काछी सूत्रधर (६) लुहार वा कर्मकार (७) कुंभकार (कुम्हार) (८) रजक (धोबी) (९) चमार और (१०) नाई इन दश मनुष्योंको मन पीछे एक सेरके हिसाबसे प्रत्येकको २॥ मन करके धान्य मिलता है, तब मूल चार अंशोंमेंका एक अंश उठ जाता है। शेष तीन अंशोंमेंका एक अंश (२५ मन) राजमें करस्वरूपसे लिया जाता है। बाकी दो भागोंमेंसे युवराजके नामका दो मन दिया जाता है, और शष समस्त धान्य

(१) जो मनुष्य समस्त ग्रामके पशुओंको चराता है, तथा जिससे पशु खेतका अनिष्ट न करैं वह उस विषयमें दृष्टि रखता है।

किसानको मिलता है, उक्त ग्रामके दश मनुष्योंको जो धान्य मिलता है अल्पकालसे उसके ऊपर भी हस्ताक्षेप किया गया है, प्रत्येक मनके ऊपर तीनसेर काट लिया जाता है। युवराजके नामका एकसेर, राणाके प्रधान अश्वपालके नामका एक सेर एवं मोदी अर्थात् शस्यरक्षा विभागके अध्यक्षके नामका एक सेर लिया जाता है। वह समस्त धान्य ही राजाके यहां मुक्त होता है। इसके पहिले जैसा चार अंशोंमेंका एक अंश राजाको मिलता था, इस समय उसके बदलेमें दश अंशोंमेंका तीन अंश मिलता है, परन्तु धान्य कटनेके पहिले ग्रामके मनुष्य और एक बार धान्य ले जाते हैं, जो धान्य बोते हैं वह भी दो तीन सेर लेते हैं।

शीयालू वा शीतकालमें मकाई, ज्वार और बाजरा उत्पन्न होता है, उसके विभागका कार्य निम्नलिखित प्रकारसे किया जाता है। प्रति सौमन पर ४० मन राजाका करस्वरूप रखकर उक्त ग्रामके दश मनुष्योंको मनपर एक २ सेर देकर बाकी जो बचता है वह सब किसानको मिलता है।

गन्नो, रुई, नील, अफीम, तमाखू, तिल इत्यादिकी खेती भी यहां होती है, इस परसे नियमित रुपया करस्वरूपमें लिया जाता है। प्रति बीघेके ऊपर दो रुपयेसे दश रुपयेतक कर लिया जाता है।

हिन्ता–३१ जनवरी। जिस माल शब्दसे इस देशका नाम मालवा हुआ है। उसी माल नामक श्रेष्ठ कर्षण की हुई भूमिके ऊपरसे होते हुए तीन कोश लांघ कर हम आ गय। हम सूर्य भगवानके उदय होनेसे बहुत पहिले घोडेपर सवार हो बाहर हुए,

वह प्रभात कालीन पवन जैसी शीतल थी वैसी ही आनन्ददायक थी इस समय किसान खेतमें गेंहू, जौ, चने इत्यादि नवीन श्यामल शस्यको देख कर हँसते हुए विचार रहे थे कि अबकी बार भगवानने दयालु होकर खेती बहुत अच्छी की है, अब इसका कोई कुछ अनिष्ट नहीं कर सकेगा। ग्रामकी कुटियां सब नवीनतासे छा गई थीं। नवीन दीवारें इत्यादि निकले हुए ग्रामवासियोंके फिर आगमनका परिचय दे रही थीं। उससे हमारे अभिनन्दनके साथ हमारे कल्याणकी कामना तथा हर्ष और विषादित नेत्रोंसे देख रही हैं। खैरोदाके उपविभागके अधीन हम अमरपुरा नामक छोटे ग्राममें गये; हमारी बाईं ओरको मानियास नामक शहर दिखाई पडा। एक सम्प्रदायने ब्राह्मणके अनुशासन पत्रके

---

(१) इस प्रांतमें गन्नेकी खेती बडी अनिश्चित है और इससे किसानोंको लाभके बदले हानि होती है। अव्वल तो इसकी फसल पूरे सालभरमें तैयार होती है यानी जिस जमीनमें अफीम या साधारण अनाजकी दो फसलकी पैदावार हो जाती है वहां गन्नेकी केवल एक फसल तैयार होती है दूसरे सरकारी मालगुजारीके ठेकेदारोंके ऊपरी लागान और जमीजोतके महसूलके कारण गन्नेकी खेतीमें किसानको सदा हानि उठानी पडती है। यानी एक बीघापर लगान जमीन निंदाई गुडाई बीज बैल और किसानकी खवाई खुराक गन्नेकी कटाई आदिका कुल खर्च २३८ रु॰ होता है तो प्रति बीघा ज्यादासे ज्यादा २० मन गुड तैयार होनेपर फी रुपया १० सेरके हिसाबसे कुल २०० रुपयेकी आमदनी होती है।

अनुसार उस नगरपर अधिकार किया है। यह स्थान मेवाडके राणावंशके "पूर्व पुरुषोंके न्यायदान सोण्डताका" उत्तम रूपसे प्रमाण देता है। राणाके अधिकारकी पांच हजार बीघा श्रेष्ठ भूमि समाजके अकर्मियोंको वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये दी है। यद्यपि ऐसा जाना जाता है कि त्रेतायुगमें राजा मान्धाताने पवित्र उपनिवेशमें ब्राह्मणोंको स्थापन किया था, एवं उस सम्प्रदायमें केवल २५ परिवार विराजमान हैं, परन्तु वह कुटुंब आजतक उस भूमिमें कृषिकार्य नहीं करता, वह खाली पडी है, परन्तु वह सब भूमि जप्त नहीं हो सकती ऐसा करनेसे साठ हजार वर्ष नरकमें रहना होगा, यह वास्तवमें सुखकी बात नहीं है, और जो मनुष्य इस पर विश्वास करते हैं उनके जीसे यह बात हटानी बडी कठिन है देवोत्तर भूमिग्रहणके महापापसे मुक्तिलाभकरना राजपूत आत्माके पक्षमें बडी ही कष्टदायक बात है?

परन्तु मैं देखकर अत्यन्त आनंदित हुआ कि शक्तावत् सम्प्रदायके कई परिवारोंने अपने वंशकी वृद्धि होनेसे स्थानके न मिलनेसे विदेशमें वास करनेके लिये जानेके बदले में उक्त नरक वाससे भयभीत न होकर उक्त देवोत्तर भूमिके ऊपर हिन्ता और दूंदिया नगर स्थापन किये हैं[२]।

"प्रत्येक संप्रदायके प्रत्येक प्रकारके स्वार्थ रक्षा करनेके अभिलाषी होकर मैंने यह प्रस्ताव किया कि यदि महाराणा ब्राह्मण परिवारके प्रयोजनके अनुसार भूमि इनके अधीनमें रखकर शेष सब भूमिको राज्यके अधिकारमें कर लेते तो उसका जो कुछ पाप है अथवा भविष्य दंडके भारको मैं अपने शिरपर ग्रहण करनेको तैयार हूं। मैंने प्रस्ताव किया कि उत्कृष्ट एक हजार बीघा भूमि उन ब्राह्मणोंको दी जाय, उनको केवल गौ आदि पशु देकर ही काम न चल सकेगा वरन् उनको खेती करनेके लिये प्राचीन कूपोंके समस्त संस्कार और नवीन कुएँ भी खुदवा देने होंगे। इस समय एक ज्योतिषीजी राणाकी सभामें बैठे थे और वह कुछ वैद्यक भी जानते थे, ब्राह्मण वंशमें इनका जन्म हुआ था इसी कारण उन्होंने मानियार कारके स्वजातीय ब्राह्मणोंके स्वार्थकी रक्षामें दृढ सहायता की परन्तु मानियारके ब्राह्मण उक्त भूमिके दानके कारण प्राचीन ताम्रके अनुशासन पत्रको उपस्थित न कर सके"।

कर्नल टाड साहबने इसके पीछे लिखा है, कि राजा मान्धाता जिनका नाम इस देशमें अक्षय वर्तमान है वह प्रमार जातीय और मध्य भारतवर्षके राजा थे। धार और उज्जयनी उनकी राजधानी थी। यद्यपि किसी समयमें कोई मनुष्य उनको नहीं जान सके थे परन्तु प्रवादसे सबने उनको विक्रमादित्यका पूर्ववर्ती कहा है। विक्रमा-

(१) राजा मान्धाता युवनाश्वके पुत्र थे। यह त्रेतायुगके आरम्भमें हुए, इनका दूसरा नाम त्रसदस्यु भी था। इनको लवणासुरने मारा.

(२) विजातीय टाड साहबने इसमें आनन्द प्रकाश किया तो था, परन्तु यथार्थ हिंदू इससे व्यथित हुए थे। जिन शक्तावतोंने देवोत्तर भूमिको अपने अधिकारमें कर लिया था उन्होंने कभी क्षत्रीधर्मका पालन नहीं किया, इससे वह अवश्य ही ब्राह्मणस्व हरणके अपराधी हैं।

जीतका संवत् समस्त भारतवर्षमें प्रचलित है । नर्मदाके किनारे बहुतसे स्थानोंमें उनकी अधिक कीर्ति विराजमान है। प्राचीन कालमें चित्तौर और उनके अधीनके समस्त देश धारराज्यके अन्तर्मुक्त थे । इन देशोंके समस्त स्थानोंमें उन प्रमारोंके एकाधिपत्त्यके बहुतसे प्रमाण विराजमान हैं । और जिस देशसे होकर मैं यहाँतक आया हूँ, पुरातन तत्त्वके जाननेवाले यहांके बहुतसे प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्वको सरलतासे संग्रह कर सकेंगे। हिन्ता और दूदा इन्हीं दोनों देशोंके साथ: मान्धाता नामका संश्रव देखा जाता है ! महाराजा मान्धाताने दूंदिया नामक स्थानमें बडी धूमधामके साथ अश्वमेध यज्ञ किया था। उस स्थानपर आजतक वह यज्ञकुण्ड देखा जाता है । हिन्ता-के दो ऋषि उस यज्ञकार्यमें नियुक्त हुए थे। राजाने पहिले उनको धन दिया, उन्होंने धन लेना स्वीकार नहीं किया । परन्तु उन्होंने जिस समय राजासे विदा ली उसी समय राजाने बडी चतुरताके साथ विदाईके ताम्बूलके साथ ही साथ मीनारदेशका अनुशासन पत्र उन ऋषियोंके हाथमें दिया । यद्यपि ऋषियोंने अयाचित होकर भी उस दानपत्रको ग्रहण किया था, परन्तु उस दानके लेते ही उनकी पवित्रता एक बार ही नष्ट हो गई और इतने दिनोंतक उन्होंने जिस पवित्रताके बलसे इन्द्रजालिक कांड किया था उनकी वह सामर्थ्य भी लोप हो गई। पाठक गण क्या आप उस इन्द्रजाल सम्बन्धीय किसी विवरणके जाननेकी इच्छा करते हैं । ऋषियोंने स्नान करनेके पीछे अपनी धोतीका जल निचोड कर उसे मस्तकके ऊपर शून्यमार्गमें वायुके ऊपर फैला दिया था।वह उसी भावसे रह कर सूर्यकी किरणोंसे उनकी रक्षा करती थी । उक्त दोनों ऋषियोंके उस सामर्थ्यके लोप होते ही उनके वंशधर कृषिकार्य करने लगे। उसके उत्तराधिकारी आजतक उक्त मीनारदेशके स्वत्वाधिकारीरूपसे रहते हैं । और बडे चौवीसा अर्थात् बडे चौवीस नामक स्थानोंमें विस्तीर्ण हुए हैं "।

कर्नल टाड साहबने जो इन्द्रजाल इत्यादिका उल्लेख किया है उसके सम्बन्ध-में कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है। कारण कि यहांके शिक्षित मनुष्य जब योगकी बातोंपर हँसते हैं तथा योगबलसे जिन ऋषि मुनियोंने अनेक असाध्य कार्य साधन किये हैं उसपर वह विश्वास नहीं करते तब विजातिय टाड महोदयने जो उस विषयमें उपहास कर योगक्रियाको इन्द्रजाल कहा तो इसमें क्या आश्चर्य है ? परन्तु कर्नल टाड साहबने जो प्राचीन अविश्वास प्रवादको सुनकर उक्त मन्तव्यको वर्णन किया है, उसमें कुछ संदेह नहीं । दोनों ऋषियोंने अयाचित होकर ताम्बूलके साथ भूमिका दानपत्र ग्रहण किया था इसीसे उनका तप और योगबल नष्ट हो गया, इसका कौन विश्वास कर सकेगा ? हमारे टाड महोदय अनेक स्थानोंपर इस प्रकार प्रवादके ऊपर विश्वास करके महा भ्रममें पडे हैं।

---

(१) मान्धाता नामके दूसरे राजा प्रमारवंशमें हो गये हैं । इनका वर्णन धार देवासकी वंशा-वलीमें लिखा है। धारके अधीश्वर प्रमारवंशी क्षत्री हैं और वे अपनेको शकाब्द राजा विक्रमादित्यकी ही शाखामें प्रमाणित करते हैं । धारराज्यके व्यवस्थापकका नाम साबूसींग प्रमार था.

इतिहासवेत्ता टाड साहबने इसके पीछे लिखा है कि " आज प्रातःकालकी यात्राके समय हम बामोनियो नामक ग्राममें गये । उस ग्राममें एक परम रमणीक सरोवर है उसके चारों ओर पत्थरकी दीवारोंकी कतार लग रही है । उस ग्रामके अधीनमें चार हजार बीघे जमीन है । पहिले यह राणाके खास अधिकारमें थी । परन्तु महाराष्ट्रोंके आक्रमण तथा राणाकी सामर्थ्य घटनेके समय यह दूसरोंके अधिकारमें चली गई और यह स्थान अत्याचार और उपद्रवोंके होनेसे जनशून्य हो गया था; इसकी ओर देखातक नहीं जाता था । इस समय यह मोती पाशवान नामकी राणाकी एक प्रिया उपपत्नीके अधिकारमें है । मोतीने कहा है कि वह उसके पास गिरमी रक्खा गया है । परन्तु कौन आईन मत बंधक दानका अधिकारी है जो उसको वह नहीं दिखा सकती ।

यह हिन्तादेश आत्मविद्रोहके समय एक विख्यात स्थान था । यह स्थान इस समय अधीनस्थ शक्तावत् सामन्तोंके अधिकारमें है । संवत् १८१२ में जिस समय 'सत्वा' नामक महाराष्ट्रनेता दश हजार महाराष्ट्रोंकी सेना लेकर मेवाडपर अधिकार करनेके लिये आये थे, उस समय इस हिन्तादलके वीरश्रेष्ठ राजसिंहने महावीरता प्रकाश की थी । राजसिंह झाला जातीय एवं सादरीके सामन्त थे । राजपूतानेके राजाओंमें शिरोमणि राजा प्रतापसिंहकी जिन राजपूत वीरोंने पहिले रक्षा की थी यह राजसिंह उन्हींके वंशधर हैं । राजसिंह जिस समय राजधानीसे सादरी देशको जानेके लिये इस हिन्तामें आये थे उस समय उन्होंने सुना कि शत्रु महाराष्ट्रोंका दल डेढ़ कोश दूर सानाई नामक स्थानमें आ गया है । शत्रुदलके आनेका समाचार पाकर उनके किसी पारिषदने कहा कि सोजामार्गसे सादरीमें जाते हुए महाराष्ट्रोंके साथ साक्षात् होनेकी सम्भावना है,इस कारण कुछेक घूम कर भींदरमें जाना उचित है । परन्तु राणा राजसिंहने कुछ भी विपत्तिकी आशंका न करके बराबर पहिलेके समान यात्रा की । उनके कुछही दूर पहुँचने पर महाराष्ट्रोंने प्रबल आक्रमण करके राजसिंहके उन अल्पसंख्यक अश्वारोहियोंको लूटनेका उचित पात्र जान लिया। उनके दलने बडी शीघ्रतासे उनको पकड कर उनके समस्त वस्त्राभूषण उतार कर उनका धन छीन लिया और उन्हें घोडों परसे उतरनेकी आज्ञा दी । इस प्रकारसे महाराष्ट्रोंके हाथमें आत्मसमर्पण वा समस्त द्रव्य देनेकी अपेक्षा मृत्युका होना श्रेष्ठ है, वीर तेजस्वी राजसिंहने यह निश्चय करके अपनी केवल तीनसौ सेना ले उस दश हजार महाराष्ट्र सेनाके साथ युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया । राजसिंह और उनकी सेनाने घोर पराक्रम करके शत्रुदलके साथ संग्राम करते हुए शत्रुओंके व्यूहको भेद डाला । राजसिंह अकथनीय वीरता प्रकाश करके शत्रुओंसे छुटकारा पाय अपनी बचीबचाई सेनाको साथ लेकर हिन्ताके किलेमें आ पहुँचे । भींदरके सामन्त खुशियालसिंहके साथ राजसिंहका वैवाहिक सम्बन्ध बंधन और मित्रता थी, वह इस समाचारको पाते ही राजपूत जातिके स्वभावके अनुसार बलविक्रमसे उत्तेजित हो शीघ्र ही एक विश्वासी सेनाको संग्रह करके अपने बन्धु राजसिंहका उद्धार करनेके लिये बाहर हुए । उस सेनाकी संख्या केवल पांच सौ थी; और वह सभी शक्तावत् सम्प्रदायके राजपूत थे । सेनादलके

चार अंशोंके तीन अंश पैदल और एक अंश अश्वारोही था । पैदल सेना रात्रिके समय मशाल बाल कर एक दल बांध कर चली और अश्वारोही दल दोनों ओर उसकी रक्षा करता हुआ चलता था । खुशियालसिंह सबसे आगे नेता बनकर सेनाको ले चले । जो मनुष्य दलभंग करके चलैगा उसे बिना पूछे बंदूकसे उडा दिया जायगा, इस आज्ञाका प्रचार किया गया । असीम साहसी वह पांचसौ राजपूतोंकी सेना दश हजार महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे स्वजातीय राजसिंहका उद्धार करनेके लिये चली । उसके इस प्रकारसे कुछ ही दूर बढने पर महाराष्ट्रोंके अश्वारोही दलने पंगपालके समान आकर चारोंओरसे घेर लिया । परन्तु वह सामान्य राजपूतोंकी सेना कुछ भी भयभीत न हुई, और भींदर तथा हिन्ताके बीचसे विस्तारित क्षेत्रमें जाकर हिन्ताके नगर द्वारपर जा पहुँची। जब महाराष्ट्रोंने देखा कि राजपूत हमारे ग्राससे निकले जाते हैं तब उन्होंने "बर्छी दे" शब्दसे प्रान्तको कम्पायमान किया । उस शब्दसे शीघ्र ही बारह फुट लम्बे सैकडों बर्छे शक्तावतोंके ऊपर पडने लगे । खुशियालसिंह अपनी सेनाको वहाँ खडा करके अपने अश्वारोही और पैदलदलोंके पीछे आये । महाराष्ट्रदलके समीप आते ही राजपूत अश्वारोही दलने इस प्रकारसे उसपर आक्रमण किया कि जिससे महाराष्ट्रोंका दल स्तंभित होकर भंग हो गया। इस अवसरमें राजपूत अश्वारोही फिर अपने पूर्वस्थानमें आकर बन्दूकोंमें गोली भर कर महाराष्ट्रोंके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे । इसी अवसरमें पैदल दल हिन्ताके किलेके द्वारपर जा पहुँचा, इसके आते ही सादरीके सामन्त बडी प्रसन्नतासे मिले । अपना मनोरथ सफल हुआ जान विजयी हो महाराज खुशियालसिंहने स्थिर किया कि शत्रुओंके द्वारा बंदी होकर हिन्ताके किलेमें रहना और अन्तमें आहारके अभावसे आत्मसमर्पण करनेकी अपेक्षा शत्रुके व्यूहको भेद कर चले जाना उचित है । समस्त राजपूतोंने महाराजके इस मन्तव्यको समर्थन किया और तदनुसार वह लोग तुरन्त ही सामान्य हानि उठा कर भींदरमें आ पहुँचे । यह वीरताकी कहानी समस्त रजवाडेमें प्रसिद्ध है । और शक्तसिंहके उत्तराधिकारी अगणित वीरोंमें भी यह अतुलनीय गौरवजनक वार्ता कह कर प्रसिद्ध हुए थी । शक्तसिंहके वंशधरोंमें महाराज खुशियालसिंहकी वीरता और उनकी योग्यता प्रशंसनीय थी "।

"मोरवन वा मोरौ—३१ जनवरीके शेष दिन हम मेवाडकी शेष सीमाके अन्तमें आ पहुँचे, मेवाडकी वह उत्कृष्ट उपजाऊ भूमि दूसरेके अधिकारमें थी, तथा नीच बुद्धि महाराष्ट्र और निष्ठुर पठानोंका राजपूत सामन्तोंके स्वत्वपर अधिकार देख कर मैं अत्यन्त ही शोकित हुआ । रजवाडेके पूर्ववीरोंकी अपेक्षा इस समयके वीरोंको अयोग्य देख कर अत्यन्त हताश और विरक्त होनेपर भी मुझे उनके पूर्वपुरुषोंकी ओर श्रद्धा उत्पन्न हुई, यद्यपि वर्तमान वंशधर पूर्व पुरुषोंकी अपेक्षा अयोग्य थे, परन्तु सम्पूर्णत: असार और अयोग्य नहीं थे । उदयपुरके राणाकी सभामें वर्तमान वंशधरोंमें कोई एक शिथिल स्वभाव कोई २ कदाचारी षड्यंत्री थे, और सब सभी उद्योगरहित थे इस विचारसे अचेतनताके कारण मेरा स्वास्थ्य भलीभांतिसे नष्ट हो गया । मैं मेवाडके राज्यको अपनी जन्मभूमिस्वरूप जानता हूँ, और इसी

मेवाडके साथ हमारे यौवनके जीवनकी आशावली विजडित है, और वह समस्त आशा प्रकृतरूपसे पूर्ण हुई है, उससे मैं मेवाडके वीर और उनकी अबाध्य सन्तानोंके सम्बन्धमें केवल यही कहनेके लिये तैयार हुआ हूँ।

Mewar with all faults, I loye thee still.

मेवाड! तुममें हजार दोष होनेपर भी मैं तुम्हें स्नेह करता हूं।

एक मेवाडका ही नहीं वरन् समस्त राजपूतानेके वर्तमान सामन्त सम्प्रदायका मैं भली भांतिसे ऋणी हूँ, और यह आशा करता हूँ कि होनेवाले उदीपमान वंशधर जन्मभूमिकी रक्षामें तीक्ष्ण दृष्टि रख कर अफीम और महुआके सेवनके बदलेमें उद्योगी हों, और पानदोषकी और अनाशक्ति दिखावैं। वृथा गप्प, गीत बाजेके बदलेमें युद्धकी शिक्षाका अभ्यास करैं। मैंने इस प्रकारसे कई प्रकारकी अनिष्ट मूलकरीतिका नाश अफीम सेवन और मद्यपान दोष इत्यादिके निवारण करनेकी चेष्टा की। राजसिंहासनके भावी अधिकारोंसे तथा एक चरख परिमाण भूमि भी जिनकी है,जिनको भविष्यत्में अधिकार पानेकी आशा है,उनतकसे यह प्रतिज्ञा करा ली है।वह कभी भी इस अनिष्टकारी अफीमका सेवन न करेंगे। उनमेंसे किसीने तो उस प्रतिज्ञाको भंग किया, परन्तु बहुतोंने विशेष करके जिनके अप्राप्त व्यवहारके समयमें हमारे द्वारा उनके स्वार्थ और सम्पत्तिकी रक्षा हुई है। अर्थात् बुसाइयोंके युवक सामन्त अर्जुनसिंह और चंदावत् सम्प्रदायके संगावत् श्रेणीके सामन्तोंने अवश्य ही उस प्रतिज्ञाकी रक्षा की। अर्जुनसिंहके पितामह वख्तसिंहने (इनके पिता पहिले मर गये थे) महाराष्ट्रोंके द्वारा बारबार विशेष रूपसे आक्रान्त होने पर भी अपने किले और महलकी उनके करालग्राससे रक्षा की थी, परन्तु उन्हींकी सम्प्रदायके नेता सालूंबरके सामन्त भीमसिंह किसी कारणसे उनके ऊपर क्रोधित हुए, उन्होंने समस्त देशोंपर अधिकार कर, संवत् १८४६ में बुसाइयोंकी एक छोटी शाखाके एक मनुष्यको दे दिया। परन्तु उद्यमशील तख्तसिंह फिर अपने हरण किये हुए स्वत्व पर अधिकार करके मेवाडमें आत्मविद्रोह और विदेशीय शत्रुओंके आक्रमण समाप्तिके पीछे सन् १८१८ ईसवीमें,जिस समय बृटिश गवर्नमेंटके साथ मेवाडका संबन्ध बंधन स्थापित हुआ था उस समय तक उसी स्वत्वकी रक्षा करते रहे। उस संधिबंधनके होजानेके पीछे जिस समय मेवाडके सामन्त मिल कर महाराणाकी ओर सम्मान दिखाने के लिये गये, वीर तेजस्वी तख्तसिंह भी उस समय वहाँ गये थे। सेनाकी दशा और प्राचीन शत्रुताके लिये सालूंबरके सामन्त बरोदासिंहको जो तख्तसिंहके पदपर प्रतिष्ठित किया था उनकी वह आशा पूर्ण नहीं हुई, मेवाडके सबमें प्रधान सामन्त सालूंबर के सामन्तने हमारे साथ मित्रता करके अपने आज्ञाकारी सेवक वरोतसिंह (वर्तसिंह) के स्वार्थकी रक्षाके लिये चेष्टा करके; वृद्ध तख्तसिंहने जिस प्रकार अपने पोते अर्जुनको हमारे पास नियमितरूपसे भेजा था, उन्होंने भी इसी प्रकारसे वरोतसिंहको हमारे पास भेजा था। उस समय अर्जुन और वरोतसिंह इन दोनोंकी अवस्था बराबर थी।वरोतसिंह देखनेमें श्रीमान् और बलवान् थे--अर्जुनसिंह दुर्बल और कृष्णवर्ण थे परन्तु

द्वितीय अध्याय २.

हिन्ताके सामन्त-राणाके खास अधिकारसे हिन्ताको छीन कर उसके संबन्धमें राजनैतिक बाधा-शक्तावत मानसिंह-उनका इतिहास-नथाराके लालजी-रावत दूदिया (दूदिया) वंशका आदि विवरण-मेवाडके राणा जगत्सिंह-चन्द्रभानु राजसिंह-और सरदारसिंह-सरदारसिंहको तीन दिनके लिये राणाकी पद प्राप्ति-अन्तमें लावा देशका पद प्राप्त होना-दूदिया देशका पतन-मानसिंह की प्रार्थना-सीमामें भीलोंके द्वारा हत्याकांड-उसका फल।

कर्नल टाड साहबने पञ्चायतमें बैठ कर बातचीत होनेके पीछे उसके फलके सम्बन्धमें लिखा है, " कि रात्रि अधिक होनेपर भी मैं अपने कई दर्शकोंको अपने पाठकोंके सन्मुख परिचित करनेकी अभिलाषा करता हूँ। हिन्ता देशके सामन्त जो छप्पन नामक शिखरके ऊपर अपने पिताकी बासभूमि कून नामक स्थानमें इस समय रहते थे, उन्होंने स्वयं न आकर अपने भ्राता और कर्मचारियोंको मेरा अभिनन्दन और अभिवादन प्रकाश करनेके लिये भेज दिया, अथवा आप स्वयं आकर हिन्तामें मेरी अभ्यर्थना न कर सके थे इसमें उनको दुःख प्रकाश करनेके लिये भेज दिया। हिन्ता हमारा ही देश है, उन्होंने यह कहला भेजा। वास्तवमें यह बात केवल प्रचलित सौजन्यताकी प्रकाश करनेवाली नहीं थी। संवत् १८२४ में मेवाडमें आत्मविग्रहके उपस्थित होते ही शक्तावतोंने इस हिन्तापर अधिकार कर लिया था। सन् १८१८ ईसवीके मई महिनेकी चौथी तारीखको साधारण व्यवस्थापत्रके अनुसार इस हिन्ता देशको शक्तावतोंके हाथसे राणाके अधिकारमें करनेका प्रस्ताव किया। यद्यपि हिन्ताके सामन्तोंने भलीभांतिसे प्रमाणित कर दिया कि उन्होंने पिछली अर्धशताब्दी-तक हिन्तादेशपर अधिकार किया है, तथापि जिस मूल व्यवस्थासे ईस समय कार्य किया उस मूल व्यवस्थाको बिना भङ्ग किये हुए सामन्तोंका हिन्तादेशका अधिकार देना असंभव है।

हिन्ताके सम्बन्धका प्रस्ताव बडे आग्रहके साथ उठा था। शक्तावत् संप्रदायके नेता भींदरके सामन्त जोरावरसिंह अन्य दश अच्छी आमदनीवाले नगरोंके अधिकारको छोडनेसे वह इतने दुःखित नहीं हुए थे कि जितने दुःखित प्राचीन विवाद विसंवादके चिह्न स्वरूप इन देशोंके ग्रहण करनेके प्रस्तावसे हुए थे। अधिक क्या कहैं उनके सहोदर भ्राता फतेसिंहके द्वारा जो बहुतसे उपजाऊ गांव स्वजातीय वीरोंके रक्तपात होनेसे उनके हस्तगत हुए थे उन देशोंको राणापर लौटा देनेसे भी वह ऐसे दुःखित नहीं हुए जैसे इस हिन्ताके विषयमें दुःखी हुए। उक्त प्रस्तावके आन्दोलनके समयमें भींदरके सामन्तने कहा, " हिन्ता देश भींदरके प्रदेशका द्वार है"। उनके भ्राताने कहा "बहुत समयसे इस पर शक्तावतोंका अधिकार है" फिर एक मनुष्यने कहा, " राणावत्ने अन्याय करके इसपर अधिकार किया है,। भींदरके सामन्तने हृदयको

बुद्धिमान् थे। गुण और न्याय एक पक्षमें, एवं निर्बुद्धिता और शक्ति अन्य ओर दीखती थी। कर्तव्य कर्म अवश्य ही पालन करना होगा। वृद्ध ठाकुर तख्तसिंहकी प्रार्थना निष्फल नहीं हुई। वृद्ध सामन्तने अपनी तलवारपर हाथ रख कर कहा, "सम धर्म और यह तलवार यहाँतक हमारे स्वत्वकी रक्षा करती हुई आई है, परन्तु इस समय यह बालकके स्वार्थके लिये महाराणा और आपके हाथमें अर्पित है। परन्तु राणाकी सभामें धनसे विचार मोल लिया जाता है, तथा राजाकी कृपापर स्वत्व निर्भर होते हैं"। राजाने यद्यपि सालूंबरके सामन्तके मतमें ही अपनी सम्मति दी परन्तु अंतमें इसकी मीमांसाका भार हमारे ही हाथमें अर्पण किया गया। दोनों पक्षको अपने समक्ष उपस्थित कर उनके सम्मुख उनकी उक्तिके अनुसार उनका एक वंश वृक्ष तैयार किया। वरोतसिंह बहुत दूरवर्ती शाखासे उत्पन्न हैं जिससे राणा किसी संप्रदायके चक्रमें न पड उसी प्रकार यह सुविचार किया। इस कारण उन्होंने तीन वर्ष पहिले अर्जुनसिंहको जो शासनसनद दी थी उसीको मान कर अर्जुनकी कमरमें तलवार बाँध कर अभिषेक कर दिया। यह स्वत्व-सम्बन्धीय झगडा अर्जुनके पक्षमें विशेष हितकारी हुआ। उनके पितामह तख्तसिंह सीनापर शिर जिहाजपुरके किलेकी रक्षाके लिये नियुक्तसेनादलके नेता स्वरूपसे भेजे गये थे, उन्होंने उस कार्यको बडी चतुरताके साथ पूर्ण किया। उस समय उनके पोते अर्जुनसिंह भी उनके साथ गये थे। तख्तसिंह प्रायः बीच२ में अपने अधिकारी देशोंमें आया करते, अर्जुनसिंह भी सेनापतिका कार्य करते, यह दोनों ही [illegible] मेरे साथ साक्षात् करनेके लिये आये। अर्जुनसिंह जब दो वर्षतक अपने पिताके वासस्थानमें नहीं गये तब उन दो ही वर्षोंमें उन्होंने विशेष उन्नति प्राप्त की थी, और जिस सम्प्रदायमें उन्होंने जन्म लिया था उनके द्वारा अंतमें उस सम्प्रदायका जैसा सम्मान रहैगा उसके पूर्ण लक्षण भी उन्होंने प्रकाशित किये थे। मने उनसे अनेक प्रश्न करके पूछा "आपने अमल (अफीम) का सेवन किया है क्या?" उन्होंने उसी समय उस प्रश्नका उत्तर दिया; आपने जिसका निषेध किया था और जिसकी हमने प्रतिज्ञा की थी, उस प्रतिज्ञाके भंग होते ही अवश्य हमारा सौभाग्य नष्ट होगा।

कर्नल टाड साहबने वर्तमान अध्यायके उपसंहारमें लिखा है कि, ग्रामकी समस्त पंचायत आधे घंटेतक इस बडे भारी वटवृक्षके नीचे बैठी हुई मेरे आनेकी बाट देख रही थी। मेरे जाते ही उसने सरल सत्य भाषामें कहा, "खुश हैं कंपनी साहबके प्रतापसे" मैं जिस प्रकार हजार वर्षतक जीवित रहूँ, ऐसी इच्छा भी प्रकाश की। इस स्थानको मैं उपन्यास कह सकता हूँ। मैंने बडी धीरतासे रात्रितक उस पञ्चायतमें बैठ कर हृदयको भेदनकरनेवाले उपजाऊ क्षेत्रसमूहका वृत्तांत, धननाश और निकालेहुओंका आगमन, और पार्वत्य भीलोंके द्वारा उपद्रव मचानेका समस्त वृत्तान्त सुना था।

द्वितीय अध्याय २.

हिन्ताके सामन्त-राणाके खास अधिकारसे हिन्ताको छीन कर उसके संबन्धमें राजनैतिक बाधा-शक्तावत मानसिंह-उनका इतिहास-नथाराके लालजी-रावत दूदिया (दूदिया) वंशका आदि विवरण-मेवाडके राणा जगत्‌सिंह-चन्द्रभानु राजसिंह-और सरदारसिंह-सरदारसिंहको तीन दिनके लिये राणाकी पद प्राप्ति-अन्तमें लावा देशका पद प्राप्त होना-दूदिया देशका पतन-मानसिंह की प्रार्थना-सीमामें भीलोंके द्वारा हत्याकांड-उसका फल।

कर्नल टाड साहबने पञ्चायतमें बैठ कर बातचीत होनेके पीछे उसके फलके सम्बन्धमें लिखा है, " कि रात्रि अधिक होनेपर भी मैं अपने कई दर्शकोंको अपने पाठकोंके सन्मुख परिचित करनेकी अभिलाषा करता हूँ। हिन्ता देशके सामन्त जो छप्पन नामक शिखरके ऊपर अपने पिताकी बासभूमि कून नामक स्थानमें इस समय रहते थे, उन्होंने स्वयं न आकर अपने भ्राता और कर्मचारियोंको मेरा अभिनन्दन और अभिवादन प्रकाश करनेके लिये भेज दिया, अथवा आप स्वयं आकर हिन्तामें मेरी अभ्यर्थना न कर सके थे इसमें उनको दुःख प्रकाश करनेके लिये भेज दिया। हिन्ता हमारा ही देश है, उन्होंने यह कहला भेजा। वास्तवमें यह बात केवल प्रचलित सौजन्यताकी प्रकाश करनेवाली नहीं थी। संवत् १८२४ में मेवाडमें आत्मविग्रहके उपस्थित होते ही शक्तावतोंने इस हिन्तापर अधिकार कर लिया था। सन् १८१८ ईसवीके मई महिनेकी चौथी तारीखको साधारण व्यवस्थापत्रके अनुसार इस हिन्ता देशको शक्तावतोंके हाथसे राणाके अधिकारमें करनेका प्रस्ताव किया। यद्यपि हिन्ताके सामन्तोंने भलीभांतिसे प्रमाणित कर दिया कि उन्होंने पिछली अर्धशताब्दी-तक हिन्तादेशपर अधिकार किया है, तथापि जिस मूल व्यवस्थासे ईस समय कार्य किया उस मूल व्यवस्थाको बिना भङ्ग किये हुए सामन्तोंका हिन्तादेशका अधिकार देना असंभव है।

हिन्ताके सम्बन्धका प्रस्ताव बडे आग्रहके साथ उठा था। शक्तावत् संप्रदायके नेता भींदरके सामन्त जोरावरसिंह अन्य दश अच्छी आमदनीवाले नगरोंके अधिकारको छोडनेसे वह इतने दुःखित नहीं हुए थे कि जितने दुःखित प्राचीन विवाद विसंवादके चिह्न स्वरूप इन देशोंके ग्रहण करनेके प्रस्तावसे हुए थे। अधिक क्या कहैं उनके सहोदर भ्राता फतेसिंहके द्वारा जो बहुतसे उपजाऊ गांव स्वजातीय वीरोंके रक्तपात होनेसे उनके हस्तगत हुए थे उन देशोंको राणापर लौटा देनेसे भी वह ऐसे दुःखित नहीं हुए जैसे इस हिन्ताके विषयमें दुःखी हुए। उक्त प्रस्तावके आन्दोलनके समयमें भींदरके सामन्तने कहा, " हिन्ता देश भींदरके प्रदेशका द्वार है "। उनके भ्राताने कहा "बहुत समयसे इस पर शक्तावतोंका अधिकार है" फिर एक मनुष्यने कहा, " राणावत्‌ने अन्याय करके इसपर अधिकार किया है,। भींदरके सामन्तने हृदयको

आकर्षण करनेवाला वचन कहा, "हिन्ता देश हमारा बापोता है, अर्थात् हमारे पिताकी भूमि है, ऐसी अवस्थामें इन प्रश्नोंकी मीमांसा करनी कोई सरल बात नहीं थी। विशेष करके अन्य पक्षमें व्यवस्थापत्रकी प्रधान धारामें लिखा है कि संवत् १८२२, सन् १७६६ ईसवीमें मेवाडके आत्मविद्रोहके समयसे राणाके अधिकारी जितने किले जितने देश सामन्तोंने अनेक उपायोंसे अपने अधिकारमें किये थे वह सभी पूर्ण ग्रहण पूर्वक राणाको लौटा देने होंगे। शान्ति स्थापन करनेके लिये जो अनुष्ठान विचारा गया था विशेष सावधानी और धीरताके साथ उसअनुष्ठानका करना कर्तव्य विचारा गया। शक्तावत् स्वदेश हितैषिताके वश होकर आदिसे अंततक विशेष धीरताके साथ उस व्यवस्थापत्रके अनुसार प्रत्येक प्रयोजनीय किले और देश राणाको लौटानेमें सहायता करते हैं; इसीसे अन्तमें वह व्यवस्था की गई थी। उक्त हिन्ता देश एक वर्षतक राणाके खास अधिकारमें रहे और फिर उसे जोरावरसिंहको दे दिया जाय; परन्तु हिन्ताके साथ जो दूदिया देश तथा उससे लगी हुई बारह सौ एकड परिमित भूमि है वह प्राचीन सूचीके अनुसार एक स्वतंत्र विभिन्न देश कहा कर प्रमाणित हो गई, उसे हिन्तासे पृथक् कर लिया जायगा। सामन्त जोरावरसिंहने दश हजार रुपया भेंटमें राणाको दिया, राणाने उनके अभिषेक-स्वरूपमें कमरमें तलवार बाँधकर उनके पिताकी भूमि उन्हे दे दी। तब शक्तावतोंने सर्व साधारणके सम्मुख महा आनन्द प्रकाश किया।

पाठ्य पुस्तकमें हिन्ताका मूल्य सात हजार रुपया निश्चय हुआ था। हिन्तादेशकी आमदनीसे सामन्त चौदह अश्वारोही और चौदह पैदल सेना रखकर आवश्यकतानुसार राणाको वह सेना सहायता करनेके लिये भेजते थे, परन्तु इस देशकी आमदनीके घटजानेसे सामन्तोंको उसके बदलेमें पाँच अश्वारोही और आठ पैदल सेना रखनेका अवसर आया। हिन्ताके वर्तमान सामन्त कून नामक देशके सामन्तके पुत्र थे। हिन्ताके भूतपूर्व सामन्तने इनको गोद ले लिया था। राजपूतरीतिके अनुसार दत्तक पुत्र कभी भी अपने जन्मदाता पिताकी सम्पत्तिको नहीं पा सकता। परन्तु यह उस रीतिके प्रबल स्वत्वपर भी कून और हिन्ता दोनों देशोंके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित थे। इस देशके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होनेसे कून देशके सामन्त स्वरूपसे यह गोल नामक तीसरी श्रेणीके सामन्तरूपसे गिने गये, और इसी कारण यह प्रतिदिन राणाके सम्मुख जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे। हिन्ताके सामन्त होनेसे यह स्वदेशमें अथवा विदेशमें केवल सेनाकी सहायता करते थे। सामन्तोंको प्रतिदिन राणाके यहाँ जाना होता था, हिन्तादेशके देय सेनादलके नेतृत्वका भार मानसिंह नामवाले शक्तावत् सम्प्रदायके एक नीची श्रेणीके सामन्त पर आया, और बनैले भील जिससे मालवाकी सीमाके अन्तमें अत्याचार और उपद्रव न कर सकैं इसके लिये उन्होंने वहांके छोटे सादिरके थानेको भेज दिया। परन्तु मानसिंहने अपने कर्तव्य कार्यको भलीभांतिसे साधन नहीं किया। तब राणाने मेरे द्वारा कहला भेजा, कि यदि तुमने इसके पीछे अपने कर्तव्य पालनमें विलम्ब किया तो उस देशको फिर राणा अपने अधिकारमें कर लेंगे। मुझे जिस कर्तव्यका भार मिला है उससे मैं इस स्थानके बहुतसे शोचनीय वृत्तान्त

जान गया हूं। यह मानसिंह किस कारणसे अपना कर्तव्य न पाल सके, यह भी विदित है वह विवरण मेवाडके सामन्त शासनकी रीतिसे उस सामन्त श्रेणीकी सृष्टिका शोचनीय फल प्रकाश करता है।

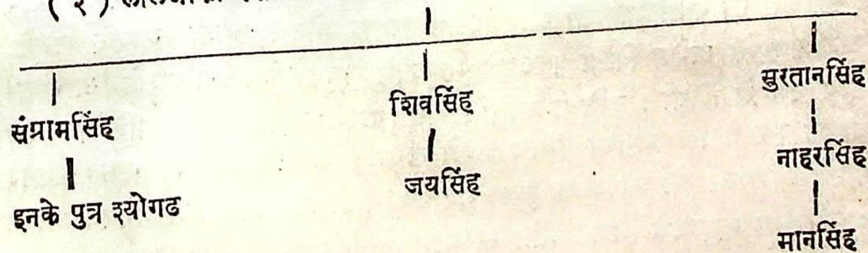
मानसिंह शक्तावत् लावाके सामन्त परिवारकी छोटी शाखामें उत्पन्न थे। कोरावरके सामन्तोंके साथ जिस समय भयंकर शत्रुता हुई, तथा कोरावरके सामन्तोंने उसी कारणसे श्योगढके किलेमें जाकर लालजी रावत तथा अन्य समस्त परिवारकी हत्या करके प्रतिहिंसा सफल की। उस हत्याकाण्डसे जिन कई बालकोंके प्राण बचे थे उन्हींमेंसे एक मानसिंह भी हैं। मानसिंहके स्वत्वका निर्णय तथा दावाके स्थिर करनेमें हमको और भी पूर्ववर्ती समयकी अर्थात् जिस समय लालजी रावत नथारादेशके सामन्त थे उस समय तककी बात कहनी होगी। किसी अपराधके कारणसे हो अथवा राणाकी सभाके षड्यन्त्रसे हो, उक्त नथारादेश राणाने लालजीसे लेकर प्रतिद्वंदी चांदावत् सम्प्रदायके एक नेताको दे दिया था। लालजी भींदरके सामन्त वंशके प्रथम उपवंशीय थे. इसीसे उन्होंने अपने कुटुंबको पालन करनेके लिये भूवृत्ति पाई थी। यह नथाराके अधिकारसे अलग होते ही डूंगरपुरके सामन्तके निकट गये। वहाँके अधीश्वर रावलने लालजीको दो राज्योंके मध्यस्थ सीमान्तमें दुर्गम श्योगढ देश दे दिया। इस प्रकारसे लालजी-शत्रुओंके द्वारा निकाले जाकर अन्यत्र चले गये। उन्होंने राजभक्तिके मस्तकपर पदाघात करके अपने पुत्रोंके साथ वरवटिया अर्थात् दस्युके समान मेवाड राज्यमें जाकर अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। वह अपनी सम्प्रदायके नेता भींदरके सामन्तको अपना प्रभु जान कर उनके साथ जा मिले और उनके प्रतिद्वंदियोंके अधिकारी देशोंमें जाकर सारी धन सम्पत्तिको लूटते थे। पीछे जिस समय उनके प्रतिद्वंदी राणाकी सभामें प्रताप प्रतिपत्तिसे हीन हो गये, एवं उसी कारणसे जिस समय शक्तावत् सम्प्रदायने राणाके प्रियपात्र होकर सामर्थ्य प्राप्त की तो लालजी उसी समय फिर अपनी सम्प्रदायके नेताके साथ मिलकर राजसिंहासनकी रक्षाके लिये गये। उन्होंने इस प्रकारसे एक समय अराजभक्त और अन्य समयमें राजभक्तरूपसे अपना समय व्यतीत किया था, शेषमें श्योगढके हत्याकांडमें कोरावरके सामन्तने उन्हें मार डाला।

लालजीके बडे पुत्र संग्रामसिंहने अपने भतीजे जयसिंह और नाहरसिंहके साथ श्योगढमें न जाकर प्रतिहिंसा दानार्थी कोरावरके सामन्तोंके हाथसे प्राण रक्षा पाई थी।

---

(१) इसका वृत्तांत राजस्थानके प्रथम कांडमें वर्णन किया गया है।

(२) लालजीकी वंशावली यथा—लालजी



परन्तु कोरावरके सामन्तने इयोगढमें जाकर संग्रामके वृद्ध पिता, माता, भ्राता और उनके पुत्रोंका संहार किया । संग्रामसिंहको समयपर इयोगढका किला मिल गया । पिताकी शत्रुताको भी वह नहीं भूले थे । खेरोदाकी रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करके लावाके किलेकी दीवारको लांघ एवं उसपर अधिकार कर वह संग्राममें नियुक्त हुए थे, उनके भतीजे नाहरसिंह आदि सभी जने उनके साथ गये थे। संग्रामसिंहने लावाके किलेपर अधिकार कर लिया, राणाने केवल उनको क्षमा ही नहीं किया वरन् उन्होंने संग्रामके शत्रुओंकी अपेक्षा अपनी सभामें इनको विशेष पद सम्मान दिया था ।

शक्तावत् संग्रामसिंहने दूदिया संग्रामसिंहके निकटसे लावाके किलेपर अधिकार कर लिया । दूदिया प्राचीन राजपूत जाति थे, परन्तु अन्यान्य राजपूत श्रेणीके समान सर्व साधारणमें परिचित नहीं थे। हम इस समय जिस समयकी एक लिखित घटनाको वर्णन करनेके लिये आगे बढे हैं, केवल उसी समयसे कुछ कालके लिये यह दूदिया जाति यश गौरवसे प्रभावशाली हुई थी । इस दूदियावंशके अकस्मात् अभ्युदय होनेसे मेवाडके कविने परम रमणीक गाथा तैयार करके अपने इतिहासमें अंकित की है। चन्द्रभानु नामक एक मनुष्यके नाहरमृग अर्थात् व्याघ्र पर्वतकी उपत्यकामें कई बीघे जमीन थी । चन्द्रभानु केवल दो ही बैल लेकर उस जमीनमें खेती करते थे । उस क्षेत्र और दोनों बैलोंके अतिरिक्त और कुछ सम्पत्ति नहीं थी । चंद्रभानुके उस खेतके समीप ही राणाका रक्षित वन था । राणा उस वनमें व्याघ्रादिका शिकार करनेके लिये जाया करते थे। एक समय हैमन्तिक शस्यकी खेती करके दूदिया चन्द्रभानु समस्त दिनके पीछे दोनों बैल लेकर जिस समय अपने घरकी ओरको आ रहे थे, उस समय वनमेंसे एक मनुष्यके बुलानेका शब्द उनके कानमें सुनाई पडा । दूदिया चन्द्रभानु उत्तर देकर जिस ओरसे वह स्वर आया था उसी शब्दकी सीधपर गये और जाकर देखा कि एक अपरिचित उच्च मनुष्य वहां खडा हुआ है और उसका घोडा बहुत परिश्रम करनेके कारण जल्दी २ श्वांस ले रहा है । उस अपरिचित मनुष्यने दूदियासे पूछा, "तुम कौन जाति हो ?" चन्द्रभानुने गर्वसहित उत्तर दिया "राजपूत हैं" तब अपरिचित मनुष्यने विनयपूर्वक कहा 'मैं बडा प्यासा हूँ' मुझे थोडासा पीनेके लिये जल ला दो अतिथिका सत्कार करना राजपूत जातिका परम धर्म है, इस कारण उस दीन हीन किसान राजपूतने शीघ्र ही एक पात्र जलका लाकर उस पुरुषके सामने रख दिया, और अपने मलीन वस्त्रोंमेंसे दो रोटी मक्काकी और चनेकी दाल और कुछ घी लाकर उनके हाथमें शुद्ध अन्तःकरणसे अर्पण किया । उदार मनुष्यने कुछ घृणा न करके आनन्द प्रकाश करते हुए उसे ले लिया । दूदिया अतिथि सेवा करनेके पीछे उस अपरिचित मनुष्यको अभिवादन कर वहांसे जानेका उपाय करने लगा, कि इतनेमें ही एक अश्वारोहीदल तीक्ष्णगतिसे अपनी ओरको आता हुआ देखकर खडा हो गया । अश्वारोही आकर सभी उस अपरिचित मनुष्यके निकट महा सम्मान दिखाने लगे, यह देखकर चन्द्रभानुने अपने मनमें विचारा कि यह मेरा अतिथि कोई साधारण मनुष्य नहीं है ।

वास्तवमें वह अतिथि और कोई नहीं था, वह स्वयं मेवाडेश्वर महाराणा जगत्-सिंह बहादुर थे । वह उस दिन शिकारसे महा आनन्दित हो इसके नाहर मगरा नामक शिखरपर महा संकटमें पडे थे और अन्तमें दूदिया किसानके समीप आये थे । पीछे जिस समय दूदिया चन्द्रभानुने महाराणाके समीप अपना परिचय दिया, चन्द्रभानु उस समय कुछ भी विस्मित वा आनन्दित नहीं हुआ । उस समय चन्द्रभानुसे जो प्रश्न किया जाता था, राजपूत स्वभाव सुलभ गर्वसहित उन सब प्रश्नोंका उत्तर वह गौरवके साथ देता जाता था, वास्तवमें राजपूत जातिमें चाहै कैसी ही दीनदशा क्यों न हो परन्तु जातीय गौरव सभीके हृदयमें सरलभावसे पूर्ण रहता है[1] । महाराणा उस निरीह किसानके आचरण और सरल वचनोंसे अत्यन्त प्रसन्न हुए और शीघ्रतासे एक घोडेको लानेके लिये आज्ञा दी । घोडेके आते ही उन्होंने दूदि-या चन्द्रभानुसे कहा कि, यहाँसे पाँच कोश दूर तक हमारी राजधानीमें तुमको चलना होगा । किसान वेषधारी चंद्रभानु शीघ्र ही घोडेपर चढ गये, वह मनुष्य घोडेपर चढ-नेमें कैसा दक्ष था वह भी विदित होने लगा दूसरे दिन दूदिया चन्द्रभानु महाराणाकी सभामें आये । महाराणाने अपनी एक बडी कीमती पोशाक उनको राजप्रसाद स्वरूपमें दी । वास्तवमें राणाकी व्यवहार की हुई पोशाकका मिलना अत्यन्त सौभाग्य और बडे सम्मानका चिह्न माना जाता है । इसके पीछे महाराणाने कोआरिओ नामक देश और उसके लगे हुए समस्त भूखंड वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये चन्द्रभानुको दिये " ।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि " चंद्रभानु और उसके हितकारी प्रभु-महाराणा जगत्सिंहने एक ही समयमें प्राण त्याग किये । राणा राजसिंह मेवाडके राजसिंहासनपर विराजमान हुए, चंद्रभानुके पुत्र सरदारसिंह कोआरिओंके सामन्त भावसे उनके समीप नित्य जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे । दोनों ही की अवस्था छोटी थी, इसी कारणसे दोनोंमें अधिक प्रीति हो गई थी । वह अल्प अवस्थाके महाराणा राजसिंह अपनी बराबरके सामन्तको साथ ले राजधानीसे एक कोश दूर सुहेलियाकी बाडी नामक एक अत्यन्त रमणीक बगीचेमें गये और वहाँ कुंडमें स्नान कर विशेष आनन्दित हो रहे थे । उसी वनविहारके समयमें राणाने सब प्रकारसे सामन्तको स्वाधीनता दी, सभी परस्परमें मस्त होकर आमोद प्रमोद कर रहे थे । अल्पवयस दूदिया सरदारसिंहके कोई शारीरिक कुलक्षण था उसे देख कर राणा-

(१) कर्नल टाड साहब अपनी टिप्पणीमें लिखते हैं कि " जिस समय में इन देशोंके सम्ब-न्धमें अज्ञानी था, जिस समय मैं इकला किसी अपरिचित स्थानमें जाता उस समय किसानसे रास्ता पूछनेकी अभिलाषा होती, मेरे विना कुछ पूछे पाछे किसान उत्तर दे देता "मैं राजपूत हूँ" इससे मैं अत्यन्त आनन्दित होता तो और उसके प्रति सम्मान दिखाता तब वह बारम्बार उसी शब्दका प्रयोग करते । उसका यथार्थ अर्थ यह है " कि मैं राजवंशीय हूँ " । वास्तवमें उन मनुष्योंके किसान होनेपर भी उनके कार्यकी रीति अन्य जातियोंकी अपेक्षा विभिन्न थी और उनका व्यवहार सम्मान सूचक था ।

तथा अन्य सभी मनुष्य हँसने लगे। निम्नलिखित घटना उस हास्य परिहासका कितना आभास प्रकाश करती है।

एक समय बात २ में यह बात आई कि सरदारसिंह जब कुंडमें नीचे उतरे तब उन्होंने अपनी पगडीको नहीं खोला, इस कारण सभीने अनुमान किया कि अवश्य ही सरदारसिंहके शिरपर बाल नहीं हैं। यह बात सत्य है या नहीं इसको जाननेके लिये एक दिन महाराणा राजसिंहने सरदारसिंहके समीप यह प्रस्ताव किया कि आओ हम तुम दोनों जने जलमें मल्ल युद्ध करें। शीघ्र ही राणाके प्रस्तावके अनुसार जलक्रीडा प्रारंभ हुई, सरदारसिंहके शिरपरकी पगडी खुल कर जलमें गिर पडी, सरदारसिंहका केशहीन शिर देख कर सभी लोग एक साथ हँस पडे। परन्तु वह इस हँसीसे अपने मनमें कुछेक क्रोधित हुए। राणाने हँसते हुए पूछा कि "आपके शिरपरके बाल क्या हुए" सरदारसिंहने धीरेसे उत्तर दिया कि पूर्व जन्ममें मैं महाराणाका चेला था और आप योगी थे। बदरीनाथके शिखरपर जिस समय आप तपस्या करते थे उस समय यज्ञकुण्डके लिये लकडी शिरपर रख कर मैं लाया करता था। पूर्व जन्ममें उस काष्ठभारके शिरपर रखनेके कारणसे ही मेरे बाल सब लयको प्राप्त हो गये। सरदारसिंहके इस उत्तरसे महाराणा कुछ एक क्रोधित हुए और विचारने लगे कि सरदारसिंहने स्वाधीनता लेकर अपमान सूचक उत्तर दिया है। इस कारण उन्होंने शीघ्र ही कहा कि "या तो सरदार इस बातका प्रमाण दे और नहीं तो इनको दंड मिलेगा"। युवक सामन्त सरदारसिंहने इसके उत्तरमें कहा, "कोआरिओंके मंदिरमें जो देवता हैं वही मेरे इस उत्तरकी सत्यता प्रमाणित कर देंगे"। सामन्तने देवताको साक्षी बनाया महाराणाने फिर कोई बात नहीं कही. इस कारण उन्होंने प्रमाण लानेके लिये सामन्त सरदारसिंहको बिदा किया।

कोआरियो देशके अन्तर्गत गोपालपुर ग्राममें वागरावत नामकी एक सम्प्रदाय रहती थी। उनके जातीय देवताका एक मंदिर उस ग्राममें था। देवताका मुख व्याघ्रके समान था। सामन्त सरदारसिंहने उसी देवताके समीप जाकर आराधना की, इससे देवताने प्रसन्न होकर उनके हाथमें एक फूल दे देववाणीद्वारा आज्ञा दी "कि तुम इस फूलको लेकर महाराणाके हाथमें दो, यही तुम्हारे वाक्यका प्रमाण देगा"। सामन्तने देवताकी आज्ञानुसार वह फूल लेकर महाराणाके हाथमें दिया राणाने देवताके दिये हुए उस फूलको लेकर तथा और मनुष्योंके मुखसे उस फूल देनेका वृत्तान्त जान कर फिर कोई सन्देह नहीं किया। सरदारसिंह पूर्व जन्ममें उनके चेले थे, इस बातका विश्वास राणाको भली भाँतिसे हो गया, उन्होंने प्रसन्न होकर सरदारसिंहको पुरस्कार देनेकी अभिलाषासे उनसे कहा, "आप क्या पुरस्कार चाहते हैं"? सामन्तने कोआरियो देशसे लगा हुआ लावादेश और उसके समीपकी भूमि माँगी।

राणा उस समय तक बालक थे। उनकी माता ही उस समय उनके नामसे राज्यशासन करती थीं इस कारण वचनबद्ध होकर उस ऋणको चुकानेके लिये शीघ्र ही

माताके समीप जाकर उन्होंने समस्त वृत्तान्त कह दिया, दुर्भाग्यवश लावादेश उस समय महाराणीकी खास भूमि स्वरूप था । यद्यपि महाराणाने सरदारसिंहके उस पूर्वजन्मकी बातपर तथा देवताके दिये हुए पुष्पपर कुछ भी अविश्वास नहीं किया, तथापि पुत्रसे कहा कि दूदिया सरदारसिंह हमारी खास भूमिको न लेकर और किसी भूमिको ले सकते हैं । तुम्हारी इच्छा हो तो समस्त मेवाडराज्य उनको दे दिया जाय ”। माताके यह वचन सुन कर महाराणाने असंतुष्ट होकर उसी समय कहा “ अच्छा ! मैंने उनको मेवाड़ राज्य दिया ” । राजाकी प्रतिज्ञा कभी भंग न होगी, उन्होंने शीघ्र ही सरदार-सिंहको बुला कर कहा मैंने तीन दिनके लिये समस्त मेवाडका राज्य आपको दिया, उन तीन दिनमें आपकी जो इच्छा हो, सो करिये । मेरा सिलहखाना, अस्त्रागार, मेरा खजाना, मेरी अश्वशाला, मेरा सिंहासन और मंत्री यह तीन दिनके लिये सभी, आपकी इच्छाके अधीन हुए ।

तीन दिनके लिये राणाके पदपर अभिषिक्त होकर असीम सामर्थ्य प्राप्त कर सरदारसिंहने समस्त द्रव्य और सम्पत्ति अपने अपने देश कोआरिओंको भेज दी । उन तीन दिनोंमें सरदारसिंह यथार्थ राणीके समान शून्यसिंहासनके एक ओर बैठ कर समस्त सामन्तोंसे व्याप्त होकर सभाका कार्य करते थे । तीसरे दिन राणाकी माताने लावादेश-के शासनकी सनद अपने पुत्रके समीप भेज दी । चौथे दिन दूदिया सरदारसिंहने राज-शक्तिको फिर राणाके हाथमें दे दिया ।

कोआरिओंके परम सौभाग्यवान् सामन्त सरदारसिंहने इस प्रकारसे धन प्राप्त किया । इसमें नौ लाख रुपया खर्च करके उन्होंने अपने नवीन अधिकारी देश लावामें एक किला बनाया और उसमें एक बडाभारी महल और उपवन भी । किलेमें एक परम रमणीक कृत्रिम ह्रद बनाया और एक लाख रुपया खर्च करके किलेमें एक उपवन भी बनाया । इन्होंने जो उत्कृष्ट महल बनाया था उसमेंके दर्पणागार इत्यादिकी आजतक प्रशंसनीय रूपसे कीर्ति छा रही है । परन्तु अन्तमें एक दिन बारूद गुदाममें आग लग जानेसे आधा किला विध्वंस हो गया था । यद्यपि बहुतसा धन खर्च करके फिर उस किलेकी मरम्मत कराई गई, परन्तु महाराष्ट्रनेता हुलकरने तोपोंसे उसकी अधिक शोभाको नष्ट कर दिया । लावाके महल समस्त मेवाडमें आजतक एक श्रेष्ठ महल गिने जाते हैं ।

“ जगन्मंदिरके आदर्शसे उदयपुरकी राजधानीमें ह्रदके किनारे जो महल श्रेणी बनी हुई है, सरदारसिंहको उसमेंसे एक महलमें वास करनेकी सनद मिली । यद्यपि इस समय उस महलमें आमायतके सामन्त रहते थे, परन्तु वह आजतक दूदियाका महल कहलाता है, इस समय उस महलके कमरेमें चिमगादड और उल्लू निवास करते हैं और उसमें वटका वृक्ष कमरेको भेद कर निकला है । लावामें महल बनानेके पीछे सरदारसिंह वीस वर्षतक जीवित रहे । उन्होंने अपने एकमात्र पुत्रको छोड कर संवत् १८३८, सन् १७८२ ई० में प्राण त्याग किये । उन्होंने युवा अवस्थामें जिस प्रकारका सम्मान प्राप्त किया था, शेष जीवनमें भी उनका वैसा ही सम्मान और पद अक्षत था । परन्तु

इनकी मृत्युके साथ ही साथ उनके वंशके गौरवकी कीर्ति भी लुप्त हो गई थी। शक्तावत् संग्रामसिंहने उन सरदारसिंहके पुत्र संग्रामसिंहको निकाल कर लावापर अधिकार कर-लिया, सरदारसिंहके पुत्रने अनाश्रय होकर अति दीनदशामें प्राण त्याग किये, चंद्र-भानुके प्रपौत्र, सरदारके पोते एवं संग्रामके पुत्र इस समय मेवाडके वर्तमान युवराज जवानसिंहके समीप रह कर मासिक वृत्ति पाकर जीवन व्यतीत करते हैं, उनके पास अपनी निजकी भूमि कुछ भी नहीं है"।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते हैं, कि "शक्तावत् सरदारसिंहको महाराणाके यहांसे उक्त लावादेशका वार्षिक २४ हजार रुपया राजस्वकरका स्थिर कर रीति अनुसार शासन सनद मिली। और कोआरिओदेश फिर राणाके अधिकारमें हो गया। लावादेशके दीर्घ हदके जलसे कई कोसतक खेती करनेका विशेष सुभीता था, इसीलिये उस एक ही कारणसे यह स्थान मेवाडमें दूसरी श्रेणीका देश गिना जाता है। संग्रामसिंहकी समस्त संतान श्योगढके शोचनीय हत्याकांडमें मारी गई थी, उनकी मृत्युके पीछे उनके मध्यम भ्राता श्योसिंहके पुत्र जयसिंहने लावाके सामन्त पदको प्राप्त किया। संग्रामसिंह जितने दिनतक जीवित थे, उतने दिनोंतक उनके लिये किसी प्रकारकी सम्पत्तिका भाग नहीं मिला। सभी एक अन्नसे समय व्यतीत करते थे। संग्रामसिंहके छोटे भ्राता सुरतानसिंहके पुत्र नाहरसिंह, (मान-सिंहके पिता) जिन्होंने संग्रामसिंहके साथ प्रथम अनेक वीराभिनय किये थे, उन्होंने अपने बाहुबलसे वनबल देशपर अधिकार कर लिया। इसी कारणसे उस विषयमें विभाग करनेका कोई प्रयोजन नहीं हुआ परन्तु वनबल देश पहिले राणाके खास अधिकारमें था। इसीसे सन् १८१८ ईसवीमें वह फिर खालसा हो गया, नाहरके पुत्र मानसिंहने शीघ्र ही अनन्य उपाय होकर लावाके राणा जयसिंहसे यह वचन कह कर लावाके अंशकी प्रार्थना की कि लावादेश जब कि सभीके बाहुबलसे प्राप्त हुआ है, तब मैं भी उसका अंश ले सकता हूँ तिसपर फिर मैं संग्रामसिंहके छोटे भ्राताका पुत्र हूँ इस कारण मेरा अधिकार अवश्य ही सामाजिक रीतिके अनुसार प्रबल है। मानसिंहकी इस प्रार्थनापर पहिले जयसिंहने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। परन्तु अन्तमें सामाजिक रीतिके अनुसार इन्होंने वार्षिक पाँचसौ रुपयेकी आमदनीवाले जैतपुरका अधिकार नाहरसिंहके पुत्र मानसिंहको दे दिया। मानसिंहने जबतक अपने अधीश्वर लावाके सामन्तकी आज्ञा पालन की तबतक लावाके ऊपर उनका स्वत्वाधिकार किसी प्रकार भी लोप न हो सका। एकमात्र अपने कर्तव्य पालनमें ढील होनेसे उनके उस स्वत्वके लोप होनेकी सम्भा-वना थी। जयसिंहने मानसिंहको जो सनद दी थी वह सनदपत्र उक्त उक्तिका समर्थन करती है। सनदपत्रमें जैसे "महाराव श्री जयसिंह वचनबद्ध होकर कहते हैं धर्मको साक्षी देते हैं"।

इस समय भतीजे मानसिंह मैंने तुम्हें इच्छानुसार जैतपुरा नामक ग्राम और उसके अधीनकी समस्त भूमि दान की। तुम्हारे वंशधर सुपुत्र हों अथवा कुपुत्र हों, इसे वह भोग करेंगे, मेरे इस दानकार्यमें चतुर्भुजा देवी साक्षी हैं। तुम मेरे भतीजे हो

इस समय जिस स्थानपर मैं तुमको जो कुछ आज्ञा दूँगा तुम्हें उसको पालन करना होगा, यदि तुम उसे नहीं करोगे तो उसका फल तुम्हें भोगना होगा"।

" मानसिंह अपने कर्तव्य पालनमें असमर्थ हो गये थे इससे हो अथवा अन्य किसी कारणसे हो, जयसिंहने फिर जैतपुरा देश अपने अधिकारमें कर लिया। मानसिंहने मंत्रियोंके द्वारा उसे प्राप्त करनेकी विशेष चेष्टा की परन्तु सफलता न हुई। अन्तमें उन्होंने मेरे समीप आकर इस विषयमें सुविचार करनेकी प्रार्थना की। खैरोदादेश व लावाके अधीश्वर जयसिंहके समीपसे लेकर राणाके अधिकारमें किया गया था, इससे जयसिंहकी आधी आमदनी घट गई थी, ऐसा अनुमान किया जाता है, इसी कारणसे जयसिंहके सामान्य अपराधपर जैतपुराको अपने अधिकारमें कर लिया। सन् १८२० ईसवीमें मैं जब मेवाडमें गया उस समय उन्होंने पत्रद्वारा मुझे विदित किया कि " जयसिंहने मुझे जैतपुरा लौटा देने की आज्ञा दी है "। मैं इसका उत्तर चाहता हूँ एकमात्र राणा ही इस विषयमें विचार कर सकते हैं। मेरे ऐसा कहनेपर वह फिर राणाकी सभामें गये। परन्तु वहाँ जाकर सफल मनोरथ न हो सके, अन्तमें उन्होंने फिर मेरा ही अनुसरण किया। मानसिंहने फिर मेरे वचनानुसार सादरीकी सीमान्तमें सेनादलके नेतृत्व पदको प्राप्त किया था, परन्तु उन्होंने विशेष मन लगाकर अपने कर्तव्यको पालन नहीं किया, इसीसे मैंने उनको उस प्रकार आग्रहके साथ ग्रहण नहीं किया। उसी कारणसे वह आत्मसमर्पण करनेके लिये और भी आग्रह युक्त हो गये:और कहा कि वह प्रबल व्यक्ति गत कारणसे मीमांसाके अंतमें अपने कर्तव्य पालनमें समर्थ नहीं हुए। पचीस वर्षके अवस्थावाले वीरके समान दीर्घाकार बलिष्ठ साहस प्रकृति और स्वाधीनताकी तेजपूर्ण मूर्तियुक्त मानसिंह अपने सनदपत्रको पढनेके लिये मेरे हाथमें देकर बोले-मैं लावाके:अधीश्वर-के निकट जिस बाध्यताकी जंजीरमें बंध रहा हूँ यदि उसको तोड डालूं तो यह अवश्य ही जैतपुराका ग्रहण करनेमें न्यायसहित समर्थ होंगे; बलबल देशको मेरे हाथसे छीननेके लिये जयसिंहके इशारेके अनुसार मेरी सेनाकी संख्या उनकी बराबर की गई है, इस कारण जैतपुराको प्रतिग्रहण करनेकी उनको क्या सामर्थ्य है ? जिस समय संग्रामसिंहने प्राणत्याग किये थे, उस समय लावा हमारे ही हस्तगत था यदि मेरी इच्छा होती तो मैं लावाको सरलतासे अपने आधीनमें रख सकता था, उस समय मेरे हाथसे लावा लेनेकी किसको सामर्थ्य थी ? जयसिंहके आधीनके सामन्तोंने कभी नहीं देखा था। वह जयसिंहके बदलेमें मुझको अधीश्वर माननेके लिये तैयार होजाते। यद्यपि इस समय तक बलपूर्वक मेरे अधिकारको लोप नहीं कर सकते थे, तथापि उस समयमें ही उनको लावाका अधीश्वर मान उनके स्वत्वका अधिकार मान्य करके चला, जब आमाइतके ठाकुरने राजधानीमें जानेके समय लावाकी सीमामें नगाडा बजाया, तब क्या मैं सेनादलको इकट्ठा कर आमाइतके सामन्तोंद्वारा अपने अधीश्वर जयसिंहका अपमान जानकर उस ठाकुरको उसका फल नहीं देता? मेरा मस्तक जयसिंहके हाथसे लावाके किलेकी दीवारके ऊपर स्थापित है। यदि लावाके सामन्तके ऊपर राणाके ऊपर और आपके ऊपर हमारी भक्ति न होती तो वह कभी बलपूर्वक जैतपुराको अपने अधिकारमें नहीं कर सकते थे केवल आपके ऊपर मेरी प्रबल

भक्ति है, इसी कारणसे मैं चुपचाप सब कुछ सहन कर रहा हूँ। आप मुझे जैतपुराके ग्रहण करनेकी आज्ञा दीजिये यदि मैं आज ही उसको अपने अधिकारमें न कर लूं तो मैं नाहरसिंहका पुत्र नहीं। इसी हाथसे जैतपुराका जो छोटा किला बनाया था। उस किलेमें मेरे स्त्री पुत्रोंको आश्रय मिला था, इस समय उन्होंने हमारी उस पितृभूमिसे निकलकर अन्यत्र आश्रय लिया है। वनबलके बदलेमें मुझे जो भूमि दी है वह वनपूर्ण पतित देश है उस भूमिसे यदि मैं एक रुपयेकी भी आमदनीकी इच्छा करूँ तो उस भूमिमें मुझे पहिले रुपया खर्चना हागा। एकमात्र जैतपुरासे मैंने उस भूमिको उत्कर्ष साधनके लिये, धनसंग्रह करनेके लिये आशा की थी, उसी आशासे मैंने उक्त देशके कारण पट्टा-द्वारा लिखित ढाई हजार रुपया दिया और जबतक उस पतित भूमिसे आमदनी न हो तबतक मैं जैतपुराकी आमदनीसे परिवारका पालन करूंगा ऐसी आशा की थी। जब जैतपुरा हमारे हाथसे छीन लिया गया तब मेरे ऋणदाता महाजनोंने ऋण चुकानेके लिये मुझपर आक्रमण किया और मेरे पास जितने मूल्यवान् द्रव्य थे वह सब और मेरी स्त्रीके समस्त आभूषणतक और जिस घोडेपर चढकर गंगापुरमें मैं आपके साथ साक्षात् करनेके लिये गया था, उस घोडेतकको वेंचकर अपना ऋण चुका दिया। मैंने इस शोचनीय अवस्थाको पृथ्वीनाथ महाराणाके निकट निवेदन किया उन्हों-ने सब वृत्तान्त सुनकर मेरे अनुकूल सम्मति दी। मेरे पाससे पट्टेके कारण पाँच हजार रुपया मांगा मैंने कहा मेरी आशा सफल होगी, इस प्रकार वचनबद्ध होकर मैं वह भी उसी समय देनेके लिये तैयार हुआ था।

बीकानेरीजीके(१) नामसे वह वचन दिया था, परन्तु लावाके सामन्तपर जितनी धन सम्पत्ति थी, जैतपुराके सामन्तपर उतनी नहीं थी इस कारण लावाके सामन्तने एक हजार रुपया देकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण किया। इसी कारण अन्तःकरणके दुःखित होनेसे मैं सीमान्तकी रक्षा उस प्रकार न कर सका। उसी सूत्रसे पठानोंने उत्तेजित होकर सालाइराह नामक स्थानके खेतमें मेरा जो कुछ धान्य उत्पन्न हुआ था, उस सबको हर लिया, और वन्येरा भैरावी नामक ग्रामको भी अधिकारमें कर लिया है। मेरी यह अवस्था है; यदि मैंने अन्यायसे मांगा है; यदि रीतिके विरुद्ध कोई प्रार्थना की है तो आपके विचारमें जो दंड हो उसे दीजिये" । यह वचन(२) कहकर ठाकुर मानसिंहने अपने मनकी बात समाप्त की। मानसिंह केवल अपनी जातिके नहीं-यह मनुष्यसमा-जमें ऊंचे आदर्शके मनुष्य थे, इन्होंने जो प्रार्थना की वह अकाट्य थी। जो लोग उनकी भाषा नहीं जानते वह भी उनके उस समयके मानसिक भाव और आग्रहको देखकर अवश्य ही विचलित हुए थे। परन्तु मैं सहसा कोई प्रतिज्ञा करके ही शान्त न हुआ वरन् जिससे मैं राणाके समीप उनका पक्ष समर्थन करनेके लिये सरलतासे समर्थ हूँ उसके लिये मैंने उनसे कहा कि " आप शीघ्रतासे सीमान्तमें अपने कार्यस्थानमें जाइये, और

(१) राणाकी एक रानी-बीकानेरके राजाकी कन्या थी।
(२) मानसिंहने वनबलके बदलेमें सालाइरोह भैरवी नामवाले दो ग्राम पाये थे।

आपके न होनेसे वहाँ जो एक शोचनीय हत्याकांड हो गया है, आप उस हत्याकाण्डके नेताको उचित दंड देकर राणाके कृपापात्र होनेकी चेष्टा करिये। मैंने उनको एक पिस्तौल उपहारमें देकर बिदा ग्रहण की।

सीमान्तकी उस शोचनीय हत्याकाण्डके सम्बन्धमें इतिहासलेखकने लिखा है "छोटी सादरीकी सीमान्तमें-जैसे सेनादलके साथ मानसिंह सीमान्त रक्षामें नियुक्त थे-उस सीमान्तमें गंभीरवन जंगल पूर्ण एक पहाडी देश है, आधेमें मीना और भीलगण वहाँ वास करते हैं, उस पहाडी देशसे लगे हुए कितने ही देशोंमें बहुतसी नीची श्रेणीके सामन्त वास करते हैं, जिससे भील और मीना अत्याचार व किसी प्रकारके उत्पात न कर सकें, उन सामन्तोंपर इस प्रकारका भार सौंपा गया है। परन्तु हम जिस समयकी बात कहते हैं, उस समय वह सामन्त भीलोंको दमन न करके वरन् उनके आसपासके देशोंमें चोरी और लूटमार कार्यसे उत्साहित करके उस लूटी हुई धन सम्पत्तिमेंका एक अंश आप लेते थे। उन उत्साहदाताओंमें कालाकोटाके सामन्तोंके घरके प्रधान कर्म-कर्ता एक प्रधान नेता थे। चम्पान नामक वनकी ओर गिरिसंकटके ऊपर विलोई नाम एक खंडभूमिमें एक राठौर राजपूत निवास करते थे। उन्होंने कई बीघे पर्वती भूमि लेकर कई कुएँ खुदवाये और उनसे उसी भूमिमें खेती करते थे। राजपूत राठौरने घोर परि-श्रमसे उस कठोर भूमिमें नाज उत्पन्न कर उससे अपनी स्त्री और उस भूमिके एकमात्र उत्तराधिकारी अपने पुत्रके निमित्त अन्न संस्थापन किया था। एक दिन वह राठौर राजपूत कृषिकार्य करनेके पीछे अपने घरकी ओरको जा रहे थे कि इसी समयमें उनकी स्त्रीके रोनेका शब्द उनको सुनाई पडा, स्त्रीने नेत्रोंमें जल भर कर अपने स्वामीसे कहा कि बनैले भीलोंने आकर तुम्हारी कुटीको लूट लिया। सारे पशुओंको लेकर एकमात्र पुत्र और उस पुत्रके सहचर एकमात्र युवक योगीको भी बांधकर ले गये हैं। राठौर राजपूतने महा शोकित हो बिना कुछ कहे सुने बन्दूकमें गोली भरी, और बंदूक लेकर आप कालाकोटकी ओरको गये। अत्यन्त दुःखका विषय है कि राठौर राज जिस समय काला-कोट ग्राममें गये उसी समय उस ग्रामके प्रवेश मार्गपर अपने प्राण धन पुत्र और उस योगीका शिर शून्य देह उनके पैरोंके नीचे आया। उन्होंने बहुत खोज करके जाना कि कालकोटके सामन्तोंके अनुगत भीलोंने यह कार्य किया है। भील तस्कर जिस समय उस पुत्र और योगीको पशुओंके साथ यहाँ लाये उस समय उस पुत्रने कालाकोटके कर्माध्यक्षको देखकर कातरस्वरसे कहा, "मामा मेरी रक्षा करो, मेरे प्राणके बदलेमें जितना रुपया तुम चाहोगे बाबा मेरे उतना ही तुम्हें देंगे।" वास्तवमें राठौर राजपूतके निकटसे रुपया लेनेके लिये ही पुत्रको बाँधकर लाये थे। परन्तु जब समाचार फैल गया कि यह पाखंडी कर्माध्यक्ष ही इस काण्डका मूल है, तब अपनी रक्षाके लिये उस पुत्र और योगीके प्राण नाश किये गये। राठौर राजपूत यह समाचार पाते ही उस नर-घातीकी खोज करनेके लिये कालाकोटमें गये। उस शोकसे संतापित हुए पिताको देखकर उस पातकीने कहा, मैं इस हत्याकाण्डको कुछ नहीं जानता। अन्तमें राठौरके दुःखमें शोक प्रकाश करके उसने कहा कि तुम्हारे जितने पशु चोरी गये हैं उनका चौगुना

मूल्य और जो तुम्हारी धन संपत्ति नष्ट हुई है उसका दुगुना मूल्य तथा इसकी खोज करनेमें जितना रुपया तुम्हारा खर्च हुआ है उससे दुगुना मैं तुम्हें देता हूं। शोकित और दुःखित पिताने कहा, "तुम जीवित अवस्थामें मेरे पुत्रको दे सकते हो? मैं न्याय विचारसे प्रतिहिंसा चाहता हूँ, रुपया नहीं चाहता। मुझे अब धन लेकर जीवन धारण करनेका क्या प्रयोजन है"?

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं, "कि किसी भाँति भी धीरजके वचनोंसे उन राठौर राजपूतका शोक दूर नहीं हुआ। उन्होंने यही प्रतिज्ञा करी कि प्राणघातीका प्राण लेकर ही मेरा मन शान्त होगा, उस विषयमें आशा देकर उनको मानसिंहके हाथमें सौंप कर कहा कि यदि हत्या करनेवालेको आप बंदी कर सकें तो आपका मनोरथ भी इसी कारणसे पूर्ण होगा। इस वचनको सुनकर राठौर राजपूतने कितनी बार धीरज प्राप्त कर मुझसे बिदा ली। वह मेरे डेरोंको छोडकर अपने घरको जाने नहीं पाये थे कि इतनेमें ही यह समाचार आया कि उस शोचनीय हत्याकाण्डके प्रधाननेता कालाकोटके सामन्तको उस कर्मका सबके दंडदाता भगवानने दंड दिया है। कालाकोटके सामन्तने उस हृदयभेदी शोकसे विचलित होकर उड कर्मकर्ताको भलीभाँतिसे भर्त्सना कर वह जिस २ महापापका भागी हैं, उसे२स्वीकार करनेको कहा। परन्तु उस मनुष्यने प्रतिज्ञा करके कहा कि "भगवानका नाम लेकर कहता हूँ कि मैं अपराधी नहीं हूं अन्तमें वह देवताके मंदिरमें जाकर शपथ करनेके लिये तैयार हुआ। उसकी बातपर सम्मत होकर उसको सामन्तने देवताके मंदिरमें शपथ करानेके लिये भेजा। वह पापी घोडेपर चढ कर देव मंदिरके सामने पहुंचा ही था कि वैसे ही उसकी मृत्यु हो गई। उसकी अचानक मृत्युको देखकर सभी कहने लगे कि देवताने स्वयं ही इससे बदला ले लिया। इस समय उस हत्याकाण्डमें और भी जितने सहायक थे, उन सबको पकडकर उक्त राठौर राजपूतको संतोषके कारण जिससे कोई फिर आगेको ऐसा कार्य न कर सके इससे उनको उस वीलिओंके गिरिसंकटमार्गमें फाँसीपर लटका दिया। इससे मैं अत्यन्त आनन्दित हुआ"।

तृतीय अध्याय ३.



मोरवन–उस देशकी जनशून्यता–महाराष्ट्रोंके द्वारा अत्याचार और उत्पीडन–महाराष्ट्रोंके प्रति अन्याय–दया प्रकाश–मोरवनका प्राचीन इतिहास–खोदित लिपि–जैन मंदिर–व्याघ्रका एक बालकपर आक्रमण–देवताके मंदिरके संबन्धका प्रवाद–प्रयोजनीय खोदित लिपि–चारण रमणियोंके द्वारा कर्नल टाडकी अभ्यर्थना–उस अभ्यर्थनाके संबन्धकी प्राचीन रीति–मेवाडमें चारणोंके आगमनका इतिहास–सती वाक्य।

कर्नल टाड साहबने पाहिली फरवरी शनिवारको मोरवन वा मरवन नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि " लावाके विवाद विसंवाद और उसके सम्बन्धकी घटनावलीको, वर्णन करनेके उपलक्ष्यमें गत दिनको मानसिंहने मेरे सभी समयको ग्रहण किया था। इस स्थानके आसपासके जो कितने ही देश राणाके खास अधिकारसे छिन गये थे उस विषयमें विशेष खोज करनेके लिये मुझे इस स्थानपर विश्राम करना पडा। मोरवन वा मरवन पाहिले एक समृद्धिशाली नगर था, तथा यह जिलेमें एक प्रधान उपविभाग रूपसे गिना जाता था। इसका वार्षिक राजस्व सात हजार रुपया था। यह नगर रमणीक ऊँचे शिखरपर स्थापित है और इसके पश्चिम ओर जो एक बडा भारी कृत्रिम हौद है, वह देखनेमें अत्यन्त सुन्दर है। और उसके दोनों ओर किनारोंपर बडे २ इमलीके वृक्ष लग रहे हैं। यहाँकी भूमि भी उपजाऊ है, विशेष करके खेतीके लिये जलका भी बडा सुभीता है, परन्तु हाय ! इस समय खेती करनेके लिये यहां मनुष्य नहीं हैं। नगर सभी ओरसे विध्वंस होकर मनुष्योंसे हीन हो रहा है।

जिन वर्वर पठानोंने इस रमणीक नगरको बिध्वंस किया है, उन्हींके हाथमें फिर यह देश जायगा। मेरे मनही मनमें महा दुःख हुआ। युद्धके समय व्यय वा दंडस्वरूपसे जिन सब देशोंको राणाके निकटसे गिरवीस्वरूप शत्रुओंने अपने हाथमें रक्खा था यह मोरवन देश भी उन्हींमेंसे एक है। अन्यान्य भूमिके साथ यह भी महाराष्ट्रके अधीनमें हो गया था। और धनके लोभी महाराष्ट्र सेवकोंने इस देशपर अपनी इच्छानुसार अत्याचार किये थे। यह अत्यन्त शोचनीय विषय है। अपने परम शत्रु महाराष्ट्रों-की ओर हमने अन्यायसे उदारता दिखाई, नहीं तो यह सभी देश न्यायके अनुसार मूल अधिकारियोंको लौटा देने होते, विशेष करके उन्होंने हमारे न्याय अत्याचार और चोरी लूटके रोकनेमें विशेष सहायता की। यदि महाराष्ट्रोंको मध्य भारतवर्षसे एकबार ही निकाल दिया जाता तो न्यायविचार सुराजनीति और सहृदयता भलीभांतिसे प्रकाश पा जाती। जब मैंने इस छिने हुए देशके साथ उदीयमान उन्नतिके चिह्नयुक्त राजपूत देशकी बराबरी करी तब मैंने मन ही मनमें इस कारणस आनन्दका अनुभव किया था कि अत्याचारी अधिकारी लोग इन सब देशोंसे कुछ भी लाभ न उठा सकेंगे, इन बडे खेतोंमें घास और वृक्षोंके सिवाय कुछ न होगा "।

इतिहासवेत्ता मोरवन देशके प्राचीन इतिहासके सम्बन्धमें लिखते हैं कि मोरिवनदेश प्राचीन ऐतिहासिक देश गिना जाता था। मोरीजातिसे इसका नाम मोरवन हुआ है। मोरीजाति चित्तौरको जीतनेके पहिले इस स्थानमें शासनकार्य करती थी, चित्रांगप्रसाद नामवाला एक प्राचीन टूटा फूटा किला इस समय तक विराजमान है चित्तौर नगर स्थापन करनेके पहिले उस किलेमें मोरी जाति वास करती थी, ऐसा प्रकाशित होता है। इसके सम्बन्धमें आजतक यह बात विख्यात है कि चित्रांगधार राज्यका एक प्रधान करद स्वरूप मोरवन और उससे लगे हुए देशका शासन करते थे। चित्रांगकी

एक जन प्रजा एक समय खेती करती थी, हठात् उसके लांगलके फलपर एक कठिन द्रव्यका संघात हुआ, उन्होंने उसी द्रव्यको उठाकर देखा कि इसके स्पर्शसे उसका हल एक बार ही सुवर्णका हो गया है। वह कठिन द्रव्य और कुछ भी नहीं है--पारस पत्थर है वह किसान शीघ्र ही उसे अपने स्वामी चित्रांगके पास ले गया और जाकर स्वामीको दिया। चित्रांगने उस पारस पत्थरकी सहायतासे बहुतसा सुवर्ण पाकर उस धनसे मोर-वन नगरमें बडे २ महल बनवाकर अन्तमें चित्तौरकी राजधानीको निर्माण किया। धाल-कोट वा मोरिकापट्टन नामक, जो राजधानी वर्तमान मोरिबनके पश्चिम दूर पर थी, उसके चिह्न भी इस समय तक देखे जाते हैं; परन्तु उक्त स्थानके निवासियोंकी निर्बुद्धिता-के कारण उसमें अग्नि लगनेसे वह विध्वंस हो गये हैं, कारण यह था कि वहाँ एक ऋषि धोरेके वनमें तपस्या कर रहे थे; बहुतसे मनुष्य उनके शिरपर एक प्रकारका जंगली वृक्षोंके जडका बोझा रखकर उनको बाजारमें बलपूर्वक ले आये। उस ऋषिके क्रोधसे नगर विदग्ध हो गया। परन्तु इस वचनसे यही अनुमान होता है कि इस देशमें पहिले भूग-र्भसे अग्नि निकलती थी। मोरवनमें इस समय तीन प्राचीन मंदिर विराजमान हैं, इनमें एकमें शेषनागकी मूर्ति है। उस सहस्र शिर देवताने पृथ्वीको अपने मस्तक-पर धारण किया है। पहिले केवल कुंकुम ही उस देवताको चढाया जाता था, परन्तु इस समय उसके बदलेमें उनकी देहमें चंदन लगाया जाता है।

इस स्थानके दक्षिण पश्चिममें ढाई कोश दूरीपर उनेर नामक ग्राममें एक प्राचीन खोदी हुई लिपि है। यह सुनते ही मैंने उस प्राचीन गुरूको वहां भेजकर उस लिपिका लानेकी आज्ञा दी। वह उसको ले आये, उसके देखनेसे जाना गया कि उस खोदी हुई लिपिमें यह लिखा था कि कालीन और उनेरके ग्राम ब्राह्मणोंको दिये गये हैं। राणा संग्रामसिंहने संवत् १५७० सन् १५१४ ईसवीमें ग्राममें जो चतुर्भुजाका मंदिर बनवाया था उसमें वह रक्खी हुई है। राणा जगत्सिंहने उस खोदी हुई लिपिके नीचे अपना नाम खोदकर यह लिख दिया कि जिससे कोई भी इस ब्रह्मोत्तरकी ओर हस्तक्षेप न करै। उस मंदिरके और एक खंभपर ग्रामकी पंचायतकी इच्छानुसार प्रत्येक नवीन धान्य काटनेके समय वासन्तिक और हैमन्तिक धान्यमेंसे प्रत्येक खेतसे ढाई सेर धान्य देव, ताको दिया जाय, यह भी उसमें खुदा हुआ है।

संवत् १८४५ में जिस समय मेवाडके चारों ओर युद्ध हुआ था ऐसा जाना जाता है कि उसी समय पंचायतने उक्त दानको नियत किया था। चतुर्भुजादेवीके मंदिरके ठीक सामने एक जैनमंदिर है। संवत् १७७४ में यह बना था, जिस स्थानपर यह मंदिर बना था वहाँकी भूमि खोदनेके समय एक पारसनाथकी मूर्ति निकली थी। उसी मूर्तिकी स्थापना उस मंदिरमें हुई। यहांके अनेक स्थानोंमें प्राचीनकालके बहुतसे स्मृतिचिह्न पाये जाते हैं।

इस दिन कप्तान वा साहब शिकारको गये और नील गायके पीछे घोडा दौडाया पर यह एक जंगलमें घुस गई, और साहबके कुछ चोट आई, उस दिन हमने बडा चीतर देखा, यह जानवर बहुत खूबसूरत होता है।

२ फर्वरी–फिर कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "आज प्रातःकाल ही हमारे वार्षिक समस्त विलायती द्रव्य आये। हम भोजन करनेके पीछे एक बोतल बरांडी पान करते थे कि इसी समयमें ग्रामकी ओरसे एक भयंकर चीत्कार शब्द सुनाई आया, जिसको सुनकर हम विचलित हो गये। हम उसी मुहूर्तमें खडे हो गये, और जिस स्थानसे चिल्लानेका शब्द आ रहा था उसके सम्बन्धमें खोज करने लगे, कि इसी समयमें दो हलकारे और एक बालक शिरपर दूधका घडा लिये हुए मेरे सामने आये, उन्होंने मेरी वह उत्कंठा दूर की। प्रतिदिन दूध संग्रह करनेके लिये वह कई कोश दूरतक ग्राममें जाते थे। वह वहाँसे लौटते समय हमारे डेरोंके समीप आये, दोनों हलकारे कुछ आगे बढ गये थे, और बालक पीछे था। उस बालकने सहसा ऊँचे स्वरसे कहा "मामा मुझे छोड दो, मैं तुम्हारा भानजा हूँ, मामा छोड दो, मामा छोड दो।" यह कहता हुआ चिल्ला रहा था। उन दोनों हलकारोंने समझा कि यह बालक पागल है। विशेष करके उस समय उन दोनों जनोंने अंधे होकर बालकसे शीघ्र ही आनेके लिये कहा। परंन्तु बालक पहिलेके समान क्रमानुसार भयंकर चीत्कार करता था, तब उन्होंने दौडकर जाकर देखा कि एक बडा भारी व्याघ्र बालकके अँगरखेको पकड रहा है। तब इन दोनों हलकारोंने शीघ्र ही एक लोहेसे मढी हुई लकडीसे उस व्याघ्रको मारा उसके भयंकर चीत्कार शब्दसे सारे ग्रामवासी मनुष्य अस्त्र शस्त्र हाथमें लेकर वहाँ आ गये। उनके चिल्लानेसे मेरी निद्रा भी भंग हो गई।

मोरवन और मुगरवार नामक स्थानके मध्यस्थ काले पहाड नामक शिखरपर वह प्राचीन व्याघ्र वास करता था। इस प्रदेशमें यह बहुत समयसे रहता था, और वह किसानोंके पशुओंका नाश करता था, परन्तु अभीतक इसको कोई भी न मार सका था। दो दिन पहिले वह व्याघ्र मोरवनके एक तेलीके बैलको मारकर भाग आया था। व्याघ्रको कभी कोई बंदूक वा किसी प्रकारके अस्त्रसे नहीं मारता था, सभी उसपर दयाभाव रखते थे, और ऐसा जाना जाता है कि वह कभी किसी मनुष्यपर आक्रमण भी नहीं करता था, और यदि करता भी तो " मामा मुझे छोड दो " इतना कहते ही वह उसको छोड देता था; वह बालक यह जानता था इसीसे उसने 'मामा' कहकर इस प्रकारकी प्रार्थना की थी। परन्तु अज्ञान हलकारोंने विचारा कि वास्तवमें ही इस बालकको मामाने पकड लिया है, और इसीलिये वह पहिले उसकी सहायताके लिये न गये"।

३ री फर्वरी–आज कुहरा बहुत था हमारे साथी साहबकी तबियत खराब थी, इससे हम यहीं रहे।

४ फर्वरी–हमारे बन्धु पालोदसे लौट आये। मैंने उनको वहांके देवमंदिरमेंसे एक खोदित स्तंभकी लिपिको लानेके लिये भेजा था उन्होंने आकर जो कुछ कहा वह नीचे लिखते हैं।

वह मंदिर पहिले एक धनवान् जैनका बनाया हुआ था। जैनोंने उस मंदिरमें अपने इष्टदेवताकी मूर्ति स्थापन करनेकी अभिलाषा प्रगट की, परन्तु मंदिरके तैयार

होते ही मानदेव (देवजननी) ने स्वयं उस जैनके सम्मुख जाकर कहा कि इस मंदिरमें मैं वास करनेकी इच्छा करती हूँ। जैन यद्यपि हिन्दूधर्मका विरोधी था परन्तु माताकी इस इच्छाको अपूर्ण न कर सका, जैनने कहा कि मैं कभी आपकी मूर्तिके सामने अपने हाथसे किसी पशुका बलिदान नहीं करूंगा देवीके मंदिरमें निवास होनेके समाचारको सुनकर संतुष्ट हो कहा कि "तुम चित्तौडके सौनगडेके पास जाओ, वही बलिदानादि कार्यको निर्वाह करेंगे। जैनदेवीकी आज्ञानुसार वह सोनगडेके निकट गये और पीछे उस मंदिरके निकट पार्श्वनाथका एक मंदिर बनवा दिया। मेरे वृद्ध बन्धुने माताजीके मंदिरमें एक अत्यन्त प्रयोजनीय ऐतिहासिक तथ्यका अविष्कार किया। उन्होंने एक प्राचीन खोदी हुई लिपिको पढा उसीकी जो अनुलिपि लाये थे उससे सौलङ्की राजवंशके समयके निर्द्धारणके सम्बन्धका प्रमाण पाया जाता था। मुझे पीछे चित्तौडसे एक खुदा हुआ पत्र मिला उसके साथ इस पत्रका समय सम्पूर्णतः एक हो गया। इन दोनों पत्रोंसे भलीभांति जाना जाता है कि सौलङ्की राजाने एक समयमें वास्तवमें ही गिहलोतकी राजधानीको अपने अधिकारमें कर लिया था। पालोदसे जो खुदा हुआ पत्र मिला था उसमें केवल यही लिखा हुआ देखा कि कुमारपाल संवत् १२०७ में पूसके महीनेमें पालोद माताजीके मंदिरमें पूजा करनेके लिये आये। परन्तु शीशोदियोंने अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये कहा था; सदराजने जिस समय कुमारपालको निकाल दिया था, उस समय कुमारपालने चित्तौडमें आकर आश्रय लिया, और दिल्लीके चौहानपृथ्वीराजके बहनोई राणा समरसिंह जो चित्तौडके अधीश्वर थे अन्तमें उनके अधीनमें मन्त्रीके पदपर नियुक्त हुए। छठी फर्वरी मार्गमें व्यतीत हुई।

भ्रमणाकारी कर्नल टाड साहब ७ वीं फर्वरीको निकुंपनामक स्थानसे चलकर ८ तारीखको मुरलानामक स्थानमें आये। वह लिखते हैं, "कि मुरला एक श्रेष्ठ ग्राम है, यहाँ कूचौलिया जातिके चारण लोग निवास करते हैं। यद्यपि वह लोग भाटवंशके हैं परन्तु इस समय वह वाणिज्य द्रव्य रक्षकके कार्यसे अपना निर्वाह करते हैं। ये चारण इस देशमें सभी श्रेणी और सब वर्णोंके समीप पूजनीय हैं, और सभीकी भक्तिके पात्र हैं, इसी कारणसे कोई भी इनके प्रति किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं कर सकता, और इसी कारणसे वह निष्कर भूमि सम्भोग और निर्भय हो चोरोंसे भरे हुए मार्गमें वाणिज्य द्रव्य भेजते हैं। चोर डाकू भी इनके रक्षित किये हुए द्रव्योंको मार्गमें नहीं लूटते। यह समस्त राजपूतानेमें एकमात्र स्वाधीन होकर वाणिज्य करते हैं, कारण कि राजा भी इनसे वाणिज्यपर कर नहीं लेता है। यह चारणसम्प्रदाय हमारी जिस प्रकारसे अभ्यर्थना करती है उससे हम अत्यन्त आनन्दित हुए। उन्होंने नगरसे दलबद्ध होकर आगे बढ हमारा अधिक सत्कार किया। सबसे आगे ग्रामके बाजा बजानेवाले मनुष्योंका एक दल बाजा बजाता हुआ चला। इसके पीछे सुन्दरी चारणी स्त्रियाँ धीरे २ समीप आकर अंगके उत्तरीय समान्दोलनसे हावभाव कटाक्ष करती हुई धीरे २ नृत्य करती थीं। अन्तमें मुझे मुरलाकी उन स्त्रियोंने बंदी कर लिया, तब वह शान्त हुई। यह दृश्य जैसा नवीन था उसी प्रकारसे चित्तको हरनेवाला था। वीरवपु चारणोंने सुन्दर वस्त्र पहरकर शिरपर पगडी

बाँध और उसमें माला लटका कर दर्शन दिया था। नायक वा नेता गणोंके गलेमें सुवर्ण–के अलंकार थे और उनमें पृथ्वीश्वरकी मूर्ति अंकित थी, उनकी वह धीर गंभीर मूर्ति स्त्रियोंका दृश्य प्रकाश करती थी। सभी स्त्रियें पाटल वर्णका घाँघरा और कुरता पहर रही थीं, उनके वह श्रेष्ठ बाल घन कृष्ण जलधि जालके समान थे, अंगमें रमणीय आभूषण थे, हाथमें चुडी अतुलनीय शोभाको प्रकाश कर रही थीं। संसारके अनेक चित्रकारोंके पास इस चित्रके समान योग्य चित्र दूसरा नहीं था। स्त्रियोंकी मण्डली जिस भाँति अपने हावभाव कटाक्ष फेंकती थीं जिस भाँति मधुरभावसे अंगको चलाती हुई अभ्यर्थना करती थीं, उससे भलीभाँति विदित होता है कि वह उस अभ्यर्थनाकी ओरसे कुछ पुरस्कारकी आशा करती हैं।

"अपराह्नके समय नायक मेरे डेरोंमें फिर आये उनके आते ही मैं जान गया कि मैंने सुंदरी स्त्रियोंके द्वारा बंदी होकर उनके हाथसे जो उद्धार पाया है उस उद्धारका मूल्य किस प्रकार है, पिछले पांच सौ वर्ष पहिले मेवाडसे कोई राणा मुरलामें गये थे इन चारणियोंकी संप्रदायने उनको इसी प्रकारसे बंदी किया था; और जबतक राणाने उन सुंदरी चारण कामिनियोंको भोजन न दिया, तबतक उन्होंने बंदी दशासे किसी प्रकार भी छुटकारा नहीं पाया। जिस जंजीरने उनको बंदी किया--वह जंजीर जैसी अमृतमय है बंदीको भी उसी प्रकारसे उस अवस्थामें अधिक दिनतक रहना नहीं होता। चारणियोंके प्रधान नेताने मुझसे कहा कि मैं, राणाका प्रतिनिधिस्वरूप होकर यहाँ आया हूँ मैं उन चारण स्त्रियोंके द्वारा बंदी होनेके समय महा विपत्तिमें पडा था। उसने और भी कहा कि मैं इस चिरप्रचलित रहस्यको किस भावसे ग्रहण करूं, क्रोधित होंगी या प्रसन्न होंगी; यह स्थिर न कर सका, इसी समय स्त्रियोंने मुझे छोड दियां। उसी कारणसे उनको भोज्य भी न मिल सका। परन्तु मैंने उन नायकसे कहा कि प्राचीन रीतिकी रक्षा करके मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ, और तुरन्त ही मैंन उन चारण कामिनियोंके समीप प्रत्यभिनन्दन वचनोंके साथ भोजके लिये रुपये भेज दिये। प्रधाननेता एवं अन्यान्य नायकोंने अपने पत्रोंको लेकर बहुत समय तक मेरे साथमें प्राचीन कालके अनेक विषयोंकी बातचीत की थी"।

कर्नल टाड साहब चारणोंके सम्बन्धमें फिर लिखते हैं कि "इस छोटी चारण सम्प्रदायके आदिपुरुष राणा हमीरके शासनकालके प्रथम समयमें उनके साथ गुजरातसे यहाँ आये थे। यद्यपि उस समयसे अबतक पाँच सौ वर्ष व्यतीत हुए हैं, तथापि चारण गणोंने अपनी जातिका कोई लक्षण रीति अधिक क्या आचार व्यवहार और पहरावेमें भी किसी प्रकारका अदल बदल नहीं किया। वह इस समय जिस जातिमें वास करते हैं, उस जातिका उनका किसी विषयके साथ कुछ भी सादृश्य दिखाई नहीं पडा। वास्तवमें वह सभी भारतवासियोंसे विपरीत दिखाई पडे, यद्यपि उन्होंने हिन्दुओंमें ऊंचा सामाजिक पद प्राप्त किया था, तथापि पारस राजवासियोंके साथ उनकी सदृश्यता विराजमान है। उन पारसवासियोंका मेल चाल–ढाल, पहरावा ऊंची पगडीको देखकर

ही आरावली शिखरकी अपेक्षा उसकी ऊंचाई घटती जाती थी, इसको दूसरी श्रेणीका शिखर वा ऊंची समतल भूमिके कहनेका अनुमान होता था। यद्यपि यह पश्चिमकी भूपृष्ठसे चार सौ फुटसे अधिक ऊंचे नहीं थे, तथापि इसके ऊपरके भागपर खड़े होनेसे नैतिक, राजनैतिक और प्रकृतिके सम्मुख ऐसा रमणीय दृश्य दिखाई देता था कि मैंने पहिले कभी ऐसा हृदयको हरण करनेवाला दृश्य नहीं देखा। इस स्थान-पर खड़े होते ही मेवाड़के इतिहासकी समस्त प्रधान रंगभूमि मनके सम्मुख दिखाई पड़ती है। हमारे दक्षिणभागमें समस्त हिंन्दू जातिके गौरवका स्थान चित्तौड विराजमान है। पश्चिमकी ओर आकाशको भेदन करनेवाले पहाड खडे होकर नवीन राजधानी उदय-पुर और उसके वीरोंकी रक्षा कर रही है, और इस स्थानपरके हम जिस स्थानपर खडे हुए हैं, उसके चरणोंके नीचे जावदा,जीरण,नीमच, निम्बेडा, खेरी और रतनगढ इत्यादि देशोंको देखा जो पठान और महाराष्ट्रोंके द्वारा छीने जाकर उनके हस्तगत हो गये हैं;इस रमणीक देशके निमित्त यथार्थ राजपूतके समान चित्तवालेके हृदयमें किस प्रकारके भावका उदय हो सकता है-किस प्रकारकी आकांक्षाका उदय होगा सो पाठक स्वयं जान सकते हैं।मैं तो अंग्रेजी सत्तर मील एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें घूमता आया हूं। वह परम सुन्दर प्रदेश कहाता है। मृदुलनादिनी बहुतसी नदियां पहाडोंके शिखरपर नृत्य करती हुई चारों ओरको वह रही हैं,चारों ओर प्राचीन सौधावलीसे व्याप्त होकर ग्राम और नगरकी सुन्दरताको प्रकाश कर रही हैं।एक समय यह समस्त ग्राम और नगर मनुष्योंसे परिपूर्ण थे, परन्तु हाय ! इस समय यह मनुष्योंसे शून्य हो रहे हैं। परन्तु किसी २ स्थानपर मानों फिर भी शक्ति और समृद्धिके पूर्व लक्षण दिखाई पडते हैं। इस ऊंचे स्थानपर खडे होकर मुझे एक विशेष प्रयोजनीय कल्पनाका आन्दोलन हुआ था। मेवाडकी प्राचीन राजधानी उदयपुरतक एक विस्तारित नहर खुदवानेका प्रस्ताव मेरे मनमें उदय हुआ, उस नहर[१] खुदवानेके कामसे मेवाडके समस्त क्षेत्रोंमें दशगुणा अधिक धान्य उत्पन्न होगा और यह दुर्भिक्षकी रीति सर्वदाके लिये दूर हो जायगी। मुझे ऐसा विचार हुआ। परन्तु इस अभिप्रायके सिद्ध होनेका उपाय क्या है ? धन कहां है ? उस धनके अभावसे हमारी इस प्रकार अनेक आशाएँ मनकी मनमें ही लीन हो गई हैं। परन्तु हमारा इस समय भी यही विचार है कि यदि नहर खुदाई जायगी तो राणा जो केवल अपना देय कर देते हैं वह बचेगा यही नहीं वरन् वह अपनी प्रजाके ऊपर विशेष

---

(१) कर्नल टाड साहब सर्वदाके लिये राजस्थानको छोडकर अपने देशमें आये और आकर इतिहासको प्रकाश करनेके समय इस स्थानपर अपनी टीकामें लिखते हैं, "इस समय मैं अपनी स्मारक पुस्तकको देखकर इस इतिहासको लिखता हूँ।मैं इस समय भी (इतिहासका छपना समाप्त होनेपर) कई वर्षके लिये इस सुखदाई उपत्यकामें जाकर इस नहरके खुदवानेका समस्त दाइत्व भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हूँ। यद्यपि मैं मेवाडमें एक दिनके लिये भी स्वस्थ नहीं था, तथापि मैं जानेके लिये तैयार हूं" राजपूतोंके बांधव टाड साहबकी उदारता कैसी अद्वितीय है।

दया करेंगे प्रजाके मंगल साधन करनेके लिये विशेष चेष्टा करना हमारा प्रधान कर्तव्य है "।

"यह पाठार नामक सम उच्च देशका शीर्षस्थल उपजाऊ और सजल मट्टीसे पूर्ण है, यहाँ आम, महुआ, और नीम बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं, इस ऊंचे विस्तारित देशके अनेक स्थानोंमें धर्मसम्बन्धीय बहुतसे प्राचीन स्मृतिचिह्न विराजमान हैं। जहाँ कहीं स्वाभाविक झरने उपत्यकापर दृष्टि आते हैं उसी स्थानपर महादेवका लिंग स्थापित देखा जाता है, मैं जिस ऊंचे पर्वतपर चढ़ा था उसके एक कोश दूरीपर अंधकारमय पहाडी मार्गमें शुकदेवका आश्रम है; मैं इस मार्गको नहीं जानता था, तिसपर मेरे साथमें घोर परिश्रम करनेवाला ब्राह्मण रामगोविन्द भी उस समय नहीं था इसी कारणसे मैं शुकदेवके आश्रमको न देख सका। परन्तु मैंने और २ मनुष्योंसे उस आश्रमके सभी जाननेयोग्य विषय पूछ लिये। शुकदेवका आश्रम जिस भाँति जन मानव शून्य और निराला है, उसी प्रकार अनेक भांतिके पुष्पोंसे शोभायमान है, पहाडोंके शिखरोंसे निकली हुई अनेक तरंगिनी आश्रमकी ओर बह रही हैं। उस पहाडके शिखरपर शुकदेवजीकी मूर्ति स्थापित है, उस नदीकी एक ओर " दैत्यका हाड " नामवाला एक ऊंचा शृंग है। यात्री किसी एक विषयका विचारकर अथवा पारलौकिक पुण्यका विचार कर उस ऊंचे दैत्यके हाड़परसे नीचे नदीमें कूदते हैं। उसको वीर कूदना कहते हैं यद्यपि उसपरसे कूदकर सभीकी मृत्यु होजाती है परन्तु कोई २ बच भी जाता है। अधिकतर बहुतसी स्त्रियोंने पुत्रकी इच्छासे इस प्रकार नदीमें गिरकर प्राण त्याग किये हैं। एक मनुष्यने मुझसे कहा कि एक स्त्रीने शपथ की थी कि यदि मेरे पुत्र हुआ तो उसको गोदीमें लेकर मैं नदीमें गिरूँगी। ईश्वरकी इच्छासे उसके पुत्र हो गया तब वह पुत्रसहित उस नदीमें गिर गई थी। आश्चर्यकी बात है कि दोनोंके ही प्राण बच गये। एक तेली कूदा था वह भी बच गया, इसी प्रान्तमें ओंकारनाथका मंदिर है।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि " ६० वर्ष बीते हैं कि चम्बल तक यह समस्त पाठार देश मेवाडराज्यके अन्तर्गत था, परन्तु इस समय कुनेडोंके अतिरिक्त और सभी अंश सेंधियाके हस्तगत हो गये हैं। बाईस ग्रामोंमें कनेरी एक प्रधान नगर है, सौभाग्यवश वह किसी कारणसे फिर राणाके हस्तगत हो गया है। परन्तु बडे कष्टसे महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे इसका उद्धार हुआ है। पहिले इसको अधिकारमें करके शेषमें स्वत्वके लेनेका विचार किया गया। हम इस प्रकारसे समस्त पाठारदेशको प्राप्त करते तो अच्छा होता परन्तु दुर्भाग्यवश उन समस्त अंशोंको वृद्ध जालिमसिंहके मित्र और शान्तिप्रिय लाला जीविलालने जमा कर लिया है। मैं फिर कहता हूँ कि सेन्धियाने इन समस्त देशोंको केवल युद्ध व्ययके प्रतिभूस्वरूपमें राणासे अपने अधिकारमें कर लिया था, यद्यपि वह सामरिक व्यय बारम्बार चुका दिया था तब भी सेन्धियाने इस देशको नहीं छोडा। सुभीता मिलनेपर चम्बलके समस्त पश्चिमांशके पाठार प्रदेश फिर मेवाडके महाराजको दे दिये जाँयगे "।

राजस्थानके परम हितैषी टाड साहबने राजपूत किसानोंमें अफीमकी खेतीकी अधिक वृद्धिको देखकर महा दुःखित होकर कहा था, "विशेष प्रयोजनीय धान्यके बदलेमें अफीमकी जो खेती क्रमशः बढती जाती है प्रबल कानूनके द्वारा इसकी गतिका रोकना अवश्य कर्तव्य है। जब इस देशमें प्राचीन राजाकी प्रजामें पितापुत्र सम्बन्ध मूलक रीतिके अनुसार शासनकार्य होता था, उस समय कृषिकार्यसे राजाका प्रधान कर लिया जाता था और राजा इसका निश्चय स्वयं कर देते थे। कि किस २ भूमिमें किस २ चीजकी खेती होगी। मेवाडके प्राचीन कृषक विधानके सम्बन्धमें एक व्यवस्था यह भी थी कि प्रत्येक किसानकी भूमिमें एक बीघा (पोस्त) अफीमकी खेती होगी। परन्तु हमारे (अंग्रेज़ गवर्नमेण्ट) द्वारा इस अफीमका वाणिज्य एक चेटिया कर लेनेसे अफीमकी खेती सब जगह बहुतायतसे बढ़ गई है, अधिक क्या कहैं जिस देशके किसान किसी समय भी अफीमकी खेती नहीं कर सकते थे इस समय वह भी अफीमकी खेतीकी ओर भलीभांतिसे मन लगाते हैं। हमारी राजनीतिका फल ऐसा नहीं पर इसीसे किसान प्रकृत आहार्य धान्यकी ओर ध्यान न देकर धनके लोभी होकर आप अपने स्वार्थका नाश करते हैं"।

साधु टाड साहब फिर लिखते हैं "कि महामारी और युद्धके द्वारा इस देशके निवासियोंकी जितनी शारीरिक और नैतिक अवनति हुई है, एकमात्र इस अफीमके द्वारा उससे भी अधिक बहुत अंशोंमें अनिष्ट हुए हैं। इस कारण किस प्रकारसे वह सर्वनाश करनेवाली अफीम इस देशमें प्रचालित हुई और किस प्रकारसे उसकी खेती हुई, इस स्थानपर उसके वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं है। बाबर, अकबर, एवं जहांगीर इत्यादिके समान अपनी जीवनीके लिखनेवाले बादशाहोंकी उस आत्मजीवनीको पढ़कर हम जान गये हैं कि देशदेशान्तरोंसे अनेक भांतिके फलफूलोंके वृक्ष तथा वृक्षोंकी लता इस भारतवर्षमें वही लाये थे। उनके इस उपकारसे हम उन बादशाहोंके निकट अवश्य ही ऋणी हैं। यद्यपि तैमूरके वंशधर अपने जन्म और शिक्षाके दोषसे अत्यन्त स्वेच्छाचारी थे और उन्होंने राजपूतानेका महान् अनिष्ट साधन किया था, तथापि उनको हम सच्चरित्र, इतिहासलेखक, नीतिके जाननेवाले तथा योधास्वरूपसे जगत्में अपने समसामयिक समस्त राजाओंकी प्रशंसाको संग्रह करते हुए देखकर अवश्य ही उनकी कीर्तिका कीर्तन करके गौरवका अनुभव करते हैं। मनुष्य जीवनके सुख, स्वच्छन्दता और विलासिता सम्बन्धी सब विषयोंमें तैमूरके वंशधरोंने राजपूतोंके ऊपर सम्पूर्ण विधानता विस्तार की थी। राजपूत केवल कुसंस्काररूपी वेष्टनीमें पडकर इसके सम्बन्धमें कोई उत्कर्ष साधन करनेमें समर्थ न हुए। समरकंदकी राजसभाके साथ करनगाके राजाओंकी विशेष मित्रता थी, उस समरकंदके राजाओंने अवश्य ही ऐश्वर्य आडम्बर और तीक्ष्ण बुद्धिके विषयमें संसारमें विशेष प्रधानता प्राप्त की थी। परंतु भारत विजेता अवश्य ही उस स्थानसे वंशगत शिक्षा प्राप्तिके ऊपर देश भ्रमण और जगत्के अन्यान्य प्रान्तोंके साथ क्रमशः वार्तालाप परिचय और संभाषद्वारा अपनी उस सम्पूर्ण शिक्षाको भली भाँतिसे बढाकर अभिज्ञताके बलसे विशेष

बलवान् हुए थे। और इसीसे जिस समय वह प्रतिज्ञाके द्वारा हिमानीमंडित काकेशससे हिंदुस्थानके समतलक्षेत्रमें आये, उस समय हजरत तैमूरके वंशधर बाबरने अपनी डायरी (दैनिक पुस्तक) में भारतवर्षका कोई दृश्य अथवा कोई घटना उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन बोध होती तो उसीको वह अपने हाथसे लिख लेते थे, किसी लिखनेको वह नहीं भूले थे। उन्होंने मध्यएशियासे इस सुवर्णभूमि भारतवर्षके समस्त विषयोंको भलीभांतिसे देखकर अपनी निरन्तर लेखनी चलाई थी। पृथ्वीके जिस किसी राजाने अपने हाथसे किसी ग्रन्थको निर्माण किया है तो उसमें बाबरका वह आत्मभ्रमण वृत्तान्तरूप साहित्य ही संसारमें अत्यन्त प्रशंसनीय है इसमें कुछ सन्देह नहीं कि प्राणीके सम्बन्धसे हो अथवा उद्भिज सम्बन्धसे हो जो उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन जचता था उसके सम्बन्ध तकको वह इस पुस्तकमें वर्णन कर गये हैं। बाबरने जिस प्रकार वह भ्रमण वृत्तान्त और व्याख्या लिखी है, उस प्रकारसे किसी देशकी किसी पुस्तकमें भी वह सरलभाव और थोडेसे स्थानमें प्रयोजनीय समस्त विषयोंकी रचना दूसरी पुस्तकमें नहीं देखी गई, विशेष करके उन्होंने जिस देशके वृत्तान्तको वर्णन किया ठीक वैसा ही लिखा उस समय लेखको अतिरंजित करके वर्णन करना एक चिर प्रचलितरीतिरूपसे गिना जाता था। पर उसने वैसा न किया। बाबरने जिस २ समय युद्ध किया उसी समयमें उनके जीवन और भविष्य उन्नतिके वक्षस्थलपर आघात हुआ और जिस २ युद्धमें उन्होंने भारतवर्षके सिंहासनपर अधिकार पाया था उन सभी युद्धोंका वृत्तान्त उसमें वर्णन किया गया है"।

बादशाह बाबरके गुणोंके वंशको कीर्तन करनेके पीछे टाड साहब लिखते हैं कि "अकबर बाबरके बताये हुए मार्गपर चले थे, तथा फारिस और तातार देशके किसान और उद्यानपालकोंको भारतमें लाकर उनके द्वारा फारिस और तातार देशके पिश्ता शफताल्द बादाम इत्यादि अनेक प्रकारके स्वादिष्ठ फल उत्पन्न किये थे वह सब फल रजवाडेमें आजतक नहीं थे। बादशाह जहांगीरके द्वारा लिखी हुई आत्मजीवनीको पढनेसे जाना गया है कि उनके शासनसमयमें भारतवर्षमें तमाखू व ताम्रकूट आया था परन्तु सबसे पहिले पोस्तकी खेती किसके द्वारा भारतवर्षमें प्रथम आरम्भ हुई और इससे फिर अफीम बनकर तैयार हुई इसका हमने कहीं भी कुछ वर्णन नहीं पाया। इसका औषधरूपमें व्यवहार बताकर कितनी ही प्राचीनता प्रकाशित की जाय, किन्तु थोडे दिनोंसे

(१) बहुतसे लोग कहते हैं कि अफीम, बाबर, अकबर, व जहांगीर सम्राटोंके द्वारा भारतवर्षमें लाई गयी, सो यह उनकी भूल है, प्राचीन समयमें भारतमें अफीमकी खेती होती थी, आयुर्वेदके मतमें इसका औषधि स्वरूपमें व्यवहार होता था, संस्कृत भाषामें इसको "अफेनम्" "खसखस रसम्" "निफेणम्" और "अहिफेणकम्" कहते हैं, इसका गुण राजनिघन्टु नामक प्राचीन पुस्तकमें लिखा है, "सन्निपातनाशित्वं शुक्रबलमेहकारित्वञ्च।" यह अफीम चार प्रकारकी होती है, जैसे शुक्लवर्ण ? अन्नजीर्णताकारक इसको जारण कहते हैं (२) कृष्णवर्ण-यह मृत्युकारक है, और इसको मारण कहते हैं (३) पीतवर्ण। यह वीर्य स्तम्भनकारक है, इसको "धारण" कहते हैं, (४) कपूरवर्ण-यह मलसारक है, और इसको 'सारण' कहते हैं।

संसारमें बुरे व्यवहारोंमें वर्ती जाती है, तीन सौ वर्षके पाहिले यह संसारमें नशेके लिये नहीं व्यवहार होती थी, हिंन्दुस्थानके किसी प्राचीन वीर इतिहास वा काव्यके बीचमें इस अफीमका कोई लेख नहीं मिलता। आमंत्रित गणोंको पहिले "मनौआका प्याला" नामक पानपात्र दिया जाता था किन्तु उसमें अमल पानी वा अफीम नहीं दी जाती थी मनौआ वा मनोहर प्याला अथवा पीनेके पात्रमें पाहिले फूलका अर्क वा पुष्पका मधु ही पीनेको दिया जाता था, आजकल उसके स्थानपर अफीम दी जाती है। वर्तमान समयके अनुसार अफीम शुद्ध करनेकी रीतिके पाहिले पोस्तकी डंडीके द्वारा जलके योगसे पीते थे। सभी लोग उसको तिजारो कहकर पुकारते थे--राजपूतानेके दूरदेशोंमें अब भी मनुष्य कुसंस्कार बशसे वर्तमान रीतिको न जानकर उक्त प्राचनि रीतिसे अफीम खाते हैं। अफीमकी खेतीके सम्बन्धमें कर्नल टाड लिखते हैं "पहिले चम्बल और सिप्राके बीचवाले भूखंडमें दोनों नदीके उत्पात्तिस्थानसे मिलनेके स्थानतक जो प्रदेश दुआब नामसे पुकारा जाता है वहां अफीमकी खेती होती थी। यद्यपि पुरानी कहावतसे हम मध्यभारतके उक्त स्थानको अफीमका आदि क्षेत्र कह सकते हैं किन्तु अब तो केवल वहा नहा वरन् समस्त मालवे और राजपूतानेके अनेक स्थानोंपर विशेष कर मेवाड और हाडौती प्रदेशके बहुतसे भागमें अफीमकी खेती होती है। कुम्भी, जाट, बनियें और ब्राह्मण यह सभी अफीमकी खेती करते हैं। परन्तु कुंभियोंसे और सब लोग इसमें हार जाते हैं, कारण कुंभी ही पहिले पहिलके अफीमकी खेती करनेवाले हैं, इसीसे वह अफीमकी खेतीकी रीतिको भलीभांतिसे जानते हैं अतएव वह अन्य अफीमकी खेती करनेवालोंसे अफीमके वृक्षसे पांच अंशका एक अंश अधिक अफीम निकालते हैं"।

यह एक आश्चर्यका विषय है कि जैसे २ रजवाडेमें सुख और शांति दूर होती जाती थी, वैसे२ अफीमकी खेती भी बढती जाती थी। युद्ध और महामारी और दुर्भिक्षने जितना अपना प्रताप फैलाकर रजवाडेको जनशून्य कर दिया, इस सर्वनाशक अफीमकी खेतीसे भी उतना ही उत्कर्ष साधन हुआ था। मुगलशासनके सूर्यास्त होनेके पीछे जिस प्रकार महाराष्ट्रोंने भारतवर्षमें अपना बलविस्तार करके राजपूतानेको विध्वंस कर दिया था उसी प्रकार किसान लोग धीरे २ अन्य खेतीके बदलेमें केवल गेहूँ, जौ, और चनेकी खेती करनेमें प्रवृत्त हुए थे; अन्तमें जब मरहठे पठान और पिंडारियोंके अत्याचार इतने बढ गये कि किसानोंने सब खेतीको छोडकर केवल अपने कुटुंबको पालने योग्य गेहूँ आदिककी खेती की और सब प्रकारकी खेती छोडकर एकमात्र अफीमकी खेतीमें मन लगाया। अफीमकी खेती बहुत थोडी भूमिमें हो जायगी और महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंसे इसकी रक्षा भलीभांतिसे कर सकेंगे, जब लूटनेवाले पठान इसको लूटनेके लिये आवेंगे तब इसके बदलेमें कुछ थोडासा रुपया दे दिया जायगा, परन्तु गेहूँ इत्यादिकी खेती करनेमें उसकी रक्षाके लिये बहुतसे मनुष्योंका प्रयोजन है और जब महाराष्ट्रोंकी अश्वारोही सेनाका दल एक साथ ही खेतमें आ जायगा तब समस्त धान्यके नष्ट होनेकी सम्भावना होगी; इसीसे किसानोंने एकमात्र अफीमकी

खेतीको ही महाराष्ट्रोंके उपद्रवके समयमें उपयोगी जाना था । मेवाड़की सर्वसाधारण प्रजापर जितने अत्याचार आरम्भ हुए थे आश्चर्यका विषय है कि मालवेमें उस प्रकारसे अफीमकी अधिक खेती होती थी । संवत् १८४० सन् (१७८४ ईसवी) में अत्याचार और उपद्रवोंके आरंभ होनेसे प्रजाने अन्यत्र भागना प्रारम्भ किया; संवत् १८५७ सन् १८०० ई० में प्राणभयसे अन्य देशमें भागनेवाले मनुष्योंकी संख्या अत्यन्त बढ़ गई एवं क्रमसे संवत् १८७४ सन् १८१८ ई० में सारा देश एकबार ही जनशून्य हो गया । जितनी अफीम तैयार होती थी उतना ही उसका व्यवहार भी बढ़ता जाता था । विशेष करके विदेशमें भी इस अफीमकी खानगी बहुतायतसे बढ गई " ।

" भागनेवाले मनुष्योंने चम्बलके किनारे मन्दसोर खाचरोदा नीछ और अन्यान्य निम्न मालवेदेशमें गमन किया । इन्होंने वहाँ जाकर आपासाहब और उनके पिताके आश्रयमें शान्तिसहित निवास किया, आपा साहबने उस उपजाऊ मालवेमें स्वयं जाकर खेती की थी । आपासाहबने पाहले जो सब कूपादि खुदवाकर समस्त कृषि-क्षेत्रका उत्कर्ष साधन और उन सब कूपादिसे कृषिकार्य किया था; नवीन किसानोंको उन सब क्षेत्रोंमें खेती न करने दी थी तब इन्होंने उनको रुपया दिया और जिस भूमि-पर उपजाऊ न होनेके कारण उसमें किसान खेती नहीं करते थे वही सब भूमि उनको खेती करनेके लिये दी । उन्होंने उसी धनसे कुएँ खुदवाकर खेती करनी प्रारंभ कर दी । इन उपनिवेशी किसानोंने गेहूँ जौ इत्यादिकी खेतीको एकबार ही छोडकर केवल मकईकी खेती की थी और उसी खेतमें अफीम और गन्नेकी खेती आरम्भ कर दी " ।

किस प्रकारसे अफीमकी खेती होती है उसके सम्बन्धमें साधू टाड साहब लिखते हैं " खेतमें मकई तथा सनकी खेतीके हो चुकनेपर उसकी जडें उखाड कर पहिले जला दी जाती हैं । और पीछे सब खेतमें जल देकर उसको भली भांतिसे सींचते हैं, तब उसमें हल चलाया जाता है ।

गोबरके खादको बहुत दिन पहिले तैयार कर रखते हैं । वर्षाऋतुमें एक बडा भारी गड्ढा खोदकर उसमें गोबरको रखते हैं और बीच २ में बाँससे उस गोबरके छूछडोंको मिला देते हैं।जब उस गोबरका रस बन जाता है तब उसको खेतमें देते हैं, जिस किसानोंके गौ नहीं होती और जो गोबर मोल लेनेको समर्थ नहीं होते वह खाद देनेके लिये पशुपालकोंके साथ बंदोबस्त करके एक २ दल बकरी भेडोंका रात्रिके समय खेतमें बाँध रखते हैं । इसी कारण नियमित आहारसे पशुपालकोंको पैसा देते हैं।वह पशु खेतमें जो मल त्याग करते हैं उसीका खादरूपसे व्यवहार होता है । छ सात बार हल और मोया दिया जाता है । जिससे जल सुभीतेके साथ जा सकै इसलिये कुछेक ऊँचा करके मट्टीकी खाद दी जाती है । पीछे उसमें बीज बोकर जल देते हैं । उक्त जलदानके सातवें दिन पीछे या ग्यारहवें दिन बीज अंकुरित होता है और पचीस दिनमें नये ९ पत्ते निकल कर शोभायमान हो जाते हैं और जब सूखी हुई देखते तभी उसमें फिर जल देते हैं ।

मट्टीके कुछेक दूर होनेपर किसान अपने कुटुम्बसहित खेतमें आकर प्रत्येक वृक्षको उखाडकर श्रेणीबद्धभावसे आठ इञ्च अलहदा एक २ वृक्षको लगाते हैं और वृक्षोंके चारों ओर मट्टी लोहेकी शलाकासे भर देते हैं। इस समयमें वृक्षोंका परिणाम तीन इञ्च ऊंचा होता है। एक महीनेके पीछे कुछ थोडा २ जल देना प्रारंभ करते हैं, मट्टीके सूखते ही फिर वृक्षोंके चारों ओरकी मट्टी गोड दी जाती है, दस दिनके पीछे फिर एक वार जलसे सींची जाती है, दो चार दिनके उपरान्त वृक्षके दो एक स्थानोंपर कलियें निकल आती हैं। कलियोंके निकलनेपर फिर एक बार वृक्षकी जड़में जल दिया जाता है जल देनेके २४ वा ३६ घंटे पीछे वृक्षके समस्त फूल खिल जाते हैं फूलकी आधी पखडियोंके गिरते ही किसान फिर वृक्षकी जडमें जल देते हैं। जल देनेके पीछे सभी फूलोंकी बची बचाई पखडियें गिर पडती हैं तथा फूलके नीचेका बीजाधार क्रमशः शीघ्रतासे बढ जाता है। थोडे ही समयमें उन सब फूलोंके गिर जानेपर उस बीजाधारके गात्रपर एक प्रकारका सफेद चूर्ण दिखाई देता है, किसान उसको देखकर जान जाते हैं कि अब शीघ्र ही पोस्तकी डंडीको भेदन करना होगा। ”

उस डंडीको तीन भागोंमें विभक्त करते हैं। एक भागमें तो उस प्रकारसे बीजके आधारका गात्र वेधन किया जाता है। जिस अस्त्रसे छेदन करते हैं वह छोटा त्रिमुखा और शलाकाके समान होता है।जिससे वह अस्त्र भलीभाँतिसे बीजाधारमें प्रवेश न कर सके और जिससे सार रस बीजाधारमें न रहने पावे, इस कारण वह बड़ी सावधानीसे उस भेदन कार्यको समाप्त करते हैं। बीजाधारके नीचेसे ऊपरके भागतकको जब चीर डालते हैं तब दूधके समान रस निकलकर बीजाधारके ऊपर जमता जाता है। क्रमानुसार तीन दिनतक सूर्यके उत्तापके समय प्रत्येक वृक्षमें तीन वार करके उपरोक्त प्रकारसे भेदन कार्य करते हैं। प्रातःकाल ही उस रसको छुरीसे उस बीजाधारपरसे छुटाते हैं। चौथे दिन प्रत्येक बीजाधारपर फिर एक बार पूर्वप्रकरणके अनुसार भेदन करके देखते हैं कि इसमें और भी रस है या नहीं। वह जमा हुआ रस जिससे सूख न जाय, इसलिये प्रतिदिन प्रातःकाल ही मसीनाके तेलके वर्तनमें भिगोकर रखते हैं, बीजाधारसे समस्त रस जब बाहर हो जाता है तब उसमें केवल बीज ही रह जाता है। उस समय समस्त बीजाधारके वृक्षोंको उखाड़कर किसान अपने २ घर ले जाते हैं और मट्टीमें रखकर उसके ऊपर कुछ एक जल सींच एक वस्त्रसे ढककर उस भावसे प्रातःकालतक रखते हैं। पीछे प्रातःकाल ही पशुओंके पैरोंसे उन सब बीजाधारोंको दबाया जाता है, तब उसमेंसे सब बीज बाहर निकल जाता है। किसान उस बीजको पोश्तका तेल तैय्यार करानेके लिये तेलीके घर भेज देते हैं और बीजका अन्य पतित अंश जला डालते हैं, कारण कि पशुओंके उस विषैली वस्तुके खानेसे घोर अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। मेवाडके अन्य तेलोंकी अपेक्षा वह तेल अधिक प्रकाश देता है। किसानोंने जो हिसाब किया है कि एक मन बीजसे दो सेर अफीमका रस तैयार होता है, एकसौ बारह मन बीजका मूल्य इस समय १२५) रुपया है ”।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि मालवेकी एक बीघा जमीनमें पावसे पौन-सेर तक अफीमका रस बनता है। किसान इस प्रकारसे रस संग्रह करके व्यापारियोंको प्रचलित मूल्यके अनुसार अफीम बेचते हैं। वह व्यापारी उस अफीमके रसको कपडेकी थैलीमें रखकर घर ले जाते हैं, खरीदनेवाले पहिले पोस्तके पत्तोंका संग्रह कर लेते हैं, दो तीन इञ्च पोस्तके पत्ते बिछाकर उसपर पोस्तके डोरोंमेंसे अफीमको बिछाकर उन पत्तोंको मोडकर ढक देते हैं और पाँच महीनेतक इसी अवस्थामें रहने देते हैं, यदि रस पतला है वा तेल मिला है तो दश अंशका सात अंश सार पदार्थ रह जाता है और यदि शुद्ध रस हो तो उसमें सार पदार्थ आठ अंश निकलता है। व्यापारी लोग पीछेसे उस सार पदार्थको राजपूतानेमेंसे खरीदते और विदेशमें ले जाकर बेचते हैं। मध्यम दरजेकी अफीमके सम्बन्धमें टाड साहबने पीछेसे लिखा है कि "माही नदीके किनारे कन्थल नामक प्रदेशमें (जिसमें प्रतापगढ देवलिया शामिल है) बहुतायतसे अफीम होती है और वहाँके किसान लोग उसमें एक वस्तु मिलाते हैं वह मिली हुई अफीम चीनमें मालवेकी अफीम कहाकर बिकती है और उसका मूल्य भी कम मिलता है, नीचे लिखी हुई रीतिसे वह द्रव्य मिलाया जाता है उत्तम गुड और गोंद बराबर ले, उससे आधी उसमें अफीम मिलाय चूल्हेपर चढाते और नीचे भलीभाँतिसे अग्नि प्रज्वलित करते हैं; उन सब वस्तुओंके भलीभाँतिसे मिल जानेपर कढाईको उतार लेते हैं, ठंढी होनेपर उसको पोस्तके बीचमें रखकर तेलकी हाँडीमें रखते हैं, यह अफीम अत्यन्त हानिकारक है, राजपूतानेके लोग इसका कभी सेवन नहीं करते"। संवत् १८५७ में अफीमका बाजार १६ से इक्कीस रुपये सलीमशाही एक ओलियन था संवत् १८७६ में ३८ वा ३९ रुपये तक है।

टाड साहब फिर लिखते हैं "पिछले चौवालीस ४४ वर्षसे इस हानिकारक अफीमकी खेती जो इस देशमें प्रबल हो चली है, ऊपर जिसका विवरण लिख आया हूँ वही अनिष्टकारक अफीमका विवरण है, बृटिश गवर्नमेंट इस समय अपनी इस अफीम-की खेतीको बढाना चाहती है, किन्तु उसमेंसे इस रीतिको छोड एक कानून बनावे और उसके जरियेसे यह महाहानिकारक अफीम तैयार न हो सके ऐसी व्यवस्था कर दे। ४४ वर्षोंसे विना मिलावकी अफीम जिस भाँति बनती आई है इस रीतिके चलानेकी धारा जारी करे तो आगे होनेवाले राजपूत इसका सेवन न करेंगे और सद्व्यवहार और सुन्दर व्यवस्थाके हो जानेसे अवश्य ही मेरी प्रशंसा करेंगे।

हमारी खमेली अफीमके व्यवसायको छोड देनेसे हानि होगी, यह नहीं मानना चाहिये; वरन् इस कामको करना हमारा धर्म है यह मानना चाहिये, अफीमके सेवन करनेसे प्रजाकी शारीरिक और आर्थिक हानि होती है और प्रतिदिन अवनति ही होती जाती है, इस खेतीके बदले रुई, नील, ईख और उत्तम फसलकी खेतीके बढानेमें सहायता करनेसे सर्व साधारणकी आयु धन और बलकी वृद्धि हो सकैगी। मैं राज-पूतानेको राजनैतिक पतनके मुखसे उद्धार किया चाहता हूं, किंतु केवल राजपूतानेकी

स्थाई रक्षा करनेसे क्या होगा; उसके नैतिक बल और उसके अन्य स्थानोंमें भी इसकी खेती रोकनी चाहिये; कविवर वैरन साहबने ग्रीसके सम्बन्धमें कहा है।

"T' is Greece but living Greece no more"

इसको ग्रीस कहते हैं-किन्तु जीवित ग्रीस अब नहीं है, हम भी उन्हींके समान रजवाडेके सम्बन्धमें कह सकते हैं कि यह रजवाडा कहा जाता है, परन्तु यह जीवित रजवाडा नहीं है।

अफीमके सेवनसे युवा अवस्थामें ही मन और बुद्धिकी स्फुरणशक्तिकी हानि होती है शरीर आलसी और असाहसी हो जाता है, मैं अपनी बुद्धिके अनुसार जो इस विषयमें कहता हूँ उसको अपनी शक्तिके अनुसार पूर्व कही हुई बातको काममें लानेकी चेष्टा भी करता हूँ। मैंने सिंहासनपर विराजमान राणासे लेकर सामान्य दरजेके मनुष्यतकके इस बातकी शपथ करा ली है कि वह कभी भी अपनी प्यारी संतानको इस प्राणनाश करनेवाली अफीमका सेवन न करावैं। किन्तु केवल शपथ करा लेनेसे ही क्या होगा जबतक कि वह अफीमकी खेतीका करना न छोडेंगे।

यदि किसान लोग इस जमीनमें इस खेतीके बदले अन्न गेहूं आदिकी खेती करैं तो इसमें बडा लाभ हो।

पञ्चम अध्याय ५.

धारेश्वर-रत्नगढ खेरी-चारणोंका उपनिवेश-छोटा अतवा-डूँगरसिंह-शिवसिंह-कालामेव उमेदपुरा-वहांके सामन्त-सिंगोली-भवानीका मंदिर-राणा मुकुलकी स्मारक लिपि-हाडा जातिका प्रवाद वाक्य-आल्हहाडा।

महात्मा टाड साहबने १४ फर्वरीको धारेश्वर नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि "कुनेरोंसे धारेश्वरतक डेढ कोशका रास्ता क्रमानुसार नीचेको आया है, उस डेढ कोशके रास्तेमें आधे स्थानकी मट्टी उपजाऊ है और आधे स्थानमें पत्थरोंके बडे २ टुकडे पाये जाते हैं। धारेश्वर ग्राम एक अत्यन्त सुन्दर रमणीक स्थानमें बसा हुआ है, सामने ही निर्मल जलवाली नदी बह रही है,इसके दाहिनी ओर ऊंचे २ वृक्षोंका शोभायमान वन है। कितने ही कछवाहे राजपूत यहांकी पृथ्वीके अधिकारी हैं। परन्तु वह करस्वरूपसे बहुतसा रुपया कुनेरोंके अधीश्वरको देते हैं। सूर्योदयके होते ही हम बहुतसी छोटी २ कुटियोंसे पूर्ण ग्रामको लांघकर आये, देखा कि बहुतसी हरिणियां हमारी ओरको देखती हुई धीरे २ जा रही हैं, वह मार्ग इतना पथरीला है कि उसपर घोडेपर सवार होकर हरिणियोंका शिकार करना असम्भव है"।

रत्नगढ १५ फर्वरी–खेरी, यहांसे साढे आठ कोश दूर है । धारेश्वरसे एक कोश दूर कुनेरोंकी सीमाका अन्त हुआ और खैरीके चौरासी ८४ ग्रामोंकी सीमा आरंभ हुई है, यहांसे खेरीतक मार्ग क्रमानुसार धीरे २ ऊँचा हो गया है, परन्तु उसकी ऊंचाई मेवाडके आभ्यन्तरिक समतल क्षेत्रमें एकसौ फुट ऊंची नहीं होगी । मार्गके चारों ओर जंगल है और पत्थरोंके टुकडे उसमें विराजमान हैं, परन्तु स्थान २ पर मार्गके आस-पास काले रंगकी श्रेष्ठ मट्टी पाई जाती है । हम बराबर धारेश्वर " नाला " नामक एक छोटी नदीके किनारे होकर गये, वह नदी एक ऊंचे शिखरपरसे बडे तीक्ष्ण वेगसे नीचेको गिरकर अद्भुत दृश्य दिखा रही है, कितने ही छोटे २ ग्रामोंमें होते हुए हम अन्तमें चारणोंके एक उपनिवेशमें जा पहुँचे । वहाँ मुरलाके रहनेवाले कितने ही बन्धुओंके साथ हमारा साक्षात् हुआ । जो चारण बंदी करनेके स्वत्वसे स्वत्ववान थे वह लोग उसको नहीं भूले केवल यहाँके चारण स्त्रियोंमें सभीको वृद्धा कहकर उनके द्वारा उस प्रकार संगीत करते हुए वह हमको बंदी न कर सके–इसीसे वह उतने प्रसन्न नहीं हुए । मैं यहाँकी वृद्धाचारण स्त्रियोंके कलशेमें पाँच रुपये भोजन करनेके लिये देकर इस स्थानसे चला आया खेरीके किमासदार शिखरपरके रहनेवाले अपने किलेमेंसे दो सौ अश्वारोही और पैदल सेना लेकर हमारा सत्कार करनेके लिये आगे बढे वह वृद्धलाल जीवेलालके कुटुम्बी थे, वह जैसे बुद्धिमान् थे उसी प्रकार भद्र मनुष्य थे । हमारे सब डेरे नगरके पास ही पडे हुए थे। वह पंडित मुझे बडे आदर सत्कारसे वहाँ ले गये। हमारे परम मित्र लालजीने तथा उनके अधीश्वर प्रभुने सेंधियाके प्रतिनिधि स्वरूपसे (जिन सेन्धियाके डेरोंमें हम बारह वर्षतक रहे थे) अभ्यर्थना करके बिदा ली । और जानेके समय वह मुझे किलेमें आनेके लिये कह गये, परन्तु उस किलेमें प्राचीन कोई वस्तु देखने योग्य नहीं थी और इनका निमन्त्रण स्वीकार करनेसे इनके अधीश्वर मन ही मनमें विरक्त होंगे, इस कारण मैंने उस निमन्त्रणको स्वीकार नहीं किया " ।

"रत्नगढ़ खेरीके चौरासी ग्राम हैं संवत् १८२८ सन् १७७२ईसवीमें युद्धके खरच-के पलटेमें माधोजीने सेन्धियाको यह देश दिया था, संवत् १८३२ तक उनके राजस्व-की रीतिके अनुसार हिसाब किताब रक्खा गया । इसके पीछे वह देश सेन्धियाके जामाता बरजी तापको दे दिया, इसी कारणसे वह मेवाडसे सर्वदाके लिये छीना गया है मेवाडके सोलह सर्वप्रधान सामन्तोंमेंसे वेगूके सामन्तकी विश्वासघातकताके कारण यह देश राणाके अधिकारसे निकल गया । यह स्थान उक्त वेगूके सामन्तके अधिकारी देश-से लगा हुआ था सामन्तने राजभक्तिकी जडमें पदाघात करके इसको अपने अधिकारमें कर लिया, राणाने सेंधियाको उक्त सामन्तको निकालकर चौरासीपर अधिकार करनेके लिये सहायता करनेको कहा । महाराष्ट्रनेता सेन्धियाने उस सुअवसरमें केवल चौरासी पर ही नहीं वरन् वेगू देशतकको अपने अधिकारमें कर लिया और अन्तमें वेगूके सामन्तसे बहुतसा धन ग्रहण किया और सामरिक व्यय करनेके लिये वेगू देशके ४० ग्राम गिरोंरूपसे अपने हाथमें कर लिये । इस स्थानसे प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त रमणीक दिखाई देता है । पंडितजीने ऊँचे शिखरपरसे खडे होकर नीचेको खेरीतक देखा (वह

कह सकता था कि मैं उन सबका राजा हूं जो मेरी दृष्टिके नीचे हैं) यदि सफल होनेकी संभावना होती तो इस देशमें उसका कैसा अधिकार है उसके सम्बन्धमें मैं विवाद कर सकता था "।

कर्नेल टाड साहब चार कोश दूर छोटे अतवा नामक स्थानमें जाकर लिखते हैं, "कि यहांका किला पर्वतकी जडमें बना हुआ है और भलीभांतिसे उत्तम रीतिसे बना हुआ दिखाई आता है। किलेके जिस ओर सरलतासे जाया जाता है, उसी ओर फिर नवीन गठन हुआ है। राज्यकी साधारण शांतिके भंग होनेके समय इसका गठन कार्य स्थापित था। परन्तु वास्तवमें यदि दो तोपोंसे इस किलेके ऊपर क्रमानुसार गोलोंकी वर्षा की जाती तो यह संदेह होता है कि २४ घंटेतक इस किलेकी रक्षा हो सकती है या नहीं; कारण कि किलेके बहुत थोरे ही शिखरके ऊपरी भागसे किलेके बीचका हिस्सा सब दीखता था। हम पथप्रदर्शकसे पूछते हैं कि यह किला किसी समय शत्रुओंसे घिरा था या नहीं, उसने कहा कि नहीं, यह किला तो कुमार है जबतक कोई किला शत्रुओंसे न घेरा जाय तबतक वह किला कारा रहता है " हमने शिखरके ऊपरी भागपर खडे होकर प्रकृतिका परम रमणीय दृश्य देखा।

"उस किलेसे दो कोश दूरपर हम और एक ऊंचे शिखरपर स्थापित अमरो नामक ग्राममें गये, वहांसे बाई ओरको तारागढ देखा। उस किलेमें एक प्राचीन खुदी हुई लिपि है यह जानकर एक पण्डितको उस लिपिके लानेके लिये भेजा। आधे कोशसे चलकर हमने और भी कुछ एक ऊंचे शिखरको देखा और सुना कि उस शिखरसे क्रमशः पाठारकी सीमा चम्बलके किनारेतक समाप्त हुई है "।

"छोटा अतवा देश भी वेगूके मेघावत सम्प्रदायके अधिकारमें था, अधीश्वरका नाम डूँगरसिंह है। यह भी मेरे साथ यहाँ आकर मिले। यही कुछ काल पहिले पाठारमें सर्व प्रधान दस्युरूपसे गिने जाते थे। उन्होंने अत्यन्त तस्करता करनेके लिये यद्यपि इस समय कुछ गर्व नहीं किया, परन्तु उस कामसे मनुष्य उनपर घृणा करेंगे यह भी नहीं विचारा। यद्यपि वह उस देशके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्ततक सर्वोपर छापा मार लूटते रहते थे, परन्तु विशेषकर मरहठोंपर ही अधिक अत्याचार और उपद्रव करते थे। उनके पूर्व पुरुष 'कालामेघ' कहलाकर प्रसिद्ध हुए थे। इन्होंने भी उसी भांति कीर्ति पाई। इनके नामसे आजलों इस प्रदेशके मनुष्य काँपते हैं—"डूँगरसिंह आया" इस शब्दसे सभी व्याकुल हो अपने धन और प्राणोंकी रक्षाके लिये उद्योग करते हैं। मरहठोंके साथ इन डूंगरसिंहके विवादका विशेष कारण था, मरहठोंने ही उनके पितासे नादोला और उक्त चौरासी गांव छीन लिये थे और सेन्धियाने उनके पहाडी देश अपने हस्तगत कर लिये थे, इसी प्रकारसे अन्तमें हुलकरके हस्तगत हुए। परन्तु डूंगरसिंहके पिताने हुलकरको ऐसा भडका दिया कि उसने अपने नौकरोंके साथ मिलकर प्रजापर घोर अत्याचार करने प्रारंभ कर दिये। अंतमें हुलकरने उनको चारों ग्रामोंका अधिकार वंशानुक्रमसे दे दिया। वीस वर्षके

बीतनेपर वह चारों ग्राम फिर छीन लिये गये तब वह अस्त्र शस्त्र धारण कर अपने पुत्र डूंगरसिंहको लेकर सुसज्जित हुए। यह अपने कुटुम्बकी निर्विघ्नतासे रक्षा करनेके लिये महापुराके राजाके समीप जाकर नंगी तलवार हाथमें लिये शत्रुओंसे बदला लेनेको प्रवृत्त हुए। पिता श्योसिंह, पुत्र डूंगरसिंह, और भी अनेक वीर तेजस्वी राजपूत संहारमूर्ति धारण कर बदला देनेके लिये प्रत्येक ग्रामको लूटते हुए अंतमें मालवेके भीतर जा घुसे और वहांकी समस्त धन सम्पत्तिको लूटकर अपनी पार्वत्य वासस्थली छोटे अतवामें ले आये परन्तु श्योसिंह घोर शत्रुओंसे घिर रहे थे। उनके शत्रु उनको विपत्तिमें रखनेकी सर्वदा चेष्टा करते थे। एक दिन श्योसिंह अपने पुत्र सहित बहुतसे श्रेष्ठ बैल लिये अपने ग्रामको जा रहे थे कि इसी अवसरमें महाराष्ट्र नेता भाउसिंहने गुप्तभावसे रक्खी हुई एक अश्वारोही सेनादलके साथ अचानक आकर इनपर आक्रमण किया। पिता पुत्र दोनों ही उत्तम घोडोंपर सवार थे, इस कारण शत्रुसेनाकी संख्या अधिक देखकर बडी शीघ्रतासे घोडा चलाकर मंडलगढ नामक ग्रामकी ओरको चले। उस महाराष्ट्री घुड-सेनाने भी उनका पीछा किया। परन्तु पिता पुत्र दोनोंने ही एक नालेके भीतरको घोडे चला दिये, पिता श्योसिंहका घोडा जलमें डूब गया। इस कारण वह महाविपत्तिमें पडे, यह बारम्बार जलमेंसे उछलते कूदते थे कि इसी अवसरमें एक महाराष्ट्रने एक बडा तीक्ष्ण भाला इनकी कमरमें मारा, जिसके लगते ही इनका प्राणपक्षी उड गया। युवक डूंगरसिंह अपने पिताकी अपेक्षा सौभाग्यशाली थे इस कारण वह शत्रुओंका तिरस्कार करते हुए सबके देखते देखते नालेके पार होगये। महाराष्ट्रोंको उस प्रकारसे नालेके पार होनेका साहस न हुआ। अन्तमें डूंगरसिंहने नालेसे अपने पिताकी लहाशको निकालकर एक कपडेमें बांधकर घोडेपर रख लिया और आधी रातके समयमें वहांसे चलकर अपनी पितृभूमि नदोबाईमें आकर उन्होंने पिताके शवका सत्कार किया। यद्यपि मरहठोंने वीर तेजस्वी शिवसिंहके प्राण नाश किये थे परन्तु उससे अशान्तिकी कुछ भी घटती न हुई, वरन् डूंगरसिंहके हृदयमें प्रतिहिंसाके प्रज्वलित होते ही वह अशान्ति और भी बढ गई, अंग्रेज गवर्नमेंटके इस शान्ति स्थापनके पूर्व कालतक डूंगरसिंहने उसी प्रकारसे घोर अत्याचार मरहठों और प्रजापर किये। जब डूंगरसिंहसे टाड साहबने कहा कि नादोवाईके प्रधान कर्मचारी गणोंके साथ आप अनेक प्रकारसे कठोर उपद्रव करते हैं, तब उन्होंने बडी सरलतासे उत्तर दिया कि जैसे होगा वैसे हमें अन्त तो संग्रह करना ही होगा? महाराष्ट्रगण हमारी पितृभूमिपर अधिकार किये हैं, इसी कारण उन्होंने चोरी करनी प्रारंभ की है। मैंने महाराष्ट्रोंसे कुछ थोडी सी भूमि लेकर फिर डूंगरसिंहको दे दी ";

साढे चार कोश दूर सिंगोली नामक स्थानमें १७ फर्वरीको जाकर कर्नल टाड साहबने लिखा है " कि यह आन्तरी नामक जिलेका एक उपविभागका पट्टेका प्रधान नगर है। इसके चारों ओर पर्वत शोभायमान हैं। भामूनी नदी इस देशमें बहती है। यहांकी भूमि उपजाऊ है इस कारण अनेक प्रकारका धान्य यहाँ उत्पन्न होता है। पाठार ग्रामकी कुटियोंकी दीवारें मट्टीकी बनी हुई बडी ऊँची हैं और उनकी छतें फूससे छाई

हुई हैं। अधिक क्या कहें उमेदपुरा नामक जिस ग्राममें स्थानीय सामन्तके चचा रहते हैं, उनके रहनेका स्थान भी सर्वसाधारणके समान है जिस कुटीमें विलायतके दीन दरिद्री किसानतक भी नहीं रह सकते। अत्यन्त दीनदशा और शोचनीय अवस्था होनेपर भी स्थानीय सामन्त अपने अधीश्वर प्रभु वेगू सामन्तके सहित बृटिश एजेण्टकी ओर सम्मान दिखानेके लिये अपने पुत्र भतीजे और पन्द्रह कुटुम्बियोंके साथ आये, इतनी शोचनीय अवस्था क्यों थी वह यही कि ऊंचे वंशमें जन्म था और वंशका ऊंचा भाव किसी प्रकार भी लुप्त नहीं हो सकता, यह बात उमेदपुरावाले पहाडी सामन्तों द्वारा विलक्षणरूपसे प्रमाणित हुई है। राजपूत मृगयाके समयमें जिस प्रकार शब्जरंगका अंगरखा और उसी रंगकी पगडी बांधते थे, उमेदपुराके सामन्त भी उसी वेशसे बर्छी हाथमें लेकर एक बलवान घोडेपर सवार होकर आये थे। घोडेका पहरावा भी उनके प्रभुके समान आडंबर शून्य था। उन सामन्तके नौकर भी उनके साथ पैदल आये, वे सब पाठारकी बनैली हरिणियोंके समान सदा प्रसन्न चित्त थे और विचार उनका चिन्ताहीन था. इस बातको वह कुछ भी नहीं जानते थे कि विलासिता किसको कहते हैं, वह डेरोंतक हमारे साथ आये, तब मैंने सामन्त और उसके पुत्र और भतीजेको बहुत सुन्दर लालरंगकी पगडी और कितनी ही विलायती बारूद उपहारमें देकर उसको बिदा किया। उन्होंने भी महाप्रसन्न होकर मुझसे बिदा ग्रहण की। बीचौरसे जो मार्ग मेवाडके मैदानसे पाठारको जाता है उसका यह कालामेव वेगूवाला अधीश्वर है।

"सिंगौली जैसा स्थान है अथवा यह जिस भावसे स्थापित हुआ है; इससे इसको एक अच्छा नगर कहा जा सकता है। इसके चारों ओर अभेद्य दीवारें हैं; यहां पन्द्रह सौ मनुष्योंके घर बने हुए हैं। यहांके अधीश्वर पंडित हैं। सुशासनके प्रभावसे इस देशके चारों ओर अराजकताके विराजमान होनेपर भी इन्होंने अपने अधीनके देशको सर्वगुण संपन्न कर दिया था। नगरके बीचो बीचमें आलूदाडाका बनाया हुआ किला विराजमान है। पंडितजीने उसकी दीवारसे लगा कर एक नवीन सुन्दर महल बनाया उस महलके चारों ओर ऊँची २ दीवारें हैं। इसका व्यास प्रायः एक कोशका है। उत्तर पश्चिम प्रान्तमें आध कोश दूरीपर विजयसेनी भवानीका मंदिर टूटा फूटा दिखाई पडता है। मैंने एक खुदी हुई पत्थरपर लिपिको देखा उसमें मेवाडके अधीश्वरका निम्नलिखित दान खुदा हुआ है, संवत् १४७७, सन् १४२१ ई० आश्विन भृगुवारको महाराज श्रीमुकुलजीने विजयसेनी भवानीके मंदिरमें प्रकाश करनेके लिये तथा उनका निर्वाह करनेको डेढ बीघा जमीन दी। जो कोई मनुष्य, इस भूमिको लेगा देवी उसका विध्वंस करेगी, मेवाडके प्रसिद्ध राणा मुकुलजीने देवीके मंदिरमें दीपक जलानेके लिये यह भूमि दी थी मुकुलजीने शीशोदियोंके कुलमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। रायपुर नामक स्थानके घोर युद्धमें इन्होंने दिल्लीके बादशाहके एक पुत्रको मार डाला था। विख्यात लालबाई इनकी कन्या थी"।

" इस पाठार देशमें हाडाजातिके बल विक्रम तथा शासनके सम्बन्धमें बहुतसे प्राचीन वाक्य आजतक सुनाई देते हैं। बहुत पहिले हाडाजातिने इस पहाडी देशमें निवास करके इस राज्यकी रक्षा करनेके लिये स्थान २ पर बारह किले बनाये थे, उन सब किलोंके टूटे फूटे अंश आजतक दिखाई देते हैं। यद्यपि हाडाजातिके राजा " पाठारके अधीश्वर " नामसे पुकारे जाते थे तथापि मेवाडके राजाको अपना प्रभु जान कर वे उनकी आज्ञाका पालन करते थे; उन बारह किलोंमेंसे रत्नगढ नामका किला एक बार भी विध्वंस नहीं हुआ, पाठारके दिलवारगढ नामक किलेका टूटा फूटा अंश इस समय तक भी दिखाई पडता है। उसी किलेको लेनेके लिये एक समय बेगूके मेघावत् सम्प्रदायके साथ ग्वालियरके शक्तावतोंका भयंकर विवाद और युद्ध हुआ था। परा नगर वा पारोली नामका किला उस स्थानसे कुछ ही दूर हैं। इन किलोंमें बमोदाका किला सबसे अधिक प्रसिद्ध है; वह पश्चिमकी सीमामें स्थापित है, उस किलेके ऊपरसे मेवाडके समस्त समतल देश दीखते हैं। यद्यपि कई सौ वर्ष पहिलेसे हाडाजाति इस पाठार देशसे भाग गई थी, किन्तु तो भी बमोदाके आलूहाडाका नाम आजतक यहाँ विख्यात है, और जो बनके भील पशुओंके समान केवल जंगलके वनके फल मूलादिका आहार करके समय व्यतीत करते थे। उनमें भी आलूहाडाका नाम भली भांतिसे विदित है। हमारी यह इच्छा है कि अन्य मार्गसे होकर आनेके समय पाठारके आलूहाडाका वासस्थान देखें, इसी कारणसे मैंने आलूहाडाके बलविक्रमकी एकमात्र कहानी इस स्थानपर वर्णन की है।

" एक समय आलूहाडा मृगयासे लौटकर आ रहे थे कि इसी अवसरपर मार्गमें एक चारण इनको मिला और उसने इनको आशीर्वाद दिया, परन्तु उस आशीर्वादके बदलेमें चारणने कहा कि "आपके शिरपर जो पगडी बँध रही है वह मुझे दीजिये और कुछ मुझे नहीं चाहिये "। आलूहाडा उसके यह वचन सुनकर महा आश्चर्यमें हुए परन्तु कविके क्रोधित होनेसे पाठारमें बडी निन्दा होगी, इस भयसे उन्होंने उसी समय अपने मस्तकसे पगडी खोलकर चारणको दे दी। चारणने बडी शीघ्रतासे उसे अपने शिरपर बाँधकर आशीर्वाद दिया कि " आप हजार वर्षतक जीवित रहें "। यह आशीर्वाद देकर बिदा हुआ। चारण शीघ्र ही मरुदेशकी राजधानी मंडोरमें आया। मंडोरपतिके निकट आकर चारणने राठौर जातिकी जय उच्चारण कर बाँये हाथसे उस पगडीको उतार अपनी बगलमें रखकर दहने हाथसे मंडोरपतिको आशीर्वाद दिया। चारणको इस प्रकार अनियमित रूपसे दहने हाथसे अभिवादन करते हुए देखकर मंडोरपतिने कारण पूछा, यह क्या? चारणने कहा, 'आलूहाडाकी पगडी संसारमें किसीके निकट नहीं झुक सकती, मेवाडके पहाडी देशके एक अत्यन्त सामान्य अपरिचित सामन्तके प्रति चारणको ऐसा सम्मान दिखाते हुए देख कर मरुदेशके प्रभुने अत्यन्त क्रोधित होकर चारणके हाथसे वह पगडी लेकर सभाके कमरेसे बाहर डाल दी। आलूहाडाने चारणको जो पगडी दी थी वह बात वह एक बार ही भूल गये थे। वह एक समय विश्रामके लिये सुख भोग रहे थे कि इसी समयमें सूने मस्तक तथा उस कमरेमेंसे पगडीको लेकर वह चारण उनके पास आकर खडा होगया। और वीरश्रेष्ठ आलूहाडाके निकट जाकर मंडोरके राठौर अधीश्वरने

हाडा युवकने उसका भी प्राण नाश कर दिया। इस प्रकारसे एक २ करके पच्चीस जने राठौर वंस हाडा युवकके हाथसे मारे गये. परन्तु उसकी देहमें कुछ भी आघात न लगा। ऐसा बोध होता था कि विजयसेनी माता जिनकी प्रतिमूर्ति वमोदाके किलेके रक्षामें नियुक्त हैं, उन्होंने ही इस किलेके सातों द्वारोंको खोलकर युवकको मुक्ति देकर उसके गलेके अतिरिक्त और सभी शरीरको आच्छादित कर दिया था, उसको आलूहाडाकी सहायताके लिये भेजकर युवकको हाडा जातिका गौरव बढानेकी आज्ञा दी। प्रबल युद्धके पीछे अंतमें एक राठौर वीरकी तलवारसे युवकका शिर दो टुकडे हो गया आलूहाडाने देखा कि मेरा प्राणप्यारा भतीजा सर्वदाके लिये पृथ्वीपर सो रहा है। राठौरकी राजमाता स्वयं इस द्वंद्व युद्धको देख रही थी, उन्होंने विचारा कि युवककी मृत्युसे जीवनकी आशासे निराश हो हाडागण उन्मत्त होकर भयंकर कांड उपस्थित कर सकते हैं, इस कारण उन्होंने अपने पुत्र मंडोरपतिको आज्ञा दी कि अब शीघ्र ही युद्ध करना छोड दो और पाठारपति आलूहाडाको संतुष्ट करनेके लिये एक राजकन्या विवाह करनेको दी जायगी। राजमाताकी आज्ञानुसार शीघ्र ही कार्य हो गया, आलूहाडाके समानकी रक्षा हुई। विवाह करके आलूहाडा अपनी नवीन वधूको लेकर वमोदाको चले गये। उस विवाहके फलस्वरूपमें उनके एक कन्या उत्पन्न हुई। उस कन्याकी युवा अवस्था होनेपर बडी धूमधामके साथ उसके विवाहकी तैयारी की गई। विवाह हो जानेके पीछे आलूहाडाकी कन्या तथा मित्र बंधु बांधव और समस्त कुटुम्बके साथ देवमंदिरमें गये वहाँ बडा उत्सव होता था, अनेक स्थानोंसे बहुतसे संन्यासी यती, दंडी और भिक्षुक आकर इकट्ठे हुए। एक वृद्धा भिखारिन भी उस मंदिरमें घुसनेके लिये तैयार हुई, पहरेवालेने उसको भगाकर मंदिरमें न घुसने दिया; वृद्धाने बारंबार कहा कि आलूहाडाने स्वयं मुझे निमंत्रण देकर बुलाया है, इसीलिये मैं आई हूँ, मुझे द्वार छोड दो। द्वारपालने इस वृद्धाकी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया और उसको वहांसे भगा दिया, वृद्धा महा क्रोधित होकर आलूहाडाको शाप देती हुई चली गई, ऐसा विदित होता है कि यह वृद्धावेषधारी स्वयं विजयसेनी माता ही कपटवेष धारण करके आई थीं। उनके उस शापसे आलूहाडाका वंश लोप हो गया।

तारीख१८जनवरी मुकाम डूंगरमऊ आठ मील यद्यपि कई मार्ग यहांसे थे पर हम भिसरोरके मार्गसे चले, यह मार्ग आंतरी और भामूनी नदीके मध्यका था यहां बहुत जंगल और बडे बडे नाले हैं एक स्थान रानीरोरका खाल कहलाता है।

डूंगरमऊ वरांव यह बारह मौजेका छोटा पट्टा है। १५००० सालाना पैदावार और कर है, यह अब विभक्त हो गया है। डूंगरमऊ वाला कोटेके अधीन है, अभी उसको तलवार बँधाई गई है, भामूनी नदी इसके किलेकी दीवारके नीचे बहती है यहाँ हरियाली बहुत है। यहांके पर्वतोंपर मेघोंकी भाँति भाँतिकी आकृति दिखाई देती है।

षष्ठ अध्याय ६.

भिंसरोरगढ–रघुनाथसिंह–भिंसरोर दुर्गप्रासाद–भिंसरोर नामकी उत्पत्तिका विवरण–महोवके युवक सामन्त–जैसलमेरके महाराजके विरुद्धमें उनका युद्धके लिये जाना–जयसलमेरके महाराजका मुन्डछेदन–उक्त युवक सामंत स्त्रीकी शोचनीय आत्महत्या–उक्त सामंतका निर्वासन दंड–भिंसरोरदेशके प्रमार सामंत–प्रमार सामंतवंशका शासनलोप–नाथजीकी हत्या करना–लालसिंह चांदावतको भिंसरोरकी प्राप्ति–देशकी तबाही–संतरा–उत्सव होली–कोटा–उसका वर्णन ।

कर्नल टाड साहब १९ फर्वरीको भिंसरोरगढ नामक स्थानमें जो डूंगरमऊसे २० मील चार फरलांग था, जाकर लिखते हैं कि " मैं डूंगरमऊसे तीन कोश दूरीपर एक मुसलमान साधुके समाधिमंदिरके समीप गया । जीवित अवस्थामें ही उस साधुने समाधि ली थी । वह समाधिमंदिर ऊंचे स्थानपर बना हुआ था, उस स्थानपरसे चारों ओर प्रकृतिका परमप्रिय दृश्य दिखाई पडता था । उस समाधिमंदिरके पास ही एक कुंड है, इस कुण्डके चारों ओर अनेक सुन्दर २ वृक्ष विराजमान हैं । वहां प्रतिसप्ताहमें एक दिन मेला हुआ करता है । वहां हिन्दू मुसलमान सभी जातिके मनुष्य आते हैं । फिर हम आमूनी नदीका शब्द सुनते आगे बढे और अम्बार संगपर पहुँचे और मीना जाति करारकी रहनेवालेके स्थानपर गये, उनका एक प्रसिद्ध पुरुष यहां मारा गया था, प्रत्येक पथिक यहां एक पत्थर रखता है और हमने भी वहां एक पत्थर रख दिया ।

मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें रघुनाथसिंह भी एक हैं । यही भिंसरोरके सामन्त हैं, इन्होंने यहां राजपूतानेमें बहुत समयसे प्रचलित रावतकी उपाधि पाई थी । भिंसरोर देश मेवाडमें श्रेष्ठ देश गिना जाता है । इसका वार्षिक भूराजस्व एक लाख रुपया है । चम्बल, मालवा, हाडावती और मेवाडके वाणिज्यका कार्य भी सभी इस देशमें होता है । वैश्य लोग इस भिंसरोरसे ही होकर आते जाते हैं । इसी कारणसे वाणिज्य महसूलकी यहाँ विशेष आमदनी होती है । यहाँका किला एक बडे ऊंचे शिखरपर स्थापित है, वह स्थान जैसा रमणीक है युद्धके समय उसी प्रकार अभेद्य भी है । भिंसरोरकी सृष्टिके सम्बन्धमें एक प्रवाद वाक्य आजतक प्रचलित है, यह भी सम्भव हो सकता है कि विक्रमाजीतकी दूसरी शताब्दीमें इसकी सृष्टि हुई हो, और कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि विक्रमाजीतके राजत्वके पहिले इसकी सृष्टि हुई थी, इस भिंसरोरकी सृष्टि–सम्बन्धीय प्रवाद वचनोंसे यह प्रमाणित होता है कि यहाँके चारण वा कवि जिस भाँति बिना महसूलके वाणिज्यका आमदरफ्त कर सकते हैं; उस समय भी वह उसी प्रकारसे करते थे । भिंसरोरदेशकी सृष्टि किसी बलवान् राजासे नहीं हुई । भिखियाशाह नामक एक वणिक् और रोरा नामका एक चारण दोनों ही मिलकर वाणिज्य कार्य करते थे । वह वाणिज्य द्रव्योंसे शकटोंको भरकर जिस समय इस देशमें होकर जाते उस समय पहाडी लोग चोर डकैत जिससे इसको न लूट सकें

इसका भलीभांतिसे प्रबंध कर लेते थे। उस भिंसा और रोरा नामके संयोगसे इस देशका नाम भिंसरोर हुआ है, यह पाठाँरदेश हाडा जातिके आनेके कितनी ही समय पहिले तक उक्तभावसे था यह नहीं जाना जा सकता; परन्तु प्रमार, दूदिया राठौर शक्तावत् तथा चांदावतोंके स्मृतिचिह्न यहाँ अधिकतासे विराजमान हैं, दूदिया लोगोंके पीछे राठौर सामन्तोंको इस देशका आधिपत्य प्राप्त हुआ। मरुक्षेत्रके लवणह्रदके किनारे महौबदेशके एक राठौर सामन्त मंडोरके राठौर अधीश्वरके अधीनमें थे इनको कान्यकुब्जके सम्भ्रान्त राजवंश जानकर मेवाडके राणाने उनकी भगिनीका पाणिग्रहण किया। उस नव विवाहिता राठौर नन्दिनीके साथ उनके छोटे भ्राता चित्तौरमें आये। उस विवाहके कुछ दिन पीछे जयसलमेरके अधीश्वर, राजपूत जातिके शिरमौर मेवाडके महाराणाके विरुद्धमें उठे। जयसलमेरपतिको दमन करनेके लिये शीघ्र ही मेवाडकी सेनाके सामन्त सजकर तैयार हुए। महाराणाने बीडा अर्थात् ताम्बूल हाथमें लेकर सामन्तसमितिमें प्रस्ताव किया कि आप लोगोमेंसे कौन साहस करके जयसलमेरके महाराजके साथ युद्ध करनेको तैयार है, जो तैयार हों वह आगे बढे। राणाके इस वचनको सुनकर महोबके थोडी अवस्थावाले सामन्त राणाके नवीन सालेने वीर गर्वसे अग्रसर होकर सेनापतिके पदको ग्रहण करनेके लिये उस ताम्बूलको ग्रहण किया। उसकी अवस्था उस समय केवल पंद्रह वर्षकी थी, इस कारण उस अल्प अवस्थावाले राठौरको इस युद्धमें जानेके लिये उस भावसे उत्तेजित देखकर सभीने निषेध किया परन्तु राठौर युवकने किसी भांति भी न माना। युवकने महाराणाके समीप प्रार्थना की कि "हमारे दोनों मित्रोंको हमारे संग करो और मैंने जो अपनी पाँचसौ अश्वारोही सेना नियत की है उसको मेरे साथ युद्ध करनेके लिये भेजिये। वह थोडी अवस्थावाला राठौर कुमार किस प्रकारसे मरुभूमिके पार होकर जयसलमेरमें गया था और किस भांतिसे भट्टीजातिके शीर्षस्थानीय जयसलमेरके राजाके सम्मुख खडा हुआ था उसका कुछ वृत्तान्त नहीं जाना जाता, परन्तु ऐसा विदित होता है कि उस राठौर युवकने जयसलमेरके महाराजका छिन्न मस्तक लाकर चित्तौरके महाराणाको उपहारमें दिया। महाराणाने युवककी इस वीरतासे प्रसन्न होकर तथा उसको प्रतिहिंसा देनेमें सफल देखकर उसको सालुंवरदेशका अधिकार दे दिया। उस समय किसी एक देशका अधिकार किसीको भी सदाके लिये नहीं दिया जाता था, इस कारण कुछ समयके पीछे राणाने उस राठौर सामन्तको सालुंवरके बदलेमें यह भिंसरोर देश दे दिया, राठौर युवक क्रमशः अपने बलविक्रमको प्रकाश करनेसे राणाके परम प्रियपात्र हो गये अंतमें राणा उनके ऊपर इतने संतुष्ट हुए कि अपनी भतीजिके साथ उनका विवाह कर दिया। परन्तु उस विवाहका फल परिणाममें वियोगान्त लीला करके समाप्त हुआ। एक समय युवक सामन्त अपने इष्टमित्र और कुटुम्बियोंके साथ कमरेमें बैठे हुए नृत्य देख रहे थे कि इसी समयमें उनकी स्त्री किवाडकी ओटसे नृत्य देखनेके लिये उद्यत हो रही थी, सामन्तने उस सभामें यह व्यवहार देखकर ऊंचे स्वरसे एक सेवकसे कहा "ठाकुरानीसे जाकर कह दो उनको यहाँ आनेकी इच्छा है तो वह चली आवें

हम लोग चले जाँयगे"। सेवकने इनकी आज्ञाको पालन किया। सामन्तकी स्त्रीने महादुःखित होकर कहा, मैं नृत्य देखनेके लिये नहीं गई थी, मेरी एक सेविका गई थी, मैं इस प्रकारसे तिरस्कार करने योग्य नहीं हूँ पर ठाकुरको विश्वास नहीं हुआ तब रानीने दुःखके मारे अत्यन्त ही व्याकुल हो भिसरोरकी दीवार-परसे चम्बल नदीमें गिरकर प्राण त्याग दिया, वह स्थान आजतक रानीगता नामसे विख्यात है। किसी प्रकारसे यह समाचार चित्तौरके महाराजतक पहुँच गया, उन्हों-ने छानबीन करके कि राठौर सामन्तने विना कारणसे रानीके चरित्रोंपर अपवाद लगाया था, इसीसे मेरी भतीजीने आत्महत्या की है, इसके दंडमें राठौर सामन्तको मेवा-डसे सर्वदाके लिये निकाल दिया। परन्तु राठौर सामन्तने अपने बल विक्रमसे राणाके पहिले अनेक उपकार किये थे, अन्तमें उस कठोर दंडके बदलेमें उसको भिसरोरके अधि-कारसे रहित करके उक्त स्थानके निकटवर्ती पाठार देशके मध्यस्थ नीमरी नामका बीस ग्रामवाला एक छोटा देश दे दिया। उसी राठौर युवकके वंशधर विजयसिंहने आज यहाँ आकर मेरे साथ साक्षात् किया"।

"उक्त राठौर सामन्तके पीछे एक सामन्तको भिसरोर देशका अधिकार मिला परन्तु प्रमार वंशीय सामन्तने कबतक भिसरोरदेशको शासन किया, इसका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं जाना जाता, परन्तु अन्तमें प्रमार सामन्त किस कारणसे मारे गये; और भिसरोर देश प्रमारवंशके हाथसे निकल गया, घटना जातीय चरित्रका और एक निदर्शन दिखाती है। अन्तमें भिसरोरके प्रमार सामन्तने अपने प्रतिवासी वेगू सामन्तकी एक कन्याके साथ विवाह किया। उस सामन्तने स्त्रीसहित कई वर्षतक परम सुखसे जीवन व्यतीत किया था, अन्तमें एक दिन दोनों पचीसी क्रीडामें मतवाले थे; सामन्तने उस क्रीडाके समयमें विवाद करते २ अपनी स्त्रीके वंशकी निन्दा की, राजपूत स्त्री उससे अत्यन्त क्रोधित हुई, और दूसरे दिन अपने पिताके निकट उसने समस्त समाचार लिख कर भेज दिया। वेगूके सामन्तने अपनी पुत्रीका पत्र पाते ही सेनाको बुलाया और अपने जमाईका वह आचरण सबको सुना दिया, इसका बदला लेनेके लिये सभी तैयार हो गये। शीघ्र ही वेगूके सामन्तने उस सेनादलको साथ ले, अंतरीदेशके वनमें होते हुए भिसरोर देशसे कुछ दूरपर आकर अपनी उस सेनाको दो दलोंमें विभक्त किया। वेगूके सामन्त भामूनी नदीपर होकर गये और उनके पुत्र सोजाके मार्गसे भिसरोरकी ओरको गये। परन्तु वेगूके सामन्त भिसरोरमें पहुँचने भी न पाये थे कि उनके पुत्रने भिसरोरपर आक्रमण करके रणभूमि-में अपने बहनोईका मस्तक काट डाला। अन्तमें मेघावत सामन्त नन्दिनीने अपने पतिके मृतक शवको गोदमें ले भामूनी और चम्बल नदीके संगममें चिता प्रज्वलित करके अपना प्राण त्याग किया। उसके स्मरणके चिह्न जो स्थापित हुए थे मैंने उनसे कुछ ही दूर अपने डेरे डाले थे"।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि "वेगूसामन्तके उक्त छोटे कुमार अपने बहनोईका प्राण नाश कर पिताके सम्मानकी रक्षामें समर्थ हुए। वेगूके वृद्ध सामन्त

इससे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने रजवाडेकी चित्र प्रचलित रीतिके अनुसार बडे पुत्रके अधिकारको लोप करके उस छोटे पुत्रको अपने भावी उत्तराधिकारी पदको दे दिया। मेवाडके राणाने भी उस उत्तराधिकारीके परिवर्तनमें अपनी सम्मति दी थी, बेगूके सामन्तके बडे पुत्रको चिथाना जिसमें वर्तमान जादो देश संयुक्त था दिया गया।

"प्रमारोंके पीछे कृष्णावत सम्प्रदायके एक चन्द्रावत लालजी जो सालूंवरके सामन्तके छोटे पुत्र थे वही भिसरोरके अधीश्वर हुए। लालजीको अपने प्यारे मित्र नाथजी राणाके चचा थे उनका ही प्राण नाश करके भिसरोर मिला था। मेवाडके अधीश्वर महाराणा संग्रामसिंहके अनेक पुत्रोंमेसे महाराज नाथजी भी एक पुत्र हैं। मेवाडके राणा जगत्सिंहके भाई थे। जगत्सिंहकी मृत्युके उपरान्त उनके पुत्र राजसिंहको संदेह करके मनुष्योंने जारज कहा था, इससे लालजी मेवाडके सिंहासनपर अधिकार करनेके लिये तैयार हुए, परन्तु राजसिंहकी मृत्यु होनेसे नाथजीकी आशा व्यर्थ हो गई। राजसिंहके छोटे पुत्रने मेवाडके सिंहासनकी प्रार्थना की। उनके चचा (अरसी) अरिसिंहने कैसा राजनैतिक षड्यंत्र जाल विस्तार करके मेवाडमें भयंकर आत्मविग्रह उपस्थित कर दिया था, उसका वर्णन मेवाडके इतिहासमें भलीभांतिसे किया गया है। (आरसी) अरिसिंहने सिंहासनपर अधिकार करके अपने चचा नाथजीपर संदेह प्रगट किया था। नाथजी उनके शत्रु हैं, तथा उन्होंने ही मेवाडके राणा पदको ग्रहण करनेके लिये गुप्तरीतिसे उद्योग किया है। यह विचार कर अरिसिंह नाथजीकी कामनाको व्यर्थ करनेके लिये तैयार हुए। नाथजीने जिस दिन सुना कि अरिसिंहने मेरे ऊपर संदेह किया है वह उसी दिन सिंहासनकी आशा छोडकर बागोर नामक देशमें जा एकान्तमें वास करने लगे, और शास्त्रका विचार कर प्रियकार्य कवितारूपी मालाको गूँथने लगे। नाथजीका वह धर्मभाव, वैराग्यभाव तथा उदारभाव ही उनके विध्वंसका कारण हो गया। नाथजी घोर रात्रिके समय एक मात्र अपने सेवकको साथ ले मट्टीका कलश ले सरोवरमेंसे जल लाकर उस जलसे अनेक कुलदेवता जगन्नाथजीकी पूजा करते थे। शीघ्र ही राणा अरिसिंहके निकट परिषदोंने कहा कि नाथजी कठोर धर्मानुष्ठान करके देवताको प्रसन्न कर रहे हैं, इससे मेवाडका सिंहासन अवश्य ही उनको मिल जायगा। अरिसिंह यह सुनते ही महा भयभीत हुए और एक दिन उसकी सत्यताकी परीक्षा करनेके लिये वेष बदलकर एक विश्वासी सामन्तको साथ ले बागोरके उक्त देवमंदिरकी सीढियोंपर आकर अपेक्षा करने लगे। शीघ्र ही नाथजी कलश हाथमें लिये हुए पूजा करनेके लिये वहाँ आये, अरिसिंहने अपनेको प्रगट करके कहा "इतनी धर्ममें बुद्धि और इतनी पवित्रता क्यों है ? चाचा! यदि आप सिंहासनकी इच्छा करते हैं तो इस सिंहासनको ग्रहण कीजिये" नाथजीने शीघ्रतासे उत्तर दिया, "तुम मुझे पुत्रके समान हो, मैं देवताकी पूजा केवल तुम्हारे कल्याणके लिये करता हूँ।" यद्यपि इस सरल उत्तरसे राणाके मनके समस्त संदेह दूर हो गये, परन्तु सामन्तोंके भडकानेसे इन्होंने अंतमें अपने चचा नाथजीके प्राण नाश करनेका संकल्प किया। नाथजीका प्राण नाश करना सरल बात न जानकर अरिसिंहने दूसरा उपाय निश्चय किया। पूर्वोक्त लालजीके साथ महाराज नाथजीकी विशेष मित्रता थी।

दोनोंने ही देवताके मंदिरमें जाकर देवताके सम्मुख मित्रता स्थापित की थी। एक दूसरेके प्रति दोनोंको दृढ विश्वास था। अरिसिंह उस लालसिंहके द्वारा ही नाथजीके जीवनकोनाश करनेके लिये उद्यत हुए। एक दिन नाथजी मध्यरात्रिके समय देवमंदिरमें पूजा करनेके लिये बैठे थे, इसी समयमें नाथजीके मित्र उक्त लालजीने मंदिरके द्वारे आकर नाथजीको बुलाया। इस समय इस प्रकारसे नाथजीको किसी मनुष्यने बुलानेका साहस नहीं किया था नाथजीने मित्र लालजीका स्वर पहचान कर उसी समय कहा, "क्यों भाई लालजी! आओ, इतनी रात्रिमें क्या विचार कर आये हो?" परन्तु हाय! नाथजीने यह बात कहकर जैसे ही देवताको प्रणाम करनेके अभिप्रायसे मस्तक झुकाया कि वैसे ही परम मित्र लालजीकी तीक्ष्ण तलवारने नाथजीके शिरके दो टुकडे कर दिये। नाथजीके रुधिरसे महादेवजीके विग्रहने स्नान किया! लालजी उस मित्रताका चूडान्त निदर्शन करके राणा अरिसिंहके परम प्रियपात्र हो गये। राणा अरिसिंहने लालजीके उस कार्यसे संतुष्ट होकर उनको भिंसरोरदेश दिया और उनको मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें ग्रहण किया। मेवाडमें बहुत दिनोंसे सोलह जने प्रधानरूपसे गिने जाते थे, इसके अतिरिक्त होनेका नियम नहीं है। अरिसिंहने वंशीदेशसे शक्तावत सामन्तको उस प्रधान श्रेणीसे च्युत करके लालजीको उस श्रेणीमें भुक्त कर लिया। परन्तु नाथजीके इस हत्याकाण्डसे मेवाडमें भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई, चन्दावत् और शक्तावतोंमें फिर प्राचीन सम्प्रदायिक शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित हो गई इस अग्निने मेवाडको छार खार कर दिया। परन्तु महापापी दुष्ट लालजीने अंतमें कुष्टरोगसे महा व्याकुल हो अपार कष्ट भोगा था पीछे इनका पुत्र मानसिंह भिंसरोरकी गद्दीपर बैठा, यह एक युद्धमें मरहटोंका बंदी हुआ। पर उसको नाच देखनेके समय एक राजपूत आहत अवस्थामें अपनी कमरपर धर लाया और दूसरा पुरुष उस स्थानपर सो गया जब यह अपने स्थानमें पहुँच गया तोपैं सर हुईं तब मरहठोंको सुधि आई। इसकी छतरी चम्बल भामूनी और खालके संगममें अद्भुत बनी है।

मानसिंहके पीछे रघुनाथसिंह गद्दीपर बैठे, पर इनपर बहुत आक्रमण हुए इससे इनको भिंसरोर छोडकर भागना पडा। जब महाराज वा रईसोंकी सालगिरह होती तो हम भी उसमें शामिल होते थे और वहाँका नाच गाना देखते सुनते थे। एक दिन नाथजीके अधिकारी महाराजा श्योदानसिंहके यहाँ इस उत्सवपर बैठे थे रीतिके अनुसार जो आता उसका नाम लिखा जाता था पर इस बातपर हमको बडा आश्चर्य हुआ कि जब चोबदारने ऊंचे स्वरसे कहा कि महाराज सलामत रावत रघुनाथसिंहजीका मुजरा लीजो। हमको बडा आश्चर्य हुआ कि जिसके दादाने जिस वंशके प्रसिद्ध पुरुषकी जान ली उसके पोतेकी यह मुजरा कैसा, पर पीछे समझमें आया कि यह न्यायकी बात है जिससे ऐसा हुआ और यही एक मनुष्यका दयाभाव है, आगे भिंसरोरमें हमने क्रूरमूर्ति अलाउद्दीनकी चढाईके चिह्न खोज किये, पर हमैं कुछ न मिले केवल दो पत्थर और मिले जिन पर संवत् ११७९ खुदा था अक्षर जैन सम्प्रदायके थे और दूसरेमें लिखा था पर्वश्यो रात्रिमें महाराणा नवरावसिंह देवने रामेश्वरके नाम

मौजे तितागढ पट्टनमें दिया, जो इस वचनको स्थित रक्खेंगे वह इसका फल पायेंगे वह वचन यह है ।

जिस्सा जिस्सा जिध हो भूमि तिस्सा तिस्सा नधो फलंग ।

संवत् १३०२ में यह रीति प्रचलित थी और यह प्रमारधारका जागीरदार था आगे गतेश्वर महादेवके मंदिरको देखनेके लिये हमने वहाँ अपने गुरुको भेजा ।

२० जनवरी–मुकाम दानी, २० मील इसके रास्तेमें जंगल और साखूके पेड बहुत हैं । हम एक नालेंको पार कर चले यह नदी गिरनेका उत्तम दृश्य है । दानी बूँदीकी रियासतमें है यहां पत्थरकी एक चारनकी बर्छी हाथमें लिये भयंकर मूर्ति देखी जो कभी उस स्थानमें मारा गया था, हमारे साथीने कहा पहिले कोई इस मार्गसे नहीं जाता आता था। परन्तु अब यह मार्ग स्वच्छ हो गया है ।

मुकाम करीपुर–२१ फरवरी, साढे नौ मील इसका पहाडी रस्ता बडा काठिन है हम इसमें होकर गये, फिर सन्तरा नगर देखा, इसमें कई खोदित लिपि मिली । एक संवत् १४२२की देवलाने जो भूमि ब्राह्मणोंको दी थी, एक संवत् १४४६ आषाढ वदी पडवाको प्रमार ऊदां और कोलाके भूमिदानकी लिपि थी, तीसरी संवत् १४६६ आषाढ वदी पडवा संतराके चावडाका दानपत्र था, एक पत्थरपर संवत् १३७० में आषाढ शुदी पडवाका लिखा है कि बादशाह अलाउद्दीनने तीन हजार हाथी दश लाख सवार जंगी रथ असंख्य प्यादोंको लेकर सांभर मालवा, करनाटक कनौडा झालौर जैसलमेर देवगढ तैलंग चंद्पुरी आदिको जय किया. संतरामें एक बडा दृढ किला है ।

२२ फरवरी–कोटासे ११ मील किनारा चम्बल–यहांसे मार्गमें बडा कोहरा पडा जंगलमें झीलोंके देवताका मंदिर है यहां प्रार्थनाके चीर चढाये जाते हैं, होलीका त्यौहार इस वर्ष अच्छा नहीं रहा, एक बल्लीपर घासका बोझा बांध कर उसपर झंडा लगाते हैं और उत्सव मनाते हैं, कोटकी आकृति मनोहारिणी है। दृढ दीवार बुरजों सहित चारों ओर हैं। किलेके भीतरका शहर इससे अलग है नदीके दोनों ओर वहांके निवासी अपने काम धन्देमें लगे रहते हैं ।

सप्तम अध्याय ७.

कोटे राज्यमें महामारी-नन्दता-बूँदीमें जाना-बूँदीका राजमहल-सीतुरका कर्नल टाड साहबकी मृत्युके मुखसे उद्धार पाना-मंगलगढकी उत्पत्तिका वृत्तांत।

इतिहासलेखक टाड साहबने छः महीनेतक कोटेराज्यमें रहनेके पीछे, सन् १८२२ ईसवीकी १० सितम्बरको लिखा है कि "हमारे कोटेमें रहनेके शेष चार महीनेमें केवल हैजा महामारी और प्रबल ज्वरने भयंकर विक्रम प्रकाश किया। कोटेमें ऐसी भयंकर महामारी कभी पहिले हुई थी या नहीं, यहांके मनुष्योंको इसका स्मरण नहीं है हम इन दिनों इधर उधर कई स्थानोंमें घूमते फिरे पर बीमारीने हमारा पीछा न छोडा। हमको बीमारीने बहुत सताया पीछे हम जालिमसिंहके पास गये और उनसे रुखसत हुए रास्तेमें जिस हाथीपर सवार थे वह बहुत बिगडा पर परमात्माने कृपा की"। कोटेको छोड कुनारो नामक स्थानमें आकर लिखा है कि "राजराणा जालिमसिंहके आत्मीय राजा गुलाबसिंहके अधिकारमें कुनारो नामका देश हो गया है, जिसमें हम आये हैं। यह स्थान अत्यन्त रमणीक है, ऊंचे २ महलोंकी शोभाको देखनेसे नेत्रोंको अपार आनन्द प्राप्त होता है"।

जालिमसिंहके पिताके वासस्थान नन्दता नामक स्थानमें आकर टाड साहबने लिखा है कि राजपूत सामन्तोंके रहनेके स्थानमें नन्दता एक अत्यन्त ही श्रेष्ठ आदर्शका स्थान है। मैं एक तोरणमें होकर नन्दतामें गया। उस तोरणके ऊपर नौबत बज रही थी। तोरण (फाटक) से उतरकर चारों ओर स्थूलकाय स्तंभोंसे शोभायमान एक विस्तारित कमरेमें गया, वहाँ सरदारोंको इकट्ठा हुआ देखा, इसके पीछे महलसे अलग मनोहर सभामंदिरमें गया, वहाँ चारों ओर तोपैं और बंदूकोंका शब्द हो रहा था। अभिवादन और प्रत्यभिनन्दन करनेके पीछे मैंने आसनको ग्रहण किया, दो सारंगी बजानेवालोंने आकर पंजाबी टप्पा गीत गाना प्रारम्भ किया"।

११ सितम्बरको तेरामें गये, १२ सितम्बरको नौगांव देखा.।

१३ वीं सितम्बरको बूँदीराजधानीमें जाकर इतिहासलेखकने लिखा है कि मैं हाडाजातिकी राजधानीके समीप गया. दूरसे ही धूलि उडती हुई दिखाई दी जिससे चारों ओर अंधकार हो गया, उसको देखकर मैंने जाना कि कोई राजा आ रहे हैं। शीघ्र ही बाजोंका शब्द भेरीका शब्द तथा घोडेके खुरोंका शब्द सुनाई आया। कुछ ही समयके पीछे साडनी सवारने राजाके आनेका समाचार कहा। राजा घोडेपर चढे हुए आ रहे थे, मैं भी हाथीपर सवार था, परन्तु राजाके घोडेपर सवार होनेस मुझे हाथीपर सवार होना शोभा नहीं देगा, इसी कारणसे मैं उग्रतेजस्वी घोडेपर सवार होकर आगे बढा। महाराजके साथ साक्षात् होते हो दोनोंने घोडोंकी पीठसे उतरकर परस्परमें आलिंगन किया और २ सामन्तोंको भी मैंने उसी प्रकारसे

आलिंगन किया, इसके पीछे महाराजने मुझसे कहा, कि " यह आपका ही राज्य है इतने दिनोंके पीछे आप यहाँ आये ।" यह कहकर संवर्द्धना करनेके पीछे बिदा लेकर आगे बढे । मैं अपने डेरोंको चला आया " ।

बूँदीके महलोंके सम्बन्धमें टाड साहबने लिखा है कि " समस्त भारतवर्षके महलोंमें बून्दीके राजमहल सबसे अधिक श्रेष्ठ हैं। महलोंके निर्माणकार्यके अतिरिक्त जिस स्थानपर यह बना है उस स्थानके योगसे इसकी शोभाने और भी वृद्धि पाई है । यद्यपि बूँदीके भिन्न २ समयोंमें अनेक राजा इस महलके अंगको बढा गये हैं, परन्तु एक ही रीति और एक ही भावसे बने होनेके कारण इसकी शोभाकी वृद्धि कमती नहीं हुई । छत्रमहलका अंश राजा छत्रशालका बनाया हुआ है वह जैसा विस्तारित है उसी प्रकारसे सुन्दर भी है । "

एक सप्ताहतक रहनेके पीछे बून्दीको छोडकर २६ वीं सितम्बरको मेज नदीके किनारे आकर टाड साहबने लिखा है कि "आज मैंने आतिथेय मित्र राव राजासे बिदा-ली । मैंने डेरोंको छोडते ही देखा कि थानोंके महाराज एक अश्वारोही सेनाके साथ मेरी बाट देख रहे हैं । मुझे सीमातक पहुँचानेके लिये वह सजकर आये थे । " सतूर नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि " हाडा जातिके इतिहासमें सतूर देश एक पवित्र देश गिना जाता है । यह स्थान हाडा जातिकी कुलदेवी आशापूर्णाका अधिष्ठान क्षेत्र है । हाडा जातिने सतूर देशको अत्यन्त प्राचीन और पवित्र कहकर उल्लेख किया है । यहांके प्रधान मंदिरमें भवानीकी एक मूर्ति है । उस मंदिरके समीप बहुतसे योगी और संन्यासी निवास करते हैं ।

२७ सितम्बर मुकाम थानेमें रहे, यहाँके महाराज सावन्तसिंहसे भेंट हुई ।

२८ सितम्बरके सुबहको जहाजपुरके लिये रवाना हुए, यहाँ मीना रहते हैं हाडा-जाति विशेषरूपसे निवास करती है यह मेवाडका द्वार कहलाता है । दूसरा नाम इसका जिला चौरासी है, इसमें चौरासी शहर हैं, तीन सौ साठ मौजे हैं वास्तवमें सौ शहरसे विशेष इसमें न होंगे यहाँके निवासी वीर हैं, जालिमसिंह इसका परिचय पा चुके हैं रानाके इसमें दो तालाब बूद लुहारी हैं। हमारी मुलाकातको यहाँ सोभाराम आया । अब हमारा यह इरादा है कि हम कुछ दिन यहाँ निवास कर शरीरको स्वस्थ करें ।

अष्टम अध्याय ८.

टाड साहबपर रोगका आक्रमण-मंगलगढ--करार किला--अमीरगढ-मानपुरा-मंगल गढमें जाना-उसका ऐतिहासिक वृत्तांत--स्थान बजेठा--हमीर गढ--सोनवार--पार्श्वनाथका मंदिर--करेरा-भोली नहर--अंगरा--मेरताकी ऊँचाई--समाप्ति भ्रमण दूसरेकी ।

पहली अक्टूबरको जिहाजपुर नामक स्थानमें जाकर साधु टाड साहबने लिखा है "कल दिन हमारे प्राण निकलना ही चाहते थे कि डकन और केरी साहब पीडित अवस्थामें शय्यापर लेटे थे. हमारे सम्बन्धी कप्तान वाह मेरे साथ भोजन करनेके लिये बैठे थे किन्तु ज्वर और क्लान्तिके होनेसे मुझे बिलकुल भूँख नहीं थी, इस कारण मैं कुछ भी न खा सका । मैंने उसमेंसे केवल मकईकी रोटीके दो एक ग्रास खाये कि मेरे शरीरमें मानों भयंकर आन्दोलन होने लगा । मुझे ऐसा बोध हुआ कि मेरा मस्तक धीरे २ भयानकरूपसे पीडित हो रहा है, मानो समस्त माथेमें सूजन भरी आ रही है । मेरी जिह्वा और होठ सूख कर काठके समान हो गये । यद्यपि मैंने कुछ भी भय नहीं माना और इससे मेरी चैतन्यता कुछ भी लोप नहीं हुई, तथापि इतना स्मरण हुआ कि कई वर्ष पहिले इस प्रकारसे मैंने एक बार मृत्युके मुखसे रक्षा पाई थी । मैंने कप्तान वाहको अपने पाससे जानेके लिये कहा; परन्तु वह जाने भी न पाये थे कि इसी अवसरमें मेरा कंठ सूख गया । मैंने विचारा कि मेरी मृत्यु अब निकट आ गई, मैं उसी समय उठा और तम्बूके खंभोंको पकड कर खडा हो गया । शीघ्र ही मेरे उक्त मित्र चिकित्सकको ले आये, मैंने उनसे कहा कि मुझे आप विरक्त न करिये । मैं स्थिर होनेकी इच्छा करता हूँ परन्तु उन्होंने मेरी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया और कुछ औषधी मेरे मुखमें डाली । मैंने तुरन्त ही भयंकर उल्टी कर दी । फिर तुरन्त ही शय्याका आश्रय लेकर अचेत होगया।कोई दो घंटे रात्रि हो जानेके समय नींद टूटी तो देखा कि मेरे सारे शरीरमें पसीना आ रहा है, किन्तु पीड़ाका फिर कोई चिह्न दिखाई नहीं पडा । इसका विचार और निर्णय करना कठिन हो गया कि ऐसा क्यों हुआ ? चिकित्सकने अनुमान किया कि किसीने मुझे विष खिलाया था, परन्तु मैंने इस बातपर विश्वास नहीं किया, यदि मैंने विष खाया था तो अवश्य ही उस ११ रोटीमें विष था यह स्थिर होता तो इस अवस्थामें शीघ्र ही पाचकको विदा दी जाती, मेरे मेवाड़के आनेके समयसे अबतक चार बार मेरी यह दशा हुई । मुकाम खजूरी ता० २ अक्टूबरको मुझे ज्वरने बहुत पीडित किया था इस कारण पालकीमें सवार होकर मैं चला। मीना अपना सत्व मिलनेसे प्रसन्न हो गये थे, उनके अफसर हमारे पास मिलने आये । हमने उनको सुर्ख पगडी और रुमाल पुरस्कारमें दिये, हम घाटीके मार्गसे खजूरीमें पहुँचे, यहाँ ब्राह्मणोंको धर्मार्थ दी हुई बहुत सी जागीरें है ।

३ अक्टूबरको मुकाम कचोरा–इसका मार्ग दुस्तर है इसके आधे मार्गमें अमरगढका किला है, यहाँके रावत दलेलसिंह जहाजगढमें कारगुजारी करते हैं. उनका साथी

पहाडसिंह हमसे साक्षात् करनेको आया। बीमारीके कारण मैं उसके दुरूह दुर्गको देखने न जा सका, उसका मार्ग बडा पेचदार है इस मार्गमें अनियमित पर्वतोंकी शोभायमान पंक्तियां हैं मुझे पहाडसिंहने सलामी दी। यहांके भूमिया प्रशंसाके योग्य हैं।

यह कचोरा शहर छः हजार रुपये वार्षिककी आयका है। पहिले यह बडा शहर होगा, हमने इस मुल्कको मरहटोंके अधिकारसे बचा दिया है। मुकाम दामीनो ९ अक्टूबर–कचौरामें हम इस समय तक जाडा बुखारके कारण ठहरे रहे नौ अक्टूबरको दमीनोमें आये यहाँ एक सप्ताह ठहर कर पन्द्रह तारीखको मानपुरामें आये। यह बनांस नदीके किनारे है, यहाँके सब प्रतिष्ठित पुरुष हमसे मिलने आये। मैं सबसे मिला परन्तु तबियत आज भी खराब थी। यहाँसे तीन कोश मंडलगढ है, १७ तारीखको यहाँसे चलकर शहरसे आधकोशपर डेरे डाले यहाँके हाकिम मुझसे मिलने आये और आज विजयादशमी है, बीमारीके कारण हमारा निमन्त्रण भी व्यर्थ गया, नौ दिनसे भोजन नहीं किया है कप्तान वाह आज मेरे पास आ गये, मेरे सभी साथी अलील थे। आज मैंने पसलीपर जोक लगाई थी, मंडलगढको बालनोतके एक सामन्तने बनवाया था "सौलङ्की वा चालुक्य जातीसे उत्पन्न बालनोत नामक सम्प्रदायके एक सामन्तने इस मंडलगढकी पुनः प्रतिष्ठा की। उसी सोलङ्की वा चालुक्य वंशसे अनहलवाडेसे राजवंशकी उत्पत्ति है। वह राजवंश दशसे चौदह शताब्दी तक पश्चिम भारतवर्षके समुद्रके किनारेवाले देशको अपने प्रवल प्रतापके साथ शासन करते रहे। वुनास नदीके किनारे-वाले देशको अपने प्रवल प्रतापके साथ शासन करते रहे। वुनास नदीके किनारे-टंकथोदा नामक स्थानके राजवंशसे बालनोतसम्प्रदायेन उत्पन्न होकर अपनेको तक्षक-वंशीय कहकर परिचय दिया। यद्यपि इस प्रवाद वाक्यसे जाना जाता है कि थोदासे सौलङ्की जाति बारह शताब्दीके धर्मयुद्धके समय पाटन देशको छोड कर अन्यत्र चली गई, परन्तु यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि बालनोतकी सम्प्रदाय इससे पहिले गई थी। पंजाबके अन्तर्गत लोकोत् नामक देश उनके आदि सुख समृद्धि प्राप्तिका स्थान कहा जाता था। मंडलगढके बालनोत सम्प्रदायके आदि पुरुषोंने सबसे पहिले लालपुरा नामक एक अत्यन्त प्राचीन देशपर अधिकार किया। उस आदि वीरके अधीनमें एक भील सेवक था। एक समय उस भीलने वनैले शूकरोंके उत्पात निवारण करनेके लिये ईश्वरके पहरेमें नियुक्त होकर देखा कि एक वनैला शूकर एक पत्थरके टुकडेके सहारे सो रहा है। भीलके हाथमें जो बाण फलवाला था वह तेज धारवाला नहीं था, इस कारण उसपर धार धरनेके लिये उसको पत्थरपर घिसा, घिसते ही वह समस्त लोहमय बाणकी फलक सुवर्णकी हो गई! भील सेवकने तुरन्त ही अपने प्रभुके पास जाकर समस्त वृत्तान्त कह दिया, प्रभुने उसी समय बडी शीघ्रतासे सेवकके साथ उस स्थानपर जाकर देखा कि वह पत्थर उसी प्रकार रक्खा है और शूकर भी उसी भावसे सो रहा है। प्रभुके पत्थरके टुकडे लेनेके लिये उपाय करते ही शूकरकी निद्रा भंग होगई, वह जागते ही तुरन्त भाग गया, प्रभुने उस पत्थरको लेकर उस पत्थरके गुणसे बहुतसा सुवर्ण तैयार किया और बहुतसा रुपया खर्च करके एक नवीन राजधानी

निर्माण की और उस भीलके नामके अनुसार ही उसका नाम मंडलगढ रक्खा । परन्तु एक अत्याचारके हो जानेसे वह अन्तमें चिरकालके लिये मंडलगढसे रहित हो गये। मंडलगढकी प्रजामें एक योगी प्रजा थी; उस योगीके एक अत्यन्त शीघ्र चलनेवाला घोडा था, अधिक क्या कहैं वह घोडा मृगके समान महावेगसे जाता था। मंडलगढके महाराजने उस योगीसे वह घोडा बलपूर्वक छीन लिया, योगीने उसके नामपर राजाके यहां अभियोग उपस्थित किया । राजाने एक सेनाको भेज कर उस बालनोतके सामन्तको मंडलगढसे निकाल दिया । उस सामन्तके उत्तराधिकारी आजतक जावोन और बाकरोद नामक स्थानमें नीची श्रेणीके सामान्य भूमियारूपसे निवास करते हैं परन्तु तो भी वह अपनी प्राचीन पैतृक " राव " की उपाधिका व्यवहार करते हैं । "

बादलीसे हमको खोदित लिपियां मिलीं, जिनमें सोलंकी वंशका कीर्तन था, उसमें राजा भीम तथा उनके पुत्र वर्ण अनहलवारका वर्णन है उससे कई वंश निर्गत हुए हैं; उसमें अर्जुनसे दो वर्ण वैश्य और शूद्रोंके प्रगट होनेका भी वर्णन है, उससे वघेलवाल महाजन जिन्होंने जैनमत स्वीकार किया था उत्पन्न हुए तथा गूजर सून्ती कतोरे व सुनार कोकन भील अग्नि पनोरा और मंग मैदानप्रान्त कोटाके हुए, वघेलवाला महाजनोंकी साढे बारह जातिमेंसे हैं, पर यह सब राजपूतोंसे उत्पन्न हैं ।

संवत् १७५५में निर्दयी औरंगजेबने मंडलगढको पिसानगढके रईस दूदाजी राठौरको दे दिया, उसने इस इलाकेको अपने भाइयोंमें विभक्त कर दिया और भूमियां भाइयोंपर काम चलानेको कुछ कर नियत किया । पर रानाने उसपर अधिकार किया और प्रत्येक पांचसौ रुपयेपर एक सवार और एक पैदलकी वेतन नियत की और बहुत थोडा रुपया अपना अधिकार जतानेको रक्खा, रानावत् कनावत् और शक्तावतोंपर जिन्होंने इसपर स्वत्व किये थे, बादशाहके नियमके समान उनसे भेंट चाही, जिनके पास एक ग्राम था उनसे एक वर्षका जिनके पास एकसे अधिक ग्राम थे उनसे तीन वर्षमें कर लिया जाता था, अमरगढ २५०० रुपयेपर; अमलदा १५ और तिन्तरो १३०० सौपर झूजराल १४०० सौ पर नियत हुआ और जो कुछ नहीं देते थे धटनाके समय उनको सहायता देनेका नियम था । इसी समय दूसरे राजसिंहके समयमें उमेदसिंह शाहपुरावालेको पाँचवे हिस्सेका मंडलगढका इलाका ३५५० वार्षिक ५०० भेंट नायब और २०० रुपये भेंट चौधरीपर मिला, संवत् १८४३ तक इनके वंशवालोंके पास यह इलाका रहा; पीछे सोमजी दीवानने सहायता प्राप्त होनेसे उनको चन्दावतोंके साथ युद्ध करनेसे दे दिया और दूगामऊ तथा पुरावा दो जागीर पृथक् नियत की और ४०० अश्वारोही समयपर उनसे लेनेका नियम किया, पर अब इसमें बहुत परिवर्तन हो गया है रईस ऐसे निर्धन हो गये कि अब एक घोडा भी नहीं दे सकते ।

मुकाम वजीत १८ तारीख फासला ८ मील–यह वेरस नदीके किनारे एक ग्राम है यहां घास बहुत होती है । १९ तारीखको वरसलवास पहुँचे यहांके महाराज हमारी मुलाकातको आये, यह रानावतवंशके बडे योग्य पुरुष हैं इनके पास पांच मौजे हैं, राना

अमरसिंहके वंशधर जो शाहजहांकी सहायतामें औरंगजेबके द्वारा नियत हुए थे उस समय उनका नित्यका स्वत्व जाता रहा उनके पुरुषाओंकी छतरी यहां बनी है।

२१ तारीख अम्बाह--दूरी साढे छः मील यहां कई एक खोदित लिपिकी नकलें हमने मंगाईं, बहुधा लोग हमारी भेंटको आये, पर ज्वर जाडेने हमको तंग कर दिया है। हमारी डायरी बाबू महेश रखता है और उसकी चतुराईपर हमको विश्वास है।

हमीरगढ ११ तारीख-यह शहर वीरमदेवके आधीन है जो रानावत सम्प्रदायका है। तथा धीरजसिंहका पुत्र है जो संवत् १८४३के समय सालूम्बरके सामन्तोंका सम्मति-दाता था, उसको यह मिला था, इस समयका अधिकारी कुछ जनूनी है और जो कि उसने एक दरजीको अपनी सेवासे पृथक् नहीं किया इसीसे ७००० रुपयेकी आयवाले दो शहर उससे छीन लिये गये, इसमें ८०७ घर सक्की जातिके हैं। छींट दुपट्टे यहांके विख्यात हैं, एक उमदा तालाब है उसमें बहुत सी बतकें हैं, उनको कोई नहीं मारता सिंघाडे बबूले उसमें बहुत होते हैं।

२३ तारीख मुकाम सियानो दूरी आठ मील तीन फरलांग हम अब बीच मेवाडमें हैं, यहां मैदान ही नजर आते हैं यहां बडा कौतूहल दिखाई देता है, यहां एक मोराज जानवर बडा सुन्दर होता है, यहांके लोग हमारे भेंटके लिये आये, हमने पूछा तुम इतनी दूर अपने स्थानसे आये। उत्तर जब आप यहां पहिले आते थे तो सारे शहरमें २०० घर भी आबाद न थे, अब बारह सौ घर आबाद हैं राना हमारा राजा है आप हमारे परमेश्वरके बराबर हैं व्यापार उन्नतिपर है, हमसे महाराजा विवाहके समय कर भी वसूल नहीं करते हैं, हम बहुत प्रसन्न हैं जो आपने हमारे साथ सलूक किया है, उसके सामने पांच कोश क्या पांचसौ कोश भी कोई वस्तु नहीं है। मैंने उनको उपदेश किया और वे प्रसन्नतासे विदा हुए, उनके चले जानेपर बाबा संगरौतवाला और ठाकुर रावरदोवाला हमसे बातचीत करते रहे इस ठाकुरके पुत्रको हमने अजमेरके किलेसे छुटाया था, वह बहुत देरतक बातचीत करके विदा हुए।

रस्मी २३ अक्टूबर रास्ता साढे १३ मील हम फेरके रास्तेसे चले, इस कारण हमें १५ मील जाना पडा, मार्गमें मरोली स्थान देखा यह जंगलमें बसा हुआ है। पहिले यहां बीस घर थे और अब सत्तर घर हैं। यह रस्मी बहुत सुन्दर स्थान है, इसको राजा चंदसे निर्मित मानते हैं, पर यह विदित नहीं कि यह चन्द्र कौनसे हैं, यहाँके लोगोंने एक तख्त लगाई है उसका विषय है कि मुहरा व्यापारी महाजन नकाश और रस्माकी सब पंचायत नियत करती है कि तहसीलदारने पाकरके व्यापार-पर और अन्नपर अधिकतर महसूल लगा दिया, इससे उन्होंने यह स्थान छोड दिया। पर जो कि रियासतके अहलकारने इस प्रकारकी कसम खाई कि आगेसे वह ऐसा न करेंगे तब उसको फिर लाकर आबाद किया और ईश्वरकी साक्षी की; इससे हम सबने यह तख्ती लगाई कि यादगार रहै। मिती आषाढ वदी तीज संवत् १८१९।

जसैमू तारीख २४ फेरसे मार्ग चौदह मील सीधे रास्तेसे बारह मील पहिले यह विख्यात नगर थां, पानी थोरे है पहिले यहां कुछ भी आबादी न थी, अब यहां अस्सी घर आवाद हैं हमारा गमन मसका न्हाय स्थान दरीबेमें हुआ पर यहांकी सब लिपियां पानीमें डूबी हुई हैं।

मुकाम शनिवार तारीख २५ सीधा रास्ता लेनीसे साढे बारह मील, हम फेरके मार्गसे इसलिये गये कि वह स्थान देखें कि जहाँ रावल समरसी चित्तौडवाले और भोला भीम अनहलवाडेसे युद्ध हुआ था। इस मैदानमें ढाका बहुत है, इसका वर्णन लोगोंने कवितामें किया है।

उसने लिखा है कि युद्ध करेराक्षेत्रमें हुआथा और सोलंकी पराजित होकर नदी पार हो गये। यहां जहां वनास और बेरसका संगम है वहां एक महादेवजीका मन्दिर है।

करेरा यहाँ एक मंदिर तेतीस अवतार जैनियोंका है। यहाँ कई लिपियां हैं कोई संवत् ११००, कोई १३०० और कोई १३५० का बना हुआ इसको प्रगट करती हैं। पुजारी यहाँके निर्धन हैं पर मंदिर बहुत सुन्दर है। स्तम्भोंपर जैन सम्प्रदायोंके अक्षर खुदे हैं, शिखर तीस ३० फुट ऊंचे हैं, चालीस फुट ऊंचे शिखरमें पार्श्वनाथकी मूर्ति है, दूसरे स्थानोंमें उनके शिष्योंकी मूर्तियें हैं। ३० वर्ष हुए कि पहिले यहांके मैदानोंमें जुआरकी खेती होती थी कि उसमे हाथी भी समा जाय। मार्ग सर्वथा लुप्त है, हमारी पालकी कठिनाईसे चली यहां पाहिले छः सो ६०० घर थे, अब ६० घर हैं। यहाँकी स्त्रियां पानीके साथ हमको धन्यवाद देने आई, रसमीसे करारातक सात मीलका मार्ग बडा कटीला है वहांसे सुन्वार तक नौ मील है। सुन्वार एक मेवाडके वंशधरके अधिकारमें है। महाराज दौलतसिंह कमलमेरवालेके अधिकारमें है, यहाँ एक किला भी है, यहाँ संवत् १८२६ में तमाखूका व्यापार बन्द होगया था। मादली २६ तारीख साढे सात मील पहिले यह सात हजार रुपये वार्षिक की आमदनीवाला बडा शहर था अब उसमें सात सा भी नहीं बैठते। इसमें अब ८० अस्सी घर हैं. अब यहाँ खेती होती है, प्रबन्धकर्ता उत्तम नहीं है यहाँ वाईजी अर्थात् इस समयकी राजमाताने एक सुन्दर संगमरमरका स्थान बनवाया है, संवत् १७३७ की जैनधर्मकी खोदित एक लिपि है।

तूस और मेंहता, २७ तारीख चौदह मील आज बडी कमजोरी है इस जंगलमें नाहर पाये जाते हैं, हमारे राजाके घोडेने जो हमारे साथ था समझ लिया कि अब हमारी यात्रा पूर्तिपर है। इसी स्थानपर हरत दाताने मार्गने जादूकी माल ग्यारह सौ वर्ष हुए शिशोदियाके मारी थी। एक बडा शूकर हमारे मार्गसे निकल गया, हम आराम चाहते थे यहाँके मनुष्य हमारी अगौनीको आये उनके आगे नगाडे बजते थे, स्त्रियाँ, अपना लोटा लिये हुए आई। हम धन्यवाद दिया; हमने उनके लोटोंमें एक२ रुपया डाल दिया और विश्राम स्थानपर आये। हमारा भिस्तरी बडा कमजोर हो गया है, उसकी अस्थिमात्र शेष है।

नवम अध्याय ९.

कर्नल टाड साहबकी अपने देशमें जानेकी इच्छा--स्वदेशमें जानेको रोक कर बूँदी राज्यमें जाना–बूँदीके महाराजका प्राण त्याग करना--उनका कर्नल टाड साहबको अपने पुत्रके अभिभावक पदपर नियुक्त करना--हैजा--पौहाना--भीलवाडा-जहाजपुर--कर्नल टाडका बूंदीमें आना--राजपरिवारके साथ साक्षात्करना--राजपरिवारके साथ आत्मीयता।

निरन्तर घोर परिश्रम करने तथा–रजवाड़ेकी राजनैतिक–आर्थिक एवं नैतिक उन्नति साधन करनेकी निरन्तर चिन्ताके करनेसे सन् १८२१ईसवीमें कर्नल टाड साहबका स्वाध्य एकवार ही भंग हो गया। इस समय उनकी वीरता एकवार ही दूर हो गई। इस समय उन्होंने चिकित्सकके परामर्शके अनुसार अपनी प्राणरक्षाके लिये "प्यारी जन्मभूमिमें जानेकी अभिलाषा प्रगट की। परन्तु रजवाडेकी और २ राजपूत जातिकी ओर उनकी कैसी माया और अकृत्रिम स्नेह उत्पन्न हुआ था कि वह अपने शरीरकी ओर तथा अपने जीवनकी ओर ध्यान न देकर केवल राजस्थानकी शान्ति और राजपूतजातिके मंगलसाधनमें लिप्त हुए। देश देशोंमें जाकर किसी न किसी एक घटनाने उनको बाँध रक्खा। रजवाडेके समस्त राजवंश और सामन्त वंशोंके साथ उनका भाई मामा और चाचा इत्यादिका सम्बन्ध स्थापित हुआ था, इसी कारण वह किसी प्रकार भी माया ममताको छोड कठोर हृदय साधारण अंग्रेजके समान राजस्थानको न छोड सके। सन् १८२१ ईसवीके जौलाई मासमें उन्होंने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि वर्षाऋतुके समाप्त हानेपर अपने देशमें जानेका निश्चय किया था। परन्तु डंकन साहबकी भविष्य वाणी कि तुम अभी स्वदेश न जा सकोगे पूरी हुई कि उसी समय बूँदीके महाराजकी अचानक मृत्यु हो गई; इसालिये उनके वह मनकी आशा मनमें ही लोप हो गई, वह लिखते हैं कि "कई दिन बीतने पर मुझे बूँदीका समाचार मिला कि मेरे प्यारे मित्र बूँदीके महाराजने प्राण त्याग किये हैं। और अपनी मृत्युके समय मुझे अपने शिशुपुत्रके अभिभावक पदपर नियुक्त करके उस पुत्र और बूँदीराज्यके मंगल साधनका भार मेरे ऊपर अर्पण कर गये हैं।" उदार हृदय राजपूत बांधव टाड अपने राजपूत मित्रकी मृत्युसे कातरहृदय होकर उनकी उस आन्तिम आज्ञाको पालन करनेके लिये दुःखित होकर शीघ्र ही बूँदीकी ओरको चले।

इस समय यहां महामारी हैजा फूट निकला था, बडे २ यत्न किये जाते थे हमने देखा कि यन्त्रशास्त्री मन्त्र पढते और हवन करते थे शहरसे बाहर दक्षिणकी ओर गंगाजल टपकाया जाता था, लोग व्याकुल थे ऐसे समय हमने अपनी यात्रा वर्षामें ही आरम्भ की।

स्थान पोहोना, २५ जौलाई–यह बडे दुःखका दिन था, हम उदयपुरसे वर्षाकालमें चले थे, मेहता और बादलीके बीच मार्गमें हमने देखा कि हमारा हाथी मरा

पडा है, इस दिन बडी ठंढी हवा थी जिससे बडा कष्ट हुआ। हमारी इच्छा भीलवाडा देखनेकी थी इससे उसी मार्गसे चले।

२६ जौलाई भीलवाडा--दिनसे इन्द्रदेवने कृपा की है धूप निकलती है, यहांके पुरुष और स्त्रियां कलशोंमें जल लेकर हमारी अगौनीको आये, यह लोग हमैं शहरमें ले गये बाजार सजाया गया था। हम उसे देखकर लौट आये, भोजन किया फिर लोग हमारे पास आये, हमने इतर इलायची देकर उनको बिदा किया, थोडे ही दिनसे यहां मंडी जुडी है और तीन हजार घरोंमेंसे बारह सौ घर व्यापारी जनोंके हैं। सब स्थानोंकी वस्तु यहां मिलती हैं। यदि कोई कुप्रबन्ध न हुआ तो इसकी बडी उन्नति होगी, २८ तारीखको भी लोगोंने हमको वहीं रक्खा २९ तारीखको बहुत थोडा असबाव लेकर यहाँसे चले मार्ग सब बिगड गये थे, पानी वर्ष रहा था साथी लोग गिर २ पडते थे इस प्रकार जहाजपुर जाकर पहुँचे।

कर्नल टाड साहब बिना विश्राम किये बराबर चलते ही गये और ३० तारीखको बूँदीमें पहुँच गये। उन्होंने लिखा है कि "मैं जिस पथिकके वेषसे बूँदीमें गया उसी वेषसे शोकसे संतापित हुए राजपरिवारको धीरज देनेके लिये सबसे पहिले राजमहलमें गया और वहां जाकर सबको धीरज दिया। मैंने महलमें जाकर नवीन महाराज और उनके अनुज गोपालसिंहको परिषद मंडलीसे व्याप्त देखा। जाते समय दोनों ओर शोकसे संतापित होकर भी मेरे प्रति सन्मान दिखानेके लिये आग्रह करते हुए सेवकोंको देखा"।

"मृतक महाराजके वियोगसे मेरे हृदयमें जो अपार शोक उपस्थित हुआ था मैंने उसे प्रकाश करके कहा और साथमें यह भी विदित किया कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल बहादुर भी महाराजके वियोगसे दुःखित हुए हैं और नवीन महाराज जबतक राजकार्यमें समर्थ न होंगे, गवर्नर जनरल बहादुर तबतक उनके पिताकी जगह होकर उनके कल्याणकी कामना करेंग। राजकार्यमें अज्ञान नवीन महाराजने धीर और गंभीरभावसे उत्तर दिया कि मेरे पिता मुझे आपकी गोदमें बैठाल गये हैं, उन्होंने मेरे मंगलका भार आपके हाथमें दिया है"। मैं भी इसी प्रकारसे धीरज दे सामन्तोंके साथ वार्तालाप करनेके पीछे अपने ठहरनेके लिये जो मकान महलसे कुछ ही दूरपर था वहाँ गया। मैंने बैठकर देखा कि मुझे जिन २ प्रयोजनीय वस्तुओंकी आवश्यकता थी वह सभी वस्तुएँ तैयार रक्खी हैं और मैंने बिना पोशाक उतारे ही देखा कि मेरे लिये भोजनकी सभी सामग्री तैयार रक्खी है। राजमाताने वह भोजन भेज दिया था और मेरे प्रति सम्मान दिखानेके लिये एक ब्राह्मणके हाथ महलसे यह सब सामान भेजा था, उसके आगे २ एक ब्राह्मण गंगाजल छिडकता हुआ आया था। पीछे किसीकी दृष्टि न लगै, अथवा कुछ अशुभ न हो यह काम इसीलिये किया गया था"।

दशम अध्याय १०.

राज्याभिषेक-राजभ्राताओंकी योग्यता-राजमाताका समाचार-बलवन्तराव-राज्यका प्रबंध करना-रानीसे साक्षात्-बूँदीकी आय-कोटेमें गमन-रावता-

कर्नल टाड साहबने ५ पांचवीं अगस्तको लिखा है, "कि मुझे बूँदीमें आया हुआ सुनकर राजमाताने नवीन महाराजका राजतिलक देने वा अभिषेक कार्य करनेका निश्चय किया और श्रावणमासकी तृतीयाको महापर्वको निकट जान उसके दूसरे दिन अभिषेक होनेका निश्चय किया। राजमाताने मेरे समीप एक लेखकके द्वारा यह कहला भेजा कि तृतीया तिथिको जातीय पर्व होता है, उस दिन मुझे नवीन महाराजके साथ राजयात्रा करनी होगी। राजमाताने मेरे समीप यह भी कहला भेजा कि रजवाडेमें ऐसी रीति प्रचलित है कि बूँदीके राजाकी मृत्यु होनेपर उनके कुटुम्बी तथा सम्बन्धी वा प्रतिवासी बारह दिन अशौचके पीछे नवीन महाराजको अशौच चिह्न छोडकर शुद्ध होनेके लिये आग्रह करते हैं। उनके वचनानुसार मैंने शीघ्र ही महाराजके लिये रंगे हुए कपडे और पगडी तथा हीरोंके लगे हुए शिरपेच मोल लेकर राजमहलमें भेज दिये। उन्होंने अशौच चिह्नस्वरूप सफेद वस्त्रको त्याग कर इन रंगे हुए वस्त्रोंको धारण किया। मेरे उस अनुरोधके अनुसार बारह दिनके पीछे नवीन शिशु महाराज मेरे दिये हुए कपडोंको पहरकर शुद्ध हो बाहर हुए, मैं उनके साथ बूँदीके प्राचीन महलमें गया। उसी स्थानपर समस्त क्रिया कर्म हुए थे"

"दूसरे दिन महाराजका अभिषेक किया गया--राजमहल नामक महलमें जहां बूँदीके राजाको अभिषेक होता है मैं वहीं गया। मैं जिस रास्तेसे गया उसी रास्तेसे सुन्दर वस्त्रधारी अगणित प्रजा इकट्ठी होकर मेरा अभिनन्दन करती थी महलके सामनेके भागमें इसी भांति अगणित राजपूतोंने चारों ओर इकट्ठे "जयजय" स्वरसे महाआनन्द प्रकाश किया, महलके भीतर जिस स्थानपर महाराज अभिषेक यज्ञमें नियुक्त थे वहां भी बहुतसे सामन्तादि इकट्ठे हुए थे। मैं वहां जा पहुँचा और उन सामन्तोंसे बातचीत करने लगा, उसके पासके ही एक कमरेमें पूजा और हवन हो रहा था पूजाके समाप्त होते ही आज्ञानुसार मैंने नवीन महाराजको उस यज्ञस्थानसे बुलाकर दूसरे कमरेमें एक आसनपर बैठाया, उस स्थानपर फिर पूजादि हुई, महाराजने अपने पुरोहितके माथेपर टीका लगाया। उक्त कार्यके समाप्त हो जानेपर सबकी आज्ञानुसार मैं प्रसन्न हो सभास्थानके एक ऊंचे मञ्चानपर स्थित राजसिंहासनकी ओरको महाराजको ले गया। मंचान ऊंचा था, इस कारण सुकुमार महाराज उसके ऊपर चढनेमें समर्थ न हुए, मैंने उनको उसके ऊपर चढा दिया। इसके पीछे पुरोहितने चंदन लगाया, मैंने मध्यमा उंगलीसे नवीन महाराजके मस्तकपर तिलक दिया। इसके पीछे उनकी कमरमें तलवार बांधकर अपनी गवर्नमेण्टके नामसे महाराजको अभिनन्दन कर, जिससे सभी सुन सकें

ऐसे ऊंचे स्वरसे कहा कि बृटिश गवर्नमेण्ट सदाके लिये बूँदी राज्य और राजदरबारके मंगलकी कामना करैगी। मेरे इस वचनपर सुन्दर वस्त्रधारी हजारों मनुष्य महा आनन्द प्रकाश करने लगे और उसी समयमें तारागढ़के किलेसे तोपें छूटनेका शब्द हुआ। इसके पीछे मैंने महाराजके शिरपर पगडीमें हीरोंका शिरपेच, गलेमें मोतियोंकी माला, हीरे जडे खँडुए देकर राजपूतोंमें प्रचलित रीतिके अनुसार इक्कीस दुशाले तथा बडे कीमती मूल्यवान् अनेक प्रकारके वस्त्रादि उपहारमें दिये। चाँदीके आभूषणोंसे सजा हुआ एक हाथी और दो काले घोडे भी लाकर उपहारमें दिये गये। उपहार दानकार्यके समाप्त हो जानेपर मैं अपने नवीन महाराजके पिताके मित्र और उनके अभिभावकस्वरूपसे उनका अभिनन्दन और मंगल कामना करके महाराजसे कुछ दूर जाकर खडा हुआ, उस समय राजाके प्रधान २ सामन्त उपहार देकर अभिनन्दन करने लगे इस समय राजभ्राता गोपालसिंहने आकर मुझसे कहा कि आपके अतिरिक्त मेरा और कोई अभिभाविक नहीं है"। समस्त सामन्त भी एक २ करके महाराजको अभिनन्दन कर मेरे पास आये और मेरे पास आकर मेरे इस अभिषेक कार्यमें मिले और इस कार्यको स्वयं करके आनन्द प्रकाश करते हुए बृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि स्वरूपसे उन्होंने मुझे नजरें दीं। पीछे मैं महाराज और सामन्तोंको अभिवादन कर वहाँसे चला आया। नवीन महाराज इसके पीछे सेना और सामन्तोंको साथ लेकर नगरमें घूमते हुए सीतरकी भवानीके मंदिरमें पूजा करनेके लिये गये।

दूसरे दिन राजमाताका समाचार हमारे पास आया। हमने उनके कहनेके अनुसार सब प्रबन्ध कर दिया। उनको बलवन्तसिंहकी ओरसे कुछ शंका थी, एक समय बारह वर्ष हुए कि इसने आक्रमण किया था। रानीसाहिबा अपने दीवान भूरा शंभूनाथसे भी राजी न थीं, इससे बडे धर्ममें विश्वासी गोविन्दराम वकील, तथा धाभाई किलेदार तारागढ़ तथा चन्द्रभान नायक यह जो बडे ईमानदार थे भूराके ऊपर दृष्टि रखनेके लिये नियत हुए।

मैंने सब प्रबन्ध करके आज्ञा दी कि जो रुपया आमदनीका हो वह सब महलके खजानेमें रक्खा जाय, और ऊपर लिखे पुरुषोंको रसीद तथा हिसाबका उत्तरदाता किया, और बलवन्तसिंहको भी बिदा करनेका प्रबन्ध किया।

इसी समय श्रावणी पूर्णिमापर राखीका त्योहार आया। रानीसाहिबाने मुझे भाई मानकर अपने गुरुके हाथ मेरे पास राखी भेजी, इस सम्बन्धसे ग्यारह वर्षके कुमार मेरे भानजे हुए, तब मैंने दीवानकी मारफत कुछ प्रबन्ध विषयक बातचीतकी इच्छा की और विश्वासी सेवकोंके साथ महलमें गया। कई घंटेतक बातचीत हुई, रानीसाहिबा एक परदेके बीचमें थीं उनकी बातचीतसे राज्यप्रबन्धविषयक उनकी बडी योग्यता प्रतीत हुई; हमने उनको समझा दिया कि तुम पृथक् लिखा पढी न करना और हर किसीसे अपने मनकी बात न कहना। हमारी गवर्नमेण्ट सदा तुम्हारी सहायक रहैगी। फिर रानीने एक सहेलीके द्वारा हमारे पास इत्रपान भेजे, और बार २ यही कहकर बिदा किया कि लालजीको भूल मत जाना।

मैं आनन्दपूर्वक लौट आया और रानीकी योग्यतासे मैं बडा प्रसन्न हुआ। मुझे और रानियोंसे इनमें विशेष योग्यता प्रतीत हुई।

हम अगस्ततक रयासत बूँदीमें रहे, जब चलने लगे तब यही उपदेश दिया कि हम आप सब लोगोंको इस रयासतका प्रबन्धकर्त्ता नियत करते हैं, यदि हम प्रतिवर्ष हिसाब माँगैं तो आप इसपर आश्चर्य न करैं और भूराको भी समझाया कि वह आगेसे उन्नतिका मार्ग स्वीकार करैं जिसको उसने साथियों सहित स्वीकार किया।

सफरमें हमारे पास उनके समाचार आते रहे, तथा देवनागरी और फारसीमें महाराज बालकका लिखा पत्र भी हमारे पास आता रहा। जब हम वहीं थे तभी बालक महाराज डेरेके सामने अपनी चातुरी दिखाते हुए घोडे फेरते थे; एक समय महारानीने हमको धन्यवाद दिया कि आज बालक महाराजने शूकरका शिकार किया है। इस रीतिपर बडा दान पुण्य किया गया। यह वह समय था कि जबतक जंगली शूकर न मारा जाय तबतक वीरोंसे प्रतिष्ठा नहीं मिलती थी।

हम जहां कहीं रहते पुरानी खोदित लिपियोंकी खोज करते थे, बूँदीके राजपुरुषोंको इसमें बडा आश्चर्य होता था।

बूँदीके खालिस आमदनी तीन लाखसे विशेष नहीं थी अब थोडे ही समयमें पाँच लाखसे विशेष होगी और खालसे इलाकोंको सिवाय ८०००० हजार रुपये वार्षिक जो सरकार अंग्रेजको दिया जाता है जो पहिले सेंधियाके अधिकारमें था, जो उसने सन् १८१८ ई० के नियमपत्रके अनुसार छोड दिया था उसके सिवाय महाराजके पास सातसौ सवार सजातीय, फौज किलेदारीके सहित तथा गोलन्दाज बारह तोप और २७०० पैदल तनख्वाहदार थे तथा किलेदारी और प्रान्तोंकी सेना इससे पृथक् थी जिनकी आमदनी उनके खर्चको पूर्ण थी।

१९ नवम्बर स्थान रोहता–चौदह अगस्तको हम कोटेको चले। बूँदीकी प्रजा तथा हम भी उस समयके ज्वर जाडेसे पीडित हो गये थे। सन् १८१७ और १८ में हमने इसी स्थानपर शत्रुओंके साथ संग्रामको सेना सजाई थी और यह युद्ध पिंडारोंके साथ हुआ था, और उनकी लूटका जो रुपया आया उससे लार्ड हेसटिंगसके नामसे पुल बनानेका विचार हुआ था उसमें प्रति देशका असबाब था। अनेक प्रकारसे ४००० पशु थे और हमारी इच्छानुसार एक पुल १५ महराबका कोटेके पूर्वकी ओर बनाया गया, यह एक सहस्र फुट लम्बा था एक वीर सिपाही जिसने उस युद्धमें महा सहायता की थी तथा दूसरे साहबोंकी मानो यह स्मृतिचिह्न है।

जो कि हम हाडौतीके मुख्य मार्गके समीप थे, उस समय राजरानाने कहा कि वह हमको यह स्थान दिखाता है जहाँ बडा शिकार होता है। जहाँ पर्वतोंकी श्रेणी बराबर चली जाती है, वही स्थान इसके लिये निश्चित हुआ। जो हाडौतीको मालवेसे पृथक् करता है, तीसरे पहरको हम शिकारको चले। शिकारियोंके शब्दसे जंगलके जीव जन्तु हरिण आदि कूदते फांदते चलने और भागने लगे। लाल दागदार बारहसिंगे

जंगली सुअर भागते दीखने लगे। जानवरोंका भयसे भागना एक अद्भुत दृश्य दिखाता था, इस दिन हमारे डेरोंपर हरिण मारकर लाये गये थे।

कहा जाता है कि रियासतका शिकारमें दो लाख रुपया खर्च होता है। २५ सवारी २०० हांकनेवाले और ५०० शिकारी समयपर कामके लिये रक्खे जाते हैं, पर विशेष व्यय शिकारके उपरान्त भोजमें होता है । लोगोंको इनाम बांटा जाता है, यह काम राजरानाने हाडा जातिके प्रसन्न करनेको किया था पर तो भी इतने समयतक राजकाज करने तथा कठोर व्यवहार करनेवालेपरसे विरक्तता किसीकी न देखी गई।

जबतक महाराव मेवाडसे लौटकर आवैं तबतक हम मालवेमें दौरा करेंगे, जहां भितराकम जंगलमें चम्बल गिरती है।

एकादश अध्याय ११.



मुकन्दरामें जाना–चम्बलका दृश्य– बंजारोंके लगानेके चिह्न–जोगियोंके स्थान–टाड साहबका एक जोगीका शिष्य होना–शिशोदियाका वृत्तांत–योगियोंके सरदारका वर्णन–बरौली और उसके मंदिरोंका वर्णन।

बूँदीके नवीन महराजका अभिषेक हो जानेपर वहां कुछ दिन रहकर शांति स्थापन और सुशासनकी व्यवस्था करके महात्मा टाड साहब बूँदीसे चले गये, उन्होंने मुकन्दराके पास जाकर लिखा है "मैं बहुत सबेरे प्रसिद्ध मुकन्दरा नामक पहाडी मार्गसे होकर आया और दूरसे ही मालवेके अत्यन्त रमणीक समतलक्षेत्रको देखा । मैं पीछे बाईं ओरको जाकर जो पर्वत हाडावतीको मालवेसे विच्छिन्न करते हैं उनकी एक ओर होकर गया । मेरे पर्वतोंपरसे उतरते ही नवीन सूर्य कमनीय मूर्तिसे उदय हुए । वहां एक स्थान पहला भीलोंके राजाके करग्रहणका है जिसको बंजारोंने चिह्नस्वरूप मान लिया है देखा, मैं क्रमशः नीचे उतरकर भिंसरोरके सामन्तके स्थापित अतीत नामक स्थानके झलका नामक मंदिरमें गया । उस मंदिरके सामने जटाजूटधारी विभूति लगाये हुए अनेक संन्यासी दिखाई पडे; उन संन्यासियोंमेंके प्रधान नेताकी अवस्था ६० वर्षकी होगी, उन्होंने आगे बढकर मुझे आशीर्वाद दिया । सबसे पहिले उन्होंने मेरे मस्तकपर विभूतिका टीका लगाया और मुझको अपना चेला बना लिया । मैंने उपयुक्त सम्मान दिखानेके साथ ही साथ उस टीकेको ग्रहण किया। यह वृद्ध संन्यासी प्राचीन विवाद तथा इतिहासको बहुत कुछ जानते थे। उन्होंने आदिसे देवता दैत्योंके युद्धकी कथा कहते सब रामायणकी कथा कही। मेवाडके राजपूतोंका नाम शिशोदिया क्यों हुआ, इसके सम्बन्धमें उन्होंने एक विचित्र कहानी कही । उन्होंने कहा कि इस पहाडो वनके देशमें एक समय चित्तौडके महाराणा मृगया करनेके पीछे भोजन करने बैठे उस समय वह क्षुधासे व्याकुल थे।

बडी शीघ्रतासे उन्होंने एक मांसका टुकडा मुखमें डाला उसमें एक बनैला डाँस कहींसे प्रविष्ट हो गया उस डाँसने मांसके साथ राणाके उदरमें जाकर भयंकर वेदना उत्पन्न की। राणाकी आज्ञासे वैद्य आये उनसे सब समाचार कहा गया, वैद्यने राणाके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये एक उपाय स्थिर किया, और राणाके सेवकसे गुप्तभावसे कहा कि एक गौके कानका थोडा मांस काटकर लाओ, सेवकने उस आज्ञाको पालन किया, वैद्यने उस मांसको एक कपडेमें बांधकर उसे बडे डोरेमें बांध राणाके गलेमें डालनेके लिये कहा। राणाने इसी प्रकार कार्य किया, वह उदरमेंका डाँस इस गोमांससे बँध गया, वैद्यने डोरेको खैंचकर बाहर किया राणाके प्राणोंकी रक्षा हुई। राणाने महा संतुष्ट होकर वैद्यको यथेष्ट पुरस्कार दिया परन्तु किस उपायसे वैद्यने हमारे प्राणोंकी रक्षा की इसको वह बारम्बार पूछने लगे, तब वैद्यने समस्त वृत्तान्त कह दिया। राणाने जब सुना कि मेरे उदरमें गोमांस डाला था तब कहा कि यह तो महापाप किया है--इसका मैं प्रायश्चित्त अवश्य ही करूँगा। अज्ञानतासे गोमांस खाया था इस महापापका दंड निश्चय हुआ कि महाराणाको जलता हुआ शीशा निगलना होगा। शीघ्रतासे ही प्रज्वलित शीशा तैयार हुआ महाराणाने निर्भय होकर उसको पी लिया। उससे कुछ भी क्लेश न हुआ, उसी दिनसे वह राजपूत राजवंशधर आहारियोंके बदलेमें शिशोदिया नामसे पुकारे जाते हैं। यह प्रवाद वाक्य सर्वदा सत्य है प्राचीन योगीको ऐसा दृढ विश्वास था। योगीके साथ इस प्रकार वार्तालाप करते २ मैं आगे बढा दूरसे ही वृक्षोंसे घिरी हुई वारौलीके विख्यात मंदिरका शिखर मुझे दिखाई पडा। वह दृश्य नेत्रोंको आनन्द देनेवाला था। मैं एक छोटीसी नदीके किनारे होकर उस मंदिरकी ओरको गया। मैं जैसे ही उस पवित्र मंदिरके समीप पहुँचा कि वैसे ही देखा कि बडे २ आमके वृक्ष मानो आकाशको भेदन कर रहे हैं, वह वृक्ष अत्यन्त प्राचीन थे। मैं शीघ्र ही घोडेपरसे उतरकर मंदिरके आंगनमें आया। उस बडे लम्बे चौड मंदिरकी शोभाका वर्णन करना संपूर्ण असम्भव था। एकमात्र चित्रकार ही इसमें चित्र लिखनेकी सामर्थ्य रखते थे, शिल्पियोंने इसमें अपनी शिल्पशक्तिका चूडान्त दिखा दिया था, इसको देखकर पहिले मेरे मनमें इस बातका उदय हुआ कि प्राचीन हिन्दुओंके मंदिरोंमें यह शिल्पकार्य जैसा रमणीय है उसी प्रकार अतुलनिय भी है। खंभोंकी पंक्तिके ऊपर और नीचेका भाग एवं छत्त सभी मानो एक २ आदर्शमंदिरके स्वरूप थे सबसे ऊपर सुवर्णका कलश हमारी दृष्टिको आकर्षण करता था। प्रत्येक खंभ और शीर्ष भागके वर्णन करनेमें एक बडी पुस्तक तैयार हो जायगी, यद्यपि यह मंदिर बहुत पुराना था, तथापि आजतक इसका चमत्कार भली भांतिसे विराजमान है। इसकी दीर्घस्थाइताके दो कारण जाने जाते हैं। पहिला प्रत्येक पत्थर बडे पत्थरसे खोदकर बनाया गया है, इस कारण वह जैसा कठिन है उसी प्रकार उसका शिल्पकार्य भी अत्यन्त श्रमसाध्य है और दूसरा मंदिर पिसे हुए पत्थरसे रँगा हुआ था, इस कारण बहुत समयकी वर्षाके होनेसे उसका रंग किसी २ स्थानका दूर होगया था--और उसके सब अंश श्रेष्ठ अवस्थामें हैं''।

"वारोलीके इस महान् मंदिरमें महादेवजी विराजमान हैं। केवल एक ही स्थानमें नहीं, वरन् मंदिरके अनेक स्थानोंमें शिवलिंग विराजमान हैं। लगभग पाँच सौ हाथकी चौकोर भूमिमें यह मंदिर बना हुआ है, इसके चारों ओर पत्थरकी दीवारें हैं। उन दीवारोंके बाहर बडे २ वृक्ष हैं और छोटे २ मंदिर विराजते हैं। मंदिरके आंगनमें जाते ही सबसे पहिले एक स्तंभ मुझे दिखाई पडा, एक सर्प उस स्तम्भको पकड रहा था। जानेका द्वार अवश्य ही अत्यंत रमणीक था परन्तु वह इस समय नष्ट हो गया है, कारण कि उसके कुछेक अंश इस समय भी विद्यमान थे, जो देखनेसे अत्यन्त ही चमत्कारिक बोध होते थे। मंदिरमें प्रधान विग्रह महादेवजी पार्वती और उनके अनुचर थे। महादेवजी एक कमलके ऊपर खडे हुए हैं और एक सर्प मालाके समान उनके गलेमें पडा हुआ शोभा पा रहा है, उनके दांये हाथमें डमरू और बांये हाथमें मनुष्योंकी खोपडी है। दुःखका विषय है कि मुसलमानोंने उनके दोनों हाथ खंडित कर दिये हैं, मुसलमानोंने जो इस मूर्तिको सब नहीं तोडा इससे जाना जाता है कि वह पाषाणहृदय यवन भी इस मंदिर और विग्रहके शिल्पकौशलको देखकर मोहित हो गये थे। पार्वतीजीकी मूर्ति शिवजीके बाईं ओर स्थापित है वह एक कूर्मके ऊपर खडी हुई है, मंदिरमें और भी बहुतसी मूर्तियें हैं। शृंगके ऊपर एक प्रकारके सिंहकी मूर्ति दिखाई देती है, उसका नाम ग्रास है। अन्यान्य मूर्तियोंमेंसे बहुतसी टूटफूट गई थीं। एक स्थानपर एक योगी बीणा बजा रहा है, और दो हिरनियें ऊपरको कान उठाये धीरभावसे मानो बीणाकी झंकारको सुन रही हैं, इस भावसे वह खुदी हुई थी"।

"प्रधान मंदिरके बहुत ही पास और एक छोटा मंदिर विराजमान है। उसमें चतुर्भुजा देवीकी प्रतिमूर्ति स्थापित है, परन्तु मुसलमानोंने उसके भी दोनों हाथ तोड दिये, भील उनकी दो भुजारूपसे पूजा करते हैं। भील ही इस मूर्तिके परम भक्त हैं"।

"प्रधान मंदिरकी बाईं ओरको ३० फुट ऊंचे एक मंदिरमें अष्टमाता अर्थात् अष्टभुजा देवीकी मूर्ति है। परन्तु मुसलमानोंने देवीके सात हाथ एकबार ही तोड दिये हैं, केवल जिस हाथमें उनके ढाल थी उसीको नहीं तोडा है। अन्य पक्षमें देवीके मस्तकको एक बार ही चूर्ण कर दिया है। वह मूर्ति महादेवकी छातीपर खडी हुई है, परन्तु महादेवजीकी मूर्तिका टूटा हुआ मस्तक दूरसे ही दृष्टि आता है। योगिनी, और अप्सराओंकी मूर्तियोंपर यवनोंने हस्ताक्षेप नहीं किया है। दहिनी ओर त्रिमूर्तिका मंदिर है, इसमें एक मूर्तिमें ब्रह्मा विष्णु और महादेव इन तीनों देवताओंका मस्तक लगा है, महादेवजीके अतिरिक्त ब्रह्मा और विष्णुजीका मस्तक भी यवनोंने भंग कर डाला है इन तीनों मूर्तियोंपर जो बडा एक मुकुट था वह आज तक विराजमान है और उसका शिल्प कार्य अत्यन्त मनोहर और प्रशंसनीय है। ऐसा चमत्कार और शिल्पकार्य अब नहीं हो सकता"।

"हमने पीछे प्रधान मंदिरमें जाकर देखा कि यह ५८ फुट ऊंचा है इस मंदिरके बाहरी भागमें तथा भीतरी भागमें सर्वत्र देवी देवताओंकी मूर्तियां खुदी हुई थीं,

मंदिरके बाहर दाहिनी ओर एक गुम्मठमें महादेवजीकी मूर्ति है, उसके गलेमें मुंडोंकी माला तथा सात हाथोंमें सात ही प्रकारके अस्त्र हैं। उनके शिरपर नृकपालयुक्त सर्प विजडित मुकुट हैं, इसके बाईं ओर एक योगिनी रुधिर पान कर रही है और उनके दाईं ओर नीचेके आसनपर मृत्युकी मूर्ति है इसका शरीर जीर्ण शीर्ण है।

पश्चिमकी ओर महादेवजीकी और एक प्रकारकी मूर्ति है वह मूर्ति जैसी धीर और सुन्दर है उसी प्रकार रमणीक है पार्वतीका विवाह करनेके लिये जिस संमतिसे गये थे यह वही मूर्ति है। महादेवकी मूर्ति जैसी भयंकर है उसी भांति मनुष्योंके मुंडोंकी मालासे शोभायमान है, इसके पास ही मृत्यु मुखमें पडी हुई दो मनुष्य मूर्ति हैं; वह मूर्ति दोनों अविकल समंकित हुई हैं"।

उत्तरमें एक मूर्ति है जो काल और उसके साथियोंकी है, देहाती उसको भूका माता कहते हैं, वह वृद्धा और खोपडियोंका हार पाहिरे हैं, दो मनुष्य उसके साथ हैं जो टेढी आकृतिके हैं। मृतक होनेसे उनकी आँखें बन्द हैं मुख कष्ट पाये हुए सा प्रतीत होता है। और एक मांसाहारी पशु उनके समीप आ रहा है।

मन्दिरका सभामंडप कई फुट आगे तक है, दोनों ओर चौकोन स्तम्भे बने हुए हैं, इन स्तम्भोंमें स्त्री पुरुषोंकी बहुतसी मूर्तियें हैं। महरावें बडी अद्भुत हैं। मूर्ति खड्ग हाथमें लिये ऐसी बनी हैं कि ऊपर पैवस्त हो गई हैं, यहां एक हाथीकी मूर्ति है। हम कह सकते हैं कि हमने ऐसी मूर्ति कहीं नहीं देखी।

इसकी छत बडी मनोहर है हमारे वासीने उसका मानचित्र लिया है, पवित्र स्थानपर देवताकी मूर्ति है जिसको यहांवाले रोरी व रोली कहते हैं; दूसरा नाम इनका वालनाथ है, पंडे इनकी स्तुति श्लोकोंसे करते हैं, यहां एक पत्थर चम्बलके रगडसे गोल हो गया है, इसीके समीप मंदिर है। एक महापुरुषने इनके समीप पार्वतीकी मूर्ति बनाकर स्थापित की है पर देवताको यह स्वीकार न हुआ उसको बडे कष्ट पडे उसकी भार्या मरी पुत्र मरा और उसका दिवाला हो गया।

इस मन्दिरके समीप वीस गजपर एक और स्थान सिंगार चोरी है। इसका यह चालीस फुट मुरव्वा है। बडे २ स्तम्भोंपर स्थापित है सब ओरसे खुला है उसमें भी बहुत मूर्तियां हैं। सहनमें वारह फुटका एक चौतरा है यहां राजा हूनका विवाह एक राजपूतकी पुत्रीसे हुआ था उसीकी यादगारमें यह बना है।

मन्दिरके बीचमें एक स्थान नन्देश्वरका बना हुआ है, एक पुरुष ईश्वरकी प्रार्थना करता है, महादेवजीके समीप छोटे २ मंदिरोंमें महादेवजी तथा अन्य देवताओंकी मूर्तियां हैं उत्तरकी ओर गणेशजी तथा दूसरे देवताओंकी हैं, परन्तु यवनोंने इन मूर्तियोंको भंग कर दिया है; आगे दो स्तम्भ हैं एक खडा है दूसरा गिरा है शायद नारायणके पालनेके निमित्त हो; यहां एक जलपानके लिये बावडी बनी है, यहांसे चलकर हम एक कुण्डपर पहुँचे, यह कुंड साठ फुट लम्बा चौंडा है इसमें पानी लबालब भरा रहता है, इसके समीप एक मन्दिर जलके देवताका है। कुंडके निकट जो मंदिर हैं उनमें भी

अद्भुत शिल्प हैं, एक मंदिरमें पानीमें तैरती हुई नारायणकी मूर्ती देखी । नारायण शेषनागपर शयन करते हैं वह सहस्र फनोंसे उनपर छाया किये हैं, चरणोंमें लक्ष्मी बैठी हैं, मत्स्य और नराकार पुरुष नारायणका सिंहासन उठाये हुए हैं। उनके बीचमें एक घोडा खडा है उसके समीप सिंह है, पलंग बना हुआ है। ऊपरके भागमें देवताओंके चित्र हैं एक स्थानपर नरसिंहजीका चित्र है । तथा और भी बहुतसी मूर्तियां हैं।

नारायणकी मूर्ति शयन किये हुए हैं। एक हाथ शिरके नीचे है शंख चक्र गदा पद्म लिये हैं। यह शंख दक्षिणावर्त कहाता है उनकी नाभिसे एक कमल निकला है और उसपर ब्रह्माजी बैठे हुए हैं। लक्ष्मीजी चरण दाब रही हैं, यह सब वस्तुयें बडी शिल्प-चातुरी प्रगट करनेवाली हैं। शेषनागके बीच शरीरसे सोती हुई मूर्ति यह बडी अद्भुत है, और शेषजी तो असली सर्प ही विदित होते हैं; उनके शरीरके दाग तथा दरयायी घोडे अद्भुत हैं; नारायण जिस पलंगपर सोते हैं वह आठ फुट लम्बा और दो फुट चौडा तीन फुट ऊंचा है और वह मूर्ति मुकुटसे चरणोंतक चार फुट है, हमारी इच्छा इनको दूसरे स्थानमें ले जानेकी हुई ।

कुंडके आसपास १२ मंदिर हैं, यहाँ एक स्त्री पुरुषकी मूर्ति अद्भुत है । यदि कुछ कारीगर छः महीने परिश्रम करैं तो कुछ खाका इस बरौलीके अद्भुत शिल्पका खैंच सकते।

बरौलीके नामकरणका कोई इतिहास नहीं मिलता, पर राजा हून जो अंगदसीके नामसे विख्यात हैं उनका इससे सम्बन्ध पाया जाता है । ऐसा विदित होता है कि जब यूनानी बादशाह सलूकसने फौज भारतमें उज्जैनको भेजी थी उनके आनेसे विदित होता है कि कमलमेरका मंदिर उन्होंने बनाया हो, हमको दो खोदित लिपियोंसे पता लगता है कि सात आठ सौ वर्ष पहिले वह यहाँ आये थे, उसमें एक नाम बलनसीके पुत्रका है जो वहाँ बल नगरीसे आया था, दूसरा जैन भाषामें उसकी तिथि संवत् ९८१ इसमें सिद्धेश्वर महादेवकी प्रार्थनाके पांच श्लोक हैं, हमारे गुरु अपना व्याकरण उदयपुर छोड आये थे इससे वह इनका पूरा अर्थ नहीं कर सके। यह एक समयकी आमदनीसे नहीं बना कारण कि इसका व्यय राजपूतानेभरके एक सालकी आय होगी ।

यहाँ पत्थरकी दो छतरी बनी हुई हैं, बरौली उस भागमें बसा हुआ है, जो चम्बल-नदी और घाटीके बीचका भाग है जिसमें सदेहात भिसरोरके समीप तीन मीलकी दूरी-पर पश्चिमकी ओर आबाद है और यह बड़ा विचित्र स्थान है ।

द्वादश अध्याय १२.

चम्बलका पूर्णित जल-रमणीय प्रकृतिका हृदय-जल प्रपात-विहार भूमि-उसका रमणीय दृश्य-नावलि-धूमारकी गुहावली-गुहाश्रेणीका वर्णन-विग्रह समूहका वर्णन-जैनविग्रहचिह्न-भीमका बाजार-जसवन्तराव हुलकरकी छतरी-ताकाजीका कुंड ।

मंदिरके बाहर दाहिनी ओर एक गुम्मठमें महादेवजीकी मूर्ति है, उसके गलेमें मुंडोंकी माला तथा सात हाथोंमें सात हो प्रकारके अस्त्र हैं। उनके शिरपर नृकपालयुक्त सर्प विजडित मुकुट हैं, उसके बाईं ओर एक योगिनी रुधिर पान कर रही है और उनके दाईं ओर नीचेके आसनपर मृत्युकी मूर्ति है उसका शरीर जीर्ण शीर्ण है।

पश्चिमकी ओर महादेवजीकी और एक प्रकारकी मूर्ति है वह मूर्ति जैसी धीर और सुन्दर है उसी प्रकार रमणीक है पार्वतीका विवाह करनेके लिये जिस संमतिसे गये थे यह वही मूर्ति है। महादेवकी मूर्ति जैसी भयंकर है उसी भांति मनुष्योंके मुंडोंकी मालासे शोभायमान है,उसके पास ही मृत्यु मुखमें पडी हुई दो मनुष्य मूर्ति हैं; वह मूर्ति दोनों अविकल समंकित हुई हैं"।

उत्तरमें एक मूर्ति है जो काल और उसके साथियोंकी है, देहाती उसको भूका माता कहते हैं, वह वृद्धा और खोपडियोंका हार पाहिरे हैं, दो मनुष्य उसके साथ हैं जो टेढी आकृतिके हैं। मृतक होनेसे उनकी आँखें बन्द हैं मुख कष्ट पाये हुए सा प्रतीत होता है। और एक मांसाहारी पशु उनके समीप आ रहा है।

मन्दिरका सभामंडप कई फुट आगे तक है, दोनों ओर चौकोन स्तम्भ बने हुए हैं, इन स्तम्भोंमें स्त्री पुरुषोंकी बहुतसी मूर्तियें हैं। महरावें बडी अद्भुत हैं। मूर्ति खड्ग हाथमें लिये ऐसी बनी है कि ऊपर पैवस्त हो गई हैं, यहां एक हाथीकी मूर्ति है। हम कह सकेत हैं कि हमने ऐसी मूर्ति कहीं नहीं देखी।

इसकी छत बडी मनोहर है हमारे वासीने उसका मानचित्र लिया है, पवित्र स्थानपर देवताकी मूर्ति है जिसको यहांवाले रोरी व रोली कहते हैं; दूसरा नाम इनका वालनाथ है, पंडे इनकी स्तुति श्लोकोंसे करते हैं, यहां एक पत्थर चम्बलके रगडसे गोल हो गया है, इसीके समीप मंदिर है। एक महापुरुषने इनके समीप पार्वतीकी मूर्ति बनाकर स्थापित की है पर देवताको यह स्वीकार न हुआ उसको बडे कष्ट पडे उसकी भार्या मरी पुत्र मरा और उसका दिवाला हो गया।

इस मन्दिरके समीप वीस गजपर एक और स्थान सिंगार चोरी है। इसका यह चालीस फुट मुरव्वा है। बडे २ स्तम्भोंपर स्थापित है सब ओरसे खुला है उसमें भी बहुत मूर्तियां हैं। सहनमें बारह फुटका एक चौतरा है यहां राजा हूनका विवाह एक राजपूतकी पुत्रीसे हुआ था उसीकी यादगारमें यह बना है।

मन्दिरके बीचमें एक स्थान नन्देश्वरका बना हुआ है, एक पुरुष ईश्वरकी प्रार्थना करता है, महादेवजीके समीप छोटे २ मंदिरोंमें महादेवजी तथा अन्य देवताओंकी मूर्तियां हैं उत्तरकी ओर गणेशजी तथा दूसरे देवताओंकी हैं, परन्तु यवनोंने इन मूर्तियोंको भंग कर दिया है; आगे दो स्तम्भ हैं एक खडा है दूसरा गिरा है शायद नारायणके पालनेके निमित्त हो; यहां एक जलपानके लिये बावडी बनी है, यहांसे चलकर हम एक कुण्डपर पहुँचे, यह कुंड साठ फुट लम्बा चौंडा है इसमें पानी लबालब भरा रहता है, इसके समीप एक मन्दिर जलके देवताका है। कुंडके निकट जो मंदिर हैं उनमें भी

अद्भुत शिल्प हैं, एक मंदिरमें पानीमें तैरती हुई नारायणकी मूर्ती देखी। नारायण शेषनागपर शयन करते हैं वह सहस्र फनोंसे उनपर छाया किये हैं, चरणोंमें लक्ष्मी बैठी हैं, मत्स्य और नराकार पुरुष नारायणका सिंहासन उठाये हुए हैं। उनके बीचमें एक घोडा खडा है उसके समीप सिंह है, पलंग बना हुआ है। ऊपरके भागमें देवताओंके चित्र हैं एक स्थानपर नरसिंहजीका चित्र है। तथा और भी बहुतसी मूर्तियां हैं।

नारायणकी मूर्ति शयन किये हुए हैं। एक हाथ शिरके नीचे है शंख चक्र गदा पद्म लिये हैं। यह शंख दक्षिणावर्त कहाता है उनकी नाभिसे एक कमल निकला है और उसपर ब्रह्माजी बैठे हुए हैं। लक्ष्मीजी चरण दाब रही हैं, यह सब वस्तुयें बडी शिल्प-चातुरी प्रगट करनेवाली हैं। शेषनागके बीच शरीरसे सोती हुई मूर्ति यह बडी अद्भुत है, और शेषजी तो असली सर्प ही विदित होते हैं; उनके शरीरके दाग तथा दरयायी घोडे अद्भुत हैं; नारायण जिस पलंगपर सोते हैं वह आठ फुट लम्बा और दो फुट चौडा तीन फुट ऊंचा है और वह मूर्ति मुकुटसे चरणोंतक चार फुट है, हमारी इच्छा इनको दूसरे स्थानमें ले जानेकी हुई।

कुंडके आसपास १२ मंदिर हैं, यहाँ एक स्त्री पुरुषकी मूर्ति अद्भुत है। यदि कुछ कारीगर छः महीने परिश्रम करैं तो कुछ खाका इस बरौलीके अद्भुत शिल्पका खैंच सकते।

बरौलीके नामकरणका कोई इतिहास नहीं मिलता, पर राजा हून जो अंगदसीके नामसे विख्यात हैं उनका इससे सम्बन्ध पाया जाता है। ऐसा विदित होता है कि जब यूनानी बादशाह सल्यूकसने फौज भारतमें उज्जैनको भेजी थी उनके आनेसे विदित होता है कि कमलमेरका मंदिर उन्होंने बनाया हो, हमको दो खोदित लिपियोंसे पता लगता है कि सात आठ सौ वर्ष पहिले वह यहाँ आये थे, उसमें एक नाम बलनसीके पुत्रका है जो वहाँ बल नगरीसे आया था, दूसरा जैन भाषामें उसकी तिथि संवत् ९८१ इसमें सिद्धेश्वर महादेवकी प्रार्थनाके पांच श्लोक हैं, हमारे गुरु अपना व्याकरण उदयपुर छोड आये थे इससे वह इनका पूरा अर्थ नहीं कर सके। यह एक समयकी आमदनीसे नहीं बना कारण कि इसका व्यय राजपूतानेभरके एक सालकी आय होगी।

यहाँ पत्थरकी दो छतरी बनी हुई हैं, बरौली उस भागमें बसा हुआ है, जो चम्बल-नदी और घाटीके बीचका भाग है जिसमें सदेहात भिंसरोरके समीप तीन मीलकी दूरी-पर पश्चिमकी ओर आबाद है और यह बड़ा विचित्र स्थान है।

द्वादश अध्याय १२.

चम्बलका पूर्णित जल-रमणीय प्रकृतिका हृदय-जल प्रपात-विहार भूमि-उसका रमणीय दृश्य-नावलि-धूमारकी गुहावली-गुहाश्रेणीका वर्णन-विग्रह समूहका वर्णन-जैनविग्रहचिह्न-भीमका बाजार-जसवन्तराव हुलकरकी छतरी-ताकाजीका कुंड।

कर्नल टाड साहबने ३ सितम्बरको लिखा है कि "बरौलीके मंदिरके अनुपम सौन्दर्यको भलीभांतिसे देखनेके लिये मैं वहाँ कई दिन तक रहा और स्वभावसे एक महान् दृश्य चम्बलके भँवरवाले जलको देखनेके लिये गया। डेढ कोश चलनेपर बडी प्रबलतासे जलके गिरनेका शब्द सुनाई आया, अन्तमें मैं नदीके किनारे गया, वह शब्द वहांसे भलीभांति सुनाई पडता था। मेरे छोटे २ डेरे एक ऊंची जमीनके ऊपर गडे थे, वहांसे जो दृश्य दिखाई देता था, वह स्वभावतः परम रमणीय दृश्य था, उस दृश्यको वर्णन करनेकी मनुष्यमें सामर्थ्य नहीं है। हमारे डेरोंके पीछे सघन वन था; सम्मुख ही पहाडोंके शिखर दिखाई पडते थे, बांई ओर नदी विस्तारित होकर मानो एक हौदके समान हो गई थी, उसके चारों ओर बेलें छा रही थीं, इससे कुछेक दाहिनी ओर एक प्रसिद्धा नदी बह रही थी। उसका पाट इतना छोटा था कि मनुष्य छलांग मारकर सरलतासे उसके पार हो सकता था। डेरोंमेंसे वह विस्तारित तरंगकी क्रीडा भली भांतिसे दिखाई पडती थी। मैंने हौदके प्रथम मुहानेपर जाकर देखा कि उस नदीका तीक्ष्ण चलनेवाला जल पहाडोंको भेदन करता हुआ जा रहा है, इस स्थानसे जलके गिरनेका आरम्भ हुआ। जलराशि उस चम्बलसे महा तीव्र वेगसे पत्थरको भेदन करके नीचेको विकट शब्दसे गिरकर नदीके आकारमें नक्षत्रगतिसे चल रही है। अन्तमें वह कुछ ही दूर जाकर स्वतंत्र चार तरंगिणीरूपसे चारों ओरको चली गई है। इसीके मध्यस्थलमें एक ऊंचा पत्थरका स्थान है इसके ऊपर सफेद सूर्यकी किरणें विचित्र क्रीडा कर रही हैं। इस स्थानपर चार नदियां चार खाइयोंमें गिरकर उस पत्थरके देशको संघर्षण करती हुई भयंकर शब्दसे फिर एक स्थानपर जाकर चारों एक रूपमें हो गई हैं। जिस स्थानपर वह सम्मिलन हुआ है उसका जैसा विस्तार है उस स्थानपर घूर्णित जलकी ध्वनि भी उसी प्रकार भयंकर है। उस स्थानसे फिर दो स्वतंत्र तरंगिणीरूपसे दो तरफको चलकर उक्त पत्थरदेशको पकडकर उत्तरांशमें फिर अंग २ में मिलकर एक मूर्ति हो, प्रबल तेजोंके साथ फिर एक स्थानपर विचित्र सौन्दर्य प्रकाश कर रही है"।

तरंगणियोंसे वेष्टित उक्त पत्थरके स्थानपर जानेके लिये एक पुल बनवा दिया है, उस पाषाणप्रदेशका नाम भिंसरोरके ठाकुरकी विहारभूमि है।, वह ठाकुर ग्रीष्मऋतुके समय उस परम रमणीय देशमें प्रीतिभोजानुष्ठान और विहार किया करते हैं। यह स्थान भोज विहारके लिये अत्यन्त उपयोगी है इसका अनुमान तो सरलतासे हो सकता है। इसके चारों ओर जलके गर्जनका शब्द सुनाई पडता है,--प्राकृतिक रमणयि दृश्यको कौन भूल सकता है? यद्यपि यह देश वनमें है परन्तु बडा भारी है। यदि मेवाड राज्यमें हमें कोई यह देश दे देता तो हम इस भिंसरोरको पाकर अत्यन्त आनन्दित होते, अथवा चम्बलके इस जलप्रपात घूर्णितजल प्राकृतिक दृश्यपूर्ण इस स्थानमें निवास कर प्रीति भोजन कर महा आनन्द सम्भोग करते"।

तारीख चौथी दिसम्बर—कुछ दिनोंसे व्यापारी इस मार्गको स्वच्छ करते हैं जो गंगा मेवा स्थान स्वच्छ किया जाता है, यह जंगल है और यहां वस्ती नहीं है। यहां एक

स्थान रानाकोट भी खाली पड़ा है । सबेरे ही हम खेरली ग्राममें पहुँचे यहांसे हम दक्खिन पश्चिमकी ओर चले। यह मार्ग सर्वथा झाडी और पहाडोंमें था गंगा भेव यात्रियोंके आराम करनेका स्थान है ।

यहां त्रिकोन मन्दिर नजर आते हैं, जो छतरियोंके समान बने हैं और इनमें भी बडी कारीगरी है । असली मंदिरको तोडफोड कर एक और मंदिर सदा बनाया गया है इसका केवल जगमोहन अच्छा है, इसमें एक स्थानसे पानी निकलकर बहता रहता है इसीसे इसका नाम भेवगंगा पडा है । इस पानीपर फूल बहुत चढाये जाते हैं और वह कामधेनु नामवाले कमलके फूल हैं ।

असल मंदिरका ढाँचा बरौलीके मंदिर कैसा है । महादेव पार्वतीजीकी इसमें मूर्ति है जोगिनी नागिनी आदि सब बने हुए हैं इसके फर्समें एक यात्रीका नाम खुदा देखा जिसमें संवत् १०११ खुदा था । इसकी छत मीनारदार बहुत अच्छी है । इस स्थानके कोनोंमें पांच मंदिर बने हुए हैं पर वे सब टूटफूट गये हैं, चहारदीवारी मात्र शेष है बडे मंदिरमें एक चबूतरा है जिसपर महादेवजी स्थित हैं, यद्यपि बरौलीके बराबर कारीगरी नहीं पर इस समयकी कारीगरीसे कहीं अधिक है,इस समय यह स्थान बनैले जन्तुओंके रहनेका हो गया है वहाँ बडे २ वृक्ष हैं । मंदिरमें होनेसे उनकी जडोंने बहुत स्थान खिला दिये हैं एक वृक्ष यहां सहस्र वर्षका विदित होता है एक ही वृक्षने सब मंदिरोंपर अपनी छाया कर दी है,इसमें बाहर और भीतरकी ओर दो होते हैं । भीतर भी वृक्ष हैं उनपर अमरबेल चढी हुई है, यह महादेवजीको पसन्द है । यहां केतकी बहुत होती है, बानर ही वहाँके निवासी हैं, यहाँ सतियोंकी छतरी भी हैं उनकी संख्या भी इनसे विदित होती है, यहाँकी सब जाँचमें एक महीना लग जाय, पर हमने अपना मार्ग स्वच्छ करनेकी आज्ञा दी ।

नावली यहाँसे बारह मील है मार्ग बराबर जंगलका बडा कठिन और दुस्तर है । ५ वीं दिसम्बरको नावली नामक स्थानमें जाकर कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "नावली एक अत्यन्त सुन्दर ग्राम है, इसके पश्चिम अंशमें एक प्राचीन किला टूटा फूटा हुआ है । तीसरे पहरके समयमें तक्षकजीके कुण्डको देखनेके लिये गया यह कुंड नावलीके एक कोश पूर्वमें स्थापित है । वहाँ दो मंदिर हैं एकमें तक्षककी मूर्ति है और दूसरेमें धन्वन्तरिजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित है । दक्षिणको कुंड विराजमान है, यहाँके मनुष्य कहते हैं कि यह अतल है" ।

पश्चिमकी ओरसे एक नदी निकलती है, इसको तखेली कहते हैं यह कई मील तक पेंच खाती हुई सौ फुट नाचे पठारके हिंगलाजगढके पूर्वी भागको धोती है जिसे हमजारनें मिल जाती है, हमारे घासीने यहाँके चित्र लिये हैं और जिसकी प्रशंसा लार्ड लेकने की है, हम किला हिंगलाज देखते हैं जिसपर कप्तान हिंचस साहबने तोप-खानेके साथ अधिकार किया था ।

भानुपुरा ६ दिसम्बर ८ मील—यह स्थान बहुत रमणीक है। दो मील जंगलमें चलकर घाटी द्वारा भानुपुराके समीप पहुँचे। यहाँ एक घाटपर एक दुर्गके चिह्न पाये जाते हैं जिसको इन्दौरगढ कहते हैं यह किला चन्द्रावतोंके अधिकारके समयका होगा यहाँ कोई खोदित लिपि न मिली पर अब भी यहाँ कुछ बसीकतके चिह्न पाये जाते हैं इसकी हमको प्रसन्नता है।

भानुपुराके समीप हम एक नदीके पार हुए जो अलवा कहलाती है और एक घाटीसे निकलती है। यहाँ भी जसवन्तराव हुलकरकी एक छतरी है। यहाँ उसने सरकार अंग्रेजसे युद्धकी तैयारी की थी, इसमें दृढताके सिवाय कोई शिल्प नहीं है इसमें इस निर्भय हुलकरकी मूर्ति बैठी हुई बनी है एक स्थान यहाँ गुम्मजदार धर्मशालासा है जहाँ जसवन्तरावका शव रक्खा गया था।

वहाँकी छतरीसे सीधी दूरपर एक और छतरी उसकी बहिनकी है जो जसवन्त-रावके मरनेके बहुत दिन पीछे मरी थी, इसके दरवाजेपर काली नामक एक तोप रक्खी है, एक और थोडे दिनोंके बने मकानमें जसवन्तरावके निमित्त निरन्तर पूजा होती है। एक मूर्ति श्वेत वस्त्र धारण किये यहां खडी है, इसके पीछे दिवारपर जसवन्तरावका चित्र है जो अपने विख्यात मीहू घोडेपर सवार है। एक पुरुष उसपर चंवर करता है दोनों ओर दो सेवक खडे हैं और ब्राह्मण कुछ पढ रहे हैं।

हमने यहांके अधिपतिका घोडा देखा तो छूते ही उसने कनौती दबाई, यह महु-आरंगका कुम्मैत है और अपने स्वामीके समान महाराष्ट्र देशका रहनेवाला है, इसके शरीरकी गढन बहुत सुन्दर थी सब चौदह विलस्त था, चेहरा नमूनेके अनुसार था असी-लखेत, कान छोटे नोकदार आंखें बडी उभरी हुई और थूथना इतना छोटा था कि चाहके प्यालेमें पानी पी सकता था। हमने कहा कि इसीके अनुसार इसकी पोशाक होनी चाहिये जिसको उसके स्वामीने स्वीकार कर लिया।

भानुपुरेमें ५००० घर हैं प्रबन्ध नरम है दीवान हुलकरका काम करते हैं। यहांके वडे व्यापारी आदि सब अपने स्वामीके साथ हमारी मुलाकातको आये और ऐसी योग्य-तासे मिले कि मेवाडके निवासी इससे अधिक योग्यता नहीं दिखा सकते, पुरानी रसम रीति सब होती है और यहांका अधिपति सामर्थ्यवान् है।

स्थान गरोट सात दिसम्बर फासला १३ मील—अब हम ठोकर खानेके मार्गसे मालवेमें आये इससे प्रसन्नता हुई गरोटमें बारह सौ घर हैं। यहां पुरानी कोई वस्तु नहीं है, पर बीच मार्गमें मीलीका किला हमारी पुस्तकके लिये कुछ सामान दे सकता है, जिसके टूटे फूटे खंड सातल पातल नामक राजाका कुछ पता देते हैं, यह राजा पांडवोंके समयका था यहांके मैदानमें अब्री हरे स्याह प्रकाशमान कितने ही प्रकारके पाषाण दृष्टि-गोचर होते हैं। पर पहाड कहीं नहीं है थोडा भी खोदनेसे पाषाणखंड निकल आते हैं।

कर्नल टाड साहबने आठ ८ वीं दिसम्बरको धूम्रार नामक स्थानमें परम रमणीक गुहा और मंदिरोंको देखकर लिखा है कि इस देशकी उपजाऊ और श्रेष्ठ मट्टीको देखकर मुझे मेवाडका स्मरण हो आया।

हमारा प्रधान लक्ष्य धून्नारकी गुहाके निकट जानेका था। मैं ढाके तथा वन्यपादप पूर्ण एक पाषाणमय देशमें होता हुआ अन्तमें धून्नार पर्वतपर जा पहुँचा। मैंने देखा कि पर्वतके मूलमें उत्तरकी ओर एक सुन्दर सरोवरके किनारे मेरे डेरे लगे हुए हैं। परन्तु उस समय रमणीय दृश्यको देखकर नेत्रोंको तृप्ति नहीं होती थी और अपार कौतूहल उत्पन्न होता था, मैंने भोजनके लिये न बैठकर पहिले गुहा देखनेके लिये कहा"।

"धून्नार पर्वतकी वेष्टनी प्रायः डेढ कोश थी, इसका उत्तरांश चौडा क्रम २ से शृङ्गपरको ऊंचा हो गया था। इसकी ऊंचाई एक सौ चालीस फुट थी। सबसे ऊंचा शिखर ऋजभावसे ३० फुट ऊंचा और उसके ऊपरका भाग समतल था। उस समतल क्षेत्रमें बहुतसे वटवृक्ष विराजमान थे; इसके दक्षिण ओर घोडोंके खुरोंकी आकृतिके समान, तथा ऊपरके भागके चारों ओर स्वाभाविक अभेद्य दीवारें बनी हुई थीं। प्रायः दीवारोंमें सर्वत्र ही गुहा बनी हुई थीं, मैंने गिनती करके देखा कि गुहाओंकी संख्या एक सौ दश है। इन गुहाओंके प्रधान मंदिरोंका प्रवेश द्वारस्वरूप था, अथवा यहाँ प्राचीन संन्यासी लोग निवास करते थे। दीवारोंमें छेद हो रहे थे परन्तु दीवारें लोहेके समान कठिन और चिकनी थीं, यहांपर प्राचीन बस्तीके चिह्न भी पाये जाते हैं परन्तु वह किस समयके है यह नहीं जाना जाता, यहां जो एक फुट चौडा प्राचीन दीवारोंका कुछ टूटा हुआ हिस्सा देखा यह एक बडे पत्थरके टुकडेके समान था, पत्थर पत्थर पर जोडा नहीं गया है, इस कारण मेरा यह विचार हुआ कि यहाँ संसारियोंकी वस्ती नहीं थी, केवल योगी और संन्यासी ही निवास करते थे"।

"मैं शिखरके ऊपरके अंशपर चढा, चारों ओर भ्रमण करनेके पीछे एक अंशमें जानेका मार्ग देखा। वह नीचेसे ऊपरतक कटा हुआ और खुला था। वह मार्ग दोसौ हाथ चौंडा और चार सौ हाथ लम्बा था मैं उसके एक चौकोने स्थानमें आया। इसकी ऊँचाई प्रायः ३५फुट थी। यह एक वडी भारी गुफा है। यह गुफा पत्थरको खोदकर बनाई गई है। इसके मध्य स्थानपर एक बडा पत्थर काटकर उससे एक मंदिर बनवाया है और उसमें चतुर्भुजाकी मूर्ति विराजमान है, गुहाके उत्तर पश्चिममें खुदी हुई सीढियां दिखाई दीं। वह सीढी पर्वतके शिखरतक लगी हुई थीं। उस शिखरदेशपर यद्यपि मट्टी नहीं है तथापि मैंने वहां बहुतसे प्राचीन पीपल और बट तथा इमलीके वृक्ष देखे"।

"उक्त मंदिर साधारण मंदिरकी आकृतियुक्त चौडा–मंडप है। इस मान्दिरकी गठन रीति जैसी सरल है वैसी ही मजबूत भी है, स्तम्भोंकी श्रेणी नक्काशीके कामका चमत्कार दिखाती थी, अनेक प्रकारकी सुन्दर प्रति मूर्तियां भी खुदी हुई हैं। एक बडे भारी पत्थरके टुकडेको खोदकर यह मंदिर बनाया गया है, इसका स्मरण करनेसे इस मंदिरकी प्रशंसा नहीं की जा सकती"।

"एक बेदीके ऊपर चार हाथके बराबर विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान है। विष्णुके पहिरे हुए वस्त्र सभी पीले रंगके हैं। इस कारण इस मूर्तिका दूसरा नाम पांडुरंग है। प्रधान मंदिरके चारों ओर निम्नलिखत देव देवियोंकी मूर्तियाँ हैं। पहिले प्रवेश-

द्वारके ऊपर द्वारपाल देवताकी मूर्ति है दक्षिणमें गणदेवकी मूर्ति है,उनके निकट वाग्देवी सरस्वतीकी प्रतिमा विराजमान है, बाईं ओर कालभैरव और गौरा भैरवकी मूर्ति है । उससे कुछ ही दूर पंच महावेदी की मूर्तिका मंदिर है । प्रत्येक मूर्तिका स्वतंत्र बाहन दिखाया गया है । बैल, मनुष्य, हाथी, भैंसा; और मोर यह पांच प्रकारके बाहन भी खुदे हुए हैं" ।

प्रधान मंदिरके पीछे तीन छोटे २ मंदिर और हैं, उनके बीचके मंदिरमें अनन्त शय्यापर शयन किये हुए नारायणकी मूर्ति और चरणोंके धारे लक्ष्मीजीकी मूर्ति है" । लक्ष्मीजीकी मूर्तिके धोरे दो विकटकाय दैत्य मानो परस्परमें आक्रमण कर रहे हैं।नारायणके चारों ओर छोटे २ देवताओंकी मूर्ति कोई वेशी कोई वीणा और कोई मृदंग बजा रही हैं, इन वाजोंकी ध्वनिसे मानो अनन्त आनन्दसे अनन्त फल विस्तार कर रहे हैं । छोटे २ मंदिर भी प्रधान मंदिरोंके समान बडे २ पत्थरोंके टुकडोंको खोदकर बनाये गये हैं, परन्तु उनमें विग्रह सिंहमर्मरके पत्थरपर खुदे हुए हैं, मंदिरके ऊपर महादेवजीकी मूर्ति विराजमान हो रही है " ।

" मैं पर्वतकी सीढियोंपरको होता हुआ दक्षिणकी ओरसे बाहर हुआ । वह स्थान खुला हुआ था और वहांसे चम्बल बहुत दूर थी, तथापि उसका तथा मन्दसोर और सुन्दवाराके देशका रमणीय दृश्य देखा । वहांसे सीढियोंपरसे उतरकर मैं बाईं ओरकी गुफामें गया, उस गुफाका तलछत केवल स्तंभोंसे रुका हुआ था । यह स्तंभ जैन आकारसे बने हुए थे । आश्चर्यका विषय है कि इन मंदिरोंके एक अंशमें जिस भांति शिव और विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान थी इसी प्रकार और अंशोंमें भी दक्षिणांशोंमें जैनियोंके विग्रह चिह्न विराजमान थे । इनके पास ही गुफामें जैन व बहुत सी बौद्धोंकी मूर्ति थीं--कोई खडी थी, कोई बैठी थी, परन्तु इसकी दक्षिण ओर महाभारतमें विख्यात पांचों पांडवोंके स्मृतिचिह्न पाये जाते थे । एक दश फुटकी लम्बी मूर्ति यहां निद्रित अवस्थामें थी, ऐसा सुना जाता है कि यह मूर्ति महावीर भीमके पुत्रकी है और इसकी यह अवस्था केवल एक ही घण्टेकी बताते हैं, इसके अतिरिक्त पांचों पांडवोंकी मूर्तियां दिखाई आई जो मनुष्य उन पांचों पांडवोंके सेवकभावसे रहते थे वह उनकी मूर्तियें थीं, कहते हैं बनवासके समय पांडव यहां ही आकर रहे थे" ।

" सौभाग्यसे मेरे साथमें जैन गुरु थे, उन्होंने कहा कि यह पंच मूर्ति जैनियोंके पंच तीर्थंकरोंकी है । ऋषभदेव प्रथम, सन्तनाथ षोडश नेमनाथ बाईसमें, पार्श्वनाथ, तेईसमें, महावीर और चौबीसमें यह पंचजैन देवताकी पंचमूर्ति हैं, यह पंच पांडवोंकी मूर्ति नहीं हैं । चन्द्र प्रभुकी मूर्ति भी वहां दिखाई दी । सभी मूर्ति दश ग्यारह फुट ऊंची थी " । वास्तवमें यह पंच जैन देवताकी मूर्तियां हैं वा पांच पांडवोंकी मूर्ति हैं,इस स्थानपर इसका विचार करना हमें असंभव हो गया ।

उस गुफाके धोरे ही धून्नारमें एक और बडी गुफा है । पहिली गुफाके भीतरसे ही उस गुफामें जानेका रास्ता है । वह सर्व साधारणमें भीमके राजके नामसे विदित

है । इस गुफाकी लम्बाई सौ १०० फुट है और ८० फुट चौडाई है । गुफाका प्रधान कमरा भीमके अस्त्रागार नामसे पुकारा जाता था, एक बाहरकी कोठरीके रास्तेसे इसमें जाना होता है, वह कोठरी २० फुटकी है, अस्त्रागारकी गुफाके भीतर एक घर है । वह घर ३० फुट लम्बा और १५ फुट चौडा है, उस कमरेके चारों ओर धर्मशाला बनी हुई है तीर्थयात्री लोग यहां आकर ठहरते हैं । यद्यपि यह भी भीमके नामसे विख्यात है, परन्तु अन्यान्य लक्षणोंसे जैनियोंकी जानी जाती है । अस्त्रागारके पास ही राजलोक नामका एक कमरा है, यह पहाड आदिनाथके नामसे विख्यात है। इससे यह भी विश्वास होता है यहां आदिनाथकी पूजा होती होगी, एक स्थानमें पार्श्वनाथकी भी दो मूर्तियां हैं ।

" और भी दक्षिण वा दक्षिणपश्चिममें गुफा और कमरे हैं, उन कमरोंके चारों ओर योगियोंके ठहरनेके लिये घर बने हुए हैं । यहाँ एक बहुत बडा वृक्ष है । यहाँ भी एक बहुत बडी मूर्ति है.

धूम्नारकी गुफाओंका विस्तारसहित वर्णन करनेकी अब लेखनीमें सामर्थ्य न रही । यद्यपि यह इलोरा, कारालि, वा सालसेटीके प्रसिद्ध प्राचीन गुफाओंके समान श्रेष्ठ नहीं, परन्तु इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि यह उन सबकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन है । मैंने इन गुफाओंके चारों ओर खोज की परन्तु कहीं भी किसी प्रकारकी खुदी हुई लिपि वा अनुशासनपत्रको न पाया। यह गुफा दर्शन करनेके योग्य ही थी; इनको देखकर अनेक प्रकारका कौतूहल उत्पन्न होता था और इनमें बहुतसे अद्भुत पदार्थ हैं" ।

त्रयोदश अध्याय १३.



झालरापाटन-कर्नल टाडकी अभ्यर्थना-झालरापाटन नगर-मंदिरोंकी श्रेणी-झालरापाटनकी उत्पत्ति-झालरापाटनकी सृष्टिके सम्बन्धका विवरण-स्वायत्व शासन-कर्नल टाड साहबके साथ नगरके सब श्रेणीके प्रतिनिधियोंका साक्षात्-प्राचीन नगरी चन्द्रावतीका वृत्तांत-उसके सम्बन्धका प्रवाद वाक्य-प्राचीन मंदिर श्रेणी-कर्नल टाडका देवताओंकी मूर्तियोंको संग्रह करना—

स्थान पंच पहाड-१० दिसम्बरको हम गिरोटसे चलकर इस मुकामपर आये। गिरोटसे मानसन साहबका आगमन हुआ था, यह एक ऐतिहासिक स्थान है । जब हुलकर प्रतापगढमें था और उसने अंग्रेजी फौजका आगमन सुना तब वह अपनी सेनासहित मन्दसोरको गया और चम्बलके पार होकर गिरोटकी तरफ चला, जो वहाँसे पचास मीलके लगभग दूर था, मानसन साहबको इसकी कुछ खबर न थी वह उस समय चन्द्रवासाको जाते थे; पर ज्यों ही उन्होंने हुलकरका समाचार सुना कि उन्होंने मुकन्दरा घाटीको जाकर रोका और ल्यूकन साहबको कोटेकी हाडा फौजके साथ वहीं छोडा । हुलकरके १०००० सहस्र अश्वारोही चार गोलें बांधकर चले यह खान वंगशके अधीन थे और इन्होंने

दक्खिनसे ल्यूकन साहबपर आक्रमण किया । पर ल्यूकन साहबने उसको पराजित किया, पर साहबके पाँवमें उन्हींके सिपाही द्वारा चोट आई, एक पुरुष जो उस युद्धमें सम्मिलित था उसने हमको वह वृक्ष दिखाया जिसके नीचे साहब गिरे थे ।

कोटेकी सेना कोइलाके सामन्तके अधीन थी । अमरसिंहपर ज्यों ही आज्ञा पहुँची वह तैयार हुआ । पीपली ग्रामके सम्मुख वह अपने घोडेसे उतरा और जीनपोशके ऊपर बैठ गया और उसके चारों ओर एक सहस्र सिपाही थे, उसने अमजारके मार्गसे आक्रमण करना चाहा पर उसकी सेना साहसहीन हो गई थी, तथापि उन्होंने शत्रुओंके शवोंसे नदीको भर दिया। पीछे एक गोली अमरसिंहके माथे और एक छातीमें लगी जिससे वह भूमिपर गिरा परन्तु तत्काल उठकर एक कोलूके सहारे खडा हो गया और सेनाको साहस बँधाया पर वह शत्रुकी ओर तलवार उठाकर गिर गया और मर गया, साढे चार सौ सैनिक उसके साथ मारे गये और कोइलाका भावी अधिकारी सामन्त पलेटिया भी मारा गया और कोटेकी सेनाका बखशी बन्दी हुआ जिसको दश लाखका तमस्सुक लिखनेसे छुटकारा मिला जिसका वर्णन पीछे हो चुका है ।

यहां एक सादी छतरी बनी है। जहां यह हाडा वीर मारा गया था । एक चौंतरा यहां बना है इसको जुझार कहते हैं, इसपर घोडेसहित उस सवारका चित्र है हमको कोटेके नायकपर यहां उसकी वेपरवाईसे क्रोध आया कि उसने कोई दृढ स्मारक यहां नहीं बनवाया था, पर वह ऐसा क्यों करता कारण कि वह हाडा जातिका तो है ही नहीं वल्कि ऐसा करनेसे तो उसे ईर्षा होती । तथापि यह कच्ची छतरी भी एक प्रतिष्ठाकी वस्तु है, जो दृढ छतरियोंको प्राप्त नहीं है, ल्यूकन साहबकी छतरी ऐसी भी नहीं है, वह जो मारे गये वह छतरी बननेका कुछ स्वत्व रखते थे वा नहीं, यह भी विदित नहीं हुआ परन्तु रहनेवाले उस पीपलीके वृक्षको जहाँ साहब गिरे थे ल्यूकनका जुझार कहते हैं । यही स्मृति है और छतरीकी मरम्मत करते रहते हैं ।

इतने मनुष्योंका वध कराकर अंग्रेजी कमानियरने मुकुन्दराघाटपर अधिकार किया और शत्रुसे भेंट न हुई । यदि साहब पांच कम्पनी पैदल छोड जाते और थरमोपलीको चले जाते तो नामवरी रहती–कारण कि वह स्थान ऐसा है कि उसके चारों ओर भ्रमणमें एक सप्ताह लग जाता है और पैदलके सिवाय वहाँ किसीकी गुजर नहीं है पर कमानियर साहबको अपनी सेनापर विश्वास न था हम कहते हैं यदि ऐसा था तो उन्होंने सेनाकी अफसरी क्यों की थी। पर ऐसा नहीं था प्रत्येक सिपाही युद्धके लिये तैयार था जब कमांडरने पांच कम्पनी युनासके घाटपर छोडी तब उन्होंने कैसा काम किया जबतक उनके पास युद्धका थोडा सामान भी रहा बराबर लडते रहे और शत्रुको हरा दिया । एक समय सेंधियाकी फौजके एक जिमानखो रूहेलेने हमसे कहा कि मैंने शनैः २ एक स्थान बनाया जहांसे एक अंग्रेजको पिस्तौलसे मारा । उसने यह भी कहा कि मरहठे पैदल कभी आक्रमण नहीं करते । जसवन्तराव दीवानेके समान अपने हाथ भूमिपर दे मारता था । और अपने अश्वारोहियोंमेंसे वीरोंको पुकारता था अन्तमें

उसके सवारोंके हाथसे संकलेर साहब और उनके साथी मारे गये । हम इससे यह उपदेश लेते हैं कि ऐसे पुरुषको किसी प्रकार अफसरी न देनी चाहिये । जो अपने सिपाहियोंपर विश्वास न करता हो ।

पंचपहाड एक आबाद शहर है, इसमें चार जिले हैं जिनको हमने युद्धमें हुलकरसे लेकर नायबको दिया है । यद्यपि अभी उनमें ५०००० रुपयेकी आय नहीं होती, पर उनमें इससे दूनी आय हो सकती है इस शहरमें २००० घर हैं । बाजार चौडा है जिसमें व्यापारी महाजन रहते हैं । यहाँके आदमी हमारी भेंटको आये । यहां लाल पत्थर भी बहुत है ।

कुनबारा ११ दिसम्बर-उत्तर पूर्व १३ मील हमारा गमन बहुत अच्छे मार्गसे हुआ यहाँ ज्वार गेहूं बहुत होते हैं । यद्यपि युद्धके स्थानोंमें खेती विशेषतः कम होती है पर गेहूँकी खेती विशेष होनेसे कुनबारा यथानाम तथा गुण हो गया है । यहांसे चार मील ओतला ग्राम होकर हम चले । हम उस मुकामपर पहुँचे जो उज्जैनसे सीधा हिन्दुस्थानके द्वारको जाता है, यहांसे सोनेल बडा शहर है, तीन मील हमारे दहनी ओर है ।

महात्मा टाड साहबने १२ वीं दिसम्बरको दश मील चलकर झालरापाटनमें जाकर लिखा है, "कि मैं चन्द्रभागा नदीके पार होकर गया, इस नदीकी उत्पत्तिका स्थान यहाँसे दो कोश दूर है । उसके पास ही रेलतियो नामक पर्वत विराजमान है । पहिले उस पर्वती देशमें एक सम्प्रदाय भीलोंकी वास करती थी और एक समय यहाँसे चार हजार भील मालवेमें जाकर वहाँके बीचके देशोंकी समस्त धन सम्पत्ति लूट लाये थे । कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिंहने ही उस भील सम्प्रदायका विनाश किया था " ।

झालरापाटन नगर कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिंहने बसाया था । मैं नगरके आधकोश धोरे पहुँचा उसके पूर्वदेशके समान नगरके प्रधान विचारक, पंचायत समाज समस्त प्रधान २ धनवान् निवासियोंने आगे बढकर मुझे बडे आदर सम्मानके साथ ग्रहण किया । समस्त भारतवर्षके बीचमें केवल इसी नगरमें इस समय मिउनिसिपलके स्वायत्व शासनकी रीति प्रचलित देखी । यहाँके निवासियोंने ही स्वयं आत्मशासन विधिको प्रणयन करके स्वाधीनताके साथ स्वायत्वशासन कार्य किया था । भारतवर्षमें सबसे अधिक यथेच्छाचारी शासनकर्ता जालिमसिंहके समीपसे इन्होंने स्वायत्व शासनकी स्वाधीनता पाई थी, यह अवश्य ही आश्चर्यकी बात है कि जालिमसिंहने राज-नैतिक अभिप्रायके सफल होनेकी आशासे इनको यह स्वाधीनता दी थी ।

मैं उपस्थित सभी मनुष्योंके साथ अभिवादन कर तीसरे पहरके समय सबके सहित अपन डेरोंमें आया, मैंने इस युक्तिसे विदा ली कि सभी मेरे साथ बातचीत करके संतुष्ट हुए, उससे बिदा होकर नगरमें आया । जानेके समय किलेपरसे तोप छूटनेका शब्द हुआ । यह नगर चौकोर है चारों ओर बडी २ दीवारें और उनके ऊपर तोपोंकी कतार सज रही है । नगरका भी तरीभाव सरल और सहजभावसे गठा हुआ है । दो

प्रधान राजमार्गोंने भिन्नप्रान्तसे बाहर होकर परस्परमें अतिक्रम किया है। सबसे प्रधान मार्ग दक्षिणसे उत्तरकी ओरको गया है। मैं इसी मार्गसे बडे बाजार होता हुआ गया अन्तमें जो रास्ता दोनों रास्तोंसे परस्परमें अतिक्रम करके गया है। उस संगम स्थानमें जा पहुँचा। उस संगम स्थानमें सम मध्यस्थलमें नब्बे फुट ऊंचा एक मंदिर था। उसमें चतुर्भुजा देवीकी मूर्ति विराजमान थी। पाषाणमय चूडा–मंडप इत्यादि मेरी दृष्टिको आकर्षण करता था यद्यपि यह सब भाँतिसे तैयार तो हो गया था। किन्तु श्वेत ही रंगसे रंगा हुआ था, मैंने इसे आजकलका जानकर विचारा कि इसमें कोई प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्व नहीं पाया जायगा, इससे उसके देखनेकी इच्छा न करके सीधा चला आया इस स्थानसे उत्तरकी ओर तोरणद्वारतक मार्गके दोनों ओर एकभावसे बने हुए सौध और आलयकी श्रेणी दिखाई दी। यह मार्ग आध कोश था, इसकी शेष सीमामें जालिमसिंहद्वारा प्रतिष्ठित द्वारकानाथका मंदिर स्थापित है, यह मूर्ति प्राचीन नगरके टूटे स्थान खोदनेके समयमें निकली थी और यह कोटेके जालिमसिंहके पास भेजी गई। उन्होंने इसका नाम गोपालजी रखकर इस रमणीक और विस्तारित सरोवरके किनारे उसे मंदिरमें स्थापन किया"।

उत्तरांशमें जैनियोंके सोलह देवताओंके निवासका रमणीक मंदिर है, वह मानो इस समय भी असम्पूर्ण अवस्थामें है अंतमें मैं जान गया कि यह बहुत पुराना है और यहाँ एक सौ आठ जैनमंदिर थे, उन्हींमेंका एक यह भी है। प्राचीन नगरमें इन एकसौ आठ मंदिरोंमें बराबर एक साथ घंटा घड़ियाल बजते थे। इसी कारणसे इसका नाम झालरापाटन अर्थात् घण्टेका शहर हुआ है, झालरापाटन अर्थात् झालावंशीय जालिमसिंहके नामसे इस नगरका नाम हुआ है, इसीसे यह प्रचलित वाक्य सत्य नहीं है, मैं कई मुहूर्तके लिये प्रधान मजिष्ट्रेट साहब मनीरामके घर गया नगरीकी जो कुछ सुन्दरता देखी उसीके लिये उनके समीप सन्तोष प्रकाश कर तुम्हारे शासनसे नगरकी अधिकतासे श्रीवृद्धि होगी, यह आशा प्रकाश कर उनके समीपसे बिदा माँगी। साह मनीरामके घरके ठीक सामने एक स्तंभ देखा और झालरापाटनके निवासियोंको जो स्वयं शासनत्व प्राप्त हुआ था उस स्तंभपर उसका विस्तारसहित वर्णन खुदा हुआ देखा। उस सरल विवरणपूर्ण सत्वदानकी रीतिको पढकर हँसी आती थी"।

"कोटेके राजमन्त्री जालिमसिंहने राष्ट्रविप्लव और अराजकताके समयमें सुअवसर पाकर पार्श्ववर्ती अनेक देशोंके धनवान् निवासियोंको इस स्थानमें इस नगरमें वाणिज्य स्थानमें वास करनेके लिये बुलाया, उन्होंने उनकी सुखशांतिके लिये जो प्रतिज्ञा की, उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये उक्त स्वत्वको दान करके, उस स्तंभके ऊपर उसे खोद दिया, जिससे यह किसी समय भी नष्ट न हो सके इस कारण वह उनके चित्तपर दृढ़तापूर्वक भलीभांतिसे अंकित हो गया। उस स्वायत्वदानके साथ ही साथ नगरके चारो ओर दीवारें बनवाकर एक माननीय और सुयोग्य सेनापतिके अधीनमें एक सेनाको भी उस

स्थानपर रख दिया। उसने कुएँका खुदवाना प्राचीन ह्रदोंका बांध बांधना, और अपने खर्चेसे यहांके सब जाति और सब वर्णोंके प्राचीन देवालयोंका संस्कार करा दिया। और जिससे सभी जने यहाँ स्थाईरूपसे निवास कर सकैं इसलिये आवासादिके बनानेके निमित्त प्रत्येकके खर्चेका आधा खर्चा अपने यहाँसे अग्रिम दे दिया। इस प्रकारसे सबको यहाँ निवास कराकर उन्होंने स्थाई शासनका भार तथा आभ्यन्तरी शांतिरक्षाका भार यहांके निवासियोंके ही हाथमें सौंप दिया।

पंचायत समाजने उस शासनके भारको पाकर कार्य किया। विचारादि कार्य करके यहाँके निवासियोंसे जो कुछ भी दंडमें धन मिलता है, उसको और किसी कार्यमें खर्च न करके केवल द्वारकानाथजीकी सेवामें लगाना होता है"।

"यहाँपर यह भी अवश्य कहना होगा कि यहांके प्रधान मजिष्ट्रेट मनीरामने स्वयं वष्णव होकर यहाँके वैष्णवोंका विचारकार्य जिस भांति निर्वाह किया था। उसी भांति यहाँके ओसवाल जातीय जैनधर्मावलम्बी निवासियोंके विचारकार्यको करनेके लिये गुमानीराम एक जैन मजिष्ट्रेट नियुक्त हैं। यद्यपि दोनों जने पृथक् २ रूपसे विचारकार्य करते हैं परन्तु आवश्यकता होनेपर किसी असाधारण प्रश्नकी मीमांसाके लिये दोनो पंचोंको इकट्ठा होना होता है, दोनों जने अत्यन्त प्रीतिके साथ कार्य करते हैं और दोनों जनोंने ही अपने अपने पुत्रोंके नामसे उपनगर स्थापन किये हैं। जातीय प्रधान सभाके सभ्यगण बडी चतुरतासे सर्वसाधारण प्रजाके द्वारा बुलाये जाते हैं। पिछले बीश वर्षमें इस नगरीमें छः हजार उत्तम घर बने थे और कुछ कम पचीस हजार निवासी रहते थे, इस देशके सब ही पट्टे वंशगत थे, इस कारण साह मनीराम और गुमानीरामके न होनेपर उनके पुत्र ही मजिष्ट्रेटका कार्य करते हैं। परन्तु यदि वह पुत्र इनके समान दक्ष और न्यायविचारक न होते तो स्वायत्व शासन नाममात्रको रह जाता। जालिमसिंहके पक्षसे केवल सेनापति और वाणिज्य शुल्क संग्राहकने यहाँ निवास किया है"।

"नगरके सभी श्रेणीके मनुष्य और प्रतिनिधियोंने मेरे डेरोंमें आकर मुझसे साक्षात् किया। पहिले वैश्य, पीछे वैष्णव सम्प्रदायके पंडा एक २ करके सभीने अपना २ परिचय दिया। इसके पीछे उसी रीतिसे ओसवाल वणिक मंडलीने अपना परिचय दिया। मैंने सभीको अपने२ पदानुसार बैठनेके लिये कहा इसके पीछे व्यवसाइयोंके प्रतिनिधिने आकर मुझे भेंट दी। उसके पीछे शिल्पकार स्वर्णकार, कांस्यकार; हलवाई और अन्तमें क्षौरकार इत्यादि नगरकी सभी संप्रदायके प्रतिनिधियोंने आकर परिचय दिया। प्राचीन मंडलमें पाटलियोंके प्रतिनिधि भी आये। साह मनीरामने स्वयं बाहर खडे होकर शांति-कर रक्षा और उनको प्रणालीबद्ध कर दिया और उनके सहयोगी गुमानीरामने परिचय देनेका कार्य किया। स्वर्णकार सम्प्रदायके प्रतिनिधिने अपनी सम्प्रदायके नामसे एक रमणीय चाँदीका पात्र उपहारमें दिया। उसका शिल्पकार्य अत्यन्त चमत्कारक था। प्रतिनिधि जिस प्रकार परिचय क्रमसे आये थे, उसी भांति पर्यायक्रमसे विदा होकर बाहर आ राजमार्गमें भूरि भूरि, जयध्वनि डंका बजाते हुए और पताका उडाते हुए नगरको गये"।

उत्तर मालवेमें एक झालरापाटन ही वाणिज्यका प्रधान स्थान है । इन्दौरसे इस स्थानतक मध्यस्थके सभी देशोंमें वाणिज्य कार्य होता है ।

"हम आधुनिक नगर झालरापाटनके सम्बन्धमें बहुत कुछ कह आये हैं । इस समय झालरापाटन वा घंटाशहरके सम्बन्धमें जो चन्द्रावती नामसे प्रसिद्ध है और जिस नगरमें होकर चन्द्रभागा नदी बही है उस प्राचीन चन्द्रावतीके सम्बन्धमें इस समयमें कुछ कहनेकी इच्छा करता हूँ । ऐसा सुना जाता है कि राजा हूनने इस चंद्रावती नगरीकी प्रतिष्ठा की थी । और यह भी विख्यात है कि मालवेके प्रमार वंशीय राजा चंद्रसेनकी एक कन्या चंद्रावती तीर्थयात्रा करनेको गई थी, यात्राके समय उसके इसी स्थानपर एक कन्या उत्पन्न हुई, उन्होंने ही इस नगरकी प्रतिष्ठा की है और ऐसा भी सुननेमें आया है, प्राचीन निकृष्ट और जातिका एक जस्सू लकडहारा जिस समय वनसे लकडी काटकर ला रहा था । उस समय रास्तेमें पारस(पत्थर)के ऊपर उसकी कुल्हाडी गिर पडी, गिरते ही वह सुवर्णकी हो गई । उस मनुष्यने स्वर्णराशिकी सहायतासे इस चंद्रावती नगरीकी प्रतिष्ठा की और जस्सू ओरका तलाव नामका एक बडा सरोवर खुदवा दिया । वही इस चंद्रावती नगरीका प्रतिष्ठाता हुआ, कोई कहते हैं कि वनवासके समय पांच पांडवोंमेंसे भीमने इसकी प्रतिष्ठा की, एक दैत्यने इसमें विघ्न किया, भीमने उसे बाणसे मारा; वह भागा जहाँ बाण लगा वहाँसे चन्द्रभागा निकली । हमारा यह विचार है कि मालवेके राजा उदयादित्यके उस प्रवाद वाक्यको उस लकडहारेने परिणत कर दिया है, यही नहीं कि उसी राजाके नामकी खुदी हुई लिपि यहाँ दिखाई देती है । मध्य भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान२नगरोंमें ही उनके नामकी खुदी हुई लिपियां पाई जाती हैं । विक्रमाजीतके संवत्से १२ सौ वर्षतक इस वंशने घोर पराक्रमके साथ इस देशमें राज्य किया था" ।

"नदीके दोनों ओर बहुतसे प्राचीन मंदिर टूटे फूटे पडे हैं । नदीके किनारेतक बराबर घाट और सीढियाँ बनी हुई हैं वहाँ बहुतसे देव देवी दैत्य और दानवोंकी बहुतसी मूर्ति पडी हुई हैं; इनमें बहुतसे लिंग मट्टीकी वेदीके ऊपर स्थित हैं और सबलकार अलस गोस्वामी उस वेदीके नीचे बैठकर धूपमें अपने शरीरको सुखा रहे । मैंने विचारा कि यदि उन मूर्तियोंको मैं उदयपुर भेज दूँ तौ अच्छा होगा, यह विचार कर मैंने अनन्त-शय्या शायित नारायण, एक पार्वती, एक त्रिमूर्ति तथा और भी बहुत सी मूर्तियोंको गाडीमें रखकर उदयपुरको भेज दिया । वह सब एक वट वृक्षकी जडमें पडी थी । उसी स्थानपर गणेशजीकी एक बडी सुन्दर मूर्ति पडी हुई थी किन्तु मैं उस मूर्तिको किसी प्रकार भी न उठा सका । तब गोस्वामी मुसकाये" ।

"चन्द्रावतीके एक सौ अट्ठासी देवमन्दिर प्रायःसभी विध्वंस हो गये हैं । केवल दो तीन मंदिर आजतक उत्तम अवस्थामें हैं वह प्राचीन कालके सौन्दर्यकी पराकाष्ठा दिखा रहे हैं । मंदिरोंका शिल्पकार्य अत्यन्त रमणीक है" ।

"और सागरके बांधके निकट जैनपासकोंके निसिया नामक बहुतसे समाधि चिह्न विराजमान हैं । एकमें लिखा है कि ३ माघ संवत् १०६६ इस दिन आचार्य

श्रीमन्यदेवके चेले श्रीमन्तदेवने इस संसारको छोडा। पिछली समाधिकी तारीख ११८० संवत् लिखी है तथा वह देवेन्द्र आचार्यकी समाधि है। इस प्रकारसे अनेक समाधियोंके स्तंभ देखे परन्तु उनमें कोई ऐतिहासिक ज्ञातव्य विवरण नहीं पाया।" ऊपरकी समाधिके पास एक सन्दूक बना हुआ है, वह ऐसा है जैसे कोई पुस्तक देखता है, एक पुस्तक और एक धोती आचार्यके सम्मुख धरी है जैन छतरियोंका ऐसा ही चिह्न होता है एक और कुमार देवकी छतरी है इन्होंने १२८९ में इस असार संसारको त्याग किया था।

हमारा घासी दो मंदिरोंका मानचित्र ले रहा है, इनमेंके एक मंदिरमें अबतक सिंगार चोरी विद्यमान है; इनमें वह शिल्प है जो यूरुप निवासी भी तैयार नहीं कर सकते प्रत्येकमें एक सादा मंदिर है जो बीस फुट लम्बा चौडा है, उसके आगे सभा मंदिर है जिसे जगमोहन कहते हैं स्तंभोंपर सबमें नक्काशी है, द्वार भी प्रशंसाके योग्य है उसका शिल्प भी एक मुख्य प्रकारका है उसके (गिलबर्ग) बहुत ही श्रेष्ठ हैं, हमको दुःख है यूरूपवालोंने इस पूरे शिल्पका कोई खाका तैयार नहीं किया, नहीं वह इसमें और योग्यता प्रगट कर सकते और इस भवानी भूमिका यह नाम बदल देते। जबतक हमारा चित्रकार चित्र लेता रहा हमने पण्डितोंको और भी खोजके लिये भेजा यहाँ सहस्रों मूर्तियां हैं कितनी मूर्तियें दीवारोंमें लगा दी गई हैं पर उनकी खोज निरर्थक नहीं हुई.

सबसे पुरानी खोदित लिपि संवत् ७४८ सन् ६९२ ई० की है जिसमें राजा दुर्गा अंगलका नाम है। यह बेल बूँटेदार अक्षरोंमें लिखी है, उसमें वह नियम जो पांडु अर्जुनके सम्बन्धमें है लिखा है कि यहाँ उसने एक वाराहको मारा जहाँ उसका रुधिर गिरा था वहां एक आकृति प्रगट हुई। कारण कि यह वाराह एक बरोदा दैत्य था। उस आकृतिका वंश खेतरी कहा है या कृष्णवंश खेतरी उसी वंशमें था। जिसके पुत्रतक एक था किससे उसकी उपमा दें जिसे समस्त भूमंडलका फल प्राप्त था। उसने अपने सब शत्रुओंपर विजय पाई थीं। इसका एक पुत्र क्याक नामवाला था। यह पृथ्वीको उठानेवाले देवताके समान बुद्धिमानीमें महादेवके समान था। उसके नामसे शत्रुओंके बालक छिप जाते थे। वह बुद्धका अवतार विदित होता था और जैसे चन्द्रमासे सागर बढता है इस प्रकार उससे हमारी बुद्धि बढती है जब उसकी दृष्टि हमारी योग्यतापर पडती है उसकी दृष्टिमें अमृत है चैत्रसे चैत्रतक वर्षभर उसके यहाँ हवन होता रहता है। इन्द्र उसके यहाँ कृपादृष्टि रखता है उसकी सरलता संसारमें छा गई है। इसके शत्रुओंके चढनेके हाथियोंके दाँतोंमें जो प्रकाश था वह जाता रहा और जो आगे बढनेको हाथ उठाता था वह स्तंभित हो जाता था। भूमिमें कोई स्थान ऐसा न था जहाँ उसकी आज्ञाका प्रचार न हो इस प्रकारके श्री क्याकजी थे। जब वह दूसरोंके नगरोंमें जाते तो शत्रुओंकी स्त्रियोंके मनोंसे प्रसन्नता दूर हो जाती थी, उसकी सब इच्छाएं पूर्ण हों।

संवत् ७४८ जेष्ठ शुदी पूर्णमासीको यह लिपि इस मंदिरमें बनेरा घाट गणेश्वर मंडलवालेने जो हरगुप्तका पुत्र है लगाई और यह लेख महाराज दुर्गा अंगल राजाके निमित्त हुई, उनको हमारा प्रणाम पहुँचै। ऐसा कोई मस्तक नहीं जो देवता गुरु और स्त्रीके सामने नहीं झुकता यह लिपि ओलिक शिल्पकारने खोदी है।

हमको इस खेतरी वंशपर यह भी अनुमान होता है कि यह वंश बडे हिन्दू वंशसे हैं, जो उत्तरसे आये थे और वाराह नाम इन्दोसीदियनका भी है; इतिहास जैसलमेरमें कई जगह आया है कि जिस रयासतके आरंभ इतिहासमें पदभट्टीके तक्षक और क्याकसे युद्धका वर्णन है तक्षक और क्याक तातारी नाम है,: तक्षक सर्प क्याक नाम आकाशका है अर्थात् पूर्वमें यहाँके निवासी सर्पपूजक थे; इसीसे इस जातिका नाम तक्षक हुआ। वैसे ही इनके अक्षर हैं; जो पश्चिमी भारतमें पाये जाते हैं, यदि हम इस विषयको राजा हूनके जो भद्रावतीवाले और अंगदसी हैं जिन्होंने राजा चित्तौरकी सेवा की थी। प्रविष्ट करें तो हमको स्पष्ट प्रतीत होगा कि यह स्मारक सिथिर और तातार राजाका है। जो राजा जैतसारपुरवालेके सहित हिन्दू जनोंमें सम्मिलित हुए थे।

एक लिपि जैन मंदिरसे संवत् ११०३ ज्येष्ठ तृतीयाको मिली पर इसमें केवल एक दर्शक यात्रीका नाम है।

मुकाम नरायनपुरा १३ दिसम्बर ग्यारह मील–सवेरे ही यहाँसे चले; यहाँ एक गंदौर स्थान है, पहिले यह घाटीरावकी जागीर थी, आधकोश आगे आंतरीका मार्ग था इस घाटीसे हम उत्तरकी ओर चल रहे थे और उत्तर पश्चिमकी ओर गागरौन शहर था, हमारी इच्छा इसके देखनेकी बहुत थी, समय थोडा था इससे हम इसको न देख सके, यह खीची वंशकी राजधानी है, हम उसी मार्गसे चले जिसपर अलाउद्दीन गौरी होकर गया था जब उसने अचलदापर आक्रमण किया। यह घाटी तीन मील चौडी है, यहाँका दृश्य देखने योग्य है, मोर तीतर मुर्गे शब्द कर रहे हैं। मानों सूर्यके निकलनेकी प्रसन्नता प्रगट कर रहे हैं। इस घाटीमें नायब जालिमसिंहने अपनी छावनी डाली है और तीस वर्षतक वह यहाँ रहा। इस घाटीने अब शहरियतमें अपना स्वरूप बदला है। बडे २ मकान बन गये हैं चहारदीवारी बनानेका प्रबन्ध हो रहा है पर उसकी तैयारीतक उनके जीवित रहनेकी आशा नहीं है। यह स्थान अमजोरके किनारे है जिसको नायबने खूब पसंद किया है, झालरा पाटनके मार्गके मध्यमें है, कुछ ही दूरपर पिंडारोंकी छावनी है जहाँ करीमखाँके पुत्रादि रहते हैं जो उस पिंडारीदलके अधिपति थे यहाँ एक ईदगाह भी बनाई जाती है कि यहाँके क्रूरकर्मा लोग भी जो जघन्यकर्ममें तत्पर हैं पाँच समयकी नमाज पढें और कदाचित् उनके चरित्र सुधरैं।

जबतक नागरोनके समीप न पहुँचो तबतक शहर और किला मिला हुआ सा दीखता है, पर यहाँ ऊपर चढनेसे वह पृथक् दृष्टिगोचर होता है, जलके प्रवाहसे ऊंचाई तक पहाड कट गया है और पर्वतकी चढाई ऐसी क्रमानुसार है कि उसको देखकर हमको आश्चर्य हुआ। हमने उत्तरकी ओर निगाह की, काली और सिन्धु किले और शहरके उत्तरकी ओर टकराती दीखी हमारे शहरके निकट होते ही तोपोंकी सलामी हुई शहरके लोग हमारी मुलाकातको आये, किलेका अधिपति हमको साथ ले गया, अलाउद्दीन खूनी और जाबरने पांचसौ वर्ष हुए कि इस स्थानको खीची और अचलसे ले लिया था, नदीको गो रुधिरसे अपवित्र कर दिया था, हम पर्वतके मार्गसे फिर चले

फिर अंतरीघाटीमें उतरे और ठीक पश्चिमकी ओर होकर नरायनपुर पहुँचे, यह घाटी चारसौसे छः सौ गज तक चौडी है, यहाँका दृश्य सुहावना है, नायबने शिकारके निमित्त यहाँ खंदक किये हैं, पर्वत काटे हैं, जिनपर हिरन वा बनैले शूकर नहीं जा सकते, हम कई छावनियोंमें गये जो पर्वतमें हैं, यहाँ नायब अच्छी सेना इकट्ठी कर सकता है, इनमें कुएँ और सरोवर भी विद्यमान हैं, जिनको पौ कहते हैं ।

स्थानमुकन्दरा १४ दिसम्बर १० मील–हम प्रभात ही चले घाटीपर एक ऊजड किला देखा इसकी ऊंचाई बहुत है, मालवेके सब मैदान यहाँसे दीखते हैं । खीची महाराजके यहाँ चिह्न हैं जब उन्होंने यवनोंपर आक्रमण किया था । यहाँ बहुतसी मृतकोंकी छतरियाँ हैं । मंदिर भी शिव पार्वतीके हैं । एक लिपि हमको मिली जिसमें महाराजका नाम नहीं है वह लिपि यह है कि विष्णुकी स्थापनाके समय चार पीढी विद्यमान थीं ।

संवत् १६५७ शाके १५२२ सौम्य संवत्सर दक्षिणायन शरदृतु आसौज कृष्ण रविवार दिनमान ३६ घडी इस समय चौहान वंश महाराज श्रीरावत नृसिंहदेवने अपने पुत्र श्रीरावतमहाराज और उनके पुत्र श्रीचन्द्रसेन तथा उनके पुत्र कल्याणदासने यहाँ शिवालय बनाया । उनको शुभ हो । मुहरा जैसरमन कम्मानें लिपि खोदी महेशके पुत्र कृष्णगुरुकी उपस्थितिमें लिपि बनाई ।

हम देशके निमित्त प्राण देनेवाले बीरोंका वर्णन न करके केवल एक पुरुषका वृत्तान्त यहाँ लिखते हैं । अर्थात् गुमानसिंह सामन्त हाढाका वर्णन करते हैं । वह उस समयका है जब दुर्जनशाल कोटेका शासन करते थे और उस समय जौसिंहगागरोनी-वाला एक राठौर राजपूत फौजदार था इस फौजदारके कारण गुमानसिंह इस घाटीके अधिकारकी प्रतिष्ठासे व्याकुल होगया था । उसकी जागीर भी छीन ली गई थी । वह राजदरबारसे लौटकर घर आ रहा था । उसका जी बहुत खट्टा हो गया था । मार्गमें वह उस फौजदार (सेनापति) से जो अपने सेवकों सहित आ रहा था मिला । रात अंधेरी थी एक मशालची उसके आगे था । गुमानसिंहने मशालचीको दे मारा और अपनी फौलादकी तलवारसे राठौरको पालकीमें ही समाप्त कर दिया और वहाँसे द्वारपर आकर कहा कि रावसाहबका हुक्म है कि जबतक वह लौट कर न आवें उस समयतक कोई उस मार्गसे न जाय । यह कहकर जब वह अपने इलाकेमें पहुँचा तो अपने बाल बच्चे और सब सामग्री लेकर उदयपुर चला गया और राणाकी शरण हुआ । रानाने उसको कुछ देश उसके पोषणके निमित्त दिया । गुमानसिंह उस समयतक उदयपुरमें रहा जब कि ईश्वरीसिंह जैपुरेश्वरने कोटेपर आक्रमण किया । उस समय उसने कोटेकी रक्षाके लिये रानासे आज्ञा माँगी और उदयपुरसे रवाना होकर पठारके मार्गसे चला । पर कोटा चारों ओरसे घिरा था । इससे उसने विचारा या तो कोटे पहुँचूँ या यहीं प्राण दे दूँ यह विचार कर उसने नगाडेपर चोट लगानेकी आज्ञा दी और शत्रुसेनाके बीच होकर चला । जैपुरनरेशने कहा ऐसा कौन बली है जो हमारे डेरेके समीप नगाडेपर चोब देता

हुआ जा रहा है। समाचार मिला कि रावत घाटीवाला है, उदयपुरसे आ रहा है। नरेशने पितासे सुना था कि इस रावतने बिना किसी शस्त्रके सिंहको मार डाला था इसने नरेशने इसके साथ साक्षात् करना चाहा। हाड़ापर समाचार पहुँचा तब उससे कहा मैं अपने साथियों सहित मिल सकता हूँ। मिलनेपर जैपुरनरेशने बडा सत्कार किया और कहा यदि तुम हमारे साथ रहो तो जैयपुरमें एक बडी जागीर तुमको दी जायगी और राजाके फुफा ईश्वरीसिंहने कहा उसका भाग्य उसको कोटेमें लिये जाता है और कोटा इतने समयमें ले लिया जायगा, जितने कालमें कोई पान खाता है यह सुनकर गुमानसिंहने कहा महाराज मेरा जुहार लें। वीश सहस्र हाडा वंशियोंके शिर कोटेके साथ हैं। राजाने आज्ञा दी कि कोई इनसे मोरचेपर या सेनामें कुछ न कहें। जब रावत नदीपर पहुँचे तब ऊँचे स्वरसे कहा कि रावत घाटीका एक नाव चाहता है। वह अपने राजाके पास जायगा। जब वह राजाके समीप पहुँचा तो उसने देखा कि राजा एक दीवारकी छायामें बैठे हुए अपनी सेनाकी वीरता बढा रहे हैं। इसी समय समाचार मिला कि एक स्थानकी दीवार टूट गई है। उसने राजाको इतना भी समय न दिया कि स्वामी उसके धर्मकी प्रशंसा करता। वह प्रणाम करके अपने साथियों-सहित उस टूटे स्थानपर गया और वहाँ जाकर अपनी लोहेकी सांग गाड दी। पहिले हाडा रावत ऐसे वीर थे अब उनके वंशधर बहुत गरीब हैं। उनकी भूमि छिन गई है और बडी कठिनाईसे अब उनको भोजन मिलता है।

हम इस घाटीसे जो राजपूतोंके रुधिरसे तर रहती थी आगे बढे और दर्रे स्थानमें पहुँचे; दर्रेके बाहर नायबकी स्थिति थी। पर वहाँ हमको यह समाचार मिला कि यहाँसे थोडी दूर एक भीमका चौरा नामक स्थान ऊजड पडा है उसमें शिल्पकारी बडी कौशल-से की गई है, जैसी कहीं नहीं है, उसमें भारतीय और मिसर देशीय दोनों प्रकारकी बनावटें हैं, कहा जाता है कि राजा कोटाने इसका सब असबाब अपने रंगमहलमें ले लिया है। जो उसने एक भीलनी वेश्याके लिये बनवाया था यहाँके स्तंभ अद्भुत हैं जो चौराके समीप जहाँ पाँडु भीमने अपना विवाह किया था दो स्तम्भ हैं उनसे किसी स्थानका चित्र विदित नहीं होता कि केवल स्तम्भ ही स्थित हैं। उनके शिरोंपर मट्टी और घास उत्पन्न हो गई है और समीपमें छतरियां दृष्टिगोचर होती हैं और जो कि यह मार्ग दक्खिन और उत्तरी भारतका था इससे यह विख्यात स्थान होगा और निश्चय यहाँ कोई नगर बस रहा होगा। यहाँ हाडावंशके बहुत चिह्न पाये जाते हैं। जब नायबने अपना एक स्तंभ बनाया जिसमें उसने अपनी कार्यवाहीसे पृथक् रहना स्वीकार किया तो भी उसको कुछ नियम ऐसे मिले जिससे उसे भागना ही पडा।

उन नियमोंकी हम एक लिपि यहां प्रगट करते हैं जो मुकन्दरासे हमको मिली है और जो भीतरी राज्यमें विख्यात है।

महाराज महारावजी किशोरसिंह आज्ञा देते हैं महाजन व्यापारी किसान व मुकन्दरामें रहनेवाली दूसरी जातियोंके प्रति—

इस समय विश्वास रक्खो महाजनी व्यापार बटाई ऋणका लेना तथा खेती करो और अच्छी दशासे रहो। कारण कि सभी दंड सरकारने क्षमा कर दिये अपराधके अनुसार दंड दिया जायगा, सब कार्यकर्ता विश्वासी रहैंगे पटैल पटवारी रात्रिको पहरा-देनेवाले चौकीदार मुसद्दी सुसेवाका पुरस्कार पावेंगे, अपराधी होनेपर दंड पावेंगे, व्यापारियोंको सताने वा उनसे रिस्वत लेनेकी कार्यवाही न होगी.इसके माननेके निमित्त उस वस्तुकी शपथ है, जो हिन्दू मुसलमानोंमें पवित्र समझी जाती है यह आज्ञा महा-राजके श्री मुखकी है और नानाजी जालिमसिंह और उनके पुत्र माधोसिंहकी साक्षी है।

मिती १० आसौंज दिन चन्द्रवार संवत् १८७७।

कुछ दिन रहकर हम कोटेको पंचपहाड और आनन्दपुरके मार्गसे आये, यह दोनों बडे नगर उक्त नदीके किनारे पर बसे हैं।

माधोसिंह छः तोपोंके साथ दो मीलतक हमारे साथ आया और हमारे पुराने बागके स्थानतक हमारे साथ रहा। यह शहरसे पूर्वकी ओर है हमने यहां हैजेके दूर होनेकी कुछ विधि निकाली। हमने मुरगावी और हिरनोंका शिकार यहां किया। कभी हम नायबके चीतोंसे शिकार करते थे। एक वार हम अखिलगढके किलेके समीप शिकारको गये, यह दक्खिनकी ओर छः मील है। यहाँके पर्वत तीनसौ फुट ऊंचे हैं यहां हम लकडियोंका बेडा बनाकर उतरे नायबके शिकारियोंके चिल्लानेसे एक वृद्ध रीछ निकला, कप्तानसाहब और डाक्टर साहबने इसपर गोली चलाई मगर दोनों गोली खाली गई, वह रीछ क्रोधकर मेरे ऊपर टूट पडा, जब दश कदमका फासला रहा तब मैंने उसपर गोली चलाई, जो उसके आगेके हाथमें लगी जिससे वह गिर पडा और फिर उठ कर खडा हुआ और मुँह खोल कर मेरी ओरको झपटा हमारे एक साथीने उसके एक सांग मारी और हमें बचा लिया। गोली और सांग खाकर वह एक गुफामें भाग गया, फिर हम शेष दिनतक अखिलगढमें रहे, यहां बहुत पत्थर हैं अनुमान होता है कि यह भीलोंका किला होगा. यहां एक स्थान जापुर[1] महा-देवका है, एक पानीका नाला है जो चम्बलमें गिरता है यहां चम्बलके किनारे ६०० फुटसे अधिक ऊंचे हैं, जैसे कोटेसे भिसरोरतकके स्थान प्रशंसाके योग्य हैं भारतमें ऐसे स्थान बहुत कम हैं।

हमने खोदित लिपियोंकी यहां बहुत खोज की परन्तु वे ऐसे अक्षरोंमें मिलीं जिन को अब कोई नहीं पढ सकता। राजा जितकी एक लिपिका वर्णन प्रथम खंडमें लिखा है।

चतुर्दश अध्याय १४.

किजौलीका वृत्तांत-माई नाल वा महानाल-खुदी हुई लिपि-हाडावंशके विवरण पूर्ण खुदी हुई लिपि-बासोदा-आल्हूहाडाका विध्वंस्त किला और महल-अंधेरी कुटी-एक प्रवाद कहानी।

(१) कोई गयापुर कोई जैपुर महादेव भी कहते हैं।

कई स्थानोंमें घूमनेके पीछे महातमा टाड साहब कई दिनतक कोटेमें रहकर अन्तमें उदयपुर राजधानीकी ओर गये। रास्तेमें बूंदीमें होकर गये। देखा कि यहाँका शासनकार्य भलीभांतिसे हो रहा है। फिर माईनाल नामक प्रसिद्ध स्थानके दर्शन करनेके लिये पाठार देशको गये। इसमें होते हुए दश मील उत्तरको बिजौली नामक स्थानमें पहुँचे। बिजौली मेवाडका एक प्रधान देश है। प्रमार जाति रावकी उपाधि धारण करनेवाले एक सामन्त बिजौलीके अधीश्वर हैं। यह सामन्त वंश पूर्वकालमें वियानाके समीप जगनेर देशके अधीश्वर थे। पीछे अमरसिंहके शासनसमयमें प्रायः दो सौ वर्ष बीतनेपर इस सामन्त वंशने कुटुम्ब सहित मोल लिये हुए सेवकोंके साथ यहां आकर निवास किया। राव राणाने अशोककी एक कन्याके साथ विवाह किया था। उन्होंने ही उन राव अशोकको वार्षिक पांच लाख रुपयेकी आमदनीवाले इस विजौली देशका समस्त अधिकार दे दिया था"।

"विजौलीया विजयावाली-ध्वंसस्तूपके ऊपर संस्थापित है, यहांकी अगणित प्राचीन खोदी हुई लिलिमें इस देशके प्राचीन दो नाम, आहिचपुर या मोरकरो यह खुदे हुए दिखाई दिये, उन दोनों नामोंमें पहलेके वदलेमें दूसरा ही यहांका प्रकृत प्राचीन नाम जाना जाता है। मेवाडके इस प्राचीन सीमान्त देशके साथ चौहानोके अनेक प्राचीन प्रवाद इतिहासमें लिखे हुए हैं, इन देशोंके पहिले अजमेर राजवंशके अधीनमें था, ऐसा अनुमान करनेके अनेक कारण भी विद्यमान हैं, कारण कि उस राजवंशके वीशलदेव, सोमेश्वर, पृथ्वीराज इत्यादि नामकी बहुतसी लिपियां यहाँ विराजमान हैं। मोर कुरोके अरन्राज तथा उनके पुत्र वहिरराज और कुन्तपालकी वीरताका प्रकाश करनेवाले बहुतसे स्मृति चिह्न वहाँ विराजमान हैं। यह दिल्ली और अजमेरके बादशाह पृथ्वीराजके समकालीन थे।"

एक खोदित लिपिमें चीतौडका ऐसा युद्ध लिखा है कि इसके द्वारा यह अन्तर करना कठिन हो जाता है कि यह गहिलोत वंश वा चौहानोंका युद्ध है, इसकी आरम्भ प्रणाली शाकम्भरी मातासे है, जो वंश साकमदुर्ग और पर्वतकी अधिष्ठात्री देवी है उसमें वत्सगोत्र चौहानका वर्णन करके श्रीमत् वाप्पा राजविन्ध्या त्रिवेनी या वापा राजा विन्ध्याचलका वर्णन किया है—जो राणा मेवाडके वंशका प्रतिष्ठाता था परन्तु उसके आगे जो नामावली है वह उसके वंशसे नहीं मिल सकती इससे हम विचार करते हैं कि उस समय चौहान और परमार चित्तौरके अधीन थे. विशेष इसपर लिखना हम उचित नहीं समझते केवल इतना लिखना ही उचित जानते हैं कि यह वर्णन कुन्तपाल वनैडा अरन्राजका है जिसने जावलपुरको जीतकर नष्ट भ्रष्ट किया था, जिसके युद्धका वर्णन देहलीद्वारके वल्लभी द्वारपर खुदा हुआ है। इसके बडे भाईका पुत्र पृथ्वीराज था उसने सुवर्णका ढेर एकत्र करके उसको दान किया और मोरकरोमें पार्श्वनाथका मंदिर बनवाया और संवत्सवारमें जो उसे राजाई योग्यता प्राप्त हुई इससे उसका नाम संवत्स वार विख्यात हुआ। उसके स्मरणार्थ यह मंदिर बनाया गया और रवाके किनारेका रेवाना ग्राम इसके व्ययके निमित्त निर्धारण किया गया। संवत् १२२६।

इससे विदित होता है कि चौहानोंने बलपूर्वक तौर वंशसे देहली ले ली थी और हमैं यह भी साबित होता है कि जो विख्यात कविचन्दने लिखा है कि–जो लिपिस्थान असि (हांसी) और दिल्लीके स्तम्भोंपर हैं वह इसीके समयमें खोदी गई हैं परन्तु जब बल्लभी द्वारकी ओर जो तिलोंनोंकी पुरातन राजधानी सौराष्ट्रमें थी, विचार किया जाय तो अद्भुत बात विदित होती है और उस समयकी वह दशा विदित होती है कि जब पृथ्वीराजने अपने पिता सोमेश्वरके वधका बदला लिया जो राजा सौराष्ट्र और गुजरातके युद्धमें मारा गया था, कुन्तपालने इस अवसरको अच्छा जाना और दिल्लीकी जीतमें अपना भाग प्राप्त करके उसने गुजरातकी जीत भोलाभीमसे की।

हम यहां यह भी कहते हैं कि पुरातन मोरकरो नाम विजौलीका था और दूसरे यह कि वहां राजा चौहान जैनमतावलम्बी था, चन्दकविके कथनमें यह कोई मुख्य बात न थी, कारण कि उसके लेखसे यह बात प्रगट होती है कि उसने अपने पुत्र सारंगदेवको इस कारण अजमेरसे पृथक् कर दिया कि उसने बुद्धमत स्वीकार किया था।

"यहांकी खोदी हुई लिपिमें चित्तौरके राजवंशका शासन और वीरताका विवरण खुदा हुआ पाया गया। विजौलीका प्राचीन नाम जिसे मोरकुरो कहते हैं उसकी खोदी हुई लिपिको पढकर हमने जाना कि मोरकुरो वर्तमान विजौलीसे आधकोश पूर्वमें स्थापित था, वह इस समय एक बार ही विध्वंस हो गया है। नौचौकी नामक प्राचीन महलका एक अंश था, यहां पार्श्वनाथके पांच मंदिर थे, और तेरह जैन देवताओंके जैनमंदिर टूटे फूटे अबतक भी विद्यमान हैं। महल और मंदिरोंके बनानेकी रीति और कारुकार्य अत्यन्त ही रमणीक है। मन्दाकिनी नामकी एक छोटी नदी इसके बीचमें होकर निकली है! पार्श्वनाथके मंदिरके पास एक प्राचीन कुण्ड और दो बडे २ जलाशय हैं। नगरके पास ही महादेवजीके तीन मंदिर हैं और"–

"विजौली, वर्तमान महलोंके प्राचीन विध्वस्त मंदिरकी श्रेणीके उपकरणसे बनी हुई है। उन मंदिरोंके लिंग इस समय उखडे हुए एक साथ पडे हैं। हमने अनेक स्थानोंमें मूर्तियोंको इसी प्रकारसे पडे हुए देखा, इससे यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि हिन्दू इन मूर्तियोंकी देवताओंमें गिनती नहीं करते हैं, वह इन्हें केवल देवताका चिह्नस्वरूप जानते हैं। लिंगकी पवित्रताके दूर होनेपर फिर उसे सामान्य पत्थरके समान मानते हैं। मैंने इस नगरके चारों ओर बहुतसे टूटे फूटे चिह्न देखे"।

स्थान दरौली जो चार मील दक्खिनकी ओर है वहाँ एक शिलालेख संवत् ९०० का है, पर वह कुछ कामका नहीं है और तिलसवा जो उससे भी दो मील दक्खिनको है, वहां चार मंदिर एक कुंड और एक तोरन है, पर वहां कोई शिलालेख नहीं है। जरौली वहांसे सात कोश है। उसमें सात मंदिर हैं। सब टूटे पडे हैं और भी टूटे फूटे किलेके चिह्न पाये जाते हैं। यहां और भी टूटे फूटे मन्दिर हैं जिनको वहांवाले अलाउद्दीन खूनी और औरंगजेबकी करतूत कहते हैं, यहाँवाले पहिले बादशाहको खूनी और दूसरेको कालयवन नामसे पुकारते हैं।

बिजौलीके सामन्तकी आय अब बहुत न्यून हो गई है। यदि उसकी जागीरको संभालां जाय तो ५००००रुपया वार्षिक आय हो सकती है पर वह कर नहीं सकते। जब तक वह उसके चारों ओर बडी मूर्तियोंको जीवित न कर सकें। उसकी बेटी राजा अमरासे व्याही गई थी। उसके स्वामीकी जब मृत्यु हुई तो उसकी अवस्था सत्रह वर्षकी थी। परन्तु हजार समझानेसे भी वह सती हो गई, हमने बहुतसी युक्ति उसके पास कहाई, और कहा हम उसके इलाकेको विशेष कर देंगे पर उसने एक न माना और अपने स्वामीके पाप मिटानेमें दृढ रही। हम वहाँ दो तीन दिन रहकर शिलालेखोंकी खोजमें फिर चले।

"माईनाल २१ वीं फरवरी—महानल शब्दके बिगडनेसे इस स्थानका नाम माइ-नाल हुआ है। पाठारके पश्चिम प्रान्तमें चार सौ फुट गहरे एक खातका नाम महानल है इस घाटीमें प्रवेश करना मृत्युके बराबर है। उसी महानलके किनारे प्राचीन मन्दिर और हर्म्य देखे गये। मंदिर और महलके एक अंशमें दिल्लीपति पृथ्वीराज और अन्य प्रान्तोंमें पृथ्वीराजके भगिनीपति चित्तौरके राणा समरसीका नाम खुदा हुआ है, समर-सिंहने पृथा बाईका विवाह किया था। कविचन्दने उनके बलविक्रमकी कहानीको अपने महाकाव्यमें भली भांतिसे निवारण किया है"।

उस स्थानपर जो बडा कुरो है वहाँ दोनों वंश आकर भारतके विषयकी बात-चीत करते थे और अपने बालबच्चोंके सहित आनन्दसे रहते थे। यदि चन्द्रकवीश्वरका यह कहना सत्य हो कि यदि महाराजा पृथ्वीराज समरसी महाराणाके साथ यहाँ सम्मति करते तो यवनोंके हाथमें किसी प्रकार भी भारतका शासन न जाता, पर पृथ्वीराजकी बेपरवाई वीरता और सरगरमीने सबको डुबा दिया और उस युद्धमें समरसी तथा पृथ्वी-राज दोनों ही निहत हुए, यह घगरके किनारेका घोर युद्ध था, कवीश्वरने इसको प्रलय कहा है, वास्तवमें भारतकी स्वाधीनताका यह प्रलय ही था, अब भी यह स्थान भयंकर है। प्रत्येक वस्तु यहाँकी उस बातको दिखाती थी, यहाँके वृक्ष भी मानों उस समयके वीरों अधिकारियोंका शोक करते हुए दृष्टिगोचर होते थे।

हमने बहुतसी खोदी हुई लिपियां देखी, उनमें खुदी हुई हाडाजातिके वंशकी कहा-नीके बहुतसे तथ्य पाये जाते हैं, हमने इस स्थानपर केवल एक लिपिका अविकल अनुवाद प्रकाश किया है।

कुलदेवी आशा पूर्णाकी कृपासे इस वंशके बहुतसे चौहान राजाओंने अपने प्रबल प्रतापसे पृथ्वीको शासन कर रणभूमिमें जय प्राप्त की थी, जिनके वंशमें मारैधन हुए, जिसने युद्धमें पूरी जय पाई। उसी वंशके हाडाजातीय कोलनका यश चन्द्रमाके समान निर्मल था। उनसे जयपाल उत्पन्न हुए, उन्होंने पूर्व जन्मके सुकृतिके फलसे इस

(१) यही रैनसीके पुत्र थे और यही केदारनाथ तीर्थमें १३५३ संवत्‌में गये थे, हाडाजातिके इतिहासमें इसका वर्णन भलीभांतिसे किया गया है।

(२) इसीको यगातमसे इतिहासमें वंगू कहा है, यह कोलनका पुत्र था जिसने माइनालको लिया था।

राजवंशमें जन्म लेकर परमसुख शान्ति प्राप्त की। उनकी प्रजाने ईश्वरके समीप उनके अमर होनेकी प्रार्थना की उनके पुत्र देवराज महादाता थे और मनुष्य समाजकी सुख शान्तिकी वृद्धि करना ही उनका एकमात्र अभिप्राय था। उनके पुत्र हरराज देखनेमें प्रज्वलित अग्निके समान तीव्र तेजस्वी थे और उन्होंने अपने बाहुबलसे भूमीश्वरोंको परास्तकर यश और अतुल धन प्राप्त किया था"।

"उनसे वामोदाका अधिराज वंश उत्पन्न हुआ। देवराजसे ऋतुपाल उत्पन्न हुए उन्होंने अपने बाहुबलसे विद्रोहियोंको परास्त कर कपिलमुनिने जिस भांति सगरकी सन्तानको भस्मीभूत किया था, इन्होंने भी उसी प्रकारसे उनको परास्त किया।

इनके पुत्र कल्हन हुए। उनके पुत्र कुन्तल धर्मराजके समान थे, उनके छोटे भ्राताका नाम देहा था। कुंतलकी रानी राजल देवीके गर्भसे चन्द्रमाके समान महादेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ और रणभूमिमें सुमेरुके समान अटल और दानमें इन्द्रके कल्पपादपके समान था। उन्होंने अरातियोंके रुधिरसे रणभूमिमें घोड़ोंके खुरोंसे उठी हुई धूलिको कर्दमाक्त कर दिया था। इन्होंने रणभूमिमें अपनी लम्बी भुजामें तीक्ष्ण तलवार विपक्ष नेता उमशाहके मस्तकपर उठाकर मेदपाटके अधिपतिके प्राणोंकी रक्षा की, चन्द्रमा जिस भांति राहुके कराल ग्राससे उद्धार पाता है कैथियाका इसी प्रकार उद्धार कियाँ बैल जिस प्रकार अपने पैरोंसे नाजको पीसता है महादेवजीने भी उसी प्रकारसे अपने पैरोंसे शत्रुओंकी सेनाको विध्वंस कर दिया और समुद्र मथनेके समान महादेवने इस समरके मथनेमें विजयरत्नको संग्रह कर कैथियाके अधिपतिको प्रदान किया। समस्त पृथ्वीमें उनके यशकी ध्वनि गुंजार उठी थी। उनके पुत्रका नाम दुर्जन था उसने अपना उपनाम जीवराज रक्खा। युवतसाल और कुंभकर्ण नाम उसके दो भाई थे।

इस महा अग्निमें भूमीश्वर महादेवने यह मंदिर निर्माण किया और उसको भली भांतिसे सजाकर इस खोदी हुई लिपिको सम्बद्ध किया। महादेवका यह महादेव स्थापित है, गंगा और सुमेरु जबतक हैं तबतक यह स्थिर रहे, और चीतौड़के निवासी ब्राह्मण धनेश्वरके द्वारा इसकी प्रतिष्ठा हुई थी"।

अनल नन्द इन्द्र चन्द्र[४]

"शिल्पविद्यामें सुशिक्षित वीरधवल शिलीने वैशाख मासकी सप्तमी तिथिको यह मंदिर बनाया।

---

(१) यह देव वंगूके पुत्र हैं, संवत् १३९८ बूँदीमें थे।

(२) हरराज देवराजके बडे पुत्र थे और उन्होंने वामोदामें वास किया जिसे उसके पिताने दिया था जो पीछे बूँदीमें लगा। टाड साहब कहते हैं कि हरराजके बारह पुत्रोंमेंसे बडा पुत्र आलहाडा हुआ यह वामोदाका अधिपति हुआ।

(३) कर्नल टाड साहबने कहा है कि ऐसा बोध होता है कि यह उमीशाह पठान बादशाह हुमायूँ होंगे। महानलके हाडा अधीश्वर महादेवके साथ युद्धके समयमें मेवाडके राणाके किसी प्रधान सेनापतिने इस कैथियासिंहका उद्धार किया था"। (४) सन् ११३९.

बेगू--माईनाल वा महालमें भ्रमण करनेके पीछे साधु टाड साहबने बेगू नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि मैं पाठारके शिखरपर अत्यन्त ही प्रभातकालमें गया। परन्तु रास्तेमें बहुतसे वृक्षोंके होनेसे हम दोनों ओरके समतलक्षेत्रको न देख सके, अन्तमें जिस स्थानपर आल्हाडाका किला स्थापित था, वहां जा पहुंचे। परन्तु वामौदाका किला बिल्कुल टूट गया था वरन् वहाँकी जमीन भी एकसार हो गई थी। महावीर आल्हाडाका यह किला और महल किस प्रकारकी आकृतिका बना हुआ था मैंने उसको विध्वंस अवस्थामें भी अनुमान कर लिया था यहाँ शिवजी, हनूमान और धर्मराजके तीन मंदिर हैं "।

अँधियारी कोठरी--नामक एक गुप्त अंधकारमय कमरा है। ऐसा सुना जाता है कि आल्हाडा जिस समय मंडोरपतिके साथ युद्ध करनेके लिये गये थे उस समय अपने भतीजेको इसीमें बंद कर गये थे। भूधर पार्श्वमें योगिनीमाताकी एक बडी भारी मूर्ति है। आल्हाडाके इस अभेद्य किलेको किसने विध्वंस किया था इसकी विशेष खोज करने-पर भी इसका पता न चला। शायद मेवाडके महाराणाने ही इसको विध्वंस किया हो। यहां एक जोगनी माताकी मूर्ति है। यह इस समय बेगू सामन्तके अधीनके देशके अन्त-र्भुक्त है। हमने यहां आल्हाडाके सम्बन्धका एक और वृत्तान्त जाना, पाठकोंको इस स्थानपर वह उपहारमें देते हैं।

वामौदाके किलेके चौबीस किलेमेंसे एक किलेमें आल्हाडा और उसी जातिके लालजी एक पुरुष निवास करते थे उनके एक कन्या थी। लालजीने चित्तौरके राणाके साथ उस कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित कर राजपूत रीतिके अनुसार राणाके समीप कन्याके नामका नारियल भेजा। परन्तु राणा उस प्रस्तावमें किसी प्रकार भी सम्मत न हुए, उन्होंने नारियलको लौटा दिया। लालजीके पुरोहित जो उस नारियलको लेकर गये थे वह आंतरी देशसे होते हुए आ रहे थे। इसी समयमें राणाके बडे पुत्रको मृगयासे लौटकर आते हुए देखा। उससे पुरोहितने सब वृत्तान्त कहा युवराज पुरोहितके मुखसे समस्त वृत्तान्त जानकर लालजीके सम्मानकी रक्षाके लिये स्वयं उस नारियलको ग्रहण कर विवाह करनेके लिये राजी हुए। उन्होंने पुरो-हितको बिदा करके कहा कि मैं शीघ्र ही विवाहके लिये आता हूँ। कुछ दिनके पीछे चित्तौडके युवराज अपने अनुचरों सहित राणासे साक्षात् करनेके लिये उपस्थित हुए। और पिताकी आज्ञानुसार एक कविके साथ विवाह करनेके लिये वामौदामें गये।

उक्त कविका नाम भीमसेन था, यह वाराणसीनिवासी थे। इस समय मेवाडके समस्त कवि मेवाडसे निकाल दिये गये थे। भीमसेन कच्छभुज देशमें जानेके समय राणाके पास भी गये। मेवाडके कवियोंके निकालनेके सम्बन्धमें यह कारण जाना गया है कि मेवाडके एक प्राचीन सरोवर बनानेके सम्बन्धमें एक परम रमणीय नेत्रोंको आनंद देनेवाला एक विग्रह आविष्कृत हुआ। यद्यपि वह मूर्ति अत्यन्त चमत्कारिक थी परन्तु हाथका भंगीभाव अत्यन्त विचित्र था; एक हाथ ऊपरको और एक नीचेको और

तीसरा सम्मुख दर्शकोंकी ओरको फैल रहा था।" यह तीनों हाथ तीनों ओरको फैले हुए देखकर सभी विस्मित हुए, ऐसी मूर्ति पहिले कभी नहीं देखी थी, इस भांति तीन ओरको हाथ फैलानेका अर्थ क्या है, इसको कोई भी स्थिर न कर सका, राजाकी आज्ञासे देशके जितने कवि, चारण, भाट और वेदके जाननेवाले ब्राह्मण पंडित थे सभी बुलाये गये और उनसे इसका कारण बतानेके लिये कहा गया। परन्तु किसीने भी सन्तोषदायक उत्तर नहीं दिया। अन्तमें उक्त झारिजाके कवि भीमसेनने आकर इसकी ममांसा कर दी। उन्हाने कहा कि ऊपरको जो हाथ फैला हुआ उंगली दिखा रहा है, उसका अर्थ यह है कि ऊपर अर्थात् स्वर्गमें एकमात्र इन्द्र है और नीचेको इस भावसे हाथ फैलाकर उंगली दिखा रहा है, इसंका यह अर्थ है कि नीचे पातालके अधीश्वरको बता रहा है और सम्मुख राणाकी ओरको जो हाथ फैल रहा है, इसका अर्थ यह है कि इस संसारमें एकमात्र राणा ही संसारके अधीश्वर हैं। भीमसेनकी इस व्याख्यासे राणा हमीर अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ और उनको अपने प्रधान कवि पदपर वरण किया। उस भीमसेनकी ही आज्ञासे निकाले हुए कवि मेवाडमें बुलाये गये। परन्तु भीमसेन राणाके अतिरिक्त और किसीसे किसी प्रकारका दान नहीं लेते थे। वह कविश्रेष्ठ भीमसेन चीतौडके युवराजके साथ विवाहसभामें गये। उनके जानेपर लालजीके किलेमें महा महोत्सवका अनुष्ठान हुआ। अनेक देशोंसे कविलोग आकर लालजीका जयगान करते थे। प्रचलित रीतिके अनुसार लालजीने कवियोंको बडे २ मूल्यवान् द्रव्य उपहारमें दिये, लालजीने भीमसेनको एक श्रेष्ठ घोडा मूल्यवान् पोशाक वस्त्र और एक तोडा रुपयोंका उपहारमें दिया। परन्तु भीमसेन किसी प्रकार भी लेनेको राजी न हुए, अन्तमें विशेष लोभके त्यागनेपर इतना बोले कि इन उपहार द्रव्योंको यहां रख जाओ। उन उपहारके द्रव्योंके लेनेको कुछ ही समय पीछे उन्होंने अपने मनको सैंकडों बार धिक्कार दिया और तुरन्त ही अपनी तलवार निकाल कर प्राणघात किया। चित्तौडके प्रधान कवि मारे गये हैं, शीघ्र ही यह शब्द चारों ओर गुंजार उठा। इस समय युवराज विवाहके स्थानमें बैठे थे और वर कन्याकी गांठ बन्धनेका उपाय हो रहा था। युवराज उस कविकी आत्महत्याका समाचार सुनते ही आसनसे उठ खडे हुए और प्रतिहिंसा देनेके लिये तैयार हुए। युवराजको इस प्रकारसे विवाहका आसन छोडते हुए देखकर कन्याके पिता अत्यन्त दुःखित हुए। अन्तमें युवराज विवाह करनेमें असम्मत हो बामौदाके बाहर चले गये। कुछ ही समयके पीछे उन्होंने सेना और सामन्तोंके साथ आकर बामौदापर आक्रमण किया और वह अपना बदला लेकर चले गये। अन्तमें फाल्गुन मासमें अहेरके समय कन्याके पिता लालजी जातीय रीतिके अनुसार शूकरका शिकार करनेके लिये गये, उस समय चीतौडके युवराजने आकर दलसहित उनपर आक्रमण किया। दोनों जने परस्परमें भाले हाथमें लेकर भिडे भालोंके आघातसे दोनोंके ही प्राण गये। बामौदामें दोनोंकी चिता सजाई गई। एकमें युवराजका और दूसरीमें लालजीका शव स्थापित होकर चिता प्रज्वलित हुई युवराजके साथ लालजीकी वह कुमारी कन्या और लालजीके साथ उनकी स्त्रीने प्राण त्याग किए।"

और इस अवसरमें वह यह नियम कर गई कि राना और राव किसी प्रकार भी अहेरके स्थानमें वसन्त ऋतुमें कभी एकत्र न हों । नहीं तो इसका परिणाम वध होगा हमने ऐसी दो घटना हाडाजातिके इतिहासमें लिखी हैं और चौथा पद पूर्ण करनेको मुकलका वर्णन किया है, जो कुम्भूने कहा है ।

हाम् गु, कल माचा, छाला खतयारान ।
खोजा रतन संहारया, आमल भरसी रान ।

इस दोहेको पाठ करके आल्हहाडाके वंशधर कुछ अपने हृदयके दुःखका आवेग न्यून करते होंगे, जो दुःख वमौदाके उजाड और उसके चौविस किलेंके निकल जानेसे होता होगा जिनमें अब एकमें भी हाडाका नाम लेनेवाला नहीं है ।

हाडाजातिकी इस बातको हम उन चिट्ठियोंसे प्रमाणित कर सकते हैं जो पिछले अक्टूबरमें हमारे पास आई थीं, जब घटीरानीकी आज्ञाके अनुसार एक समूह उनके मंदिरपर उपस्थित हुआ कि जो उनकी आज्ञा हो वह काम किया जाय ।

बूँदी १८ अक्टूवर सन् १८२० का विज्ञापन–समाचार पत्रद्वारा सब रईसोंके पास आज्ञापत्रका प्रचार किया गया कि दशहरेपर सब रईस और जिमीदार राजधानीमें उपस्थित हों उनके आनेपर वरके ठाकुर जसजीने कहा कि वमौदाकी भवानीने मुझे एक आज्ञा दी है कि रानीकी भूमिमें आगेको खेती न करो और अपने घोडे पशु आदि बेच-कर उस द्रव्यके ६४ भेडे और ३२ बकरे खरीदकर माताजीके बलिके निमित्त भेज दो । ऐसा करनेसे वामौदा दूसरी बार हमारे अधिकारमें आ जायगा, यह समाचार फैलते ही बूँदी कोटेके बहुतसे पुरुष वहां उपस्थित हुए । ठाकुरवरने २०० मनुष्योंका भोजन श्रीमाताजीके प्रसादरूपमें तैयार कराया था पर वहाँ ५०० मनुष्य आ गये पर माताजीका यह प्रभाव हुआ कि उन्होंने भली प्रकार भोजन किया और फिर भी बच रहा लोगोंको विश्वास हो गया कि माताजीकी आज्ञा ठीक थी ।

यह वृत्तान्त हमको बूँदीसे मिला परन्तु नीचेकी घटनाका वर्णन हमारे सच्चे मित्र बालगोविन्दने मुझसे कहा, जो उस घटनाके समय वहाँ विद्यमान था । कार्तिकके पहले दिन माईनालमें कुछ दिन हुए एक बडा बलिदान हुआ, जोगनीमाताके निमित्त इकतीस भेडे और ५३ बकरोंकी बलि हुई पर तीन हाडा वीरोंने दो बकरोंपर बडे वेगसे अपनी तल-वारें मारीं, तथापि उनका बाल बांका न हुआ, यह देखकर सबको बडा आश्चर्य हुआ । वह बकरे यथेच्छ चरनेको छोड दिये गये और लोग उनको अमर कहने लगे ।

बालगोविन्दके इस कथनपर किसीने तर्क न की । ज्ञानजी उसके साथ था बात सत्य थी, पर इन पाँचसौ एकत्र हुए हाडा राजपूतोंके विषयमें यह विचार हुआ कि यह भवानीके वाक्यपर उपस्थित हुए और विश्वास कर रहे हैं, हमने राजाको इसकी सूचना भेजी कि वह यह प्रगट कर दे कि हमने वैसा ही किया है इससे यह प्रगट है कि उन वीरोंके हृदयपर यह बात शीघ्र ही कैसी प्रभाव डालनेवाली थी ।

हम यहाँसे फिर आगको चले हम वमौदाकी दिवारें देखना चाहते थे, हम पर्वतके नीचे फेरके मार्गसे चले और जोगिनी माताके ऊपर भी एक दृष्टि डाली और घाटीके मार्गसे घोडा चलकर बेगूके एक अच्छे बागमें ठहरे। यहांका रावत कालामेघका वंशधर हमसे मिलनेको आया, पर अबतक वह उस श्रेष्ठ कार्यवाहीसे अजान था जो उसके निमित्त होनेवाली थी, अर्थात् उसको उस आधे देशसे कुछ अधिक देश प्राप्त होगा, जो सन् १७९१ ई० मरहठे सेंधियाके अधिकारमें था।

पंचदश अध्याय १५.



बेगू-कर्नल टाड साहबका हाथी परसे गिरकर चोट खाना-वेगूके सामन्तकी सहानुभूतिके चिह्न-महाराष्ट्रोंको वेगूसे निकालनेका वृत्तांत-वेगूदेशको राणाके अधिकारमें करना--सामन्तोंको वेगूदेशको पुनः प्रदान--चित्तोड--अकबरका द्वीप--चित्तौड नगरका वर्णन--नगर भ्रमण--बाघ रावत सम्प्रदायकी सृष्टिका विवरण-खुदी हुई लिपि-उदयपुरसे लौटना-कर्नल टाडका स्वदेशमें जाना-उपसंहार।

कर्नल टाड साहबने २६ वीं फरवरीको लिखा है कि"तीन वर्षसे बेगूके सामन्त जो भूस्वत्वसे रहित हुए थे उनको फिर उस विस्तारित देशका अधिकार देनेके लिये दो दिनसे मैं उस घटनाके उपयोगी बड़ी धूमधामके साथ बेगूके किलेकी ओरको गया। मेरे जानेका समाचार जानकर कालामेघके वंशधर अनेक देशोंसे आ आकर इकट्ठे हुए। बेगूके प्राचीन किलेके चारों ओर बड़ी २ खाई हैं, एक काठका पुल महलमें आने जानेके लिये बना हुआ है। उस सेतुके सामने एक तोरण है, मेरे सैनिक और एक सम्वादवाहक हाथीकी पीठपर चढ़कर वृटिश पताकाको स्थापित कर उस तोरणके नीचेसे पुलके पार हो गए। मैंने भी इसी प्रकार हाथीपर चढ़कर तोरणमें जानेकी इच्छा करी; परन्तु महावतने भलीभांतिसे निषेध करके कहा कि तोरणके भीतर हौदे समेत हाथी नहीं जा सकता कारण कि तोरण छोटा है, इस प्रकार जानेमें तोरणमें उसका ठसका लगेगा। परन्तु मैंने उसकी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया और उसको चलनेके लिये आज्ञा दी और कहा कि यदि तुम हाथीपर न बैठ सको तो उतर आओ। काठके पुलका कठोर शब्द और दोनों ओर गहरी खाइयोंको देखकर हाथी भयभीत हो महावेगसे पार होनेके लिये ऐसा दौडा कि वह किसी प्रकार भी सावधानतासे तोरणके पार न हो सका। महावत विशेष चेष्टा करके भी किसी प्रकार उसको स्थिर न कर सका। तोरणके पास जाते ही मैंने देखा कि अब रक्षा नहीं है; तोरणके भयंकर आघातसे हौदेके चूर्ण होनेकी भलिभाँतिसे सम्भावना थी। इस कारण मैंने उछलकर तोरणको दोनों हाथोंसे पकडा। परन्तु तुरन्त ही हाथमेंसे तोरणके छूटते ही मैं हौदेसे बाहर आकर गिर पडा, हाथी महा भयभीत होकर तोरणके पार

हो गया और मैं हाथी परसे गिरकर अचेत हो सेतुपर पडा रहा । जो लोग उस समय वहाँ उपस्थित थे उन्होंने तुरन्त ही मेरी भलीभाँतिसे सेवा की अन्तमें मुझे एक पालकीमें चढ़ाकर मेरे डेरोंमें ले गये। यद्यपि मेरे शरीरके अनेक स्थानोंमें चोट लगी थी तथापि मैंने शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त की । मैंने अपने सौभाग्यबलसे ही इस विपत्तिसे उद्धार पाया। यदि एक इञ्च भी उस जगहसे बचकर गिरता तो अवश्य ही खाईके जलमें डूब जाता । शीघ्र ही वेगूके सामन्त रावतजी और उनके कुटुम्बी भाई बन्धुओंने डेरोंमें आकर उस दुर्घटनाके कारण विशेष शोक प्रकाश किया । बड़े कष्टसे मैंने उनको अपने डेरोंमेंसे भेजा । मैं जब इस घटनाके दो तीन दिन पीछे फिर उसी अभिप्रायसे सामन्तको भूमिका अधिकार देनेके लिये गया, तब देखकर महान् आश्चर्य हुआ, कालामेघने वह जो रमणीक तोरण निर्माण किया था वह टूटकर एक सार हो गया है। मैं उसी टूटे हुए मार्गसे किलेके भीतरी महलमें गया, एक विस्तारित स्थानपर सामन्तोंको परिषदोंसे घिर हुए देखा । रावतजीने आगे बढकर किलेके महलकी चाबी मेरे हाथमें दी । मैंने उसके अधीश्वर प्रभुके नामसे फिर उन्हींके हाथमें दे दी । समस्त तोरणके विध्वंस हो जानेपर मैंने शोक प्रकाश किया और कहा कि मेरी ही दुर्बुद्धिसे यह दुर्घटना हुई थी, इस कारण तोरणका टूटना अच्छा नहीं हुआ। सामन्तोंने उत्तर दिया कि आप हमारे जीवनदाता हैं इस कारण जिस तोरणसे आपके प्राणनाशकी सम्भावना हुई थी हम लोग किसी प्रकार भी उस तोरणको नहीं रख सकते'' ।

"सामन्तोंकी जो भू सम्पत्ति उनको दी गई थी, यह सम्पत्ति सामरिक व्ययके कारण सेन्धियाके निकट गिरमी थी । रावतने सेन्धियासे इस मर्मका पत्र लिखा लिया था कि उक्त युद्धमेंका जितना खर्चा है वह रुपया सब देकर फिर अपनी सम्पत्ति ले लेंगे जिस समय इस अंचलमें वृटिश गवर्नमेण्टके मध्यस्थ होनेसे फिर शान्ति स्थापित हुई उस समय उक्त सामन्तने वह खत उपस्थित करके सब हिसाब किताब कर दिया, सेन्धियाको जो मिलता था रावतने उससे दुगना धन उसको दिया था । सामन्तने वृटिश एजेण्टके द्वारा सेन्धियासे उक्त सम्पत्तिको पानेके लिये फिर प्रार्थना की । इसीसे अनेक पत्रोंके द्वारा लिखापढी हुई । परन्तु कुछ भी फल न देखकर एक दिन रावतजीने अपनी सेनासहित आक्रमण करके महाराष्ट्रोंको भगा दिया और महाराष्ट्रोंने जो एक छोटा किला बनाया था उसपर अधिकार कर लिया । रावतजीने अपने बलसे इसपर अधिकार किया था, इसीसे यह अपराधी हुए, इस कारण उनको दंड देना उचित जानकर उक्त वेगूदेश राणाने अपने अधिकारमें कर लिया था। वेगूके किलेपर राणाकी पताका उडा दी गई । राणाके इस प्रकारसे दंड देनेपर बेगूके सामन्तने किसी प्रकार भी असंतोष प्रगट न किया वरन् सब प्रकारसे राणाकी आज्ञा पालन की, परन्तु राणाका यह अभिप्राय नहीं था कि वास्तवमें वेगूदेश सदाके लिये राज्यके आधिकारमें रहै । केवल सामन्तने राणाकी विना आज्ञा लिये महाराष्ट्रोंको भगाया । नाममात्रका उस देशपर राणाका आधिकार था । अंतमें मैंने सेन्धियाके दावेके विरुद्धमें विशेष प्रमाण उपस्थित किये, सेन्धियाने बहुतसे

कागज पत्र और खतोंका उल्लेख किया और अपने दावेको प्रबल करना चाहा, परन्तु उन कागजपत्रोंको उपस्थित करनेमें वह समर्थ न हुए। अन्तमें कई महीनोंके बीतने-पर मैंने वेगूदेश उक्त सामन्तको फिर दे दिया। इस कार्यसे मैं अत्यन्त आनन्दित हुआ, कारण सन् १८१८ ईसवीके मई मासमें जब मैंने मेवाडकी वश्यता स्वीकार पत्रमें हस्ताक्षर करानेका प्रस्ताव किया तब इन्हीं सामन्तने पहिले उसपर हस्ताक्षर किये थे"।

महात्मा टाड साहबने वीरक्षेत्र चित्तौड़में जाकर लिखा है कि "शीशोदियोंकी प्राचीन राजधानी चित्तौड़के ऊँचे किलेकी प्रत्येक दीवारोंपर पत्थरखंड हैं, जिनमें असीम गौरवकी गरिमा लिखी हुई थी, मैं दूरसे जैसे २ उस राजधानीकी ओरको बढता गया मेरे हृदयमें उतना ही आनन्द होता था। मैं जिस रास्तेसे चित्तौड़की ओरको आगे बढ़ा उसी मार्गसे बादशाह अलाउद्दीन और सम्राट् अकबर अपनी प्रबल सेना और सामन्तोंके साथ रामचन्द्रके वंशधरोंको परास्त करनेके लिये आगे बढ़े थे। चित्तौड़के महाराज किस भांति सम्राट्के विरुद्धमें खडे हुए थे, राणा अरीसिंह (अरसी) राणा प्रतापसिंहने कैसा बल विक्रम प्रकाश किया था उसका वर्णन यथास्थान किया गया है। चित्तौरके उस अंतिम युद्धका स्मृतीचिह्न आजतक यहाँ विराजमान है, आज प्रभातकाल ही मैंने उसका दर्शन किया। जिस स्थानपर भारतके सबमें प्रधान बादशाह (अकबर) ने अपनी हरे रंगकी विजयपताकाको उठाकर डेरे डाले थे और अपने प्रधान वीर सेनापतियोंको इकट्ठा करके चित्तौड़पर अधिकार कर उसको विध्वंस करनेका परामर्श किया था उसी स्थानपर एक स्मरणचिह्न विराजमान है, इन चिह्नोंने उस स्थानको अक्षय कर रक्खा है, यह एक ऊंचे स्तंभाकारमें है और यह "चिरागदान, वा अकबरका दीप" नामसे विदित है। यह बडे २ पत्थरके टुकडोंके द्वारा बनाया गया था और ३५ फुट ऊंचा है। इसका नीचेका भाग विशेष स्थूल और ऊपरका भाग क्रमशः सूक्ष्म होता गया है। शिरपर एक बडा भारी दीपक बलता था, उसको देखकर सर्वसाधारण जान सकते थे कि उक्त स्थानमें बादशाहके डेरे पडे हुए थे। इसके भीतरी भागमें सीढियाँ हैं, उन सीढियोंके द्वारा ऊपरको चढा जाता है। बादशाह अकबर अवश्य ही उन सीढियोंपर चढकर ऊपरको गये थे; यह विचार कर मैंने भी एक बार इन्हीं सीढियोंपर चढकर ऊपरको जानेकी इच्छा की, परन्तु शरीर स्वस्थ नहीं था, इस कारण मेरे मनकी आशा मनमें ही रह गई। नीचेके नगरके अंशको अतिक्रमण कर मैं सवारीपरसे उतरा और घोडेपर सवार हो पांच किलोंको लाँघकर चित्तौड़में गया। सूर्यकुंडके पास ही मेरे डेरे पडे थे; इस कारण वहाँ जाकर चित्तौड़के चारों ओर उस प्राचीन ऐतिहासिक विध्वस्त चिह्नोंको देखकर चिन्ताको भगा दिया। अस्ताचलचूडावलम्बी प्रभाकरकी शेष किरणोंका जाल जबतक चित्तौड़के स्तंभके ऊपर पडता रहा, मैं तबतक विषादित स्मृति विचलित हृदयसे एक दृष्टिसे उसे देखता रहा"।

"विध्वस्त प्राचीन चित्तौड़को देखकर मेरे मनमें जो समस्त भाव उदित होने लगे, पाठकोंको उन सबको विदित कराकर विरक्त करना नहीं चाहता, मैं इस समय उन

विध्वस्त दृश्योंको देखकर अपनी सामर्थ्यानुसार कितने ही विवरणोंको विदित करनेमें प्रवृत्त हुआ। खुमानरासा ग्रन्थमें चित्तौड़के सम्बन्धमें लिखा है कि विख्यात दुर्गम और अभेद्य चौरासी किलोंमें छत्रकोटका किला सबमें प्रधान है; समतल क्षेत्रसे जो भूधर उठा है, उस भूधरके ऊपर यह छत्रकोटका किला बना है, वह मानों पृथ्वीके मस्तकपर तिलकस्वरूप विराजमान हो रहा है। कोई शत्रु भी उस किलेपर अधिकार करनेको समर्थ नहीं हुआ और इस दुर्गके अधीन सामन्त मंडली भयके नामतकको नहीं जानती थी। इसके ऊपरसे गंगा अपनी तरंगें दिखाती बहती हुई चली हैं और इस पहाड़परका मार्ग इस प्रकारसे बना हुआ है कि यद्यपि कोई इसमें जानेके लिये समर्थ हो सके, परन्तु यहाँसे बाहर होनेकी कुछ आशा नहीं है। एक बुर्ज पत्थरके ऊपर बना हुआ है और उस बुर्जमें रहनेवाली सेना रात्रिमें सोते हुए शत्रुओंसे भय नहीं मानती, इसके धान्यागार धान्यसे पूर्ण हैं और जल कुण्ड फुआरे और कुएँ निर्मल जलसे भरे पुरे हैं। स्वयं महाराज रामचन्द्रजी इस स्थानमें १२ वर्षतक रहे थे, नगरमें ८४ बाजार, बालिकाओंके लिये बहुतसे विद्यालय और प्रत्येक प्रकारकी शास्त्रीय शिक्षाके लिये पाठशाला और अठारह प्रकारके शिल्पविद्यामें निपुण शिल्पकार यहाँ रहते हैं।" छत्तीस प्रकारकी राजपूत जाति यहाँ निवास करती हैं, सेना अश्वारोही असंख्य हैं।

"खुमानरासा अर्थात् रावत खुमानका उपाख्यान नामक ग्रन्थ ९ नौमी शताब्दीमें लिखा गया था और मेरा विश्वास है कि कविने चित्तौड़का वर्णन कल्पनासे नहीं किया है सब सत्य लिखा है कारण कि चित्तौड़के विध्वंस होनेके पहिले भारतवर्षकी कोई राजधानी ही उसके समान नहीं थी, पठारके समान चित्तौड़की राजधानी पहाड़पर स्थित है, पहाड़श्रेणी चित्तौड़से डेढ कोशतक चली गई है। चित्तौड़के और पाठारके बीचमें उर्वरके ऊपर विजैपुरा, गुआलियर और वेगूके कुछ अंश विराजमान हैं, उनके बीच २ में कुंज कानन वृक्ष समूह है, किन्तु वह प्रदेश चिरकालकी अराजकतासे इस समय वनके समान हो गये हैं। चित्तौड़के ऊपरीभागका अंश लम्बाईमें तीन मील दो फर्लांग और चौडाईमें चौवीस सौ हाथ है। जिस पर्वतपर चित्तौड़ स्थापित है उस पर्वतके नीचेका व्यास चार कोश है। उसके नीचेसे ऊपरतक घने २ पेड और झाडियें हैं तिनमें व्याघ्र, हरिन, सुअर ही नहीं किन्तु सिंह भी आजलों रहते हैं। तुगाइति नामक चित्तौड़के नीचेका भाग दक्षिणके अंशमें स्थापित है और वहां विजयस्तंभ चतरङ्ग मोरी राणा रायमल्लका महल, राणा कुकुलका विराज मंदिर गहिलोतके शतचूडा विशिष्ट दुर्ग और जयमल्लका सौध प्रभृति रमणीय स्मृतिचिह्नसमूह स्थापित हैं, चित्तौड़से पृथक् एक स्थान ४०० सौ फुट उत्तारको है, इसके चारों ओर दीवारे हैं, शत्रुको इसीसे लाभ हुआ था। माधोजी सेंधियाने इसीपर अपना तोपखाना स्थापित किया था इसी स्थानसे अलाउद्दीन तातारीने आक्रमण किया था, लोग कहते हैं-यह चित्तौड़ी टीला वही है जिसके लिये प्रत्येक टोकरी मट्टीपर एक पैसेसे लेकर एक मोहरतक दी गई थी इसके निर्माणमें बारह वर्ष लगे होंगे"।

माननीय टाड साहबने प्राचीन चीतौडके देखने योग्य स्थानोंको देखकर जो वर्णन किया है हमने उसका अविकल अनुवाद प्रकाश किया।टाड साहब लिखते हैं कि ठीक उत्तरी ओरसे ऊपर चढना होता है, चढते समय जो दरवाजे बीचमें पडते हैं उनमें सबसे पहले द्वारको "फूटाद्वार" और चौथे द्वारको "हनुमान् पोल" कहते हैं। यह हनुमान पोल चीतौडके इतिहासका एक चिरस्मरणीय स्थान है यहींपर प्रसिद्ध वीर जयमल्ल और फत्ता महावीरता दिखाकर परलोक सिधारे थे। जयमल्लके स्मरणार्थ यहाँपर एक छोटासा स्मारकचिह्न विराजमान है और एक पत्थरके घोडेपर वीरवेषी भाला हाथमें लिये जयमल्लकी मूर्ति स्थापित है। कहा जाता है कि मेवाडके देवतास्वरूप माननीय वीरशिरोमणि राखोदीकी यादगारीमें यह बनाई गई है। यहाँसे फिर तीन वेष्टनी उतरकर हम रायपोल नामक बडे दरवाजेपर गये। इस स्थानसे विख्यात 'दरीखाना' वा बारहद्वारी जिस सभागृहमें प्रधान २ उत्सवोंके समयमें चीतौडके राणा इकट्ठे होते थे उसी स्थानपर गये। वह सभागृह ही चीतौडकी प्रतिभा, राणा अरसीको विदित करती थी कि उनके गौरवका सूर्य अस्त होता चला है। रामपोलके एक कमरेमें हमने खोदी हुई लिपिको देखा। सालूंबरके विख्यात सामन्त भीमसिंहने इस खोदी हुई लिपिकी प्रतिष्ठा की थी, कारण कि उनका ही नाम नीचे लगा हुआ है। भीमसिंह एक समयमें चीतौडके राजमुकुटको अपने शिरपर धारण करनेके लिये उद्यत होकर विद्रोही हो गये थे, मेवाडके इतिहासमें उसका वर्णन भलीभाँतिसे हो चुका है। भीमसिंहने जिस वंशमें जन्म लिया था उस वंशके आदिपुरुषोंने भीमके जन्म लेनेके कई सौ वर्ष पहिले एक समय इस राजमुकुटको प्रकृत राजभक्तके समान छोड दिया था। सालूंबरके सामन्त उक्त भीम जिस समय राजभक्त थे,ऐसा जाना जाता है कि उसी समय उन्होंने इस खोदी हुई लिपिको स्थापन किया। इस खोदी हुई लिपिमें लिखा था "नगरनिवासियोंको बल-पूर्वक किसी श्रमसाध्य कार्यमें नियुक्त नहीं किया जायगा और नगरनिवासियोंसे दंडस्वरूप कर नहीं लिया जायगा। दूसरे गोइन्दा नामक स्थानके एक सूत्रधरने अपने व्ययसे रामपोलके नवीन द्वारको तैयार कर दिया, वहाँ एक मूर्ति गाय और शूकरकी विद्यमान है, उसको जो एक खंड भूमि दी गई थी इस खोदी हुईकी लिपिमें उसका भी उल्लेख है"।

"मैं उस स्थानसे दक्षिणकी ओरको कुछ दूर गया वहाँ एक अत्यन्त प्राचीन मंदिर देखा। उस मंदिरका तोपखाना चोराके समीप स्थापित था और वहाँ तुलसी भवानीका मंदिर है। वह तोपखाना चोरानामक स्थानमें पहिले तोपोंकी श्रेणीसे सजा रहता था। इस समय वहाँपर चीतौडके लूटनेके चिह्नस्वरूप कई एक प्राचीन तोपें पडी हुई हैं। इसके पीछे राणाके प्रधान पुरोहितका एक बडा और सुन्दर घर दिखाई दिया। इसके पीछे मुसानिवा अश्व शालाध्यक्ष और राजदरबारके अन्यान्य विभागोंके प्रधान २ कर्मकर्त्ताओंके घर हैं परन्तु सबमें पहला जो मनोहर महल चित्तको आकर्षण करता है उसका नाम नोलखा भंडार है। यह एक छोटा दुर्गस्वरूप हैं। इसकी दीवारें

बडो २ सौध श्रेणी जैसी ऊंची है, तथा उसी भांति उन्नत है। यह प्राचीन विध्वस्त उपकरणसे बनाया गया है। भंडार शब्दका अर्थ धनागार है।

इस कारण इसके नामसे ही इसका परिचय पाया जाता है; किन्तु ऐसा जाना जाता है कि जिन वनवीरका वर्णन इस इतिहासमें किया है वह यहीं निवास करते थे। उत्तर पूर्वकी ओर एक छोटासा मंदिर है, उसका चित्र कार्य अत्यन्त रमणीक है, उसका नाम सिंगारचोरा है''।

''उक्त स्थानसे हम राणाके महलकी ओरको गये, यद्यपि यह जाना जाता है कि राणा रायमल्लने उक्त महलको बनाया था परन्तु इसके गठनकी रीति इसकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन महलोंके समान थी। इसका गठन सरल आकृतिपर विस्तारित है। केवल बुर्जोंमें महान् कारीगरी है और महलमें कोई विशेष कारीगरी नहीं है। मुसल्मानोंके आनेके पहिले राजपूतोंके महल किस रीतिसे बनते थे, इसको देखकर यह भलीभाँतिसे जाना जाता था। महलके चारों ओर प्राङ्गण भूमि है। उस प्राङ्गण भूमिकी एक ओर देवजीका मंदिर है। राणा सांगाको उसी मूर्तिकी कृपासे चारोंओरसे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त हुआ था। इन अपरिचित मूर्तियोंके ग्यारह कुल वा महाविद्याओंमें एकके नामसे विदित थे। विख्यात वीर भोज जिनके पिता एक चौहान और माता गूजरी जातिकी थी और जिसके मिलनेसे वगरावत सम्प्रदायकी सृष्टि हुई थी, ऐसा जाना जाता है कि वही भोजदेव शक्तियुक्त होकर इस विग्रहरूपसे प्रतिष्ठित हैं इन देवताके सम्बन्धमें एक प्रवाद प्रचलित है। उक्त दैव शक्तियुक्त वगरावत वीर जिस समय प्राचीन शत्रुताका बदला देनेके लिये रणविजय नामक स्थानके परहारियोंके विरुद्धमें गये थे उस समय उनके चीतौडके समीप आते ही चीतौडपति राणा सांगाने उनके आनेका समाचार पाया तब उनको दैवशक्तियुक्त जानकर भक्ति और श्रद्धाके साथ बडे सम्मानसे उनकी पूजा की। देवजीने राणाकी भक्तिसे प्रसन्न होकर राणाको एक देवपदार्थ (तवीज) दिया, उस देवपदार्थके ही बलसे तथा देवजीकी निर्दिष्ट व्यवस्थाके मतसे राणा जितने दिन चले उतने ही दिन उन्होंने विजय प्राप्त की। देवजीने उस दैवपदार्थ (तवीज) को छोटेसे कपडेमें रखकर राणा सांगाके गलेमें बाँध दिया और कहा कि यह किसी प्रकारसे भी पीठकी ओरको न जाने पावै। उक्त दवजीकी इस प्रकारकी देवशक्ति थी कि वह मृतक मनुष्यको जीवित कर सकते थे। उस शक्तिको दिखानेके लिये उन्होंने अपने हाथमें एक मोरका पंख लेकर उस समय चित्तौडमें जो मनुष्य मर गये थे उनका शव स्पर्श करके ही उनको फिर जीवित कर दिया! राणा सांगा देवजीका वह दैवशक्तिका चूडान्त प्रमाण पाकर दिग्विजयके लिये बाहर हुए। उन्होंने अनेक युद्धोंमें जय प्राप्त करके अन्तमें वियानाके किलेतक पर अधिकार कर लिया था, इसी समयमें पोला खानमें स्नान करते समय उनके गलेमेंसे दैवी पदार्थ जलमें गिर पडा। उसी समय यह शब्द उठा कि एक भयंकर शत्रु तुम्हारे समीप आ पहुँचा है! शीशोदीया इस प्रवाद वाक्यपर इतना विश्वास स्थापन करते थे कि उक्त देवजीने उनके देवताओंमें

स्थान पाया और यद्यपि उनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय हो गयी थी परन्तु तो भी वह देवजीकी उस मूर्तिके सम्मुख दिन रात दीपक प्रज्वलित करते रहते थे देवजीकी मूर्ति अश्वारोही वीरके समान गठित थी। हाथमें बर्छा और घोडा नीले वर्णका था। आजतक भी सब उनकी पूजा करते हैं। सबका मन्तव्य संग्रह करनेके लिये मैंने तीन रुपये बाबरके उपयुक्त प्रति द्वंद्वी महावीर सांगाके नामसे उक्त देवजीकी प्रतिमाके सामने अर्पण किये"।

"राणा रायमल्लके महलको छोडकर मैं दो बडे मंदिरोंमें गया। उन दोनों मंदिरोंमेंसे एकमें बृजराज श्रीकृष्णजीकी मूर्ति स्थापित थी। उसे राणाकी विख्यात रानी मीराबाईने बनवाया था और उसमें श्यामनाथकी मूर्ति स्थापित थी। मीराबाईको कविता करनेकी भी शक्ति थी। इसका वर्णन इतिहासमें हो चुका है। उन्होंने जयदेवकी विख्यात गीतगोविन्दकी टीका तैयार की थी ऐसा जाना जाता है। मीराबाईकी कृष्णभक्ति इतनी प्रबल थी कि वह कृष्णके प्रेमसे व्याकुल हो इस मंदिरमें नृत्य करती थी और मीराबाईकी मृत्युके सम्बन्धमें जाना जाता है कि एक समय मीराबाई प्रेममें व्याकुल होकर नृत्य कर रही थीं कि इसी समयमें राधानाथने मूर्तिमेंसे प्रगट होकर कहा। "मीरा आओ! हृदयसे लगो। श्रीकृष्णने जैसे ही मीराको आलिंगन किया कि मीराकी मानवी लीला भी उसके साथ ही साथ समाप्त हो गई"।

"परन्तु यह दोनों मंदिर अत्यन्त प्राचीनकालके कितने ही टूटे मंदिरोंके समान बने हुए हैं। चीतौडसे तीन कोश उत्तरकी ओर एक स्मरणातीतकालके निगर नगरका ध्वंस स्तूप पडा है। वहाँके टूटे हुए मंदिरोंकी सामग्री लाकर यह बनाये गये हैं। उक्त दोनों मंदिरोंके समीप एक बडा भारी जलाधार विराजमान है। प्रत्येककी लम्बाई एक सौ पचीस फुट है विस्तार पचास फुट है और गहराई पचास फुट है। ऐसा जाना जाता है कि मेवाडकी राजनंदिनीके साथ गागरौनके खीची वंशीय अचलका जब विवाह हुआ तब राणाने इन दोनोंको खुदवाकर आमंत्रित हुओंके लिये एकमें घी और एकमें तेल भरवा दिया था"।

"हम पीछे कीर्त्तिस्तम्भके समीप पहुँचे, राणा कुंभाने मालवा और गुजरातकी समस्त सेनाको पराजय करके उस विजयके चिह्नस्वरूप यह स्मरणस्तम्भ स्थापित किया था। समस्त भारतवर्षमें एकमात्र दिल्लीकी कुतबमीनारके साथ इसकी तुलना हो सकती है परन्तु यह उसकी अपेक्षा ऊंचा है. तथापि इसका शिल्पकार्य वैसा उत्तम नहीं है। यह स्तंभ एक सौ बाईस फुट ऊंचा है और इसके मूलदेशके प्रत्येक खण्डका परिमाण ३५ फुट है। शिर देशका गुम्बज साढे सत्रह फुट है। यह ४२ फुट वेदीके ऊपर स्थापित है। यह नौतल युक्त है और प्रत्येकके नीचे ही द्वार और झरोखे विराजमान हैं। चारों ओर स्तम्भोंसे युक्त बरामदोंकी श्रेणी बनी हुई है। इनकी सुन्दरताके लिखनेकी

(१) हमारी समझमें यह वही तक्षक नगर है जिसकी हम खोजमें थे और जिसके लिये हरवर्ट साहबने यह लिखा है कि चीतौड टकसेल पोरस (पवार) का था।

कलममें सामर्थ्य नहीं है । इसके ऊपर हिन्दुओंके समस्त देवी देवताओंकी मूर्त्ति खुदी हुई हैं। इसका सबसे ऊंचा बल अर्थात् नौसंख्यक तल साढे सत्रह फुट चौडा है, अनेक भांतिके पाषाणोंसे यह बना हुआ है वहाँ अगणित स्तम्भ श्रेणीके ऊपर गुम्बज स्थापित हैं। इनमें कन्हैयाजीका रासमण्डल अंकित है, चारोंओर गोपियाँ बाजे हाथमें लिये हुए नृत्य कर रही हैं। मध्यस्थलमें राधाकृष्ण विराजमान हैं उस कमरेमें चित्तौडके राणाका वंशविवरण पत्थरपर खुदा हुआ है। किन्तु दुरात्मा यवनोंने उन सबको विध्वंस कर दिया है। केवल निम्नालिखित दो श्लोक आजतक पूर्व अवस्थामें है ।

१७२ श्लोकार्थ—गुर्ज्जर खण्ड तथा मालवादेशके अधीश्वरने अपार समुद्रके समान विस्तारित सेनाके साथ पृथ्वीको कंपायमान करके मेरपतिपर आक्रमण किया। कुम्भाने जगत्को उज्वल किया उसके अशेष यशका वर्णन कहांतक किया जाय ? उन्होंने अपनी विपक्षी सेनामें व्याघ्रस्वरूपसे अथवा शुष्क गहन वननें अग्निस्वरूपसे गमन किया था।

१८३ श्लोकार्थ–जबतक सूर्य भगवान् इस संसारमें अपनी किरणजालका विस्तार करेंगे तबतक राणा कुंभाका यश फैला रहेगा।जबतक उत्तरमें हिमालय पहाड ऊंचे भावसे खडा रहेगा। जबतक वारिधि मालाके समान मेदिनीके गलेको पकडे रहेगा।तबतक कुंभाका यश अक्षय रहैगा। उनके शासन समयके अनेक घटनाओंसे पूर्ण इतिहास और उनके गौरवकी गरिमा सर्वदा अक्षयभावसे विराजमान रहेगी। एक हजार पाँच सौ सात संबत्में राणा कुंभाने कहा चीतौडके ललाटपर मुकुटरूप यह स्तम्भ निर्माण किया । उदय हुए सूर्यकी उज्वल किरणोंके समान यह तोरण चीतौडके नवीन वरके समान उठा था"।

संवत् "१५१५ में ब्रह्माके मंदिरकी प्रतिष्ठा हुई और वर्तमान वर्षके माघ मास पुष्य नक्षत्र दशमी तिथि बृहस्पतिवारको अक्षय छत्र कोटेमें यह कुंभाका कीर्तिस्तंभ निर्माण हुआ। अब इस स्तंभकी तुलना नहीं हो सकती इस स्तंभको धारण करके चीतौड आज मेरुका उपहास कर रहा है। अब इस छत्र कोटकी उपमा कहां है?--इसके शिखरसे झरने निकलकर अविकल शब्द करते हुए बह रहे हैं। चारों ओर देवता और देवियोंकी मर्तियां विराजमान हैं। चारों ओर उज्वल कुञ्जवन और भौंरे गुंजार करते हुए प्रेमसे क्रीडा कर रहे हैं। इस अभेद्य अचल किलेको महाइन्द्रने अपने हाथसे बनाया था। उक्त श्लोकोंकी संख्या १८३ थी परन्तु और भी कितने ही श्लोक इस स्थानपर लिखे हुए थे। इनका अनुमान सरलतासे हो सकता है"।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि इस ऊंचे स्थानसे जो दृश्य देखा जाता है वह अत्यन्त मनोहर है।मालवेके समतलक्षेत्र तक यहांसे दृष्टि पहुँचती है। कई वर्षके बीतनेपर इस स्तंभके सबसे ऊंचे बुर्जपर वज्रपात हुआ था और उसीसे बहुतसे बुर्ज टूट गये थे, परन्तु सर्वसाधारणमें यह स्मरणस्तंभ आजतक अक्षतभावसे खडा हुआ है। केवल जिस स्थानपर वज्रपात हुआ था उस स्थानपर कई एक पीपलके वृक्ष जम गये हैं, ऐसा जाना जाता है कि स्मरणस्तंभके बनानेमें नौ लाख रुपया खर्च हुआ था । राणा कुंभाने जो अगणित सौधमंदिर निर्माण किये थे उन्हींमेंका एक यह भी है।

श्रीकृष्णका मंदिर और कूर्मसागर नामका एक बडा सरोवर है, तथा महादेवका मंदिर और कृत्रिम निर्झर राणा कुंभाके द्वारा बना था। राणा कुंभाने कमलमेर नामक विराट-काय किला और उसमेंके महलको बनाया था। उस कमलमेरके किलेमें वह शासन-कार्य करते थे, ऐसा जाना जाता है कि महम्मद वेगने जिस समय कमलमेरपर आक्रमण करके इसपर अधिकार किया था उस समय उसको उस किलेमेंसे गुजरातकी राजकुमारीका कई लाखके मोलका हीरोंका एक हार मिला था और उसने चालीस हजार मनुष्योंको यहाँ बंदी कर लिया था।

"उक्त कीर्तिस्तंभके निकट ही ब्रह्माका एक बडा मंदिर है, राणा कुंभाने अपने पिता राणा मुकुलके स्मरणके लिये इस मंदिरकी प्रतिष्ठा की है और यह उन्हींके नामसे विदित है, यह राजा बडा ईश्वरभक्त था इस मंदिरके समीप विख्यात चारवाग नामक स्थान है। वहाँ वाप्पासे उदयपुर राजधानीकी प्रतिष्ठातातक शीशोदीय वंशके प्रत्येक राणाका समाधि मंदिर है। उस मंदिरमें केवल भस्मराशि रक्खी हुई है उस समाधि-मंदिरके भीतरी भागोंमें बहुतसे ऐतिहासिक तथ्य बिजडित हुए हैं। हम अपने लेखको भी यहाँसे संक्षेप करते हैं कि हमारे इतिहास बतानेवालेने संसारसे विदा की"।

"उस सम्मान समाधिक्षेत्रमें होकर मैं पर्वतके एक निर्जन स्थानमें गया। भूधरका वह स्थान स्वभावसे ही विदीर्ण हो गया है और उसके एक अंशसे 'गोमुख' नामका स्वाभाविक झरना एक वटवृक्षके नीचे होकर निकला है। पर्वतके उस गुहाकी एक ओर एक गुप्त सुरंग पर्वतके भीतरीभागमें चली गई है, उसको रानी भींदर कहते हैं। उसी सुरंगमें होकर बराबर भीतरी भागोंको कई एक कमरे चले गये हैं। बादशाह अला-उद्दीनने जिस समय चित्तौडपर अधिकार करके लूट की थी उस समय इस स्थानपर जौहर वृत्तका अनुष्ठान किया गया था। भुवनमोहिनी पद्मिनी और चीतौडकी अन्यान्य राजरानी और राजनन्दिनियोंने इसी स्थानपर प्रज्वलित अग्निमें प्राणत्याग करके अपने सतीत्वकी रक्षा कर पापात्मा अलाउद्दीनकी पापकामनाको व्यर्थ किया था, उसी समयसे यह गुप्त सुरंग बंद कर दी गई"।

"मैंने और भी ऊपर चढ़कर जयमल और पत्ताके नामके मंदिर देखे। वहां कालकादेवीके मंदिरकी प्राचीन अर्थात् चीतौडके गहिलोत वंशके आधिपत्य विस्तारित होनेके कई सौ वर्ष पहिले प्राचीन मोरिराजवंशके शासनसमयमें प्रतिष्ठा हुई थी। मैंने वहाँ निम्नलिखित खोदी लिपियें देखीं"।

"संवत् १५७४ माघ सुदी पंचमी रेवती नक्षत्रमें पत्थर खोदकर लिपि अंकित की कालू कैमर शिल्पीने तथा और अन्य छत्तीस जनोंने (यहाँ पर उनके नाम वर्णन किये हैं) कालकादेवीके मंदिरसे लगे हुए विस्तारित कुंड बनाये"।

"उक्त स्थानसे मैं चन्द्रावत् सम्प्रदायके आदिपुरुष चंडके समाधिमंदिरकी ओर गया। वहांसे कुछ ही दूर भीमसिंह और पद्मिनीका महल विराजमान है उसके पीछे एक स्थानके चारों ओर पत्थरकी दीवार दिखाई दी। ऐसा जाना जाता है कि राणा

कुंभाने मालवेके राजाको युद्धमें परास्त करके बंदीभावसे इसी स्थानमें लाकर रक्खा था उसी स्थानसे लगा हुआ रामपुराके राववंशियोंका महल विराजमान है " ।

" और भी दक्षिणकी ओर प्राचीन चीतौडके प्राचीन पँवार अधीश्वर चतरंग मोरीकी पुष्करणी और महल विराजमान हैं । यह स्थान विशेष ऐतिहासिक विवरणोंसे भरा हुआ है । पुष्करणीका भीतरी भाग भिन्न २ अंशोंमें विभक्त है । चित्तौडके किलेके दक्षिण बुर्जके चार सौ हाथ समीप जाकर मैं इस स्थानसे चीतौडकी प्राचीन सामन्त श्रेणी अर्थात् सिरोही; बून्दी सन्तलूना बारा इत्यादिके अधीश्वरोंकी महल श्रेणीके भीतरको होता हुआ चौगान नामक स्थानमें जा पहुँचा । यह स्थान सामरिक उत्सवों-का क्षेत्र है । आजतक भी दशहरेके पहिले चीतौडमें संख्याबद्धसेना प्राचीन रीतिके अनुसार वहाँ सामरिक उत्सव करती है । उक्त स्थानके समीप ही एक बडा जलाशय विराजमान है । यह एक सौ तीस फुट लम्बा है, चौडाईमें ६५ फुट है और इसकी गहराई ४७ फुट है । इसके चारों ओर रमणीक अत्यन्त सुन्दरतासे खुदे हुए आभ्यन्तरी भाग जलसे पूर्ण हैं " ।

इसके और भी ऊपर प्रायः सम मध्यस्थानमें एक चमत्कार चौकोना स्मरणस्तंभ विराजमान है । यह ऊंचा साढे पचहत्तर फुट है इसका मूलदेशका व्यास ३० फुट है । शिरका व्यास १५ फुट है और उसके गात्रपर जैनियोंकी मूर्तियां खोदी हुई हैं । यह स्मरणस्तंभ अत्यन्त प्राचीन है । इसके मूलदेशमें मैंने जो खुदी हुई लिपि देखी उससे जाना गया कि यह पहिले जैनगुरु आदिनाथके नामसे उत्सर्ग की गई थी, उक्त मूलदेशके नीचे इस भाँति खुदा हुआ है ।

"श्रीआदिनाथ और चौबीस जैनेश्वर, पुंडरीक, गणेश, सूर्य और नवग्रह, अनुग्रह करके तुम रक्षा करो । संवत्९५२,सन्८९६ ई०में वैशाखशुक्ला पूर्णिमा गुरुवार"।

कोकरेश्वर महादेवके अत्यन्त प्राचीन मंदिरके समीप मैंने निम्नलिखित लिपि पाई,–

" संवत् ८११ । माघ सुदी पंचमी. बृहस्पतिवारको । सन् ७५५ ई० राजा कोकरेश्वरने इस मंदिरकी प्रतिष्ठा करी और यह जलाशय खुदवाया " ।

"यहाँ अनेक जैनियोंकी खुदी हुई लिपियाँ हैं; परन्तु टूट फूट जानेके कारण मैं उनमेंसे किसी विशेष प्रयोजनीय लिपिको अपने दुर्भाग्यसे न निकाल सका । शान्ति (सन्त) नाथके मंदिरपर निम्नलिखित खोदी हुई लिपि देखी ।

संवत् १५०५, सन् १४४९ ईसवी श्री महाराणा मुकुलके पुत्र कुंभाके धनाध्यक्ष साह कोला, उनके पुत्र वदरीरत्न और स्त्री श्रीबिलनदेवीने शांतिनाथका यह मंदिर प्रतिष्ठित किया और खरताके सामन्त कछकाछत राजँपुरा और उसके गोत्री राजश्री जिन चन्द्रसूरिजीने यह लेख लिखा था " ।

"पूर्वकी ओर मध्यांशमें सूर्यपोल नामक तोरणके समीप चांदावत सम्प्रदायके नेता सहीदासका समाधिमंदिर विराजमान है । सम्राट् बहादुरशाहने जिस समय

चीतौडपर आक्रमण किया था उस समय उक्त सहीदासने उस सूर्यपोलके समीप जाकर भयंकर वीरता प्रकाश करनेके पीछे शत्रुके हाथसे उसी स्थानपर प्राण त्याग किये थे"।

"उत्तर पश्चिमके अंशमें एक किला है और उसमें महल विराजमान है, उसकी दीवारैं और ऊंचाईको देखनेसे यह बोध होता है कि यह बहुत प्राचीन कालका बना हुआ है। ऐसा जाना जाता है कि मोरी राजवंश और चीतौडके प्रथम राणा इसी महलमें रहते थे। कोई पुरुष एक पग भी ऐसे स्थानमें नहीं रख सकता जहाँ कोई न कोई वस्तु पुराने समयकी उसके पैरके नीचे न आवै"।

इस स्थानपर चीतौडका वर्णन समाप्त करते हैं। परन्तु इसकी समाप्तिके पहिले मैंने एक सौ साठ वर्षकी अवस्थावाले एक फकीरको देखा। उसका उल्लेख विना किये हुए नहीं रह सकता। यहांके बहुत २ पुराने मनुष्य कहते हैं कि यह फकीर यहांके मन्दिरमें चिरकालसे निवास करता है। यहांके एक नव्वे वर्षसे अधिक अवस्थावाले सूत्रधरने कहा है कि "बालकपनसे मैंने इनको इसी प्रकारसे वृद्ध देखा है। जब इन अत्यन्त वृद्ध महात्माके निकट मैंने अपना परिचय दिया, उस समय वह एक नगरवासीके साथ चौसर खेल रहे थे। उन्होंने एक मुहूर्तके लिये मेरी ओरको देखकर "यह मनुष्य क्या चाहता है?" कहकर फिर क्रीडामें मन लगाया। क्रीडाके समाप्त होनपर मैंने उनको भेंटमें रुपये दिये। वह उनको लेकर अपने समीप खडे हुए मनुष्यको दे बडे वेगसे उस टूटे हुए मन्दिरकी ओरको चले गये। एक मनुष्यने उनको एक बहुत बढिया दुशाला दिया था, शीघ्रतासे चलनेके कारण उनका वह दुशाला जमीनपर गिरता हुआ जा रहा था। परन्तु उन्होंने उस दुशालाको वहीं छोडा और आप वहांसे चल दिये। इनका ऐसा स्वभाव देखकर कोई भी इनके साथ किसी प्रकारका अत्याचार नहीं करता था। इनको जब भोजनकी इच्छा होती तब तुरन्त ही भोजन करनेका उपाय करते थे। मैं एकमात्र एक मुहूर्तके लिये उनकी पूर्वस्मृतिको जागरित करनेमें समर्थ हुआ था। उस समय उन्होंने एकमात्र अदीनावेग और पंजाबके सम्बन्धमें कुछ एक बातें कही थीं। ऐसा जाना जाता है कि वह पंजाबके रहनेवाले थे मुझे उनकी अवस्था सत्तर वर्षकी विदित होती थी"।

कर्नल टाड साहब प्राचीन चितौडको देखनेके पीछे ८ वीं मार्च सन् १८२२ ई० को उदयपुरमें आये, महाराणा भीमसिंहने उनको बडे आदरभावके साथ ग्रहण किया। कर्नल टाड साहबने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि "मैं फिर हिन्दूपतिकी इस राजधानीमें आया। जबतक मैं अपनी जन्मभूमिको नहीं जाऊंगा तबतक किसी उपद्रवके वशसे भी इस स्थानको नहीं छोडूंगा। मेरे लिये इस समय विश्राम करना आवश्यक है, कारण कि मेरे जीवनके गत पिछले पन्द्रह वर्ष कठोर परिश्रम करनेमें व्यतीत हुए हैं जिसका कुछ एक अंश इतिहासमें वर्णन किया गया है। मैंने कई दिन-तक मैरतामें विश्राम किया और देखा कि मेरे घर बननेका कार्य प्रायः समाप्त हो चुका है और बगीचा रमणीय शोभाको प्रकाश कर रहा है। आडू, सेब, सन्तरे,

कुंभाने मालवेके राजाको युद्धमें परास्त करके बंदीभावसे इसी स्थानमें लाकर रक्खा था उसी स्थानसे लगा हुआ रामपुराके राववंशियोंका महल विराजमान है "।

"और भी दक्षिणकी ओर प्राचीन चीतौडके प्राचीन पँवार अधीश्वर चतरंग मोरीकी पुष्करणी और महल विराजमान हैं। यह स्थान विशेष ऐतिहासिक विवरणोंसे भरा हुआ है। पुष्करणीका भीतरी भाग भिन्न २ अंशोंमें विभक्त है। चित्तौडके किलेके दक्षिण बुर्जके चार सौ हाथ समीप जाकर मैं इस स्थानसे चीतौडकी प्राचीन सामन्त श्रेणी अर्थात् सिरोही; बून्दी सन्तलूना बारा इत्यादिके अधीश्वरोंकी महल श्रेणीके भीतरको होता हुआ चौंगान नामक स्थानमें जा पहुँचा। यह स्थान सामरिक उत्सवों-का क्षेत्र है। आजतक भी दशहरेके पहिले चीतौडमें संख्याबद्धसेना प्राचीन रीतिके अनुसार वहाँ सामरिक उत्सव करती है। उक्त स्थानके समीप ही एक बडा जलाशय विराजमान है। यह एक सौ तीस फुट लम्बा है, चौडाईमें ६५ फुट है और इसकी गहराई ४७ फुट है। इसके चारों ओर रमणीक अत्यन्त सुन्दरतासे खुदे हुए आभ्यन्तरी भाग जलसे पूर्ण हैं "।

इसके और भी ऊपर प्रायः सम मध्यस्थानमें एक चमत्कार चौकोना स्मरणस्तंभ विराजमान है। यह ऊंचा साढे पचहत्तर फुट है इसका मूलदेशका व्यास ३० फुट है। शिरका व्यास १५ फुट है और इसके गात्रपर जैनियोंकी मूर्तियां खोदी हुई हैं। यह स्मरणस्तंभ अत्यन्त प्राचीन है। इसके मूलदेशमें मैंने जो खुदी हुई लिपि देखी उससे जाना गया कि यह पहिले जैनगुरु आदिनाथके नामसे उत्सर्ग की गई थी, उक्त मूलदेशके नीचे इस भाँति खुदा हुआ है।

"श्रीआदिनाथ और चौवीस जैनेश्वर, पुंडरीक, गणेश, सूर्य और नवग्रह, अनुग्रह करके तुम रक्षा करो। संवत्९५२,सन्८९६ ई०में वैशाखशुक्ला पूर्णिमा गुरुवार"।

कोकरेश्वर महादेवके अत्यन्त प्राचीन मंदिरके समीप मैंने निम्नलिखित लिपि पाई,–

"संवत् ८११। माघ सुदी पंचमी बृहस्पतिवारको। सन् ७५५ ई० राजा कोकरेश्वरने इस मंदिरकी प्रतिष्ठा करी और यह जलाशय खुदवाया"।

"यहाँ अनेक जैनियोंकी खुदी हुई लिपियाँ हैं; परन्तु टूट फूट जानेके कारण मैं उनमेंसे किसी विशेष प्रयोजनीय लिपिको अपने दुर्भाग्यसे न निकाल सका। शान्ति (सन्त) नाथके मंदिरपर निम्नलिखित खोदी हुई लिपि देखी।

संवत् १५०५, सन् १४४९ ईसवी श्री महाराणा मुकुलके पुत्र कुंभाके धनाध्यक्ष साह कोला, उनके पुत्र वदररत्न और स्त्री श्रीविलनदेवीने शांतिनाथका यह मंदिर प्रतिष्ठित किया और खरताके सामन्त कछकाछत राजेंपुरा और उसके गोत्री राजश्री जिन चन्द्रसूरिजीने यह लेख लिखा था"।

"पूर्वकी ओर मध्यांशमें सूर्यपोल नामक तोरणके समीप चांदावत सम्प्रदायके नेता सहीदासका समाधिमंदिर विराजमान है। सम्राट् बहादुरशाहने जिस समय

चीतौडपर आक्रमण किया था उस समय उक्त सहीदासने उस सूर्यपोलके समीप जाकर भयंकर वीरता प्रकाश करनेके पीछे शत्रुके हाथसे उसी स्थानपर प्राण त्याग किये थे"।

"उत्तर पश्चिमके अंशमें एक किला है और उसमें महल विराजमान है, उसकी दीवारें और ऊंचाईको देखनेसे यह बोध होता है कि यह बहुत प्राचीन कालका बना हुआ है। ऐसा जाना जाता है कि मोरी राजवंश और चीतौडके प्रथम राणा इसी महलमें रहते थे। कोई पुरुष एक पग भी ऐसे स्थानमें नहीं रख सकता जहाँ कोई न कोई वस्तु पुराने समयकी उसके पैरके नीचे न आवै"।

इस स्थानपर चीतौडका वर्णन समाप्त करते हैं। परन्तु इसकी समाप्तिके पहिले मैंने एक सौ साठ वर्षकी अवस्थावाले एक फकीरको देखा। उसका उल्लेख विना किये हुए नहीं रह सकता। यहांके बहुत २ पुराने मनुष्य कहते हैं कि यह फकीर यहांके मन्दिरमें चिरकालसे निवास करता है। यहांके एक नव्वे वर्षसे अधिक अवस्थावाले सूत्रधरने कहा है कि "बालकपनसे मैंने इनको इसी प्रकारसे वृद्ध देखा है। जब इन अत्यन्त वृद्ध महात्माके निकट मैंने अपना परिचय दिया, उस समय वह एक नगरवासीके साथ चौसर खेल रहे थे। उन्होंने एक मुहूर्तके लिये मेरी ओरको देखकर "यह मनुष्य क्या चाहता है?" कहकर फिर क्रीडामें मन लगाया। क्रीडाके समाप्त होनपर मैंने उनको भेंटमें रुपये दिये। वह उनको लेकर अपने समीप खडे हुए मनुष्यको दे बडे वेगसे उस टूटे हुए मन्दिरकी ओरको चले गये। एक मनुष्यने उनको एक बहुत बढिया दुशाला दिया था, शीघ्रतासे चलनेके कारण उनका वह दुशाला जमीनपर गिरता हुआ जा रहा था। परन्तु उन्होंने उस दुशालाको वहीं छोडा और आप वहांसे चल दिये। इनका ऐसा स्वभाव देखकर कोई भी इनके साथ किसी प्रकारका अत्याचार नहीं करता था। इनको जब भोजनकी इच्छा होती तब तुरन्त ही भोजन करनेका उपाय करते थे। मैं एकमात्र एक मुहूर्तके लिये उनकी पूर्वस्मृतिको जागरित करनेमें समर्थ हुआ था। उस समय उन्होंने एकमात्र अदीनाबेग और पंजाबके सम्बन्धमें कुछ एक बातें कहीं थीं। ऐसा जाना जाता है कि वह पंजाबके रहनेवाले थे मुझे उनकी अवस्था सत्तर वर्षकी विदित होती थी"।

कर्नल टाड साहब प्राचीन चितौडको देखनेके पीछे ८ वीं मार्च सन् १८२२ ई० को उदयपुरमें आये, महाराणा भीमसिंहने उनको बडे आदरभावके साथ ग्रहण किया। कर्नल टाड साहबने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि "मैं फिर हिन्दूपतिकी इस राजधानीमें आया। जबतक मैं अपनी जन्मभूमिको नहीं जाऊंगा तबतक किसी उपद्रवके वशसे भी इस स्थानको नहीं छोडूंगा। मेरे लिये इस समय विश्राम करना आवश्यक है, कारण कि मेरे जीवनके गत पिछले पन्द्रह वर्ष कठोर परिश्रम करनेमें व्यतीत हुए हैं जिसका कुछ एक अंश इतिहासमें वर्णन किया गया है। मैंने कई दिनतक मैरतामें विश्राम किया और देखा कि मेरे घर बननेका कार्य प्रायः समाप्त हो चुका है और बगीचा रमणीय शोभाको प्रकाश कर रहा है। आडू, सेब, सन्तरे,

नारंगी, अनेक जातिके नींबू इत्यादि वृक्षोंमें कलिये खिली हुई देखीं । श्रेष्ठफल, अनार केला इत्यादि फलवान् वृक्ष भी फलके भारसे झुके हुए देखे, यह सब फलवान् वृक्ष लखनऊ आगरा और कानपूरसे आये थे । किन्तु प्रधानतः श्रेष्ठ फलवाले वृक्षोंके बीज ग्वालियरसे लाया था, मैंने ग्वालियरके समस्त वृक्षोंको अपने हाथसे लगाया था । सन् १८१७ ईसवीमें जिस समय मैंने ग्वालियरको छोडा उस समय मैं वहांसे कितने ही फलोंके बीज ले आया था और उन सबको मैंने उदयपुरके रंग प्यारी नामक भवनसे लगे हुए बागमें बोया था । यह जैसे स्वादिष्ट और मीठे थे ऐसे फल मैंने और कभी नहीं देखे । उन सब वृक्षोंके बीजको मैंने फिर इस मेरताके बागमें बोया और इस समय देखता हूं कि उन सबमें फिर मधुर २ फल लग रहे हैं । शाक सबजी भी विशेष वृद्धिको प्राप्त हो गई है । उदयसागरसे मैं जलविहार करनेके लिये एक छोटी नहरको भी यहाँ लाया । कितने ही दिनोंतक मैंने आनन्दित होकर नावपर चढकर यहांपर भ्रमण किया और किनारेपर बैठकर मत्स्य धारण किया । परन्तु हाय ! सभी कुछ वृथा था अभागा करिसाहब मट्टीके गर्भमें विलीन हो गया है, उन डंकन रोगसे पीडित स्वास्थ्यहीन अवस्थामें कैंप आफ गुड होपमें जानेके लिये तैयार हुए हैं । वह जिस वक्त साहबको कोटेमें छोड आये थे उन्होंने उनकी रुग्णावस्थाका समाचार मुझे पत्रमें लिखा था और मैं जो कुछ था अब वह नहीं हूँ । मुझमें अस्थिमात्र शेष है । मेरे स्वास्थ्यभंगको देखकर चिकित्सकने मुझे स्वदेशमें जानेके लिये परामर्श दी है। राणा मेरे जानेकी वार्तासे अत्यन्त दुःखित हुए हैं । उन्होंने मुझे केवल तीन वर्षके लिये स्वदेश जानेकी बिदा दी है और उनकी भगिनी चांदजी बाईने कहा था कि जिससे मैं अबकी वार देशसे विवाह कर अपनी स्त्रीको ले आऊं तो वह अपने अन्तःकरणसे मेरे स्त्रीसे प्रेम करैगी ''।

''मैंने उदयपुरसे चुपचाप जानेकी अभिलाषा की थी । परन्तु राजपूतोंकी रीतिके अनुसार स्वास्थ्यभंग अवश्य ही अवनत होता है। इस कारण मैं उदयपुरकी ओरको गया राणा भीमसिंह युवराज ज्वानसिंह और समस्त शीशोदीया सामन्तोंने आगे बढ बडे आनन्दसे मुझे ग्रहण किया । ''आप मेरे घर आये हैं, केवल इन्हीं कितने ही सरल हृदयहारी प्रीतिपूर्ण वचनोंसे राणाने मुझे ग्रहण किया । परन्तु वह उसी समय इधर उधर देखकर मेरे सहायक वाह साहब और डाक्टर केरीसाहबको न देखकर अत्यन्त दुःखित हुए और अन्तमें उन्होंने मुझे जो बाजराज नामका अश्व उपहारमें दिया था उस घोडेके विना देखे हुए अत्यन्त विस्मित हुए और जब सुना कि वह घोडे कोटेमें मृतक होकर समाधिमें धरा गया है तब कह उठे। हाय ! (बडा सोचपन भला मनुष्यचा) बडा सोच है वह तो अत्यन्त भला मनुष्य था । मैं जबतक सूर्यपोलके समीप पहुँचा तबतक उसी बाजराजके गुणोंके सम्बन्धमें बहुतसी बातचीत होती रही ।

''वास्तवमें बाजराजका जैसा नाम था उसके गुण भी उसी प्रकार थे । वह सर्व साधारणको इतना प्यारा था कि उसकी मृत्युसे सभीने शोक प्रकाश किया था । इस देशमें अपने प्रभुके समान वह भी सर्वत्र विदित था । उसकी मृत्युके समय मेरी समस्त

सिपाहीसेना और कर्मचारियोंने जो दुःख प्रकाश किया था वह हृदयाविदारक था। बाजराजके समाधिस्थानमें सबने इकट्ठे होकर रुदन किया था और जब अश्वको कपडेमें लपेटकर समाधिमें स्थित करके उसके ऊपर मट्टी डाली थी। उस समय उसके सहीसने उसको समाधिपर शोक प्रकाश करते हुए महा रुदन किया था। मैंने उसकी यादगारीके लियें उसके बाल काटकर रख लिये थे। ऐसा श्रेष्ठ घोडा मैंने कभी नहीं देखा था। कुछ दिन पाछे मैंने देखा कि कोटेके राजमन्त्री जालिमसिंहने उसकी समाधिके ऊपर २० फुट विस्तारित और चार फुट ऊंची एक पाषाणवेदी तथा उसके ऊपर एक बडा पत्थरका टुकडा रखकर बाजराजकी मूर्तिको स्थापित किया था, नायबने हमसे कहा था कि इस घोडेकी योग्यताको मैं जानता हूँ, इससे मैं इसका ऐसा समाधिमंदिर बनवाऊंगा कि उसके स्वामीको वैसा ध्यान भी न होगा; कोटेके रईस ही घोडोंके विषयमें सबसे अधिक अभिमानी थे, पाँडुके समयसे देववांगो बूँदीवालेके समयतक घोडोंके विषयमें बहुत युद्ध हुए हैं और हाडा जातिके एक वीरने लोधी बादशाहसे कहा था, हम और विशेष कुछ नहीं कहते राजपूतोंसे तीन वस्तु मत माँगना, उसका घोडा स्त्री और उसकी तलवार।

उदारचरित्र राजपूत बाँधव महात्मा टाड साहब निम्नलिखित कई एक बातें लिख कर हृदयसे इस रजवाडेके विस्तारित इतिहासका उपसंहार कर गये हैं। "बहुत थोडे दिनोंके पीछे हम राजधानीको छोडकर कोटेराजकी भगिनी कि जिनके दिये हुए जुगत् मैंने भ्रातृचिह्नस्वरूपसे अपने पास रख छोडे हैं, उन हाडा रानीके स्थानमें जायगे, राजपूतजातिके समस्त सामयिक सामाजिक आचार व्यवहार, उनकी सहानुभूति और वहांके सब मनुष्योंका मेरे साथ दया और नम्रतासे व्यवहार करनेके कारण यह रजवाडा हमारा जन्मस्थानसदृश सुखद हो गया है अब मैं उस भूमिसे बिदा माँगता हूँ, किन्तु यह बिदा अन्तिम बिदा है वा नहीं इसको परमात्मा जाने। मैं जहाँ भी जाऊं, मैं जबतक जीता रहूंगा तबतक मेरे हृदयसे इस उदयपुरकी स्मृतिका लोप होना तो दूर रहा वरन् किसी समय भी कम नहीं हो सकेगी।

(१) टाड साहब अपने बडे ग्रंथकी टिप्पणीमें लिख गये हैं "यह विचित्र बात है कि जिस महीनेकी जिस तारीखमें यह भ्रमणका कार्य समाप्त हुआ इस बडे ग्रन्थको जिसके सम्पादन करनेसे मुझे यथेष्ट आनन्द और संतोष प्राप्त हुआ उसी महीनेकी उस तारीखमें अन्तिम लेखनी उठायी गयी अर्थात् सन् १८२२ ईसवी की ८ वीं मार्चको मैं भ्रमण समाप्त करके उदयपुरमें गया और सन् १८३२ ईस्वीकी ८ वीं मार्चको अपने इस भ्रमण वृत्तांतको समाप्त करता हूं। मार्च मासमें ही मेरी पुस्तक छपी तथा मार्च मासमें ही मेरी इस पुस्तकका सर्वसाधारणमें प्रचार हुआ (क) मेरा जन्म भी मार्च महीनेमें हुआ था; मार्च मासमें ही इंग्लैंडसे भारतवर्षकी ओर गया, अंतमें भारतका दर्शन कर सिंहलका उपकूल दर्शन मार्च मासमें ही हुआ। परन्तु यह निरन्तर घूमनेवाला संसार चक्र कैसा परिवर्तन करता है जिस हाथसे इस ग्रंथके चित्र तैयार हुए हैं वह इस समय मृतक है! मुझे यह दृढ विश्वास है कि समयके अनुग्रहसे उन हिंदुओंके शिल्प स्मृतिचिह्न आजतक भी विराजमान हैं उन सबके साथ ही साथ उनकी कीर्ति अक्षय रहेगी। मेरे भारतवर्षके छोडनेके छः—

"इस बडे इतिहासरूपी पर्वतकी अन्तिम चोटीके अन्तिम स्थलमें खडे होकर हम अपने पाठकोंसे बिदा माँगते हैं। माननीय टाड साहबके दिखाये मार्गमें हम अपने पाठकोंको ले चलकर इस अन्तिम लक्ष्य स्थानमें केवल उस अज्ञात–अज्ञेय शक्तिसे और पाठकमंडलीकी सहायतासे खडे होनेको समर्थ होते हैं। इस अन्तिम बिदाके समय हमारा हृदय आवेगपूर्ण है अतएव क्या कहें ? क्या प्रार्थना करें ? जो महोदय इस बडे इतिहासके सम्पादक हैं, आवो आज हम अपने पाठकों समेत साधुचरित्र राजपूतोंके भाई उदारहृदय कर्नल टाडकी आत्माके मंगलके लिये सर्व मंगलमय परमेश्वरसे प्रार्थना करें" ।

परिवर्तनशील समयका प्रभाव कैसा विचित्र है। मनुष्यके हृदयका वह प्रभाव वह उमंग वह तरंग वह चाव यह समय एक बार ही शान्त कर देता है। इस बडे विस्तारित ग्रन्थके पाठमात्रसे पाठक समझ जाँयगे कि यह देश क्या था और क्या हो गया, इस देशके निवासी क्या थे क्या हो गये। विदेशी टाड साहब जैसे उदारहृदय भारतके प्रेमी अब कहां हैं। भारतमहिलाओंके साथ भ्रातृभावका सम्बन्ध जोडनेवाले अंग्रेज अब कहां हैं वह भरापूरा देश कैसे दरिद्र हो गया किस प्रकारसे इसको रोग शोकने ग्रास लिया, समय तुमने ही सब कुछ किया और तुम हीं सब कुछ करोगे हाय ! काल जिस विख्यात नाम बलदेवप्रसादमिश्रने बडे उत्साहसे इस महान् ग्रन्थके अनुवादमें लेखनी उठाई थी, जो रजवाडेसे किसी प्रकार उपकार न पाकर भी रजवाडेके लिये प्राण देते थे जिन्होंने कई प्रकारके इतिहास लिखकर देवनागरीके भंडारको ऐतिहासिक ग्रन्थावलीसे पूर्ण करनेकी इच्छा की थी जो देवनागरीके प्रचारके तथा शुभचिन्तकोंके लिये निरन्तर धन्यवाद करते थे तथा जिनकी सरल ओजस्विनी लेखनी बहुत कुछ कर दिखानेमें समर्थ हुई थी। काल तुमने उनको अकालमें ही ग्रास कर लिया। तुम बडे निर्दयी हो तुमको कच्चे पक्के फलोंका विचार नहीं है अथवा तुम बालस्वभाव हो जैसे बालक कच्चे फलोंको

—महीने पीछे कप्तान वाह इंगलैंडको आये उस समय उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड गया था। हम दोनों जने मिलकर लंदनमें, बिलजियममें और फ्रांसमें एक जगह रहे, किन्तु उस समय बात २ में राजपूतानेकी बात चलती थी। जब वह फिर भारतमें लौटकर आये और मेजर हुए तब १० वीं घुडसवार पलटनके नेता बनकर जिस समय मथुरासे मऊ जाने लगे उस समय मैं जिस प्रदेशमें बहुत दिनों रहा था वहांके निवासी दूतीके सामन्तने इनको भोज दिया था। यद्यपि उस समय वह हृष्ट पुष्ट थे तो भी मेरे वह जाति भाई बडे दुःखमें पडे। उनके साथ जो घुडसवार थे वह भी भोजमें सम्मिलित हुए वह पर्वतपर चढते समय घोडेसे गिर गये और इतनी चोट आई कि उसके लिये डाक्टरी चिकित्साका प्रयोजन हुआ। उस चिकित्सासे वह इतने आरोग्य हुए कि दो दिनके पीछे उन्हें डोलीमें बैठनेकी शक्ति हुई। किन्तु जब वह जानेके लिये डोलीमें बैठे तब उनके मित्रोंने डोलीके परदेको उठाकर उनसे बात करनी चाही तो जाना गया कि उनकी प्राणवायु पंचत्वमें लय हो गयी। उस समय उनका शव मेवाडमें दफनाया गया और उनके साथी सवारोंने अपने पाससे उनकी कबरपर एक स्मृतिचिह्न बनवा दिया। वह हमारे परिश्रमका अंतिम फल है, इनसे बीस वर्ष हमारी मित्रता रही। क्या कहें। वह इस ग्रंथकी समाप्तिको नहीं देख सके। ८ मार्च सन् १८३२ ई.।

विशेषरूपसे तोडते हैं वैसे ही तुम नव्य अवस्थावाले प्राणियोंका संहार करते हो । इसीमें तुमको स्वाद है । विदित होता है कि तुम जगत्‌का रोना देखकर हँसते हो । बिगाडमें तुमको रस आता है । यदि यह समग्र ग्रन्थ इस महानुभाव पुरुषकी लेखनीसे निर्गत होता तो पाठक और भी प्रसन्न होते, पर हरि इच्छामें किसकी सामर्थ्य है जो कुछ कह सके दूसरा खण्ड आधा भी न होने पाया कि आपने अपने इष्टमित्रोंको भ्राता माताको और जिनका लालन पालन करते थे उन सबोंको सदाके लिये शोकित छोड कर संसारसे बिदा ली और इसका भार मुझ जैसे हिन्दीक मर्मके अभिज्ञके हाथमें सौंप गये । उनके मनमें यही रहा कि कब इस ग्रन्थको मुद्रित हुआ देखूँ पर कालने वह न होने दिया, उस उमंगको मनमें ही लीन कर आप संसारसे बिदा हुए अच्छा हमारा वश क्या है हम आपकी इस लेखिनीसे निकली हुई वाणीको आपका स्वरूप समझेंगे । हम तो आपके लिये यावज्जीवन इसी प्रकारके वाक्य कहेंगे पर हम आपकी इस दोहावलीके साथ इस महान् ग्रन्थकी पूर्ति करते हैं ।

दोहा-सुमिरि राम लछमन सिया, मारुतसुत हनुमान ।
किया पूर्ण शुभ ग्रन्थ यह, हिन्दीराजस्थान ॥ १ ॥
जेम्स टाड कृत ग्रन्थका, हिन्दीमें अनुवाद ।
कियो यथामति शोधकर, द्विज बलदेव प्रसाद ॥ २ ॥
पढहिं सुनहिं करि प्रेम जो, पुरुषनके इतिहास ।
देशभक्ति, आचारमें, प्रगट करहिं उल्लास ॥ ३ ॥
निज पुरुषनकी रीतिको, ग्रहण करो सब कोय ।
उनके शिष्टाचारसों, भारत उन्नत होय ॥ ४ ॥
अति उदार गुणिजन विदित, विश्व विदित गुणखान ।
हिन्दी उद्धारक विमल, चित्त भक्त भगवान ॥ ५ ॥
वेंकटेश यन्त्राधिपति, खेमराज सुखरास ।
तिन हित हिन्दीमें कियो, यह अद्भुत इतिहास ॥ ६ ॥
छाप २ कर ग्रन्थ बहु, कीनों जग उपकार ।
कवि कोविद नित करत हैं, जिनकी जय २ कार ॥ ७ ॥
जगदीश्वर तिनपर सदां, करैं कृपा भरपूर ।
द्विज बलदेवप्रसाद कहि, रोग शोक हों दूर ॥ ८ ॥
संवत् शर ऋतु अंक विधु, मार्गशीर्षशशिवार ।
पूनोतिथि पूरण कियो, ग्रंथ सुमंगल सार ॥ ९ ॥
वसत रामगंगा निकट, नगर मुरादाबाद ।
भजन करत हरिको जहां, द्विज ज्वालापरसाद ॥ १० ॥
हरिको भजन न त्यागिये, भजिये सीताराम ।
यही सार सब जगतमें, दायक अभिमत काम ॥ ११ ॥

सम्पूर्ण..

चिट्ठी.

चिट्ठी अम्बरवाले जैसिंहकी ओरसे राना संग्रामसिंह मेवाडाधिपतिके पास ईडरके विषयमें ।

श्रीरामजी ।

श्रीसितारामजी ।

जब मैं दरबार उदयपुरमें था, आपने हुक्म दिया था कि मेवाड मेरा घर है और ईडर स्थान मेवाडका द्वार है उसके प्राप्त करनेके निमित्त काबूमें रहना चाहिये उस समयसे मैं काबूमें था । आपके नायब भैयारामने फिर उसके विषयमें लिखा है और दलपतरायने चिट्ठी मुझको पढकर सुनाई सुनकर मैंने बातचीत इस विषयमें महाराजा अभयसिंहके साथ की और वह आपके सब प्रबन्ध विषयोंके साथ अनुकूलता करके उस परगनेको आपकी भेंट करते हैं और उनका लेख इस विषयमें भलीभांति प्रमाण होता है।

महाराजा अभयसिंहकी प्रार्थना यह है कि आप ऐसा प्रबन्ध करें कि आनन्दसिंह जो इस समय अधिकारी हैं जीवित न रहैं कारण कि बिना उसके मरे तुम्हारा अधिकार उचित न होगा और यह आपके अधिकारमें हैं और मेरी इच्छा भी यह है कि आप स्वयं वहां जाँय और यदि आपके समीप उसकी आवश्यकता न हो तो वहां भाई निगो-को आज्ञा हो और उसकी आज्ञामें यथोचित सेना रक्खी जाय और सब मार्ग रोककर आप उसका बध कर सिद्धान्त यह है कि वह जीवित भाग न जाय इसका ध्यान अवश्य रहै इति । आषाढ वदि ७ संवत् १७८४ ।

विवरण ।

यह पंक्ति हांसियेपर है मेरा मुजरा पहुंचे जब दीवानके पास उपस्थित था तो उसने आज्ञा दी थी कि ईडर और स्थान चौथन मेवाडके द्वार है और उनका लेना अवश्य है मैंने इसको मनमें रक्खा और दीवानजीके सौभाग्यसे यह काम पूर्ण हो गया ।

परगना ईडर महाराज अभैसिंहकी जागीरमें है और वह श्रीमान्की भेंट करते है यदि वह किसी औरको दिया जाय तो इसका ध्यान रहै कि मनसबदार अधिकार न पावे । ८ संवत् १७८४ ।

इसके पीछे टाड साहबने जो चार पांच संधिपत्र लिखे हैं वह हमने उन उन राज्योंके यथास्थानमें लिख दिये हैं इस कारण उनका दूसरी वार लिखना उचित नहीं है।

" श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-प्रेस-बंबई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

मरुभूमिका वर्णन.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसरा भाग २.

मरुभूमिका वर्णन.

प्रथम अध्याय १.

मुझको स्वयं कभी मरुभूमिके मध्यमें मंडोरसे आगे प्रवेश करनेका मौका नहीं मिला है। मंडोर मरुस्थलीकी प्राचीन राजधानी है और हिसारका पुराना किला इसके ईशान कोणमें और आबू नहरवाला और भुज दक्षिणमें है । सविस्तार वर्णन करनेके पहिले यह आवश्यक है कि मैं अपनी ढिठाई, अयोग्यता या अक्षमताके लिये क्षमा मांग लूँ और मैं प्रार्थना करता हूँ कि पाठकोंको यह बात ध्यानमें रखना चाहिये कि मेरी अनुसन्धान करनेवाली मंडालियोंने प्रत्येक दिशामें भ्रमण किया है और उनकी यात्रासंबन्धी दैनिक वृत्तान्त पुस्तकें उनकी शुद्धता या यथार्थताकी पुष्टिमें अकाट्य प्रमाणोंसे भरी पडी है और वे मेरे पास भटनेरसे अमरकोट और आबूसे अरोरै तकके प्रत्येक थलके निवासियोंको भी लाये हैं। मैं चाहता हूँ कि लोग मेरे यथार्थ भावको समझ लें इसलिये मैं इस कार्यको सिर्फ ढाँचा ही समझता हूँ और आशा करता हूँ कि इस कार्यको देखकर भविष्यत्में नवीन २ खोज करनेको लोग उत्साहित हों; परन्तु प्रमाणाभावके कारण इस विषयमें यद्यपि असम्भावनीय अशुद्धियां होंगी तो भी मैं इस कार्यको प्रकाशित करनेमें नहीं हिचकता हूँ न पशोपेश करता हूँ क्योंकि मुझे इस बातसे परम संतोष है कि विस्ताररूपसे यथार्थ ज्ञान संपादन करनेवालोंका मैं मार्गद्रष्टा बनूँगा।

इतनी भूमिका बांधनेके बाद हमको सविस्तार वृत्तान्त लिखना चाहिये और यदि उपरोक्त कथित कारण न होते तो यह वृत्तान्त इस पुस्तकके भूगोल संबन्धी

---

(१) इन मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकें, मध्य और पश्चिमी भारततक मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकोंके सहित ग्यारह भागोंमें विभाजित हैं जिनसे इन देशोंकी मार्ग निरूपण पुस्तकें तैयार की जा सकती हैं। मेरा विचार था कि इन पुस्तकोंकी सहायतासे एक बडा और दोष रहित नकशा तैयार करूं, परन्तु मेरी अस्वास्थ्यता इस काममें बाधक होती है । ये पुस्तकें अब कम्पनीके दफ्तरोंमें रख दी गयी हैं और यदि बुद्धिमत्तासे काम लिया जाय तो भारतके विशाल नकशोंकी न्यूनताको पूर्ण करनेमें इनका उपयोग हो सकेगा ।

भागमें संमिलित कर दिया जाता। यह वृत्तान्त ऐतिहासिक दृष्टिसे अप्रसंगिक होनेपर भी इतना सुन्दर है कि विस्तारपूर्वक वर्णन करना अधिक श्रेयस्कर होगा। मैं यहां-पर यह अवश्य कहूँगा कि जो नतीजा या परिणाम मैंने स्वयं निरीक्षण या अनुभव कर-नेके बाद परन्तु, विशेष कर उपरोक्त लिखित मार्गसे निकाले हैं उनकी पुष्टि या (समर्थन) महाशय एलफिन्सटोन (Elphinstone) ने राजदूत बनकर, उत्तरीय मरुभूमिमें होकर काबुलको जाते हुए अपने मार्गका जो सुन्दर वर्णन किया है उसके द्वारा होती है और यह वर्णन मेरे पूर्ण विचारोंको सन्तोषजनक दृढता प्रदान करता है। इस जगह यह कहना अनुचित न होगा कि आगेके वर्णनमें हमको कहीं २ पर एक बात-को दुबारा लिखना पडेगा क्योंकि हम बीकानेरके इतिहासका वर्णन करते हुए इस मरुभूमिकी अनेक विशेष २ बातोंका उल्लेख कर चुके हैं। क्योंकि इस राज्य-की स्वाभाविक स्थिति मरुभूमिमें होनेके कारण उनका उल्लेख करना बहुत जरूरी था। प्रकृतिदेवीने स्वयं अपने हाथोंसे भारतके इस महान् मरुभूमिकी सीमाओंको नियत किया है: और हमारा केवल इतना ही काम है कि हम सीमा स्थित रेखापर ठीक ठीक चले जाँय जिसमें हमारी बात लोगोंके ध्यानमें ठीक २ आ जावे, इस कारण हम मरुस्थली पदका पुनः पदच्छेद करनेको वाध्य हैं—इसका मूल अर्थ है "मृत्युकादेश" यह शब्द यौगिक है और संस्कृत धातु "मृ" मरना और "स्थली" "शुष्कभूमि" के योगसे बना है और अन्तिम पद "स्थली" इन देशोंकी बोलीमें विगडते २ "थल" में परिणत हो गया है-थल अनउपजाऊ भूमिको भी कहते हैं प्रत्येक थल किसी न किसी नामसे प्रसिद्ध है। उदाहरणार्थ 'काबुलका थल' 'गोगाका थल और खेती करनेके योग्य भूमि इन थलोंकी अपेक्षा संख्या और आकारमें इतनी न्यून है कि प्राचीन रोमन अलंकारके एवजमें जिसमें अफ्रीकाको चीताकी खालसे उपमा दी गयी है, मैं भारतकी मरुभूमिको व्याघ्रचर्मसे उपमा देना अधिक संयुक्तिक समझता हूँ। जिस व्याघ्रकी लम्बी २ काली धारियां विस्तीर्ण रेतके कटिबन्धके समान प्रतीत होती हैं और केवल न्यूनतर रेतके मैदानकी सतहपर इन रेतके कटिबन्धोंके समान असंख्यक आबाद नगर और गांव तितर वितर या छिटके हुए स्थित हैं। मरुस्थलीके उत्तरमें गरहकी सीमाको छूता हुआ एक समतल मैदान है। दक्खिनमें महान् नमकका दलदल 'रिन' और कोलीवरी है, पूर्वमें अरवली,: और पश्चिममें सिन्धकी घाटी विराजमान है। अन्तिम दो सीमाएँ बहुत प्रासिद्ध हैं—विशेष कर अरवली यदि अरवली पहाड रेतका मार्गावरोधक न होता तो मध्य भारत कभी रेतके नीचे दब गया होता। यद्यपि यह ऊंची और अवच्छिन्न श्रेणी समुद्रसे दिल्लीतक चली गयी है तो भी जहां कहीं दरार या रास्ता मिल गया है ये रेतके उडते हुए बादल इन मार्गोंसे प्रवेश कर उर्वराभूमिके मध्यमें छोटा सा 'थल' जाकर निर्माण कर देते हैं। जिस किसी-को टोंकके निकट बुनासको पार करनेका अवसर हाथ आया है जहाँ कि रेत कोशोंतक लहरोंके सदृश प्रतीत होती है वह इस कथनको बहुत ही अच्छी तरहसे समझ सकेंगे। इसकी पश्चिमी सीमा सिन्धकी घाटीमें यात्रा या प्रवास करनेका जिस अंग्रेज यात्रीको

सौभाग्य होवे उसे नेपोलियनके वे उद्गार स्मरण आवेंगे जो उसने लिबियन मरुभूमिके विषयमें अपने मुखसे निकाले थे। मरुभूमिको छोडकर संसारका कोई पदार्थ भी समुद्रके समान नहीं प्रतीत होता है या किनारे नाइलके घाटीके समान हैं। यहांपर नाइलके स्थानपर सिंधुको रखते हैं जहांसे कि हैदराबादसे ओचतक इसके किनारे २ उत्तरकी तरफ यात्रा करनेवालेको जहांतक उसकी दृष्टि पहुंचेगी पूर्वकी तरफ रेतके दुर्गके दुर्ग दिखलाई पडेंगे जिनकी ऊँचाई प्रायः नदीकी सतहसे दो सौ फीटतक है। तब उसके हृदयमें यह कल्पना उत्पन्न होगी कि वह दरार या छिद्र जिसमें रमणीक दरारी सुशोभित है काकेशस पहाडके संपूर्ण सघन तुषारपुञ्जके एकाएक पिघल जानेसे उत्पन्न हुई होगी जिसके एकत्र भूत पानीने मरुस्थलीकी अविच्छिन्नतामें अन्तर डाल दिया है नहीं तो वह अरचोसियाके मरुभूमियोंसे संमिलित हो गया होता। हम यहांपर मरुभूमिके विषयमें भूगोल सम्बन्धी वंश परम्परानुगत कथनको दोहराते हैं अर्थात् प्राचीन समयमें प्रमर वंशके राजा इस देशपर शासन करते थे और इस बातकी पुष्टि भट्ट कविकी कविता करती है जिसमें उसने नौ दुर्गोंके नामोंका उल्लेख किया है और ये दुर्ग बडी सुन्दरता और बुद्धिमानीसे साकके स्थानोंपर निर्माण किये जानेके कारण इस देशके ऊपर आधिपत्यताको दृढ करते हैं। पूंगलका किला उत्तरमें है। मंडोर समस्त मरुके मध्यमें आबू खेरालू और परकर दक्षिणमें चोटन अमरकोट अरोर और लुद्रावा पश्चिममें है और जिसके हाथमें ये नौ दुर्ग हैं मरुभूमिके ऊपर उसके आधिपत्यमें कोई भी हस्ताक्षेप नहीं कर सकता है। इस कथाकी प्राचीनता समस्त अर्वाचीन नगरोंके भाइयोंकी वर्तमान राजधानीका नामोच्चारतक नहीं किया गया है-नामोंको उडा देनेसे कायम रक्खी गयी है। यद्यपि लुद्रवा और अरोर नामके नगर प्राचीन कालसे खंडहर या भग्न दशाका अनुभव कर रहे हैं तो भी इनके नाम उन्हीं लोगोंको विदित हैं जो कभी २ मरुभूमिकी सैर करते हैं और चोटन खेरालू इत्यादिका नाम निशान भी नकशेमें न पाया जाता यदि वह वंश परम्परानुगत भट्टकविका छन्द हमको खोज करनेके लिये न उभाडता।

हमारा अभिप्राय देशके प्राकृतिक विभागोंका अथवा एतद्देश निवासियोंकृत विभागोंका जैसा कि पूर्व कह आये हैं। जिनको वे 'थल' कहते हैं। वर्णन करनेका है और इनका सविस्तर वर्णन करनेके बाद हम इस देशकी भिन्न श्रुतियों और उन प्रसिद्ध नगरोंका वर्णन करेंगे-जो अबतक वर्तमान है या नाश हो गये हैं। इसके बाद जैसलमेरसे अन्य स्थानोंको जानेवाली या जैसलमेरको आनेवाली खास २ रास्तोंका वर्णन करके इस लेखको समाप्त करेंगे। समस्त बीकानेर और अरवलीके उत्तरमें स्थित शेखावाटीका वह भाग इस मरुभूमिमें शामिल है। यदि पाठक कनोड (Kanorh) नगरको जो अंग्रेजी राज्यके सीमाके अन्तर्गत है नकशेमें देखें तो वह मालूम करेंगे कि मि० एलफिंस्टोनके कथनानुसार मरुभूमिका प्रारम्भ या श्रीगणेश यहांसे ही होता है। "दिल्लीसे

(१) यह चोटनसे १५ मील उत्तरमें है।

(२) उन्होंने १३ अक्टूबर सन् १८०८ को दिल्लीसे कूच किया था।

कनौड़ (मेरे नकशेका कनौड) तककी दूरी अंग्रेजी राज्यमें करीब सौ मीलके है और इसके वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। सिर्फ इतना कहना काफी है कि यह देश रेतीला होनेपर भी खेतीके योग्य है। कनौड पहुंचनेपर हमने पहिले पहिल मरुभूमिका नमूना देखा जिसके देखनेके लिये हम बडे ही उत्सुक और व्यग्र थे। कनौडसे तीन मील पहिले ही हमको रेतकी पहाडियाँ दृष्टिगोचर हुई जो पहिले तो झाडियोंसे आच्छादित थीं परन्तु पीछेसे धसकती रेतकी नग्न या पुष्प पत्र विहीन राशिकी राशि समुद्रके लहरोंके समान उठती हुई दिखलाई पडी। जिनकी सतहपर बायुने वर्फके ढेरके समान चिह्न बना दिये थे इन पहाडियोंमें होकर सडकें भी बनी हुई थीं जो जानवरोंके चलनेसे पुख्ता हो गई थीं, परन्तु मार्गसे हटते ही हमारे घोडे घुटनोंतक रेतमें धस जाते थे। यह पहिला दृश्य था और राजपूत सिंगाना, झुंझनू होते हुए चुरू पहुँचा जब कि वे बीकानेरमें घुसे। शेखावाटीके बारेमें जिसको उसने छोड दिया था मि० एलफिस्टोन लिखते हैं कि इसकी पश्चिमी सीमा और बहावुलपुरके बीचवाला दो सौ अस्सी मील लम्बे मैदानसे मुकाबिला करते हुए भी यदि यह मरुभूमिमें शामिल किया जाय तो अपनी पदवीको खोता हुआ मालूम पडता है क्योंकि इस मैदानके अंतिम सौ मीलमें मनुष्यके दर्शन भी नहीं होते हैं। न जीवनाधार जल है और न हराभरा वृक्ष नेत्रको आनन्द देनेके लिये मिलता है। शेखावाटीसे पूगुलतक हमारा मार्ग पहाडियों और धसकती और भारी रेतकी घाटियोंमें होकर था। ये पहाडियाँ ठीक २ उन पहाडियोंकी मानिन्द थीं जिनको बाज वक्त हवा समुद्रके किनारे बनाती है। परन्तु इनकी (मैदानवालोंकी) ऊंचाई अत्यन्त अधिक है जो बीस फूटसे लेकर सौ फुटतक थी लोग कहते हैं कि इनके स्थान और आकारमें वायुद्वारा परिवर्तन भी हुआ करता है और गर्मीके दिनोंमें इन पहाडियोंमें होकर चलना कठिन है, या यह पहाडी मार्ग उडते हुए रेतके बादलोंके कारण अधिक भयानक हो जाता है, परन्तु शीतऋतुमें जब मैंने उनको देखा था तब वे बहुत कुछ अंशोंमें अचल प्रतीत होती थी। क्योंकि फोक बबूल और बटके वृक्षोंके अलावाँ उनके ऊपर घास भी उगी हुई थी। जिसके कारण दूरसे उनपर हरित चद्दर सी पडी हुई मालूम पडती थी। ऐसे भयानक रेतके पहाडियोंके बीचमें कभी २ गाँव दिखलाई पड जाता है, नाजकी छोटी राशिके समान नीची दिवालें और गोपुच्छाकार छतवाले घास फूसके कुछ झोपडोंको यदि गांवका नाम दिया जा सके"। तो भी महाशय एलफिन्स्टोन द्वारा जो यथार्थ और आडम्बरशून्य वर्णन करनेके लिये प्रसिद्ध है उन्हींका लिखा हुआ मरुभूमिक उत्तरी भागका यह वर्णन आगे पाठकोंको यथार्थ विचार बाँधनेमें अधिक सहायता देगा।

(१) मि. एलफेन्स्टोन लिखता है "हम कभी भी लम्बी सफर नहीं करते थे। अधिकसे अधिक छब्बीस मील और कमसे कम पन्द्रह मील हम लोग चला करते थे, परन्तु मार्गके चलनेसे जो थकावट हमको मालूम पडती थी उसका और दूरीका कुछ सम्बन्ध ही नहीं होता था। हमारी श्रेणी या कतार दो मील लम्बी होती थी जब कि हम बहुत हो मिलकर चलते थे। रेतकी पहाडियोंको बचानेके अभिप्रायसे हमको मार्गमें बहुत घूमकर जाना पडता था या चक्कर काटना पडता था।—

इतना भी कथन करनेके अनन्तर और इस देशकी बाह्याकृति देखकर जो कुछ
अवतक कहा है उसको स्मरण रखते हुए हम इस मृत्युभूमिके भिन्न २ थलोंका और
इसमें उपस्थित यत्र तत्र उर्वराभूमिका विशेष रूपसे वर्णन करते हैं । मेरे विचारमें
हिन्दुओंके प्राचीन भूगोल संबन्धी विभागको छोड देना लाभदायक या अधिक उपयुक्त
होगा; जो मंडोरको मरुस्थलीकी राजधानी बनाते हैं, क्योंकि समस्त मरुभूमिके मध्यमें
होनेके कारण और उसके चिह्न या लक्षण और स्थानकी विवेचन करते हुए जैसलमेरको
ही मरुस्थलीकी राजधानी कहना उपयुक्त जंचता है । वास्तवमें यह उर्वराभूमि प्रत्येक
दिशामें बडे २ थलोंसे आवृत है, जिनमेंसे कुछ चालीस मील चौडे हैं । जहां कि मनुष्य
और उसके खाद्य पदार्थके दर्शनतक दुर्लभ हैं । हम जैसलमेरसे मारवाड जायँगे और
लूनीको बिना पार किये हुए झालार और सेवाचीका वर्णन करेंगे, फिर पाठकोंको पर-
कर और वीरवहके सज्ञात राजमें ले जायँगे जो रानाकी उपाधि धारण करनेवाले चौहान
वंशके राजाओंके अधीन हैं। अर्वाचीन राजपूतानेकी राजकीय सीमाओंके निकट रहते हुए
वर्त्तमान समयमें सिन्धसीमान्त, धात और ओमुरसुमराके देशोंका वर्णन करके हम दाऊद-
पुत्र और सिंधुनदीगत घाटीका किंचिन्मात्र वर्णन करते हुए इस लेखको समाप्त करेंगे ।

"जिसोर्ह (जैसलमेर) की पहाडीसे इधर उधर छिटके हुए प्रत्येक नगर या
गाँवकी चर्चासे इस सविस्तर वृत्तान्त पर अधिक प्रकाश पडेगा । त्रिकूट पर्वतके पश्चिम-
की ओर इस रेतीले समुद्रसे आरपार सिन्धु नदीके नील जलतक दृष्टि डालता हुआ या
दृष्टिको फेंकता हुआ यदि कोई दर्शक हैदराबादसे ओचतक इस नदीके संपूर्ण प्रवाह
मार्गको दृष्टिगोचर कर सके तो उसको इन रेतीकी पहाडियोंके बीचमें उन स्थानोंपर
जहाँ कहीं पानी सुगमतासे मिल सकता है । छोटी २ वस्तियां बसी हुई दिखलायी
पडेंगी । इस समस्त प्रदेशमें जिसकी लम्बाई चार सौसे पांचसौ मील है और कोणगामी
चौडाई एक सौ मील है तितर वितर झोपडेवाले छोटे २ गांव । हैं जिनमें मरुभूमिके गड-
रिये अपनी भेडोंके झुण्डको चराते हुए या अन्नके लिये छोटे २ उर्वराभूमिके टुकडोंको
जोतते हुए रहते हैं। उसको शायद ऊँटोंकी एक लम्बी कतार देख पडेगी यह शब्द इस देशमें
काफिल' या काखानामसे अधिक प्रसिद्ध है । जो प्रायः अनिश्चित रास्तेमें चिन्तासहित
गमन करते हुए दिखलाई पडें और चारून हांकनेवाला हर एक मंजिलपर अपनी पगडीको
शिरेमें गांठ लगाता है । वह कदाचित् घोडों या ऊँटोंपर सवार सेहरीस हमारे मरुभूमिके
या सहाराके बद्दू—के झुंड या समूहको देखे; वह या तो कारवांके लूटनेक घातमें बैठा
हो या 'तुर' या वावके निकट शान्तिपूर्वक अपने भेडोंके चारानेवाले राजूर या मंगुलि-
याके गडरियोंके झुंडको हांकनेके कम भयांनक काममें लगे हो । या निरन्तर हरित

—रास्ता इतनी तंग थी कि दो ऊँट साथ २ या लगे २ नहीं चल सकते थे और यदि कोई ऊँट जरा।
भी नियमित रास्तेसे हटा कि बर्फेके समान रेतमें धस जाता था" । काबुल राज्यका वर्णन प्रथमभाग

(१) जिस पहाडीपर जैसलमेर स्थित है उसे त्रिकूट कहते हैं।

"झलेके" झोपडेमें रखनेके लिये जो एक साथ ही अन्न भरने और धूपसे बचानेका डबल काम देते हैं। अन्न लूटते हो' उसको एक ऐसा गिरोह दिखलाई पडे जो नवीन चरागाहकी तलाशमें अपने भेडोंके झुंडको लेकर उस स्थानसे जिसको उसने रस चूस लिया. है या अन्न उत्पन्न करनेके अयोग्य हो गया है चल पडा हो।

"यदि सौभाग्यवश दूसरे दिन उनको नवीन आहार या अनास्वादित झरना मिल जाय तो वे अपने ग्रह या दिनदशा अच्छी समझें और उसको भोग विलासकी सामग्री ख्याल करेंगे।"

या वे रावडी-यह भोजन उनके नूमिदी भाइयोंके हौंसकौस (honskou) भोजनके सदृश है-पकाते हुए देखे जाँय या अपने छोटे उर्वराभूमिके 'वाह' से प्यास बुझाते हुए दृष्टि पडेंगे जिनको (भूमिकी) वे अपने अधिकारमें दृढतापूर्वक रखते हैं जबतक वह हरा भरा रहे या पशुओंके चरानेके योग्य बना रहे या जबतक कोई दुसरा ही प्रबल गिरोह आकर उनको अधिकाररहित न कर दे।

हमको यहाँपर इस बातका विचार करनेके लिये ठहरना चाहिये या ध्यान-पूर्वक विचार करना चाहिये कि भारतके मरुभूमिके 'बाह, वावा या वह' में कहीं यूनानियोंके 'ओसिस'-'एलवह, Elwah का अपभ्रंश-या एलोह Flloao जैसा कि वल जोनीने (लिबियन मरुभूमिके वृत्तान्तमें जब कि वह अम्मन Ammin का मंदिर तलाश कर रहा था) लिखा है-का पता न लग जाय। असंख्य शब्दोंमेंसे जो पानीके लिये इन शुष्कदेशोंमें व्यवहृत किये जाते हैं उदाहरणार्थ 'पार, रार तिरदे वाह बावा, वह अनेक शब्द खासकर झरने या तालके लिये ही व्यवहारमें आते हैं। जब कि अन्तिम शब्द वाह यद्यपि प्रायः उसी अर्थमें इस्तेमाल किया जाता है तो भी अधिकतर बहते हुए पानी या नदीके लिये वहाँके लोग बोलते हैं या कहते हैं "एलवह (Elwah) सर्वरूपसे पानीके लिये ही व्यवहृत होता है। 'दे' शब्द सामान्यरीतिसे तालके लिये इस्तेमाल किया जाता है। परन्तु प्रायः बडी २ नदियाँ गरमीके ऋतुमें बह जानेपर महान् अचल राशि जलको छोड जाती है उसको हमेशा 'दे' कहकर पुकारते हैं। राजपूतानामें ऐसे ताल रखनेवाली अनेक नदियाँ हैं, इनमेंसे एक तालका नाम 'हाथीदे, है जो इस बातको प्रकट करता है कि इसमें हाथी: बुडाऊतक पानी है। अब जलके लिये सामान्यरूपसे प्रचलित शब्द वाह में 'दे' को जोडनेसे 'वादी' बन जायगा, अरबके लोग बहते हुए पानी या नदीको वादी शब्द इस्तेमाल करते हैं और साधारणता आधुनिक यात्रियोंके द्वारा अफ्रीकामें रहने योग्य स्थानके लिये व्यवहृत किया जाता है यदि यूनानियोंने 'वादी' शब्द किसी हस्तलिखित प्रतिसे लिया तब तो स्थान विपर्ययका कारण सुगमतापूर्वक बतलाया जा सकेगा 'वादी' उर्दूमें इस तरह लिखी जावेगी और एक नुक्ताके लगानेसे 'वाजा' आसानीसे 'ओसेस' में

(१) जब मैं इस शब्दकी व्युत्पत्ति अनुमानसे लिख रहा था, मैं नहीं जानता था कि किसी दूसरेने भी इस शब्दपर कुछ लिखा था। मुझे पीछेसे मालूम पडा है कि स्वर्गवासी एम लें. गिलसने अर्बी शब्दरागसे ओसिस यूनानियोंने इसको कई तरहसे लिखा है जैसे auasis. lasis, huasis.—

रूपान्तर हो सकेगी दुहरानेकी जोखिम उठालेने पर भी हमको यहांपर इस रेतके समुद्रको पृथकत्व प्रदान करनेवाले कुछ महान् चिह्नोंका वर्णन करना चाहिये और 'रो' और थलका अन्तर जिनसे पाठकोंको यात्रा वर्णन या वृत्तान्तमें बारंबार काम पडेगा बतलाकर हम तुरन्त ही मध्यमें कूद पडेंगे ।

हम पूर्वमें ही किसी स्थानपर कगर नदीके लय या सूख जानेकी वंशपरम्परागत वार्ताका उल्लेख कर आये हैं जिसमें हमने यह कहा है कि उत्तरी मरुभूमिके तहसनहस होनेका एक भी कारण है । इस घटनाका वर्णनात्मक छंद या मिसरा मुझे याद नहीं आता और न सोडा नरेश हमीरका ही, जिनके राज्यकालमें यह चमत्कारिक घटना हुई है, कुछ वृत्तान्त मिलता है । इस प्राचीन वंशपरंपरागत कविताकी उपयोगिताकी तरफ मैंने अनेक बार पाठकोंका ध्यान आकर्षित किया है और सौभाग्यकी बात है कि उसका एक नवीन उदाहरण पाठकोंको भेंट करता हूँ क्योंकि भट्टोंके इतिहासमें पारस्परिक वैवाहिक सम्बन्धी घटनाका जो उल्लेख किया गया है उसमें हमीरका नाम पाया जाता है । हमीरका समकालीन जैसलमेरका दूसौज था जो संवत् १०१० या सन् १०४४ ई. में राजसिंहासन पर बैठा था, इसलिये जिन हमीरका ऊपर उल्लेख हो चुका है उनका ठीक २ काल निर्णय करनेमें कुछ संशय नहीं है । कगर नदी—जो सेवलकसे निकल कर हांसी हिंसारमें बहती है--एक समय भटनेरकी दावांलाक नीचे बहती थी और वहांके लोग अब भी उसके प्रवाहमार्गमें कुँआ खोदते हैं । भटनेरके बाद कगर नदी रंगमहल बुल्लर, फूलरा और खदलके समतल मैदानोंमें होकर बहती हुई किसीके मतानुसार ओचके नीचे; परन्तु अबूबरकरके (जिसको मैंने सन् १२०९ ई. में नवीन स्थानोंको खोजनेको भेजा था और उसने शाहगढके निकट नदीके सूखे प्रवाह मार्गके जिसको

—की व्युत्पत्ति बतलाई, डाक्टर वेट अत्यन्त रोचक व्युत्पत्तियोंकी सूचीमें (एशियाटिक जनरल मई सन् १८१३ देखो) (वार्ह) से बतलाते हैं और वसि शब्द (वस्) धातु (रहना) से बना है । वसि Nasi और euasi करीब एकसी सादृश्यता रखते हैं । मेरे दोस्त सर डबल्लू ऊसलेने करीब २ वादीका वही अर्थ मुझे बतलाया जैसा कि रिचर्डसनके द्वारा प्रकाशित कानसनकी पुस्तकमें मिलता है-घाटी, मरु भूमि, नदीका प्रवाह मार्ग-नदी; wadey at-kahis .वादी-अल-कबीर-बडी नदी विगडकर ग्वाडसक्यूवरमें परिणित हों गया है, यह उदाहरण डिहरबोंहरमें दिया गया है (Seeadi Gehennem)और कामसनने भी, जो दिया ह जो जिसने यूरोपकी समस्त भाषा-(ओंमें) अंग्रेजीं शब्द पानेके लिये)water वाटरका पता लगाया है-The sason wolter,the greek hudor the iskindsicudr, the Salvanic wod(इस लिये वोदर या ओदरके अर्थ नदी) इन सब उपरोक्त शब्दोंकी व्युत्पत्ति वह नदी या संस्कृत वहसे हो सकती है और यदि डाक्टर डबल्यू यात्रा वर्णन या ७९Hinerar yका ३४१ सफाको देखेगा तो उनको बडा ही आश्चर्य होगा कि (बस)basशब्द उनकी व्युत्पत्तिको दृढता प्रदान करता है-(बस) शब्द निवास करके योग्य स्थानके लिये व्यवहृत होता है । (बस्ती) शब्द जो प्रायः उस वर्णनमें आया है (वसना) बना है, (वासी) रहनेवाला वस स्थान शायद वह शब्दसे निकले हैं जो ओसिसके लिये अपरि हार्य हैं ।

सगर कहते हैं पार किया था) मतानुसार जैसलमेर और रोरोबेसरके दरमियानमें नाशको प्राप्त होती है। यदि यह बात सत्य प्रमाणित हो जाय तो हम तुरन्त कह सकेंगे कि कगर नदीने डूराकी एक शाखसे मिलकर सांगराको अपना नाम दिया-यानी सागरा नदी कगरमें मिलगयी और आगे चलकर कगर नामसे प्रसिद्ध हुई। छोटी छोटी नदियोंका यही हाल होता है-जो (सांगरा) लूनीसे मिलकर सिन्धु नदीके डेल्टाके नदीके मुखपर त्रिभुजाकार भूमिकी डेल्टा कहते हैं पूर्वीय शाखाको बढाती हैं दूसरी ओर शायद सबसे बढकर वर्णन करने योग्य बात मरुभूमिमें लूनी या खारी नदी है जो अपनी अनेकों सहायक नदियोंके साथ अर्वली पर्वतके झीलों या झरनोंसे निकलती है। मारवाडमें लूनी नदी उर्वराभूमि और मरुभूमिकी सीमा है-लूनी नदी मारवाडके मरुभूमि और उर्वरा भूमिको विभक्त करती है-और जैस ही इस देशको छोडकर चौहानोंके थलकी तरफ बढती है यह चौहान समाजको विभाजित करती है और सीमास्थित भूगोल संबन्धी रेखा बनाती है,-और स्वयं इस थलकी भोगोलिक सीमा बनती है। पूर्वीय भाग शिव बाहका राज्य कहलाता है और पश्चिमी हिस्सा पारकर हम आगे चलकर फिर चौहानोंके देशका वर्णन करेंगे।जिसके दक्षिणकी तरफ मरुभूमिके अद्भुत २ चिह्न या आकार पाये जाते हैं। इस पुस्तकके आरम्भमें भौगोलिक वृत्तान्तके वर्णनमें 'रन' या 'रिन' के बारेमें किंचिन्मात्र चर्चा हो चुकी है।यह विस्तीर्ण नमकका दलदल जो चौडाईमें डेढ सौ मीलसे अधिक है, खासकर लूनी नदीके द्वारा निर्माण किया गया है। जो लोमन झिल बनानेवाली लूनी नदीके सदृश आगेके निकासपर फिर अपना वही नाम धारण करती है, और नारायणका मन्दिर इसके मुखपर; जहां यह समुद्रसे संगम करती है, बना हुआ है और ब्राह्माका मन्दिर इसके उद्गमस्थान पुष्करमें है, इस कारण इसके दोनों ही उद्गम और संगम स्थान पवित्र चिह्नोंसे विभूषित हैं। 'रन' या 'रिन' 'अरण्य' शब्दका अपभ्रंश है और कीचडसे संतप्त मरुभूमिकी अपेक्षा गर्मीकी ऋतुमें इस संसारमें कोई भी वस्तु अधिकतर भयानक या निर्जन नहीं है और इस अनोखे स्थानमें खर (गदहा) या जंगली गदहा निवास करते हैं जिसका एकान्त प्रेम श्रेष्ठ कवियोंकी अमर कविताके द्वारा लोगोंके दिलमें अबतक जीवित है। यह विस्तीर्ण नमककी कोठी आधुनिक कालकी रचित या रचना नहीं है, क्योंकि यूनानियोंके लेखोंमें हमको इसका पता मिलता है जिनकी दृष्टिसे यह उस समय भी न बच सका और हमारे (अंग्रेजोंके) 'रन' या 'रिन' शब्दकी अपेक्षा यूनानियोंका 'एरीनोस, मूलशब्द 'अरण्य'से अधिकतर घनिष्ठ सादृश्यता रखता है। यद्यपि विशेष करके यह दलदल नामकके लिये लूनीका ऋणी है, जिसका और उसकी सहायक नदियोंका प्रवाहमार्ग (bed) नमककी तहोंसे परिपूर्ण है तो भी सिन्धनदीके बाढसे नमक इसमें प्रचुर परिणामसे मिलता है और अपने अथाह पानीके लिये शायद यह महान् नदी सिन्धुकी ऋणी होवे। सिन्धु और नाइल नदीकी घाटियोंके बीचमें एक और भौतिक सादृश्यता है। जिसको नेपोलियनने एक बार ही प्रकृतिका साधारण

व्यापार कहा है। मेरा संकेत मौरिस झीलके जन्मकी तरफ है। यह काम मनुष्यकी शक्तिके बाहर है।

क्योंकि पाठकोंको थल और रो शब्दोंसे प्रायः सामना करना पडेगा इसलिये इनके अन्तरको जानना उनके लिये नितान्त आवश्यक है। थल शुद्ध और ऊसर मैदानको कहते हैं। और रो उस मरुभूमिके लिये व्यवहृत होता है जिसमें स्वाभाविक तृणादिक उत्पन्न होते हों; वास्तवमें मरुभूमिका जंगल।

लूनीका थल--यह थल नदीके दोनों किनारों परके देशको सम्मिलित करता है जिसमें झालौर और उसके अधीन राज्य स्थित हैं। यद्यपि नदीके दक्षिण तरफका देश इसमें नहीं शामिल किया जा सकता है तो भी इसका इससे इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि हम अपने हाथमें आया हुआ इसक वर्णन करनेका अवसर न खोवेंगे।

झालौर--यह प्रदेश मारवाडके उत्तम भागोंमेंसे एक भाग है। सुकी और खारी नदियां जो झालौरको सोवाचीसे पृथक् करती हैं। अनेक छोटी २ नदियोंके सहित अर्वली आर आवू पहाडोंसे निकलकर इन प्रदेशोंमें होकर बहती हुई इनके तीन सौ साठ नगरों और गांवोंकी उपजाऊ शक्तिको बढाती हैं। जिनसे मारवाडको कुछ अंश राजस्वका मिलता है।झालौर उस भौगोलिक पदके अनुसार जो प्रायः उद्धृत किया गया है, मरुके नौ दुर्गोंमेंसे एक दुर्ग था। जब कि मरुस्थलीमें प्रमारवंशका आधिपत्य था। झालौर कब प्रमारोंसे छीना गया था इस बातका पता लगानके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है। परन्तु यह बहुत दिनोंतक चौहानोंक आधिकारमें बना रहा और जो प्रसिद्ध युद्ध चौहानोंने अपनी राजधानीके रक्षार्थ अलाउद्दनिके साथ सन् १३०१ ई० में किया था उसका वर्णन फरिस्ता और उनके भाटोंके ग्रन्थोंमें पाया जाता है।चौहान वंशकी यह शाखा मल्लिनी नामसे प्रासिद्ध थी और यहाँ तथा हाडौतीके इतिहासमें इसका उल्लेख फिर किया जायगा। इसमें चौहान राज्यका वह हिस्सा शामिल था जो हथराजके नामसे विख्यात था जिसकी राजधानी जूनाचोटन थी, और अजमेरसे परकर तक लूनीके किनारेके देशोंमें इस वंशका राज्य था और जिससे यह मालूम पडेगा कि चौहानोंने अपने अग्निकुलोत्पन्न प्रमार भाइयोंका नाश करके खारी नदीके किनारे किनारे परकरतकका देश अपने अधीन कर लिया था।

---

(१) नील नदीकी घाटीकी अधिकसे अधिक चौडाई चार योजन है और कमसे कम एक योजन (Lague) है वस सिंधकी घाटीका तंगसे तंग भाग नील नदीके बडेसे बड भागके वराबर है अकले मिश्रमें ही अस्सी लाख जनसंख्या कही जाती है, तब सिंधमें कितनी हो सकती है। किसानोंकी हालत जैसा कि वानरिम लिखा है राजपूतानाके किसानोंके हालतके अनुरूप है, गांव किसी न किसीकी जागीर है जिनको राजाने प्रसन्नतापूर्वक उनको दे दिया है; किसान अपने स्वामीको लगान अदा करते हैं और भूमिपर उनका अधिकार सदा चला जाता है और संसारमें कैसी ही राज्यक्रांति या उलट पलट क्यों न हो परन्तु इनके हक्क या स्वत्वका बाल भी नहीं बांका होता है। यह स्वत्व अब भी है। यूसफने छीन लिया था परन्तु सिसोस्ट्रिसने उनको पुनः प्रदान कर दिया है

सोनगिर या स्वर्णगिरि इस दुर्गका अति प्राचीन नाम है और पुरानी पदवी 'मल्लिनी' का सोनिगुरोंके निमित्त परित्याग करके, निज जातिके चिह्न स्वरूपमें या पृथक्त्व सूचनार्थ, चौहानोंने इस उपाधिको शिरोधार्य किया था। यहाँ उन्होंने अपने रक्षक देव मल्लिनाथ मालीके देवका मन्दिर बनवाया था, जो शिवजीके पुत्रोंके इस देशमें प्रवेश करनेतक अपने स्थानपर बने रहे, कि जब सोनगिरका नाम बदलकर झलन्दरनाथ रक्खा गया, जिनका मन्दिर दुर्गसे पश्चिमकी तरफ एक कोशपर है। यह बात अबतक निश्चित नहीं हुई है कि झलन्दरनाथ गंगाके प्रदेशोंमेंसे लाये गये थे या झलन्दरनाथ और मल्लिनाथको लडाकू मलनिस छोड गये थे, परन्तु यदि यह सिकन्दरके शत्रुओंको शेष चिह्न प्रमाणित हो जाय जिनको उसने तब मुलतानसे निकाल दिया था। क्योंकि उनके पडोसमें झलन्दरकी (जो बाबरके समयमें हिंदुओंका प्रासिद्ध तीर्थस्थान था) गुफाएँ होनेके कारण इस सम्भावनाको कुछ दृढता प्राप्त होती है। अस्तु जो कुछ हो राठौरोंने रोमन जेताओंके समान इन प्राचीन देवोंको अपने देवताओंमें संमिलित कर लिया। मल्लिनाथका चित्र मंडोरके पत्थरपर खुदी हुई मूर्तिको देखकर खींचा गया था। निर्वासित सोनिगुरोंके वंशज अब चित्तलवाना प्रदेशमें वास करते हैं जो लूनीके डेल्टाके निकट है।

भद्राजून मेहवो--जसोल और सिन्द्रीकी वडी २ जागीरोंके अलावा, सेवाची मनिमळ सांचोर मोरसेनके निकृष्ट और खालसा जिले झालोरके अन्तर्गत है। जिसे प्रदेशकी भूमि उपजाऊ, पानी सतहके निकट और लंबाई, चौडाई नव्वे मील है, उसको एकमात्र सुराज्यकी आवश्यकता है जो इस प्रदेशको इसके समान आकारवाले दूसरे प्रदेशोंके बराबर उत्पादक बना सकें और जिसकी आमदनीसे जोधपुर नरेशका निजी खर्च भरपूर चल सकता है, परन्तु राजधानीकी अराजकता; प्रबन्धकर्ताओंकी बेईमानी और मरुभूमिके सेहरोस और आब अरबलीके मीनाओंके लूटके कारण इसकी भयंकर अवनति हुई है। इस देशमें अनेक पहाडियां (इनमेंसे एकपर दुर्ग बना है) पायी जाती हैं। परन्तु यद्यपि इनमेंसे एक भी मेवाडकी ऊंची भूमिसे संलग्न नहीं होती हैं तौ भी आवूतक इसके खंड पाये जाते हैं। सिर्फ एक बातमें यह मरुभूमिकी सादृश्यता रखता है अर्थात् उद्भिज पैदावारमें, क्योंकि झाई बबूल करील और थलके

(१) मुलतान और जूना चोटनके अर्थ चाहान तानके एक ही अर्थ है अर्थात् प्राचीन स्थान और दोनों में ही माली या मालिनी जातिकी थी जिनको लोग चौहानके वंशज बतलाते हैं; और यह आश्चर्यकी बात है कि झालोर (प्राचीन झलन्दरनाथ) में वे ही देवता पाये जाते हैं जो पंजाबमें उनके रहनेके स्थानोंमें मिलते हैं यानी मल्लिनाथ, झलन्दरनाथ, और बालनाथ। अबुलफजल कहता है (वे. १०८ भाग दूसरा) " बालनाथकी गुफा सिंध-सागरके मध्यमें है; " पर बाबर "सिंध नदीके पूर्वमें पांच मंजिल जुदको पहाडीके नीचे बालनाथ जागीकी गुफा नियत करता है " और यह वही स्थान है जिसपर यदुवंशियोंका अधिकार था जब कि भारतके बाहर उनका नायक बलदेव या बलनाथ जो देवता समझकर पूजे जाते हैं-उनको ले गया था।

दूसरे प्रकारकी झाडियों या छोटे २ वृक्षोंके सिवाय किसी किस्मकी लकडी इसमें नहीं पायी जाती है।

झालौरका उत्तम दुर्ग मारवाडकी दक्षिणी सीमाकी रक्षा करता हुआ उस श्रेणीके सिरपर अपना मस्तक उन्नत किये हुए खडा है जो उत्तरकी तरफ सिवानातक चली गयी है। यह तीन सौसे चार सौ फीटतक ऊंचा है और वाल और बुर्ज जिनपर तोपें चढी हुई हैं इसके अधिक सुदृढ बना रही हैं। इसमें चार फाटक हैं, शहरकी तरफवाला फाटक 'सूरजपोल' के नामसे प्रसिद्ध है और वायव्य कोणका फाटक 'बालपोल' कहलाता है जहां जैनियोंके धर्मगुरु पारसनाथका मन्दिर विद्यमान है। किलेके अन्दर बहुतसे कुएँ और दो बडी २ बावडियां हैं और उत्तरकी तरफ पहाडी नदियोंको बांधकर छोटीसी झील बनायी गयी है, परन्तु छै महीनेसे अधिक कभी भी इसका पानी नहीं चलता है। नगर जिसमें तीन हजार और सत्रह मकान हैं किलेके उत्तर और पूर्वकी तरफ बसता है और सुकरी नदी करीब एक मील इससे पूर्वमें बहती है। इस नगरके चारों तरफ दीवाल खिंची हुई है और एक दुर्ग है जिसपर इसके रक्षाके लिये तोपें चढी हुई हैं और नगरमें भिन्न २ जातियोंके मनुष्य निवास करते हैं, परन्तु यह आश्चर्यकी बात है कि इस रंग विरंगी आवादीमें सिर्फ राजपूतोंके पांच ही वंश या घर पाये जाते हैं निम्नलिखित मनुष्यगणना सन् १८१३ ई० में मेरी एक मंडलीके द्वारा की गई थी।

नाम जाति.	मकानोंकी संख्या.
माली	१४०
तेली या घाची	१००
कुम्हार	६०
ठठेरा	३०
धोबी	२०
सौदागर	११५६
मुसल्मान	९३६
खटिक	२०
नाई	१६
कुलाल	२०
जुलाहे	१००
रेशमके जुलाहे	१५
जैन पुरोहित	२
ब्राह्मण	१००
गूजर	४०
राजपूत	५
भोजक	२०

मीना	... ...	६०
भील	... ...	१५
मिठाईवाले या हलवाई	... ...	८
लुहार और बढई	... ...	१४
मनिहार	... ...	४

इस मनुष्यगणनाकी सत्यता प्रमाणित हो चुकी थी लूनी और सुकरीके बीचका देश सेवांची कहलाता है और जिस पर्वतश्रेणीपर झालौर स्थित है उसी श्रेणीके एक शिखरपर सिवाना नामका एक दुर्ग बना हुआ है जो इस प्रदेशकी राजधानी है। इस देश-का विशेषरूपसे वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसकी प्राकृतिक दशा वैसी ही है जैसी कि अभी वर्णित हो चुकी है। प्राचीन कालमें यह नागौरके सहित मारवाडके युवराजकी जागीर थी, परन्तु धौकलसिंहको गद्दी देनेके बाद राज्यमें शामिल कर ली गयी है। वास्तवमें मारुका कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है फरिस्ता अलाउद्दीनके प्रतिकूल सिवानाके बचावका वर्णन अपनी पुस्तकमें करती है।

माचोल और मोरसेन दो राजा लूनीके अन्दर झालौरके आश्रित हैं मीनाओंकी लूट और उपद्रवसे बचानेके लिये माचोलकी आग्नेय सीमापर एक दुर्ग स्थित है। मोर-सेन झालौरके पश्चिमी शिरपर है और इसमें एक दुर्ग और पांचसौ घरोंका नगर है।

भीनमल और सांचोर दक्षिणकी तरफ दो प्रसिद्ध उपभाग हैं। दोनों मिलकर करीब शेष सूबेके समान आकारमें हैं। प्रत्येक उपभागमें आठ गांव हैं। कच्छ और गुजरातको जानेवाले राजमार्गपर ये नगर होनेके सबबसे अति प्राचीन कालसे व्यापा-रके लिये प्रसिद्ध हैं। भीनमलमें पन्द्रह सौ घर कहे जाते हैं और सांचोरमें करीब आधे-के बडे २ धनी महाजन यहां रहा करते थे। परन्तु भीतर बाहर दोनों ओरसे अरक्षित रहनेके कारण या भीतरी और बाहरी अशान्तिसे इन शहरोंको बहुत कुछ धक्का लगा है। जिनमेंसे पहिला अपने बाजारके धनके कारण " माल " नामसे प्रसिद्ध है।

वहां वाराहका मंदिर है (शूकरावतार) जिसमें शूकरकी मूर्ति पत्थरमें खोदकर बनाई गई है। सांचोर दूसरी ही बातके लिये प्रसिद्ध हैं। क्योंकि यह सांचोरा नामक ब्राह्मणोंका जन्मस्थान है। जो इन देशोंके अत्यन्त प्रसिद्ध मंदिरोंके पुरोहित नियत किये जाते हैं। उदाहरणार्थ, द्वारका, मथुरा, पुष्कर इत्यादि सांचोर सतीपुराका अपभ्रंश है और बहुत प्राचीन बतलाया जाता है।

भद्राजून-संक्षिप्त वर्णन झालौरकी प्रसिद्ध जागीर तथा उसके अधीन राज्यका आवश्यकीय है। भद्राजून पांच सौ घरोंका शहर (तीन चतुर्थांश मीनाओंके हैं) पहा-डियोंके झुंडके बीचमें बसता है और इसमें एक किला भी है। सरदार जोधाजातिका है, उसकी जागीर झालौरकी गोडवारमें पालीसे मिलती है यानी उसकी जागीर झालौरसे पालीतक चली गयी है।

मेहवा-लूनीके दोनों किनारोंपर प्रसिद्ध प्रदेश है और पहिले पहिल राठौरोंने जिन देशोंपर अधिकार प्राप्त किया था उनमेंसे एक है। वास्तवमें यह सेवाचीमें है जिसको वह आवश्यकता पडनेपर कर दिया करता है। सेवाक अलावा मेहवाके सरदारको रावलकी पदवी है और वह प्रायः जैसोल नगरमें रहा करता है। सूरतासिंह वर्तमान नरेश हैं। इनका समधी सूरजमल भी रावल पदवीसे विभूषित है और जैसोलसे बाइस मील दक्षिणमें लूनीके किनारेपर सिंद्रीका किला और जागीर उसके अधिकारमें है। इनमें आपसमें कलह चला आता है, वे बराबरीके हक्का दावा करते हैं और इसका परिणाम यह है कि दोनोंमेंसे कोई भी राज्यकी राजधानी मेहवामें नहीं रह सकता है दोनों ही डाकूके कर्मको अप्रतिष्ठाजनक नहीं समझते थे जब कि यह वृत्तान्त सन् १८१३ ई० में लिखा गया था। परन्तु आशा की जाती है कि उन्होंने इस कार्यके खतरेका (यदि गलती या चूकको नहीं) जान लिया है तो खारी नदीके किनारेके उपजाऊ प्रदेशोंकी जोतेंगे जिनमें प्रचुर परिमाणमें गेहूँ ज्वार और बाजरा पैदा होता है। भलोत्रा तिलवारा इस देशके भूगोलमें दो प्रसिद्ध नाम हैं और इनमें एक वार्षिक मेला लगता है जो राजपूतानामें उतना ही प्रसिद्ध है जितना कि जरमनीमें लेपसिकका मेला है। यद्यपि यह मेला भलोत्राके नामसे प्रसिद्ध है तो भी यह मेला कई मील दक्षिण लूनीके एक टापूके निकट भी नगरा और उसके राजाओंको 'सम्वा' में परिणत कर दिया। इस वर्णनसे मालूम पडता है कि सोढाओंने अरोर बेखरके या सिन्धके ऊपरभागमें शासन किया और सम्माओंने नीचेवाले भागमें जब कि सिकन्दर इन देशोंमें होकर गया था। झारियोंमें और सौराष्ट्रमें नौ नगरके जामोंने सुम्माओंसे उत्पन्न होनेका स्वत्व पेश किया है और इसी कारण कहींपर अबुलफजल 'सिंध--सुम्मावंशका' लिखता है, परन्तु मुसल्मानोंसे मिल जानेके कारण और हिन्दुओंके द्वारा धर्मबहिष्कृत होनेपर उन्होंने सम्मा--यदुकुलमें उत्पन्न होनेके बातको छिपानेकी इच्छा की और जमशेदके वंशज अपनेको कहते हुए उन्होंने सम्मा-उपाधिको त्यागकर जामकी पदवी धारण की। हम इस बातको यहां मान लेते हैं कि सोढा जातिके नरेश महान् और राज्यके उस भागपर अधिकार किये हुए थे, जिसकी राजधानी अरोर या बेखरका द्वीप था जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ

---

(१) प्राचीन हिंदू इतिहासमें लिखा है कि अग्निकुलके चार वंशोंने यदुवंशको सर्वत्रसे बाहर निकाल दिया है। दो उत्तम मुसल्मान इतिहासज्ञोंके लेखोंमें इनके आपसके कलह होनेका प्रमाण मिलता है, जिन्होंने प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकोंको देखकर जिनमेंसे कुछ हमको प्राप्त हुई हैं वे लेख लिखे थे। यह स्मरण रखना चाहिये कि सोढा, ओमुर सुमुरा प्रमर 'वंशके थे (ग्रामीण पतार) जब कि सुम्मा यदुवंशोत्पन्न थे। इनकी उत्पत्तिके लिये जयसलमेरका इतिहास देखो।

(२) कप्तान पाटिंजर (जो अब कर्नल है) ने " मुजमूद गरिदाल " नामक फार्सी पुस्तकसे जो वाक्य अपनी पुस्तकमें उद्धृत किया है जो पुस्तक उन्होंने सिंध और बिलोचिस्तानके वर्णनमें लिखी है, उसमें वह प्राचीन सिंधकी राजधानी 'उलोर' लिखता है और " सहीर " वंशके नाश होनेका भी उल्लेख करता है जिनके पुरखे दो सहस्र बरसतक सिंधमें राज्य करते रहे।

गया था, यह सम्भव है कि वह सेना–जिसको अबुलफजल ईरानी लिखता है--जिसने अरोरपर हमला किया और सेहरीके राजाको मार डाला, अपोलोडोटस था मीमनदेरके अधीनतामें यूनानी और बकटिरियाकी सेना थी; जिसने (Apdithdttu) सेहरोस नरेशसे प्रतिपालित देशसे लेकर सोरों या सौराष्ट्र देशतक यात्रा की जहां कि यूनानी इतिहासलेखकके अनुसार जब कि उसने दूसरी शताब्दीमें लिखा था । उनकी कीर्ति मुद्रायें (Medal) वर्तमान थी विस्तारपूर्वक उपरोक्त वर्णित इतिहास हमको सचा और संशयातीत प्रमाण देता है कि दहीर और उसका पुत्र रायसा जो कासिमके अधीनतामें पहिले मुसलमानी सेनाके शिकार बने थे, उसी वंशमें उत्पन्न हुए थे जिस वंशकी शोभाको राजा सेहरोसने बढाया था और भट्टी इतिहास इस सत्यताको प्रमाणित करता है कि इस समय–रेगिस्तानमें उनके बसनेके समय–सोढा जाति अधीश्वर थी और स्थानों और नामोंमें घनिष्ठ सादृश्यता होनेके कारण जो परिणाम हमने निकाला है उसमें सन्देह करनेको स्थान नहीं है कि पौरवंशकी सोढा जाति उस समय उत्तरी सिंधमें शासन कर रही थी जब कि सिकन्दर, नदीमुखेनेव समुद्रमाविशत्, और भाग्य-चक्रके उलटपुलट होते हुए भी वह अबतक अधिकारके लिये अपने प्राचीन यदुबंशी सम्मासे लडते हुए अपने प्राचीन राज्यके कुछ भागपर अपना अधिकार कायम रख सकी हैं । हम पाठकोंको इस भागका कुछ हाल बतलावेंगे और जिस अलौकिक संलग्नशीलता या दृढताके प्रतापसे ये लोग विदेशी शत्रुओंको–चाहे यूनानी, मुसलमान या बेक्टरि-याके क्यों न हों–तुच्छ समझते हुए और प्राकृतिक दुःखोंको–अकाल महामारी, भूकम्प इत्यादिके दुःखोंको–सहते हुए दो हजार दो सौ वरषतक जीवित रह सकते हैं । जिन्होंने इस देशपर समय २ पर प्रचण्ड प्रलय मचा दिया है और आखिरकार इस देशको उजाड दिया है उसकी हम अत्यन्त प्रशंसा किये बिना न रहेंगे । क्योंकि लोग परम्परा-से कथन करते आते हैं कि मिश्र देशके रेगिस्तानके सदृश यह रेगिस्तान सिंध और यमुना नदियोंकी घाटीकी तरफ विस्तारमें उत्तरोत्तर उन्नति करता चला जाता है

---

(१) बडे ही सौभाग्यसे इन मुद्राओंमेंसे एक सिक्का मेननदेर और तीन अपोलोडोटस इस ग्रंथ-कर्ताके हाथ लगे । जिनके कि अस्तित्वमें इसके पूर्व सन्देह था । अपोलोडोटसके तीन मुद्राओंमेसे एक सुरपुरीके खंडहरमें जो मेनू और ऐरियनके सूरसेनीकी राजधानी थी, मिला; दूसरा सिक्का प्राचीन अवन्ती या उज्जैनमें मिला जिसका सम्राट जस्टिनके कथनानुसार अगस्टसके पत्रव्यवहार रखता था; और तीसरा आगराके निकट हिंदू सिथिया और बेंकटियाके सिक्कोंसे भरा हुआ घडेके साथ मिला, जो (घडा) एक अधिकतर प्राचीन नगरके स्थानको खोदते हुए कई वरष हुए निकाला गया था । यह संभव है जैसा कि पूर्वमें लिख चुका हूँ कि यह स्थान अग्र ग्रामेश्वरकी राजधानी हो जो ऐरियनके कथनानुसार उत्तरी भारतका सबसे बढकर शक्तिशाली सम्राट था और पोरस या पुरुके मृत्युके अनन्तर सिकन्दरके आगे बढनेको रोकनेके लिये तैयार था । हमको आशा करना चाहिये कि पंजाबके इतिहासमें कुछ भूतकालकी बातोंका दर्शन हो जाय या पता लग जाय । इन मुद्राओंके वर्णनके लिये रायल एसियाटिक सोसायटीकी पुस्तकें देखो भाग प्रथम पे. ३१३,

अमरकोट—यह ओमुरोंका किला, कुछ वर्ष पहिले सोडा राजकी राजधानी थी और यह राज दो शताब्दी व्यतीत हुई सिन्धकी घाटीमें और लूनीके पूर्वमें फैला हुआ था, परन्तु मारवाडके राठौरोंने और सिन्धके वर्त्तमान राजवंशने मिलकर सोडाओंके महान् राज्यको इतना कम किया कि सोडाओंके हाथमें केवल एकमात्र नियमित भूमि रह गयी, और सेहरीसके वंशजोंको अमरकोटसे (मारुके नव दुर्गोंमेंसे अन्तिम दुर्ग) निकाल बाहर किया जो अरोर राजधानीसे कश्मीरसे समुद्रपर्यन्त विस्तीर्ण राज्यपर शासन करते थे। दुःखके साथ लिखना पडता है कि अमरकोट अपने प्राचीन महत्त्वको खो बैठा और सोडा नरेशोंके वैभवकालमें पांच हजार मकानोंके बजाय अब अमरकोटमें सिर्फ दो सौ पचास मकान हैं जिनको झोपडा कहना अधिक सयुक्तिक होगा। प्राचीन दुर्ग नगरके वायव्य कोणमें है। यह ईटका बना हुआ है और बुर्ज जो संख्यामें अठारह हैं पत्थरके निर्माण किये गये हैं। नगरके भीतर एक किला या सुदृढ और सुरक्षित महल बना हुआ है। दुर्गसे उत्तरकी तरफ पुरानी नहर है जिसमें पानी सालके कुछ महीनोंतक बना रहता है। जब राजा मानने अमरकोटको जीता तब उसने समाचार लेने देनेके लिये कई गांव वहाँपर बसाये। जबतक तालुपुरियोंको किसी प्रकारका भय या खटका अपने कन्दहारके सम्राट्से बना रहा तबतक उन्होंने राठौर राजाको प्रसन्न रखना अपने लिये हितकारी समझा, परन्तु मारवाडके सदृश जब कन्दहारमें आपसमें ही युद्ध ठन गया तब एकसे भय न रहनेके कारण दूसरेको प्रसन्न रखनेकी इच्छाको अर्द्धचन्द्र मिला और अभाग्यवश अमरकोट सिन्धके कुलारों और राठौरोंके राज्यके बीचमें पड गया और प्रत्येक इस सीमास्थित स्थानको अपने राज्यकी उचित सीमा समझकर उसका अधिकार प्राप्त करनेके लिये लडने लगा। हम इन प्रतिद्वंद्वियोंके आपसमें कलहका वर्णन करेंगे जिसने अन्तमें सोडानरेशका सत्यानाश किया, जिससे चाहे कुछ सिद्ध हो वर्त्तमान राजवंशका इतिहास—जिससे हम पूर्णतया परिचित नहीं हैं जाननेमें सहायता मिले।

जब विजयसिंह मारवाडका शासन करता था, सिन्ध राज्यकी बागडोर मोहनूर महमूद कुलोरके हाथमें थी। परन्तु कन्दहारी सेनासे निकाले जानेपर वह जैसलमेरको भाग गया जहां कि वह इस असार संसारके झगडोंसे सदाके लिये छूट गया। ज्येष्ठ पुत्र उन्तरखां अपने भ्राताओं सहित बहादुरखां कैरानीकी शरणमें प्राप्त हुआ, जब कि वेश्या-पुत्र गुलामशाह हैदराबादकी मसनदपर बैठनेमें कृतकार्य हुआ, दाऊद पुत्रके राजाने उन्तरखांका पक्ष लिया और राज्यापहारोंको निकालनेके लिये तैयारी करने लगा। बहादुरखां; सबजुलखां, अलीमुराद, महमूदखां, कायमखां, अलीखांने—कैरानी सरदारोंने उन्तरखांके साथ हैदराबादपर चढाई की, गुलामशाह इन लोगोंसे युद्धके लिये निकला और "ओबरा" स्थानपर भाइयोंमें घनघोर युद्ध हुआ जिसमें उन्तरखाँ पराजित हुआ करीब २ समस्त कैरानों सरदार इस लडाईमें काम आये और उन्तरखाँ गुलामशाहके हाथ पडा जिसने उसको हैदराबादसे सात कोश दक्षिणमें गुजके कोटमें-सिंधनदीमें एक द्वीप है—जीवनभरके लिये कैद किया। गुलामशाहने "मसनद" अपने पुत्र सरफराज-को दे डाली, जिसकी मृत्युके बाद अब्दुलनबी तख्तपर बैठा। शिवदादपुरसे सात कोश

अभयपुर नगरमें तालुपुरी जाति (बलोचकी शाखा है) का सरदार रहता था, जिसका नाम गोरम था और उसके विजूर और सुबदान नामक दो पुत्र थे।

सरफराजने गोरमकी लडकीका पाणिग्रहण करना चाहा, परन्तु इस प्रस्तावके अस्वीकृत होनेपर सरफराजने गोरम वंशका समूल नाश कर दिया, केवल एकमात्र बीजूरखाँ बच रहा जिसने अपनी जातिको बदला लेनेके लिये उकसाया और अत्याचारीको उतारकर स्वयं हैदराबादकी गद्दीपर विराजमान हुआ। कुलोर लोग इधर उधर भाग गये परन्तु बिजूर जिसका स्वभाव उग्र और क्रोधी था अमरकोटके अधिकारके बारेमें राठौरोंसे लड पडा, लोग कहते हैं कि केवल उसने मारवाडसे कर लेना न चाहा परन्तु राठौर नरेशकी कन्यासे विवाह करना चाहा और इस बातके समर्थनमें यह नजीर पेश की कि विजयके पितामह अजीतने फेरोशरको अपनी कन्या दी थी। इस उपमर्दकारक बातसे जलकर राठौरोंने घरणीधरसे पांच कोशपर उगरानामक स्थानपर विजूरके प्रतिकूल तलवार उठाई और इस युद्धमें बलोचसेना राठौरोंके द्वारा पूर्णरूपसे पराजित हुइ। परन्तु विजयसिंहने इस विजयसे संतुष्ट न होकर अपने दिलमें चुभनेवाले कांटोंको उखाड डालनेको पक्का निश्चय कर लिया। भट्टी और चन्द्रावतने सहायता देना स्वीकार किया और उनके वंशजोंकी जागीरें मिल जानेपर वे दूतके भेषमें इस खतरनाक कार्यको पूर्ण करनेके लिये चल दिये। जब वे विजूरके सामने पेश किये गये उसने अभिमानपूर्वक पूछा कि राजाने उसकी बातका ध्यानपूर्वक विचार किया तब चन्द्रावतने विजयसिंहका पत्र उसके हाथमें दे दिया जैसे ही विजरने शीघ्रतापूर्वक अपनी दृष्टि उसपर दौडाई और 'डोलाका उल्लेख नहीं है' यह शब्दके निकलनेकी देर थी कि चन्द्रावतका कटार उसकी छातीमें प्रवेश कर गया। 'यह डोलाके एवजमें' उसने कहा और यह करके एवजमें उसके दूसरे साथीने दूसरा प्रहार करते समय कहा।

विजूर गतप्राण होकर गद्दीपर गिर पडा और हत्यारे जो भागना असम्भव जानते थे चारों तरफ घूमकर कटार चलाने लगे, उनके शरीरके टुकडे २ होनेके पहिले चन्द्रावतने पचीस और भट्टीने पांच मनुष्योंको मार गिराया। बिजूरका भतीजा और सोबदानका पुत्र फतेहअली गद्दीके लिये चुना गया और कुलोरका प्राचीनवंश भुज और राजपूतानेमें भाग गया। जब कि उनका प्रतिनिधि कन्दहारको चला गया। शाहने उसको पचीस हजार सेनाका अधिपति बनाया, जिसकी मददसे उसने फिर सिन्ध देशको विजय किया और ऐसे २ निर्दयताके काम किये जिनका उल्लेख इतिहासमें नहीं है। फतेहअली जो भुजको भाग गया था, उसने अपने साथियोंको फिर एकत्र करके शाहकी फौजपर आक्रमण किया जिसको उसने हराकर शिकारपुरके उस तरफतक कतल करते हुए उसका पीछा किया और वह शिकारपुरको अधिकारमें कर विजयशंख बजाता हुआ हैदराबादको लौट आया। निर्दयी और पराजित कुलारा फिर एक बार शाहके सम्मुख गया। परन्तु शाहने अपनी फौजकी अत्यन्त अपमानकारक हारपर क्रोधित होकर उसको अपने सम्मुखसे भगा

दिया और इधर उधर घूमनेके बाद वह मुलतानसे जैसलमेर होता हुआ अन्तमें पोकरनेमें निवास करने लगा जहाँ कि उसको इस नश्वर शरीरसे सम्बन्ध त्यागना पडा। पोकरननरेशने अपनेको उसका उत्तराधिकारी बनाया और सिन्धके निर्वासित राजाके असंख्य धनभंडारको पाकर पोकरननरेश मारवाडमें अगुआ बननेको समर्थ हुए निर्वासित राजाकी स्वरई नगरके उत्तरकी तरफ बनी हुई है।

यह कथा जो वास्तवमें मारवाड या सिन्धके इतिहाससे सम्बन्ध रखती है सोडा नरेशोंके भाग्यपर सिन्धवालोंका क्या प्रभाव पडा सिर्फ इस बातको दिखलानेके अभिप्रायसे यहाँपर इसका उल्लेख किया गया है। बिजूरने जो विजयसिंहके दूतोंके हाथसे मारा गया था सोडा नरेशको अमरकोटसे निकाल दिया था और अमरकोटका अधिकार मिलनेपर सिन्धवालोंको तुरन्त ही भट्टियों और राठौरोंसे लडनेको विवश होना पडा। बिजूरके मारे जानेपर और सिन्धी सेनाके हार खानेपर अमरकोटकी गद्दीपर सोडानरेशको फिर विजयसिंहने बैठाया। परन्तु वह बहुत दिनोंतक अमरकोटको अपने अधिकारमें न रख सका क्योंकि कन्दहारी सेनाके आक्रमण करनेपर इस दरिद्र देशके निवासियोंको अफगानोंने कतल किया और लूटा और अमरकोटपर हमला करके उसको छीन लिया। जब फतेहअली कन्दहारी सेनाके सम्मुख हुआ और राठौरोंकी मददसे उसको पराजित करनेमें समर्थ होनेपर उसने इस मददके बदलेमें अमरकोट राठौरोंके अधिकारमें दे दिया जिसकी दीवालपर राठौरोंका झंडा फहराता रहा जबतक कि सिन्धवालोंने आपसकी लडाईसे फायदा उठाकर उनको नहीं भगा दिया। यदि राजा मान अपने सरदारोंकी शुभेच्छासे लाभ उठाना जानते होते तो इस दूरास्थित स्थानको लेनेके लिये और कुछ असंतुष्ट मनुष्योंसे पिंड छुडानेके लिये उन उपायोंको काममें न लाना पडता जिनके कारण उनके नामपर कलंकका धब्बा लग गया है।

---

(१) नगरके उत्तरकी तरफ फतेहअलीके बाद उसका भाई वर्तमान नरेश गुलामअली मसनदपर बैठा और फिर उसके पुत्र कुरेमअलीने मसनदको रौनक बख्शी! डा. बर्नकी "सिंध दरबारके प्रतिगमन करनेका वृत्तांत" नामक पुस्तकके द्वारा इस वर्णनकी सत्यता प्रमाणित होती है। यह पुस्तक बडी ही रोचक और उत्तम है और इस नोट या टिप्पणीके लिखनेके ऐन वक्तपर यह पुस्तक मेरे हाथ लगी है। बीजूरखां सिंधके कलोरा शासकोंका मंत्री था और जिसकी क्रूरताके कारण आखिरकार सिंधका राज्य मंत्रीके कुटुमके हाथ लगा या कुटुम्बमें चला गया, इस बातका मुश्किलसे विश्वास हो सकता है कि राजा विजयसिंह गुप्त हत्यारोंको कलोराके लिये मुहैया करे जो इनको बडी ही सुगमतासे सिंधमें पा सकता था तो भी जिस अपमानकारक बातके मुँहसे निकालने पर बिजूरको प्राणसे हाथ धोना पडे वह सम्भव है कि उसके मालिकसे कही गयी हो यद्यपि वह उसको इसके लिये कुछ प्रायश्चित न करना पडा। यह बडे दुःखकी बात है कि डा. बर्न अमीरके साथ रुहतन (जिसका वृत्तांत मुझको बीस बरस पहिले मिल चुका था) तक नहीं गया। डा. बर्नके भाई लफटेंट बर्नने बडी ही योग्यतापूर्वक "रिन" (खारी झील) का वृत्तांत और नकशा चित्रित किया है जिसने भारतके इस सुन्दर और महत्वपूर्ण भागके भूगोल और इतिहासपर नया ही—

द्वितीय अध्याय २.

चौहानराज-चौहानराज राजपूतानेके सुदूर कोनेमें स्थित है और प्रथम वार ही इसके अस्तित्वका उल्लेख किया गया है। क्योंकि महत्त्व और सुन्दरताका नाम किसी दूसरे ही चीजको माप (Standard) मानकर किया जाता है: इस लिये इस दृष्टिसे विचार करनेपर चौहानराज रेगिस्तानके छोटे २ राज्योंके मुकाबिलेमें साम्राज्य प्रतीत होगा। चौहानराजके उत्तर और पूर्वमें मारवाड राज्यकी भूमि है जिसका वर्णन हम अभी कर चुके हैं। इसके आग्नेय कोणमें कालीवारा (Koliwarra) है, दक्षिणमें 'रिन' या 'नमककी झील' है और धात (Dhat) का रेगिस्तान पश्चिमी सीमापर है। चौहान राज्य दो प्रसिद्ध राज्योंमें विभक्त है, पूर्वीयराज्य 'वीरबाह' (VirBah) नामसे विख्यात है और पश्चिमी राज्य लूनीके पार होनेके कारण 'परकर' (parkur) नाम धारण किये हुए हैं और दोनों ही नगर (Nuggur) और राजधानी पृथक्त्व सूचना करनेके लिये सरनगर (Sir-Nuggar) के नामसे परिचित है-परकरकी पदवीसे विभूषित है। यह प्रसिद्ध रेनल Rennel का नगर--परकर Negar parkre; है जिसको साहसी और उद्योगी विटिङ्गटन Whiteington नामक अंग्रेजने उस समय देखा था। जब कि इन देशोंसे हमारे सम्बन्धका सूत्रपात ही हुआ था। इस रेगिस्तानके चौहानोंको अपने राज्यके प्राचीनपनका तथा उच्चकुलमें जन्म लेनेका गर्व है। पिछली बातको प्रमाणित करनेके लिये मानिकराव अजमेरके वीसलदेव और दिल्लीके अन्तिम हिन्दू सम्राट् महाराज पृथ्वीराजको अपना पूर्वपुरुष बतलाते हैं, परन्तु पहिले नामोंको कल्पना और भट्ट कवियोंके कविताके हवाले कर हम निर्भयतापूर्वक कहनेका साहस करते हैं कि वे सोढ़ा Sodas और प्रमारजातिके दूसरी शाखाओंसे पीछे हुए थे, जो इस देशमें जब कि

—प्रकाश डाला है। मेरी यह इच्छा है कि इस अपरिचित और अप्रसिद्ध प्रदेशको अनुसन्धान करनेका भार एक ऐसे पुरुषको सौंपा जाय जो सब तरहसे इस कामको करनेके लिये सुयोग्य हो। इस मरुभूमिमें जयसलमेरसे ओचतक यात्रा करनेकी इच्छा वहुत दिनोंतक मेरे मनमें बनी रही और फिर आजसे जलमानसे मनसुराको जाते हुए रास्तेमें अरोर, सेहवान, सम्मा नगरी और वामुनवासीको देखूं। सन् १८२, में सिंधसे युद्ध छिडनेकी आशंकासे मेरे मनोरथ सफल होनेके लक्षण दिखाई पडने लगे और मैंने मरुभूमिमें होकर सेना ले जानेके मार्गका नकशा खींचकर लाट हेस्टिंग्सके पास भेज दिया था; परन्तु उस समय उनको शांति रखना ही अभीष्ट था। अपर सिंधके गवर्नर मीर सोहरावसे भी मेरा उस समय पत्रव्यवहार चल रहा था और इसमें सन्देह नहीं है कि वह मेरे विचारोंसे सहमत हो जाता।

(१) परके अर्थ 'पार' है और करयासरलूनी या खारी नदीका समानार्थक है। लूनीके अलावा राजपूतानेमें हमने अनेक खारी नदियां देखी हैं। समुद्र (लूनापानी) या (खारापानी) के नामसे प्रसिद्ध है परन्तु यह नाम अब (कालापानी) में रूपांतरित हो गया है जो किसी तरहसे निरर्थक नहीं है।

सिकन्दरने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गमन किया था, शासन कर रहे थे। यह सम्भव है कि माली या मालिनीने जिनको सिकन्दरने पंजाबके कोनेसे निकाल दिया था सोडाओंसे खेरकी भूमि छीन ली हो। अस्तु इतना निस्सन्देह ठीक है कि आठवीं शताब्दीसे लेकर तेरहवीं शताब्दीतक चौहानराज अजमेरसे सिन्धकी सीमातक फैला हुआ था। जिसकी राजधानियां; अजमेर, नादौल, झालौर, सिरोही और जुना चोटन थीं और यद्यपि प्रत्येकका इतिहास इनको स्वाधीन बतलाता है तो भी वे किसी न किसी प्रकारकी अजमेरकी अधीनता स्वीकार किये हुए थीं। इस बातको प्रमाणित करनेके लिये हमारे पास ऐतिहासिक लेख मौजूद हैं। गजनीके जगद्विजयी महमूदके समयसे अलाउद्दीन द्वितीय सिकन्दरके समयतक इनमेंसे प्रत्येक मुसलमानी इतिहासमें प्रसिद्ध रह चुकी थी। अपने बारहवें हमलेमें मुलतानसे अजमेरको जाता हुआ (फरिश्ता कहता है कि जिसका किला महमूद शत्रुओंके हाथमें छोडनेको विवश हुआ था) महमूद नादौलके पाससे गुजरा और उसको लूटा और रेगिस्तानके निवासी महमूदके जुना–चोटनमें आगमनको, वंशपरंपरानुगत कथाके द्वारा जीवित रख सके हैं और वे उन सुरंगोंको बताते हैं जिनके द्वारा वहांका पहाडी किला उडाया गया था। इस बातको जाननेके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है कि यह घटना उसके आगमन और नहरवल्लके नाशके बाद हुई थी या जब कि वह यात्रा कर रहा था परन्तु जब हम इस बातका स्मरण करते हैं कि अपनी अन्तिम चढाईमें उसने सिन्धमें होकर लौटनेका प्रयत्न किया था और इस रेगिस्तानमें अपनी सम्पूर्ण सेनासहित वह नाश होनेके निकट ही था कि तब हमको इस बातको ख्याल करनेकी जगह मिल जाती है कि उसके जुनाचोटनके नाश करनेके दृढ निश्चयने उसको इस खतरेमें डाल दिया था। क्योंकि 'काफिरों' को नाश करने या उनको मुसलमान बनानेके सर्वव्यापक उद्देशके अलावा संभव है कि नहरवल्लके निर्वासित राजे खरधरके रेतके पहाडियोंके बीचमें बसनेवाले चौहानोंके शरणमें प्राप्त हुए हों और इस तरहसे उसके हाथमें पडे हों। यद्यपि नाममात्रको एक राज्य है तो भी 'परकर' नरेश वीरवाहकी बडी गद्दीकी किसी प्रकारकी अधीनता नहीं करता है। दोनों ही रानाकी प्राचीन हिन्दू पदवीसे विभूषित हैं और लोग कहा करते हैं कि वीरत्व इनका पुस्तैनी गुण है–यानी इनके घरानेमें सदासे वीर पुरुष उत्पन्न होते चले आये हैं–क्योंकि वीरता और चौहान समानार्थक शब्द हैं। इस राजके थलकी वर्गमीलमें लम्बाई चौडाई या आबादी जो निरन्तर घटा बढा करती है, बतानेकी कोई आवश्यकता नहीं है, परन्तु हम प्रसिद्ध नगरोंका संक्षिप्त वर्णन करेंगे जिससे हमको मरुस्थलीकी मनुष्यसंख्या कूतनेमें सहायता पहुंचेगी। हम पहिले भागका वर्णन आरम्भ करते हैं। चौहानराजमें प्रसिद्ध २ नगर शिव, बह धरणीधर बंकसर थेराड हितीगांव और चीतल हैं। राना नारायणराव ओसरा ओसरीसे शिव और बहमें रहता है दोनों ही बडे नगर हैं और इनके चारों तरफ बबूल या दूसरे किस्मके कांटेदार वृक्षोंका परकोटा खिंचा हुआ है जो इन देशोंमें 'काठका कोट' कहलाता है और शत्रुओंके आक्रमणको रोकनेके लिये भलीभांति दृढ हैं। इस रेतीले देशसे नारायणरावकी आमदनी

तीन लक्ष रुपया वार्षिक है। जिसमेंसे एक तृतीयांश एक लक्ष रुपया जोधपुरको करके रूपमें और सो भी विना युद्धके नहीं दिया जाता है जिसको लेनेके लिये जोधपुरका किसी प्रकारका भी स्वत्व नहीं पहुँचता है। देशके उन भागोंमें जो लूनीके द्वारा सींचे जाते हैं। अच्छे अन्नकी पैदावार होती है और यद्यपि गर्मीके ऋतुमें नदी सूख जाती है तो भी उसके प्रवाहमार्गमें bed कुएँ खोदकर प्रचुर परिमाणमें मीठा पानी प्राप्त हो सकता है परन्तु लोग कहते हैं कि यद्यपि नदीका प्रवाह बन्द हो जाता है तो भी रेतमेंसे छन २ कर filter उन पृथक् तालोंमें मन्द २ गतिसे बहती हुई धार दिखलाई पडती है।ऐसा ही चमत्कारिक दृश्य कोहरी नदीके प्रवाहमें bed (ग्वालियरके जिलामें कई मीलके पूर्णतया सूखीभूमिके बाद हमारे नेत्रगोचर हुआ है। पानीके उस हिस्सेमें जो कुछ दूर चलकर पडा है)।

नगर या सर नगर परकरकी राजधानी है और १५०० घरोंकी बस्ती है जिसमेंसे सन् १८१४ ई०में आधे आबाद थे। नगरके नैऋत्यकोणमें एक छोटासा पहाडीपर किला है जिसकी ऊँचाई २९ फीट कही जाती है। कुएँ और बावडियाँ अनगिनती हैं। नगरसे सात कोश दक्षिणमें नदी लूनी नामसे प्रसिद्ध है। जिससे हम यह परिणाम निकालें कि इसका प्रवाह मार्ग bed अवश्य ही रिनके बीचमेंसे होगा। परकरनरेश अपने वीरवहके स्वामीके समान रानापदवीसे अलंकृत हैं। यद्यपि हम इस बातसे अपरिचित हैं कि उनका आपसमें क्या सम्बन्ध है तो भी परकरनरेश वीरवह नरेशके प्रति अपने कर्त्तव्यके लिये विख्यात हैं। दोनों ही हथ राजावंश जात हैं जिनकी राजधानी जुना चोटन थी। वंकसिर स्वरनगरसे दूसरे नंबरका है। यह कुछ काल पूर्वरेगिस्तानके लिहाजसे बडा और समृद्धिशाली नगर था। परन्तु सन् १८१४ई. में इसमें सिर्फ ३६० मकानोंकी बस्ती है। नगरनेरशका पुत्र यहां रहता है जो अपने पिताके समान राना पदवीसे विभूषित है। हम यहांपर छोटे २ नगरोंका उल्लेख नहीं करेंगे क्योंकि यात्रावर्णनमें वे फिर मिलेंगे।

थेरड लूनीके चौहानोंका दूसरा भाग है जिसकी राजधानी शिवसे कुछ ही कोशपर थेरड नामसे प्रसिद्ध है और जो परकरके सदृश नाममात्रके लिये शिव–वहकी अधीन है। इस वर्णनके साथ ही हम वीरवहके विषयको समाप्त करते हैं जिसमें हम फिर दुहराते हैं अवश्य ही अनेक अशुद्धियां होंगी।

चौहानराजका मुख या आकृति–क्योंकि " यात्रावर्णनमें देशकी हालातका सविस्तर वर्णन आवेगा। इसलिये यहाँपर उसका सूक्ष्म वर्णन व्यर्थ होगा। वही ऊसर पहाडी जैसा कि हम कह आये हैं, चोटनसे जैसलमेरतक फैली हुई है। वंकसिरके दो कोश पश्चिममें पायी जाती है और यहाँसे नगरतक पृथक् २ पिंडमें चली

(१) मेरे एक भ्रमणवृत्तान्त पुस्तकमें लिखा है कि लूनीकी एक शाखा वीर–वहकी राजधानी शिवके निकट बहती है जहां यह चार सौ बारह कदम चौडी है मैं समझता हूँ कि यह अशुद्धि है।

गयी है। लूनीके दोनों किनारोंकी भूमिमें गेहूं और अच्छे अन्नोंकी फसल उत्पन्न हो सकती है और यद्यपि वीरबहमें अनेक थल हैं तो भी शिवसे १७ कोश विशेषकर रांधूपुरकी तरफ एक सपाट मैदान है। लूनीके पार थल ऊँचे टीबोंमें उठता गया है और वास्तवमें चोटनसे वंकसरतक संपूर्ण देश ऊसर हैं और ऊंचीर रेतकी पहाडियोंसे परिपूर्ण हैं और प्रायः रेतसे ढकी हुई टूटी फूटी ऊंची भूमि दूरतक चली गयी है।

पानी-पदावार-संपूर्ण चौहानराजमें या कमसे कम उस भागमें जहां आवादी अच्छी है पानी सतहसे औसत दर्जेकी गहराईपर मिल जाता है। कुओंकी गहराई १० से २० पुरुषा है या पैंसठके एकसौ तीस फीट और जो थातके कुओंकी गहराईके मुकाबिलेमें जो कभी २७००फीटतक होती है किसी गिन्तीमें नहीं है। लूनीके किनारे गेहूं, तिल, मूंग, मौथ अनेक प्रकारकी दालें, बाजरा. वहाँके लोगोंकी आवश्यकता दूर करनेके लिये काफी परिमाणमें पैदा होते हैं, परन्तु इस सम्पूर्ण देशमें लूट ही खास रोजगार है जिसमें चौहान राजा और नीचकोली चालाकी और फुर्तीमें एक दूसरेकी स्पर्धा करते हैं। जहाँ कहीं भूमि खेती करनेके अयोग्य समझी गयी है वहां खासकर ऊंटोंके लिये अच्छी जगह चरनेको निकल आती है जो (ऊंट) अनेक प्रकारकी काँटेदार झाडियाँ खाकर जीवन निर्वाह करते हैं, भेंड बकरियाँ अधिक संख्यामें पायी जाती हैं और बैल, घोड-सुन्दर और अच्छी जातिके तिलवाराके मेलेमें बिकने आते हैं।

निवासी-यह नितान्त आवश्यक है कि हम सिकन्दरके शत्रु मल्लिके वंशजोंको या वीरवर पृथ्वीराजके वंशजोंको चोरोंकी समाज कहकर वर्णन करें। ये लोग जो २ हानियाँ राजके अभावमें उठाथे या जो अत्याचार उनको जोधपुरवालोंके हाथसे सहने पडते थे, जो उनपर अपना प्रभुत्व और लूटनेका हक बतलाते थे उनका बदला लेनेके लिये सर्व साधारणको लूटनेके गरजसे सिन्ध गुजरात और मारवाडतक धावा करते थे। चौहानराजमें सर्व प्रकारकी जातियां पायी जाती हैं, परन्तु सबसे शक्तिशालिनी जातियां सहरी, खोसा कोली और भील हैं जिनके नाम डाँकू शब्दके समानार्थकवाची हैं। चौहान यहांके अधीश्वर होनेपर भी प्रत्येक गांवमें अल्प संख्यामें पाये जाते हैं, परन्तु कोली भील और पिथिलकी संख्याएँ अधिक हैं पिथिल नीच जातिके होनेपर भी केवल उद्योगद्वारा इस देशमें अपना जीवन निर्वाह करते हैं। खेतीके अलावा वे गोंदका व्यापार करते हैं जिसको वे प्रचुर परिमाणमें भिन्न वृक्षसे जिनका नाम पहिले बतला चुके हैं एकत्र करते हैं। चौहान लोग दूसरी प्राचीन राजपूत जातियोंके सदृश द्विजत्वसूचक चिह्न जनेऊको नहीं धारण करते हैं और जिन लोगोंको ब्राह्मणोंकी संगीतने लोहके जंजीरसे जकड रक्खा है उन लोगोंके आचार विचारको वे (चौहान) पालन करनेके लिये पूर्णतया बाध्य नहीं हैं। परन्तु संस्कार सम्बन्धी शिथिलताको सुधारनेक लिये पुरबिया चौहानोंकी अपेक्षा

(१) पुरुषा मरुभूमिके नापनेका माप है। यदि औसत दर्जेका ऊंचा आदमी शिरके ऊपर हाथोंको सीधा उठाकर खड़ा हो तो अगुलियाकी नोंकसे लेकर पदपर्यन्तकी ऊंचाई पुरुषा कहलाती है यह (पुरुष) शब्दसे निकला है।

इन्होंने अपने नैतिक गुण या स्वभावमें अच्छी उन्नति कर ली है। क्योंकि यद्यपि इनके पडोसी झाडियोंमें बालहत्या भयानकपनसे प्रचलित है तो भी वे (चौहान) इस अस्वाभाविक वार्तासे (बालहत्या) पूर्णतया अपरिचित हैं । भोजन करनेमें इनको किसी प्रकारका विचार नहीं है वे चौका नहीं लगाते हैं और इनके रसोइयाँ नाई होते हैं । उच्छिष्ट भोजन बाँधकर रख दिया जाता है जो दुबारा भोजन करनेके समय उपयोगमें आता है । कोली और भील--कोली इस देशमें बहुतायतसे पाये जाते हैं और मानव जातियोंमें अत्यन्त अधोगतिको प्राप्त हुई जातिसे इनकी तुलना की जा सकती है। यद्यपि वे हिन्दुओंके सब देवोंका और विशेषकर ‘ भयानक ’ माताकी पूजा करते हैं तो भी वे किसी प्रकारकी कानूनका–मानवीय या ईश्वरीय-गौरव या प्रतिष्ठा इनके हृदयमें नहीं वास करती है अर्थात् वे घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और वनके पशुओंसे किसी बातमें बढ कर नहीं हैं । इनको किसी प्रकारकी वस्तु खानेमें कुछ परहेज नहीं है,गाय,भैंस,ऊंट, हिरन, सुअर इनके खाद्य पदार्थोंमेंसे हैं और वे मुर्दा खानेतकमें कुछ बुराई नहीं समझते हैं। दूसरी अधम या नीच जातियोंके समान वे राजपूतवंशराज होनेका दम्भ दिखलाते हैं और चौहान कोली,राठौरकोली,पुरिहारकोली इत्यादि नामोंसे अपना परिचय देते हैं जो केवल उनके प्राचीन कोली वंशमें अशास्त्रीय रीतिसे उत्पन्न होनेकी वार्ताको पुष्टि करती है करीब २ सम्पूर्ण भारतमें कपडा बिननेवाले कोली जातिके हैं और यद्यपि वे अपनी असलियतको झुलाहा नाम धारण करके जो मुसलमान कपडा बुननेवालोंको हिन्दुकोलीसे पृथक् करता है, छिपानेका यत्न करते हैं, भील लोगोंमें कोलियोंकी सब बुराइयाँ मौजूद हैं और शायद मानवीय दृष्टिसे विचार करनेपर एक दर्जे नीचे गिरे हुए हैं, क्योंकि वे सर्व प्रकारके कीडे,लोमडी, सियार,चूहे,सांपोंको खाकर जीवन व्यतीत करते हैं और यद्यपि उन्होंने भोजनकी सूचीमेंसे ऊंट और मुर्गेका-क्योंकि मुर्गा माता या देवीको जिसको वे पूजते हैं चढाया जाता है–बायकाट कर दिया है तो भी उनकी नैतिक अवनति अन्तिम सीमातक पहुंच गयी है ।कोल और भील आपसमें वैवाहिक सम्बन्ध नहीं करते हैं और न एक दूसरेके साथ भोजन करेंगे सिर्फ यही उनका जातिबंन्धन है, तीर और कमान इनके शस्त्र हैं और वे कभी २ तलवार बाँधते हैं पर बन्दूक कभी नहीं ।

पिथिल इस देशमें किसानीका काम करते हैं और बनियोंके समान प्रतिष्ठित जाति है । वे गाय, बैल, मेंड इत्यादि झुंडका झुंड रखते हैं और खेतीका काम करते हैं और लोग कहते हैं कि इनकी संख्या कोलियों या भीलोंके समान है । हिन्दुस्थानके कुर्मी मालवा और दक्षिणके कोलम्बी और पिथिल तुल्यार्थवाचक हैं । इस देशमें और भी जातियां रहती हैं जैसे रेवारी ऊंटके पालनेवाले जिनका वर्णन रेगिस्तानके संपूर्ण जातियोंके साथ होगा ।

थात और ओमुरसुमरा–अब हम राजपूतानेको छोडकर सिन्धके रेगिस्तानका या उस भूमिका वर्णन करेंगे जो पश्चिममें राजपूतानेकी सीमासे सिन्धु नदीकी घाटीतक

और उत्तरमें दाउदपोतरासे 'रिन' के किनारे बुलारीतक फैली हुई है। यह भूमि करीब दो सौ बीस मील लम्बी है और अधिकसे अधिक इसकी चौडाई अस्सी मील है। यह सारा देशका देश थलरूपमें विद्यमान है और इस थलमें बहुत कम गाँव पाये जाते हैं, यद्यपि गडरियोंके अनेक छोटे २ गांव इधर उधर दृष्टिगोचर होते हैं तो भी क्षणस्थायी होनेके कारण नकशेमें स्थान नहीं पा सकते हैं। जहां कि पानी सुगमतासे सालभरतक मिल सकता है वहाँपर इनमेंसे कुछ पुरुष और 'वसर' का कुछ न कुछ नाम रख लिया जाता है, परन्तु इनकी यदि अधिक संख्या गिनाई जाय तो पाठकोंको भ्रम हो जायगा। कारण कि रेगिस्तानके वास पातके समान इनका जीवन भी क्षणभंगुर है। यह संपूर्ण देश रेगिस्तान है जिसमें पचास मीलतक पानीका एक बूँद भी नहीं मिलता है और बिना बडी सावधानीके इसका पार करना असम्भव है। रेतकी पहाडियाँ छोटे २ पहाडोंमें परिणत हो गयी हैं और कुएँ इतने गहरे हैं कि बडे काफिलेके अनेक मनुष्य इस असारसंसारसे कूच कर जायँ पेस्तर कि उन सबकी तृषा शान्त हो सके। इनमेंसे कुछ कुओंकी गहराई बतला देनेसे पाठकोंको इस बातका अनुमान हो जायगा कि मरुदेशमेंसे यात्रा करना कितना संकट-मय है। इनकी गहराई ग्यारहसे पचहत्तार पुरुषातक या सत्तरसे पांच सौ फीटतक है। जयसिंह देसिरका तक एक कुआँ पचास पुरुषा गहरा है, धोतकी वस्तीका साठ, गिरपका साठ, हमीर देवरांको सत्तार, और जिज्जिनियालीका पचहत्तरसे अस्सी पुरुषातक गहरा है।

इतिहासवेत्ता फरिश्ता भगे हुए सम्राट्र हुमायूं और उसके नमकहलाल साथियोंका इनमेंसे एक कुएँपरकी दुर्गतिका कैसा हृदयाविदारी चित्र खींचता है। जिस देशमें होकर वे भागे जाते थे वह अपार रेतका समुद्र है, मुगल पानीके मारे अतीव कष्ट-मयदशाका अनुभव करते थे, कुछ प्यासके मारे पागल हो गये, कुछ संज्ञाविहीन होकर भूतलपर शयन करने लगे। लगातार तीन दिन पानीके दर्शनतक न हुए, चौथे दिन उनको एक कुआँ मिला जो इतना गहरा था कि बैल हाँकनेवालेको ढोल बजाकर इस बातकी सूचना दी जाती थी कि डोल मनके पास आ गया, परन्तु हुमायूँके अभागे साथी पानी पीनेके लिये इतने उत्सुक हो रहे थे कि ज्योंही पहिले पहिल डोलकी सूरत दिखलाई पडी और पेस्तर कि वह जमीनपर रक्खा जाय बहुतेरे डोलपर टूट पडे और इस तरहसे कुँएमें गिर पडे। दूसरे दिन उनको एक छोटा नाला मिला और ऊंट जिन्होंने कई दिनसे पानी चक्खा भी नहीं था, पानी पीनेके लिये छोड दिये गये, परन्तु अधिक पानी पीनेके कारण उनमेंसे कुछ मर गये। हुमायूँ अपूर्व आपदाओंको भोगता हुआ अपने कुछ साथियों समेत आखिरकार अमरकोट पहुँचा। राजाने जो रानाकी पदवीसे सुशो-भित है, हुमायूंके इस दुःखपर दया की और अपनी तरफसे कोई बात न उठा रक्खी जो हुमायूंकी वेदनाको शांत कर सके या उसको इस दुःखमें दिलासा दे सके।

हम अब उस देशमें हैं जहाँ हुमायूंने इन आपदाओंको भोगा था और उस देशकी प्रसिद्ध राजधानी अमरकोटमें अकबरने जन्म ग्रहण किया, जिससे बढकर अबतक

कोई महान् सम्राट् नहीं हुआ है, हमको उस पर्देको हटा देना चाहिये, जो हुमायूंको रक्षककी जीतिके इतिहासको छिपाता है और यद्यपि वह नाममात्रका अमरकोटका सम्राट् है और चोरगाँवका स्वामी है तो भी हमको भारतवर्षपर सिकन्दरकी चढाईके समय उसका स्थानीय निवास और नाम बतलाना चाहिये। धात(Dhat)जिसकी राजधानी अमरकोट है; मरुस्थलीके भागोंमेंसे एक भाग था जो प्राचीनकालसे प्रमारोंके अधीन चला आता था। इस देशकी पैंतीस जातियोंमेंसे अग्निकुल वंशकी जातियोंमें सोढ ओमुरू और सुमुरी अधिक संख्यामें पाई जाती थीं और पिछले दोनों नामोंके मिलनेके कारण उत्तरी थलका प्रसिद्ध नाम ओमुरसुमरा पड गया है—और अबतक वह इसी नामसे विख्यात है—यद्यपि कई शताब्दी पूर्व इसका अधिकार उन्हींके हाथमें था।

अरोर जिसके आविष्कारका अभी उल्लेख हो चुका है सिन्धनदीके पार बेखरसे छः मील पूर्व नकशेमें विराजमान है और यह ओमर-सुमरानामक देशमें वर्तमान था ओमुरसुमरा सम्भव है किसी समय अधिक व्यापक शब्द हो, जब कि सुमराजातिके छत्तीस राजाओंका वंश पाँचसौ वर्ष व्यतीत हुए इन देशोंपर राज्य करता था। उनकी शक्ति या प्रभुत्व नष्ट होनेपर और उनके प्राचीन प्रतिस्पर्धी सिन्धा तुम्भा राजाओंको दुबारा राज्य मिलनेपर और कालचक्रके फेरसे इनके भट्टियोंके द्वारा पराजित होनेपर इस देशका नाम भट्टियोह प्रसिद्ध हुआ, परन्तु प्राचीन और प्रामाणिक नाम ओमुरसुमरा अबतक बना है और गडरियोंके छोटे २ गाँव-ओमुरा और सुमरामें रेतकी पहाडियोंके बीचमें अब भी स्थित हैं। उनके बडे भाई सोढाओंका वर्णन करनेके बाद उनका उल्लेख किया जायगा। इन संपूर्ण देशोंमें, मध्य और पश्चिमी राजपूतानेके भट्टियों चावडाओं, सोलंकियों, गिहलौतों और राठौरोंकी बस्तियों या उपनिवेशोंका चिह्न पाते हैं और जहाँ कहीं हम जाते हैं और कोई भी नवीन राजधानी स्थापित की जाती है तो वह हमेशा प्रमर राज्यमें ही आकर पडती है। पृथ्वीत्याना प्रमरकी यह वाक्य राजपूत संसारको लागू करनेसे मैं दुहराता हूँ, मुश्किलसे अतिशयोक्ति पूर्ण होगी।

अरोर या अलोर जैसा कि अब्बुलफजलने लिखा है और प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता इवनहैकलने "महलमें मुलतानकी स्पर्धा या होड करता हुआ" वर्णन किया है, "मारुके नौ भागों" मेंसे एक भाग था और प्रमर जातिके क्षत्री, जिनकी अनेक प्रसिद्ध शाखाओंमें एक सोढा शाखा थी—इसपर शासन करते थे। बेखर या मानसूराका द्वीप (खलीफा अलमुनसूरके लफ्टिनेण्टने ऐसा नामकरण किया) अरोरसे कुछ मील पश्चिमकी तरफ स्थित है और सोढगीकी राजधानी ख्यालकी जाती है जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गया था और यदि हम नामकी सादृश्यताको इस देशके प्राचीन इतिहाससिद्ध राज्यके साथ मिलावें तो हमपर यह आक्षेप नहीं हो सकता है

(१) जातियोंकी सूची और प्रमरोंका वृत्तान्त देखो भाग प्रथम।
(२) फरिश्ता अब्बुल फजल।

कि हमने केवल नातपर विश्वास करके सोढगी और सोढा एक ही है ऐसा कहनेका साहस किया है सोढा राजे रेगिस्तानके पैतृक शासक थे जब कि भट्टी उत्तरसे निकलकर यहां चले आये थे, परन्तु इतिहास इस बातका उल्लेखतक नहीं करता है कि भट्टियोंसे सोढाओंने अरोर और लोडोखाँको छीन लिया या नहीं। यह सम्भव है कि सोढा शाखाके समकालीन या सम्बद्ध होनेके बजाय ओमुर और सुमरा उनके उपभागमात्र हों। यह आवश्यक है कि प्राचीन सिन्ध और इन जातियोंके संक्षिप्त इतिहास वर्णन करनेमें हम फरिश्ता और अबुलफजलका अनुसरण करें। अबुलफजल कहता है "प्राचीनकालमें सेहरीस नामका राजा अलोर राजधानीमें राज्य करता था और इसके राज्यका विस्तार उत्तरमें काश्मीर पश्चिममें मेहरान और दक्षिणमें समुद्रपर्यन्त था। ईरानी सेनाने इस राज्यपर आक्रमण किया। राजा युद्धमें खतरहा और ईरानी फौज प्रत्येक वस्तुको लूटनेके बाद स्वदेशको लौट गयी। रायसाहि राजपुत्र रायसा या (सोढा) राजसिंहासनपर विराजमान हुआ। यह वंश खलीफाके समयतक राज्य करता रहा। जब कि इराकके गवर्नर हिजाजने सन ७१०ई. में महम्मदकासिमको

(१) मैं पाठकोंको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं नाममात्रकी सादृश्यतासे कोई अनुमान या परिणाम नहीं निकालता हूँ जबतक कि स्थानोंसे पूरा २ पता न लग जाय क्योंकि हमने अन्यत्र इस बातका उल्लेख किया है कि प्रसिद्ध राजा पृथ्वीराजको उत्पन्न करनेका गौरव चौहानके महत्वशालीको है, यद्यपि पौर साधारण प्रमर शब्द इसी तरह उच्चारण किया जाता है–और सोढामें अधिक साम्यता है।

(२) कर्नल विग्स अपने अनुवादमें इसको हुलीस (Hallys) लिखते है और उसी स्थानपर इस बातको लिखते हैं कि "प्राचीन मुसलमान लेखकोंने हिंदू नामोंको इतना तोडमरोडकर लिखा है कि वे प्रायः पहिचान भी नहीं पडते हैं, या हम 'हुली' में जो सा शब्द संमिलित किया गया है–हुली सेहटियोंका पुत्र था–उसको हम कदाचित् उसकी जाति–सोढाकी पदवी ख्याल करें। अब्बुलफजलका रायसाही या रायसाके अर्थ (राजा सा) या सोढोंका राजा है। उसी वंशमें दहीर उत्पन्न हुआ था जिसकी राजधानी ८० हिजरीमें (अब्बुलफजल कहता है) अलोर या देविल थी और जिसमें इतिहासवेत्ता भूगोल सम्बन्धी गलती करता है, अलोर या अरोर ऊपर सिंधकी राजधानी है और देवेल (शुद्ध देवल–मंदिर– या तत्ता नीचले सिंधकी राजधानी है। संभव है कि दोनों ही दहीरके अधिकारमें थीं। हम मेवाडके इतिहासमें प्रकट कर चुके हैं कि मुसलमानोंके प्रथम आक्रमणसे मेवाडकी रक्षा करनेवालोंमें एक विदेशी राजा दहीर भी था और हमने यह अनुमान किया था कि यह हमला सिंध प्रदेशको जीतनेके बाद महम्मदकासिमने अवश्य ही किया होगा। बापा चित्तौरका अधिपति, राजा मानमोरीका भानजा था इसलिये कासिमके विरुद्ध चीतौरकी रक्षार्थ शस्त्र उठानेमें दहीरके निर्वासित पुत्रके दो हेत थे। मोरी और भौर सोढा प्रमार वंशकी शाखाएं हैं (देखो भाग प्रथम सूचीपत्र) यह महत्वकी बात है कि हम पाठकोंका ध्यान उस कथनकी तरफ खींचें जो जाबुलिस्तानके हिंदू राजाओंके बीचमें खोरासानके हिजुज (जिसने कासिमको सिंधपर भेजा था)के हलचल मचानेपर अन्यत्र कहींपर किया जा चुका है वास्तवमें कुछ प्रमाण नहीं है परन्तु इससे केवल यह महत्वकी बात सिद्ध होती है कि महम्मदके आनेके पहिले राजपूतोंका राज्य चारों तरफ दूर २ तक फैला हुआ था।—

जिसने हिन्दुराजा दहीरको मारकर विजय प्राप्त की । इसके अनन्तर अनसेरीका वंश इस देशपर शासन करता रहा फिर सुमराके वंशकी ध्वजा फहराई और अन्तमें सीमा वंशके हाथमें इस राज्यकी शासन डोर गयी, जिन्होंने अपनेको जमशेदका वंशज समझकर जामकी उपाधि धारण की । फरिश्ता भी इसी प्रकारका वर्णन करता है ' महमूदकासिमके मृत्युके अनन्तर एक जातिने जो अनसेरीके वंशमें होनेका दावा करती है, सिन्धमें राज्य स्थापन किया, इसके बाद जमीदारोंने राज्यको अपने अधिकारमें किया और पांचसौ वर्षतक स्वतंत्रतापूर्वक शासन किया । सुमराओंने सुमना नामके वंशका राज्य उलट दिया । जिनका सरदार जामकी पदवी धारण करता था; यूनानी और ईरानी लेखकोंके अशुद्ध लेखके कारण इन जातियोंके सादृश्यताको प्रस्थापित करनेकी कठिनताका उदाहरण फारिस्ताके दूसरे भागमें इसी वंशके वर्णनमें पाया जाता है । फरिश्ता इस वंशको सोमुना और अब्बुल फजल सुमा कहता है। "साहनाकी जाति अप्रसिद्ध कुलोत्पन्न मालूम पडती है और सिन्ध-देशमें बेखर और तत्ताके बीचकी भूमिपर प्रथमतः निवास करती थी और जमशेदके वंशज होनेकी बात बताती है। इस जातिके निवासस्थानका पता ठीकर लिखनेके कारण हम उसकी अक्षरकी अशुद्धि क्षमा करते हैं, सोमुना सेहना या सीमा लिखे जानेपर भी यह महान् यदुवंशकी सुम्मा या सम्मा जाति है, जिसकी राजधानी सुम्माका कोट या सुम्मा नगरी था जिसको यूनानी लेखकोंके निकट लगता है जिसमें मल्लिनाथका मंदिर बना हुआ है जैसा कि पहिले कह आये हैं; राठौरोंके अब कुलरक्षक देव हैं। मेंहवो घरानेके दूसरे संबन्धीकी जागीर तिलवारा है और भलोत्रा, जिसपर राज्यका अधिकार होना चाहिय, मारवाडके प्रसिद्ध सरदार अहवाके पास पूर्वकालमें बतौर जागीरके थी और शायद अब भी हो । परन्तु भलोत्रा आर सिन्द्री दूसरे ही बातके लिये प्रसिद्ध है। क्योंकि दुनेरकी रियासतके सहित ये दोनों दुर्गादासकी जागीरेंथीं जो मरुक इतिहासमें सबसे बढकर विख्यात पुरुष हैं और जिसके वंशज अब भी सिन्द्रीपर अधिकार रखते हैं । मेहवोंके जागीरकी वार्षिक आय पचास हजार रुपया कूती जाती है जिसमें यह सब प्रदेश शामिल है । पटैल (या सरदार) अपने आश्रित जनोंके साथ कभी२दरबारमें उपस्थित होते हैं परन्तु विपत्ति समय या कठिन प्रसंगके सिवाय वे राज्यकी सेवा करनेके लिये बाध्य नहीं हैं वे विशेषकर सीमाकी रक्षाके लिये बुलाये जाते हैं जिस कारण वे सीमेश्वर नामसे पुकारे जाते हैं या प्रसिद्ध हैं। इंदुवती- यह प्रदेश, इंदुजातिके राजपूतोंके

---उत्तम हस्तलिखित प्रतियोंके नाश हो जानेसे पूर्वीय साहित्यको जो हानि हुई है उसकी पूर्ति कठिनतासे हो सकती है ये प्रतियां अनेक वर्षोंके परिश्रमसे कर्नल ब्रिग्सने एकत्रित की थी और उनका अभिप्राय प्राचीन मुसलमानोंके कारगुजारीका साधारण इतिहास लिखनेका था ।

(१) वह पिछले वंशके सत्रह राजाओंके नामकी सूची देता है । ग्लेडविनका आईन अकबरी-का अनुवाद भाग सफा १२२.

(२) देखो ब्रिग्सका फरिश्ता भाग ४ सफा ४११-४२२.

बसनेके कारण, जो पुरिहारोंकी प्रसिद्ध शाखा है, (मंडोरके प्राचीन राजे थे) इन्दुवती कहलाता है और यह भंलोत्रासे उत्तरकी ओर और जोधपुरकी राजधानीसे पश्चिमकी तरफ फैला हुआ है और गोगाका थल इसको उत्तरकी तरफसे घेरे हुए है। इन्दुवतीका थल करीब २ तीस कोशकी परिधिमें है।

गोगादेवका थल—गोगाका थल जो चौहानोंके वीररसपूर्ण इतिहासमें प्रसिद्ध है। इन्दुवतीके ठीक उत्तरमें है और एक ही वर्णन दोनोंके लिये लागू हो सकता है। इस प्रदेशमें रेतके टीले बहुत ही ऊंचे हैं। आबादी बहुत ही कम है,चन्द गांव पाये जाते हैं। पानी सतहसे बहुत दूरपर है और बडे २ जंगलोंसे परिपूर्ण है। "इल री के" प्रसिद्ध नगर थोब Thobe फूलसुन्द और बीमाखिर हैं। यहांके लोग "टंको" में बरसाती पानी एकत्र करते हैं जिसको वे बडी ही किफायतके साथ खर्च करते हैं और अकसर पानीके सड जानेसे उन्हें रतौंधकी बीमारी उत्पन्न हो जाती है।

तिरूरोका थल गोगादेव और जैसलमेरकी वर्त्तमान सीमाके बीचमें स्थित है और पूर्वकालमें यह जैसलमेर राज्यके अधिकारमें था। पोकर्न सिर्फ तीरूरोका, वरन मरुस्थलीके दो प्रसिद्ध राजधानियोंके बीचमें स्थित संपूर्ण मरुभूमिकी राजधानी है। इस थलका दक्षिणी हिस्सा उस भागसे भिन्न नहीं है जिसका वर्णन अभी हो चुका है परन्तु उत्तरी हिस्सेमें और अधिकतर पोकर्न नगरके चारों तरफ सोलहसे तीस मीलतक नीची असंयुक्त डीली चट्टानोंकी श्रेणियां पायी जाती हैं और यह उसी श्रेणीका हिस्सा है जिसपर भाटियोंकी राजधानी बनी हुई है और इन चट्टानोंकी श्रेणियोंके कारण इस भूमिका नाम मेरे या चट्टानी या, चन्द्रानी या चन्द्राव युक्त पड गया है। 'तीरूरो' 'तीर' शब्दसे निकला है जिसका अर्थ, [illegible] अद्रिता या झरना है जो इससे 'रो' निकलते हैं।

पोकर्न नगर जिसमें सलीमसिंह निवास करते हैं (जिनके वंशका हम सविस्तर वर्णन मारवाडके इतिहासमें कर आये हैं) दो हजार घरोंकी बस्ती है और पत्थरकी दीवालसे चारों तरफसे परिवेष्टित है और किलेपर पूर्वकी तरफ कितनी ही तोपें चढी हुई हैं। नगरसे पश्चिमकी तरफ इस देशके लोगोंकी केवल बरसातमें ही बहते हुए पानीका आश्चर्यजनक वा अद्भुत दृश्य दिखाई पडता है, क्यों कि रेत शीघ्र ही इस पानीको सोख लेती है। कुछ लोग कहते हैं कि यह पानी [illegible] "सर" से आता है [illegible] डके झरनों या चश्मोंसे आता हुआ बतलाते हैं, कुछ भी क्यों न हो पर यहांके निवासी उसके प्रवाहमार्गमें कुण्ड खोदकर सुस्वादु और प्रचुर परिमाणमें जलको प्राप्त करते हैं। पोकर्नका सरदार चौबीस गांवोंके अलावा [illegible] और [illegible] भूमिका स्वामी है जिसकी कीमत करीब २ लाख रुपयोंकी है। दूसरा और [illegible]

(१) यहांके निवासी कहा करते हैं कि इस रोगकी उत्पत्ति एक [illegible] द्वारा होती है, जो घोडेके आंखमें भी हो जाती है, मैंने घोडेके आंखसे [illegible] देखा है। यहांके लोग उसको [illegible] के साथ [illegible]

जिसने हिन्दुराजा दहीरको मारकर विजय प्राप्त की। इसके अनन्तर अनसेरीका वंश इस देशपर शासन करता रहा फिर सुमराके वंशकी ध्वजा फहराई और अन्तमें सीमा वंशके हाथमें इस राज्यकी शासन डोर गयी, जिन्होंने अपनेको जमशेदका वंशज समझकर जामकी उपाधि धारण की। फारिश्ता भी इसी प्रकारका वर्णन करता है 'महमूदकासिमके मृत्युके अनन्तर एक जातिने जो अनसेरीके वंशमें होनेका दावा करती है, सिन्धमें राज्य स्थापन[१] किया, इसके बाद जमीदारोंने राज्यको अपने अधिकारमें किया और पांचसौ वर्षतक स्वतंत्रतापूर्वक शासन किया। सुमराओंने सुमना नामके वंशका राज्य उलट दिया। जिनका सरदार जामकी पदवी धारण करता था; यूनानी और ईरानी लेखकोंके अशुद्ध लेखके कारण इन जातियोंके सादृश्यताको प्रस्थापित करनेकी कठिनताका उदाहरण फारिस्ताके दूसरे भागमें इसी वंशके वर्णनमें पाया जाता है। फारिश्ता इस वंशको सोमुना और अब्बुल फजल सुमा कहता है। "साहनाकी जाति अप्रसिद्ध कुलोत्पन्न मालूम पडती है और सिन्ध-देशमें बेखर और तत्ताके बीचकी भूमिपर प्रथमतः निवास करती थी और जमशेदके वंशज होनेकी बात बताती है। इस जातिके निवासस्थानका पता ठीकर लिखनेके कारण हम उसकी अक्षरकी अशुद्धि क्षमा करते हैं, सोमुना सेहना या सीमा लिखे जानेपर भी यह महान् यदुवंशकी सुम्मा या सम्मा जाति है, जिसकी राजधानी सुम्माका कोट या सुम्मा नगरी था जिसको यूनानी लेखकोंके निकट लगता है जिसमें मल्लिनाथका मंदिर बना हुआ है जैसा कि पहिले कह आये हैं; राठौरोंके अब कुलरक्षक देव हैं। मेहवो घरानेके दूसरे संबन्धीकी जागीर तिलवारा है और भलोत्रा, जिसपर राज्यका अधिकार होना चाहिय, मारवाडके प्रसिद्ध सरदार अहवाके पास पूर्वकालमें बतौर जागीरके थी और शायद अब भी हो। परन्तु भलोत्रा आर सिन्द्री दूसरे ही बातके लिये प्रसिद्ध है। क्योंकि दुनेरकी रियासतके सहित ये दोनों दुर्गादासकी जागीरेंथीं जो मरुक इदिहासमें सबसे बढकर विख्यात पुरुष है और जिसके वंशज अब भी सिन्द्रीपर अधिकार रखते हैं। मेहवोंके जागरिकी वार्षिक आय पचास हजार रुपया कूती जाती है जिसमें यह सब प्रदेश शामिल है। पटैल (या सरदार) अपने आश्रित जनोंके साथ कभी२दरबारमें उपस्थित होते हैं परन्तु विपत्ति समय या कठिन प्रसंगके सिवाय वे राज्यकी सेवा करनेके लिये बाध्य नहीं हैं वे विशेषकर सीमाकी रक्षाके लिये बुलाये जाते हैं जिस कारण वे सीमेश्वर नामसे पुकारे जाते हैं या प्रसिद्ध हैं। इंदुवती- यह प्रदेश, इंदुजातिके राजपूतोंके

—उत्तम हस्तलिखित प्रतियोंके नाश हो जानेसे पूर्वीय साहित्यको जो हानि हुई है उसकी पूर्ति कठिनतासे हो सकती है ये प्रतियां अनेक वर्षोंके परिश्रमसे कर्नेल ब्रिग्सने एकत्रित की थी और उनका अभिप्राय प्राचीन मुसलमानोंके कारगुजारीका साधारण इतिहास लिखनेका था।

(१) वह पिछले वंशके सत्रह राजाओंके नामकी सूची देता है। ग्लैडविनका आईन अकबरी-का अनुवाद भाग सफा १२२.

(२) देखो ब्रिग्सका फरिश्ता भाग ४ सफा ४११-४२२.

वसनेके कारण, जो पुरिहारोंकी प्रसिद्ध शाखा है, (मंडोरके प्राचीन राजे थे) इन्दुवती कहलाता है और यह भंलोत्रासे उत्तरकी ओर और जोधपुरकी राजधानीसे पश्चिमकी तरफ फैला: हुआ है और गोगाका थल इसको उत्तरकी तरफसे घेरे हुए है। इन्दुवतीका थल करीब २ तीस कोशकी परिधिमें है।

गोगादेवका थल–गोगाका थल जो चौहानोंके वीररसपूर्ण इतिहासमें प्रसिद्ध है। इन्दुवतीके ठीक उत्तरमें है और एक ही वर्णन दोनोंके लिये लागू हो सकता है। इस प्रदेशमें रेतके टीले बहुत ही ऊंचे हैं। आबादी बहुत ही कम है, चन्द गांव पाये जाते हैं। पानी सतहसे बहुत दूरपर है और बडे २ जंगलोंसे परिपूर्ण है। "इस रो के" प्रसिद्ध नगर थोब Thobe फूलसुन्द और बीमासिर हैं। यहांके लोग "टंको" में वरसाती पानी एकत्र करते हैं जिसको वे बडी ही किफायतके साथ खर्च करते हैं और अकसर पानीके सड जानेसे उन्हें रतौंधकी बीमारी उत्पन्न हो जाती है।

तिरूरोका थल गोगादेव और जैसलमेरकी वर्त्तमान सीमाके बीचमें स्थित है और पूर्वकालमें यह जैसलमेर राज्यके अधिकारमें था। पोकर्नन सिर्फ तीरूरोका, वरञ्च मरु-स्थलीके दो प्रसिद्ध राजधानियोंके बीचमें स्थित संपूण मरुभूमिकी राजधानी है। इस थलका दक्षिणी हिस्सा उस भागसे भिन्न नहीं है जिसका वर्णन अभी हो चुका है परन्तु उत्तरी हिस्सेमें और आधिकतर कोकर्न नगरके चारों तरफ सोलहसे बीस मीलतक नीची असंयुक्त ढीली चट्टानोंकी श्रेणियां पायी जाती हैं और यह उसी श्रेणीका हिस्सा है जिसपर भट्टियोंकी राजधानी बनी हुई है और इन चट्टानोंकी श्रेणियोंके कारण इस भूमिका नाम मेरे या चट्टानी या चन्दानी या चन्द्रान युक्त पड गया है। 'तीरूरो' 'तीर' शब्दसे निकला है जिसका अर्थ, गीलापन झरनेकी अद्रिता या झरना है जो इससे 'रो' निकलते हैं।

पोकर्न नगर जिसमें सलीमसिंह निवास करते हैं (जिनके वंशका हम सविस्तर वर्णन मारवाडके इतिहासमें कर आये हैं) दो हजार घरोंकी बस्ती है और पत्थरकी दीवालसे चारों तरफसे परिवेष्टित है और किलेपर पूर्वकी तरफ कितनी ही तोपें चढी हुई हैं। नगरसे पश्चिमकी तरफ इस देशके लोगोंकी केवल वरसातमें ही बहते हुए पानीका आश्चर्यजनक वा अद्भुत दृश्य दिखाई पडता है, क्यों कि रेत शीघ्र ही इस पानीको सोख लेती है। कुछ लोग कहते हैं कि यह पानी कनोडके "सर" से आता है कुछ पहाडके झरनों या चश्मोंसे आता हुआ बतलाते हैं; कुछ भी क्यों न हो पर वहांके निवासी उसके प्रवाहमार्गमें कुण्ड खोदकर सुस्वादु और प्रचुर परिमाणमें जलको प्राप्त करते हैं पोकर्नका सरदार चौवीस गाँवोंके अलावा लूनी और बान्दी नदियोंके बीचमें स्थित भूमिका स्वामी है जिसकी कीमत करीब २ लक्ष रुपयेकी है। दूनरा और मांजिल जो

---

(१) यहांके निवासी कहा करते हैं कि इस रोगकी उत्पत्ति एक छोटेसे तागेके समान कीडेके द्वारा होती है, जो घोडेके आंखमें भी हो जाता है, मैंने घोडेके आंखमें इसको बडे ही वेगसे फिरते देखा है। यहांके लोग उसको छेदकर कीचरके साथ या आंसूके साथ निकाल देते हैं।

राजभक्त दुर्गादासकी जागीरें थीं। अब देशद्रोही सलीमके अधिकारमें है। पोकर्नसे तीन कोश उत्तरकी तरफ रामदेवरा नामक गांव है–रामदेवका मंदिर होनेके कारण गाँवका नाम रामदेवरा पड गया है जहाँ भादोंके महीनेमें मेला लगता है जिसमें चारों-तरफका आदमी आता है। कराचीबन्दर यहां मुलतान शिकारपुर और कच्छके व्यापारी यहांपर भिन्न २ देशोंकी वस्तुओंका विनिमय करते हैं। घोडे ऊँट बैल यहां अधिक संख्यामें पाले जाते हैं। परन्तु सन् १८१३ ई० के अकाल अराजकता राजा मानके गद्दीपर बैठनेके समयसे चली आई हुई और राठौरों और भट्टियोंकी असीम कलहने इस अभिलषित व्यापारको बन्द कर दिया है जिसके कारण कभी २ मरुभूमिके मध्यमें आनन्द और कर्मण्यताका दृश्य दिखलाई पडता था। खावरका थल यह (थल) जो जैसलमेर और बरमेरके बीचमें स्थित है और गिरोपके पास घातके मरुभूमिसे जाकर संलग्न होता है, मारवाडके सुदूरकोणमें स्थित है। मनुष्यसंख्या कम होनेपर भी अनेकों विस्तीर्ण स्थान हैं जो इस मृत्यु (यमालय) में नगर पदवी धारण करनेके योग्य हैं। इनमेंसे शिव और कोटरा बहुत बडे हैं और उन पहाडियोंकी चोटियोंपर स्थित हैं जो भुजसे जैसलमेरतक पायी जाती हैं। शिवमें तीनसौ घर हैं और कोटरामें पांच सौ ये दोनों नगर राठौर सरदारोंके हाथमें हैं जो जोधपुरके राजाकी नाममात्रकी अधीनता स्वीकार करते हैं। कुछ काल पूर्व अन्हलवाडा पत्तन और इस देशके बीचमें व्यापार होता था, परन्तु सेहरीसे डांकुओंने इतने काफिलाओंको लूटा कि आखिरकार यह व्यापार बन्द ही हो गया। इस स्थलमें असंख्य भेडें और भैंसोंके चरनेके लिये हरित भूमि मौजूद है।

मल्लिनाथका थल या बरमेर–पूर्वकालमें इस सम्पूर्ण देशमें मल्लि या मालिनी जाति निवास करती थी जिनको यद्यपि कुछ लोग राठौर वंशका बतलाते हैं तो भी निःसन्देह ये चौहान हैं और उसी वंश या कुलके हैं जिस कुलको जुनाचोटनके स्वामीने उजागर किया है। पिछले अकालके पडनेके पहिले बरमेर बारह सौ घरोंकी बस्ती कूती गयी थी, जिसमें सब जातियाके मनुष्य निवास करते थे और चौथाई आबादी सांचोर ब्राह्मणोंकी थी। बरमेर उसी पहाडीपर स्थित है जिसपर शिव—कोटरा बसते हैं और यह पहाडी यहांपर दो सौसे तीन सौ फीटतक ऊंची है। शिवसे बरमेरतक एक बडा समतल मैदान चला गया है जिसमें कहीं २ पर नीचे रेतके 'रीते' पाये जाते हैं जो अच्छी ऋतुमें खानेके लिये काफी अन्न पैदा करते हैं। पद्मसिंह बरमेर सरदार उसी वंशकी शोभाको बढाते हैं जिस वंशमें शिवकोटरा और जैसोल नरेशोंने जन्म ग्रहण किया है; वे सब जैसोल नरेशके वंशज हैं और पद्मसिंहके जागीरमें चौतीस गांव हैं। पूर्वकालमें (दानी) annil यहां यात्रियोंसे कर वसूल करनेको नियत किया गया था; परन्तु सेहरासकी लूटने इस पदको वेतनयुक्त या विना कामका कर दिया है और बरमेर सरदार जो कुछ वसूल कर पाते हैं उसको स्वयं ही ले लेते हैं वे भट्टियोंसे जिनसे यह प्रदेश जीता गया था सलाह करना अपने अधिपतिकी अपेक्षा अधिक उपयोगी समझते हैं, जिसके अधिकारियोंसे वे प्रायः युद्ध करते हैं विशेष कर जब हिंदकी

मांग उनपर होती है। ऐसे अवसरोंपर वे मरुभूमिके सेहरीसोंसे मदद लेना घृणास्पद नहीं समझते हैं इस संपूर्ण देशमें लोग अच्छी जातिके ऊंट पालते हैं जिनकी भारतके संपूर्ण बाजारोंमें अधिक मांग रहती है।

खेरधूर-इन राज्योंके इतिहासमें अनेक बार खेरका उल्लेख किया गया है। राठौरोंने पहिले पहिलगोहिला जातिको निकालकर इस दूरस्थित कोणमें अपने रहनेका निवासस्थान बनाया था। गोहिल जाति इस स्थानको परित्याग करके खम्भातकी या आखातकी तरफ चली गयी थी और अब गोगा और भावनगरके स्वामी हैं और ऊंटोंपर काफिलाको लूटनेके बजाय हिन्दुमहासागरमें अति गर्हित दासोंका व्यापार करते हुए उन्होंने सोफलाके स्वर्णतटतक यात्रा की। यह जानना कठिन है कि वे खेरकी भूमिको किस अक्षांश रेखापर नियत करते थे, जो गोहिलोंके समयमें लूनीके निकटतक चली गयी थी और न यह आवश्यक है जरा २ सी नुक्ताचीनीमें हम उलझे रहे क्योंकि वर्णन करनेके अभिप्रायसे ही हमने उन नामोंका व्यवहार किया है बहुत सम्भव है कि वह संपूर्ण देश इसमें शामिल हो, जिसमें बादेक सलिलनी या चौहान जाति निवास करती थी। जिन्होंने जुनाचोटनकी नीव डाली थी; इसलिये हम इसको खेरधूरमें संमिलित करेंगे। राजधानी खेरल मारुके नव दुर्गोंमेंसे एक दुर्ग था, जब कि प्रमार उसके अधीश्वर थे। आज वह ह्रास होते २ गांवसा रह गया है, जिसमें चालीस घरसे अधिक नहीं हैं और चारों तरफसे 'श्यामरंगकी' पहाडियोंसे परिवेष्टित है जो भुजसे आनेवाली श्रेणीका एक भाग है। जुनाचोटन या प्राचीन चोटन संयुक्त नाम होनेपर भी पृथक् २ दो स्थान हैं और लोग उनको अति प्राचीन और हप्प राजकी राजधानियां बतलाते हैं। वंशपरम्परागतवाली इस विषयमें चुंप है कि हथराज क्या था। हम केवल इतना ही जानते हैं कि उसके राजे चौहान थे। उन नगरोंके प्राचीन चिह्नके देखनेसे मालूम पडता है कि किसी समय ये बडे २ नगर होंगे और विशेषकर जुना प्राचीन चारों तरफसे पहाडियोंसे परिवेष्टित होनेके कारण इसमें भीतर घुसनेके लिये पूर्वकी तरफ सिर्फ एक छिद्र या मार्ग है, जिसके मुखपर एक छोटासा किला भग्नावस्थामें अब भी विद्यमान है। इसी प्रकार पर्वतके शिखरपर दो और किलोंके चिह्नमात्र दिखलाई पडते हैं।

भग्नावशेष मंदिर। बन्द बावडी प्राचीन कालमें इस नगरकी विस्तीर्णताकी साक्षी देती हैं। जिसमें बारह सहस्र मकान बतलाये जाते हैं। अब इस स्थानपर दो सौसे अधिक झोपडे नहीं हैं जब कि चोटन अब केवल छोटासा गांवमात्र रह गया है। धोरिमनमें

---

(१) बहुत सम्भव है कि जिस वृक्षको खेर और धर (भूमि) कहते हैं उस वृक्षकी मरुभूमिमें विपुलता होनेके कारण इसका यह नाम पडा है यह 'खेरलू' भी कहलाता है, परन्तु 'खैराल' खेरका स्थान अधिक उपयुक्त नाम है इन प्रदेशोंमें यह जडी बडी ही लाभदायक है। इसके शिकुडनेवाले छिलकेको जिसकी शक्ल लिबरनम (Liburnam) से मिलती है वे भोजनके काममें लाते हैं। इसका गोंद व्यापारके लिये एकत्र किया जाता है, ऊँट उसकी शाखाओंको खाते हैं और उसकी लकडी झोपडे बनानेके काममें लायी जाती हैं।

जो उस पर्वतश्रेणीके दूसरे शिरेपर स्थित है जिसपर जुना और चोटन विद्यमान है एक अद्भुत पूजनीय स्थान है जहां श्रावण शुदी तीजको यहांके निवासी एकत्र होते हैं । रक्षक सन्ट अलनदेवके नामसे प्रसिद्ध हैं, जिनके द्वारा या प्रभावसे मल्लिनी एक महान् विजय प्राप्त करनेको समर्थ हुए थे।अनलदेव पर्वतके शिखरपर एक श्रेणीमें घोडेके मुखकी आकारवाली कुछ पीतलकी मूर्तियाँ रक्खी हुई हैं जिनकी पूजा की जाती है इन मूर्तियों-से चाहे भविष्यत्में यह बात सिद्ध हो जाय कि मल्लिनोंके मध्य एशियाकी अश्ववंशकी एक शाखा-पूर्वपुरुष सिंदियन थे, परन्तु इस समय अनुमान या अटकलके शिवाय इस बातके समर्थनमें कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है । नागर-गुरु वरमेर और नागर गुरुके वीचमें लूनी नदीपर एक अपार अविच्छिन्न थल या विशेष करके 'रो' स्थित है जिसमें खैर केजरी करील केप फोकके घने जंगल हैं,जिसके गोंद और बेरसे दक्षिणी जिलोंके कोली और भील लाभ उठाते हैं । नागर और गुरु लूनीके किनारे दो बडे २ नगर हैं सो वह चौहानराजकी सीमापर स्थित है और पूर्वकालमें दोनों इसके भाग थे । इस स्थानपर हम मारवाडके पश्चिमी थलोंका वर्णन समाप्त करते हैं एक तो प्रकृतिने स्वयं ही मारवाडको ऊसर या धनधान्य विहीन रचा है, तिसपर संवत् १८६८ के जिसको तीन वर्ष व्यतीत हो चुके हैं-भयंकर दुर्भिक्षने जिसने संपूर्ण देशोंमें हाहाकार मचा दिया था, मारवाडकी दुरवस्थाको अन्तिम सीमातक पहुँचा दिया था । गत तीस वर्षोंसे पूर्वोक्त वर्णित अव्यवस्थाका राजधानीमें अधिकार होनेके कारण ये दूरस्थित देश मरुभूमिकी जातियों अथवा वहांके लुटेरे स्वामियोंके पूर्णतया हाथमें हैं और वे चाहें जो कुछ करें इसके लिये कुछ भी अवरोध नहीं है ।

जब हम इस बातका विचार करते हैं तब हमारे आश्चर्यका वारापार नहीं रहता है कि मनुष्य कैसे ऐसे देशमें अपने प्राणोंकी रक्षा कर सकता है, जिसमें चन्द नमककी झीलोंके और ऊंटोंके लिये सुन्दर चरागाहोंके सिवाय ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिससे उसके मालिक कुछ लाभ उठा सकें । ये चरागाह विशेषकर दक्षिणी प्रदेशोंमें हैं जहांके ऊंटोंसे बढकर ऊंची जातिका ऊंट मरुभूमिमें नहीं पैदा होता है ।

---

(१) अब सन् १८१४ है । मैं इन प्रदेशोंसे मेरी खोज करनेवाली मंडलियोंमेंसे एकके लौटनेके वाद ही मैं उस दिनके भ्रमणवृत्तांतकी पुस्तकोंसे लिख रहा हूँ । मेरी मंडली अपने साथ थातके निवासियोंको लायी थी जो अपनी सीधी वोलीमें कहा करते थे कि मरुभूमिका नाप उनके हस्तामलक है, क्योंकि वे तीसवर्षतक कासिदका काम करनेमें नियत किये गये थे।वादको उनमेंसे दो अपने कुटुम्बको देशसे जाकर ले आये थे और पांच वर्षसे अधिक मेरे आश्रय या सेवामें बने रहे । वे नमकहलाल लायक और ईमानदार थे और मेरा बताया हुआ डाककी जमादारीका काम बडी ही योग्यतासेसम्पादन करते थे और यह काम मेरे सुपुर्द बहुत दिनतक रहा जब कि शिन्दे (सेंधिया) के दरवारमें नियत था, और किसी समय जबकि काम अधिक था भारतके भयानक और अपरिचित प्रदेशोंमें होकर गंगाके किनारेसे वंबईतक पत्र भेजने पडते थे । परन्तु ऐसे खोजके कामोंमें जिन आदमियाको मैंने सिखाया था, उनकी सहायतासे मुझको ऐसी कोई आपत्ति नहीं मिली जिसको मैं पार न कर सका ।

चोर—क्योंकि अमरकोट सोढाओंसे छीन लिया गया है इसलिये निर्वासित राजा जो अब भी रानाकी उपाधि धारण करता है अपनी प्राचीन राजधानीसे पन्द्रह मील ईशान कोणकी तरफ चोर नगरमें निवास करता है। जिस वंशके पूर्वपुरुषोंने सिकन्दर मेनन्डेर (Menander) और कामिनका सामना किया और भारतवर्षके सिंहासनाच्युत अन्यान्यत प्राप्त हुए, हुमायूँकी रक्षा की, आज इन्होंका वंशज सिपाहियों लिये हुए घवसे या देहेजसे अपनी प्राणरक्षा करता है, या अपने मरुभूमिस्थित राज्यके चन्द्रभूमिके टुकडोंकी उपजसे जीवन निर्वाह करता है। जिनको सिन्धके राजाओंने अपनी ओरसे पनको दे रक्खा है। उसके आठ भाई हैं जो जीविका प्राप्त करनेको कुछ भी उद्योग नहीं करते हैं और वे इन राज्योंके कोषकी न्यूनताको पूर्ण करनेवाली लूटसे अपनी उदरपालना करते हैं।

सोढा और झारीजा, हिन्दू मुसल्मानोंको जोडनेवाली जंजीर है, क्योंकि हम जितना ही पश्चिमकी तरफ बढते हैं उतनी ही अधिक शिथिलता या ढिलाई राजपूतोंके आचार विचारमें दृष्टि आती है तो भी एकमात्र स्थानकी अपेक्षा कोई दूसरा ही अधिकतर प्रबल कारन है जिसने उनके हृदयमें जातीय अधिकारोंसे हीन करानेवाली भावनाको उत्पन्न किया है जिसके कारन सोढा और सिन्धी परस्पर वैवाहिक सम्बन्धके बन्धनमें पडते हैं क्षुधा ही एकमात्र कारण है और कोई पुरुष इस बातसे इन्कार नहीं कर सकता है कि मनुजीकी आज्ञाओंकी अपेक्षा उसका प्रभाव अधिक बलशाली है। प्रत्येक तीसरे वर्ष दुर्भिक्ष पडता है और जिनके पास उससे लडनेका सन्मान नहीं होता है वे अपने पडोसियोंकी शरणमें प्राप्त होते हैं और विशेष कर सिन्धुकी घाटियोंमें भाग जाते हैं प्रत्युपकारमें वे अपने प्राण बचानेवालोंको अपनी कन्याका हाथ पकडा देते हैं, परन्तु वे अपनी प्राचीन रीति अब भी इस दृढताके साथ पालन करते हैं कि विवाहिता स्त्रीको फिर अपने घरमें नहीं आने देते हैं, या ग्रहण नहीं करते हैं। अपनी कन्याएँ मीरगुलामअली मीर सोहराव और दादरसरदार खोसाको देकर सोढाओंके वर्त्तमान राना दूसरोंके लिये उदाहरणस्वरूप बन चुके हैं, इसलिये जैसलमेर वह परकरके राजे—रानाके भाई—यद्यपि सोढा राजकुमारीका पाणिग्रहण करना स्वीकार कर लेंगे (क्योंकि उनको उसकी लोहूकी पवित्रतापर विश्वास है) तो भी बदलेमें अपनी कन्या रानाको नहीं देंगे क्योंकि संभव है उसकी संतान बलौचकी अन्तःपुरकी शोभाको बढावें। परन्तु मारवाडके राठौर न अपनी कन्या घातको देंगे और न उसकी कन्या लेंगे। इस देशकी स्त्रियां अपनी सुन्दरताके लिय प्रसिद्ध होनेके कारण व्यापार—वैवाहिक व्यापारकी वस्तु समझी जाती हैं और यह कहा जाता है कि (घतियानी) की सुन्दरताकी चर्चा, यदि सिन्धीके कानोंतक पहुँचती है तो वह उसके पिताके पास उतना अन्न भेज देता है जितना वह उसके बदलेमें लेना स्वीकार करता है और सौदा पट जाता है।

हम यहांपर सोढा जातिकी रीति व्यवहार या दूसरी ही वैशिष्ट्य बातोंका अधिक वर्णन न करेंगे यद्यपि हम इस लेखके अन्तमें इस देशकी जातियोंका सामान्य वर्णन

करते हुए फिर सोढाओंकी रीतिका वर्णन कर देंगे । जातियां–भिन्न २ जातियां ही मरुभूमि और सिन्धकी घाटीमें रहनेवाली नवीन खोज करनेवालोंके लिये बडी भारी सामग्री उपस्थित कर देंगी और संभव है कि इस खोजमें कुछ महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक बातोंका पता लग जाय अनुसंधानकर्त्ता उन जातियोंकी वंशावलीमें जिन्होंने इसलाम धर्मको स्वीकार कर लिया था, उन नामोंका पता लगावेगा जो एक समय इतिहासमें प्रसिद्ध थे परन्तु अब नवीन धर्मरूपी चादरसे ढके हुए हैं और संभव है कि वह उन नामोंकी मददसे उनकी ऐतिहासिक उत्पत्तिको ढूंढ निकाले । अनुसंधानकर्त्ता सोढा कहीं और मालिनी जातिको पावेगा जो इतिहास, स्थान और नाममात्रकी सादृश्यताके कारण इस बातका अनुमान करनेको बहुत जगह देती है कि सोदगी, काठी और मालिनीके वंशज हैं जिनके पूर्वपुरुषोंने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ जाते हुए सिकन्दरका सामना किया था, गेटी या यूतीके टिड्डी दलके अलावा जिनमेंसे बहुतेरोंने बलौचकी साधारण पदवीको धारण कर लिया है या प्राचीन खास–दूसरी पदवी नहीं है–नूमरी पदवीको अबतक बचाये हुए हैं, जब कि दूसरोंने प्राचीन 'जहित' नामको अबतक जीवित रख छोडा है । हमारे पास जोहिया और डाहिया वंशके विशेष चिह्न मौजूद हैं जिनके बारेमें जैसलमेरके इतिहासमें और अन्यत्र स्थानपर भी बहुत कुछ कहा जा चुका है, जो गेटी जित और हूनके सहित प्राचीन भारतकी "छत्तीस राजपूत वंश" में शामिल है ये बाराह और लोहानाके सहित कौरवका प्रसिद्ध नाम भारतमें कृष्णके शत्रुको अबतक जीवित रखते हुए धारण करते हैं । बाराह और लोहाना जो कई शताब्दी पहिले अगणित दलसे पंजाबमें आये थे, अब "यमालय" में केवल अल्पसंख्यामें दिखलाई पडेंगे । सेहरी–हमारे पश्चिमी मरुभूमिका बडा लुटेरा मनुष्य समाजका शत्रुके लूट और बाद उसकी आदतोंके विषयमें बहुत कुछ कहा जा सकेगा । परन्तु हम पहिले पहिल उन जातियोंका वर्णन करेंगे जिनमें कुछ भी हिन्दूपन शेष है और बाद करके उनकी विशिष्टताओंका कथन किया जायगा । भट्टी, राठौर, जोधा, चौहान, मालिनी, कौरव, जोहा, सुलतान, लोहाना, अरोरा, खुमरा, सिन्दिल, मैसुरी, वैष्णवी जाखर शैगया अशैग पुनिदा ।

मुसलमानोंमें सिर्फ दो जातियां कुलोरा और सेहरी हैं जिनकी उत्पत्तिमें कुछ संदेह है और दूसरी जातियां जिनके नाम हम गिनावेंगे न्याद है अर्थात् राजपूत या हिन्दुओंकी दूसरी जातियां थीं जिन्होंने स्वधर्मको त्यागकर किसी कारणवश इसलाम धर्मका स्वीकार किया था, जूत, राजूर, ओमुरा, सुमरा, मेर मोर या मोहर बलौच, लुमरिया, यालूका, सुमैचा, मंगुलिया, बागाग्रिया, दाहिया, जोहिया, कैरो, मगुरिया, ओदुर, बेरोबी बाबुरी, ताबुरी, चरेन्दी, खोसा, सुदानी, लोहाना इन जातियोंकी आदतोंका बयान करनेके पहिले हम न्यादकी एक विशिष्टताको कहना चाहते हैं जिन्होंने अपने

---

(१) न्याद नवीन शब्द है और ख्याल करता हूँ कि याद (प्रथम) और नौ (नवीन) के संयोगसे बना है ।

लटकता रहता है जो शत्रुओंको घायल करने या गोस्तके टुकडे २ करनेके काममें आता है, कुछके पास बन्दूक होती है, परन्तु प्राचीन साधारणता आक्रमण करनेका शस्त्र है जिसके चलानेमें वे बहुत ही प्रवीण या कुशल होते हैं उनका पहिनावा भट्टी और मुसलमानोंसे मिलता है, परन्तु उनकी पगडीमें एक ऐसी विशिष्टता होती है जिससे सोढा हमेशा पहिचान लिया जाता है सोढा मरुभूमिमें तितरवितर पाये जाते हैं और इस जातिकी शाखाएँ मूलवंशकी अपेक्षा अधिक संख्यामें पायी जाती हैं जिसमेंसे सुमाचा शाखा–इसमें हिन्दू मुसलमान दोनों ही शामिल हैं-अधिक प्रसिद्ध हैं। कौरव यह राजपूतोंकी जाति असंख्यामें घातके 'थलमें' पायी जाती हैं और लूटपाटके होते हुए भी यह पूर्ण रूपसे परिभ्रमणशील है ।

उनके वास करनेका कोई नियत स्थान नहीं है ! परन्तु अपने भेडोंके वृन्दको साथ लेकर इधर उधर फिरा करते हैं और जहांपर पानीका सुपास या गोरुओंको चरानेके लिए हरितभूमि मिल जाती है वहांपर वे डेरा जमा देते हैं और यहांपर थोडे दिनोंके लिये वे 'पीलू' (Peetən) की सजीव–वृक्षमें लगी हुई–शाखाओंको मिलाकर झोपडे निर्माण कर लेते हैं, जिनकी चोटीकी पत्तियोंको ढांक देते हैं और अन्दर मट्टीका पलस्तर लगा देते हैं और इस चतुरताके साथ वे उसको बनाते हैं कि बाहरसे देखनेपर कुछ चिह्नतक नहीं दिखलाई पडता है तो भी घूमते हुए सेहरीसे वनमें बने हुए इन सुरक्षित स्थानोंकी हमेशा खोजमें रहते हैं जिसमें गडारियेका स्वल्प अन्न रक्खा रहता है जो उनके चारों तरफ छोटे २ टुकडोंसे उत्पन्न हुआ है । जो अपने निरन्तर घूमनेवाले भाइयोंके बीचमें खासकर परिभ्रमणशीलताके लिये प्रसिद्ध हैं अथवा परिभ्रमणता इनके ही बांट पडी है उन कौरवोंकी चंचल प्रकृतिका कारण शाप मेरे घातीने कहा है जो उनको प्राचीनकालमें मिला था ।

ऊंट गाय भैंस और बकरियोंको पालते हैं जिनको वे चारुन और दूसरे व्यापारियोंके हाथ बेंच देते हैं। वह बडी ही शांतिप्रिय जाति है और अपने समस्त राजपूत भाइयोंके समान अफीमके नशेमें जो समस्त नैतिक और शारीरिक रोगोंकी दूर करनेवाली एक मात्र औषध है मनके लड्डू बांधा करते हैं जिसमें वे समस्त मरुभूमिको अपनी इच्छामात्र ही बनाकर जनपूर्ण कर सकेत हैं । महल धोते या धोती कोखोंके समान अल्पसंख्यामें घातमें निवास करती हैं । इनका स्वभाव कौरवोंसे मिलता है और पूर्णरीतिसे गडरियेका जीवन व्यतीत करते हुए कुछ भूमिको जोत लेते हैं जिसमें अन्नका पैदा होना मेघराजकी कृपापर अवलम्बित है । वे अन्न और जीवनकी आवश्यक वस्तुओंके बदलेमें घीको देते हैं। राबरी और छांछ मरुभूमिका उत्तम भोजन है बाजरा ज्वार और कैंजरीका दो सेर आटा कई सेर छांछमें मिलाकर आंचपर रखकर किंचिन्मात्र गरम कर लिया जाता है और यह भोजन एक बडे खानदानके लिये काफी होगा ।

भारतवर्षके मैदानोंकी अपेक्षा यहांकी गौएँ बहुत बडी होती हैं और प्रतिदिन आठ सेरसे लेकर दश सेरतक दूध देती हैं। चार गौओंसे उत्पन्न हुए घीकी विक्रीसे एक

घरका या कुटुम्बका जिसमें दश आदमी हों अच्छी तरहसे जीवन निर्वाह हो सकेगा और हर गायोंकी कीमत दश रुपयेसे पन्द्रह रुपयेतक दूधके परिमाणके अनुसार होती है। यह राबरी जो अफ्रीकाके होसकौषके सदृश होती है प्रायः ऊंटके दूधसे बनायी जाती है जिसमेंसे घी नहीं निकाला जा सकता है और जो तुरन्त ही अलग रखनेपर सजीव ढेरसा हो जाता है। सिन्धकी घाटीसे सूखी मछली ऊंटों या घोडोंपर लदकर आती हैं और पूर्वमें बरमेरतककी समस्त जातियां इसको खरीदती हैं। सूखी मछली दो टुकराकी एक सेर मिलती है घातियोंके प्रत्येक गाँव या पुरमें दश झोपडे होते हैं यह कौरवोंके झोपडाके समान होता है और थोडे दिनके लिये निर्माण किया जाता है।

लोहाना यह जाति धात और तालपुरामें अधिक संख्यामें पायी जाती है। पहिले वे (लोहाना) राजपूत कहलाते थे परन्तु व्यापार करनेके कारण वैश्य जातिमें परिणत हो गये हैं। वे लेखक और दुकानदार होते हैं और किसी किस्मका रोजगार करनेमें जिससे उदरपालन हो सके उनको एतराज नहीं है और 'बुभुक्षितः किं न करोति पापं' उक्तिके अनुसार वे बिल्ली और गायको छोडकर प्रत्येक वस्तु भोजनीय समझते हैं।

अरोरा–यह जाति लोहाना जातिके समान हरपेशा जैसे व्यापार, खेती करनेको तैयार है और मिहनती चालाक और अक्लमन्द होनेके सबबसे सिन्धराज्यमें नीचे पदोंपर नियत किये गये हैं। मितव्ययी अरोरा और इन्हींके समान अनेक जातियोंकी क्षुधा शान्त करनेके लिये ठंढे पानीमें मिला हुआ थोडासा आटा काफी है। हम इस बातसे अपरिचित हैं कि अरोरमें रहनेके कारण इस जातिका नाम अरोरा पड गया है। भाटिया जातिने अश्वारोही काम छोडकर वैश्यवृत्ति स्वीकार कर ली है और इस विनिमयसे उनको बहुत ही लाभ हुआ है।

इनका स्वभाव अरोराके सदृश है और कर्मण्यता और संपत्तिमें अरोरासे उतरकर इनका ही नंबर है। शिकारपुर, हैदराबाद, सूरत और जैपुरमें अरोरा और भाटियोंके व्यापार करनेके लिए कोठियां बनी हुई हैं।

ब्राह्मण–मरुभूमि और सिन्धके ब्राह्मण वैष्णव धर्मका छलन करते हैं। ये ब्राह्मण मनुकी आज्ञाएँ वहांतक ही शिरोधार्य करते हैं जहांतक इस मरुभूमिमें वे कष्टप्रद न हों। यहां वे ब्राह्मण स्वतः ही कानून या स्मृति हैं। वे जनेऊको पहिनते हैं परन्तु यहांपर यह धर्मसम्बन्धी कृत्य करानेवाला या पुरोहितीका चिह्न नहीं समझा जाता है। क्योंकि व्यर्थ कालक्षेप करनेवाले मनुष्यकी यहां कुछ प्रतिष्ठा नहीं है। वे खेती करते हैं और अनेक आवश्यक वस्तुओंको बचा हुआ घी देकर बदलेमें खरीदते हैं। वे धातमें बहुतायतसे पाये जाते हैं अकेले सोढा राणाका निवासस्थान चोर ही वैष्णव संप्रदायके सोदार हैं और अमरकोट धारना और मित्तीमें इनके कई घर हैं वे मछली नहीं खाते हैं और न हुक्का पीते हैं, परन्तु माली या नाईका बनाया हुआ भोजन कर लेंगे, वे चौका नहीं लगाते हैं अधिक सभ्य देशमें अपरिहार्य हैं या जिसके बिना काम चल ही नहीं सकता है। वास्तवमें सिन्ध देशमें रहनेवाली हिन्दुओंकी सब जातियां भटियारिनके

हाथका बना हुआ सरायमें भोजन कर लेंगे। वे बिना किसी भेदाभेदके विचारके हर एकके वर्तन व्यवहृत करते हैं जो केवल थोडे रेत और पानीसे साफ किये जाते हैं। वे मुर्देको जलाते नहीं हैं परन्तु देहरीके निकट पृथ्वीमें गाड देते हैं और समियाईवाले या धनी छोटासा चबूतरा बना देते हैं जिसपर शिवकी प्रतिमा और जलका भरा हुआ कलश रख देते हैं। इस देशमें कोली और लोहानोंको छोडकर सब जातियाँ जनेऊको पहिनती हैं जिसको हिन्दुस्तानमें केवल द्विजातिमात्र धारण करती है। इस प्रथाकी मूल उत्पत्ति यहाँके गवर्नरोंसे है जिन्होंने उत्तम और अत्यन्त निकृष्ट काम करनेवालोंके पहिचानके लिये यह प्रथा जारी की थी।

रेवारी–समस्त हिन्दुस्तानमें लोग इस शब्दसे परिचित हैं और यह शब्द ऊंटोंका पालन पोषण करनेवालोंके लिये व्यवहृत होता है परन्तु हिन्दुस्तानमें इस कामको करनेवाले सदासे मुसलमान होते हैं। मरुभूमिमें यह एक अलग जाति है और हिन्दू है जिनका एकमात्र व्यवसाय ऊंटोंका पालना या उनका चुराना है। इस पिछले काममें वे असामान्य दक्षता या फुर्ती दिखलाते हैं और वे भट्टियोंके साथ दाऊदपोतरातक ऊंटोंके चरानेके लिये धावा मारते हैं। जब उनको ऊंटोंका चरता हुआ वृन्द मिलता है तब सबसे बढकर पराक्रमी और अनुभवी अपना भाला उस ऊंटके मारता है जिसके पास वह पहिले पहिल पहुंचता है और ऊंटके खूनमें कपडेको भिगोकर वह भालेके नोकपर रखकर दूसरे ऊँटके नाकके पास ले जाता है और फिर उलटे पांव बडी शीघ्रगतिसे भागता है और अपने नायकके उदाहरण और खूनके सुगन्धसे लुभाया हुआ समस्त ऊंटोंका वृन्द इसके पीछे जाता है।

जाखूर, शियाध, पुनिया संपूर्ण नाम जीतवंशके हैं और इनमेंसे कुछ लोगोंने उपविभागोंमें बटे हुए होनेपर भी प्राचीन व्यवहार और धर्मको नहीं छोडा है परन्तु अधिकांश भागने इसलाम धर्मको स्वीकार कर लिया है और जातीय नामको अबतक जीवित बनाये हुए हैं। ये लोग जिनको पहिले गिना चुके हैं सीधे और मेहनती हैं और मरुभूमि और घाटीमें पाये जाते हैं। उनको छोडकर कुछ तितरबितर प्राचीन घराने पाये जाते हैं जैसे सुलतान और खमरा जिनके ऐतिहासिक वृत्तान्त हमको विदित नहीं हैं जेहिया सिन्दिल इत्यादि अनेक हैं जिनकी उत्पत्तिका उल्लेख मरुस्थलीके इतिहासमें हो चुका है।

अब हम हिन्दू जातियोंके साधारण वृत्तान्तको छोड देंगे जो (हिन्दु) समस्त सिंध देशमें मुसलमानोंके इच्छानुकूल चलते हैं जो अपनी असहनशीलताके लिये, जैसा कि पहिले कह चुके प्रसिद्ध हैं।

---

(१) अब्बुलफजल बिजोरके सूबेका वर्णन करते हुए जिसमें यूसफजाई रहा करते थे, लिखता है कि "सुलतान जाति जो अपनेको सुलतान सिकन्दर जुलकरनैनकी लडकीके वंशज कहते हैं, मिर्जा उलघबेगके समयमें काबुलसे आयी और इस देशपर अपना अधिकार जमाया"। मि० एल फिण्स्टोंनने सिकन्दरके वंशजोंका पता लगानेकी व्यर्थ ही कोशिश की।

प्रसिद्ध है कि हिन्दुओंका नम्बर हमेशा दूसरा है कुँआपर हिन्दूको मुसलमानके पानी भर लेनेतक धैर्यपूर्वक ठहरना चाहिये या भोजन बनाते समय यदि कोई मुसलमान आगको मांगे तो उसी समय उसको देना चाहिये नहीं तो हिन्दूके शिरपर चमर-छत्रकी वरसा होगी।

सेहरी; कोस चन्दी सुदानी मरुभूमिकी मुसलमान जातियोंमें सेहरीकी प्रथम गणना है और कहा जाता है कि जडमें यह हिंदू है और प्राचीन अरोराके वंशके कुलजात कहे जाते हैं परन्तु इनकी उत्पत्ति चाहे सेहरीसे पाटिंजरने साहिर लिखा है वंशमें हो या अरबी शब्द सेहरा मरुभूमि जिसके बह हुआ है इसकी व्युत्पत्ति हो कुछ बडे महत्वकी बात नहीं है।

कोसा या खोसा सेहरोंकी शेखा हैं और इनकी आदतें भी वैसी ही हैं। इन्होंने अपने लूटके तरीकेको अब नियमबद्ध कर दिया है और कौरी एक किस्मका कर जो रक्षार्थ डाकुओंके आदमियोंको दिया जाता है-नामक कर नियत किया है जिसमें हल पीछे एक रुपया और पांच घडी अन्न लिया जाता है और यह कर गांवके गडरियों तकसे वसूल किया जाता है। इनके वृन्दके लोग विशेषकर ऊंटपर चढा करते हैं यद्यपि इनमेंसे कुछ घोडेपर होत हैं सेल या साँग तलवार और ढाल इनके शस्त्र हैं परन्तु बन्दूक किसीके ही पास होती है। वे लूटनेके लिये चारों तरफ सौ कोस और जोधपुर और दाऊदपुराके राज्योंमें भी चले जाते थे।

परन्तु राजपूतके संग युद्ध करना वे बरा देते हैं जो (राजपूत) सेहरीके बारेमें कहता है कि युद्धके नक्कारा बजाते ही सेहरी रणभूमिमें अवश्य ही शयन करेगा। मरुभूमिके दक्षिणी भागमें वे खासकर रहते हैं और नवकोट भित्तीके निकट बुलेरीतक इनमेंसे बहुतेरे उदयपुर जोधपुर और शिवबहके राज्यमें नौकरी कर लेते थे परन्तु वे कायर और नमकहराम हैं।

सोढा वंशसे जिन्होंने इस्लामधर्मको स्वीकार कर लिया था सुमाचा उनमेंसे एक है और दोनों ही थल और घाटीमें अधिक संख्यामें पाये जाते हैं जहाँ उनके बहुतसे गांव हैं। उनकी आदतें धातियोंसे मिलती हैं परन्तु उनमेंसे बहुतेरे सेहरीकी संगति करते हैं और अपने भाइयोंको लूटा करते थे। वे अपने शिरके बाल नहीं मुडवाते हैं इसलिये मनुष्यकी अपेक्षा वे अधिकतर पशु दिखलाई पडते हैं। वे किसी जानवरको रोगसे नहीं मरने देते हैं परन्तु जब उसके आरोग्य होनेकी कोई आशा नहीं रहती है तब वे उसको मार डालते हैं इनकी स्त्रियां बडी कर्कशा होती हैं और अपने मुखको झाँपती नहीं हैं। राजूर-वेवे कुलके कहे जाते हैं और भट्टी केवल मरुभूमि या जैसलमेरकी सीमाओंतक जैसे रामगढकेला, जारियाला इत्यादि तक-और जैसलमेर और ऊपरी सिन्धके बीचवाले थलतक अपना गमनागमन करते हैं। वे खेती करते हैं भेड चराते हैं और चोरी करते हैं और जिन लोगोंने इसलाम धर्मको स्वीकार किया है उनमें सबसे निकृष्ट समझे जाते हैं।

ओमुर और सुमरा प्रमरवंशके हैं और अब खासकर मुसलमानी धर्मके पैरोकार हैं यद्यपि जैसलमेर और आमुरसुमराके थलमें अल्पसंख्यामें पाये जाते हैं। इनका वर्णन हम काफी तौरपर कर चुके हैं।

कुलोरा और तालपुरी सिन्ध देशमें प्रसिद्ध जातियां हैं। सिन्धदेशके पिछले शासन-कर्त्ता कुलोरा जातिके थे और वर्त्तमान शासनकर्त्ता तालपुरी जातिके हैं और यद्यपि एकने ईरानके अब्बशैदसे अपनी उत्पत्ति कहनेका साहस किया है और दूसरेने पैगम्बर महम्मूदसाहिबसे पैदा होनेका दावा पेश किया है तो भी यह कहा जाता है कि दोनों ही बलौचके समान हैं जो विशेषरूपसे जीतवंशके कहे जाते हैं।

तालपुरियोंकी आवादी लोहरी सिन्धकी आवादीकी चतुर्थांश है और वे हैदराबादके राज्यको लोहरीसिन्धकी अयथार्थ नाप रखते हैं। वे थलमें नहीं पाये जाते हैं।

नुमरी लुमरी या लुक्का यह बलौच वंशका महान् उपविभाग है और अबुलफजलके कथनानुसार कुलमानीसे उतरकर है और रणक्षेत्रमें तीन सौ सवार और सात हजार पैदल उपस्थित करनेकी सामर्थ्य रखते हैं। लैडविन और रेनल साहिबोंने नुमरीका नोमर्दी कर दिया है नुमरी या लुमरी जो लुक्का भी कहलाते हैं-लुक्का शब्द लोमडीके लिये विशेष प्रसिद्ध है, जीतवंशके हैं। जातीय शब्द बलौचकी जिसको वे धारण करते हैं क्या व्युत्पत्ति है, भविष्यत्में इन विषयोंका अनुसन्धान करनेवाला चाहे इसका पता लगावे कि यह नाम उन्होंने बलूचीस्तानसे लिया या उसको दिया।

जीहूत जूत या जित अत्यन्त प्राचीन जाति, जो समस्त राजपूत जातियोंकी एकत्रित संख्यासे अधिक है। अब भी समस्त सिन्ध देशमें समुद्रसे दाऊदपूतरातक अपने प्राचीन नामको बचाये हुए हैं। परन्तु थलमें यह नहीं पायी जाती है। इनकी आदतें अपने पडोसियोंकी आदतोंसे कुछ ही भिन्न हैं। सबसे पहिले इसलाम धर्म स्वीकार करनेवालोंमेंसे वे एक हैं।

मेर या मेर--हमको यह कदापि आशा न थी कि सिन्धकी घाटीमें मेरा या पहाडीजाति मिलेगी; परन्तु मेर शब्द काफी तोरसे इस बातको प्रमाणित करता है कि वे भट्टी वंशके हैं।

मोहर या मोर--भट्टी वंशके कहे जाते हैं।

जतावुरी बोरीया ही एकमात्र भूतकी प्रसिद्ध पदवीको धारण करते हैं और शैतानके पुत्र की प्रबलतर उपाधि भी इनके ही बांटमें पडी है। इनकी उत्पत्ति संदेहजनक है परन्तु इनकी गिनती बातुरी खेनगर और समस्त राजपूतानामें फैले हुए दूसरे चौर-वृत्ति करनेवालोंमें है जो तुम्हारे शत्रुका शिर या उसकी पगडी ला देंगे। वे दाऊदपोतरा विजनौत, नोक नवकोट और ओदुरके थलोंमें पाये जाते हैं। वे अपने ऊंटोंको किराये-पर चलाते हैं और कारवाँकी रक्षा करनेके लिये भी नियुक्त किये जाते हैं।

जोहिया, दहिया, मंगुलियोंने पूर्वकालमें राजपूत होनेपर भी अब इसलाम धर्मका स्वीकार कर लिया है और घाटी या मरुभूमिमें अल्पसंख्यामें पाये जाते हैं। बैरीबी-

बैरीबी-बलौचकी एक शाखा, खैरोबी, जनग्री, ओंदुर बाधी नामकी अनेक जातियाँ पायी जाती हैं जिनके पूर्वपुरुष प्रमर और शांकला राजपूत थे। परन्तु संख्यामें अल्प या अप्रसिद्ध होनेके कारण हमको इनके वर्णन करनेकी कुछ जरूरत नहीं है। दाऊदपोतरा-यह छोटासा राज्य, यद्यपि हिंदूधर्मकी सीमासे बाहर है तो भी मुश्किलसे मरुस्थलीकी समाके अन्तर्गत है और जिसकी रचना जैसलमेरके भट्टी राज्यका कुछ अंश काटकर आधुनिक समयमें हुई है। उस वंशके विषयमें हम कुछ नहीं जानते हैं जिसने इसकी नीव डाली: और हम सिर्फ इसी बातका वर्णन करेंगे जिसका उल्लेखतक मि. एलफिन्स्टोनने नहीं किया है-जिनका इस राज्यके अधिपति और राजधानी भावलपुरका रोचक वृत्तान्त पाठकोंके पढनेके योग्य है जब वह काबुलको जाते हुए यहांपर ठहरे थे।

दाऊदखाँ दाऊदपोतराकी नीव डालनेवाला सिंधुनदीके पश्चिममें शिकारपुरका निवासी था जहाँ उसने प्रजाकी हैसियतसे कई गुना अधिक शक्ति संपादन की उसके स्वामी कन्दहारके सम्राट्ने अपनी सेना इसको दमन करनेको भेजी। शाही फौजका सामना करनेमें नाकाबिल होनेकी वजहसे उसने अपनी जन्मभूमिका परित्याग किया और अपने घर गृहस्थी और जंगम संपत्तिको लेकर सिंधुनदीके इस तरफकी मरुभूमिमें चला आया। शाही फौज बराबर पीछा करती हुई सूतीअल्लाह स्थानपर उसके निकट आ पहुँची। दाऊदके लिये दो बातोंमेंसे एकको किये बिना छुटकारा न था कि या तो वह स्वयं अपनेको शत्रुओंके अधीन कर दे या अपने घरवालोंको मार डाले जो उसके पलायन या बचावमें बडी भारी बाधा डालते थे उसने राजपूतोंके समान व्यवहार किया और अपने दुश्मनोंसे लोहा लिया जो इस साहसिक कर्मसे भयभीत या धैर्यच्युत होकर और दाऊदपर आक्रमण उचित न समझकर भाग गये। दाऊदखाँ अपने साथियों समेत सिंधके समतल मैदानमें या 'कच्ची'में बस गया और धीरे २ उसने अपने राज्यकी सीमा थलतक बढायी। दाऊदके बाद मुबारकखां मसनदपर बैठा, फिर उसका भतीजा भावुलखां सिंहासनासीन हुआ जिसका बेटा सादिक महम्मदखां भावलपुर या दाऊदपोतराका वर्तमान अधिपति है। दाऊदपोतराकी उपाधि दोनोंके ही लिये देश और उसके स्वामि लागू है। मुबारकखाँने ही भट्टियोंसे खादल जिला छीन लिया था जिसका जिक्र जैसलमेरके इतिहासमें कई बार हो चुका था और जिसकी राजधानी देरावल है जिसकी नींव आठवीं शताब्दीमें रावल देवराजने डाली थी और यहाँपर दाऊदके वंशजोंने अपना निवासस्थान नियत किया था। उस समय देरावलमें भट्टियोंकी एक शाखा रहती थी जिसने अतिप्राचीन समयमें मूलवृक्षसे अपना सम्बन्ध तोड डाला था। इसके सरदारको रावलकी पदवी है और उसके वंशज अपने देशनिकालेके बाद गुरियालोंमें जो बीकानेरके अधीन है, पाँच रुपया दैनिक वेतनपर जो उनके जीतनेवालोंने नियत किया है रहते हैं।

"दाऊदपुत्रकी राजधानी भावलखाँने गरहके दक्षिणी किनारेकी तरफ बसायी और उसका नाम अपने नामपर रक्खा, उस स्थानपर प्राचीन भट्टी नगर था जिसका नाम मैं

नहीं जान सका, तीस वरस बीते कन्दहारी सेनाने दाऊदपोतरापर आक्रमण किया और देरावलको घेरकर अपने अधिकारमें कर लिया और भावलखांको बीकमपुरके भाइयोंसे रक्षा मांगनेके लिये विवश किया।

एक संधिपत्र लिखा गया जिसके द्वारा देरावल उसको लौटा दिया गया और भावलखाँने फिर एकबार अब्दाली शाहकी अधीनता स्वीकार कर ली और अपने पुत्र मुबारकखांको रुपया बटानेके लिये बतौर जामिनके भेजनेपर शाही सेना चली गयी। मुबारक तीन बरसतक काबुलमें रहा और आखिरकार फिर स्वतंत्र किया गया और भावलपुत्रखांकी उपाधिसे विभूषित हुआ, राज्य पानेके उद्योगमें देखकर भावलखांने अपने पुत्रको कैदकर किंजरके किलेमें डाल दिया जहां वह भावलखांके मृत्युपर्यन्त उसी हालतमें पडा रहा भावलखांकी मृत्युके कुछ पाहिले दाऊदपोतराके सरदारोंने बुद्धिपर खैदानी भोजगढवाला तिररोहके खुदाबक्स गुरइकि इख्तियारखां और ओचके हाजीखां–मुबारकखांको किंजरके किलेसे निकाला और भावलखांका मृत्युसंबाद उनको मुरारमें मिला जब कि वे वहाँ पहुँचे। वह राजधानी तक बराबर चला आया परन्तु नासिरखांने आलमखां गुरग या कावलोच पुत्र अपने पिछले अपराधोंकी सजासे डरकर उसको छलसे मरवा दिया और वर्तमान नरेश अपने भाईको सादिकखां मसनदपर बैठा दिया जिसने तुरन्त ही मुबारिकके पुत्रोंको अपने छोटे भाई समेत देरावलके किलेमें बन्द कर दिया। वे भाग गये और उन्होंने राजपूतों और पुरावियोंकी सेना एकत्र कर देरावलको हस्तगत कर लिया; परन्तु सादिक किलेकी दिवालपर चढ गया पुरविआओंने कुछ रक्षा न की और उसके दोनों भाई और एक भतीजा इस युद्धमें काम आये। दूसरा भतीजा दीवालपर चढ गया परन्तु पासके सरदारने उसको पकड कर सादिकके हवाले कर दिया जिसने उनको मरवा डाला और यह अनुमान किया जाता है कि यह सब उपाय सादिरखाँने रचे थे ताकि उनके खून करनेका वहाना हाथ लगे। सादिकखांने जिस नसीरखांकी मददसे गद्दीको पाया था उसको ही मरवा डाला जब कि उसकी ताकत रैयतकी है सियतसे ज्यादा बढ गयी थी। खैरानी सरदार हमेशा-कुछ न कुछ षड्यन्त्र अपने स्वामीके विरुद्ध रचा करते हैं जिसका एक उदाहरण बीकानेरके इतिहासमें दिया गया है जब कि तीरारोह और भोजगढ जप्त कर लिये गये थे और उनके सरदार किंजरके किलेमें दाऊदपुतराका राजकारागार कैदकर भेज दिये गये थे गुरही अब भी हाजीखाँके पुत्र अबदुल्लाके सधिकारमें है, परन्तु इसमें कोई भी राज्य संलग्न नहीं है। सादिक महम्मदखाँमें अपने पिताके समान कोई गुण नहीं है जिसको मारवाडके विजयसिंह अपना भाई कहा करते थे। दाऊदपोतराके सरदार आपसमें ही लडा करते हैं और भट्टी लोग जिनसे अब भी लूटनेके एवजमें वे कर वसूल किया करते हैं, इनको बडी ही घृणासे देखते हैं।

---

(१) यह स्मारक टिप्पणी सन् १८११ या १८१२ में लिखी गयी थी।

भावलपुरके सरदारको अब कन्धारसे कुछ डर नहीं है और वह ऊपरी सिंधमें अपने पडोसीसे सलाह रखता है, यद्यपि उसको लाहौरके रणजीतसिंहकी धमकियोंसे प्रायः भयभीत होना पडता है जो 'दाऊदके सन्तानों' पर अपना प्रभुत्व बतलाता है।

रोग--अनेक प्रकारके रोगोंसे जिनसे यहाँके निवासी स्वास्थ्य और उदरभर भोजन न मिलनेके कारण या सड़ा हुआ स्वास्थ्यको हानिकारक जल पीनेके कारण पीडित रहते हैं 'रतौन्ध' नारू और बेरीकोसने इस देशको अपना घर ही बना लिया है। रतौन्ध और बेरीकोस विशेष कर दीन दुखियाको सताती हैं और जिनको बेवशीमें बहुत दौड धूप करनी पडती है जब कि रेतमें धसे हुए आगेको निकालनेके लिये अत्यावश्यक श्रमके कारण जिससे उनके रंगोंपर बडा ही जोर पडता है, उनके अंग अकसर टूट जाते हैं तो भी अभ्यासका बल ऐसा होता है कि मेरे अधीन घातके निवासी जो मरणपर्यन्त (कासिद) का काम सिन्धुनदी और राजपूतानेके नगरोंके बीचमें करते रहते थे। इस बातकी शिकायत किया करते थे कि हिन्दुस्तानके मैदानकी कठोर भूमि उनको अधिकतर थका डालती है बनिस्बत कि उनके देशकी रेतकी पहाडियाँ।

परन्तु मैंने कभी भी घातीकी इस बातका विश्वास नहीं किया, बावजूद कि उसके भोलेपन या सिधाईके यद्यपि यह उनकी गर्वोक्ति थी या, उनकी फूली हुई नसें जिसकी उपमा पिंडुलीपर बन्धी हुई पटीसे दी जा सकती थी यदि उसके कथनको झूंठा नहीं करती थी कमसे कम इतना तो भी साबित करती थी कि मरुभूमिमें पैदल चलनेका ही यह फल उसको भोगना पड़ता था। राजकुमारसे किसान पर्यन्त कोई भी इस नारुरोगसे नहीं छुटा है और वह मनुष्य बड़ा ही सौभाग्यवान है जिसको यह रोग एकही बार हुआ है यह रोग केवल मरुभूमि और पश्चिमी राजपुताना और मध्यस्थित राज्योंमें नहीं होता है परन्तु अर्बली पर्वतके उस पार इस रोगसे आक्रान्त इतने मनुष्य हैं कि आपसमें मिलने-पर "तुम्हारा नारु कैसा है" यह उनका कुशल प्रश्न पूछनेका साधारण वाक्य हो रहा है। यह सामान्यता पर और जोंडोंके चमडेमें होता है और इसकी वेदना सहन करनेकी सामर्थ्यके बाहर है। यहांके निवासी इस बातमें संमत नहीं हैं कि यह रोग रेत या पानीके अन्तस्थित अतिक्षुद्र जन्तुके द्वारा उत्पन्न होता है या सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणुओंके जिनमें संजीवता या चैतन्यता (Vital preiciple) गुप्तरूपसे वास करती है। शरीरमें छिद्रोंके द्वारा घुस जानेपर होता है। खालके नीचे और उससे चिपटे हुए स्थान-पर पहिले पहिल यह रोग एक दाग उत्पन्न करता है जो धीरे २ बढकर और फूलकर आखिरको तमाम शरीरमें जलन और सूजन पैदा कर देता है। कीडा तब चलने लगता है और जब यह कुछ अंशमें इसके छुटकारेके लिये आवश्यकीय सजीवता प्राप्त करता है तब इसकी गति रुकती ही नहीं है और रात दिन अभागे रोगीको काटा करता है, जो पतले चमड़ेके कटने पर अपने शत्रुके शिरकी प्रतिदिन देखनेकी एकमात्र आशासे ही

प्राणको नहीं छोड़ता है। दवाके लिये यही समय अति लाभदायक है, कुशल नारु-वैद्य बुलवाया जाता है जो कीड़ेका शिर पकड़ कर उसको सूईके चारों तरफ लपेट देता है; इस प्रकारसे निश्चित:समयपर सूईको गति प्रदान कर टूटनेके खौफके बिना जहांतक हो सकता है उसको सूईके चारों तरफ लपेटता जाता है। वह मनुष्य बहां ही अभागा है जिसका तागा टूट जाता है।जब वह ज्वरके नींदमें लात मार कर सजीव तागाको तोड़ डालता है तब दशगुणा सूजन जलन पककर पीब निकलने लगता है। यदि धैर्य और होशियारीसे उसके खीचनेमें समर्थ हुए तो रोगी अरोग्य होजाता है।

जब कि उनका पैतृक शासक रहता है,मेरा मांस कीड़ोंसे परिपूर्ण हैं मेरी खालटूट गई है और घृणा करनेके योग्य है मैं लेटा हुआ कहा करता हूँ कि कब रात:समाप्त होगी और मैं उठूंगा? तब भैं इस बातकी कल्पना करूं कि वह अवश्य ही नारुसे आक्रान्त हुआ है जिससे बढकर कोई रोग मनुष्यके लिये यंत्रमापूर्ण नहीं है।

भारतकी तरह यहाँपर भी बच्चों और वयप्राप्त मनुष्योंके रोग विद्यमान हैं।इनमेंसे शीतला या तिजारीका अधिक प्रकोप है। शीतलाका सामोपचार वे उतना ही करते हैं कि रोगीको शीतला माताके ऊपर छोड देते हैं और दूसरे रोगोंके प्रतीकारार्थ वे सुकोड़नेवाली दवा देते हैं जिसका एक अंग अनार (यदि मिलसका) के छिलकेका काढा है। अमीर दूसरे देशोंके अनुसार नीमहकीमके पल्ले पडते हैं जो घात सम्बधी विष देकर जिनके असरसे वे स्वयं ही अज्ञात हैं उनको कातिल बीमारियोंका शिकार बनाते हैं। इन बुखारोंके प्रभावसे अकसर तिल्ली बढ जाया करती है और जिसकी दवा उनके पास एकमात्र गर्म लोहेसे दग्ध करना है।

दुर्भिक्ष इन देशोंका महान् प्राकृतिक रोग है। इन देशोंमें अत्यन्त प्राचीन कालसे एक काल्पित कहानी प्रसिद्ध चली आती है जिसमें वह कहा गया है कि भूखा माताके आगमनसे अकाल पड़ता है।एक अकाल ग्यारहवीं शताब्दीमें पडा था और बारह बरस-तक रहा था, जिसका उत्कृष्ट प्रमाण कई राज्योंके वंश परंपरागत बातोंमें विद्यमान है। भूलसे इस अकालका सम्बन्ध लाखा फूलनीके नामसे जोड़ दिया गया है, जो शीवजी राठौरका पहिला जिससे कन्नौजको:त्याग किया था-शत्रु था और जिसने मरुभूमिके इस Rabin Hood राबिनहडको संवत्१२६८ या सन् १२१२ ई०में मार डाला था। करीब २ एक शताब्दी पहिले हमीरके समयमें कमरनदीका लुप्त होजाना अवश्य ही इस

(१) मेरे दोस्त डाक्टर जोसफ डंकन (जब मैं उदयपुरमें पोलिटिकल एजंट था तब यह रेसीडेन्सीमें एक पदपर सुशोभित थे) पर'नारु'ने भयंकररूपसे आक्रमण किया यह Aucb joint में निकला और इसके निकालनेके उद्योगमें इसके टूट जानेके कारण उन सब बुराइयोंका सामना मेरे दोस्तको करना पडा जिनको मैं वर्णन कर चुका हूँ जिससे वह लंगडे हो गये और स्वास्थ्य बिगडजानेके कारण वह उसके पुन: प्राप्त करनेके लिये उनको केपके जानेके लिये वाध्य होना पड़ा, जहां कि मैंने अठारह महीने बाद स्वदेशको जाते हुए देखा था परन्तु तब भी पूर्णतया उनका लंगड़ापन नहीं गया था।

दुर्भिक्षका कारण रहा होगा। उनकी गणनानुसार हर तीसरे साल कुछ न कुछ अकालका कोप सहना पडता है और सन् १८१२ का अकाल तीन या चार बरसतक रहा और जिसके अधिकारकी सीमा भारतके मध्य रियासतोंतक पहुँच गयी थी जहांसे गरीबोंके यूथके यूथ अपने देशको छोडकर गंगाके मैदानमें चले गये थे और उन्होंने अपने प्यारे बच्चोंको और अपने स्वतंत्रताको मुट्ठीभर अन्नके लिये बेंचा था।

फसल, पशु और वृक्ष—ऊँट " मरुभूमिका जलयान " का वर्णन प्रथम ही करना आवश्यक है। यहां इसके बिना काम नहीं चल सकता है—मरुभूमिवासियोंके यह अपरिहार्य वस्तु है, वह हलमें जोता जाता है, कुँआसे पानी खींचता है। अपने स्वामीके लिए मरुभूमिके रास्तेमें पीनेके लिए मशकोंमें पानी ले जाता है और कई दिनतक यह बिना पानीके रह सकता है। उपरोक्त गुण उसके पैरकी बनावट, जो भूमिके अनुसार सिकुडने और फैलनेका गुण रखती है और उसका सख्त मुह जिसमें वह अपनी जीभसे बाबूल खैर और जवासकी शाखायें रख लेता है जिनमें सुईके समान नुकीले सख्त और लम्बे काँटे लगे होते हैं, सब इस बातकी साक्षी देते हैं कि ईश्वरने इसके उत्पन्न करनेमें मनुष्योंपर बडी ही कृपा और उपकार किया है। यह बडे ही आश्चर्यकी बात है कि अरबी पैतृक शासक जो भिन्न २ पशुओंकी—पालतू और जंगली—आदतोंका ठीक २ वर्णन करता है और जो स्वय तीन सहस्र ऊँटोंका प्रभु था। ऊँटके इन गुणोंका कुछ भी उल्लेख न करे, यथार्थ हल चलानेमें गैंडेकी अनउपयोगिताका वर्णन करते हुए वह पर्यायसे इस बातको कबूल करता है कि इस काममें बैलके अलावा दूसरोंका भी उपयोग हो सकता है। मैदानके ऊंटोंकी अपेक्षा मरुभूमिके ऊंट अधिक उत्तम होते हैं और धात और बरमेरके थलोंके ऊंट समस्त संसारमें प्रथम गिने जाते हैं। जैसलमेर और बीकानेरके राजाओंके पास लडाईके लिये सीखे हुए युद्धके योग्य ऊंटोंकी पलटन है। जैसलमेरकी सेनामें दो सौ ऊंट हैं जिनमेंसे अस्सी महाराजके हैं बाकी सरदारोंके बीचमें बटे हुए हैं, परन्तु मैंने इस बातके पूछनेका कभी विचार नहीं किया कि और राज्योंके सवारोंसे यहांके ऊंट सवार क्या निस्बत रखते हैं या किस परिमाणमें हैं हर ऊंटपर दो मनुष्य बैठते हैं एकका मुहँ ऊंटके मुखकी तरफ और दूसरेका पूछकी तरफ और सेनाके पीछे हटनेके समय वे बडे ही कामके होते हैं, परन्तु जब वे शत्रुके अत्यन्त निकट आ जाते हैं वे ऊँटोंको घुटनोंके बल बैठाते हैं, उसकी टांगें बाँध देते हैं और पीछे जाकर ऊंटके शरीरका ही मोर्चा बनाते हैं छातीतक ऊंची भूमि मोर्चेका काम देती है और ऊंटकी काठीपर अपनी बन्दूक रखते हैं। मरुभूमिकी हर किस्मकी झाडी या वृक्ष ऊंट अपने खानेके काममें लाता है।

(खर) गदहा, गोरखर या जंगली गदहा मरुभूमिका निवासी है परन्तु धातके निकट दाक्षिणी हिस्सायें और बरमेरसे पंकखिर और बुलारीतक महान् रन या नमकीन मरुभूमिके वलती किनारे २ फैले हुए वनोंमें बहुतायतसे पाया जाता है।

किस्में मरुभूमिके अनेक धौलाधान सिंह इत्यादि—हिरन और नीलगायकी उत्तम भागोंमें पायी जाती हैं और यद्यपि मैदानमें रहनेवाले राजपूतोंने उसको अदण्डता मान

रक्खा है जो उसको शायद आखेटमें मारे परन्तु उसका मांस नहीं खाते हैं, पर मरुभूमिमें उसको माँस और खाल दोनों ही बडे काममें आती है। यहां व्याघ्र लोमडी शृगाल और सिंह भी पाये जाते हैं पालतू पशुओंमें घोडा, बैल, गाय, भेड, बकरी, गदहा की कुछ कमी नहीं है और गदहा यहां हल जोतनेमें भी व्यवहृत किया जाता है।

बकरी और भेड–भेड और बकरियोंके वृन्दके वृन्द मरुभूमिमें असंख्य संख्यामें चरते हुए दिखाई पडते हैं। लोग कहते हैं कि बकरी कातिकसे चैततक विना पानीके जिन्दा रह सकती हैं जो बिलकुल असंभव या गप्प है, यद्यपि यह प्रसिद्ध है कि वे छः हफ्तेतक जब कि घासकी विपुलता होती है पानीको छोड सकती हैं। दाऊदपोतरा और भट्टीपोहके थलोंकी बकरियाँ और भेडें गर्मीके प्रारम्भमें सिन्धके समतल मैदानमें चली जाती हैं। गडरिये अपने वृन्दोंके समान पानीकी जगह छांछ पीकर रहते हैं जिसमेंसे मक्खन निकाल लिया जाता है और जिसका घी बनाकर अन्न या दूसरी आवश्यक वस्तुओंके बदलेमें बेच देते हैं। ऊंटोंके चरानेवाले उनका दूध पीकर एक मात्र जीवनकी रक्षा करते हैं और जंगली फलोंके सिवाय उनको कभी रोटीतक मयस्सर नहीं होती है।

वृक्ष और फल--हम अनेक अवसरोंपर करली या खैरका उल्लेख कर चुके हैं, 'खेजरी'के छुलेकेको सुखाकर आटा बनाया जाता है जिसको सांग्री कहते हैं. झल जिसमें गडारिये अपने झोंपडे बनाते हैं जेठ और बैशाखमें उनको फल प्रदान करते हैं पील्ह भोजनके काममें आता है, 'बबूर' से एक प्रकारका गोंद मिलता है जो दवामें काम आता है, बेरमें भी सुस्वादु फल लगते हैं, ऊंट इन सबको भक्षण करते हैं और ये सब अत्यन्त विपुलतासे पाये जाते हैं और बहुत ही लाभदायक हैं, 'जवासके' स्वच्छ रसका गोंद बनाया जाता है जो दवामें काम आता है, फोककी शाखोंसे वे अपने कुएँ ढांकते हैं, 'सजी' का पौधा वे राखके लिये जलाते हैं। इनमेंसे प्रथम और अंतिमका सविस्तर वर्णन अत्यावश्यक है।

करील या खैर हिंदुस्थान और मरुभूमिमें प्रसिद्ध है, हिंदुस्थानके लोग उसका अँचार डालते हैं परन्तु यहां यह भोजनकी उत्तम सामग्री ख्याल करके इकट्ठा किया जाता है। इसकी झाडीकी ऊंचाई दश फीटसे पंद्रह फीटतक है और इसके चारों तरफ खूब फैलती है इसकी निरंतर हरित शाखाएँ पत्रविहीन होती हैं जिनमें लाल रंगका फूल निकलता है और फल काले करेट एक किस्मका फलके समान होता है। जब इकट्ठा करके उसको चौबीस घंटेतक पानीमें भिगोते हैं; यह पानी फेंक दिया जाता है और इसके बाद दो बार फिर उपरोक्त क्रिया की जाती है तब उसके प्राणान्तक गुण दूर हो जाते हैं; वे फिर उबाले जाते हैं और नमकके साथ खाये जाते हैं अथवा अमीर आदमी इनको घीमें तैयार कर रोटीके साथ खाते हैं अनेक घरोंमें यह बीस २ मनतक मिलता है।

सज्जी एक छोटासा पौधा है और खासकर उत्तरी मरुभूमिमें पैदा होता है, परन्तु जैसलमेरके उन प्रदेशोंमें जो खदल कहलाते है और अब दाऊदपोतराके अधीन हैं विपुलतासे पाया जाता है। पूगलसे देरावलतक और फिर यहाँसे मुरादिकोट इख्तियारखाँकी

गढा होते हुए, खैरपुरतक एक विस्तीर्ण थल है, जिसमें अनेक नीचे सख्त और समतल प्रदेश पाये जाते हैं जो यहां 'चित्रम्' नामसे प्रसिद्ध हैं जिनकी रचना बरसातके बाद जो पानी एकत्र होता है उसके द्वारा हुई है और इन्हीं स्थानोंमें सज्जीका पौधा उत्पन्न होता है। नमक जो (subcarbonate of sode) है, जले हुए पौधेकी राखके नीचे लिखी हुई रीतिसे प्राप्त होता है। गड्ढे खोदकर पौधेको उनमें भर देते हैं. फिर आग लगा देनेपर एक किस्मका द्रव पदार्थ निकलता है जो तलीमें बैठ जाता है जलते समय वे ढेरको लम्बे बांसोंसे चलाते हैं या उसपर रेत डालते हैं जब बडी ही शीघ्रतापूर्वक जलता होता है । जब पौधेके गुण निकल जाते हैं, गड्ढा रेतसे भरकर तीन दिन–तक ठंढा होनेके लिये छोड देते हैं;सज्जी फिर निकाली जाती है और किसी दूसरे उपा–यसे इसमेंका मैल दूर कर देते हैं। स्वच्छ सज्जी रुपयेको एक सेर बिकती है, और अस्वच्छ रुपयेकी चालीस सेरसे भी अधिक मिलती है। राजपूत और मुसल्मान दोनों ही इस व्यवसायको करते हैं । और एक पैसा रुपया कर अपने अधीश्वरको देते हैं । चारूं और मारवाड नगरोंक रहनेवाले इसको खरीदकर भिन्न २ बाजारोंमें ले जाते हैं जहाँसे यह समस्त भारतमें भेज दी जाती है। सिन्धदेशमें इसका बडा ही व्यापार होता है और समस्त काफिले इसको बेखर तत्तार और कच्छमें ले जाते हैं।सज्जीके गुण पाक क्रिया जाननेसे छिपे नहीं हैं और सख्त पानीमें थोडीसी सज्जी मिलाकर दालमें डालनेसे उसको हलका बना देती है; तमाखू बेंचनेवाला अपने व्यापारमें इसका प्रचुर परिमाणमें उपयोग करता है,क्योंकि यह कहा जाता है कि इसमें फिर तमाखूके पौधेके गये हुए गुणोंको वापिस लानेकी शक्ति विद्यमान है ।

अनेक प्रकारके घास यहां पाये जाते हैं परन्तु वृक्षविद्या सम्बन्धी चित्रके बिना इनके वर्णनमें कुछ रोचकता न होगी । यहां बडी २ घास कुश नामक पैदा होती है और इसीके नामपर रामके प्रथम पुत्रका नाम कुश रक्खा गया था और उसके वंशज कुशवाह या कछवाह कहलाते हैं।यह प्रायः आठ फीट ऊँची होती है,अंकुरदशामें इसको पशु चरते हैं और जब कुछ प्रौढ हो जाती है तब झोपडे छानेके काममें आती है जब कि उसके जड़की रेसेकी जुलाहे कूची बनाते हैं जो उनके व्यवसायके लिये अपरिहार्य वस्तु है सरकण्डा धामून धबू और अनेक प्रकारके दूसरे घास यहांपर पाये जाते हैं जिनमेंसे गोकरा पापरी और भूरुत कपडोंमें चिपटनेके कारणसे यात्रीको बहुत ही कष्ट पहुंचाते हैं।

---

(१) चित्रम् नाम यहांके समतल और कठोर भूमिवाली प्रदेशोंके लिये व्यवहृत होता है (मि० एलफिंस्टोन लिखता है कि यह प्रदेश घोडेके सूमके शब्दसे गुंज उठते हैं) पर मूल अर्थ उसका 'चित्र' तसवीर है, और चित्रम् नाम पड़नेका कारण यह है कि सदा रविकाल 'मृगजलका चित्र दृष्टिगोचर होता है। यहांकी भूमि जवाखारसे परिपूर्ण होनेपर कहांतक इस दृश्यको यदि यह इसकी भूल उत्पादक नहीं है उन्नति प्रदान करती है, और इसका उल्लेख हम उत्तरी भारतके भिन्न २ भागोंके मृगतृष्णाका वर्णन करते हुए कर चुके हैं ।

खरबूजा–बडा खरबूजा चिपरा, और वामन, गोवर ३ यहांपर बहुतायतसे होता है।

(तोमाता) जिसका हिन्दुस्तानी नाम मुझे मालूम नहीं है, इन प्रदेशोंमेंका निवासी है और भारतके दूसरे भागोंमें भी यह पाया जाता है। हम इस बातको लिख कर इस लेखको समाप्त करते हैं कि इनके–वृक्षों झाडियों या अन्नके–वृक्षविद्या सम्बन्धी नामोंको इस पुस्तकके सूचीपत्रमें दे देवेंगे।

यात्रावृत्तान्त।



जैसलमेरसे सिन्धु नदीके दक्षिण तटपर सिवाना और हैदराबादतक और हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरको लौट आया कुलदूरी (पांच कोश)–इस गांवमें पालीवाल ब्राह्मण रहते हैं, दो सौ घर कुल गुजियाकी बस्ती (२ कोश)–साठ घर खासकर ब्राह्मण कुएँ।

खाबा ३ कोश–तीन सौ घर, खासकर ब्राह्मण एक छोटासा दुर्ग चार बुर्जवाला नीची पहाडीपर स्थित है जिसमें जैसलमेरकी सेना रहती है।

कुनोही (५ कोश) और सुम (५ कोश)–कुनोही और सुमसे करीब एक मीलकी दूरीपर एक स्थानपर चार या पांच झोपडोंवाले गांवोंका वृन्द है जो सुम नामसे प्रसिद्ध है। इसकी रक्षाके लिये एक बुर्ज है जिसमें जैसलमेरकी सेना रहती है कई कुएँ हैं जिनको यहाँवाले 'वेरिया' कहते हैं यहांके निवासी खासकर भिन्न २ जातिके सिन्धी हैं जो अपने भेडोंके झुंडोंको चराते हैं और देव चन्द्रेश्वरसे 'खारा' लाते हैं जो बतौर दावनके रंग पक्का करनेके काममें लाया जाता है। सुम और मूलनोहके बीचोंबीच जैसलमेर और सिन्धकी सीमा पडती है।

मूलनोह–२४ कोश दश झोपडेका गाँव है, निवासी विशेषकर सिन्धी ऊंची २ रेतकी पहाडियोंके मध्यमें स्थित हैं। सुमासे आधामार्ग १२ कोश पारी पारीसे रेतकी

(१) मूलनोहसे सिवानाको दो मार्ग गये हैं। धाती पानी मिलनेके कारण दूरकी रास्ते गया। दूसरी सुकरुन्द होकर है जैसा कि नीचे लिखा है।

पैरी ...	५ कोश.	सुकरुन्द ...	३ कोश.
बादशाहकी बस्ती ...	६ "	नूला ...	१/२ "
ओदानी ...	५ "	मुकरुन्द ...	४ "
मित्राओ ...	१० "	काकाकी बस्ती	६ "
मीरकाखोल ...	६ "	सिन्ध	१० "
सुपुरी ...	५ "	सिवाना	१/२ "
कुम्बरका नाला ...	९ "		

ऊपर (ऊपरी) सिन्धसे लावर (नीचे) सिन्धको सडक गई है।

पहाडियों पर्वत श्रेणियों और कभी २ मैदानमें होकर है। (यहां पर्वत श्रेणी 'मुगरा' कहलाती हैं) आगेके तीन कोशमें केवल रेत और पर्वतकी श्रेणियां पडती हैं और शेष नौ कोशमें लगातार एक ऊंचा टीला चला गया है। इस चौवीस कोशकी यात्रामें न कोई कुँआ पडता है और न वर्षाऋतुके सिवाय पानीका एक बून्द भी दिखलाई पडता है, जब कि पानी पुराने तालाबों या बावडीमें एकत्र होता है। यहाँ नदीको तावा कहते हैं, जो अर्द्ध मार्गपर स्थित है जहां कि प्राचीन कालमें एक नगर बसता था। लोग कहते हैं कि सिन्धको इन देशोंके मुसलमान द्वारा विजय किये जानेके पहिले घाटी और मरुभूमिपर प्रमर और सोलंकी जातिके राजपूतोंका अधिकार था। प्राचीन ताल और मन्दिरोंके भग्नावशेष यद्यपि रेतकी राशिसे बहुत कुछ दब गये हैं, तो भी वे इस बातकी साक्षीभूत हैं कि समस्त 'थल' किसी समय आवाद--चाहे अधिक या कम था। वंशपरंपरागत वार्तासे विदित होता है कि बारहवीं सदीमें लाखा फूलनीके समयमें बारह बरसका अकाल पडा था। जिसने इस देशको उजाड दिया और अकाल मृत्युसे बचे हुए प्राणी सिन्धके समतल मैदान या कूर्चाको भाग गये। इस मरुभूमिमें अनेक खेतीके योग्य स्थान हैं जिसके आगे पशुओंके चरानेवाले चाहे सोढा राजूर या सुमैचा क्यों न हों--वह वह रर,ररिमेंसे किसीको लगा देते हैं। उपरोक्त शब्द मरुभूमिमें पानीके लिये व्यवहृत होते हैं।

मारे	२ कोश	ये सब दश २ झोपडोंके गांव हैं जिनमें राजूरा निवास करते जो इस थलमें खेती करते है या गाय ऊंट भैंस बकरियोंके झुंडको चराते हैं। इन गाँवोंमें अनेक ताल हैं। राजूरकी वस्तीका ताल 'महादेवका दे' कहलाता है।
पलरी	३ "	
राजूरकी वस्ती	२ "	
राजूरका गांव	२ "	

देवचन्देश्वर महादेव (२ कोश) सोढा राजाओंके राजकालमें यहांपर एक नगर था और महादेवका मन्दिर सूरजकुंडके किनारेपर किर्माण किया गया था जिसके खंडहर अब भी विद्यमान हैं। मुसलमानोंने मन्दिरको तोड डाला और तालका नाम बदलकर 'दीन-वाह' रख दिया। यह छोटासा कुंड ईटोंका बना है और खजूर और अनारके वृक्ष उसके तटकी शोभाको बढाते हैं और मुल्ला-सिन्धसे आया हुआ-यहांपर रहता है जिसको सब मुसलमान भेंट देते हैं। इस स्थानके चारों ओर बारह कोशतक असंख्य ताल ही ताल चले गये हैं जहां कि राजूर अपने पशुओंको चराते हैं और खेती करते हैं। इनके झोपडे गोपुच्छाकार होते हैं और इनकी चोटीपर खंभे बांध दिये जाते हैं जिनको घास और पत्तियोंसे आच्छादित करते हैं और प्रायः ऊंटके बालोंका बडा कम्मल खंभोंपर फैला देते हैं।

चन्द्रिकाकी वस्ती-(२ कोश) गांवमें चन्दी जातिके मुसलमान रहते हैं। ये यात्रियोंके दानपर अपना जीवन निर्वाह करते हैं।

राजूरकी वस्ती	२	कोश	इन गाँवोंमें गडरिये सुमैचा, राजूर और दूसरे लोग निवास करते हैं जो अपने पशुओंको लेकर एक स्थानसे दूसरे स्थानको चले जाते हैं जब कि हरित भूमि उनका आश्रय देनेके लिये असमर्थ हो जाती है । इस स्थानमें उनकी आवश्यकताको पूरा करनेके लिये विदानीकी प्रचुरता है ।
सुमैचाका दो	२	,,	
राजूरका ,,	१	,,	
,, ,,	२	,,	
,, ,,	२	,,	
,, ,,	२	,,	
,, ,,	२	,,	
,, ,,	२	,,	

ओघनिया–७ कोश बारह झोपडे, राजूरका दो और इसके बीचमें पानीका नाम निशान नहीं है ।

नह्राह–(५कोश) (थल) या मरुभूमिका ढालूपन नालेके एक मील पूर्वकी ओर समाप्त हो जाता है और लोग कहते हैं कि यह वही नाला है जो रोरीवेखरके ऊपर डूराके निकट इन्दूरसे निकलता है, रोरीवेखरसे यह सोहराव और खैरपुरके पूर्वमें बहता हुआ निकलता है और जिंजर होते हुए वैरसीकाहरको चला जाता है जहाँसे अमरकोट और चीरके लिये इसमेंसे नहर काटी जाती है ।

मित्रा ४ कोश साठ घरका गांव है, जिसमें बलौच रहते हैं हैदराबादका थाना यहाँ है कहीं २ पर नीची रेतकी पहाडियाँ हैं ।

मरिकाकू–६कोश दश २ झोपढेके तीन गांव पृथक् २ हैं जिनमें अरोरा रहे हैं । शिवपुरी ३ कोश एक सौ बीस घर हैं, निवासी अरोरा; नैऋत्यकोणमें छः बुर्जवाला एक छोटासा किला है जिसमें हैदराबादकी सेना रहती है ।

कुभैरका नाला–६ कोश, यह नाला काकुरकी वस्ती और सुकसनूके बीचसे निकलकर पूर्वकी तरफ वहता है संभव है कि यह प्राचीन नहरका प्रवाहमार्ग हो जिसके जाल संपूर्ण देशमें फैले हुए थे ।

सुकरुन्द–२कोश एक सौ घर, एक तृतीयांश हिन्दू,खेतीके योग्य भूमि, असंख्य अनपेच्छितनाले, झौ और खैजटीके जंगलसे हर तरफ परिपूर्ण हैं । नालोंके किनारेपर रुई, नील,चावल, गेहूँ, जौ, चना इत्यादि पैदा होते हैं जूत–२कोश साठ घर सुकरुन्द और जूतूके बीचमें एक नाला है ।

काजीका शहर–४कोश, चार सौ घर दो नाले एक दूसरेको काटते हैं । मखैरो ४ कोश, साठ घर एक नाला मखैरो और जूतूके बीचमें है । काकुरकी वस्ती–६ कोश साठ घर अर्धमार्गमें प्राचीन किलाके खंडहर तीन नहरे वा नाले एक दूसरेको काटते हैं गांव सिन्धुसे चार मील एक पुस्ता या बांधपर बसता है । जिसका पानी वर्षा ऋतुमें गांवके भीतर आ जाता है । पुर–१ कोश उतारा या घाट ।

सिन्धुनदी—१ कोश नावपर बैठकर उस तरफ उतर कर सेवानमें पहुंचे । सेवाने १ ½ दक्षिण किनोरपर बारह सौ घरका एक नगर जो हैदराबादके अधीन है ।

(१) नदीसे कुछ दूरपर एक ऊंचे टीलेपर सेवानका नगर बसा हुआ है और खासकर दक्षिणमें कई कुंज हैं । मकान मट्टीके बने हुए प्राय: तीन मंजिल ऊंचे हैं और छतको साधनेके लिये खम्भोंका उपयोग किया गया है । नगरके उत्तरकी ओर एक प्राचीन और विस्तीर्ण दुर्गके खण्डहर विद्यमान हैं और जिसके सातबुर्ज अब भी दृष्टि गोचर होते हैं; मध्यभागमें राजमहलके चिह्न दिखलाई पडते हैं । जो अब भी भरतरीका महल कहलाता है, लोग कहते हैं कि उज्जैनसे अपने भाई विक्रमादित्यसे निकाले जानेपर यहां भरतरी राज्य करते थे । यद्यपि कई शताब्दी बीत गई जब कि इन देशोंमें हिन्दुओंका राज्य था तो भी वंशपरंपरागत बाकी अब भी बच रही है । वे कहते हैं कि गन्धर्वसेनका ज्येष्ठ पुत्र भरतरी अपनी स्त्रीमें इतना अनुरक्त था कि उसका मन राज्य कार्यमें नहीं लगता था । विक्रमने अपने भाईकी राज्यकार्यमें प्रमादता देखकर उसको बहुत समझाया । ज्योंही यह बात रानीके कर्णगोचर हुई उसने विक्रमको देश निकालेका दण्ड दिलवानेका हठ किया । कुछ दिनोंके बाद एक प्रसिद्ध योगीने राजसभामें आकर राजाको 'अमरफल' प्रदान किया जिसको उसने शंकरकी कठिन तपस्या करके प्राप्त किया था । राजाने वह फल रानीको दे दिया, रानीने अपने जार महावतको दिया, उसने निज वेश्याको दिया, वेश्या गहरे इनाम पानेकी आशासे उसे राजाके पास ले गयी । राजा मनहीमन अपनी रानीके कुलटापन पर क्रोधित होकर रंगमहलको गये और रानीसे फल मांगा । उत्तर मिला "वह खो गया है" । राजाके दिखानेपर रानी मारे कायलीके भाग गयी और अपने महलके नीचे कूदकर उसने आत्महत्या कर ली । राजा अपनी दूसरी रानी पिंगलासे मन बहलाने लगा और थोडे ही दिनोंमें उसके रूपके वशीभूत हो गया । परन्तु पिछले अनुभवके कारण उसको रानीपर सन्देह बना रहता था । एक दिन राजा शिकार खेलने गया । वनमें उसके एक शिकारीने एक हिरन मारा । हिरनी उस स्थानपर आई जहां कि हिरन पडा हुआ था और कुछ कालतक पतिका ध्यान कर उसके शरीरपर गिरकर प्राणको बाहर निकाल दिया । सांपने उसी शिकारीको काटखाया जिसके सोते ही सोते प्राण पखेरू उड गये । उसकी स्त्री उसको तलाश करती हुई वहां आयी और पहिले तो उसने अपने पतिको सोता समझा परन्तु जब उसको यथार्थ बात मालूम हुई तब उसने वनकी लकडियोंको एकत्र कर चिता बनाई और अपने पतिका शव उसपर रक्खा; कुछ देर परिक्रमा करनेके बाद चितामें आग लगाकर पतिके साथ भस्म होगई ! राजाने इन बातोंको देखकर घर पहुंचकर पिंगलासे कहा कि शिकारी की स्त्रीसे बढकर संसारमें कोई स्त्री सती नहीं है। रानीने कहा शिकारीकी स्त्री दुःखके मारे सती हो गयी कि प्रेमसे और यदि प्रेम होता तब चिता बनानेकी कुछ आवश्यकता न होती । कुछ दिनोंके बाद राजा फिर शिकार खेलने गया और रानीकी बात याद करके उसने हिरनको मार अपना वस्त्र उसके खूनमें रंगकर अपने विश्वासी नौकरके हाथ रानीके पास भेज दिया और आज्ञा दी कि रानीसे कहना कि राजा सिंहके शिकार करनेमें मारा गया। पिंगला इन बातोंको सुनकर न रोयी न बोली पर भूमिमें पड़कर सूर्यको दंडवत् कर उसने प्राणको छोड़ दिया ।

चिता बनायी गयी; और रानीका शव नगरके बाहर जलाया जा रहा था जब कि राजा शिकार खेलकर लौटा । स्मशानभूमिमें जाकर जब रा[illegible] अपने कपटका यह फल देखा तब उसने राजसी वस्त्र फेंक कर फकीरी वस्त्र धारण किया और विक्रमको उज्जैनका राज्य देकर वनमें चला गया ।

सेवानसे हैदराबाद।

जूटकी वस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जोहूत करते हैं यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपडोंवाला है, गांवके निकट ही पहाडी है।

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल "हाय पिंगला! हाय पिंगला" के सिवाय कुछ नहीं निकलता था। आखिरकार राजानें सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया; यद्यपि वे उस स्थानको बतलाते हैं जिसको मुसलमान भरतरीका आमखास कहते हैं तो भी किला अधिकतर प्राचीन है। भरतरीका मंदिर नगरके दक्षिणमें है। इस मंदिरमें मुसल्मानोंने लाल-पीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसलमान) सिन्धको विजय करनेमें सफलीभूत हुए। इस सन्तके स्मारक मंदिरके मध्यमें चारों तरफ लकडि-योंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था। यह बडा ही आश्चर्यजनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसल्मान एक ही स्थानमें पूजा करते हैं और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते हैं तो भी दोनों ही ताखमें रक्खे हुए सालिगरामकी बडी मूर्तिका पूजन करते हैं। वास्तवमें यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और वातको प्रमाणित करती है कि यहांके लोग तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गये थे, वह मुसल्मान जो पहिले हिंदू था प्रायःबडा ही आग्रही और असहनशील होता है। मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान् दूतोंने—मदारीलाल और घातीने मुझको सेवानके किलेके खण्डहरकी एक ईंट ला कर दी। इसकी लम्बाई चौडाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजानेपर घंटाके समान बजती थी। वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो बिलकुल साबित थे परन्तु (कार्बन) में परि-णत हो गये थे। वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहां हजारों बरससे पडे हैं। इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख-सेवानके अधिकारमें था। निःसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमें उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले सम-यमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोंतक न ले जा सके उसको उन्होंने फूक दिया। सिक्खोंके गुरु नानकका वाडा नदी और किलेके मध्यमें है। सेवानमें हिन्दू और मुसलमानोंकी आबादी बराबर है, हिंदुओंमें जैसलमेरसे आई हुई व्यापार करनेवाली मैसुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढियोंसे यहां रहती है। पोकरन (१) जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते हैं। मुसल्मानोंमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिंदू अमीर हैं! रुई, नील और धान जो अधिक परिमाणमें सेवानके समीपमें होते हैं, रहा और कराचीवन्दरके वन्दरगाहों की बडी(२) नावोंमें जिनको मुसलमान खेते हैं भेजा जाता है। सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिंधुनदीके समानान्तर रेखामें सेवानसे तीन मीलके करीब पहुंचकर वायव्य कोणकी तरफ मुडती है। इन सब पहाडियोंमें मेकरानके किनारे हिंग-लाज माता (३) के मंदिरतक लुमरी या नुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलोच कहते जीतवंशके हैं।

---

(१) जैसलमेरका इतिहास देखो।

(२) यह प्रसिद्ध मंदिर रहासे कराची बंदर होते हुए नौ दिनकी रास्तापर है और समुद्र-तटसे करीब ९ मील है असंख्य हिंदूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते हैं।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दा हैं।

सुमैचाकी बस्ती (२ ½ कोश) छोटासा गांव ।

लूखो (२ ½ कोश) साठ घर नदोसे डेढ कोशपर गांवसे उत्तरकी तरफ–तहरतट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाडियोंमें एक स्थानपर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल हैं जिनमेंसे तीन [१]गर्म पानीके हैं ।

ऊमरी– ९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर हैं; एक कोश पश्चिम नीची पहाडियां हैं ।

सूपरी–३ कोश नदीके पहाडियोंपर पचास घर, डेढ कोश पश्चिम ।

सिन्दू–४ कोश नदीसे दो सौ गजपर एक बाजार है; गांवमें दो सौ घर हैं. डेढ कोश पश्चिमकी ओर।

मजेन्द–४ ½ कोश नदी तटपर दो सौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाडियां ।

ओमुरकी बस्ती--३ कोश नदीके निकट थोडेसे झोपडे ।

सैदयकी बस्ती ३ कोश ।

शिकारपुर–४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर । हैदराबाद ३ कोश सिन्धनदीसे डेढ कोश हैदराबादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीवेरूरु छः कोश कुल जोड तैंतालीस कोश ।

हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखाँकी बस्ती ३ कोश, फुलैती नदीका पश्चिमी तट ताजपुर ३ कोश, बडानगर हैदराबादके ईशान कोणमें कुतरैल २ ½ कोश एक सौ घर ।

नूसुरपुर १ ½ कोश ताजपुरके पूर्वमें बडा शहर है ।

अलिपरका [२]टंडा-४कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमें अलियरखाँने जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर बनवाया था । नगरके दो कोश उत्तरमें

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तियोंको पार करके इन तालोंमें स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते हैं ! इनमेंसे दो गर्म हैं और सूर्यकुण्ड और चन्द्रकुण्ड कहलाते हैं और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोंसे संपन्न हैं । इन कुंडोंके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करनेके पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमें कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ बनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है । लोग कहते हैं कि यदि पापी बिना अपनी पापकहानी कहे कुण्डमें कूद पडे तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोंसे आच्छादित दिखाई पडता है । रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओंमें पापकहानी कहनेकी प्राचीन रीति चली आती है ।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके बीचमें जो संधि हुई थी उसके अनुसार ' संकरा ' भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था और इसी सबबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकारमें चला गया था । जो सिंधुनदीके पूर्वमें था । लोग कहते हैं कि वह यह 'संकरा' है परन्तु दूसरे कहते हैं वह रोरीबेखरके ऊपर दूरीसे निकलता है ।

सेवानसे हैदराबाद।

जूटकी वस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जोहूत करते हैं यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपडोंवाला है, गांवके निकट ही पहाडी है।

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल "हाय पिंगला! हाय पिंगला" के सिवाय कुछ नहीं निकलता था। आखिरकार राजाने सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया; यद्यपि वे उस स्थानको वतलाते हैं जिसको मुसलमान भरतरीका आमखास कहते हैं तो भी किला अधिकतर प्राचीन है। भरतरीका मंदिर नगरके दक्षिणमें है। इस मंदिरमें मुसलमानोंने लाल-पीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसलमान) सिन्धको विजय करनेमें सफलीभूत हुए। इस सन्तके स्मारक मंदिरके मध्यमें चारों तरफ लकडि-योंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था। यह बडा ही आश्चर्यजनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसलमान एक ही स्थानमें पूजा करते हैं और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते हैं तो भी दोनों ही ताखमें रक्खे हुए सालिगरामकी बडी मूर्तिका पूजन करते हैं। वास्तवमें यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और बातको प्रमाणित करती है कि यहांके लोग तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गये थे, वह मुसल्मान जो पहिले हिंदू था प्रायः बडा ही आग्रही और असहनशील होता है। मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान् दूतोंने—मदा-रीलाल और घातीने मुझको सेवानके किलेके खण्डहरकी एक ईंट ला कर दी। इसकी लम्बाई चौडाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजानेपर घंटाके समान वजती थी। वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो विलकुल सावित थे परन्तु (कार्बन) में परि-णत हो गये थे। वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहां हजारों वरससे पडे हैं। इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख-सेवानके अधिकारमें था। निःसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमें उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले सम-यमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोंतक न ले जा सके उसको उन्होंने फूंक दिया। सिक्खोंके गुरु नानकका वाडा नदी और किलेके मध्यमें है। सेवानमें हिन्दू और मुसलमानोंकी आवादी बराबर है, हिंदुओंमें जैसलमेरसे आई हुई व्यापार करनेवाली मैसुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढियोंसे यहां रहती है। पोकरन (१) जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते हैं। मुसल्मानोंमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिंदू अमीर हैं! रुई, नील और धान जो अधिक परिमाणमें सेवानके समीपमें होते हैं, रहा और कराचीवन्दरके वन्दरगाहों की बडी(२) नावोंमें जिनको मुसलमान खेते हैं भेजा जाता है। सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिंधुनदीके समानान्तर रेखामें सेवानसे तीन मीलके करीब पहुंचकर वायव्य कोणकी तरफ मुडती है। इन सब पहाडियोंमें मेकरानके किनारे हिंग-लाज माता (३) के मंदिरतक लुमरी या नुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलोच कहते जीतवंशके हैं।

(१) जैसलमेरका इतिहास देखो।

(२) यह प्रसिद्ध मंदिर रहासे कराची बंदर होते हुए नौ दिनकी रास्तापर है और समुद्र-तटसे करीब ९ मील है असंख्य हिंदूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते हैं।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दी हैं।

सुमैचाकी बस्ती (२ ½ कोश) छोटासा गांव ।

लूखो (२ ½ कोश) साठ घर नदीसे डेढ कोशपर गांवसे उत्तरकी तरफ–तहरतट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाडियोंमें एक स्थानपर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल हैं जिनमेंसे तीन गर्म पानीके हैं ।

ऊमरी–९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर हैं; एक कोश पश्चिम नीची पहाडियां हैं ।

सूमरी–३ कोश नदीके पहाडियोंपर पचास घर, डेढ कोश पश्चिम ।

सिन्दू–४ कोश नदीसे दो सौ गजपर एक बाजार है; गांवमें दो सौ घर हैं. डेढ कोश पश्चिमकी ओर।

मजेन्द–४ ½ कोश नदी तटपर दो सौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाडियां ।

ओमुरकी बस्ती--३ कोश नदीके निकट थोडेसे झोपडे ।

सैदयकी बस्ती ३ कोश।

शिकारपुर–४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर। हैदराबाद ३ कोश सिन्धनदीसे डेढ कोश हैदराबादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीबेरूरु छः कोश कुल जोड तैंतालीस कोश ।

हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखाँकी बस्ती ३ कोश, फुलैती नदीका पश्चिमी तट ताजपुर ३ कोश, बडानगर हैदराबादके ईशान कोणमें कुतरैल २ ½ कोश एक सौ घर ।

नूसुरपुर १ ½ कोश ताजपुरके पूर्वमें वडा शहर है ।

अलिपरका टंडा[2]-४कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमें अलियरखाँने जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर बनवाया था । नगरके दो कोश उत्तरमें

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तियोंको पार करके इन तालोंमें स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते हैं । इनमेंसे दो गर्म हैं और सूर्यकुण्ड और चन्द्रकुण्ड कहलाते हैं और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोंसे संपन्न हैं । इन कुंडोंके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करनेके पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमें कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ बनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है । लोग कहते हैं कि यदि पापी विना अपनी पापकहानी कहे कुण्डमें कूद पडे तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोंसे आच्छादित दिखाई पडता है । रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओंमें पापकहानी कहनेकी प्राचीन रीति चली आती है ।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके बीचमें जो संधि हुई थी उसके अनुसार ' संकरा ' भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था और इसी सबबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकारमें चला गया था। जो सिंधुनदीके पूर्वमें था । लोग कहते हैं कि वह यह 'संकरा' है परन्तु दूसरे कहते हैं वह रोरीबेखरके ऊपर दूरीसे निकलता है ।

सेवानसे हैदराबाद।

जूटकी वस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जोहूत करते हैं यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपडोंवाला है, गांवके निकट ही पहाडी है।

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल "हाय पिंगला! हाय पिंगला" के सिवाय कुछ नहीं निकलता था। आखिरकार राजाने सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया; यद्यपि वे उस स्थानको बतलाते हैं जिसको मुसलमान भरतरीका आमखास कहते हैं तो भी किला अधिकतर प्राचीन है। भरतरीका मंदिर नगरके दक्षिणमें है। इस मंदिरमें मुसल्मानोंने लाल-पीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसलमान) सिन्धको विजय करनेमें सफलीभूत हुए। इस सन्तके स्मारक मंदिरके मध्यमें चारों तरफ लकडि-योंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था। यह बडा ही आश्चर्यजनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसलमान एक ही स्थानमें पूजा करते हैं और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते हैं तो भी दोनों ही ताखमें रक्खे हुए सालिगरामकी बडी मूर्तिका पूजन करते हैं। वास्तवमें यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और बातको प्रमाणित करती है कि यहांके लोग तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गये थे, वह मुसल्मान जो पहिले हिंदू था प्रायः बडा ही आग्रही और असहनशील होता है। मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान् दूतोंने—मदारीलाल और घातीने मुझको सेवानके किलेके खण्डहरकी एक ईंट ला कर दी। इसकी लम्बाई चौडाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजानेपर घंटाके समान बजती थी। वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो बिलकुल साबित थे परन्तु (कार्बन) में परिणत हो गये थे। वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहां हजारों बरससे पडे हैं। इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख-सेवानके अधिकारमें था। निःसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमें उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले समयमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोंतक न ले जा सके उसको उन्होंने फूक दिया। सिक्खोंके गुरु नानकका बाडा नदी और किलेके मध्यमें है। सेवानमें हिन्दू और मुसलमानोंकी आबादी बराबर है, हिंदुओंमें जैसलमेरसे आई हुई व्यापार करनेवाली मैसुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढियोंसे यहां रहती है। पोकरन (१) जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते हैं। मुसल्मानोंमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिंदू अमीर हैं! रुई, नील और धान जो अधिक परिमाणमें सेवानके समीपमें होते हैं, रहा और कराचीबन्दरके बन्दरगाहों की बडी(२) नावोंमें जिनको मुसलमान खेते हैं भेजा जाता है। सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिंधुनदीके समानान्तर रेखामें सेवानसे तीन मीलके करीब पहुंचकर वायव्य कोणकी तरफ मुडती है। इन सब पहाडियोंमें मेकरानके किनारे हिंग-लाज माता (३) के मंदिरतक लुमरी या नुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलोच कहते जीतवंशके हैं।

---

(१) जैसलमेरका इतिहास देखो।

(२) यह प्रसिद्ध मंदिर रहासे कराची बंदर होते हुए नौ दिनकी रास्तापर है और समुद्र-तटसे करीब ९ मील है असंख्य हिंदूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते हैं।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दी हैं।

सुमैचाकी बस्ती (२ ½ कोश) छोटासा गांव ।

लूखो (२ ½ कोश) साठ घर नदीसे डेढ कोशपर गांवसे उत्तरकी तरफ–तहरतट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाडियोंमें एक स्थानपर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल हैं जिनमेंसे तीन गर्म पानीके हैं ।

ऊमरी– ९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर हैं; एक कोश पश्चिम नीची पहाडियां हैं ।

सूमरी–३ कोश नदीके पहाडियोंपर पचास घर, डेढ कोश पश्चिम ।

सिन्दू–४ कोश नदीसे दो सौ गजपर एक बाजार है; गांवमें दो सौ घर हैं. डेढ कोश पश्चिमकी ओर ।

मजेन्द–४ ½ कोश नदी तटपर दो सौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाडियां ।

ओमुरकी बस्ती--३ कोश नदीके निकट थोडेसे झोपडे ।

सैदयकी बस्ती ३ कोश ।

शिकारपुर–४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर । हैदराबाद ३ कोश सिन्धनदीसे डेढ कोश हैदराबादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीवेरूरु छः कोश कुल जोड तैंतालीस कोश ।

हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखाँकी बस्ती ३ कोश, फुलैती नदीका पश्चिमी तट ताजपुर ३ कोश, बडानगर हैदराबादके ईशान कोणमें कुतरैल २ ½ कोश एक सौ घर ।

नूसुरपुर १ ½ कोश ताजपुरके पूर्वमें वडा शहर है ।

अलिपरका टंडा[2]-४कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमें अलियरखाँने जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर बनवाया था । नगरके दो कोश उत्तरमें

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तियोंको पार करके इन तालोंमें स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते हैं । इनमेंसे दो गर्म हैं और सूर्यकुण्ड और चन्द्रकुण्ड कहलाते हैं और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोंसे संपन्न हैं । इन कुंडोंके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करनेके पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमें कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ बनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है । लोग कहते हैं कि यदि पापी बिना अपनी पापकहानी कहे कुण्डमें कूद पडे तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोंसे आच्छादित दिखाई पडता है । रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओंमें पापकहानी कहनेकी प्राचीन रीति चली आती है ।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके बीचमें जो संधि हुई थी उसके अनुसार ' संकरा ' भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था और इसी सबबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकारमें चला गया था। जो सिंधुनदीके पूर्वमें था । लोग कहते हैं कि वह यह 'संकरा' है परन्तु दूसरे कहते हैं वह रोरीबेखरके ऊपर दूरीसे निकलता है ।

सेवानसे हैदराबाद।

जूटकी वस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जोहूत करते हैं यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपडोंवाला है, गांवके निकट ही पहाडी है।

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल "हाय पिंगला! हाय पिंगला" के सिवाय कुछ नहीं निकलता था। आखिरकार राजाने सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया; यद्यपि वे उस स्थानको बतलाते हैं जिसको मुसलमान भरतरीका आमखास कहते हैं तो भी किला अधिकतर प्राचीन है। भरतरीका मंदिर नगरके दक्षिणमें है। इस मंदिरमें मुसल्मानोंने लाल-पीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसलमान) सिन्धको विजय करनेमें सफलीभूत हुए। इस सन्तके स्मारक मंदिरके मध्यमें चारों तरफ लकडि-योंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था। यह बडा ही आश्चर्यजनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसल्मान एक ही स्थानमें पूजा करते हैं और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते हैं तो भी दोनों ही ताखमें रक्खे हुए सालिगरामकी बडी मूर्तिका पूजन करते हैं। वास्तवमें यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और बातको प्रमाणित करती है कि यहांके लोग तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गये थे, वह मुसल्मान जो पहिले हिंदू था प्रायः बडा ही आग्रही और असहनशील होता है। मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान् दूतोंने—मदा-रीलाल और घातीने मुझको सेवानके किलेके खण्डहरकी एक ईंट ला कर दी। इसकी लम्बाई चौडाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजानेपर घंटाके समान बजती थी। वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो बिलकुल सावित थे परन्तु (कार्बन) में परि-णत हो गये थे। वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहां हजारों बरससे पडे हैं। इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख-सेवानके अधिकारमें था। निःसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमें उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले सम-यमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोंतक न ले जा सके उसको उन्होंने फूक दिया। सिक्खोंके गुरु नानकका बाडा नदी और किलेके मध्यमें है। सेवानमें हिन्दू और मुसलमानोंकी आवादी बराबर है, हिंदुओमें जैसलमेरसे आई हुई व्यापार करनेवाली मैमुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढियोंसे यहां रहती है। पोकरन (१) जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते हैं। मुसल्मानोंमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिंदू अमीर हैं! रुई, नील और धान जो अधिक परिमाणमें सेवानके समीपमें होते हैं, रहा और कराचीवन्दरके वन्दरगाहों की बडी(२) नावोंमें जिनको मुसलमान खेते हैं भेजा जाता है। सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिंधुनदीके समानान्तर रेखामें सेवानसे तीन मीलके करीब पहुंचकर वायव्य कोणकी तरफ मुडती है। इन सब पहाडियोंमें मेकरानके किनारे हिंग-लाज माता (३) के मंदिरतक लुमरी या नुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलोच कहते जोतवंशके हैं।

---

(१) जैसलमेरका इतिहास देखो।

(२) यह प्रसिद्ध मंदिर रहासे कराची बंदर होते हुए नौ दिनकी रास्तापर है और समुद्र-तटसे करीब ९ मील है असंख्य हिंदूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते हैं।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दी हैं।

सुमैचाकी बस्ती (२ ½ कोश) छोटासा गांव ।

लूखो (२ ½ कोश) साठ घर नदीसे डेढ कोशपर गांवसे उत्तरकी तरफ–तहरतट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाडियोंमें एक स्थानपर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल हैं जिनमेंसे तीन गर्म पानीके हैं।[1]

ऊमरी–९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर हैं; एक कोश पश्चिम नीची पहाडियां हैं ।

सूमरी–३ कोश नदीके पहाडियोंपर पचास घर, डेढ कोश पश्चिम ।

सिन्दू–४ कोश नदीसे दो सौ गजपर एक बाजार है; गांवमें दो सौ घर हैं. डेढ कोश पश्चिमकी ओर।

मजेन्द–४ ½ कोश नदी तटपर दो सौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाडियां ।

ओमुरकी बस्ती--३ कोश नदीके निकट थोडेसे झोपडे ।

सैदयकी बस्ती ३ कोश ।

शिकारपुर–४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर । हैदराबाद ३ कोश सिन्धनदीसे डेढ कोश हैदराबादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीबेरूरु छः कोश कुल जोड तैंतालीस कोश ।

हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखाँकी बस्ती ३ कोश, फुलैती नदीका पश्चिमी तट ताजपुर ३ कोश, बडानगर हैदराबादके ईशान कोणमें कुतरैल २ ½ कोश एक सौ घर ।

नूसुरपुर १ ½ कोश ताजपुरके पूर्वमें वडा शहर है ।

अलिपरका टंडा[2]-४कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमें अलियरखाँने जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर बनवाया था । नगरके दो कोश उत्तरमें

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तियोंको पार करके इन तालोंमें स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते हैं । इनमेंसे दो गर्म हैं और सूर्यकुण्ड और चन्द्रकुण्ड कहलाते हैं और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोंसे संपन्न हैं । इन कुंडोंके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करनेके पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमें कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ बनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है । लोग कहते हैं कि यदि पापी बिना अपनी पापकहानी कहे कुण्डमें कूद पडे तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोंसे आच्छादित दिखाई पडता है । रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओंमें पापकहानी कहनेकी प्राचीन रीति चली आती है।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके बीचमें जो संधि हुई थी उसके अनुसार 'संकरा' भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था और इसी सबबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकारमें चला गया था। जो सिंधुनदीके पूर्वमें था। लोग कहते हैं कि वह यह 'संकरा' है परन्तु दूसरे कहते हैं वह रोरीबेखरके ऊपर दूरीसे निकलता है ।

सेवानसे हैदराबाद।

जूटकी वस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जोहूत करते हैं यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपडोंवाला है, गांवके निकट ही पहाडी है।

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल "हाय पिंगला! हाय पिंगला" के सिवाय कुछ नहीं निकलता था। आखिरकार राजाने सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया; यद्यपि वे उस स्थानको बतलाते हैं जिसको मुसलमान भरतरीका आमखास कहते हैं तो भी किला अधिकतर प्राचीन है। भरतरीका मंदिर नगरके दक्षिणमें है। इस मंदिरमें मुसल्मानोंने लालपीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसलमान) सिन्धको विजय करनेमें सफलीभूत हुए। इस सन्तके स्मारक मंदिरके मध्यमें चारों तरफ लकडियोंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था। यह बडा ही आश्चर्यजनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसल्मान एक ही स्थानमें पूजा करते हैं और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते हैं तो भी दोनों ही ताखमें रक्खे हुए सालिगरामकी बडी मूर्तिका पूजन करते हैं। वास्तवमें यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और बातको प्रमाणित करती है कि यहांके लोग तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गये थे, वह मुसल्मान जो पहिले हिंदू था प्रायः बडा ही आग्रही और असहनशील होता है। मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान् दूतोंने—मदारीलाल और घातीने मुझको सेवानके किलेके खण्डहरकी एक ईंट ला कर दी। इसकी लम्बाई चौडाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजानेपर घंटाके समान बजती थी। वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो बिलकुल साबित थे परन्तु (कार्बन) में परिणत हो गये थे। वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहां हजारों बरससे पडे हैं। इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख–सेवानके अधिकारमें था। निःसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमें उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले समयमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोंतक न ले जा सके उसको उन्होंने फूक दिया। सिक्खोंके गुरु नानकका बाडा नदी और किलेके मध्यमें है। सेवानमें हिन्दू और मुसलमानोंकी आबादी बराबर है, हिंदुओंमें जैसलमेरसे आई हुई व्यापार करनेवाली मैसुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढियोंसे यहां रहती है। पोकरन (१) जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते हैं। मुसल्मानोंमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिंदू अमीर हैं! रुई, नील और धान जो अधिक परिमाणमें सेवानके समीपमें होते हैं, रहा और कराचीबन्दरके बन्दरगाहों की बडी(२) नावोंमें जिनको मुसलमान खेते हैं भेजा जाता है। सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिंधुनदीके समानान्तर रेखामें सेवानसे तीन मीलके करीब पहुंचकर वायव्य कोणकी तरफ मुडती है। इन सब पहाडियोंमें मेकरानके किनारे हिंग–लाज माता (३) के मंदिरतक लुमरी या लुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलोच कहते जीतवंशके हैं।

---

(१) जैसलमेरका इतिहास देखो।

(२) यह प्रसिद्ध मंदिर रहासे कराची बंदर होते हुए नौ दिनकी रास्तापर है और समुद्रतटसे करीब ९ मील है असंख्य हिंदूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते हैं।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दी हैं।

सुमैचाकी बस्ती (२ ½ कोश) छोटासा गांव ।

लूखो (२ ½ कोश) साठ घर नदीसे डेढ कोशपर गांवसे उत्तरकी तरफ–तहरतट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाडियोंमें एक स्थानपर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल हैं जिनमेंसे तीन गर्म पानीके हैं ।

ऊमरी–९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर हैं; एक कोश पश्चिम नीची पहाडियां हैं ।

सूमरी–३ कोश नदीके पहाडियोंपर पचास घर, डेढ कोश पश्चिम ।

सिन्दू–४ कोश नदीसे दो सौ गजपर एक बाजार है; गांवमें दो सौ घर हैं. डेढ कोश पश्चिमकी ओर ।

मजेन्द–४ ½ कोश नदी तटपर दो सौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाडियां ।

ओमुरकी बस्ती--३ कोश नदीके निकट थोडेसे झोपडे ।

सैदयकी बस्ती ३ कोश ।

शिकारपुर–४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर । हैदराबाद ३ कोश सिन्धनदीसे डेढ कोश हैदराबादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीवेरूरु छः कोश कुल जोड तैंतालीस कोश ।

हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखाँकी बस्ती ३ कोश, फुलैती नदीका पश्चिमी तट ताजपुर ३ कोश, बडानगर हैदराबादके ईशान कोणमें कुतरैल २ ½ कोश एक सौ घर ।

नूसुरपुर १ ½ कोश ताजपुरके पूर्वमें वडा शहर है ।

अलिपरका टंडा[2]-४कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमें अलियरखाँने जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर बनवाया था । नगरके दो कोश उत्तरमें

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तियोंको पार करके इन तालोंमें स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते हैं । इनमेंसे दो गर्म हैं और सूर्यकुण्ड और चन्द्रकुण्ड कहलाते हैं और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोंसे संपन्न हैं । इन कुंडोंके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करनेके पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमें कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ बनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है । लोग कहते हैं कि यदि पापी बिना अपनी पापकहानी कहे कुण्डमें कूद पडे तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोंसे आच्छादित दिखाई पडता है । रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओंमें पापकहानी कहनेकी प्राचीन रीति चली आती है ।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके बीचमें जो संधि हुई थी उसके अनुसार ‘ संकरा ’ भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था और इसी सबबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकारमें चला गया था । जो सिंधुनदीके पूर्वमें था । लोग कहते हैं कि वह यह ‘संकरा’ है परन्तु दूसरे कहते हैं वह रोरीबेखरके ऊपर दूरीसे निकलता है ।

सांगराका नाला है, जिसके बारेमें लोग कहते हैं कि हाला और मुकुरुन्दके बीचमें सिंध नदीसे निकला है और जंडिलाके पाससे गुजरता है

मीरबह ५ कोश चालीस घर, बह, टंडा, गोट, पुरवा, गांव शब्दके लिये समानार्थक हैं।

सुनारियो--७ कोश चालीस घर।

दिनगानो--४ कोश सिंधके समतल प्रदेशकी सीमा यह गांव है। उत्तरकी तरफ पांच और छः मीलकी दूरीपर रेतकी पहाडियां हैं दिनगानोके नीचे एक छोटीसी नदी बहती है।

कोरसानो ७ कोश सौ घर। कोरसानोके पूर्व दो कोशकी दूरीपर एक प्राचीन नगरके खंडहर दृष्टिगोचर होते हैं। ईंटेके मकानात कुआँ और बावडी अबतक विद्यमान हैं। उत्तरकी तरफ दो या तीन कोशपर रेतकी पहाडियां हैं।

अमरकोट ८ कोश हैदराबादसे अमरकोटतक एक विस्तीर्ण मैदान चला गया है जो मरुभूमिकी रेतके पहाडियोंके शिरेपर नीची भूमिपर बनाया गया है। इस समस्त देशमें जिसका रकवा कच्चा चौवालिस कोश है और सुनारियोतककी भूमि अत्यन्त उत्कृष्ट है और सिन्धुनदीके नहरोंके द्वारा सम्यक्‌तया सींची जाती है। गांवोंके चारों तरफ खूब खेती होती है और यहांकी भूमि स्वभावतः उपजाऊ होनेपर भी विशेषकर बबूल निरन्तर हरित झल और झोंके जंगलसे परिपूर्ण है। सुनारियोसे अमरकोटतक लगातार एक जंगल चला गया है जिसमें खेती करनेके योग्य कुछ भूमिके टुकडे हैं जहाँकी खेती दैवाधीन है यहाँकी भूमि इतनी अच्छी नहीं है जितनी कि प्रथम मार्गकी है।

कत्तार--४ कोश अमरकोटके पूर्वमें एक मीलकी दूरीसे रेतकी पहाडियाँ प्रारम्भ होती हैं जिनकी उँचाई डेढ सौ फीटसे दो सौ फीटतक है। कुछ झोपडे सुमैचा जातिके हैं जो यहाँ अपने पशु चराते हैं, दो कुएँ हैं।

धोतकी बस्ती--४ कोश कुछ झोपडे,एक कुआँ, धोते सोढा और सिन्धी यहाँ खेती करते हैं और पशु चराते हैं।

धारना—८ कोश सौ घरकी बस्ती है जिसमें पोकरन ब्राह्मण और बनिया रहते हैं जो गडरियोंसे घी खरीदकर भुज और घाटीको भेजते हैं। यह व्यापारकी मंडी है, पूर्वके कारवाँ यहाँ अपनी वस्तुओंके बदलेमें घी ले लेते हैं जो यहाँपर ' रो ' में भेडोंकी बहुतायतके सबबसे बहुत ही सस्ता है।

खैरलूका पर तीन कोश, इस समस्त प्रदेशमें तितर वितर अनेक गाँव और ताल ' पर ' हैं।

लनैलो १ ½ कोश सौ घर, पानी,खारी, खैरलूसे पानी ऊंटोंपर आता है।
भोजका पर ३ कोश झोपडे खेतीके योग्य भूमिभू ६ कोश, झोपडे।

गरिरी १० कोश-तीनसौ घरका छोटासा नगर है जो शोभासिंह सोढाके अधिकारमें हैं ! इसके अधीन कई गाँव हैं। घाट और जैसलमेरके राज्योंकी यह सीमा है। घाट पूर्णतया सिन्ध देशमें संमिलित कर दिया गया है। यात्रियोंसे कर वसूल करनेके लिये यहांपर एक 'धाली' रहता है।

हरसानी १० कोश तीनसौ घर, निवासी खासकर भट्टी । यह भट्टी जातिके राजपूतके अधिकारमें है जो मारवाडको कर देता है।

जिनाजिनियाली १० कोश तीनसौ घर-यह जैसलमेरके प्रधान सरदारकी जागीर है इसका नाम कैतसी भट्टी है। यह नगर जैसलमेरकी सीमापर है । एक छोटासा भट्टीका दुर्ग है और अनेक ताल हैं जिनमें नौ महीने तक पानी बना रहता है और रेतकी पहाडियोंकी घाटियोंमें खूब खेती होती है । जिनजिनियालीके उत्तरमें करीब छः कोश पर चारुनका एक गांव है।

गजसिंहकी वस्ती २ कोश पैंतीस मकान। पानीकी कमी चारुनगांवसे ऊंटोंपर लाया जाता है।

हमीर देवरा-५ कोश दो सा घर। करीब १ मील उत्तरकी ओर कई ताल हैं और गांवका पानी खारी होनेके कारण इन तालोंसे पानी ऊंटोंपर आता है। जैसलमेरकी पर्वतश्रेणीकी यहांपर इतिश्री हो जाती है।

चैलक ५ कोश अस्सी घर, कुएँ, चैलक पहाडी पर है।

भोगा ७ कोश चालीस घर, कुआँ, छोटासा ताल है।

भाऊ २ कोश दो सौ घर, पश्चिमकी ओर ताल, छोटे २ कुएँ हैं।

जैसलमेर ५ कोश-इस चक्करदार मार्गसे अमरकोटसे जैसलमेर साढे पचासी कोश है। जिनजिनियालीसे छबीस कोश, गिरपसे सात मील बासे बारह और अमरकोटसे पच्चीस, सब मिलाकर पक्का सत्तर कोश है ऊंटोंका कारवाँ चार दिनमें इस मार्गको आक्रमण कर सकता है और कासिद रात दिन चलते हुए साढे तीन दिनमें पार करते हैं। अन्तिम पच्चीस कोशका मार्ग पूर्णतया मरुभूमिमें होकर है, हैदराबादसे अमरकोटतक चौवालिस कच्चे कोशकी दूरी उपरोक्त कोशमें संमिलित करनेपर उसका जोड १२९ $\frac{1}{2}$ कोश होता है। बिलकुल सिधा मार्गकी दूरी १०५ पक्का कोश कूती गयी है। जो सर्पाकार मार्गके बजा करनेपर भी करीब करीब १९५ अंग्रेजी मीलके होती है। इस मार्गका जोड ८५ $\frac{1}{2}$ कोश।

वैसनौ होते हुए जैसलमेरसे हैदराबाद।

कुलदार ५ कोश।

खावा ५ कोश।

लाखागंज ३० कोश तमाम मार्ग मरुभूमिमें होकर, न गांव न पानी।

---

(१) इस सरदारके मार जानेके वृत्तान्तको जाननेके लिये जैसलमेरका इतिहास देखो।

सांगराका नाला है, जिसके बारेमें लोग कहते हैं कि हाला और मुकुन्दके बीचमें सिंध नदीसे निकला है और जंडिलाके पाससे गुजरता है

मीरबह ५ कोश चालीस घर, वह, टंडा, गोट, पुरवा, गांव शब्दके लिये समानार्थक हैं।

सुनारियो--७ कोश चालीस घर।

दिनगानो--४ कोश सिंधके समतल प्रदेशकी सीमा यह गांव है। उत्तरकी तरफ पांच और छः मीलकी दूरीपर रेतकी पहाडियां हैं दिनगानोके नीचे एक छोटीसी नदी बहती है।

कोरसानो ७ कोश सौ घर। कोरसानोके पूर्व दो कोशकी दूरीपर एक प्राचीन नगरके खंडहर दृष्टिगोचर होते हैं। ईंटेके मकानात कुआँ और बावडी अबतक विद्यमान हैं। उत्तरकी तरफ दो या तीन कोशपर रेतकी पहाडियां हैं।

अमरकोट ८ कोश हैदराबादसे अमरकोटतक एक विस्तीर्ण मैदान चला गया है जो मरुभूमिकी रेतके पहाडियोंके शिरेपर नीची भूमिपर बनाया गया है। इस समस्त देशमें जिसका रकवा कच्चा चौवालिस कोश है और सुनारियोतककी भूमि अत्यन्त उत्कृष्ट है और सिन्धुनदीके नहरोंके द्वारा सम्यक्तया सींची जाती है। गांवोंके चारों तरफ खूब खेती होती है और यहांकी भूमि स्वभावतः उपजाऊ होनेपर भी विशेषकर बवूल निरन्तर हरित झल और झोके जंगलसे परिपूर्ण है। सुनारियोसे अमरकोटतक लगातार एक जंगल चला गया है जिसमें खेती करनेके योग्य कुछ भूमिके टुकडे हैं जहाँकी खेती दैवाधीन है यहाँ-की भूमि इतनी अच्छी नहीं है जितनी कि प्रथम मार्गकी है।

कत्तार--४ कोश अमरकोटके पूर्वमें एक मीलकी दूरीसे रेतकी पहाडियाँ प्रारम्भ होती हैं जिनकी उँचाई डेढ सौ फीटसे दो सौ फीटतक है। कुछ झोपडे सुमेचा जातिके हैं जो यहाँ अपने पशु चराते हैं, दो कुएँ हैं।

धोतकी बस्ती--४ कोश कुछ झोपडे,एक कुआँ, धोते सोढा और सिन्धी यहाँ खेती करते हैं और पशु चराते हैं।

धारना—८ कोश सौ घरकी बस्ती है जिसमें पोकरन ब्राह्मण और बनिया रहते हैं जो गडरियोंसे घी खरीदकर भुज और घाटीको भेजते हैं। यह व्यापारकी मंडी है, पूर्वके कारवाँ यहाँ अपनी वस्तुओंके बदलेमें घी ले लेते हैं जो यहाँपर 'रो' में भेडोंकी बहुतायतके सबबसे बहुत ही सस्ता है।

खैरलूका पर तीन कोश, इस समस्त प्रदेशमें तितर बितर अनेक गाँव और ताल 'पर' हैं।

लनैलो १ $\frac{1}{2}$ कोश सौ घर, पानी,खारी, खैरलूसे पानी ऊंटोंपर आता है।

भोजका पर ३ कोश झोपडे खेतीके योग्य भूमिभू ६ कोश, झोपडे।

गरिरी १० कोश–तीनसौ घरका छोटासा नगर है जो शोभासिंह सोढाके अधिकारमें हैं ! इसके अधीन कई गाँव हैं। घाट और जैसलमेरके राज्योंकी यह सीमा है। घाट पूर्णतया सिन्ध देशमें संमिलित कर दिया गया है। यात्रियोंसे कर वसूल करनेके लिये यहांपर एक 'धानी' रहता है।

हरसानी १० कोश तीनसौ घर, निवासी खासकर भट्टी । यह भट्टी जातिके राजपूतके अधिकारमें है जो मारवाडको कर देता है।

जिनाजिनियाली १० कोश तीनसौ घर–यह जैसलमेरके प्रधान सरदारकी जागीर है इसका नाम कैतसी भट्टी है। यह नगर जैसलमेरकी सीमापर है । एक छोटासा भट्टीका दुर्ग है और अनेक ताल हैं जिनमें नौ महीने तक पानी बना रहता है और रेतकी पहाडियोंकी घाटियोंमें खूब खेती होती है। जिनजिनियालीके उत्तरमें करीब छः कोश पर चारुनका एक गांव है।

गजसिंहकी वस्ती २ कोश पैंतीस मकान। पानीकी कमी चारुनगांवसे ऊंटोंपर लाया जाता है।

हमीर देवरा–५ कोश दो सौ घर। करीब १ मील उत्तरकी ओर कई ताल हैं और गांवका पानी खारी होनेके कारण इन तालोंसे पानी ऊंटोंपर आता है। जैसलमेरकी पर्वतश्रेणीकी यहांपर इतिश्री हो जाती है।

चैलक ५ कोश अस्सी घर, कुएँ, चैलक पहाडी पर है।

भोरा ७ कोश चालीस घर, कुआँ, छोटासा ताल है।

भाऊ २ कोश दो सौ घर, पश्चिमकी ओर ताल, छोटे २ कुएँ हैं।

जैसलमेर ५ कोश–इस चक्करदार मार्गसे अमरकोटसे जैसलमेर साढे पचासी कोश है। जिनजिनियालीसे छबीस कोश, गिरपसे सात मील बासे बारह और अमरकोटसे पच्चीस, सब मिलाकर पक्का सत्तर कोश है ऊंटोंका कारवाँ चार दिनमें इस मार्गको आक्रमण कर सकता है और कासिद रात दिन चलते हुए साढे तीन दिनमें पार करते हैं। अन्तिम पच्चीस कोशका मार्ग पूर्णतया मरुभूमिमें होकर है, हैदराबादसे अमरकोटतक चौवालिस कच्चे कोशकी दूरी उपरोक्त कोशमें संमिलित करनेपर उसका जोड १२९ $\frac{1}{2}$ कोश होता है। बिलकुल सिधा मार्गकी दूरी १०५ पक्का कोश कूती गयी है। जो सर्पाकार मार्गके बजा करनेपर भी करीब करीब १९५ अंग्रेजी मीलके होती है। इस मार्गका जोड ८५ $\frac{1}{2}$ कोश।

वैसनौ होते हुए जैसलमेरसे हैदराबाद।

कुलदार ५ कोश।

खावा ५ कोश।

लाखागंज ३० कोश तमाम मार्ग मरुभूमिमें होकर, न गांव न पानी।

(१) इस सरदारके मार जानेके वृत्तान्तको जाननेके लिये जैसलमेरका इतिहास देखो।

वैशनौ ८ कोश।

वैरसीका रार १६ कोश कुँए।

शीशे-३ कोश।

मीतका घैर ७ कोश अमरकोट २० कोशकी दूरीपर।

जेन्दीला-८ कोश।

ऊलियरका टंडा—(१०) कोश सांकरा नाला।

ताजपुर	४ कोश	प्रथम मार्गसे नूसुरपुर होते हुए ऊलियरका टंडाकी दूरी १३ कोश है या २ कोश इससे अधिक अन्तिम पांच कोशमें पांच नहरें मिलती हैं। इस मार्गका जोड१०३कोश।
जामका टंडा	२ कोश	
हैदराबाद	५ कोश	

जैसलमेरसे शाहगढ होते हुए मीर सोहरावसे खैरपुरतक।

अना सागर २ कोश।

चन्दा १ कोश।

पानीका तर ३ कोश तर या "तिर" या ताड।

पानीकी कुचरी ७ कोश कोई गांव नहीं।

कोरियालो ४ कोश।

शाहगढ २० कोश[1] तमाम मार्गमें 'रो' शाहगढ सीमा है। छः बुर्जवाला एक छोटासा दुर्ग इसमें है और ऊपरी सिन्धके शासकका यह स्थान है।

गुरुसेह ६ कोश।

गुरहर २८ कोश संपूर्ण मार्गमें 'रो' या मरुभूमि, पानीका एक बुन्द भी नहीं। गुरहरसे दो रास्ताएं फूटती हैं एक खैरपुरको दूसरी रानीपुरको।

बलौचकी बस्ती	५ कोश	बलोचा और सुमैचाके गांव हैं।
सुमैचाकी बस्ती	५ कोश	

नल्ला २ कोश यहाँ वही नदी है जो दूरा और प्राचीन नगर अलोरमें होकर बहती है यह नदी मरुभूमिकी सीमा है। खैरपुर १८ कोश ऊपरी सिन्धका शासक और हैदराबाद-के राजाका भाई यहाँ रहता है। बारह बुर्जोंका उसने एक पत्थरका किला निर्माण किया है, जिसका नाम नवकोट है, नालासे खैरपुरतक १८ कोशकी दूरीमें एक समतल प्रदेश है और यहाँकी घाटीकी चौडाई १८ कोश है। निम्न लिखित नगर अत्यन्त महान् है।

---

(१) शेख अब्दुल बरकत शाहगढसे कोरियालाकी दूरी सिर्फ नौ कोश बतलाता है और कोरियालासे ५ कोश पश्चिमको और (कगर) नदीके शुष्क मार्गको पार करनेकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बातका उल्लेख करता है। पानी प्रचुर परिमाणमें उसका प्रवाहमार्ग खोदनेपर मिलता है। असंख्य वैरा मिलते हैं जहां कि गडेरिये अपने पशुओंको ले जाते हैं।

खैरपुरसे लुधाना-सिंधुसे बीस कोस पश्चिममें है और हैदराबादके राजाके पुत्र कुर्मअलीके अधिकारमें है ।

खैरपुरसे लुखी-बीस कोश है ।

खैरपुरसे शिकारपुर-२० कोश है ।

शुरहरसे रानीपुर ।

फरोरा १० कोश पचास घरका गांव, निवासी सिंधी और कुरार चारों तरफ कई गांव, और मीरसोहराबकी तरफसे यहांपर 'धानी' रहता है, इस मार्गसे ऊंटके 'कतार' बहुत निकलते हैं । दूराका नाला फरारोके पूर्वमें दो कोशपर बहता है, फरारो मरुभूमिके सिरेपर है तकुरकी श्रेणी फरारोके पांच कोश पश्चिमसे आरंभ होकर रोरी-बखर-जो (फरारोंसे सोलह कोशकी दूरीपर है) तक चली गई है । फरारोसे सिन्धु-तककी घाटीकी दूरी १८ कोश है ।

रानीपुर १८ कोश ।

जैसलमेरसे रारोबिखर ।

कोरियाली १८ कोश पिछला मार्ग देखो ।

वन्दो ४ कोश उन्दुरजातिके मुसलमान यहां रहते हैं ।

गटरू १६ कोश जैसलमेर और ऊपर (सिन्धकी) सीमा एक छोटेसे किलेमें मीर सोहराबकी सेना रहती है, दो कुएँ एक आदर, सुमैचा और उन्दुरके तीस झोपडोंका गांव है, 'टीबा' भारी या ऊंचे ।

गोदित ३२ कोश गडरियोंके तीस झोपडे एक छोटा भट्टीका किला समस्त प्रदेश मरुभूमिमय पानी नहीं ।

संकराम या संगराम १६ कोश आधी दूरीमें रेतकी पहाडियाँ शेषमें ज्वारके लकडियोंके बने असंख्य झोपडे हैं जो थोडे दिनोंके लिये बना लिये जाते हैं कई नदियाँ ।

नालासंग्रा ½ कोश, यह नाला शेरविखाके उत्तरमें ढाई कोशपर है यह नाला सिन्धमें दूरासे आता है, खेती बहुत रेतकी पहाडियोंके शिरे तिरगाती ½ कोश, बडा नगर महाजन बनियाँ बसते हैं जो यहाँ कितर कहलाते हैं और सुमैचा ।

पर्वतकी निम्न श्रेणी तखरसे ४ कोश-यह छोटी पथरीली श्रेणी उत्तरसे दक्षिणको चली गई है, नवकोट इन श्रेणियोंके पदमें स्थित हैं वे फरारोके उस पार भी चली गयी हैं जो रोरीबेखरसे १६ कोश दूर है । गोमूत, नव कोटसे ६ कोशपर है ।

---

(१) ऊपरी सिन्धसे नीचे सिंधको जानेवाले मार्गपर अनेक नगर हैं ।

वैशनौ ८ कोश।

वैरसीका रार १६ कोश कुँए।

शीम्रो-३ कोश।

सीतका धैर ७ कोश अमरकोट २० कोशकी दूरीपर।

जेन्दीला--८ कोश।

ऊलियरका टंडा—(१०) कोश सांकरा नाला।

ताजपुर	४ कोश	प्रथम मार्गसे नूसुरपुर होते हुए ऊलियरका टंडाकी दूरी १३ कोश है या २ कोश इससे अधिक अन्तिम पांच कोशमें पांच नहरें मिलती हैं। इस मार्गका जोड१०३कोश।
जामका टंडा	२ कोश	
हैदराबाद	५ कोश	

जैसलमेरसे शाहगढ होते हुए मीर सोहरावसे खैरपुरतक।

अना सागर २ कोश।

चन्दा १ कोश।

पानीका तर ३ कोश तर या "तिर" या ताड।

पानीकी कुचरी ७ कोश कोई गांव नहीं।

कोरियाला ४ कोश।

शाहगढ २० कोश[1] तमाम मार्गमें 'रो' शाहगढ सीमा है। छः बुर्जवाला एक छोटासा दुर्ग इसमें है और ऊपरी सिन्धके शासकका यह स्थान है।

गुरुसेह ६ कोश।

गुरहर २८ कोश संपूर्ण मार्गमें 'रो' या मरुभूमि, पानीका एक बुन्द भी नहीं। गुरहरसे दो रास्ताएँ फूटती हैं एक खैरपुरको दूसरी रानीपुरको।

बलौचकी बस्ती	५ कोश	बलोचा और सुमैचाके गांव हैं।
सुमैचाकी बस्ती	५ कोश	

नल्ला २ कोश यहाँ वही नदी है जो दूरा और प्राचीन नगर अलोरमें होकर बहती है यह नदी मरुभूमिकी सीमा है। खैरपुर १८ कोश ऊपरी सिन्धका शासक और हैदराबाद-के राजाका भाई यहाँ रहता है। बारह बुर्जोंका उसने एक पत्थरका किला निर्माण किया है, जिसका नाम नवकोट है, नालासे खैरपुरतक १८ कोशकी दूरीमें एक समतल प्रदेश है और यहाँकी घाटीकी चौडाई १८ कोश है। निम्न लिखित नगर अत्यन्त महान् है।

---

(१) शेख अब्दुल बरकत शाहगढसे कोरियालाकी दूरी सिर्फ नौ कोश बतलाता है और कोरियालासे ५ कोश पश्चिमको ओर (कगर) नदीके शुष्क मार्गको पार करनेकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बातका उल्लेख करता है। पानी प्रचुर परिमाणमें उसका प्रवाहमार्ग खोदनेपर मिलता है। असंख्य वेरा मिलते हैं जहां कि गडेरिये अपने पशुओंको ले जाते हैं।

खैरपुरसे लुधाना-खिधुसे बीस कोस पश्चिममें है और हैदराबादके राजाके पुत्र कुर्मअलीके अधिकारमें है।

खैरपुरसे लुखी-बीस कोश है।

खैरपुरसे शिकारपुर-२० कोश है।

शुरहरसे रानीपुर।

फरोरा १० कोश पचास घरका गांव, निवासी सिंधी और कुरार चारों तरफ कई गांव, और मीरसोहराबकी तरफसे यहांपर 'थानी' रहता है, इस मार्गसे ऊंटके 'कतार' बहुत निकलते हैं। दूराका नाला फरारोके पूर्वमें दो कोशपर बहता है, फरारो मरुभूमिके सिरेपर है तकुरकी श्रेणी फरारोके पांच कोश पश्चिमसे आरंभ होकर रोरी-बखर-जो (फरारोंसे सोलह कोशकी दूरीपर है) तक चली गई है। फरारोसे सिन्धु-तककी घाटीकी दूरी १८ कोश है।

रानीपुर १८ कोश।

जैसलमेरसे रारबिखर।

कोरियाली १८ कोश पिछला मार्ग देखो।

वन्दो ४ कोश उन्दुरजातिके मुसलमान यहां रहते हैं।

गटरू १६ कोश जैसलमेर और ऊपर (सिन्धकी) सीमा एक छोटेसे किलेमें मीर सोहराबकी सेना रहती है, दो कुएँ एक आदर, सुमैचा और उन्दुरके तीस झोप-डोंका गांव है, 'टीबा' भारी या ऊंचे।

गोदित ३२ कोश गडरियोंके तीस झोपडे एक छोटा भट्टीका किला समस्त प्रदेश मरुभूमिमय पानी नहीं।

संकराम या संगराम १६ कोश आधी दूरीमें रेतकी पहाडियाँ शेषमें ज्वारके लक-डियोंके बने असंख्य झोपडे हैं जो थोडे दिनोंके लिये बना लिये जाते हैं कई नदियाँ।

नालासंग्रा ½ कोश, यह नाला शेरविखाके उत्तरमें ढाई कोशपर है यह नाला सिन्धमें दूरासे आता है, खेती बहुत रेतकी पहाडियोंके शिरे तिरगाती ½ कोश, बडा नगर महाजन बनियाँ बसते हैं जो यहाँ कितर कहलाते हैं और सुमैचा।

पर्वतकी निम्न श्रेणी तखरसे ४ कोश-यह छोटी पथरीली श्रेणी उत्तरसे दक्षिणको चली गई है, नवकोट इन श्रेणियोंके पदमें स्थित हैं वे फरारोके उस पार भी चली गयी हैं जो रोरीबेखरसे १६ कोश दूर है। गोमूत, नव कोटसे ६ कोशपर है।

---

(१) ऊपरी सिन्धसे नीचे सिंधको जानेवाले मार्गपर अनेक नगर हैं।

रोरी ४ कोश ⎫ सिन्धु नदीके बाँए किनारेवाली पर्वत श्रेणीपर है । नदीको
बेखर ½ ,, ⎬ पार कर बेखरको गये नदीका पाट करीब एक मील है । बेखर द्वीप
सेखर ½ ,, ⎭ है सेखरको जानेवाली सिन्धुकी दूसरी शाखा एक मीलसे अधिक

है । यह परिवेष्टित

पर्वत "साईलेक्सका" है जिसका नमूना मेरे पास है ।

प्राचीन दुर्ग मनसूरके खंडहर यहां विद्यमान हैं इसका नाम मनसूर कखलिफा अलमनसूरके यादगारमें रक्खा गया है जिसके लफ्टिनेण्टने अपने विजयके बाद इसको सिन्धकी राजधानी बनाया था ।

सिकन्दरके सोदगीकी राजधानीके नामसे यह अधिक प्रसिद्ध है । बहुत संभव है कि सोदगी सोढाका अपभ्रंश है और सोढाजाति प्राचीनकालसे शासन करती चली आती है और जिसके अधिकारमें कुछ दिन हुए अमरकोट था ।

नोट—कासिद जैसलमेरसे रोरी बेखरतक पत्रोंको ४ ½ दिनमें ले जाते हैं, यह दुरी एक सौ बारह कोशकी है ।

बेखरसे शिकारपुर तक.

लूकी या लूकीसर १२ कोश ।

सिन्धुनल्ला ३½ कोश ।

शिकारपुर ½ कुलजोड १६ कोश ।

बेखरसे लुधाना २८ कोश ।

शिकारपुरसे लुधाना २० कोश

जैसलमेरसे दैरअलीखैरपुर.

कोरिवाले १८ कोश ।

खारों–२० कोश संपूर्ण मार्ग मरुभूमिमय । जैसलमेर और जो अपर सिन्धकी सीमा दोहद है और भट्टीका छोटासा दुर्ग है जिसमें उपरोक्त दोनों राज्योंकी सेना रहती है । वीस झोपडे और एक कुँआ । सुतियाला२०कोश–तमोम रास्तेमें 'रो'छः कुएँ, कर वसूल करनेके लिये डंड, खैरपुर दैरअली २० कोश (रो) और निरन्तर हरित् लावो और झलके पत्ते जंगल सुतियालासे खैरपुरतक । कुल जोड ७८ कोश ।

खैरपुर (दैरअली) से हैदराबाद ।

मीरपुर ८ कोश सिन्धुसे चार कोश ।

मतैलो ५ कोश सिन्धुसे चार कोश ।

गोतकी ७ कोश सिन्धुसे दो कोश ।

रोरीबेखर २० कोश, इस समस्त प्रदेशमें असंख्य गाँव, सीचनेके लिये अनेक नदियाँ और थोडे कालके लिए निर्माण किये हुए गाँव हैं ।

खैरपुर सोहरावका	९	कोश
गोमूत	८	
रानीपुर	२	
गुरहरसे रानीपुरकी रास्ता देखो।		
हिंगोर	५	
मिरनपुर	५	
हुलियानी	६	
कुंजरो	३	
नोशियारा	८	
भोरा	७	
शाहपुरा	३	
दौलतपुरा	३	

सिन्धुसे ६ कोश

इस मार्गमें कोशकी लम्बाई २ कोश पक्के और डेढ कोश कच्चेके जोडके अर्धभागके बराबर है। पौने दो मीलमेंसे इसीका दशवाँ भाग घटा देनेसे चक्कर वगैरहके कारण कोशका परिमाण निकल आवेगा। अपर सिन्धके देशोंमें यही कोशका परिमाण या नाप व्यवहृत किया जाय)

भीरपुर ३-सिन्धुपुर। यहांसे मदारी सिन्धु उतरकर सेवानको गया और फिर भीरपुरको लौट आया।

जोड १४५ कोश।

लाजीका गोट	९
सुकरुन्द	११
हाला	७
खुरदा	४
मुतारी	४
हैदराबाद	६

कोश करीब दो मीलका होता है और इसमेंसे इसका दशवां भाग चक्कर वगैरहके लिये भी निकाल दिया जाय।

जैसलमेरसे इतियारखांकी गढी।

त्रिमसर	४ कोश
मीरदेसर	३ कोश
गोगादेव	३ ”
कायमसर	५ ”

इन गांवोंमें पालीवाले ब्राह्मण रहते हैं और इस प्रदेशमें कुंडल या खादल कहलाते हैं, जिसकी कटोरी जो जैसलमेरके उत्तरमें आठ कोशपर है, करीब चालीस गांवोंकी राजधानी है। (जिन नगरोंके नामके आगे 'सर' लगा है उनमें ताल अवश्य हैं)।

नोरकी गढी २५ कोश यह समस्त प्रदेश मरुभूमिमय। नोरका दुर्ग ईटका बना है और दाऊदपोतराके अधिकारमें है जिसने जैसलमेरके भाट्टियोंसे छीन लिया था। करीब चालीस झोपडेके और खेती कम। यहांपर ऊँटोंके कारवांसे कर लिया जाता है प्रत्येक ऊंटपर लदे हुए घीके लिए दो रुपये और चार शक्करके लिए और आठ आना हर ऊंटके लिये और अन्नसे लदे हुए बैलके लिये पांच आना।

मुरीदकोट २४ कोश 'रो' या मरुभूमि। इससे चार कोशकी दूरीपर रामगढ है

इरतियारकी गढी-१५ कोश 'रो' अन्तिम चार कोश छोडकर यहाँसे रेतकी पहाडियोंका ढालूपन सिन्धुकी घाटीतक चला गया है इस मार्गका जोड ७९ कोश है।

इख्तयारसे अहमरपुर ... ... १८ कोश
,, ,, खांपुर ... ... ५ कोश
,, ,, सुल्तानपुर ... ... ८ कोश

जैसलमेरसे शिवकोटरा खेरलू चोटन, नगर परकर भित्तोतक और--
जैसलमेरको लौटना।

दबला ३ कोश तीस घर पोकरण ब्राह्मण।

अकुली २ कोश चौहानोंके तीसघर कुएँ और छोटे २ ताल।

चोर ५ कोश साठ घर मिश्रित जातियां।

देवकोट २ कोश दोसौ घरका छोटासा नगर जैसलमेरके अधीन जागीर या खालसा छोटासे दुर्गमें सेना पालीवालोंका खोदा हुआ एक ताल है जिसमें पानी अधिक बरसातके बाद सालभरतक बना रहता है।

सनगुर ६ कोश यह रास्ता चोचावाली राहसे पूर्वमें और भलोत्राके लिये सबसे सीधा मार्ग है और प्रायः यात्री इसी राहसे जाते हैं परन्तु मार्गके गाँव उजाड हैं।

वीस २ कोश चालीस घर-ताल विजूराव २ कोश है मेड़ी सीमा २½ कोश ढाई सौ घर। साहिबखां सेहरी सौ सवारोंके सहित यहां रहता है, यह नगर खालसा है और जैसलमेरका अन्तिम नगर है मंडीवाली इस मार्गपरके समस्त स्थानोंसे जैसलमेरवाली पहाडी निकट है।

गुंगा ४½ कोश जोधपुरका थाना।

शिवर २ कोश तीनसौ घरका बडा नगर है, परन्तु अनेक अकालसे उजाड हो गये हैं। जिलाका प्रधान जोधपुरकी तरफसे हाकिम यहां रहता है। यात्रियोंसे कर उगाहता है और सेहरियोंकी लूटसे देशकी रक्षा करता है।

कोत्तोरा ३ कोश पांचसौ घरका नगर, जिसमेंसे दोसौ आबाद हैं। वायव्य कोणमें एक पहाडीपर दुर्ग है। राठौर सरदार यहां रहता है। शिवकोणिरका जिला जोधपुरके राठौरोंने जयसलमेरके भीट्टयोंसे छीन लिया था।

बीसलाड़ ६ कोश प्राचीनकालमें बडा स्थान था, अब केवल पच्चास घर दक्षिण या पश्चिमके कोणमें पहाडीपर जो करीब दोसौ फीट ऊँची है, एक किला है, यह पहाडी जैसलमेरवाली पहाडीसे संयुक्त होती है परन्तु प्रायः रेतके टीलोंसे आच्छादित है।

खेरल ७ कोश खेरदपुरकी राजधानी, मरुस्थलीके प्राचीन भागोंमेंसे एक।

बीसलाड़के दो कोश दक्षिणमें।

चोटन १० कोश प्राचीन नगर खंडहर दशामें अस्सीके करीब घर जिसमें सेहरी रहते हैं।

वांकासर ११ कोश पूर्वकालमें बडा नगर था अब सिर्फ तीनसा साठ घर हैं।

भीलकी वस्ती ५ कोश }
चौहानका पुरा ६ कोश } प्रत्येकमें कुछ झोपड़े

नगर ३ कोश–यह बडा नगर परकरकी राजधानी है इसमें डेढ हजार घर, कुल आधे आवाद।

कायमखां सेहरीकी बस्ती १८ कोश थलमें तीस पर, कुएँ जिनमें सतहसे नीचे पानी पूर्वमें तीन कोशपर सिंध और चौहानराजकी सीमा।

धोतकापुरा १५ कोश गांव, राजपूत भाल और सेहरी।

अट्टीका ३ कोश–धातमें छः सौ घरका नगर है या अमरकोटका भाग है जो हैदराबादके अधीन है; उस राजाका सम्बन्धी जिसको नव्वाबका खिताब है यहां रहता है, व्यापारकी मंडी और यहांपर कारवांसे कर लिया जाता है। दक्षिण पश्चिमके कोणमें एक सुदृढ महल है जब काबुलका शाह सिंध देशपर हमला करता था तब हैदराबादका राजा अपने कुटुम्ब और अमूल्य वस्तुओंके सहित यहां भाग आता था। यहांकी रेतकी पहाडियां बहुत ऊँची और भयानक हैं।

चैलसर १० कोश–चारसौ घर, निवासी सेहरी ब्राह्मण विजुरैन और बनियां, व्यापारके लिये उत्तम स्थान।

सुमैचाकी बस्ती १० कोश चैनीसरसे थल।

नूरअली पानीका तिर ८ कोश साठ घर, निवासी चारून सुलतान राजपूत और कोरिया, थलमें पानीकी बिपुलता है।

रोल ५ कोश बारह गाँव–जो यहाँ 'वस' कहलाते हैं कई कोश तक तितर वितर चले गये हैं, निवासी सोढा सेहरी, कोरिया, ब्राह्मण वा बनिया, सुतार, और जिस गांवमें जो जाति रहती है उसीके नामसे वह गांव प्रसिद्ध है।

दायली ७ कोश–एक सौ घर धानी यहांपर रहते हैं।

गुरिरी १०कोश–इसका वर्णन अमरकोटसे जैसलमेरवाले मार्गमें हो चुका है। रैदनो ११ कोश चालीस घर पानी बांधकर झील बनायी गयी है नमककी झील या आगर।

कोत्तोरा ९ कोश

शिव ३ कोश–नगरसे शिवकोत्तोरातक लगातार ऊंची २ रेतकी पहाडियां चली गयी हैं, तितर वितर गांव, अनेक स्थानोंपर हरित भूमिकी विपुलता है। जहां भेड बकरी भैंस और ऊंटके वृन्दके वृन्द चर सकते हैं, 'थल' नवकोश और बुलबारके दक्षिणतक फैला हुआ है, और पहिलेसे करीब दश कोश और दूसरेसे दो कोश नवकोटके बांई तरफ तालपुराके समतल मैदान हैं।

जैसलमेरसे शिवकोत्तोरा, बरमेर नगर गुरू और शिवबाह धूनो ५ कोश–पालीवालोंके दो सौ घर ताल कुएं पहाडी दो सौ तीन सौ फीट तक ऊंची है, पहाडियोंके बीचमें खेती होती है।

चींचा७कोश–छोटासा गांव आध कोश सिरोह पहाडी नीचा थल खेती जूसोरन२ कोश पालीवालोंके तीस घर आध कोश दाहिनीतरफ कीला ओदा १ कोश पालीवाल और जैनराजपूतोंके पचास घर, कुएं और ताल सांगुर २ कोश साठ घर

इख्तयारसे अहमरपुर	... ...	१८ कोश
” ” खांपुर	... ...	५ कोश
” ” सुल्तानपुर	... ...	८ कोश

जैसलमेरसे शिवकोटरा खेरलू चोटन, नगर परकर भित्तीतक और--

जैसलमेरको लौटना ।

दबला ३ कोश तीस घर पोकरण ब्राह्मण ।

अकुली २ कोश चौहानोंके तीसघर कुएँ और छोटे २ ताल ।

चोर ५ कोश साठ घर मिश्रित जातियां ।

देवकोट २ कोश दोसौ घरका छोटासा नगर जैसलमेरके अधीन जागीर या खालसा छोटासे दुर्गमें सेना पालीवालोंका खोदा हुआ एक ताल है जिसमें पानी अधिक बरसातके बाद सालभरतक बना रहता है ।

सनगुर ६ कोश यह रास्ता चीचावाली राहसे पूर्वमें और भलोत्राके लिये सबसे सीधा मार्ग है और प्रायः यात्री इसी राहसे जाते हैं परन्तु मार्गके गाँव उजाड हैं ।

वीस २ कोश चालीस घर–ताल विजूराव २ कोश है मेड़ी सीमा २½ कोश ढाई सौ घर। साहिबखां सेहरी सौ सवारोंके सहित यहां रहता है, यह नगर खालसा है और जैसलमेरका अन्तिम नगर है मंडीवाली इस मार्गपरके समस्त स्थानोंसे जैसलमेरवाली पहाडी निकट है ।

गुंगा ४½ कोश जोधपुरका थाना ।

शिवर २ कोश तीनसौ घरका बडा नगर है, परन्तु अनेक अकालसे उजाड हो गये हैं । जिलाका प्रधान जोधपुरकी तरफसे हाकिम यहां रहता है । यात्रियोंसे कर उगाहता है और सेहरियोंकी लूटसे देशकी रक्षा करता है ।

कोत्तोरा ३ कोश पांचसौ घरका नगर, जिसमेंसे दोसौ आबाद हैं। वायव्य कोणमें एक पहाडीपर दुर्ग है । राठौर सरदार यहां रहता है । शिवकोणिरका जिला जोधपुरके राठौरोंने जयसलमेरके भीट्टयोंसे छीन लिया था ।

बीसलाड़ ६ कोश प्राचीनकालमें बडा स्थान था, अब केवल पचास घर दक्षिण या पश्चिमके कोणमें पहाडीपर जो करीब दोसौ फीट ऊँची है, एक किला है, यह पहाडी जैसलमेरवाली पहाडीसे संयुक्त होती है परन्तु प्रायः रेतके टीलोंसे आच्छादित है ।

खेरल ७ कोश खेरदपुरकी राजधानी, मरुस्थलीके प्राचीन भागोंमेंसे एक । बीसलाड़के दो कोश दक्षिणमें ।

चोटन १० कोश प्राचीन नगर खंडहर दशामें अस्सीके करीब घर जिसमें सेहरी रहते हैं ।

वांकासर ११ कोश पूर्वकालमें बडा नगर था अब सिर्फ तीनसा साठ घर हैं ।

भीलकी वस्ती ५ कोश }
चौहानका पुरा ६ कोश } प्रत्येकमें कुछ झापेड़

नगर ३ कोश–यह बडा नगर परकरकी राजधानी है इसमें डेढ हजार घर, कुल आधे आवाद।

कायमखां सेहरीकी बस्ती १८ कोश थलमें तीस पर, कुएँ जिनमें सतहसे नीचे पानी पूर्वमें तीन कोशपर सिंध और चौहानराजकी सीमा।

धोतकापुरा १५ कोश गांव, राजपूत भाल और सेहरी।

अट्टीका ३ कोश–धातमें छः सौ घरका नगर है या अमरकोटका भाग है जो हैद-राबादके अधीन है; उक्त राजाका सम्बन्धी जिसको नव्वाबका खिदाब है यहां रहता है, व्यापारकी मंडी और यहांपर कारवांसे कर लिया जाता है। दक्षिण पश्चिमके कोणमें एक सुदृढ महल है जब काबुलका शाह सिंध देशपर हमला करता था तब हैदराबादका राजा अपने कुटुम्ब और अमूल्य वस्तुओंके सहित यहां भाग आता था। यहांकी रेतकी पहाडियां बहुत ऊँची और भयानक हैं।

चैलसर १० कोश–चारसौ घर, निवासी सेहरी ब्राह्मण विजुरैन और बनियां, व्यापारके लिये उत्तम स्थान।

सुमैचाकी बस्ती १० कोश चैनीसरसे थल।

नूरअली पानीका तिर ८ कोश साठ घर, निवासी चारून सुलतान राजपूत और कोरिया, थलमें पानीकी बिपुलता है।

रोल ५ कोश बारह गाँव–जो यहाँ 'वस' कहलाते हैं कई कोश तक तितर वितर चले गये हैं, निवासी सोढा सेहरी, कोरिया, ब्राह्मण वा बनिया, सुतार, और जिस गांवमें जो जाति रहती है उसीके नामसे वह गांव प्रसिद्ध है।

दायली ७ कोश–एक सौ घर धानी यहांपर रहते हैं।

गुरिरी १०कोश–इसका वर्णन अमरकोटसे जैसलमेरवाले मार्गमें हो चुका है। रैदनो ११ कोश चालीस घर पानी बांधकर झील बनायी गयी है नमककी झील या आगर।

कोत्तोरा ९ कोश

शिव ३ कोश–नगरसे शिवकोत्तोरातक लगातार ऊंची २ रेतकी पहाडियां चली गयी हैं, तितर वितर गांव, अनेक स्थानोंपर हरित भूमिकी विपुलता है। जहां भेड बकरी भैंस और ऊंटके वृन्दके वृन्द चर सकते हैं, 'थल' नवकोश और बुलबारके दक्षिणतक फैला हुआ है, और पहिलेसे करीब दश कोश और दूसरेसे दो कोश नवकोटके बांई तरफ तालपुराके समतल मैदान हैं।

जैसलमेरसे शिवकोत्तोरा, बरमेर नगर गुरू और शिवबाह धूनो ५ कोश–पाली-वालोंके दो सौ घर ताल कुएं पहाडी दो सौ तीन सौ फीट तक ऊंची है, पहाडियोंके बीचमें खेती होती है।

चींचा७कोश–छोटासा गांव आध कोश सिरोह पहाडी नीचा थल खेती जूसोरन२ कोश पालीवालोंके तीस घर आध कोश दाहिनीतरफ कीला ओदा १ कोश सांगुर २ कोश साठ घर पालीवाल और जैनराजपूतोंके पचास घर, कुएं और ताल

केवल पन्द्रह आवाद शेषके निवासी १८१३ के अकालमें सिन्धको भाग गये । चारून विस्तीर्णी थल आरम्भ होता है।सांगुरका ताल ½ कोश प्रायः पानी तालमें आठ महीने रहता है और कभी २ साल भरतक ।

बीजूरा १ कोश } इनके बीचमें जैसलमेर और जोधपुरकी सीमा है।बीजूरामें एक
खोरैल ४ कोश } सौ बीस पालीवालोंके घर हैं दोनों स्थानमें कुएँ और ताल हैं,

राजरैल १ कोश–सत्तर घर अकालके समयसे उजाड पडे हैं ।

गोगा ४ कोश–बीस झोपडेका गांव छोटे कुएं और ताल यहांपर पहाडी और थल आपसमें मिलते हैं।

शिव २ कोश, जिलाकी राजधानी

नीमलाह ४ कोश, चालीस घर ऊजड

भदको २ कोश, चार सौ घर, ऊजड

कुरसरी ३ कोश, तीस झोपडे ऊजड, कुएँ ।

जुलेपा ३ कोश, बीस झोपडे ऊजड

नगर गुरु २० कोश लूनी नदीके पश्चिमी किनारेपर यह बडा नगर स्थित है और इसमें चार सौसे पांच सौ तक मकान हैं, परन्तु बहुतेरे अकालके कारण उजड गये हैं जिसने इस देशका कटीवट सत्यानाश कर डाला है ।

सन् १८१३ में यहांके निवासी गंगानदीतक भाग गये थे जहाँ कि उन्होंने अपने शरीर और अपने बच्चोंके जान बचानेके लिये बेच दिया था ।वरमेर छः कोश बारह सौ घरका नगर ।

गुरु २ कोश-लूनीके पश्चिम तरफ सात सौ घर चौहान जातिके सरदारका पदवी राना है।

बत्तो ३ कोश–नदीके पश्चिम तरफ

पुत्तरनो १ कोश } नदीके पश्चिम तरफ
गादलो १ कोश }

रूनाश ३ कोश नदीके पूर्व तरफ

चारुनी २ कोश सत्तर घर पूर्व:तरफ

चीतलवानो२कोश -तीनसौ घरका नगर नदीके पूर्वमें चौहाने सरदान रानाकी पदवीवालेके अधिकारमें है । सांचोर सात कोश दक्षिणमें है ।

रुतोरो २कोश नदीके पूर्वमें, ऊजड

होतीगाँव २ कोश--नदीके दक्षिणमें फुलमुदेश्वर महादेवका मंदिर

घुतो २ कोश } उत्तरमें पश्चिमकी तरफ थल बडा भारी है पूर्वमें मैदान दोनों
ताप्पों २ कोश } तरफ खूब खेती होती है ।

लालपुरा २ कोश पश्चिममें

सूरपुरा १ कोश–नदीको पार किया

सनलोती २ कोश नदीके पूर्वमें अस्सी घर ।

मौतेरू २ कोश पूर्वमें राजाका सम्बन्धी रहता है ।

नरके ४ कोश नदीके दक्षिणमें मील और सोनीगुरी

काटो ४ कोश सेहरी

पितलनो २ कोश बडी गांव; कोली पिथिल

धरनीधर ३ कोश सात या आठ सौ घर करीब २ ऊजड शिववादके अधिकारमें

बाह ४ कोश बीरवाहके चौहान राजा राना नारायणरावकी राजधानी ।

लूना ५ कोश एकसौ घर

शिव ७ कोश चौहान सरदारका निवासस्थान ।

लूनी नदीपर स्थित भलोत्रासे पोकरन और जैसलमेरतक ।

पंचभद्र ३ कोश भलोत्राका मेला माघकी एकादशीको होता है–दश दिनतक रहता है । भलोत्राके खेत्राची नामक स्थानमें चार सौसे पांच सौ घर हैं पहाडी झालौर और सिवानौसे जाकर मिलती है । पंचभद्रमें दो सौ घर हैं और अकालके समयसे सब ऊजाड पडे हैं । यहांपर एक अग्गर था नमककी झील है जिससे राज्यको बहुत आमदनी होती है ।

गोघी २ कोश चालीस घर ऊजाड इसके उत्तरमें एक कोश परसे बडा थल आरंभ होता है ।

पतोदे ४ कोश व्यापारकी बडी मंडी, चार सौ घर, रुई विपुलतासे होती है ।

सिवी ४ कोश दो सौ घर, क़रीब करीब ऊजाड ।

सिरुरो १ कोश साठ घर । पतोदेतकका प्रदेश सेवांची कहलाता है, वहांसे इन्दुवतीका प्रारंभ होता है और इसका नाम इन्दु जातिके नामपर रखा गया है ।

बुनगुरों ३ कोश, सोलंकीतुला ४ कोश, पोगुली ५ कोश — पहिलेमें सत्तर घर, दूसरेमें चार सो, तीसरेमें साठ । समस्त प्रदेशमें रेतकी पहाडियाँ । इस प्रदेशका नाम तुलैचा है और यहांके राठौर तुलैचा राठौर कहलाते हैं । जित या जाटजातिके अनेक मनुष्य यहांपर खेती करते हैं । पोगुलीमें चारुन रहते हैं ।

वाफुरी ५ कोश सौ घर, निवासी चारुण ।

धौलसर ४ कोश साठ घर, निवासी पालीवाल ब्राह्मण ।

पोकरन ४ कोश बाकुरीसे पोकरनका जिला आरंभ होता है, समतल भूमि यद्यपि रेतीली पहाडियाँ नहीं ।

ओधानिओ ६ कोश पचास घर, दक्षिणकी तरफ ताल ।

लहर्ता ७ कोश तीन सौ घर, पालीवाल ब्राह्मण ।

सोदाकुर २ कोश, चन्दन ४ कोश — सोदाकुरमें तीस घर और चन्दनमें पचास पालीवाल, चन्दनमें सूखा नाला, इसके प्रवाहमार्गमें खोदनेपर पानी मिलता है ।

भोजक ३ कोश एक कोश बाईं तरफपर बासुकीको जानेवाली सीधी रास्ता है जो चन्दनसे सात कोश है।

बासुकीका तलाव ५ कोश एक सौ घर, पालीवाल ब्राह्मण।

मोकलैत १½ कोश बारह कोश, पोकरन ब्राह्मण।

जैसलमेर ४ कोश पोकरनसे ओधनिओंतकका मार्ग नीचा पहाडीके ऊपर होकर है वहांसे लहतीतक शस्यपूर्ण मैदान है, पहाडी बाईं तरफ है।

एक छोटासा थल सोदाकुरके पास मिलता है और फिर चन्दनतक बराबर मैदान चला गया है। चन्दनसे बासुंकीतकका मार्ग एक नीची पहाडीको पार करके जाता है और यह पहाडी ऊंची होती हुई जैसलमेरतक चली गई है। कहीं २ पर खेती भी होती है।

बीकानेरसे इख्तियारका गढीतक सिन्धुतटपर

नादकी बस्ती ४ कोश

गुजनैर	५ कोश	रेतीलेमैदान, इन सब गावोंमें पानी। गिराजसरसे जो जैसलमेरकी सीमा है रेतकी पहाडियां प्रारंभ होती हैं और बीकमपुरतक चली जाती हैं।
गुर	५ कोश	
बीतनोक	५ कोश	
गिराजसर	८ कोश	
नररायें	४ कोश	
बीकमपुर	८ कोश	बीकमपुरसे मोहनगढतकका मार्ग मरुभूमिमय और इसमें अनेक जंगल और रेतकी पहाडियां हैं।
मोहनगढ	९ कोश	

नातचना १६ कोश इस प्रदेशभरमें रेतकी पहाडियां हैं।

नारराई ९ कोश ब्राह्मण ग्राम।

नाहरकी गढी२४कोश मरुभूमि या' रो' सिन्धुकी सीमा स्थित सेना रहती है। गढी हादजीखांके अधिकारमें है।

मुरीदकोट २४ कोश ' रो ' ऊंची रेतकी पहाडियां।

गढी इख्तियारखांकी १८ कोश इसका सबसे उत्तम भाग घाटीके समतल मैदानमें होकर है। गढी सिन्धु तटपर

जोड १४७ कोश २२०–½ मील, कोश करीब २ डेढ मीलक बराबर हो।

राजस्थान इतिहासका दूसरा भाग

समाप्त हुआ।

पता–
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्–प्रेस,
बम्बई.

तथा–
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम्–प्रेस,
कल्याण–बम्बई.